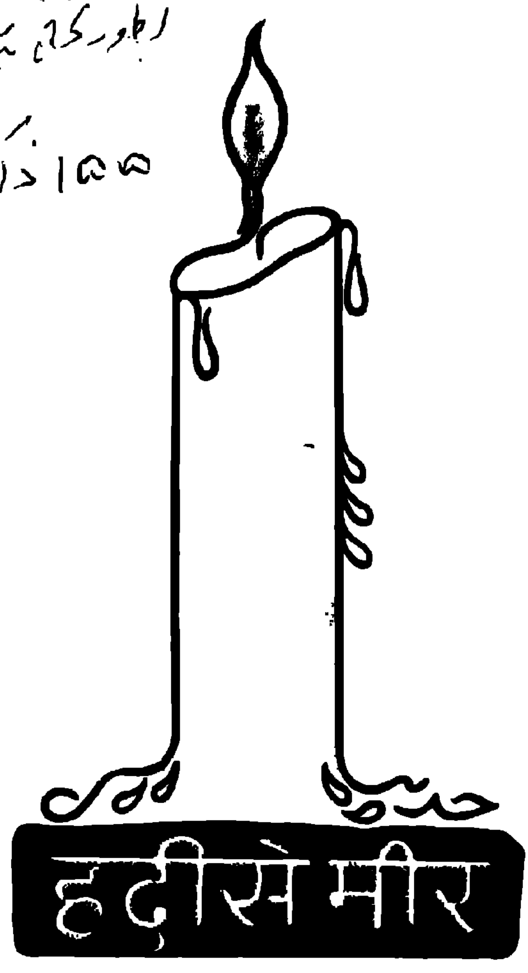
ہدیۂ خلوص
بخدمت منظور عالم قریشی صاحب
آئی سی ایس

لکھنؤ
۳۱ مارچ ۱۹۹۸ء مقبول احمد لاری

میں بڑی خوشی اور نہایت خوشی کے ساتھ
اپنا یہ حدیث میر ڈاکٹر ذاکر حسین
لائبریری جامعہ ملیہ اسلامیہ جامعہ نگر نئی دہلی
کو پیش کر رہا ہوں۔
منظور عالم قریشی
۱۵۵ ذاکر باغ نئی دہلی
۱۶ اپریل ۲۰۰۰ء



हदीसे मीर

تحدیث نعمت

हदीसे मीर

संकलनकर्ता

मक़बूल अहमद लारी

आल इन्डिया मीर अकादमी

लारी हाउस-लखनऊ

حدیثِ میر

مرتبہ

مقبول احمد لاری

آل انڈیا میر اکاڈمی
لاری ہاؤس۔ لکھنو

بار اوّل

۱۹۶۷ء

ناشر: مقبول احمد لاری ۔ آل انڈیا میر اکاڈمی ۔ لکھنو
پرنٹر: سی ۔ ایل ۔ بھارگوا ۔ جی ۔ ڈبلو ۔ لاری اینڈ کمپنی ۔ لکھنو

प्रथम संस्करण
सन् १९६७ ई०

मुद्रक: सी० एल० भार्गव, जी० डब्ल्यू० लॉरी एण्ड कम्पनी, लखनऊ
प्रकाशक: मक़बूल अहमद लारी, आल इण्डिया मीर अकादमी, लखनऊ

مت سہل ہمیں جانو پھرتا ہے فلک برسوں
تب خاک کے پردے سے انسان نکلتے ہیں

मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक बरसों
तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलते हैं

نام	محمد تقی
تخلص	میر
پیدائش	آگرہ ۱۷۲۳ء
قیام دہلی	۱۷۳۵ء تا ۱۷۸۱ء
قیام لکھنو	۱۷۸۳ء تا ۱۸۱۰ء
وفات	لکھنو ۲۱ ستمبر ۱۸۱۰ء یوم جمعہ۔ وقت شام۔ محلہ ست ہٹی
تدفین	قبرستان بھیم کا اکھاڑہ جو بھیم کا تکیہ بھی کہا جاتا تھا۔ موجودہ سٹی اسٹیشن سے شمال ریلوے پل کے قریب جہاں اب ایک چھوٹی سی مسجد بن گئی ہے

नाम	मुहम्मद तक़ी
उपनाम	मीर
जन्म	आगरा सन् १७२३
देहली निवास	सन् १७३५ से १७८१ तक
लखनऊ निवास	१७८३ से १८१० तक
मृत्यु	लखनऊ २१ सितम्बर सन् १८१०, (शुक्रवार, सांयकाल मुहल्ला सुतहट्टी)
अन्त्येष्टि	मध्याह्न, श्मशान भूमि, भीम का अखाड़ा (भीम का तकिया) सिटी स्टेशन के निकट उत्तर रेलवे पुल के पास, जहां अब एक छोटी सी मस्जिद बन गई है।

محمد تقی میر

मुहम्मद तक़ी "मीर"



साहित्य
कला और संस्कृति
के रक्षक
गुणग्राहक काव्य प्रेमी
नेपाल नरेश
श्री ५ महाराजाधिराज
महेन्द्र वीर विक्रम शाहदेव
के करकमलों में

हदीसे मीर

श्रद्धापूर्वक सादर समर्पित

मक़बूल अहमद लारी
लखनऊ

انتساب

انتہائی جذبۂ خلوص و
عقیدت کے ساتھ بصد تکریم و تعظیم

[illegible]

علم دوست، ادب نواز، بلند اقبال تاجدار عالی جاہ ہز میجسٹی

مہندر بیر بکرم شاہ دیو

فرمانروائے نیپال کے نام نامی کے ساتھ
منسوب کرنے کی عزت و سعادت
حاصل کرتا ہوں

مقبول احمد لاری

لکھنؤ

ہز میجسٹی مہندر بیر بکرم شاہ دیو فرماں روائے نیپال

ाल नरेश श्री ५ महाराजाधिराज महेन्द्र वीर विक्रम शाह देव



اودھ کے ہر دل عزیز فرماں روا نواب آصف الدولہ بہادر
کی دعوت خاص پر ۱۷۸۳ء میں میر صاحب لکھنو آئے اور
نواب بہادر کی قدر افزائیوں سے سرفراز ہوئے

अवध के सुप्रसिद्ध लोकप्रिय नवाब आसिफ़ुद्दौला के निमंत्रण पर सन् १७८३ में 'मीर' साहब लखनऊ पधारे और अपने असाधारण गुणों एवं विलक्षण प्रतिभा के कारण उन्होंने यहाँ अभूत पूर्व सम्मान प्राप्त किया ।

نواب آصف الدولہ بہادر

नवाब आसिफ़ुद्दौला बहादुर



ہزامپیریل میجسٹی شہنشاہ ایران

हिज़ इम्पीरियल मैजिस्टी शहन्शाह ईरान



دربار شاهنشاهی

हिज़ इम्पीरियल मैजिस्टी शहन्शाह ईरान के फ़ारसी सन्देश का अनुवाद।

'मीर अकादमी' ने उर्दू भाषा के जनहितैषी कवि की याद मनाने तथा उनका सम्मान करने हेतु 'हदीसे मीर' नामक पुस्तक प्रकाशित करने का जो आयोजन किया है उसके लिए हम इस अवसर पर हार्दिक शुभ कामना प्रकट करते हैं। तक़ी 'मीर' की साहित्यिक रचनाओं में एक ऐसा पवित्र सन्देश निहित है जो संसार के किसी भी भाग के लोगों में किसी भी समय पहुंचाया जाय तो सराहनीय सिद्ध होगा।

यह सन्देश संसार के लोगों के भाई चारे का सन्देश है; सार्व लौकिक मित्रता तथा आपसी समझौते का सन्देश है· निष्कपटता तथा शान्ति का सन्देश है। हम स्वंय अपनी तथा ईरानी राष्ट्र की ओर से इस सन्देश के उर्दू भाषा के महान उपदेशक का आदर इस कारण करते हैं कि हमारा प्राचीन फ़ारसी साहित्य स्वंय प्रारम्भ से ही मानव समाज के आपसी समझौते के इस महान उपदेश की रक्षा करता, उसे बढ़ावा देता, और आपसी भेद-भाव को मिटाने की चेष्टा करता रहा है ताकि संसार का हित चाहने वाले सभी लोग मानव समाज की भौतिक तथा नैतिक पूर्णता के लिए आपस में सम्बन्ध स्थापित कर सके।

कई शताब्दियों से हजारों ईरानी दार्शनिक, कवि स्नातक तथा कलाकार, जिनमें अधिकांश लोगों से भारत भलीभांति परिचित है, संसार के लोगों के बीच मनुष्यता के इस महान सन्देश का इस प्रकार प्रचार करते रहे हैं, मानों ईरानी तथा भारतीय राष्ट्र प्रारम्भ से ही इसके प्रचार का बीड़ा उठाए हों।

यही नहीं बल्कि उर्फ़ी शीराज़ी साइब तबरेज़ी, हकीम हमदानी, सरमद काशानी जैसे महान कवि तथा अन्य ईरान से भारत इसीलिए गए कि उस देश में उसी अमूल्य सन्देश का प्रचार कर सके जिसको हम भारत की उर्दू भाषा के जन हितैषी कवि तक़ी 'मीर' के मुख से विश्वास तथा निष्कपटता के साथ सुनते हैं।

دربارشاہنشاہی

ہز امپیریل میجسٹی شہنشاہ ایران کے فارسی پیغام کا ترجمہ

میر اکیڈمی نے اردو زبان کے انسان دوست شاعر کی یاد منانے اور ان کا احترام کرنے کی خاطر حدیث میر نامی کتاب شایع کرنے کا جو اہتمام کیا ہے ہم اس موقع پر اپنی پرخلوص ہمدردی کا اظہار کرتے ہیں کیونکہ تقی میر کے ادبی آثار ایک ایسے روحانی پیغام کے حامل ہیں جسے دنیا کے کسی حصے کے لوگوں تک کسی زمانے میں بھی پہونچایا جائے تو قابل ستائش ثابت ہوگا

یہ پیغام بنی نوع انسان کی اخوت کا پیغام ہے، عالمگیر دوستی اور مفاہمت کا پیغام ہے خلوص اور امن کا پیغام ہے۔ ہم خود اپنی اور ایرانی قوم کی جانب سے اردو ادب کے اس پیغام کے بہترین مبلغ کا احترام اس وجہ سے کرتے ہیں کہ ہمارا قدیم فارسی ادب خود بھی ابتدا سے ہی انسانی مفاہمت کے اس عظیم اصول کی حفاظت کرتا، اسے پروان چڑھاتا اور تفریقی رجحانات کی بیخ کنی کرتا رہا ہے تاکہ دنیا کے سب ہی بہی خواہ بنی نوع انسان کی مادی اور اخلاقی قدروں کی تکمیل کے لیے آپس میں رابطہ قائم کرسکیں

صدیوں سے ہزاروں ایرانی مفکر، شعراء، دانش ور اور ہنرمند جن میں سے بیشتر لوگوں سے ہندوستان اچھی طرح واقف ہے، دنیا کے لوگوں تک اس بلند انسانی پیغام کو اس انداز میں پہونچاتے رہے ہیں گویا ایرانی اور ہندوستانی دونوں قومیں ابتدا ہی سے اس کی اشاعت کے عظیم مشن کو اپنائے ہوئے ہیں

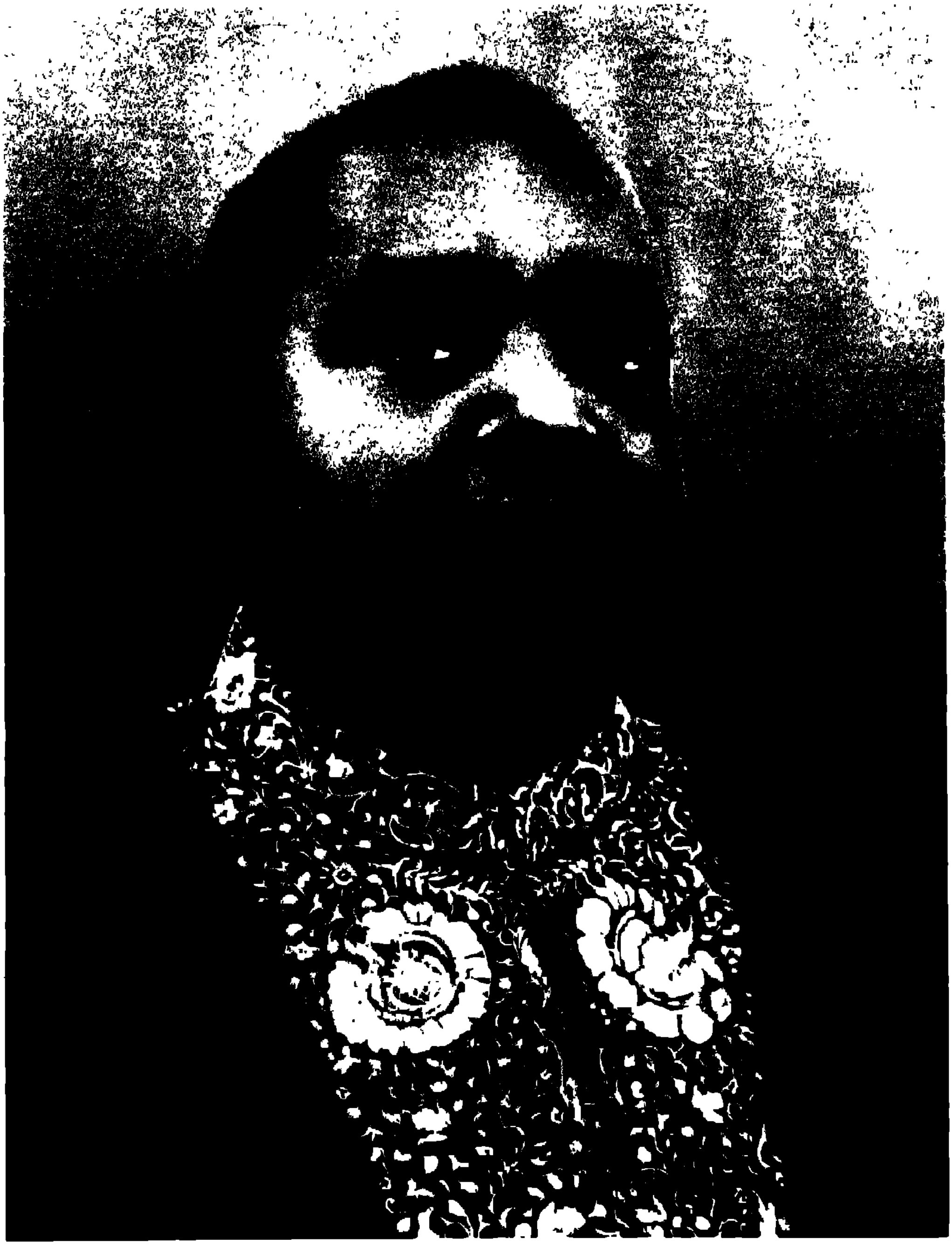
یہی نہیں بلکہ عرفی شیرازی، صائب تبریزی، حکیم ہمدانی، سرمد کاشانی جیسے عظیم شعراء اور دوسرے ایران سے اسی لیے ہندوستان گئے تاکہ اس ملک میں اسی گراں مایہ پیغام کی تبلیغ کرسکیں جس کو ہم ہندوستان کی اردو زبان کے انسان دوست شاعر تقی میر کی زبان سے خلوص اور عقیدت کے ساتھ سنتے ہیں

जब हमारी दृष्टि उन दुखों तथा निराशाओं की ओर जाती है जिनका शान्ति तथा मनुष्यता के इस कवि को जीवन भर सामना करना पड़ा तो हमें स्वभाविक रूप से दु:ख होता है । परन्तु हम यह सब जानते हैं कि इतिहास में ऐसे लोगों में से अधिकांश का यही भाग्य रहा है जो महान उद्देश्यो की प्राप्ति तथा दृढ़ विश्वास के अनुसरण के लिए अपने युग के हर प्रकार के ओछेपन, स्वार्थ तथा गलत प्राचीन परमपराओं से लड़े और मानव-समाज के इन लड़नेवालों ने जितने ही अधिक कष्ट उठाए इतिहास में उनका उतना ही उच्च स्थान है ।

हमारी यह हार्दिक अभिलाषा है, कि मानव समाज, जिसको वास्तविक उन्नित की पूर्णता के लिए ऐसा अवसर कभी नहीं मिला जैसा की वर्तमान काल मे है, प्रगति के उस रास्ते पर अग्रसर रहे जो दर्शन एंव वास्तविकता के संसार के सभी कल्याण चाहने वालों तथा शान्ति प्रिय लोगों का लक्ष्य रहा है और एक दिन ऐसा आ सकता है जब तमाम आपसी भेद भाव का स्थान, भाईबन्दी, आपसी मेल जोल शान्ति तथा निष्कपटता ले लेंगी ।

جب ہماری نظر ان مصائب اور مایوسیوں کی طرف جاتی ہے جن سے امن اور انسانیت کے اس شاعر کو زندگی بھر دو چار رہنا پڑا تو ہمیں فطری طور پر رنج ہوتا ہے۔ لیکن ہم سب یہ جانتے ہیں کہ تاریخ میں ایسے لوگوں میں سے بیشتر کا یہی مقدر رہا ہے جنھوں نے بلند مقاصد کے حصول کے لیے اور مضبوط استوار عقیدے کی پیروی کرنے کے لیے اپنے دور کی ہر قسم کی تنگ نظری، خود غرضی اور غلط مگر دیرینہ روایات سے جنگ کی اور اس طرح انسانی سماج کے ان مہم جویوں نے جتنے ہی زیادہ مصائب اٹھائے دنیا کی تاریخ میں اتنا ہی بلند ان کا مقام ہے

ہماری یہ پرخلوص تمنا ہے کہ بنی نوع انسان، جس کو حقیقی ترقی کی تکمیل کے لیے ایسا موقع کبھی نہیں ملا جیسا کہ موجودہ دور میں ہے، ترقی کی اسی منزل کی جانب گامزن رہے جو فکر و حقیقت کی دنیا کے سب ہی بہی خواہوں اور امن پسندوں کی منزل رہی ہے اور ہے اور ایک دن ایسا آسکتا ہے جب تمام تفریقی رجحانات کی جگہ اخوت، باہمی اتفاق، امن اور خلوص لے لیں گے



مقبول احمد لاری — صدر آل انڈیا میر اکاڈمی ۔ لکھنو

मक़बूल अहमद लारी (प्रसीडेन्ट ऑल इन्डिया "मीर" अकादमी लखनऊ)

प्राक्कथन

श्री मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी

मीर की कविता और उसके विभिन्न पहलुओं पर इतना लिखा जा चुका है कि अब इस विशाल संग्रह में किसी प्रकार की वृद्धि का साहस करना अपने को 'हँसवाना' और पाठकों को बोर कर देना है। वह निपुण कवि जिसके काव्य-विलक्षण पर, ज़ौक़, ग़ालिब, नासिख और शेफ़ता सभी सहमत हैं और जिसकी सौरभ एवं शोभायमान कविता पर 'फ़िराक़' तथा 'असर' जान छिड़कने को तय्यार हों, उसकी प्रशंसा पर अब कोई लिखना चाहे भी तो क्या लिखे।

भाषा इस पौने दो सौ वर्षों के बीच कहाँ से कहाँ पहुँची। काव्य एवं साहित्य की मान्यतायें क्या से क्या हो गयीं। कविता तथा साहित्य का मूल्यांकन करने वाली कितनी कसौटियाँ "इन्कलाब जिन्दाबाद" की भेंट चढ़ गईं। कितने नामवर और युग के महान व्यक्ति, सदा के लिए लुप्त हो गये। कितने अप्रसिद्ध और अयोग्य, ख्याति और सम्मान के अति उत्तम पद पर जा पहुँचे। यह सब कुछ हुआ और होता रहा। इधर मीर साहब हैं कि अपने गौरव-सिंहासन पर उसी प्रकार विराजमान हैं जैसे कल भी थे। अब यदि कोई उन पर लिखने चले तो तर्क और वितर्क का नया पहलू कहाँ से निकाले। जो बात बार-बार कही जा चुकी हो उसे कहाँ तक दुहराये।

एक महाशय ने इस पृष्ठ संग्रह में एक स्थान पर लिखा है कि 'ग़ालिब' को जो लोकप्रियता प्राप्त हुई, मीर के भाग में उसका न आना आश्चर्यजनक है। उनकी महानता की स्वीकृति केवल कलाकारों के एक वर्ग तक सीमित रही। और फिर इस गुत्थी को उन्होंने अपने विचारानुसार सुलझाया भी है, परन्तु इसके जो भी कारण हों, कारण तो स्पष्ट है :—

(१) काव्य की स्थूलता, कहाँ ग़ालिब का एक छोटा मोटा दीवान, कहाँ मीर के विशाल ग्रन्थ। किसे इतना अवकाश है कि मीर के इतने विस्तृत काव्य में अपना सर खपाये। कहाँ तिलिस्मे होशरुबा, या बोसताने ख्याल के ग्रन्थ—खंड के खंड—एक पर एक,

پیش لفظ

مولانا عبد الماجد دریابادی

میرؔ کی شاعری اور اس کے مختلف پہلوؤں پر اتنا کچھ لکھا جا چکا ہے کہ اب اس عظیم ذخیرے پر کچھ اضافے کی جسارت کرنا اپنے کو ہنسوانا اور پڑھنے والوں کو "بور" کر دینا ہے! وہ شاعر باکمال جس کی استادی اور ندرت کلام پر ذوقؔ اور غالبؔ اور ناسخؔ اور شیفتہؔ سب ہی متفق ہوں، اور جس کے کلام کی بہار پر آج بھی فراقؔ و اثرؔ جان چھڑکنے کو تیار ہوں اس کے مناقب پر اب کوئی لکھنا چاہے بھی تو کیا لکھے

زبان اس ڈیڑھ پونے دو سو سال کے عرصے میں کہاں سے کہاں پہنچی۔ شعر و ادب کی قدریں کیا سے کیا ہوگئیں، کتنے شعری معیار اور ادبی پیمانے "انقلاب زندہ باد" کی نذر ہو گئے کتنے نامور اور مشاہیر عصر گمنامی کی خاک میں مل گئے۔ کتنے گم نام اور بے نشان شہرت و اعزاز کے تاجدار بن گئے۔ یہ سب کچھ ہوا، اور ہوتا رہا۔ اور ادھر میر صاحب ہیں کہ آج اپنے مرتبۂ عظمت پر اسی طرح جمے ہوئے ہیں جیسے کل بھی تھے —— تو اب ان پر لکھنے پر آیئے بھی تو کوئی نیا پہلو بحث کا کہاں سے نکالیے، اور جو باتیں بے شمار بار کہی جا چکی ہیں انھیں کہاں تک دہرائے جایئے

ایک صاحب نے اسی مجموعۂ اوراق میں ایک جگہ لکھا ہے کہ حیرت ہے کہ جو قبول عام غالبؔ کو نصیب ہوا وہ میرؔ کے حصے میں نہ آیا اور میرؔ کا اعتراف عظمت صرف اہل فن کے ایک مختصر گروہ تک رہا اور پھر اس عقدے کو حل بھی اپنے خیال کے مطابق کیا ہے —— لیکن اس کے اسباب اور جو کچھ بھی ہوں، دو سبب تو بہرحال ظاہر و آشکار ہیں

कहाँ 'शरर' "राशिदुलखैरी या रुसवा" के हल्के फुल्के एक प्रति वाले उपन्यास युगान्तर-अब इसे भी क्या कीजिये कि "मीर की अपेक्षा" ग़ालिब का युग हम से कितना निकट हुआ है। कहाँ १८६९ ई० और कहाँ १८१० ई०। युग की इतनी दीर्घता से यही नहीं कि भाषा कितनी प्रौढ़ और पुरानी हो जाती है, कितने शब्दो का परित्याग हो जाता है। परिच्छेद कितने अरुचिकर हो जाते हैं बल्कि सोचने का ढंग भी कितना बदल जाता है। 'ग़ालिब' का युग हर प्रकार से अंग्रेजों का युग था और 'मीर' का युग सर्वप्रकार शाही या नवाबी युग था।

यहां मीर अकादमी की यह उपज सराहनीय है उस हदीसे मीर को खूब सूझी। लेख तथा निबन्ध उसने खूब-खूब एकत्रित कर दिये हैं और वर्तमान मर्मज्ञ तथा आलोचकों की लेखनी का सत निकालकर रख दिया है। हर रुचि और हर दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व, कहना चाहिये कि इसमें आ गया है। और मीर का चित्र हर दृष्टिकोण म नोक-पलक तक दुरुस्त, इस संग्रह में समा गया है।

"मक़बूल" का प्रयास अन्त में मक़बूल होकर रहा।

और उर्दू तथा हिन्दी लिपि में सम्पादन तथा क्रमबद्ध करने वाले की सूझ-बूझ भी सर्व प्रकार सराहनीय है। उर्दू कविता के प्रसारन प्रचार जनप्रियता में वर्तमान युग में इसी दोहरी लिपि का जो प्रभाव होगा वह स्पष्ट है। उर्दू काव्य और साहित्य के प्रचार में मीर अकादमी को बराबर सफलता मिलती रहे, खुदा से मेरी यही दुआ है।

दरियाबाद, बाराबंकी
नवम्बर १९६७ ई०

अब्दुल माजिद

(۱) کلام کا حجم ۔ کہاں غالبؔ کا ایک مختصر سا دیوان اور کہاں میرؔ کے ضخیم دفتر کے دفتر! کس کو اتنی فرصت ہے جو اتنے ضخیم کلام میں اپنا سر کھپائے ــــ کہاں طلسم ہوش ربا یا بوستان خیال کے مجلدات ایک پر ایک اور کہاں شررؔ، راشد الخیری یا رسوؔا کے ہلکے پھلکے یک جلدی ناول

(۲) زمانے کی کہنگی ۔ اب اسے بھی کیا کیجئے کہ میرؔ کے مقابلے میں غالبؔ کا زمانہ ہم سے قریب کتنا ہوا ہے ۔ کہاں ۱۸۶۹ء اور کہاں ۱۸۱۰ء ۔ زمانے کے اتنے امتداد سے یہی نہیں کہ زبان کتنی پرانی ہوجاتی ہے، الفاظ کتنے متروک ہوجاتے ہیں، ترکیبیں کتنی نامانوس ہوجاتی ہیں، بلکہ خود انداز فکر اور سوچنے کے پیرائے بھی کتنے بدل جاتے ہیں! غالبؔ کا زمانہ بہرصورت انگریزوں کا زمانہ تھا اور میرؔ کا دور تمام تر شاہی زمانہ یا نوابی زمانہ

یہاں داد صرف میر اکیڈمی کی اس اُپج کی دینا ہے کہ اسے حدیث میرؔ کی خوب سوجھی ۔ مضمون اور مقالے اس نے خوب، خوب جمع کر دیئے ہیں ۔ اور موجودہ مبصروں اور ناقدوں کی تحقیق و دریافت کا گویا ست نکال کر رکھ دیا ہے ۔ ہر مذاق اور ہر نقطۂ فکر کی نمائندگی کہنا چاہیئے کہ اس میں آگئی ہے اور میرؔ کی تصویر ہر زاویے سے، نوک پلک تک درست اس مرقع میں سما گئی ہے ــــ "مقبول" کی کوشش و کاوش آخر مقبول ہی ہو کر رہی

اور اردو کے پہلو بہ پہلو ہندی رسم الخط دیکھ کر تو جامع و مرتب کی سوجھ بوجھ اور فراست کا قائل ہوجانا پڑا ہے ۔ اردو شاعری کی اشاعت و مقبولیت میں عصر حاضر میں اس دوخطی عمل قبول کا جو اثر ہوگا، وہ بالکل ظاہر ہے ۔ خدا کرے اردو شعر و ادب کی توسیع اشاعت میں میر اکیڈمی کو برابر کامیابی نصیب ہوتی رہے

دریاباد ۔ بارہ بنکی
نومبر ۱۹۶۸ء

عبدالماجد

भूमिका

व्यक्तित्व जितना मोहक और आकर्षक होता है, उतना ही उसकी मुखाकृति को विभिन्न कोणों से इस कारण देखना पड़ता है जिससे कि स्वय उसके गुणों और उसके लक्षणों की अप्रत्यक्ष और धुंधली रेखाएं भी स्पष्ट हो जायं और हमें उसके अस्तित्व का बोध हो सके–अध्ययन के इस नियम का पालन किया जाय तो मीर तक़ी मीर का व्यक्तित्व मोहक ही नहीं, बड़ा सारगर्भित प्रतीत होता है–कदाचित इसी कारण बहुतों ने उनको 'ख़ुदा-ए-सुख़न' (कवीश्वर) मान लिया। प्रत्येक काल में उनकी इस दिव्यता के सम्मुख बड़े-बड़ों ने श्रद्धापूर्वक तथा विनीत भाव से मस्तक झुकाये हैं और उनके काव्य-वैभव के प्रति आस्था प्रकट की है। अपनी रुचि और आचार-विचार के अनुसार आज भी हर आलोचक और पारखी उनके चित्र को भिन्न-भिन्न चौखटों में लगा कर देख रहा है। कवि को चाहे उसकी रचनाओं के माध्यम से समझने का प्रयत्न किया जाय, चाहे काव्य की रूप-रेखा द्वारा कवि को जानने-पहचानने की अपेक्षा उसके जीवन को आधार बनाकर काव्य की व्याख्या की जाय, दोनों ही कार्य कठिन हैं।

मीर का अस्तित्व उस तरशे हुये हीरे की तरह है जिसमें रंग-रंग की प्रतिभाओं की ज्योति और चमत्कार केन्द्रित हो जाते हैं। ध्यान से देखिये तो उनके व्यक्तित्व में एक परमगुणी कवि ही प्रभासित नहीं वरन् साहित्य का इतिहास-कार भी छुपा हुआ है; एक योद्धा का स्वरूप ही सामने नहीं आता, शान्ति स्थापना का एक परिश्रमी दूत भी दिखायी देता है—मनन और चिन्तन की स्वप्न-नगरी में बसने वाला एक कविवर ही नहीं मिलता, अपने युग का एक इतिहासकार भी कार्यव्यस्त दृष्टिगोचर होता है। उनकी काव्य रचनाओं में उनके युग की रेखाएं भी उभरती हैं, उनकी आपबीती भी मिलती है और जनता के दिल की वह धड़कनें भी सुनायी देती है जो युग-युगान्तर के मानव से क्रमबद्ध हैं। ऐसा लगता है कि मीर केवल कल के ही नहीं, आज के वह कवि भी हैं जिन्होंने हमारे मनोभावों और संवेदनाओं का नित नये दृष्टिकोणों से रूपान्तरण किया है–इसका कारण यह

دیباچہ

شخصیت جس قدر دل آویز اور پرکشش ہوتی ہے اسی قدر اس کے خدو خال کو مختلف زاویوں سے دیکھنا ضروری ہوتا ہے تاکہ اس کی ذات اور صفات کے پوشیدہ اور دھندھلے نقوش بھی واضح طور پر سامنے آجائیں اور اس کے وجود کا عرفان حاصل ہوسکے۔ مطالعے کے اس انداز کو سامنے رکھا جائے تو میر تقی میر کی شخصیت دل آویز ہی نہیں بڑی تہہ دار بھی نظر آتی ہے۔ شاید اسی لیے بہتوں نے ان کو خدائے سخن مان لیا۔ ہر عہد میں ان کی خدائی کے آگے بڑے بڑوں نے عقیدت و نیاز مندی کی گردنیں جھکائیں اور ان کے شاعرانہ کمالات پر ایمان لائے۔ اپنے ذوق اور انداز فکر کے مطابق آج بھی ہر ناقد اور مبصر ان کی تصویر مختلف چوکھٹوں میں لگاکر دیکھ رہا ہے۔ شاعر کو چاہے اس کے کلام سے سمجھنے کی کوشش کی جائے، چاہے کلام کے نقوش میں شاعر کو جاننے اور پہچاننے کے بجائے اس کی زندگی کی مدد سے کلام کی تفسیر کی جائے، دونوں کام مشکل ہیں

میر کی حیثیت اس ترشے ہوئے ہیرے کی ہے جس میں رنگا رنگ جلوؤں کی رنگینی اور تابناکی مرکوز ہوجاتی ہے۔ غور سے دیکھیئے تو ان کی ذات میں ایک باکمال شاعر ہی جلوہ گر نہیں ہے ایک تذکرہ نگار بھی چھپا ہوا ہے، جنگوں میں شریک ہونے والا ہی سامنے نہیں آتا، صلح کا پیغامبر بھی دکھائی دیتا ہے، خواب و خیال کی دنیا میں بسنے والا ایک سخنور ہی نہیں ملتا، اپنے عہد کا ایک تاریخ نویس بھی مشغول کار نظر آتا ہے۔ ان کے کلام میں ان کے عہد کے نقوش بھی دکھائی دیتے ہیں ان کی آپ بیتی بھی ملتی ہے اور عوام کے دل کی وہ دھڑکنیں بھی سنائی دیتی ہیں جو ہر عہد کے انسانوں سے منسوب کی جاسکتی ہیں۔ معلوم ایسا ہوتا ہے کہ میر صرف کل کا نہیں آج کا بھی شاعر ہے جس نے ہمارے احساسات و جذبات کی ترجمانی مختلف زاویوں سے کی ہے شاید اس کا سبب یہ ہے

है कि एक अनुभूतिकारी कवि के रूप में उनकी भावनाएं समयबद्ध भी हैं और व्यापक और असीमित भी हैं—उनके दिल में सबके लिये जगह है--

चमन को बज़'अ ने हम को किया दाग़
कि हर ग़ुन्चा दिले-पुर आरज़ू था

मीर का मानसिक सुझाव, उनका स्वाभिमान, उनकी निर्ममता, नम्रता और उदारता, उनका बाँकपन, उनकी महत्ता का अज्ञात रह जाना, उनके साथ अपनों का परायों जैसा व्यवहार, फिर भी उनकी मानव उत्कर्ष की कल्पना और समय की तड़पती कुंठाएं; कौन सा ऐसा चित्र है, जो उनकी रचनाओं में उभर कर सामने नहीं आता। ऐसे विश्व कवि के प्रत्येक अंग से सम्बन्धित सामग्री को एक ही ग्रन्थ में समो सकना सरल कार्य न था– परन्तु मैंने 'आल इन्डिया मीर अकादमी' की स्थापना के पश्चात् जो योजना बनाई वह यही थी कि मीर के व्यक्तित्व, कृतित्व और कला और उनकी जनसाधारण, सरल एवं रसात्मक भाषा और काव्य-शैली के व्यापक सौन्दर्य के बारे में एक ऐसी पुस्तक प्रस्तुत की जाय जो एक साथ उर्दू, हिन्दी दोनों भाषाओ के जाननेवालों को मीर के निकट लाने में सहायक सिद्ध हो। और उनके मानव प्रेमी, रहस्यमय और रसात्मक काव्य से उनके हर पाठक को इस प्रकार परिचित कराये कि वह मीर के हृदय-स्वरों में अपने हृदय की पुकार सुनें और मीर के दर्द की कसक को स्वयं अपने दर्द की कसक समझें। साथ ही मीर-युगीन भाषा, उसका क्रमानुसार उत्कर्ष, उसका लोच और जादू, शब्दों के समुचित और कलापूर्वक प्रयोग का वह रूप सामने आ जाय जो काव्यशैली की आत्मा और उसके वाग्वैभव की जान है; और यह भी स्पष्ट हो जाय कि मीर ने किस गौरवपूर्ण और शिष्ट रूप से अपने समय के कोलाहल और व्यथा को चेतना और अन्तर्दृष्टि के साथ एक कोमल ध्वनि में ढाल कर काव्य का रूप दिया है। इस तथ्य को प्रकट करते हुए आज मुझे एक प्रकार का गर्व और हर्ष का अनुभव हो रहा है कि हमारे प्रयत्न क्रियात्मक सिद्ध हुए और वह 'हदीसे-मीर' के रूप में आपके सामने हैं।

आश्चर्यजनक बात यह है कि मीर का कोई ऐसा चित्र उपलब्ध नहीं है

کہ ایک دیدہ ور شاعر کی حیثیت سے ان کے احساسات عصری بھی ہیں آفاقی بھی ہیں
ان کے دل میں سب کی جگہ ہے

چمن کی وضع نے ہم کو کیا داغ
کہ ہر غنچہ دلِ پُر آرزو تھا

میر کی مزاجی کیفیت، ان کی خودداری، خود شناسی، بے نیازی، عجز و انکسار، بانکپن، زمانے کی ناقدر شناسی، اپنوں کی بے اعتنائی، انسانی عظمت کا تصور، وقت کے کربناک تشنج کا احساس، کون سی تصویر ہے جو ان کے اشعار میں ابھر کر سامنے نہیں آتی! ایسے ہمہ گیر شاعر سے متعلق کسی ایک صحیفے میں تمام پہلوؤں کا یکجا کرنا آسان کام نہیں تھا۔ لیکن میں نے آل انڈیا میر اکاڈمی کے آغاز کار کے بعد پہلا منصوبہ جو بنایا وہ یہی تھا کہ میر کی شخصیت، شاعری، فن اور ان کی آسان، سادہ اور پُر اثر زبان و بیان کے عالمگیر حسن کے بارے میں ایک ایسی کتاب پیش کی جائے جو بہ یک وقت اردو، ہندی دونوں زبانوں کے جاننے والوں کو میر سے قریب لانے میں مددگار ثابت ہو اور ان کے انسان دوست، معنی خیز اور درد بھرے کلام سے لوگوں کو اس طرح روشناس کرائے کہ وہ میر کے دل کی آواز میں خود اپنے دل کی آواز سنیں اور میر کے درد کی کسک کو خود اپنے درد کی کسک سمجھیں۔ ساتھ ہی میر کے عہد کی زبان اس کا تدریجی ارتقا، اُس کا لوچ اور جادو، الفاظ کے برمحل اور فنکارانہ استعمال کا سلیقہ سامنے آجائے جو اسلوب کی روح اور فصاحت کی جان ہے۔ اور یہ بھی واضح ہو جائے کہ میر نے کس پُروقار اور شائستہ انداز میں اپنے عہد کے اضطراب و کرب کو فکر و بصیرت کے ساتھ نرم لہجے میں ڈھال کر شعر بنا دیا ہے۔ اس حقیقت کے اظہار میں آج مجھے ایک طرح کی فخر آمیز مسرت محسوس ہو رہی ہے کہ میرے منصوبے نے عملی جامہ پہن لیا اور وہ حدیثِ میر کی شکل میں آپ کے پیش نظر ہے

حیرت انگیز بات یہ ہے کہ میر کی کوئی ایسی شبیہہ کہیں موجود نہیں ہے

जिस पर विश्वास किया जा सके। इसे भी उनके असफल जीवन का एक पक्ष कह लीजिए। एक चित्र जो प्रायः प्रकाशित होता रहता है वह भी विश्वासनीय नहीं है। इसके अतिरिक्त वह रंजित चित्र जो काव्य संग्रह चित्रावली ("मोरक्क-ए-शोअरा") तथा "मसनवियाते-मीर व खत्ते मीर" में प्रकाशित हुआ है, वह कुछ-कुछ उस मीर को उजागर करता है जिसे हम उनकी रचनाओं में देखते हैं। यह तो प्रत्येक अन्तेवासी के सोचने की बात है। इसके प्राक्कथन में इस चित्र के विषय में मौलाना 'अबुल कलाम आज़ाद' ने अनुमति और समर्थन की पकड़ से बचते हुए लिखा है—

> "हिन्दोस्तान में काग़ज़ की मुसव्विरी हुमायूं के आख़िरी 'अह्द मे शुरू हुई। जहांगीर के 'अह्द में ख़त्म हुई। इसके बाद जो मुसव्विरी रही, वह फ़न की मुसव्विरी न थी और ऐसे ही बाजारी मुसव्विर लखनऊ में भी थे।
>
> मीर साहब तस्वीर में बूढ़े नही दिखायी देते—ऐसा मालूम होता है कि चालीस पचास की उम्र होगी—दाढ़ी चढ़ी हुई है और यह उस अह्द की आम वज़अ थी—उलमा व मशायख़ के अतिरिक्त बहुत कम लोग नीची दाढ़ियाँ रखते थे—लिबास वही है जो आसिफ़ुद्दौला के समय मे लखनऊ का था—नीची चोली का अंगरखा और दुपल्ली टोपी।"

कविता के समान चित्रकला भी विचार अभिव्यक्ति का एक माध्यम है। अपनी कला में सिद्धहस्त चित्रकार की तूलिका, कल्पित चित्रों में भी उन मनोवैज्ञानिक पक्षों को व्यक्त कर देती है, जो बाह्य और सामयिक अपेक्षाओं के साथ हर एक निजी अस्तित्व में छुपे होते हैं। एक प्रवीण साहित्यज्ञ की भाँति चित्रकार भी कवि को उसके काव्य में ढूंढने की चेष्टा कर सकता है। इस स्थिति में मीर का जो चित्र 'हदीसे मीर' में सम्मिलित किया गया है, वह कल्पित होते हुए भी यह महत्व रखता है कि उसमें निपुण चित्रकार ने मीर की मनोवृत्तियों को उभारने में कलात्मक और रचनात्मक अन्तर्दृष्टि से काम लिया है। मीर का यह मानसिक एवं कलात्मक चित्र 'मीर के युग तथा काव्य' के समीक्षक सैयद मसूद हसन रिजवी "अदीब" के निर्देशन और स्वयं मीर के जीवन और कविता के संदर्भ में प्रसिद्ध चित्रकार अज़मतुल्लाह खाँ रामपुरी की तूलिका की रचना है। चित्रकार ने उस सजधज को भी सामने रखा है, जिसका चित्रण मौलाना मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद' ने 'आबे-हयात' में उस अवसर पर किया है, जब मीर लखनऊ पहुँचे थे और एक मुशायरे (कवि-सम्मेलन) में सम्मिलित हुए थे और उस भावना को भी सामने

جس پر یقین کیا جاسکے، اسے بھی ان کی نامراد زندگی کا ایک رُخ کہہ لیجیے! ایک شبیہہ جو عام طور پر چھپتی رہتی ہے وہ معتبر نہیں۔ اس کے علاوہ جو رنگین شبیہہ **مرقع شعرا** اور **مثنویات میر** بہ خط میر میں شایع ہوئی ہے، کس حد تک میں میر کو نمایاں کرتی ہے جیسے ہم ان کے اشعار میں دیکھتے ہیں، یہ ہر مبصر کے سوچنے کی بات ہے۔ اس کے پیش لفظ میں اس تصویر کے متعلق **مولانا ابوالکلام آزاد** نے تائید، توثیق کی گرفت سے بچتے ہوئے لکھا ہے

> "ہندستان میں کاغذ کی مصوری ہمایوں کے آخری عہد میں شروع ہوئی۔ جہانگیر کے عہد میں ختم ہوگئی۔ اس کے بعد جو مصوری رہی وہ فن کی مصوری نہ تھی بازار کی مصوری تھی۔ اور ایسے ہی بازاری مصور لکھنو میں بھی تھے
>
> میر صاحب تصویر میں بوڑھے دکھائی نہیں دیتے۔ ایسا معلوم ہوتا ہے کہ چالیس پچاس برس کی عمر ہوگی۔ ڈاڑھی بڑھی ہوئی ہے اور یہ اس عہد کی عام وضع تھی علما و مشائخ کے علاوہ بہت کم لوگ نیچی ڈاڑھیاں رکھتے تھے۔ لباس وہی ہے جو آصف الدولہ کے زمانے میں لکھنو کا تھا۔ نیچی چولی کا انگرکھا اور دوپلی ٹوپی"

شاعری کی طرح مصوری بھی اظہار خیال کا ایک ذریعہ ہے۔ اور باکمال مصور کا قلم خیالی تصویروں میں ان نفسیاتی پہلوؤں کو واضح کردیتا ہے جو خارجی عصری لوازم کے ساتھ شخصیتوں کے اندر چھپے ہوتے ہیں۔ ایک ماہر نقاد ادب کی طرح مصور بھی شاعر کو اس کے کلام میں تلاش کرنے کی کوشش کرسکتا ہے۔ اس حیثیت سے **حدیث میر** میں میر کی جو شبیہہ شامل کی گئی ہے وہ ہرچند کہ خیالی ہے لیکن باکمال مصور نے میر کی ذہنی کیفیات کو ابھارنے میں فن کارانہ تخلیقی بصیرت سے کام لیا ہے۔ میر کی یہ ذہنی اور تخیلی شبیہہ عہد میر اور کلام میر کے مبصر سید مسعود حسن رضوی ادیب کی ہدایات اور خود میر کی زندگی اور شاعری کی روشنی میں مشہور آرٹسٹ عظمت اللہ خاں رام پوری کے موقلم کی تخلیق ہے مصور نے اس سج دھج کو بھی سامنے رکھا ہے جس کی عکاسی مولانا محمد حسین آزاد نے آب حیات میں اس موقع پر کی ہے جب میر لکھنو پہونچے تھے اور ایک مشاعرے میں شریک ہوئے تھے اور اس کیفیت کو بھی جسے خود اس کی تخلیقی قوت نے

रक्खा है जिसे स्वयं उनकी रचनात्मक शक्ति ने उभारा है। 'आबे-हयात' में यह चित्र इस प्रकार है—

> "उनकी वज'अ क़दीमाना खिड़कीदार पगड़ी, पचास गज़ के घेर का जामा, एक पूरा थान पिस्तोलिये का कमर से बँधा, एक रूमाल पटरीदार तह किया हुआ उसमें आवेज़ाँ, मशरूअ का पाजामा जिसके अरज़ के अरज़ पायँचे, नागफनी की अनीदार जूती, जिसकी डेढ़ बालिश्त ऊँची नोक; कमर में एक तरफ़ सैफ़ यानी सीधी तलवार, दूसरी तरफ़ कटार, हाथ में जरीब।"

यह तो हुआ बाह्य रूप, इसका एक आभ्यन्तरिक रूप भी था जिसे चित्र में प्रमुख करना आवश्यक था। मेरा विचार है कि इस चित्र में, जो प्रस्तुत किया जा रहा है, मीर का बाँकपन, गर्व एवं प्रसन्न मुद्रा सभी का मेल है।

एक मीर यह हैं—

सारे रिन्द औबाश जहाँ के तुमसे सुजूद में रहते हैं
बाँके, टेढ़े, तिरछे, तीखे सबका तुमको इमाम किया

दूसरे मीर हैं—

क़ामत ख़मीद:, रंग शिकस्त:, बदन नज़ार
तेरा तो 'मीर' ग़म में अजब हाल हो गया

और तीसरे मीर हैं—

सर किसी से फ़रो नहीं आता
हैफ़ बन्दे हुए ख़ुदा न हुए

मुझे इस चित्र में "मीर" की यह सारी विशेषताएं दिखाई देती हैं इसलिए मुझे विश्वास है कि "हदीसे मीर" के अध्येता चित्रकार की रचना-प्रक्रिया की भी दाद देंगे।

नामुरादान: ज़ीस्त करता था
"मीर" का तौर याद है हमको

इस "नामुरादान: ज़ीस्त" का भयंकर परिणाम देखिए कि आज मीर की क़ब्र तक का सही पता नहीं मिलता। राजा साहब महमूदाबाद के पुस्तकालय में मीर के चौथे दीवान (काव्य संग्रह) का हस्त-लेख मीर के दामाद मीर हसन 'तजल्ली' के हाथ का लिखा हुआ मौजूद था (कहा नहीं जा सकता कि अब कहाँ है) और जिसको स्वयं मीर ने अपने शिष्य मुहम्मद हसन उपनाम ज़ैनुद्दीन अहमद को प्रदान किया था; उसके

ابھارا ہے ۔ آب حیات میں یہ تصویر یوں ہے

"ان کی وضع قدیمانہ، کھڑکی دار پگڑی، پچاس گز کے گھیر کا جامہ، ایک پورا تھان پستولیے کا کمر سے بندھا۔ ایک رومال پٹری دار تہہ کیا ہوا اس میں آویزاں، مشروع کا پاجامہ، جس کے عرض کے عرض پائنچے، ناگ پھنی کی انی دار جوتی، جس کی ڈیڑھ بالشت اونچی نوک، کمر میں ایک طرف سیف یعنی سیدھی تلوار دوسری طرف کٹار، ہاتھ میں ریب۔"

یہ تو ہوئی ظاہری ہیئت، اس کا ایک باطنی رخ بھی تھا جسے تصویر میں نمایاں کرنا ضروری تھا۔ میرا خیال ہے کہ اس تصویر میں جو پیش کی جا رہی ہے میر کا بانکپن، غرور اور آشفتہ مزاجی سبھی کی آمیزش ہے۔ ایک میر یہ ہیں

سارے رند اوباش جہاں کے تجھ سے سجود میں رہتے ہیں
بانکے، ٹیڑھے، ترچھے، تیکھے، سب کا تجھ کو امام کیا

دوسرے میر ہیں

قامت خمیدہ، رنگ شکستہ، بدن نزار
تیرا تو میر غم میں عجب حال ہو گیا

اور تیسرے

سرکسی سے فرو نہیں آتا حیف بندے ہوئے خدا نہ ہوئے

مجھے اس شبیہہ میں میر کے یہ سارے پہلو نظر آتے ہیں اس لیے مجھے یقین ہے کہ حدیث میر کا مطالعہ کرنے والے مصوّر کے تخلیقی عمل کی بھی داد دیں گے

نامرادانہ زیست کرتا تھا میر کا طور یاد ہے ہم کو

اس "نامرادانہ" زیست کا عبرت ناک انجام دیکھیئے کہ آج میر کی قبر تک کا صحیح پتہ نہیں ملتا۔ راجہ صاحب محمود آباد کے کتب خانے میں میر کے چوتھے دیوان کا جو قلمی نسخہ میر کے داماد میر حسن تجلّی کے ہاتھ کا لکھا ہوا موجود تھا (کہا نہیں جا سکتا کہ اب کہاں ہے) اور جس کو خود میر نے اپنے شاگرد محمد حسن مخاطب بہ زین الدین احمد کو عنایت کیا تھا، اس کے سادہ

सादा मुखपृष्ठ पर मुहम्मद हसन के हस्त-लिखित वाक्य से केवल उस क़ब्रिस्तान का पता चलता है जहाँ वह दफ़्न किये गये।

> "ब रोज़े जुमअ, बिस्तुम शाबानुल मुकर्रम वक़्ते शाम यक हज़ार व दो सद व बिस्त व पंज हिज्री (१२२५ हिजरी) बूद कि मीर मुहम्मद तक़ी साहब मीर तख़ल्लुस दर शहरे लखनऊ दर मुहल्ला मुतहटी—ब जवारे रहमते एज़दी पैवस्तंद व बरोज़े शंबः—वक़्त दोपहर, दर अखाड़ा भीम कि क़ब्रस्ताने मशहूरस्त निज़दे क़ुबूरे अक़बाए ख़ेश मदफ़ून शुदन्द।'

यह क़ब्रिस्तान "भीम का अखाड़ा" जिसको भीम का तकिया भी कहा जाता है, मिटी स्टेशन लखनऊ से उत्तर की ओर रेलवे पुल के पास है जहाँ अब एक छोटी सी मसजिद बन गयी है और हाल ही में क़ब्रों के चिह्न मिटाकर कई मकान बना लिये गये हैं। सन् १९६४ ई० तक जब यहाँ "शामे-ग़ालिब" मनाई गई थी तब तक कोई निर्माण नहीं हुआ था और लखौरी ईंटों से बनी हुई टूटी क़ब्रों के स्पष्ट चिह्न दूर से दिखाई देते थे; जहाँ लोग फ़ातिहा पढ़ने आया करते थे। यह क़ब्रिस्तान दूर तक फैला हुआ था। कहा जाता है कि इसी क़ब्रिस्तान में मीर अनीस के पिता मीर ख़लीक़ की क़ब्र भी थी, जिसके विषय में मीर अनीस के पोते सैय्यद ख़ुरशीद हस्न उर्फ़ दूल्हा साहब "उरूज" ने अपनी पुस्तक "उरूजे-उर्दू" में लिखा है—

> "छत्ते से आगे बढ़कर रेल का जो पुल है उससे मिला हुआ मीर अनीस का इमामबाड़ा था। इसी इमामबाड़े में मीर अनीस के वालिद मीर ख़लीक़ मरहूम की क़ब्र थी। ग़द्र के ज़माने में अंग्रेज़ों ने मुहल्ला मुतहटी को जिसमें इमामबाड़ा था, तबाह कर दिया।"

इसी किताब में मीर की क़ब्र के विषय में "उरूज" मरहूम का यह उल्लेख भी विचारणीय है—

> "मीर मरहूम की क़ब्र आग़ामीर की ड्योढ़ी वाले स्टेशन के पहलू में रिफ़ाहे-आम की इमारत के सामने वाले क़ब्रिस्तान में मौजूद है। मैंने मीर मरहूम की क़ब्र को अपनी आँखों से देखा है, बल्कि जो उनकी क़ब्र बताई जाती है और उस पर पंजशंबः को चिराग़ रोशन होता है और फूल चढ़ाए जाते हैं, यह वाक़या मेरा देखा हुआ है। अकसर पंजशंब: को मेरा इस रास्ते से गुज़रने का इत्तिफ़ाक़ हुआ है और मैंने उनकी क़ब्र पर रोशनी देखी है।"

उरूज मरहूम की स्वयं अपने हाथ से लिखित यह पुस्तक सय्यद मसूद हसन रिज़वी 'अदीब' के पुस्तकालय में मौजूद है। इस हस्तलेख से लाभान्वित होते

سرورق پر محمد حسن کے ہاتھ کی لکھی ہوئی عبارت سے صرف اس قبرستان کا پتہ چلتا ہے جہاں وہ دفن کیے گئے

"بروز جمعہ بستم شعبان المکرم، وقت شام، یک ہزار و دو صد و بست و پنج ہجری (۱۲۲۵ھ) بود کہ میر محمد تقی صاحب میر تخلص در شہر لکھنؤ در محلہ ست ہٹی

۔ جوار رحمتِ ایزدی پیوستند و روز شنبہ ۔ وقت دوپہر در اکھاڑا بھیم کہ قبرستان مشہور است، نزد بعہ اقربائے خویش، مدفون شدند"

یہ قبرستان **بھیم کا اکھاڑہ** جسے کہ **بھیم کا تکیہ** بھی کہا جاتا ہے ۔ سٹی اسٹیشن لکھنؤ سے اتر جانب ریلوے پل کے پاس ہے جہاں اب ایک چھوٹی سی مسجد بن گئی ہے اور حال ہی میں قبروں کے نشانات مٹا کر کئی مکان تعمیر کرلیے گئے ہیں ۔ ۱۹۶۴ء تک جب یہاں شام غالب منائی گئی تھی کوئی تعمیر نہیں تھی اور لکھوری اینٹوں سے بنی ہوئی شکستہ قبروں کے واضح نشانات دور سے دکھائی دیتے تھے، جہاں لوگ فاتحہ پڑھنے آیا کرتے تھے ۔ یہ قبرستان دور تک پھیلا ہوا تھا ۔ کہا جاتا ہے کہ اسی قبرستان میں **میر انیس** کے والد میر خلیق کی قبر بھی تھی ۔ جس کے بارے میں میر انیس کے پوتے سید **خورشید حسن** عرف دولھا صاحب عروج نے اپنی کتاب عروجِ اردو میں لکھا ہے

"چھتے سے آگے بڑھ کے ریل کا جو پل ہے اس سے ملا ہوا میر انیس کا امام باڑہ تھا اسی امام باڑے میں میر انیس کے والد میر خلیق مرحوم کی قبر تھی ۔ غدر کے زمانے میں انگریزوں نے محلہ ست ہٹی کو جس میں امام باڑہ تھا، تباہ کر دیا"

اسی کتاب میں میر کی قبر کے بارے میں عروج مرحوم کا یہ اندراج بھی قابل غور ہے

"میر مرحوم کی قبر آغا میر کی ڈیوڑھی والے اسٹیشن کے پہلو میں رفاہ عام کی عمارت کے سامنے والے قبرستان میں موجود ہے ۔ میں نے میر مرحوم کی قبر کو اپنی آنکھوں سے دیکھا ہے بلکہ جو ان کی قبر بتائی جاتی ہے اس پر پنجشنبہ کو چراغ روشن ہوتا ہے اور پھول چڑھائے جاتے ہیں اور یہ واقعہ میرا دیکھا ہوا ہے ۔ ہر پنجشنبہ کو میرا اس راہ سے گزرنے کا اتفاق ہوا ہے اور میں نے ان کی قبر پر روشنی دیکھی ہے"

عروج مرحوم کے دست خاص کی لکھی ہوئی یہ کتاب سید مسعود حسن رضوی ادیب کے کتب خانے میں موجود ہے

हुए मीर की क़ब्र के बारे में मेरे पूछने पर सय्यद मसूद हसन रिज़वी साहब ने बताया कि—

> "सिटी स्टेशन से डालीगंज स्टेशन को जाने वाली छोटी लाइन की पटरी के किनारे रेल के छत्ते के क़रीब ज़रा ऊँचाई पर कुछ पुरानी क़ब्रें थीं। उनमें एक क़ब्र मामूली साइज़ से कुछ बड़ी और बहुत मुस्तहकम थी। मैं अपने लड़कपन से इसको मीर की क़ब्र सुनता आया हूँ। मेरी उम्र इस वक़्त (१४ सफ़र सं: १३८७ हिज्री) ७६ साल से कुछ ऊपर है। मेरे लडकपन मे बड़े-बूढे लोग भी इसको मीर की क़ब्र बताते थे। इस तरह साफ़ ज़ाहिर है कि लगभग सवा सौ बरस पहले भी यह मीर की क़ब्र समझी जाती थी।"

पर्याप्त प्रमाण के अन्वेषक सम्भवतः किसी क़ब्र को भी केवल सुनी सुनाई बातों के आधार पर मीर की क़ब्र मानने में संकोच करेंगे परन्तु वर्तमान ज्ञान के प्रकाश में इससे अधिक कहना कुछ कठिन है। इस विचार से कि यह भ्रमात्मक स्मारक भी समय के अपहरण का शिकार होकर केवल काल्पनिक न रह जाय—क़ब्रिस्तान का चित्र भी प्रकाशन में सम्मिलित है जिससे कि इस दर्शनीय व्यक्तित्व के अन्तिम विश्राम-स्थल को ढूंढ़नेवाली आँखें भूतल पर न सही, इन पृष्ठों में तो इनका दर्शन कर ही लें।

मीर खुदा-ए-सुख़न (कवीश्वर) और ताजदारे फ़न (कला-सम्राट) हैं और उनके व्यक्तित्व और कला से सम्बद्ध किसी ग्रन्थ का समर्पण एक मुकुटधारी ही को शोभा देता था। इसी कारण मैंने वर्तमान काल के नवयुवक विज्ञानप्रेमी, विचारक, मधुरभाषी एवं योग्य साहित्यिक तथा कवि हिज़ मैजिस्टी महेन्द्र वीर विक्रम शाह देव, नेपाल नरेश की सेवा में समर्पण की आज्ञा देने के लिए प्रार्थना प्रस्तुत की। मुझे गर्व है कि मौसूफ़ सरकार ने मेरे प्रार्थना-पत्र को स्वीकार करके मुझे सदा के लिए अनुगृहीत कर लिया। इस आदर और सम्मान ने मेरा मनोबल बहुत ऊँचा कर दिया और काव्य तथा साहित्य से सम्बद्ध व्यक्तियों के हृदय, मौसूफ़ सरकार की इस अनुकम्पा से आप्लावित और मुग्ध हो गए। पत्र-पत्रिकाओं ने मौसूफ़ सरकार के इस विज्ञान-प्रेम और साहित्य प्रेम का बड़े उल्लास से स्वागत किया और प्रशंसा व उल्लास के प्रमोद पुष्प निछावर किये। महामहिम श्री ५ महाराजाधिराज द्वारा यह सम्मान मेरा ही नहीं अपितु 'मीर-अकादमी' और विद्या तथा साहित्य का वास्तविक सम्मान है। साहित्य प्रेमी महाराजा नेपाली भाषा के श्रेष्ठ

اس قلمی نسخے سے استفادہ کرتے ہوئے میر کی قبر کے بارے میں میرے استفسارات پر سید مسعود حسن رضوی صاحب نے بتایا کہ

> "سٹی اسٹیشن سے ڈالی گنج اسٹیشن کو جانے والی چھوٹی لائن کی پٹری کے کنارے ریل کے پھاٹک کے قریب ذرا بلندی پر کچھ پرانی قبریں تھیں۔ ان میں ایک قبر معمولی سائز سے کچھ بڑی اور بہت مستحکم تھی۔ میں اپنے لڑکپن سے اس کو میر کی قبر سنتا آیا ہوں۔ میری عمر اس وقت (۱۴ صفر ۱۳۸۰ھ) چھتر سال سے کچھ اوپر ہے۔ میرے لڑکپن میں بڑے بوڑھے لوگ بھی اس کو میر کی قبر بتاتے تھے۔ اس طرح صاف ظاہر ہے کہ تقریباً سوا سو برس پیشتر بھی یہ میر کی قبر سمجھی جاتی تھی"

ثقہ محقق غالباً کسی قبر کو محض شنیدہ کی بنیاد پر میر کی قبر ماننے میں تامل کریں گے لیکن موجودہ معلومات کی روشنی میں اس سے زیادہ کچھ کہنا مشکل ہے۔ اس خیال سے کہ یہ موہوم یادگار بھی زمانے کی دست برد کا شکار ہو کر محض خیالی نہ رہ جائے۔ قبرستان کا فوٹو بھی شریک اشاعت ہے تاکہ اس واجب الزیارت شخصیت کی آخری آرام گاہ کی جستجو کرنے والی آنکھیں روئے زمین پر نہ سہی ان اوراق میں تو اس کی زیارت کر ہی لیں

میر خدائے سخن اور تاجدار فن ہیں ان کی شخصیت اور فن سے متعلق کسی صحیفے کا انتساب ایک تاجدار ہی کو زیب دیتا تھا۔ اسی لیے میں نے دور حاضر کے جواں سال علم دوست، مفکر، خوش لہجہ اور صاحب طرز ادیب اور شاعر عالی جاہ ہز میجسٹی **مہندر بیر بکرم شاہ دیو** فرماں روائے نیپال کی خدمت میں اذن انتساب کی درخواست پیش کی۔ مجھے فخر ہے کہ عالی جاہ نے میری درخواست کو شرف قبولیت عطا فرما کر مجھے ہمیشہ کے لیے اپنا رہین کرم بنا لیا۔ اس قدر افزائی اور عزت بخشی نے میرے حوصلے بہت بلند کر دیئے اور وابستگان شعر و ادب کے دل عالی قدر کی اس کرم گستری سے مسخر و مسحور ہو گئے۔ اخبار و جرائد نے شاہ کی اس علم دوستی اور ادب نوازی کا بڑے جوش و خروش سے خیر مقدم کیا اور مدح و ستائش کے گل ہائے مسرت نچھاور کیے

شاہ عالی مرتبت کی یہ قدر افزائی صرف میری ہی نہیں بلکہ میر اکاڈمی اور علم و ادب کی حقیقی قدر افزائی ہے۔ ادب نواز شاہ، نیپالی زبان کے بلند مرتبہ ادیب

साहित्यकार तथा सर्वप्रिय और उच्चाशय कवि हैं, और ग़ज़ल और क़व्वाली में सहज अभिरुचि रखते हैं। स्वनामधन्य मौसूफ़ सरकार उन मोतियों के सच्चे जौहरी हैं जो हम उनकी सेवा में अर्पण करने का गौरव प्राप्त कर रहे हैं। महामहिम के सीने में एक शासक के हृदय के साथ एक मानवतावादी तथा मानवता से प्रेम रखने वाले वास्तविक कवि का हृदय भी है। महामहिम के चित्ताकर्षक नेपाली काव्य का संग्रह संसार की कई भाषाओं में प्रकाशित होकर प्रसिद्ध और प्रशंसित हो चुका है। अकादमी भी शीघ्र ही इस श्रेष्ठ काव्य का उर्दू छंदोबद्ध अनुवाद उर्दू तथा हिन्दी दोनों लिपियों में प्रकाशित कर रही है जो एक अपूर्व वस्तु होगी। यह कहना ग़लत न होगा कि यह विचार बिंदु नेपाली भाषा से उर्दू भाषा में प्रथम गौरव-पूर्ण वस्तु होगी जिसके कारण भाषिक एकता की जड़ें सुदृढ़ होंगी और एक भाषा का काव्यात्मक और साहित्यिक सौंदर्य, दूसरी भाषा के सौंदर्य सुषमा में वृद्धि करेगा।

हमें 'हदीसे-मीर' में हिज़ इम्पीरियल मैजेस्टी शहंशाह ईरान का संदेश और शुभ चित्र की प्रतिच्छवि सम्मिलित करने का गौरव भी प्राप्त है। यशस्वी शहंशाह ने इस पुस्तिका के लिए अपना जो विशिष्ट संदेश एवं अपने चित्र की प्रतिच्छवि विशेष रूप से अपने हस्ताक्षर के साथ प्रदान किया है, वह विश्व शांति, विश्व की एकता और साहित्य सेवा के अमूल्य संदेश की गणना में आता है। इससे ईरान और हिन्दुस्तान के पुरातन मैत्री सम्बन्ध; सहिष्णुता और पारस्परिक एकता तथा ऐकमत्य पर प्रकाश पड़ता है और यह फ़ारसी भाषा और उसके सांस्कृतिक प्रभावों को परिलक्षित करता है, जिससे उर्दू भाषा और हमारा सामाजिक जीवन सदा ही प्रभावित हुए हैं।

शैलीकार गद्य लेखक मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी ने आमुख लिखने का कष्ट करके 'हदीसे-मीर' के गौरव में वृद्धि की है। इनके कृतज्ञता-ज्ञापन के लिए हम रूहुल कुद्स (वृहस्पति) की वाणी कहाँ से लाएँ कि उऋण हो सकें। यूं भी उक्त महाभाग का व्यक्तित्व परम्परागत आभार और कृतज्ञता-प्रकाशन की अपेक्षा बहुत उन्नत है और अभिव्यक्ति की विवशता को निरावृत करता है।

प्रोफ़ेसर सैय्यद एहतिशाम हुसैन का नाम, जिनके लिए मेरे हृदय में बड़ा आदर है,

اور ہر دل عزیز و بلند فکر شاعر ہیں اور غزل و قوالی سے والہانہ ذوق رکھتے ہیں۔ موصوف ان موتیوں کے حقیقی جوہری ہیں جو ہم ان کی خدمت عالی میں نذر کرنے کا فخر حاصل کر رہے ہیں۔ عالی جاہ کے پہلو میں ایک تاجدار کے دل کے ساتھ ایک انسان دوست اور انسانیت سے محبت رکھنے والے فطری شاعر کا دل بھی ہے۔ عالی جاہ کے دل پذیر نیپالی کلام کا مجموعہ دنیا کی کئی زبانوں میں شایع ہوکر مقبول و محمود ہو چکا ہے۔ اکاڈمی بھی عنقریب اس کلام بلاغت نظام کا اردو منظوم ترجمہ اردو و ہندی دونوں رسم خط میں شایع کر رہی ہے جو خاصے کی چیز ہوگی۔ یہ کہنا غلط نہ ہوگا کہ یہ تراوش فکر نیپالی زبان سے اردو زبان میں پہلی لائق فخر پیش کش ہوگی جس کی وجہ سے لسانی اتحاد کی بنیادیں استوار ہوں گی اور ایک زبان کا شعری و ادبی حسن دوسری زبان کے حسن و جمال میں اضافہ کرے گا

ہمیں حدیث میر میں ہز امپیریل میجسٹی **شہنشاہ ایران** کا پیغام اور شبیہ مبارک کا عکس شامل کرنے کا فخر بھی حاصل ہے۔ شہنشاہ ذی وقار نے اس صحیفے کے لیے اپنا جو مخصوص پیغام اور اپنی شبیہہ کا عکس اپنے دستخط خاص کے ساتھ مرحمت فرمایا ہے وہ عالمی امن، بین الاقوامی یگانگت اور ادب پروری کے گراں قدر پیغام کی حیثیت رکھتا ہے۔ اس سے ایران اور ہندوستان کے دیرینہ دوستانہ تعلقات، رواداری اور باہمی اتحاد و اتفاق پر روشنی پڑتی ہے اور فارسی زبان اور اس کے تہذیبی اثرات کو ظاہر کرتی ہے۔ جس سے اردو زبان اور ہماری معاشرتی زندگی ہمیشہ متاثر ہوئی ہے

صاحب اسلوب انشا پرداز مولانا **عبدالماجد** دریابادی نے پیش لفظ تحریر فرما کر **حدیث میر** کے وقار میں اضافہ فرمایا ہے۔ ان کے شکریئے کے لیے ہم روح القدس کی زبان کہاں سے لائیں کہ حق ادا ہو۔ یوں بھی موصوف کی ذات رسمی تشکر و امتنان سے بہت بلند ہے اور عجز اظہار کی پردہ پوشی کرتی ہے

پروفیسر سید **احتشام حسین** کا نام، جن کی میرے دل میں بڑی قدر ہے

यदि इस संदर्भ में उद्धृत न होगा तो बड़ी कृतन्धता होगी। वह कई बार केवल 'हदीसे मीर' को क्रम से पूर्ण कराने के सम्बन्ध में इलाहाबाद से लखनऊ पधारे और अनेकों बार अपनी लाभप्रद सम्मतियों से हमारा मार्ग प्रदर्शन किया। व्यक्तिगत सम्बन्धों के अतिरिक्त उक्त महोदय को उर्दू साहित्य के प्रचार से जो रुचि है वह भी इस प्रेम की प्रेरक रही है। इस कारण उनका आग्रह है कि उनके लिए धन्यवाद का शब्द प्रयोग न किया जाय।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के उन लेखकों के प्रति आभार प्रकट करना भी मेरा रुचिकर कर्त्तव्य है जिन्होंने अपने अति मूल्यवान विचार-बिन्दु प्रदान किये। इन विषयों को मैंने "हदीसे-ज़ात", "हदीसे-कायनात", "हदीसे-फ़न" की कक्षाओं में विभाजित कर दिया है। "हदीसे-फ़न" में काव्य-चयन के अतिरिक्त "मीर की कहानी मीर की ज़बानी" सम्मिलित है जिसको सय्यद मसूद हसन रिज़वी "अदीब" ने क्रमबद्ध किया है। इस क्रम के पश्चात् एक निबन्ध "मीर के बाद" सम्मिलित किया गया है जिसे मीर के प्रसग की अन्तिम कड़ी कह सकते हैं। सय्यद मसूद हसन रिज़वी "अदीब" के प्रति आभार प्रकट करना भी मेरा कर्त्तव्य है, जिनकी अनुकम्पा सदा साथ रही है।

शुभ स्मृति! मौलाना खैर बहोरवी, अध्यक्ष "गालिब अकादमी" बनारस का स्थान मेरे गुरु का है और गुरु-चेले के मध्य जो सम्बन्ध होता है, वहाँ आभार और प्रशसा का स्थान शेष नहीं रहता। आपने घर-बार छोड़ कर लखनऊ में निवास किया एवं अत्यन्त संलग्नता, सत्यनिष्ठा तथा तत्परता के साथ अपने अपरिमित ज्ञान को काम में लाकर "हदीसे-मीर" के सम्पादन, संशोधन तथा अलंकरण में मेरा सहयोग दिया। यदि उनके अथक परिश्रम का सहयोग प्राप्त न होता तो सम्भवतः हम "हदीसे-मीर" को रंग-रस में डूबी हुई दुल्हन बनाकर प्रस्तुत न कर सकते।

बड़ी कमी रह जायगी यदि पद्म भूषण नव्वाब मिर्ज़ा जाफ़र अली खाँ "असर" लखनवी की चर्चा न की जाय, जिनको अभी मरहूम (स्वर्गीय) कहने को जी नहीं चाहता: मरहूम, मीर पर सनद (प्रमाण) का स्थान रखते थे और उनका नाम मीर के प्रेमियों में सदैव बड़े आदर एवं श्रद्धा के साथ लिया जायगा। वह ६ जून

اگر اس سلسلے میں قلم کی زبان پر نہ آئے گا تو بڑی ناسپاسی ہوگی ۔ وہ کئی بار صرف حدیث میر کی ترتیب و تکمیل کے سلسلے میں الہ آباد سے لکھنو تشریف لائے اور بارہا اپنے مفید مشوروں سے ہماری راہ نمائی فرمائی ۔ ذاتی تعلقات سے قطع نظر موصوف کو اردو ادب کی ترویج سے جو دلچسپی ہے وہ بھی اس شغف کی محرک رہی ہے اس لیے انھیں اصرار ہے کہ ان کے لیے شکریے کا لفظ استعمال نہ کیا جائے

ہندوستان اور پاکستان کے ان ارباب قلم کا شکریہ بھی ادا کرنا میرا خوش گوار فرض ہے جنھوں نے اپنے گراں قدر رشحات فکر عنایت فرمائے ۔ ان مضامین کو میں نے **حدیث ذات** **حدیث کائنات** اور **حدیث فن** کے عنوانوں میں تقسیم کر دیا ہے ۔ **حدیث فن** میں انتخاب کلام کے علاوہ "میر کی کہانی میر کی زبانی" بھی شامل ہے جس کو سید **مسعود حسن** رضوی ادیب نے ترتیب دیا ہے ۔ اس ترتیب کے بعد ایک مضمون "میر کے بعد" شامل کیا گیا ہے جسے داستان میر کی آخری کڑی کہہ سکتے ہیں ۔ سید مسعود حسن رضوی ادیب کا شکریہ ادا کرنا بھی میرا فرض ہے جن کی عنایتیں ہمیشہ شامل حال رہی ہیں

یادش بخیر! مولانا **خیر بہوروی** صدر غالب اکاڈمی بنارس کی حیثیت میرے استاد کی ہے اور استاد و شاگرد کے درمیان جو رابطہ ہوتا ہے وہاں سپاس و ستائش کی گنجائش باقی نہیں رہتی آپ نے گھر بار چھوڑ کر لکھنو میں قیام کیا اور انتہائی انہماک، خلوص، مستعدی سے اپنی لا محدود معلومات کو کام میں لاکر حدیث میر کی ترتیب و تہذیب اور تزئین و آرائش میں میرا ہاتھ بٹایا ۔ ان کی انتھک محنت ساتھ نہ دیتی تو شاید ہم حدیث میر کو عروس جمیل بناکر پیش نہ کر سکتے

بڑی کمی رہ جائے گی اگر پدم بھوشن نواب مرزا **جعفر علی خاں** اثر لکھنوی کا ذکر نہیں کیا جائے گا جن کو ابھی مرحوم کہنے کو جی نہیں چاہتا ۔ مرحوم میر پر سند کی حیثیت رکھتے تھے اور ان کا نام میر کے عاشقوں میں ہمیشہ بڑے احترام کے ساتھ لیا جائے گا ۔ وہ ۶ جون

सन् १९६७ ई० को प्रातः साढ़े पाँच बजे ८६ वर्ष की आयु में अपने मकान कश्मीरी मुहल्ले में परलोक सिधार गये एवं लखनऊ के एक युग को अपने साथ ले गये। स्वर्गीय लगभग चार वर्ष से अस्वस्थ थे। मस्तिष्क पर फ़ालिज का असर था। न बोल सकते थे न लिख सकते थे। इनकी मृत्यु से छः मास पूर्व ४ जनवरी सन् १९६७ ई० को मैंने उनका चित्र खिंचवाया था, जो "हदीसे-मीर" की शोभा है। यह उनकी अन्तिम दशा का चित्र है जिस पर वह कठिनाई से "असर" लिख सके थे।

तहसीन अली खाँ की मस्जिद को मीर के जीवन निर्माण से पृथक नहीं किया जा सकता। अतएव इसका चित्र भी सम्मिलित कर दिया गया है। यह मस्जिद चौक, लखनऊ में आज भी स्थित है। इसे सन् १२०५ हिज्री में तहसीन अली खाँ ने बनवाया था। इसके मुख-पट्ट पर प्रसिद्ध खुश नवीस हाफ़िज अब्दुल्लाह के हाथ का लिखा हुआ क़तए-तारीख़ है।

ईं ख़ाना कि जलवा-गाहे अनवारे अली स्त तामीरे खोजस्ते सईये अफ़ज़ली स्त
आसिफ़ ज़े सिरद साले बिनायश पुरसीद गुफ़्ता कि बुगो मस्जिदे तहसीने अली स्त
१२०५ हिजरी

यह हाफ़िज अब्दुल्लाह वही हैं जिनसे अवध में ख़ुशनवीसी का आरम्भ हुआ।

मीर का एक हस्तलेख और कुल्लियाते-मीर के एक हस्तलिखित और दो छपी प्रतियों की छाया भी प्रकाशन में सम्मिलित हैं। कुल्लियात की एक छाया उस कुल्लियात के प्रथम पृष्ठ की है जो मीर की मृत्यु के एक वर्ष उपरान्त सन् १८११ ई० में फ़ोर्ट विलियम कालेज की ओर से हिन्दुस्तानी प्रेस कलकत्ता में नसतालीक़ टाइप में छपा था। यह नुस्ख़ा एशियाटिक सोसाइटी बंगाल, कलकत्ता और कुछ अन्य पुस्तकालयों में विद्यमान है। दूसरी छाया उस कुल्लियात की है जो श्री अली बहादुर नव्वाब बाँदा की सहायता से पहली बार सन् १८६८ ई० में मुन्शी नवल किशोर प्रेस, लखनऊ में छपा था। तीसरी छाया उस हस्तलिखित प्रति की है जो एशियाटिक सोसाइटी बंगाल की सम्पत्ति

۱۹۶۷ء صبح ساڑھے پانچ بجے ۸۶ سال کی عمر میں اپنے مکان کشمیری محلہ میں انتقال فرما گئے اور لکھنو کے ایک دور کو اپنے ساتھ لے گئے۔ مرحوم تقریباً چار سال سے صاحب فراش تھے دماغ پر فالج کا اثر تھا نہ بول سکتے تھے نہ لکھ سکتے تھے۔ ان کے انتقال سے چھ ماہ پہلے ۴ جنوری ۱۹۶۷ء کو میں نے ان کی تصویر کھنچوائی تھی جو حدیث میر کی زینت ہے۔ یہ ان کی آخری حالت کی تصویر ہے۔ جس پر وہ بہ مشکل اثر لکھ سکے تھے

تحسین علی خاں کی مسجد کو میر کے سوانحی حالات سے الگ نہیں کیا جا سکتا۔ اس لیے اس کا فوٹو بھی شامل کر دیا گیا ہے۔ یہ مسجد چوک لکھنو میں آج بھی موجود ہے۔ اسے ۱۲۰۵ھ ہجری نبوی صلعم میں تحسین علی خاں نے تعمیر کرایا تھا۔ اس کی رو کار پر مشہور خوش نویس حافظ عبداللہ کے ہاتھ کا لکھا ہوا قطعۂ تاریخ ہے

این خانہ کہ جلوہ گاہِ انوارِ جلیست — تعمیر مقدسِ سعیدِ ازلیست
آصف زخرد سال بنایش پرسید — گفتا کہ بگو، مسجد تحسین علیست

۱۲۰۵ھ ہجری

یہ حافظ عبداللہ وہی ہیں جن سے اودھ میں خوش نویسی کی بنیاد پڑی

میر کی ایک تحریر اور کلیات میر کے ایک قلمی اور دو مطبوعہ نسخوں کے عکس بھی شریک اشاعت ہیں جو اپنی افادیت کے لحاظ سے بڑی اہمیت رکھتے ہیں

تحریر کا عکس رام بابو سکسینہ کی مرتب کی ہوئی مثنویات میر بہ خط میر سے لیا گیا ہے۔ کلیات کا ایک عکس اس کلیات کے پہلے صفحے کا ہے جو میر کی وفات کے سال بھر بعد ۱۸۱۱ء میں فورٹ ولیم کالج کی طرف سے ہندوستانی پریس کلکتہ میں نستعلیق ٹائپ سے چھپا تھا۔ یہ نسخہ ایشیاٹک سوسائٹی بنگال کلکتہ اور بعض دوسرے کتب خانوں میں موجود ہے۔ دوسرا عکس اس کلیات کا ہے جو نواب علی بہادر والی باندہ کی اعانت سے پہلی بار ۱۸۶۸ء میں مطبع منشی نول کشور لکھنو میں چھپا تھا۔ تیسرا عکس اس قلمی نسخے کا ہے جو ایشیاٹک سوسائٹی بنگال کی ملک ہے

है। यह प्रति चार जिल्दों में विभक्त है। हर जिल्द के आरम्भ और अन्त में फ़ोर्ट विलियम कालेज की मुहर लगी हुई है। दूसरी जिल्द में कुछ भाग गद्य का है।

एक उच्चकोटि की रचना के लिए सुरुचिपूर्ण लेख, अच्छा मुद्रण, सुन्दर छपाई और उत्तम आवरण भी अत्यन्त आवश्यक होता है। इसी कारण से 'हदीसे-मीर' को एक आदर्श रूप देने का प्रयत्न किया गया है। मुद्रण और आवरण सज्जा के लिए मैं श्री छोटेलाल जी भार्गव (जी० डब्ल्यू० लॉरी कम्पनी) का आभारी हूँ। चित्रों को रंगों से सुसज्जित, मेरे पुराने मित्र आनन्द जी (सी० मल एण्ड कं०) की क़लम ने किया है जिसके लिए वह मेरे हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं। इन मित्रों ने व्यक्तिगत रूप से ध्यान देकर 'हदीसे-मीर' को ऐसा सुन्दर और सुरूप बना कर प्रस्तुत किया है जो कदाचित किसी और रूप में सम्भव न होता। मैं उन तमाम महानुभावों का आभारी हूँ जिन्होंने किसी प्रकार से भी 'हदीसे-मीर' को पूर्ण करने में अपना सुयोग प्रदान किया है।

अपनी सामर्थ्य भर मैंने 'हदीसे-मीर' को उपयोगी, मनोहरी और सुन्दर बनाने का प्रयत्न किया है। फिर भी मैं स्वीकार करता हूँ कि बहुत सी त्रुटियाँ रह गई होंगी जो मनुष्योचित हैं। इस पुस्तक को मैं इस आशा से प्रस्तुत कर रहा हूँ कि इससे न केवल हमें अपनी सांस्कृतिक निधि से अनुराग उत्पन्न होगा वरन् महान् पड़ोसी देशों से हमारे सांस्कृतिक सम्बन्ध दृढ़ होंगे और काव्य तथा साहित्य के आदान-प्रदान द्वारा हमारे हृदय भी एक दूसरे के निकटतम आ जायँगे। मुझे विश्वास है कि इस अभिलाषा की पूर्ति में आप भी मेरा साथ देंगे। इस कामना के पर्दे में भी मुझे मीर का वह उत्तम स्वर सुनाई देता है जो मानव एकता का संदेशवाहक है।

वजहे बेगानगी नहीं मालूम
तुम जहाँ के हो वाँ के हम भी हैं

लखनऊ
नवम्बर १९६७ ई०

मक़बूल अहमद लारी

یہ نسخہ چار جلدوں پر مشتمل ہے ۔ ہر جلد کے شروع اور آخر میں فورٹ ولیم کالج کی مہر لگی ہوئی ہے
جلد دوم میں کچھ حصّہ نثر کا بھی ہے

ایک بلند پایہ تصنیف کے لیے دیدہ زیب کتابت ، حسین طباعت اور نفیس جلد بندی بھی نہایت ضروری ہوتی ہے ۔ اس لحاظ سے حدیثِ میرؔ کو ایک مثالی صورت دینے کی کوشش کی گئی ہے ۔ طباعت اور جلد بندی کے لیے میں چھوٹے لعل جی بھارگو ، جی ۔ ڈبلو ۔ لاری کمپنی کا ممنون ہوں ۔ تصویروں میں رنگ آمیزی میرے دیرینہ دوست آنند جی سی ۔ مل اینڈ کمپنی کے قلم نے کی ہے جس کے لیے وہ میرے دلی شکریے کے مستحق ہیں ۔ ان دوستوں نے اپنی ذاتی توجہ سے حدیثِ میرؔ کو ایسا حسین و جمیل بنا کر پیش کیا ہے جو غالباً کسی اور صورت میں ممکن نہ ہوتا ۔ میں ان تمام حضرات کا شکر گزار ہوں جنھوں نے کسی حیثیت سے بھی حدیثِ میرؔ کی تکمیل میں میرا ہاتھ بٹایا ہے

اپنے مقدور بھر میں نے حدیثِ میرؔ کو مفید ، دلچسپ اور حسین بنانے کی کوشش کی ہے پھر بھی مجھے اعتراف ہے کہ بہت سی خامیاں رہ گئی ہوں گی جو لازمۂ بشری ہیں ۔ اس صحیفے کو میں اس امید پر پیش کر رہا ہوں کہ اس سے نہ صرف ہمیں اپنے تہذیبی ورثے سے محبت پیدا ہوگی بلکہ عظیم الشان ہمسایہ ممالک سے ہمارے ثقافتی رشتے استوار ہوں گے اور شعر و ادب کے لین دین کے ذریعے ہمارے قلوب بھی ایک دوسرے سے اور قریب آجائیں گے ۔ مجھے یقین ہے کہ اس خواہش میں آپ بھی میرے شریک ہوں گے ۔ اس تمنا کے پردے میں بھی مجھے میرؔ کی وہ آواز سنائی دیتی ہے جو اتحادِ انسانی کی نقیب ہے

وجہ بیگانگی نہیں معلوم
تم جہاں کے ہو واں کے ہم بھی ہیں

لکھنؤ
نومبر ۱۹۶۴ء

مقبول احمد لاری

جی میں آتا ہے کہ کچھ اور بھی موزوں کیجے
دردِ دل ایک غزل میں تو سُنایا نہ گیا

जी में आता है कि कुछ और भी मौज़ूँ कीजे
दर्दे दिल एक ग़ज़ल में तो सुनाया न गया

एक बात और

हम कुछ भी सोचें, प्रकृति को भली प्रकार विदित होता है कि किस कार्य के लिए कौन सा समय परम उपयुक्त है। हमारी द्रुतगामी प्रवृत्ति जो कुछ चाहती है, समय उसमें बाधा उत्पन्न करके हमारा परीक्षण करता और हमारे प्रयासों को निष्फल बनाता है किन्तु जब धैर्य प्रतीक्षा की परिधि पार करने लगता है तब वह हमें सफलता के सन्निकट लाकर सन्तोष देता है जो प्रतीक्षा में हुए अनेक कष्टों की भावना को समाप्त कर देता है ।

परमात्मा का कृतज्ञ हूँ कि "हदीसे मीर" के लिए भारतीय गणतन्त्र के राष्ट्रपति महामहिम डा० ज़ाकिर हुसैन खां साहब के पुनीत विचारों को प्रकाशित करने का गौरव प्राप्त कर रहा हूं। यह भी परम हर्ष का विषय है कि हिज़ एक्सिलेन्सी माननीय राज बहादुर महोदय, नेपाल में नियुक्त भारतीय राजदूत ने अपना स्नेहपूर्ण सन्देश देकर इस कार्य की सफलता में प्रेरणा दी। इन सब को धन्यवाद देने में शब्द गूंगे और ज़बान ख़ामोश है कि कृतज्ञता के भावों को निभाना उनके लिए बहुत कठिन हो रहा है।

हमने जब "हदीसे मीर" प्रस्तुत करने की योजना बनाई थी उसी समय हमारी मनोकामना थी कि यह केवल एक साहित्यिक ग्रन्थ ही न हो बल्कि वह हमारे महान पड़ोसी राष्ट्रों के बीच प्रेम, मित्रता और सहिष्णुता का माध्यम भी बने। आकांक्षा करने वाला कैसा ही हो किन्तु यदि भावना दृढ़ और कामना सच्ची हो तो फल भी पुनीत होता है अतएव पर्याप्त विलम्ब होने पर भी मेरी मनोकामना पूरी हो गई। अब मैं गर्व से कह सकता हूं कि:—

लिल्लहिल्हम्द हरां चीज़ कि ख़ातिर मी ख्वास्त
आख़िर आमद ज़े पसे परदए तक़दीर पदीद

लखनऊ — मक़बूल अहमद लारी

२६ सितम्बर, १९६८

ایک بات اور

ہم کچھ بھی سوچیں قدرت اس بات کو خوب جانتی ہے کہ کس کام کے لیے سب سے زیادہ مناسب وقت کون سا ہے۔ ہماری عجلت پسندی جو کچھ چاہتی ہے وقت اس میں روک لگا کر ہمیں آزماتا ہے اور ہماری کوششوں کو مہمیز کرتا ہے اور جب پیمانۂ صبر لبریز ہونے کے قریب ہوتا ہے تو ہمیں کامیابی سے ہم کنار کر کے تسکین بخشتا ہے جو کلفتوں کے سارے احساس مٹا دیتی ہے

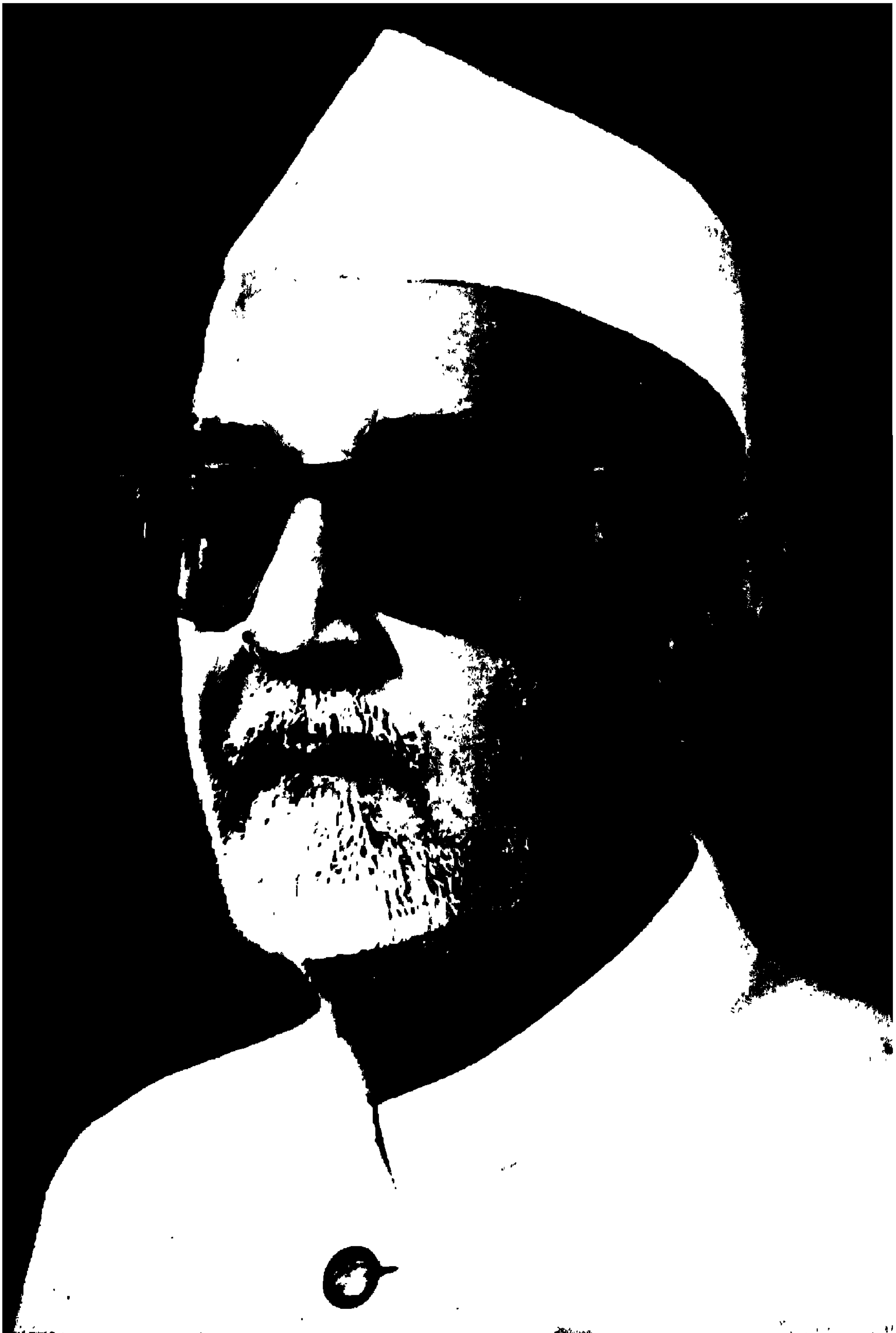
خدا کا شکر ہے کہ حدیث میر کے لیے عالی مرتبت سربراہ مملکت ڈاکٹر ذاکر حسین خاں صاحب صدر جمہوریۂ ہند کے ارشادات گرامی بھی شریک اشاعت کرنے کا فخر حاصل کر رہا ہوں۔ مسرت بالائے مسرت یہ ہے کہ ہز اکسلنسی عالی جناب راج بہادر صاحب سفیر ہند متعینہ نیپال نے بھی اپنا پیغام محبت آشام عنایت فرما کر تکمیل کار کی صورت پیدا کر دی۔ ان اصحاب کی شکر گزاری میں لفظ گونگے اور زبان خاموش ہے کہ جذبات کا ساتھ دینا ان کے لیے محال ہے

ہم نے جب حدیث میر کی پیش کش کا منصوبہ تیار کیا تھا اس وقت ہماری دلی خواہش تھی کہ یہ محض ایک ادبی صحیفہ ہی نہ ہو بلکہ ہماری عظیم الشان ہمسایہ مملکتوں کے درمیان محبت، دوستی اور مفاہمت کا ذریعہ بھی بنے۔ خواہش کرنے والا کیسا ہی ہو لیکن اگر جذبہ سچا اور خواہش پر خلوص ہو تو جواب اثبات ہی میں ملتا ہے چنانچہ قدرے تاخیر کے باوجود میرا دامن گل ہائے مراد سے بھر گیا۔ اب میں فخر سے کہہ سکتا ہوں کہ

للہ الحمد ہر آں چیز کہ خاطر می خواست
آخر آمد ز پسِ پردۂ تقدیر پدید

لکھنو
۲۶ ستمبر ۱۹۶۸ء

مقبول احمد لاری



सत्यमेव जयते

राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली-4.
RASHTRAPATI BHAVAN,
NEW DELHI-4.

सन्देश

राष्ट्रपति महामहिम डा० ज़ाकिर हुसैन ख़ाँ साहब के उर्दू सन्देश का अनुवाद

मुझे यह जानकर बहुत ख़ुशी हुई कि मीर अकादमी लखनऊ ने हज़रते मीर तक़ी मीर से सम्बन्धित एक पुस्तक "हदीसे मीर" संकलित की है जो उर्दू और हिन्दी दोनों भाषाओं में एक साथ छापी जा रही है। हज़रते मीर भारतवर्ष के पुराने प्रसिद्ध कवियों में गुज़रे हैं और उनकी गज़लें आज भी उर्दू साहित्य में एक उच्च स्थान ग्रहण किए हुए हैं। मीर ने भाषा तथा साहित्य के क्षेत्र में जो सेवा की है उसे लोग रहती दुनिया तक याद रखेंगे। मीर अकादमी ने यह काम करके बहुत बड़ा पुनीत कार्य सम्पन्न किया है जिसे वास्तविक रूप में मीर के प्रति एक अच्छी श्रद्धाञ्जलि समझना चाहिये।

यह भी हर्ष का विषय है कि यह पुस्तक पड़ोसी देश नेपाल के हिज़ मैजेस्टी शाह **महेन्द्र वीर विक्रमशाह देव** को समर्पित की गई है।

मुझे विश्वास है कि इस प्रकार यह पुस्तक न केवल अपने ही देश में सर्वसाधारण को प्रिय सिद्ध होगी बल्कि नेपाल में भी लोग इसके गुणों को स्वीकार करेंगे और इस प्रकार हमारे दोनों देशों के सम्बन्ध जो सर्वदा अत्यन्त अच्छे रहे हैं और भी मैत्रीपूर्ण तथा दृढ़ होंगे।

मीर अकादमी लखनऊ के इन प्रयासों के लिए मैं आशीर्वाद और अपनी शुभकामनाएं प्रस्तुत करता हूँ।

ज़ाकिर हुसेन

राष्ट्रपति भवन, नई दिल्ली-4.
RASHTRAPATI BHAVAN,
NEW DELHI-4.

सत्यमेव जयते

مورخہ ۲ ستمبر ۱۹۶۸ء

پیغام

عزّت مآب عالی مرتبت صدر جمہوریہ ہند ڈاکٹر ذاکر حسین خاں صاحب بالقابہ

مجھے یہ جان کر بڑی خوشی ہوئی کہ میر اکاڈمی لکھنو حضرت میر تقی میرؔ سے متعلق ایک کتاب حدیث میر شائع کر رہی ہے جو اردو اور ہندی دونوں زبانوں میں ایک ساتھ چھپی ہے

حضرت میرؔ ہندوستان کے پرانے مشہور و معروف شاعروں میں گزرے ہیں۔ ان کی غزلیں اردو ادب میں ایک اعلیٰ مقام رکھتی ہیں۔ میرؔ نے زبان و ادب کی جو لازوال خدمت انجام دی ہے اسے لوگ رہتی دنیا تک یاد رکھیں گے۔ میر اکاڈمی نے یہ خدمت انجام دے کر بہت بڑا کام کیا ہے جسے صحیح معنوں میں میرؔ کی یادگار کے لیے ایک اعلیٰ قسم کا خراجِ عقیدت کہا جا سکتا ہے

مزید خوشی کی بات یہ ہے کہ یہ کتاب اپنے پڑوسی ملک نیپال کے ہز میجسٹی شاہ مہندر ویر وکرم شاہ دیو کے نام سے منسوب کی گئی ہے

مجھے یقین ہے کہ اس طرح یہ کتاب نہ صرف اپنے ہی ملک میں مقبول عام ہو گی بلکہ نیپال میں بھی لوگ اس کی قدر کریں گے اور اس طرح ہمارے دونوں ملکوں کے تعلقات جو نہایت خوش گوار ہیں اور زیادہ مضبوط و استوار ہوں گے

میر اکاڈمی لکھنو کی ان کوششوں کے لیے میں اپنی دعائیں اور نیک خواہشات پیش کرتا ہوں

ذاکر حسین



सत्यमेव जयते

भारतीय राजदूत, नेपाल
AMBASSADOR OF INDIA,
NEPAL

सन्देश

हिज़ एक्सिलेन्सी माननीय राज बहादुर महोदय भारतीय राजदूत नेपाल के उर्दू सन्देश का अनुवाद

मीर तक़ी मीर हमारी भारतीय संस्कृति की एक पवित्र कथा हैं। आल इण्डिया मीर अकादमी ने "हदीसे मीर" में मीर के वैयक्तिक जीवन तथा उनकी कविता के गुणों को एकत्र करके उस महान भारतीय विभूति को सुरक्षित कर दिया है जिसके मीर समर्थक ही नहीं, प्रतिनिधि भी थे। भारत का प्रत्येक नागरिक मीर की भाषा और कविता का संरक्षक है। हमें हर्ष है कि हमारी गंगा-जमनी सभ्यता का चित्रण "हदीसे मीर" के हर पृष्ठ पर प्रकट होता है जिसे आल इण्डिया मीर अकादमी ने अत्यधिक सुरुचि एवं सावधानी से सजाया है।

अकादमी के अध्यक्ष श्री मक़बूल अहमद लारी ने "हदीसे मीर" जैसे महान ऐतिहासिक ग्रन्थ को नेपाल के शासक श्री पांच महाराजाधिराज **महेन्द्र वीर विक्रम शाह देव** को समर्पित करके एक महान ऐतिहासिक कार्य सम्पन्न किया है। मीर की कविता पर ब्रजभाषा, पंजाबी और हिन्दी कविता की छाप है। मानव-संस्कृति की प्रत्येक भाषा दूसरी-भाषाओं से सदैव लाभान्वित होती रही है। हिज़ मैजेस्टी नेपाली भाषा के उच्चकोटि के साहित्यिक हैं और मीर जैसे उच्चश्रेणी के कवि के ग्रन्थ को हिज़ मैजेस्टी ने जो आदर एवं स्थान प्रदान किया है, उसने भारत और नेपाल को दूसरे प्रयोगात्मक विभागों की भाँति भाषा व कविता के विषय में भी एक दूसरे के अत्यन्त सन्निकट कर दिया है।

मेरा हार्दिक आशीर्वाद है और मेरी इच्छा है कि "हदीसे मीर" को विद्या तथा ज्ञान के संसार में उच्च स्थान प्राप्त हो।

राज बहादुर

सत्यमेव जयते

भारतीय राजदूत, नेपाल
AMBASSADOR OF INDIA,
NEPAL

مورخہ ۱۰ ستمبر ۱۹۶۸ء

پیغام

عالی جناب ہز اکسلنسی راج بہادر صاحب سفیر ہند برائے نیپال

میر تقی میرؔ ہماری بھارتی تہذیب کی مقدس روایات میں ہیں۔ آل انڈیا میرؔ اکاڈمی لکھنؤ نے حدیث میر میں ان کے حالات اور ان کی شاعری کے محاسن جمع کر کے اس عظیم بھارتی تہذیب کو محفوظ کردیا ہے جس کے میرؔ ایک فرد ہی نہیں نمائندہ بھی تھے بھارت کا ہر شہری میرؔ کی زبان اور شاعری کا وارث ہے۔ مجھے خوشی ہے کہ ہماری گنگا جمنی تہذیب کا نقش حدیث میر کے ہر صفحے پر نمایاں ہے جس کو آل انڈیا میر اکاڈمی نے نہایت ہی سلیقے سے سجایا ہے

حدیث میر جیسے عظیم صحیفے کو فرمانروائے نیپال شری پانچ مہاراجہ دھیراج مہندر ویر وکرم شاہ دیو کے نام منسوب کرکے اکاڈمی کے صدر شری مقبول احمد لاری نے ایک اہم تاریخی کارنامہ انجام دیا ہے میرؔ کی شاعری پر برج بھاشا اور قدیم ہندی شاعری کا اثر ہے اس کی وجہ یہ ہے کہ انسانی زبان کی تہذیب ہمیشہ دوسری زبان کی تہذیب سے متاثر ہوتی رہتی ہے۔ ہز میجسٹی نے حدیث میر کو جو شاہانہ اعزاز عطا فرمایا ہے اس نے بھارت اور نیپال کو دوسرے شعبوں کی طرح شعر و ادب کے شعبے کو بھی ایک دوسرے سے انتہائی قریب کردیا ہے

میری دلی دعا اور خواہش ہے کہ حدیث میر کو علم و دانش کی دنیا میں صحیح مقام نصیب ہو

راج بہادر

سارے عالم پر ہوں میں چھایا ہوا
مستند ہے میرا فرمایا ہوا



सारे आलम पर हू मैं छाया हुआ
मुस्तनद है मेरा फ़रमाया हुआ

विषय

हवीसे-ज़ात

हवीसे-कायनात

हवीसे-फ़न

ترتیب

حدیثِ ذات

حدیثِ کائنات

حدیثِ فن

हदीसे ज़ात

حدیث ذات

मीर तक़ी "मीर"—जीवन-यात्रा

डाक्टर मुहम्मद हसन

"मीर" के जीवन की स्थितियों-परिस्थितियों का अध्ययन उनके गुण-स्वभाव और चरित्र को समझने के लिए आवश्यक है। कुछ मनोविज्ञानवेत्ता व्यक्तित्व के निर्माण में वंशानुगत संस्कार को महत्त्व देते हैं, कुछ जन्मकालीन परिस्थितियों और वातावरण को। सौभाग्यवश "मीर" की आनुवंशिक परिस्थिति और स्वयं उनके वातावरण दोनों के विषय में सूचनाएं कुछ उनकी ही रचनाओं से और कुछ "तज़किरों" और इतिहास-ग्रन्थों से एकत्र हो सकती हैं किन्तु उनमें से कुछ की सूचनाएं अपर्याप्त हैं और कुछ के लिए प्रमाणों की आवश्यकता है।

"मीर" अपने को बनी-फ़ातमा[1] बताते हैं और अपने पूर्वजों के विषय में लिखते हैं कि हिजाज़[2] से भारत आए और उनके पूर्वपितामह ने अकबराबाद में निवास किया। उनके बेटे अर्थात् "मीर" के दादा आगरे के सन्निकट फ़ौजदार नियुक्त हो गए। उनके दो बेटे थे। उनमें से एक, अर्थात् "मीर" के चाचा, मानसिक रूप से अस्वस्थ थे। और "मीर" के पिता मुहम्मद अली जिन्हें "मीर" के कथनानुसार "अली मुत्तक़ी"[3] की पदवी मिली थी सूफ़ी स्वभाव के दरवेश थे। "मीर" अपने दादा और पूर्वपितामह का नाम नहीं बताते। उनके पिता की आजीविका का साधन भी ज्ञात नहीं लेकिन यह अवश्य ज्ञात होता है कि उस परिवार में अतिरंजित रूप से अन्त:निष्ठता, भावुकता और प्रमाद की परम्परा विद्यमान थी। "मीर" के पिता आर्थिक और शिक्षा की दृष्टि से भी निम्न-कोटि के नहीं थे। यद्यपि, निश्चय रूप से वे उतने सुविख्यात और लोकप्रिय सूफ़ी महात्मा भी नहीं थे। फिर भी उनका सम्मान और विशेष महत्त्व इसी बात से स्पष्ट है

१. इस्लाम-धर्म के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद साहब की सम्माननीया पुत्री हज़रत फ़ातमा की सन्तान। अपनी सच्चरित्रता, न्यायप्रियता, लौकिक-लिप्सा आदि में अप्रवृत्ति के कारण यह वंश अत्यधिक सम्माननीय समझा जाता है। यह लोग सैयद कहे जाते हैं। २. उत्तरी-अरब प्रदेश। ३. "मुत्तक़ी" का अर्थ है निष्ठापूर्वक सात्त्विक जीवन बिताने वाला—ऐसा जीवन व्यतीत करने वाले अली।

میر تقی میر — سفرِ حیات

ڈاکٹر محمد حسن

میر کے حالاتِ زندگی کا مطالعہ ان کے مزاج اور کردار کو سمجھنے کے لیے ضروری ہے۔ بعض ماہرینِ نفسیات شخصیت کی تعمیر میں نسلی اور خاندانی وراثت کو اہمیت دیتے ہیں بعض ماحول کو۔ خوش قسمتی سے میر کی وراثت اور ماحول دونوں کے بارے میں معلومات کچھ ان کی اپنی تحریروں سے اور کچھ تذکروں اور تاریخوں سے فراہم ہوسکتی ہیں گو ان میں سے بعض ناکافی اور بعض محتاجِ ثبوت ہیں

میر اپنے کو بنی فاطمہ بتاتے ہیں اپنے بزرگانِ خاندان کے بارے میں لکھتے ہیں کہ حجاز سے وارد ہندوستان ہوے اور جدِ اعلیٰ نے اکبرآباد میں سکونت اختیار کر لی ان کے بیٹے یعنی میرے دادا نواحِ آگرہ میں فوجدار مقرر ہو گئے۔ ان کے دو بیٹے تھے جن میں سے ایک یعنی میر کے چچا خللِ دماغ سے خالی نہ تھے اور میر کے والد محمد علی جنھیں بہ قول میر کے علی متقی کا خطاب ملا تھا صوفی منش درویش تھے۔ میر اپنے دادا اور پردادا کا نام نہیں بتاتے خود ان کے والد کا پیشہ بھی معلوم نہیں لیکن یہ ضرور معلوم ہوتا ہے کہ خاندان میں بڑھی ہوئی دروں بینی، جذباتیت اور جنوں کی روایات موجود تھیں۔ میر کے والد پیشہ اور علمیت کے اعتبار سے کم رتبہ نہیں تھے گو وہ یقیناً اتنے شہرۂ آفاق اور معروف بزرگ نہیں تھے ان کا اعتبار و امتیاز اسی سے ظاہر ہے کہ ان کی ایک بیوی مشہور فارسی داں عالم سراج الدین علی خانِ آرزو کی بہن تھیں۔ دوسری بیوی یعنی میر کی والدہ کا

कि उनकी एक पत्नी प्रख्यात फ़ारसी-भाषाविद् सिराजुद्दीन अली ख़ाँ "आरज़ू" की बहन थीं। उनकी दूसरी पत्नी अर्थात् "मीर" की जननी के विषय में ज्ञात नहीं। "मीर" के एक सगे भाई मुहम्मद रज़ी और एक सौतेले भाई हाफ़िज़ मुहम्मद हसन थे और एक सौतेली बहन थी जिनका विवाह मुहम्मद हसन "कलीम" से हुआ था। अली मुत्तक़ी के घरेलू जीवन के सम्बन्ध में यह सूचना मिलती है कि वे विवाह-बन्धन को ईश्वर भक्ति में बाधक निश्चित करते थे और अपने प्रिय मुरीद अमानुल्लाह को विवाह करने से रोकते थे—इससे इसका बोध होता है कि "मीर" ने जिस वातावरण में शैशव का पालन-पोषण प्राप्त किया होगा वह उपद्रवों और घरेलू उलझनों से विहीन न था।

"मीर" का जन्म-वर्ष ११३५ हिजरी (१७२३ ई०) निर्धारित किया जाता है। कुछ लोग ११३६ हिजरी (१७२४ ई०) को अधिक शुद्ध समझते हैं। हाफ़िज़ मुहम्मद हसन उनके बड़े भाई थे और सौतेले थे। उनकी विमाता ख़ाने "आरज़ू" की बहन थीं। "मीर" अपने पिता की दूसरी पत्नी के प्रथम पुत्र थे। इसलिए उनके जन्म से ही घर में नई समस्याएं उठ खड़ी हुई होंगी। पहले तो वह कारण निश्चित करने चाहियें जिनके आधार पर अली-मुत्तक़ी ने दूसरा विवाह किया। उनकी पहली पत्नी सम्भ्रान्त परिवार की थीं और स्वयं पुत्रवती भी थीं। अली मुत्तक़ी स्वभाववश विलासी अथवा रंगीन नहीं थे—फिर, दूसरा विवाह करना, वह भी ऐसे परिवार में, ऐसी स्त्री से जिन्हें प्रत्यक्षतः न तो सामाजिक सम्मान प्राप्त था न अन्य कोई विशेषता थी—निश्चय ही किन्हीं विशेष कारणोंवश हुआ होगा। उन दिनों जब पर्दा-प्रथा सुप्रचलित थी यह विवाह केवल नज़रबाज़ी या आपस में एक दूसरे को पसन्द कर लेने के कारण न हुआ होगा—फिर इस दूसरे विवाह के कारण क्या थे ? संभव है यह विवाह प्रथम पत्नी के देहावसान के उपरान्त हुआ हो—यह भी संभव है कि "मीर" की माताजी उस युग की लौकिक सम्भ्रान्ति के स्तर पर पूरी न उतरती हों और पर्दा न करने के कारण अली मुत्तक़ी को उन्हें देखने और पसन्द करने का अवसर मिल गया हो।

इन सभी अनुमानों के तथ्य-सम्मत होने अथवा न होने के विषय में कुछ भी विश्वासपूर्वक कहना कठिन है किन्तु "मीर" की मानसिक एवं भावनात्मक उलझनों का प्रथम कारण उनके पिता का दूसरा विवाह और स्वयं उनका दूसरी—और निश्चय ही कम प्रभावशाली वंश की स्त्री के गर्भ से उत्पन्न होना निश्चित किया जा सकता है। "मीर" ने अपनी माता के निम्नतर स्तर के होने का

حال معلوم نہیں ہوتا۔ میرؔ کے ایک سگے بھائی محمد رضی اور ایک سوتیلے بھائی حافظ محمد حسن اور سوتیلی بہن تھیں جن کی شادی محمد حسین کلیم سے ہوئی تھی۔ علی متقی کی گھریلو زندگی کے بارے میں یہ اطلاع ملتی ہے کہ کد خدائی کو مانع خدا پرستی قرار دیتے تھے۔ اور اپنے عزیز مرید امان اللہ کو شادی کرنے سے روکتے ہیں جس سے یہ ظاہر ہوتا ہے کہ میرؔ نے جس ماحول میں پرورش پائی ہوگی وہ خلفشار اور گھریلو مناقشات سے خالی نہ تھا۔

میرؔ کی پیدائش کا سنہ ۱۱۳۵ ہجری (۱۷۲۳ء) قرار دیا جاتا ہے بعض ۱۱۳۶ ہجری (۱۷۲۴ء) کو صحیح تر خیال کرتے ہیں۔ حافظ محمد حسن بڑے بھائی تھے اور سوتیلے تھے سوتیلی ماں خان آرزو کی بہن تھیں۔ میرؔ دوسری بیوی کی پہلی اولاد تھے اس لیے ان کی پیدائش سے گھر میں نئے مسئلے اٹھ کھڑے ہوئے ہوں گے۔ پہلے تو ان اسباب کا تعین کرنا چاہیے جن کی وجہ سے علی متقی نے دوسری شادی کی پہلی بیوی مقتدر خاندان کی تھیں اور خود صاحب اولاد بھی تھیں لڑکا بھی پیدا ہو چکا تھا علی متقی طبیعتاً امارت پسند یا رنگین مزاج نہ تھے پھر دوسری شادی کرنا اور وہ بھی ایسے خاندان میں ایسی عورت سے کرنا جس کو بہ ظاہر کوئی امتیاز یا اعزاز حاصل نہ تھے مخصوص اسباب کی بنا پر ہوگا۔ اس زمانے میں جب پردے کا رواج عام تھا۔ یہ شادی محض نظر بازی یا باہمی پسندیدگی یا رومان کی بنا پر نہ ہوئی ہوگی پھر اس دوسری شادی کے اسباب کیا تھے؟ ممکن ہے یہ شادی پہلی بیوی کے انتقال کے بعد کی گئی ہو۔ یہ بھی ممکن ہے کہ میرؔ کی والدہ اس عہد کے معیار شرافت پر پوری نہ اترتی ہوں اور پردہ نشین نہ ہونے کی وجہ سے علی متقی کو انھیں دیکھنے اور پسند کرنے کا موقع مل گیا ہو۔

ان تمام قیاسات کی صحت یا عدم صحت کے بارے میں اعتماد اور یقین سے کچھ کہنا دشوار ہے مگر میرؔ کی ذہنی اور جذباتی الجھنوں کا پہلا سبب ان کے والد کی دوسری شادی اور ان کا دوسری بیوی ـــــ اور یقیناً کم مقتدر خاندان کی عورت کے بطن سے ہونے کو قرار دیا جا سکتا ہے۔ میرؔ نے والدہ کے کم حیثیت

प्रतिकार विभिन्न प्रकार से ढूंढा है। और कल्बे-अली "फ़ायक़" का यह विचार अनुमानसम्मत प्रतीत होता है कि उन्होंने अपनी माता के सैयद होने के कारण स्वयं को भी सैयद समझना और लिखना आरंभ किया होगा। एक और बात भी विचारणीय है —"मीर" ने स्पष्ट रूप से अपने पिता की सूफ़ियाना और दरवेशाना दिलचस्पियों की चर्चा की है। अन्य लक्षणों से भी पता चलता है कि "मीर" के पिता और उनके अन्य बुज़ुर्ग सुन्नी[1] थे किन्तु स्वयं "मीर" निश्चय ही असना-अशरी-शीया[2] थे। इस मत-वैभिन्य का कारण क्या था? संभव है "मीर" ने धर्म-परिवर्तन किया हो। उस युग में शीया-सुन्नियों में पारस्परिक विवाह आदि संबंध सामान्य रूप से होते थे और इस प्रकार के विवाहों से जो सन्तान होती थी उसे इसकी पूर्ण स्वतंत्रता दी जाती थी कि वह जो मार्ग चाहे अपनाये।

"मीर" की जननी उनके जन्म के कितने दिनों बाद तक जीवित रहीं, "मीर" की मनोवैज्ञानिक गति को समझने के लिए यह भी जानना आवश्यक है। "मीर" सन् ११३६ हिजरी के अन्त अथवा सन् ११३७ हिजरी (सन् १७२३-२४ ई०) में जन्मे और उसके कुछ दिनों बाद ही उनके पिता घर छोड़कर एक दरवेश से मिलने लाहौर चले गए। "मीर" ने इस घटना का वर्णन इस प्रकार किया है कि अली मुत्तक़ी एक दिन घर पहुँचे तो बहुत भूखे थे। मामा से खाना माँगा। खाना पकने में देर हुई तो इन्होंने व्यग्रता व्यक्त की। मामा ने कहा, "यह फ़क़ीरों की रविश[3] नहीं।" अली मुत्तक़ी ने कहा, "तुम इत्मीनान से खाना पकाओ मैं एक दरवेश से मिलने लाहौर जाता हूँ।" मामा ने बहुत रोका मगर न रुके। सर्वप्रथम तो इस क़िस्से में पत्नी के होते हुये मामा से खाना माँगना और उस पर व्यग्रता प्रदर्शित करना उस युग की संस्कृति के विरुद्ध है। दूसरे, उनको लाहौर जाने के निश्चय से रोकने वाली केवल मामा ही थी, पत्नियों में से किसी की चर्चा नहीं। तीसरे, मामा ने जो व्यंग "दरवेशी की रविश" पर किया है उससे ज्ञात होता है कि मामा अली मुत्तक़ी के दरवेशी के दावे से परिचित थी!—इस घटना से कुछ निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

पहला, यह कि प्रबलतम अनुमान यह है कि इस घटना से पूर्व ही अली मुत्तक़ी

१. एक धार्मिक मत जो विभिन्न व्यक्तित्वों के मामले में श्रद्धा के आधिक्य के कारण आलोचनाएं नहीं करता। २. एक और मत जो धार्मिक नेतृत्व का अधिकार केवल १२ इमाम लोगों को देता है, और किसी अन्य को धार्मिक मामलों में अनुकरणीय नहीं समझता। ३. ढंग।

ہونے کا بدل طرح طرح سے تلاش کیا ہے اور کلب علی فائق کا یہ خیال قرین قیاس ہے کہ انھوں نے والدہ کے سید ہونے کی وجہ سے خود کو سید سمجھنا اور لکھنا شروع کیا ہوگا ایک اور بات بھی قابل غور ہے میرؔ واضح طور پر اپنے والد کی متصوفانہ بلکہ درویشانہ دل چسپیوں کا ذکر کرتے ہیں دوسرے قرائن سے بھی معلوم ہوتا ہے کہ میرؔ کے والد اور ان کے دوسرے بزرگ سنی تھے لیکن خود میرؔ بلا شبہ اثنا عشری شیعہ تھے اس اختلاف عقائد کا سبب کیا تھا؟ ممکن ہے میرؔ نے تبدیلِ مذہب کیا ہو؟ ممکن ہے میرؔ کی والدہ شیعہ رہی ہوں اور اسی بنا پر میرؔ نے بھی اپنی والدہ کی روش پر قائم رہنا پسند کیا ہو؟ اس زمانے میں شیعوں اور سنیوں میں شادی بیاہ عام طور پر ہوتے تھے اور اس قسم کی شادیوں سے جو اولاد ہوتی تھی اس کو اس کی آزادی بھی دی جاتی تھی کہ وہ جو مسلک چاہے اختیار کرلے۔

میرؔ کی والدہ میرؔ کی پیدائش کے کتنے عرصے بعد تک زندہ رہیں۔ میرؔ کی نفسیات کو سمجھنے کے لیے یہ جاننا بھی ضروری ہے کہ میرؔ اواخر ۱۱۳۵ھ یا ۱۱۳۶ھ ہجری (۲۳-۱۷۲۲ء) میں پیدا ہوئے اور اس کے کچھ عرصے بعد ہی ان کے والد گھر چھوڑ کر ایک درویش سے ملنے لاہور چلے گئے۔ اس واقعے کو میرؔ نے اس طرح بیان کیا ہے کہ علی متقی ایک دن گھر پہنچے تو بہت بھوکے تھے ماما سے کھانا مانگا کھانا پکنے میں دیر ہوئی تو انھوں نے اضطراب ظاہر کیا ماما نے کہا "یہ فقیروں کی روش نہیں"۔ علی متقی نے کہا کہ تم اطمینان سے کھانا پکاؤ میں ایک درویش سے ملنے لاہور جاتا ہوں۔ ماما نے بہت روکا مگر نہ رکے۔ اول تو اس قصے میں بیوی کے ہوتے ہوئے ماما سے کھانا مانگنا اور اس پر اضطراب ظاہر کرنا اس زمانے کی معاشرت کے خلاف ہے دوسرے ان کو لاہور جانے کے ارادے سے روکنے والی صرف ماما ہی تھی بیویوں میں سے کسی کا ذکر نہیں ہے۔ تیسرے ماما نے جو طنز درویشی کی روش کے سلسلے میں کی ہے اس سے معلوم ہوتا ہے کہ ماما علی متقی کے دعوئ درویشی سے واقف تھی۔ اس واقعے سے چند نتائج نکالے جا سکتے ہیں۔

پہلا یہ کہ قیاس غالب ہے کہ اس واقعے سے قبل علی متقی کی دونوں

की दोनों पत्नियों का देहान्त हो चुका था—या, उनसे अली मुत्तक़ी के सम्बन्ध ख़राब थे। दूसरा अनुमान यह है कि अली मुत्तक़ी केवल उसी स्थिति में बच्चों को छोड़ कर लाहौर जा सकते थे जब घर पर कोई सम्बन्धी या विश्वसनीय व्यक्ति उनकी देख-रेख के लिए मौजूद हो और स्थायी रूप से आय का कोई साधन भी हो। "मीर" के भाई मुहम्मद हसन सन् १११५ हिजरी (सन् १७०३ ई०) में पैदा हुए और सन् १११८ हिजरी (सन् १७०६ ई०) में मुहम्मद हसन की माता जी का देहान्त हो गया। "मीर" के जन्म के समय उनके सौतेले भाई की आयु १९ या २० वर्ष की होगी और "मीर" के पिता की आयु लगभग ३६ वर्ष। मुहम्मद अली के पीर (गुरु) का देहान्त मुहम्मद हसन के जन्म से ६ वर्ष पूर्व हो चुका था और कुछ अनुसन्धान कर्ताओं का विचार है कि पीर के देहान्त और पत्नी की मृत्यु ने मुहम्मद अली के मन को तसव्वुफ़ और दरवेशी की ओर प्रवृत्त किया।

"मीर" की प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा के विषय में अधिक विवरण नहीं ज्ञात हो सके। "मीर" अपने घर के जिस वातावरण का वर्णन करते हैं उसमें दरवेशी और आध्यात्मिक रहस्योद्घाटनों के अतिरिक्त कोई दूसरी चर्चा नहीं ज्ञात होती। हाँ, उस युग में दो व्यक्तियों का प्रभाव उन पर अत्यन्त गहरा है। एक एहसानुल्लाह दरवेश और दूसरे उनके पिता के भक्त और सम्भवतः मुरीद, अमानुल्लाह। एहसानुल्लाह की एक अदा "मीर" को बहुत भायी। जब कोई दरवाजे पर दस्तक देता तो एहसानुल्लाह सदैव जवाब में यही कहते कि एहसानुल्लाह घर में नहीं हैं। अतः "मीर" ने भी अपनी ग़ज़लों में इसी आत्म-विस्मृति के भाव को जगह-जगह व्यक्त किया:—

अज़-ख़ुवेश-रफ़्ता[1] उस बिन रहता है 'मीर' अक्सर
करते हो बात किससे ? वह आप में कहाँ है ?

———

मस्कन[2] जहाँ था बिलज़बा[4] मिस्कों[5] का हम तो वाँ[6]
कल बेर "मीर-मीर" पुकारे, नहीं है अब

———

मशहूर हैं आलम में, मगर हों भी कहीं हम
अलक़िस्सा[7] न दरपै[8] हो हमारे कि नहीं हम

———

१. आत्म-विस्मृत। २. निवास ४. दिल का मारा। ५. निरोह, दीन। ६. वहाँ ७. अर्थात् ८. पीछे पड़ना।

بیویوں کا انتقال ہوچکا تھا یا ان سے علی متقی کے تعلقات خراب تھے ۔ دوسرا قیاس یہ ہے کہ علی متقی عسرت اسی حالت میں بچوں کو چھوڑ کر لاہور جا سکتے تھے جب گھر پر کوئی عزیز یا ذمہ دار شخص ان کی نگہداشت کے لیے موجود ہو اور مستقل آمدنی کی بھی کوئی صورت ہو ۔ میر کے بھائی محمد حسن ۱۱۱۵ہجری (۱۷۰۳ء) میں پیدا ہوئے اور ۱۱۱۸ہجری (۱۷۰۶ء) میں محمد حسن کی والدہ کا انتقال ہوگیا میر کی ولادت کے وقت ان کے سوتیلے بھائی کی عمر ۱۹ یا بیس برس کی ہوگی اور میر کے والد کی عمر تقریباً ۲۶ سال ۔ محمد علی کے پیر کا انتقال محمد حسن کی پیدائش سے چھ سال قبل ہوچکا تھا اور بعض محققین کا خیال ہے کہ پیر کے انتقال اور بیوی کی موت نے محمد علی کے ذہن کو تصوّف اور درویشی کی طرف مائل کیا ۔

میر کی ابتدائی تعلیم و تربیت کے بارے میں زیادہ تفصیلات کا علم نہیں ہوسکا ۔ میر اپنے گھر کی جس فضا کا ذکر کرتے ہیں اس میں سوائے درویشی اور کشف روحانی کے اور کوئی دوسرا چرچا معلوم نہیں ہوتا ۔ البتہ اس دور میں دو شخصیتوں کا اثر ان پر نہایت گہرا ہے ایک احسان اللہ درویش دوسرے ان کے والد کے معتقد اور غالباً مرید امان اللہ ۔ احسان اللہ کی ایک ادا میر کو بہت بھائی جب کوئی دروازے پر دستک دیتا تو احسان اللہ ہمیشہ جواب میں یہی کہتے کہ احسان اللہ گھر میں نہیں ہے ۔ چنانچہ میر نے اپنی غزلوں میں اس خود فراموشی کی کیفیت کو جابجا برتا ہے ۔

از خویش رفتہ اس بن رہتا ہے میر اکثر
کرتے ہو بات کس سے وہ آپ میں کہاں ہے
سکن جہاں تھا دل زدہ مسکیں کا ہم تو واں
کل دیر میر میر پکارے نہیں ہے اب
مشہور ہیں عالم میں مگر ہوں بھی کہیں ہم
القصہ نہ درپے ہو ہمارے کہ نہیں ہم

मिलने वालो, फिर मिलियेगा, है वह आलमे-दीगर[1] में
"मीर" फ़क़ीर को सुक्र[2] है यानी मस्ती का आलम है अब

अमानुल्लाह का व्यक्तित्व "मीर" के लिए एहसानुल्लाह और मुहम्मद अली से भी अधिक आकर्षक और उनके ध्यान का केन्द्र दिखता है। अमानुल्लाह के देहावसान के समय "मीर" की अवस्था १० वर्ष की थी लेकिन "मीर" के विवरण से पता चलता है कि उन्होंने अमानुल्लाह से गहरा प्रभाव ग्रहण किया था। अमानुल्लाह आगरे के मार्ग में पड़ने वाले एक क़स्बा बयाना के निवासी थे। जिस दिन पहली बार मुहम्मद अली से उनकी भेंट हुई उस दिन उनका विवाह होने वाला था। मुहम्मद अली ने "मीर" के कथनानुसार उन्हें कुछ इस दृष्टि से देखा कि वे मूर्छित हो गए। कुछ देर बाद पढ़कर पानी पिलाया गया तो फिर अपनी पूर्वस्थिति में आ गए और मुहम्मद अली ने उन्हें विवाह के दोष समझाये। अमानुल्लाह की बारात चल पड़ने के बाद मुहम्मद अली तो आगरे लौट आए किन्तु उनकी बातों का दूल्हा पर इतना प्रभाव पड़ा कि नई-नवेली-दुल्हन को छोड़कर उनकी खोज में निकल खड़े हुए और अन्ततः आगरे पहुँचे और यहीं रह पड़े। उधर दुल्हन क्षयग्रस्त होकर मर गई। उस समय से अन्त तक अमानुल्लाह मुहम्मद अली के घर रहे। "मीर" उनके संरक्षण में व्यवहार का ज्ञान (ट्रेनिंग) प्राप्त करते थे और उनसे पर्याप्त रूपेण हिले-मिले थे। सम्भवतः सन् ११४६ हिजरी (सन् १७३३ ई०) में अमानुल्लाह का देहान्त हुआ और उनके अवसान का मुहम्मद अली को इतना दुःख हुआ कि उस दिन से अपना उपनाम "अज़ीज़े-मुर्दा" निश्चित किया और साल बीतते-बीतते उनका भी देहावसान हो गया।

देहान्त के समय मुहम्मद अली की वसीयत और सौतेले भाइयों के पारस्परिक संघर्ष का वर्णन भी "मीर" ने किया है। जब मृत्यु का समय निकट आया तो मुहम्मद अली ने अपने बड़े बेटे को बुलाया और कहा कि मैं फ़क़ीर हूँ, मेरे पास किताबों के अतिरिक्त कुछ नहीं। तुम यह किताबें पैतृक सम्पत्ति समझ कर बाँट लो। मुहम्मद हसन ने कहा कि भाई छोटे हैं, यह पुस्तकें नष्ट कर देंगे। मैं विद्यार्थी हूँ, इनका हिस्सा भी मेरे पास धरोहर रहे तो अच्छा है। मुहम्मद अली इस पर अत्यधिक कुपित हुए और मुहम्मद तक़ी से कहा कि मैं तीन सौ रुपये का ऋणी हूँ, हुण्डी राह में है। ऋण चुका देना तब मुझे दफ़न करना।

१- दूसरी ही दुनिया में, दूसरी ही हालत में। २ नशा, विस्मृति।

ملنے والو پھر ملے گا ہے وہ عالم دیگر میں

میرؔ فقیر کو سکر ہے یعنی مستی کا عالم ہے اب

امان اللہ کی شخصیت میرؔ کے لیے احسان اللہ اور محمد علی سے بھی زیادہ پُرکشش اور جاذب توجہ نظر آتی ہے۔ امان اللہ کے انتقال کے وقت میرؔ کی عمر ۱۰ سال کی تھی لیکن میرؔ کے بیان سے ظاہر ہوتا ہے کہ انھوں نے امان اللہ سے گہرا اثر قبول کیا تھا۔ امان اللہ آگرے کی راہ میں ایک قصبہ بیانہ کے تھے جس دن پہلی بار محمد علی سے ان کی ملاقات ہوئی اس دن ان کی شادی ہونے والی تھی محمد علی نے میرؔ کے قول کے مطابق انھیں کچھ اس نظر سے دیکھا کہ بے ہوش ہوگئے کچھ دیر بعد پڑھ کر پانی پلایا گیا تو پھر اپنی اصلی حالت پر آگئے اور محمد علی نے انھیں شادی کی برائیاں سمجھائیں۔ امان اللہ کی برات روانہ ہونے کے بعد محمد علی تو آگرے واپس آگئے لیکن دولھا پر ان کی باتوں کا اتنا اثر ہوا کہ نئی نویلی دلہن کو چھوڑ کر ان کی تلاش میں نکل کھڑا ہوا اور آخرکار آگرے پہنچے اور یہیں رہ پڑے ادھر دلہن تپ دق میں مبتلا ہوکر مرگئی۔ اس وقت سے آخر دم تک امان اللہ محمد علی کے گھر رہے میرؔ ان کی تربیت میں تھے اور ان سے کافی مانوس تھے۔ غالباً سنہ ۱۱۴۶ھ (۱۷۳۳ء) میں امان اللہ کا انتقال ہوا اور ان کے انتقال کا محمّد علی کو اتنا رنج ہوا کہ اس دن سے اپنا لقب "عزیزمردہ" قرار دیا اور سال کے اندر اندر ان کا بھی انتقال ہوگیا۔

انتقال کے وقت محمد علی کی وصیت اور سوتیلے بھائیوں کی باہمی چشمک کا تذکرہ بھی میرؔ نے کیا ہے۔ جب موت کا وقت قریب آیا تو محمد علی نے اپنے بڑے بیٹے کو بلایا اور کہا کہ میں فقیر ہوں میرے پاس کتابوں کے سوا اور کچھ نہیں تم یہ کتابیں ورثے کے طور پر آپس میں تقسیم کرلو۔ محمد حسن نے کہا کہ بھائی چھوٹے ہیں یہ کتابیں ضایع کردیں گے میں طالب علم ہوں ان کا حصّہ بھی میرے پاس امانت رہے تو اچھا ہے محمّد علی اس پر سخت ناراض ہوئے اور محمّد تقی سے کہا کہ میں تین سو روپے کا قرض دار ہوں ہنڈی راہ میں ہے قرضہ ادا کردینا تب مجھے دفن کرنا۔

"मीर" ने अपने पिता की मृत्यु और वसीयत का जो दृश्य वर्णित किया है उसमें कई बातों के कारण स्पष्ट होने चाहियें। सर्वप्रथम तो तर्के के बँटवारे के समय मुहम्मद हसन का यह कहना किसी प्रकार भी अनुचित न था कि मैं विद्यार्थी हूँ, किताबें अपने पास धरोहर-स्वरूप रक्खूंगा—दूसरे इस बात पर रुष्ट होकर एक ग्यारह वर्ष के बच्चे पर ऋण चुकाने और अन्त्येष्टि-सम्पन्न करने का भार डाल देना भी अनुमानसंगत नहीं। इसके अतिरिक्त, जगह-जगह "मीर" अपने पिता के शब्दों में प्रेम धारण करने के आदेश का वर्णन करते हैं। १०-११ वर्ष के लड़के को इस प्रकार प्रेम का आदेश देना और इस ओर प्रेरित करना भी कुछ अप्राकृतिक-सा लगता है—संभव है यह सारी बात या तो "मीर" की कल्पना शक्ति का फल हो अथवा उनके पिता के मानसिक असंतुलन का।

११ वर्ष की अवस्था में "मीर" के सर से पिता की स्नेह-छाया हट गई। कुछ दिनों अपने नगर के आस-पास नौकरी करते रहे। जब इस प्रकार गुज़ारे की सूरत न देखी तो दिल्ली रवाना हुए। मसनवी[1] "ख़्वाब-ो-ख़याल" में आगरा छोड़ने के दो कारण बताये गए हैं। एक मित्रों की क्षुद्रता और दूसरे दीनता और बेकसी। मित्रों की क्षुद्रता वाली स्थिति निश्चय ही किसी रोमानी मनोयोग के कारण थी। और आगरे से उनके चल पड़ने का तात्कालिक कारण यही "मनोयोग" (प्रेम-सम्बन्ध) बना। अतः आगरे से विदा होने के दृश्य का वर्णन इस प्रकार करते हैं :—

बँधा इस तरह आह बारे-सफ़र[2]   कि मै[3] ज़ादे-रह[4] कुछ न यारे-सफ़र[5]
दिल-इक यार, सो बेक़रारे-बुतां[6]   ग़ुबारे-सरे-रहगुज़ारे-बुतां[7]
गिरफ़्तारे-रञ्ज-ो-मुसीबत रहा   ग़रीबे-दयारे-मुहब्बत[8] रहा

लेकिन यह "रोमानी मनोयोग" इस प्रकार का था जिसे सामान्यतः कुटुम्बीजन और विशेषतः सौतेले भाई अच्छी नज़रों से न देखते थे। संभव है यही सम्बन्ध समाप्त करने के लिए उन्हें आगरे से दिल्ली भेजा गया हो। क़ाज़ी अब्दुल-वदूद साहब ने यह विचार व्यक्त किया है कि "मीर" दो बार दिल्ली गए थे। पहली बार नादिरशाह के हमले (सन् १७३९ ई०) के पूर्व और दूसरी बार हमले के बाद। पहली बार समसामुद्दौला के भतीजे ख़्वाजा मुहम्मद बासित उन पर

१. एक प्रकार का प्रबन्ध-काव्य। २. यात्रा के लिए जो ज़रूरी सामान लेकर चला जाय। ३. न तो। ४. सम्बल। ५. यात्रा का संगी। ६. सौन्दर्य-मूर्तियों के लिए विह्वल। ७. जिस मार्ग से सौन्दर्य-मूर्तियाँ गुज़रती हैं उसके किनारे की धूल। ८. प्रेम की बस्ती का परदेशी।

میرؔ نے اپنے والد کی موت اور وصیت کا جو منظر بیان کیا ہے اس میں کئی باتیں توجیہہ طلب ہیں ۔ اوّل تو ترکے کی تقسیم کے وقت محمد حسن کا یہ کہنا کسی طرح بے جا نہ تھا کہ میں طالب علم ہوں اور کتابوں کو اپنے پاس بطور امانت رکھوں گا دوسرے اس پر خفا ہوکر ایک گیارہ برس کے لڑکے کو قرضے کی ادائیگی اور تجہیز و تکفین کے فرائض سونپ دینا بھی قرین قیاس نہیں ۔ اس کے علاوہ جگہ جگہ میرؔ اپنے والد کی زبان سے عشق کی تلقین کا ذکر کرتے ہیں ۔ ۱۰ ۔ ۱۱ برس کے لڑکے کو اس طرح عشق کی تلقین و ترغیب دینا بھی غیر قدرتی سا لگتا ہے ۔ ممکن ہے یہ پورا قصّہ یا تو میرؔ کی تخئیل کا نتیجہ ہو یا ان کے والد کے ذہنی اختلال کا ۔ ۱۱ برس کی عمر میں میرؔ کے سر سے باپ کا سایہ اٹھ گیا کچھ دنوں اطراف شہر میں نوکری کرتے رہے جب اس طرح گزر کی صورت نہ دیکھی تو دہلی روانہ ہوئے ۔ آگرہ چھوڑنے کے دو اسباب مثنوی " خواب و خیال " میں بیان کیے گئے ہیں ایک رفیقوں کی کوتہی اور دوسرے غریبی اور بے کسی ۔ رفیقوں کی کوتہی یقیناً کسی رومانی دل بستگی کے باعث تھی اور آگرے سے ان کی ہجرت کا فوری سبب یہی دل بستگی بنی چنانچہ آگرے سے رخصت کا منظر اس طرح بیان کرتے ہیں :

بندھا اس طرح آہ بارِ سفر | کہ نے زاد رہ کچھ نہ یارِ سفر
دل اک یار سو بیقرارِ بتاں | غبارِ سرِ رہ گزارِ بتاں
گرفتارِ رنج و مصیبت رہا | غریبِ دیارِ محبّت رہا

لیکن یہ رومانی دل بستگی اس نوعیت کی تھی ۔ جسے اہل خاندان بالعموم اور سوتیلے بھائی بالخصوص اچھی نظر سے نہ دیکھتے تھے ۔ ممکن ہے اسی رومانی دل بستگی کو ختم کرنے کے لیے انھیں آگرے سے دہلی بھیجا گیا ہو ۔ قاضی عبدالودود صاحب نے یہ خیال ظاہر کیا ہے کہ میرؔ دو بار دہلی گئے تھے ۔ پہلی بار حملۂ نادر شاہ ۱۷۳۹ء سے قبل اور دوسری بار حملے کے بعد ۔ پہلی بار خواجہ محمد باسط برادر زادہ صمصام الدولہ ان پر مہربان ہوئے اور صمصام الدولہ نے ایک روپیہ روز مقرر کر دیا جو صمصام الدولہ کے انتقال تک برابر ملتا رہا ۔

कृपालु हुए और समसामुद्दौला ने एक रुपया दैनिक निश्चित कर दिया जो समसामुद्दौला के अवसान तक निरन्तर मिलता रहा।

दूसरी बार दिल्ली गए तो ख़ाने-"आरज़ू" के यहाँ ठहरे। लगता है कि उस समय तक "मीर" के प्रेम का सिलसिला या तो बलपूर्वक समाप्त कर दिया गया था या उसमें उन्हें असफलता हो चुकी थी। इसके अतिरिक्त "मीर" अपने सौतेले भाई के बर्ताव और स्वयं अपनी आर्थिक कठिनाइयों के कारण घोर स्नायविक और मानसिक संघर्ष की स्थिति से गुज़र रहे थे। "ख़्वाब-ो-ख़याल" में संभवत: विदा होने का दृश्य भी दूसरी यात्रा के अवसर का है। इस प्रकार ख़ाने-"आरज़ू" के यहाँ थे तो कुछ ही दिनों बाद हालत प्रमाद और उन्माद की सीमा तक पहुँची। "मीर" ने "नुकातुश-शुअ'रा" में "ख़ाने-आरज़ू" को "उस्तादो-पीरो-मुर्शिदे-बन्दा"[1] लिखा है, किन्तु "ज़िक्रे-मीर" में "ख़ाने-आरज़ू" से कुछ प्राप्त करने अथवा उनके शिष्यत्व की कोई चर्चा नहीं। यह अवश्य कहते हैं कि "याराने-शह्र"[2] से चन्द[3] किताबें पढ़ीं"—लेकिन उनके "ख़ाने-आरज़ू" से ज्ञान-लाभ के अनेक प्रमाण मिलते हैं। अब्दुल-बारी "आसी" ने "कुल्लियाते-मीर" की भूमिका में ठीक ही लिखा है कि "मीर" के काव्य में ऐसे अनेक प्रयोग और शब्द विद्यमान हैं जिन्हें ख़ाने-"आरज़ू" ने ही अपने कोश में स्थान दिया था। जैसे:—

"आश-माल, इस्तख़ाँ-शिकनी, बरख़्वेश-चीदा, बुज़-आवेजी, बुज़गीरी, बेतह, बे हेच, तरस्सुल, दिलज़दा, जंजीरा, सरनशीं, शीराख़ाना, तिफ़्लाने-तह बाज़ार"✠ यह शब्द "आरज़ू" ने अपने कोश "चिराग़े-हिदायत" में इस दावे के साथ लिखे हैं:—

"[इसमें केवल उन शब्दों की व्याख्या है, जो] फ़िरहंगे जहाँगीरी, सरवरी, बुरहाने-क़ाते आदि किसी कोश-ग्रन्थ में नहीं। इनके संकलन का कारण यह है कि इनमें से अधिकतर शब्द नवीन एवं प्राचीन ग्रन्थों के अध्ययन में मुझे दिखाई दिये और उनमें से कुछ शब्दों और अधिकतर पारिभाषिक प्रयोगों की व्याख्या उक्त ग्रन्थों में मैंने नहीं पायी। अत: सर्वसाधारण की सूचना के लिए इन्हें संकलित किया और प्रामाणिक आचार्यों की उक्तियों के आधार पर इस संकलन में उल्लेख किया। किन्तु कुछ शब्द ऐसे हैं कि उनके अनुसन्धानार्थ मुहावरों के ज्ञाताओं की व्याख्या लेनी पड़ी, उनका प्रमाण बुज़ुर्गों के शेरों से न जुटा।" (फ़ारसी का भावार्थ)

१. सेवक के पीर और मार्ग-प्रदर्शक। २. नगर के मित्रों। ३. कुछ ✠उदाहरण के लिए आए हुए इन शब्दों का अर्थ अभिप्रेत नहीं, अत: इनकी व्याख्या यथास्थान ही होगी—जहाँ इनका वास्तव में प्रयोग हो।

دوسری بار دہلی گئے تو خان آرزو کے یہاں قیام کیا معلوم ہوتا ہے کہ اس وقت میرؔ کی رومانی دل بستگی کا سلسلہ یا تو جبراً ختم کر دیا گیا تھا یا اس میں انھیں ناکامی ہو چکی تھی۔ اس کے علاوہ میرؔ اپنے سوتیلے بھائی کے برتاؤ اور خود اپنی مالی پریشانیوں کی بدولت زبردست اعصابی اور ذہنی کشمکش سے گزر رہے تھے۔ "خواب و خیال" میں رخصت ہونے کا منظر بھی غالباً دوسرے سفر کے موقعہ کا ہے۔ چنانچہ خان آرزو کے یہاں کے قیام کے چند روز بعد ہی حالت جنوں کی حد تک پہنچی۔ میرؔ نے "نکات الشعرا" میں خان آرزو کو "استاد پیر و مرشد بندہ" لکھا ہے۔ لیکن "ذکرِ میرؔ" میں خان آرزو سے اکتساب و تلمذ کا کوئی ذکر نہیں کرتے البتہ یہ کہتے ہیں "یاران شہر" سے چند کتابیں پڑھیں۔ لیکن خان آرزو سے مستفید ہونے کے متعدد شواہد ملتے ہیں۔ عبدالباری آسی نے "کلیاتِ میرؔ" کے دیباچے میں بجا طور پر لکھا ہے کہ میرؔ کے کلام میں ایسی متعدد تراکیب اور الفاظ موجود ہیں جنھیں خان آرزو ہی نے اپنی لغت میں داخل کیا تھا۔ مثالاً

"آتش مال، استخواں شکنی، برخویش چیرہ، بزآویزی، بزگیری، بے تہہ، بے ریچ ترسل، دل زدہ، زنجیرہ، سرنشیں، شیرہ خانہ، طفلاں تہہ بازار"۔

یہ الفاظ آرزو نے اپنی لغت "چراغ ہدایت" میں اس دعوے کے ساتھ لکھے ہیں کہ :—

"داخل ہیچ کتاب لغت مثل "فرہنگ جہانگیری" و "سروری" و "برہان قاطع" و غیر ہا نیست و سبب تالیف آنست کہ چوں اکثر ہم مصروف مطالعہ و خواندن کتب جدیدہ و قدیمہ فارسی دیدم و معنی بعضے الفاظ و اکثر اصطلاح در کتب مذکورہ نیافتم بر ہر چہ اطلاع دست بہم داد بہ اسناد آں از اشعار استاداں دریں نسخہ درج کردم مگر بعض کہ از محاورہ دانان بہ تحقیق پیوستہ و سندآں در اشعار بزرگاں بہم نہ رسیدہ"۔

اس دور میں میرؔ کی ذہنی حالت پراگندہ ہو چکی تھی۔ وہ زبردست جذباتی

उस युग में "मीर" की मानसिक स्थिति असन्तुलित हो चुकी थी। वह महान् भावात्मक संक्रमण और विक्षोभ की स्थिति में पड़े थे। इसका फल यह हुआ कि वह आधुनिक मनोविज्ञान की शब्दावली में PERSECUTION COMPLEX में ग्रस्त हो गए थे। वह हर एक को अपना जानलेवा शत्रु समझते थे और हर जगह उन्हें अपने अपमान के ही साधन जुटे हुए दिखायी देते थे और अपने विरुद्ध षड़यन्त्रों का जाल बिछा हुआ प्रतीत होता था। एक ओर उन्हें अपने सौतेले भाई हाफ़िज़ मुहम्मद हसन के प्रति इतनी घोर दुश्शंका हुई कि समझने लगे कि वह उनकी जान के पीछे पड़े हैं। अतः स्वयं लिखते हैं कि हाफ़िज़ मुहम्मद हसन ने अपने मामा—ख़ाने "आरज़ू" को लिखा—"मुहम्मद तक़ी घोर उपद्रवी है। दोस्ती के पर्दे में उसका काम तमाम कर देना चाहिए।" प्रथमतः तो सौतेले भाई होते हुए भी हाफ़िज़ मुहम्मद हसन और मुहम्मद तक़ी में इतनी घोर घृणा और ऐसी प्रबल शत्रुता का कोई कारण प्रत्यक्षतः दिखाई नहीं देता कि मुहम्मद हसन उनकी जान लेने पर उतारू हो जाएं, दूसरे "ख़ाने-आरज़ू" जैसे गम्भीर और शिष्ट बुज़ुर्ग के प्रति यह आशंका; कि, वह इस तथाकथित योजना को क्रियात्मक रूप देंगे और मुहम्मद-तक़ी की जान ले लेंगे, बिलकुल ही अनुचित है। हाँ, "मीर" ने यह अवश्य लिखा कि उसके बाद "ख़ाने-आरज़ू" उनके साथ दुर्व्यवहार करने लगे। यह दोनों बातें वास्तव में "मीर" के मानसिक रोग PERSECUTION COMPLEX का फल है जिसका लक्षण ही है कि रोगी हर घड़ी और हर व्यक्ति के विषय में यही सोचता है कि वह उसका दुराकांक्षी है और उसके विरुद्ध घोर षड़यन्त्र रच रहा है। इस बीमारी की परिणति पूर्ण उन्माद अथवा प्रमाद पर हुई जिसका विवरण "मीर" ने अपनी मसनवी "ख़्वाब-ो-ख़याल" में निम्न प्रकार काव्य-बद्ध किया है:—

जिगर जौरे-गर्दूं[1] से ख़ूं हो गया[2] | मुझे रुकते-रुकते जुनूं[3] हो गया
हुआ ख़ब्त[4] से मुझको रब्ते-तमाम[5] | लगी रहने वहशत[6] मुझे सुब्ह-ो-शाम
कभू कफ़-बलब[7] मस्त[8] रहने लगा | कभू संग-बर-दस्त[9] रहने लगा
कभू ग़र्क़े-बहरे-तहय्युर[10] रहूँ | कभू सर-ब-ज़ेबे-तफ़क्कुर[11] रहूँ
ये वहमे-ग़लतकार[12] यां तक खिंचा | कि कारे-जुनूं[13] आसमां तक खिंचा[14]

१. काल-चक्र के प्रपीडन। २. जिगर ख़ून हो जाना = परम हार्दिक कष्ट होना, पूर्ण निराशा। ३. प्रमाद ३. सनक, लुप्त-चेतना होना। ४. पूर्ण सम्पर्क। ५. उद्विग्नता, विक्षोभ। ६. होठों पर फेन। ७. मज्जा-हीन, हत्चेतना। ८. हाथ में पत्थर (चिड़चिड़ेपन और अधैर्य का द्योतक)। ९. विस्मय-सागर में निमग्न। १०. गर्दन झुकाए चिन्तावस्था में। ११. अनुचित कार्यों की ओर उन्मुख करने वाला भ्रम। १२. इस सीमा तक बढ़ा। १२. प्रमाद की कार्यशीलता। १३. आकाशस्थ अस्तित्वों पर भी वैसी ही विभ्रमपूर्ण दृष्टि पड़ने लगी।

بحران اور اختلال سے گزرے تھے۔ اس کا نتیجہ یہ تھا کہ وہ جدید نفسیات کی اصطلاح PERSECUTION COMPLEX میں مبتلا ہو چکے تھے وہ ہر ایک کو دشمن جانی سمجھتے تھے ہر جگہ ان کو اپنی تذلیل کا سامان نظر آتا تھا اور اپنے خلاف سازش کا جال بچھا ہوا معلوم ہوتا تھا۔ ایک طرف انھیں اپنے سوتیلے بھائی حافظ محمد حسن سے اس قدر بدگمانی ہوئی کہ انھیں اپنی جان کے درپے سمجھنے لگے۔ چنانچہ خود لکھتے ہیں کہ حافظ محمد حسن نے اپنے ماموں خان آرزو کو لکھا۔ "محمد تقی فتنۂ روزگار ہے دوستی کے پردے میں اس کا خاتمہ کر دینا چاہیے"۔ اوّل تو سوتیلے بھائی ہونے کے باوجود حافظ محمد حسن اور محمد تقی میں اس قدر زبردست منافرت اور جانی دشمنی کا کوئی سبب بہ ظاہر نظر نہیں آتا کہ محمد حسن ان کی جان تک لینے پر آمادہ ہو جائیں، دوسرے خان آرزو جیسے سنجیدہ اور متین بزرگ سے یہ اندیشہ کہ وہ اس مفروضہ منصوبے پر عمل در آمد کریں گے اور محمد تقی کی جان لے لیں گے سراسر بے جا ہے۔ البتہ میر نے لکھا ہے کہ اس کے بعد خان آرزو ان سے بدسلوکی کرنے لگے۔ یہ دونوں باتیں در اصل میر کی نفسیاتی بیماری PERSECUTION COMPLEX کا نتیجہ ہیں، جس میں مریض ہر وقت اور ہر شخص کے بارے میں یوں سوچتا ہے کہ وہ اس کا بد خواہ ہے اور اس کے خلاف گہری سازش کر رہا ہے۔ اس بیماری کا سلسلہ آخر کار جنوں کی حد تک پہنچا جس کا حال میر نے اپنی مثنوی "خواب و خیال" میں اس طرح لکھا ہے:

جگر جورِ گردوں سے خوں ہوگیا — مجھے رکتے رکتے جنوں ہوگیا

ہوا خبط سے مجھ کو ربطِ تمام — لگی رہنے وحشت مجھے صبح و شام

کبھو کف بلب مست رہنے لگا — کبھو سنگ در دست رہنے لگا

کبھو غرقِ بحرِ تحیّر رہوں — کبھو سر بہ جیبِ تفکر رہوں

یہ وہم غلط کاریاں تک کھنچے — کہ کارِ جنوں آسماں تک کھنچا

نظر رات کو چاند پر گر پڑی — تو گویا کہ بجلی سی دل پر پڑی

नज़र[१] रात को चांद पर गर[२] पड़ी तो गोया कि[३] बिजली-सी दिल पर पड़ी
महे-चार-दह[४] कारे-आतिश[५] करे डरूं यां तलक मैं कि जी ग़श करे[६]
तवह्हुम[७] का बैठा जो नक़्शे-दुरुस्त[८] लगी होने वस्वास[९] से जान सुस्त[१०]
नज़र आई इक शक्ल महताब[११] में कमी आई जिससे ख़ुर-ो-ख़्वाब[१२] में
अगरचन्द[१३] परतौ[१४] से मह[१५] के डरूं वलेकिन नज़र उस तरफ़ ही करूं

उन्माद की इस अवस्था को "मीर" के जीवन का महत्त्वपूर्ण मोड़ समझना चाहिए; क्योंकि, इससे पूर्व उनकी शायरी की कोई चर्चा नहीं मिलती। "नासिर" लखनवी ने "तज़किर-ए-ख़ुश मार-क-ए-ज़ेबा" मे इस घटना का उल्लेख किया है:—

"यह स्वयं ही फ़रमाया करते थे कि यौवन के पूर्वाह्न मे उन्माद का प्रवेग और पागलपन का प्रकोप मन पर छा गया और प्रवृत्ति हुई अनर्गल बकवास और कटु एवं अशिष्ट वचन की ओर! मान-सम्मान त्यक्त हुए और सबमे अपमानित होकर रहना ही मानों पसन्द आया। हर किसी को गालियां देना धर्म और पत्थर मारना कर्म था। ख़ाने 'आरज़ू' ने कहा कि प्रियवर, छन्दोबद्ध गालियां भी छन्द-लय-हीन आशीर्वचनों से श्रेष्ठ हैं और कपड़े फाड़ने से शेरों की तक़तीअ[१६] अधिक प्रिय कर्म है। चूंकि काव्यात्मकता स्वभावत: प्राप्त थी अत: जो गाली भी उन दिनों ज़बान पर आई मिसरा या बैत हो गई। जब मानसिक स्वास्थ्य में सुधार आया तो काव्य-रचना का आनन्दपूर्ण प्रभाव मन पर रहा। कभी-कभी दो-चार शेर जो ख़ाने-'आरज़ू' की ख़िदमत में पढ़े, उन्होंने पसन्द फ़रमाये और इस ओर अधिक ध्यान देने की ताकीद की। एक दिन ख़ाने-'आरज़ू' ने कहा कि आज मिर्ज़ा 'सौदा' अपना यह मतला[१७] बड़े गौरव के साथ पढ़ गए—

चमन में सुब्ह जो उस जंगजू[१८] का नाम लिया सबा[१९] ने तेग़ का आबे-रवां[२०] से काम लिया

'मीर' साहब ने उसको सुनकर तत्क्षण यह मतला पढ़ा :

हमारे आगे तेरा जब किसू ने नाम लिया दिले-सितम-ज़दा[२१] को हमने थाम-थाम लिया

१. दृष्टि। २. यदि। ३. मानों। ४. पूर्णिमा का चांद। ५. आग का काम। ६. जी ग़श करना=मूर्च्छित हो जाना। ७. विभ्रम। ८. पूर्ण प्रभाव, गहरा चिह्न। ९. विभिन्न प्रकार की दुश्शंकाओं। १०. जान सुस्त होना=नाड़ी ठण्डी पड़ना। ११. चन्द्रमा। १२. खाने और सोने। १३. यद्यपि, कुछ-कुछ। १४. छाया, प्रतिबिम्ब (ज्योत्स्ना)। १५. चांद। १६. छन्द मे मात्राओं के निश्चित परिमाण के अनुसार एक-एक लघु-गुरु को पृथक करना। १७. हर ग़ज़ल का पहला शेर सामान्यत: 'मतला' होता है, कि वहीं से ग़ज़ल उदय होती है। मतले के दोनों मिसरों में रदीफ़-क़ाफ़िया होते हैं। जैसे इसी उदाहरण मे आए हुए मतले में "ना" और "का" तो क़ाफ़िया हैं (नाम-काम) और "म-लिया" हर शेर के अन्त में आना आवश्यक है अत: यह रदीफ़ हुआ। १८. लड़ाकू। १९. समीर। २०. बहते हुए पानी। २१. उत्पीड़न झेले हुए मन।

مہ چار دہ کا بِر آتش کرے ذروں یاں تنک میں کہ جی غش کرے

تو ہم کا بیٹھا جو نقش درست لگی ہونے وسواس سے جان سست

نظر آئی اک شکل مہتاب میں کمی آئی جس سے خور و خواب میں

اگرچند پر تو سے مہ کے ڈروں ولیکن نظر اُس طرف ہی کروں

اس دیوانگی کو میرؔ کی زندگی کا اہم موڑ سمجھنا چاہیے۔ کیونکہ اس سے قبل میرؔ کی شاعری کا کوئی ذکر نہیں ملتا۔ ناصرؔ لکھنوی نے "تذکرۂ خوش معرکۂ زیبا" میں یہ روایت نقل کی ہے۔

" یہ نقل خود فرماتے تھے کہ عنفوان جوانی میں جوشش وحشت اور استیلائے سودا طبیعت پر غالب ہوا اور کام و زبان ہرزہ گوئی پر راغب۔ ترک ننگ و نام، رسوائے خاص و عام پسند آئے۔ ہر کسی کو دشنام دینا شعار اور سنگ زنی کاروبار تھا، خان آرزو نے کہا کہ اے عزیز دشنام موزوں دعائے ناموزوں سے بہتر اور رحمت کے پارہ کرنے سے تقطیع شعر خوش تر ہے۔ چونکہ موزونیٔ طبیعت جوہر ذاتی تھی جو دشنام زبان تک آئی مصرعہ یا بیت ہوگئی، بعد اصلاح دماغ و دل کے مزہ شعر گوئی کا طبیعت پر رہا۔ کبھی کبھی دو چار شعر جو خان آرزو کی خدمت میں پڑھے پسند فرمائے اور تاکید شعر و سخن زیادہ سے زیادہ کی۔ ایک دن خان آرزو نے کہا کہ آج مرزا سوداؔ یہ مطلع اپنا نہایت مباہات کے ساتھ پڑھ گئے۔

چمن میں صبح جو اس جنگ جو کا نام لیا ؛ صبا نے تیغ کا آبِ رواں سے کام لیا

میرؔ صاحب نے اس کو سن کر بدیہتہً یہ مطلع پڑھا۔

ہمارے آگے ترا جب کسو نے نام لیا ؛ دلِ ستم زدہ کو ہم نے تھام تھام لیا

خان آرزو اس کو سُن کر فراموشی سے اچھل پڑے اور کہا " خدا چشمِ بد

ख़ाने-'आरज़ू' इसको सुनकर हर्ष से उछल पड़े और कहा—'ख़ुदा चश्मे-बद से महफ़ूज़ रक्खें' !"

संभव है ख़ुश-मार-क-ए-ज़ेबा की यह उक्ति उसके कुछ अन्य विवरणों की तरह ग़लत और वास्तविक घटना के विरुद्ध हो किन्तु "मीर" के उन्माद और उनके काव्य-रचना के आरंभ का समय लगभग एक ही मालूम होता है और इसकी पुष्टि कुछ अन्य साक्ष्यों से भी होती है। "मीर" की तरह[1] में शाह "हातिम" ने पहली ग़ज़ल सन् ११५५ हिजरी में कही जो दीवान ज़ादा की रामपुर वाली हस्तलिखित प्रतिलिपि में मौजूद है जिसका एक मिसरा है :

"आशना चाहे तो हो 'हातिम' ख़ुदा का आशना"

दूसरी ग़ज़ल सन् ११६२ हिजरी की है :

"जो मयख़ाने में जाता है कदम रखते झिझकता है"

'मीर' ने अपने इस उन्माद का समय आग़ाज़े-बहार से पाईज़ (अर्थात् वसन्त ऋतु के आरम्भ से पतझड़) तक निश्चित किया है। अर्थात् यह क्रम रजब ११५३ हिजरी (सितम्बर सन् १७४१ई०) तक चला। उस समय उनकी आयु १८ वर्ष के लगभग होगी। अपने उन्माद-काल के दो वर्ष बाद ही वे साहित्य क्षेत्र में प्रसिद्ध हो चुके थे और उनकी ज़मीन में शाह "हातिम" जैसा उस्ताद ग़ज़ल कहने लगा था।

फ़ख़रुद्दीन की पत्नी जो अली मुत्तक़ी की मुरीद थीं और उनकी सम्बन्धी भी होती थीं उन्होंने इनकी चिकित्सा पर पर्याप्त धन व्यय किया और इन्होंने स्वस्थ होने के बाद मीर जाफ़र अज़ीमाबादी से शिक्षा लेनी प्रारम्भ की और "सआदत" अमरोहवी की प्रेरणा से उर्दू में शेर कहना प्रारम्भ किया और "मीर" तख़ल्लुस धारण किया।

सैयद सआदत अली "सआदत" अपने समय के उल्लेखनीय शायरों में से थे। "क़ायम" चाँदपुरी ने लिखा है : "अपने युग के समानधर्माओं में विशिष्ट महत्त्व रखते थे।" वह अमरोहे के रहने वाले हज़रत शाह शरफ़ुद्दीन हसन (जो शाह विलायत के नाम से विख्यात थे) के वंशज थे और दिल्ली आकर शाही क़िले में नियुक्त हो गए थे और सम्भवतः शाही तोपख़ाने में कोई सेवा उनके सुपुर्द थी। उन्होंने सैला-सजनूं (लैला-मजनूं के वज़न पर) नामक एक प्रेम सम्बन्धी मसनवी भी रची थी।

१. विशेष छन्द, क़ाफ़िये और रदीफ़ को "तरह" कहते हैं।

سے محفوظ رکھے"۔

ممکن ہے "خوش معرکۂ زیبا" کا یہ بیان اس کی بعض دوسری روایتوں کی طرح غلط اور خلاف واقعہ ہو لیکن میر کی دیوانگی اور ان کی شاعری کے آغاز کا زمانہ کم و بیش ایک ہی معلوم ہوتا ہے اور اس کی تصدیق دوسرے شواہد سے بھی ہوتی ہے۔ میر کی طرح میں شاہ حاتم نے پہلی غزل ۱۱۵۵ھ ہجری میں کہی جو دیوان زادہ کے مخطوطۂ رام پور میں موجود ہے جس کا ایک مصرعہ ہے:

"آشنا چاہے تو ہو حاتم خدا کا آشنا"

دوسری غزل ۱۱۶۲ھ ہجری کی ہے:

"جو مے خانے میں جاتا ہے قدم رکھتے جھجکتا ہے"

میر نے اپنی دیوانگی کا زمانہ آغاز بہار سے پائیز یا خزاں تک قرار دیا ہے یعنی یہ سلسلہ رجب ۱۱۵۳ھ (ستمبر ۱۷۴۰ء) تک جاری رہا اس وقت ان کی عمر ۱۸ سال کے لگ بھگ ہوگی۔ دیوانگی کے دو سال بعد ہی وہ دنیائے ادب میں مشہور ہو چکے تھے اور ان کی زمین میں شاہ حاتم جیسا استاد غزل کہنے لگا تھا۔

فخرالدین کی بیوی نے جو علی متقی کی مرید تھیں اور ان کی قریبی عزیزہ بھی تھیں ان کے علاج میں کافی صرفہ کیا اور انھوں نے صحت یابی کے بعد میر جعفر عظیم آبادی سے درس لینا شروع کیا اور سعادت امروہوی کی ترغیب سے ریختہ گوئی شروع کی اور میر تخلص اختیار کیا۔

سیّد سعادت علی سعادت اپنے دور کے قابل ذکر شعرا میں تھے۔ قائم چاند پوری نے لکھا ہے "در اقران و امثال خود امتیاز تمام داشت" امروہے کے رہنے والے حضرت شاہ شرف الدین حسن المعروف بہ شاہ ولایت کی اولاد میں سے تھے اور دہلی آکر قلعہ پادشاہی میں ملازم ہو گئے تھے اور غالباً توپ خانۂ پادشاہی کی کوئی خدمت سپرد تھی انھوں نے سیلیٰ مجنوں (بروزن لیلیٰ مجنوں) ایک عشقیہ مثنوی بھی نظم کی تھی کلام کا انداز ایہام گویوں کے طرز پر تھا کریم الدین نے لکھا ہے:

उनकी शैली ईहामगोयों[1] के ढंग की थी। करीमुद्दीन ने लिखा है :

"उसके शेर क्लिष्ट उपमाओं से परिपूर्ण हैं क्योंकि उस युग में यह क्लिष्टता की ओर ही विशेष रूप से उन्मुख था किन्तु वह उपमाएं नवीन और सशक्त हैं और पदलालित्य एवं सौष्ठव से युक्त काव्य है। वह अपने युग में बड़ी ख्याति रखता था। अब भी इसकी कुछ ख्याति शेष है।" सैयद सआदत अली से मेल-जोल के बावजूद भी "मीर" ने ईहामगोयी की शैली नहीं अपनाई और विशेष शैली का आविष्कार किया और श्रम-साधना से शीघ्र ही कवियों में अपने लिए विशिष्ट स्थान बना लिया। स्वयं लिखते हैं:—

"कठिन साधना की और अपने अभ्यास को उस स्तर तक पहुँचा दिया कि नगर के कवियों में प्रामाणिक हो गया।"

एक दिन भोजन के समय ख़ाने-"आरज़ू" से कुछ तकरार हो गयी और यह खाना छोड़कर घर से निकल खड़े हुए। हौज़े-क़ाज़ी में एक व्यक्ति से भेंट हुई जिसका नाम अलीमुल्लाह था। उसने इन्हे पहचान लिया क्योंकि इनकी 'हरकाते-मजनूना'[2] की शहर भर में धूम थी। वह उन्हें ज़हीरुद्दौला के पुत्र रिआयत ख़ाँ के यहाँ ले गया और रिआयत ख़ाँ ने "मीर" को अपनी सरकार से सम्बन्धित कर लिया। और इस प्रकार उन्होंने धनाभाव से छुटकारा पाया।

सन् १७४८ ई० में दुर्रानी के हमले की सूचना आई तो रिआयत ख़ाँ के साथ "मीर" भी दिल्ली से चले और सरहिन्द तक पहुँचे। फिर, रिआयत ख़ाँ की सैनिक टुकड़ी में सफ़दरजंग के साथ दिल्ली आए और उसके कुछ दिन बाद राजा बख़्त सिह के साथ जब रिआयत ख़ाँ ने राजपूताने की ओर कूच किया तो "मीर" भी उसके साथ-साथ थे। इसी यात्रा में "मीर" को अजमेर जाकर ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती के मज़ार पर उपस्थित होने का श्रेय प्राप्त हुआ। राजा और रिआयत ख़ाँ के सम्बन्ध बिगड़ गए और रिआयत ख़ाँ दिल्ली वापस आ गए। एक दिन रिआयत ख़ाँ ने आग्रह किया कि अपने कुछ शेर क़व्वाल-बचे को सिखा दीजिए। "मीर" तैयार न होते थे लेकिन आग्रह से विवश होकर ५ शेर क़व्वाल-बचे को सिखाए

१. श्लेष अलंकार का उपयोग करने वालों। किन्तु "श्लेष" और "ईहाम" मे अन्तर यह है कि श्लेष की तरह ईहाम मे भी शब्दों से दो अर्थ तो निकलते हैं किन्तु एक अर्थ बिलकुल सामने का होता है और दूसरा अर्थ बहुत दूर का। श्लेष मे दोनो अर्थ ठीक बैठते हैं किन्तु ईहाम में दूर का अर्थ प्रयोजनीय होता है। ईहाम का प्रत्यक्ष उदाहरण हैं—महाभारत की विख्यात पहेलियाँ जिनमें "द्रोण" और "केशव" आदि के सामने के अर्थ, स्पष्ट अर्थ, उद्दिष्ट नही हैं। २. पागलपन की हरकतें।

"اس کے شعر تشبیہہ معلقہ سے پُر ہیں کیوں کہ اس عہد میں یہ اغلاق پسند تھا مگر وہ تشبیہہ نئی اور قوی ہیں اور عبارت رنگین اور فصیح ہے وہ اپنے عہد میں بڑی شہرت رکھتا تھا ابھی اس کی کچھ شہرت موجود ہے۔"

سید سعادت علی سے ربط و ضبط کے باوجود میر نے ایہام گوئی کا انداز اختیار نہیں کیا اور ایک طرز خاص ایجاد کیا اور محنت اور ریاضت سے جلد ہی شاعروں میں اپنے لیے جگہ بنالی خود لکھتے ہیں:

"خود کشی کردم و مشق خود بہ مرتبہ رساندم کہ در موزونان شہر مستند شدم۔"

ایک دن خان آرزو سے کھانے پر کچھ تکرار ہو گئی اور یہ کھانا چھوڑ کر گھر سے نکل کھڑے ہوئے حوض قاضی میں ایک شخص سے ملاقات ہوئی جس کا نام عظیم اللہ نامی تھا اس نے انھیں پہچان لیا کیوں کہ "ان کی حرکات مجنونانہ کی شہر بھر میں دھوم" تھی وہ انھیں رعایت خاں پسر ظہیر الدولہ کے ہاں لے گیا اور رعایت خاں نے میر کو دامن دولت سے وابستہ کر لیا اور انھوں نے "قید تنگ دستی" سے نجات پائی۔

۱۷۴۸ء میں درانی کے حملے کی خبر آئی تو رعایت خاں کے ساتھ میر بھی دہلی سے چلے اور سرہند تک پہونچے پھر رعایت خاں کے ہم راہ صفدر جنگ کے ساتھ دہلی آئے اور اس کے کچھ دنوں بعد راجہ بخت سنگھ کے ساتھ جب رعایت خاں نے راجپوتانے کا رُخ کیا تو میر بھی اس کے ہم رکاب تھے اسی سفر میں میر کو اجمیر جاکر خواجہ معین الدین چشتی کے مزار پر حاضری دینے کا اتفاق ہوا۔ راجہ اور رعایت خاں کے تعلقات خراب ہوئے اور رعایت خاں دہلی واپس آگئے ایک دن رعایت خاں نے اصرار کیا کہ اپنے کچھ اشعار قوال بچے کو سکھا دیجیے۔ میر آمادہ نہ ہوتے تھے لیکن اصرار سے مجبور ہو کر ۵ اشعار قوال بچے کو سکھائے مگر

किन्तु इस घटना का उन पर यह प्रभाव पड़ा कि तभी से घर में बैठ रहे।

कुछ दिनों बाद जावेदख़ाँ ख़्वाजासरा के यहाँ नौकर हुए और उन्हें घोड़ा रखने और सेवा की अनिवार्यता से विमुक्त कर दिया गया। इस प्रकार वह नाम-मात्र के सिपाही थे। सफ़दर जंग जब क़ायमख़ाँ का घर ज़ब्त करने चले तो "मीर" भी साथ थे। किन्तु उस सेना की पराजय हुई और "मीर" पराजित सेना के साथ वापस आए। फिर घर में बैठ रहे और अध्ययन में लग गए। जावेदख़ाँ ख़्वाजासरा की हत्या के बाद सफ़दरजंग के दीवान महानारायण ने आर्थिक संरक्षण प्रदान किया। उन्हीं दिनों "नुकातुश्-शुअ'-रा" नामक तज़किरा तैयार हुआ।

"मीर" के चौथे संरक्षक महाराजा नागरमल थे जिन तक राजा युगलकिशोर द्वारा पहुँच हुई थी। दुर्रानी के दूसरे हमले के समय "मीर" सकुटुम्ब निकल खड़े हुए थे। रास्ते में राजा युगलकिशोर की पत्नी मिली। उसके साथ बरसाना और फिर कुम्भेर पहुँचे जो राजा सूरजमल का एक क़िला था और राजा नागर-मल का केन्द्रीय स्थान। "मीर" इस यात्रा में अपने बेटे फ़ैज़अली के भी साथ होने का वर्णन करते हैं। स्पष्ट है कि इसके पूर्व ही उनका विवाह हो चुका था किन्तु उनकी पत्नी के सम्बन्ध में विवरण ज्ञात नहीं। संभव है यह विवाह ही ख़ाने-"आरज़ू" से तकरार का कारण बना हो और "मीर" की आर्थिक कठिनाइयों और मानसिक उलझनों का कारण हो।

राजा नागरमल से "मीर" का सम्बन्ध उस दृष्टि से भी ध्यान देने योग्य है कि उसके बाद "मीर" राजनैतिक कार्यकलाप में स्वयं सक्रिय भाग लेने लगते हैं। अब तक "मीर" की केवल एक राजनैतिक सक्रियता की चर्चा आई है; अर्थात्; जब रिआयत ख़ाँ और राजा बख़्तसिंह के सम्बन्ध बिगड़ने लगे तो "मीर" ने उन दोनों का वैमनस्य दूर करने का असफल प्रयास किया और राजा के पास जाकर रिआयत ख़ाँ की ओर से क़सम खाई। अब नागरमल के साथ "मीर" इसी प्रकार के अन्य राजनैतिक कार्यों में भी सक्रिय दिखाई देते हैं। पानीपत की लड़ाई के बाद नागरमल के साथ "मीर" भी कुम्भेर से दिल्ली आ गए और जब दुर्रानी और शुजाउद्दौला के मध्य सन्धि-सम्बन्ध कराने राजा नागरमल चले तो "मीर" भी उनके साथ थे। "मीर" इस यात्रा से पूर्व दुर्रानी के हमले का घातक परिणाम देख चुके थे। संभवतः स्वयं उनका घर भी लुटा था। जिन

اس واقعے کا ان پر یہ اثر ہوا کہ خانہ نشین ہو گئے۔

کچھ مدت بعد جاوید خاں خواجہ سرا کے یہاں نوکر ہوئے اور انھیں گھوڑا رکھنے اور تکلیف نوکری سے معاف کر دیا گیا یوں برائے نام سپاہی تھے۔ صفدر جنگ جب قائم خاں کا گھر ضبط کرنے چلے تو میرؔ بھی ہمراہ تھے مگر اس لشکر کو شکست ہوئی اور میرؔ شکست خوردہ لشکر کے ساتھ واپس آئے۔ خانہ نشین ہو گئے اور مطالعے میں مصروف رہے۔ جاوید خاں خواجہ سرا کے قتل کے بعد مہا نرائن دیوان صفدر جنگ نے سرپرستی کی اسی زمانے میں تذکرۂ "نکات الشعرا" مکمل ہوا۔

میرؔ کے چوتھے سرپرست مہاراجہ ناگرمل تھے جن تک راجہ جگل کشور کی معرفت رسائی حاصل ہوئی تھی۔ درانی کے دوسرے حملے کے وقت میرؔ اپنے اہل و عیال کو لے کر نکل کھڑے ہوئے تھے۔ راستے میں راجہ جگل کشور کی بیوی ملی اور اسی کے ساتھ برسانہ اور پھر کمھیر پہنچے جو راجہ سورج مل کے قلعوں میں سے تھا اور ناگرمل کا مرکزی مقام تھا۔میرؔ اس سفر میں اپنے بیٹے فیض علی کی موجودگی کا بھی ذکر کرتے ہیں۔ ظاہر ہے کہ اس سے قبل میرؔ کی شادی ہو چکی تھی لیکن ان کی بیوی کے بارے میں تفصیلات کا علم نہیں۔ ہو سکتا ہے کہ یہ شادی ہی خان آرزو سے تکرار کا باعث بنی ہو اور میرؔ کی مالی پریشانیوں اور دماغی الجھنوں کا سبب ہو۔

راجہ ناگرمل سے میرؔ کا تعلق اس حیثیت سے بھی قابل توجہ ہے کہ اس کے بعد میرؔ سیاسی معاملات میں براہ راست دخیل ہونے لگتے ہیں۔اب تک صرف میرؔ کی ایک سیاسی "کارکردگی" کا ذکر آیا ہے یعنی جب رعایت خاں اور راجہ بخت سنگھ کے تعلقات خراب ہوئے تو میرؔ نے ان دونوں میں صلح صفائی کرانے کی ناکام کوشش کی اور راجہ کے پاس جا کر رعایت خاں کی طرف سے قسم کھائی۔ اب ناگرمل کے ساتھ میر اس قسم کی بعض دوسری سیاسی سرگرمیوں میں بھی شریک ہوتے نظر آتے ہیں۔ پانی پت کی لڑائی کے بعد ناگرمل کے ساتھ میرؔ بھی کمھیر سے دہلی آ گئے اور جب درانی اور شجاع الدولہ کے درمیان صلح صفائی کی مہم پر راجہ ناگرمل روانہ ہوئے تو میرؔ ان کے ہمراہ تھے۔میرؔ اس سفر سے قبل دہلی میں حملۂ درانی کی تباہ کاریوں کو دیکھ چکے تھے غالباً ان کا اپنا مکان

दीवान-ख़ानों[१] में शेर पढ़े थे और "इश्क़े-ख़ुश-क़दाँ"[२] में जीवन के दिन बिताए और रातें काटी थीं, महफ़िलें सजाई थीं—अब वह दीवान-ख़ाने उजाड़ और नष्ट-भ्रष्ट थे। सूरजमल जाट के बुलावे पर नागरमल आगरे गए तो भी "मीर" उनके साथ थे। राजा नागरमल ने शाह-आलम से "अह्दो-पैमान दुरुस्त करने"[३] "मीर" को फ़र्रुख़ाबाद भेजा किन्तु सभी बातें तय हो जाने के बाद भी राजा नागरमल ने यही निश्चित किया कि मराठों का साथ दिया जाय और "मीर" भी दिल्ली चले। किन्तु दिल्ली पहुँचने पर "मीर" अपने कुटुम्ब के साथ अरब सराय में ठहरे और राजा से अलग हो गए। कुछ दिनों तक राजा नागरमल का बेटा उनकी आर्थिक सहायता करता रहा किन्तु यह स्थिति भी अधिक दिनों तक स्थायी न रह सकी।

इस बार "मीर" का दिल्ली में रहना उलझनों और हर प्रकार के संकटों से परिपूर्ण था। स्वयं लिखते हैं कि "कुत्ते-बिल्ली की तरह ज़िन्दा हूँ। चूंकि शेर की वजह से बड़ी शोहरत[४] है लिहाज़ा[५] बाज़[६] लोग मेरे हाल की तरफ़ मुतवज्जेह[७] हो जाते हैं, यूँ भिखारियों की सी हालत है।" अधिकतर उसके बाद घर पर ही पड़े रहे। कुछ अमीर आर्थिक सहायता किया करते थे लेकिन यह विधिवत किसी दरबार से सम्बन्धित नहीं थे। यूँ भी दिल्ली का साहित्यिक वातावरण सुनसान हो चुका था। "मज़हर", "दर्द" और "हातिम" के अतिरिक्त मुख्य कवियों में से और कोई दिल्ली में न था। "सौदा", "क़ायम" और "सोज़" जा चुके थे। रहे-सहे वातावरण को भी "मीर" ने अपने लिए दुस्सह बना लिया था। "हातिम" के शिष्य "बक़ा" से उनकी साहित्यिक झड़प हुई। इन्होंने "अज़दर-नामा" नामक मसनवी लिखी जिसमें अपने समकालीन सभी कवियों को कीड़े मकोड़ों से उपमा दी और अपने को अजगर (सबसे विशालकाय साँप, व्यन्जना में नागराज) बताया। "सौदा" के शागिर्द इनायतुल्लाह हज्जाम की हज्व[८] लिखी और स्वयं "सौदा" को भी न छोड़ा।

सारांश यह कि आर्थिक और मानसिक दोनों दृष्टियों से दिल्ली में "मीर" का जीवन असन्तोषपूर्ण था। "सौदा" के देहान्त के बाद जब आसिफ़ुद्दौला ने अपने

१. उन दिनों के ड्राइंग रूम। २. अच्छे क़द वालों (पूर्ण यौवन को प्राप्त) से प्रेम। ३. सन्धियाँ, शर्तें और एक दूसरे को सहमति से स्थापित प्रणो को पुनः स्थापित करने। ४. ख्याति। ५. अतः। ६. कोई-कोई। ७. ध्यान देना, आकृष्ट होना। ८. एक प्रकार का भर्त्सनात्मक प्रबन्ध-काव्य जिसमे हर प्रकार से सम्बन्धित व्यक्ति मे दोष ढूढ़े जाते थे।

بھی لٹا تھا جن دیوان خانوں میں انھوں نے شعر پڑھے تھے "عشق خوش قداں" میں زندگی کے دن گزارے اور راتیں بسر کی تھیں محفلیں سجائی تھیں اب وہ دیوان خانے ویران اور شکستہ تھے۔ سورج مل جاٹ کی طلبی پر ناگرمل آگرے گئے تو بھی میرؔ ان کے ہمراہ تھے۔ راجہ ناگرمل نے شاہ عالم سے عہد و پیمان درست کرنے کے لیے میرؔ کو فرخ آباد بھیجا مگر سارے معاملات طے ہو جانے پر بھی راجہ ناگرمل نے یہی طے کیا کہ مرہٹوں کا ساتھ دیا جائے۔ اور میرؔ بھی دہلی روانہ ہوئے لیکن دہلی پہنچنے پر میرؔ اپنے خاندان کے ساتھ عرب سرائے میں ٹھہرے اور راجہ سے الگ ہوگئے۔ کچھ دنوں تک راجہ ناگرمل کا بیٹا ان کی مالی امداد کرتا رہا مگر یہ صورت بھی زیادہ دن قائم نہ رہی۔

اس بار میرؔ کا دہلی میں قیام الجھنوں اور پریشانیوں سے خالی نہ تھا خود لکھتے ہیں کہ کتے بلی کی طرح زندہ ہوں چونکہ شعر کی وجہ سے بڑی شہرت ہے لہذا بعض لوگ میرے حال کی طرف متوجہ ہو جاتے ہیں یوں بھکاریوں کی سی حالت ہے۔ زیادہ تر خانہ نشین رہے بعض امرا مدد کرتے تھے لیکن یہ باقاعدہ کسی سے وابستہ نہ تھے۔ یوں بھی دہلی کی ادبی فضا سنسان ہو چکی تھی۔ مظہرؔ، دردؔ اور حاتمؔ کے سوا بڑے شاعروں میں سے اب کوئی دہلی میں نہ تھا۔ سوداؔ، قائمؔ، سوزؔ جا چکے تھے۔ اس ادبی فضا کو بھی میرؔ نے اپنے لیے ناسازگار بنا لیا تھا حاتمؔ کے شاگرد بقا سے جھگڑا ہوا مثنوی "اژدر نامہ" لکھی جس میں اپنے تمام معاصرین کو کیڑے مکوڑوں سے تشبیہ دی۔ اور خود کو اژدر قرار دیا۔ عنایت اللہ حجام شاگرد سوداؔ کی ہجو لکھی اور خود سوداؔ کو بھی نہیں بخشا۔

غرض مالی اور ذہنی دونوں حیثیتوں سے دہلی میں میرؔ کی زندگی ناآسودہ تھی۔ لکھنو میں سوداؔ کے انتقال کے بعد جب آصف الدولہ نے اپنے ماموں سالار جنگ کی معرفت میرؔ کو زاد راہ بھیج کر بلایا تو میرؔ نے اس موقع کو غنیمت سمجھا اور ۱۱۹۶ھ میں براہ فرخ آباد لکھنو پہنچے۔ آصف الدولہ کے دامن دولت سے وابستہ ہوئے اور تین سو روپیہ ماہانہ تنخواہ مقرر ہوئی۔ شکار میں بھی آصف الدولہ کے ہم رکاب تھے اور دو شکار نامے لکھے۔ آصف الدولہ سے میرؔ کے معاملات کے بارے میں مختلف روایتیں ملتی ہیں۔ ناصرؔ لکھنوی کے بیانات سے ظاہر ہوتا ہے کہ میرؔ کی بددماغی اور

मामा सालारजंग के द्वारा यात्रा-व्यय भेज कर बुलवाया तो "मीर" ने इस अवसर को दुर्लभ समझा और सन् ११९६ हिजरी में फ़र्रुखाबाद से होते हुए लखनऊ पहुँचे और आसिफ़ुद्दौला से राज्याश्रय प्राप्त किया। तीन सौ रुपया मासिक वेतन निश्चित हुआ। शिकार में भी आसिफ़ुद्दौला के साथ थे और दो शिकारनामे[1] कहे। आसिफ़ुद्दौला से "मीर" के सम्बन्धों के विषय में विभिन्न विवरण मिलते हैं। "नासिर" लखनवी के दिये हुए विवरणों से ज्ञात होता है कि "मीर" की उद्दण्डता और आवश्यकता से अधिक भावुकता के कारण कुछ अप्रीतिकर स्थिति उत्पन्न हो गई थी। आसिफ़ुद्दौला ने उनका आश्रय अन्त तक बनाये रक्खा और उनकी इन बातों के उपरान्त भी अपने व्यवहार में कोई अन्तर न आने दिया। "नासिर" लखनवी का कथन है कि "मीर" ने लखनऊ पहुँचकर बुढ़ापे में दूसरा विवाह किया। क़ाज़ी अब्दुल वदूद के अनुसार यह यूँ भी संभव है कि "मीर" के दोनों बेटों फ़ैज़अली और हसन अस्करी (मीर कल्लू "अर्श") की अवस्थाओं में बड़ा अन्तर था और दोनों का एक ही माँ से जन्म लेना कुछ तर्कसम्मत नहीं।

"मीर" का लखनऊकालीन प्रवास यद्यपि आर्थिक दृष्टि से सन्तोषजनक दिखाई देता है लेकिन वह लखनऊ के साहित्यिक वातावरण से सन्तुष्ट न रह सके। जगह-जगह उनके कुल्लियात में काव्यशैली और रहन-सहन के प्रति असन्तोष की झलकियाँ मिलती हैं। एक जगह लिखते हैं:

जवाहर तो क्या-क्या दिखाया गया ख़रीदार लेकिन न पाया गया
मताए-हुनर[2] फेर कर ले चलो[3] बहुत लखनऊ में रहे, घर चलो

"मीर" लगभग २९ वर्ष लखनऊ में रहे और यह अवधि किसी बड़ी कठिनाई अथवा सन्ताप के बिना ही बीती। हाँ, उनके देहान्त के कुछ पहले उनके परिवार में निरन्तर तीन मौतें हुईं। पहले उनकी लड़की ने प्राण त्यागे, फिर उनके लड़के ने और उसके कुछ ही दिनों बाद "मीर" की जीवन संगिनी ने भी साथ छोड़ दिया। इन हृदयविदारक सदमों ने उनकी कमर तोड़ दी और अन्ततः नब्बे (९८) वर्ष की अवस्था में सन् १२२५ हिजरी (१८१० ई०) में लखनऊ के सुतहट्टी मुहल्ले में उनका देहान्त हुआ और वहीं अखाड़ा भीम के क़ब्रिस्तान में दफ़न हुए।

१. एक प्रकार की मसनवी जिसमें केवल शिकार और तत्सम्बन्धी घटनाओं का विवरण होता है।
२. कला रूपी बहुमूल्य धन। ३. फेर ले चलना (सौदा लौटा ले चलना)।

ضرورت سے زیادہ حساس ہونے کی وجہ سے ناخوشگواری پیدا ہوگئی تھی۔ آصف الدولہ نے ان کی سرپرستی آخر تک جاری رکھی اور ان کی نازک دماغی کے باوجود اپنے طرز عمل میں فرق نہ آنے دیا۔ ناصر لکھنوی کا بیان ہے کہ میرؔ نے لکھنؤ پہنچ کر پیرانہ سالی میں دوسری شادی کی قاضی عبدالودود کے نزدیک یہ اس لیے بھی قرین قیاس ہے کہ میرؔ کے دونوں بیٹوں فیض علی اور حسن عسکری (میر کلو عرش) کی عمروں میں بڑا تفاوت تھا اور دونوں کا ایک ماں کے بطن سے ہونا قرین قیاس نہیں۔

لکھنؤ میں میرؔ کا قیام گو مالی اعتبار سے آسودگی بخش معلوم ہوتا ہے لیکن وہ لکھنؤ کی ادبی فضا سے مطمئن نہ رہ سکے جگہ جگہ ان کی کلیات میں لکھنؤ کے رنگ سخن اور طرز معاشرت سے بے اطمینانی کی جھلکیاں پائی جاتی ہیں۔ ایک جگہ لکھتے ہیں :

جواہر تو کیا کیا دکھایا گئے ٭ خریدار لیکن نہ پایا گئے
متاعِ ہنر پھیر کر لے چلو ٭ بہت لکھنؤ میں رہے گھر چلو

میرؔ کم و بیش ۲۹ سال لکھنؤ میں رہے اور یہ مدت کسی بڑی پریشانی یا کلفت کے بغیر گزری۔ البتہ ان کے انتقال سے کچھ پہلے ان کے خاندان میں پے درپے تین موتیں ہوئیں پہلے ان کی لڑکی کا انتقال ہوا پھر لڑکے کا اور اس کے کچھ دنوں بعد میرؔ کی رفیقۂ حیات کا۔ ان صدمات نے ان کی کمر توڑ دی اور آخرکار نوے سال کی عمر میں ۱۲۲۵ھ (۱۸۱۰ء) میں لکھنؤ کے محلہ ست ہٹی میں ان کا انتقال ہوا اور وہیں اکھاڑہ بھیم کے قبرستان میں دفن ہوئے۔

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में "मीर" का अध्ययन

हसन वासिफ़ उस्मानी

उर्दू कविता स्वयं महान हो अथवा नहीं—"मीर" की कविता बहुत महान् है—क्योंकि; उसकी नींव बहुत पक्की है। 'मीर' की शायरी-एक व्यक्ति की मानसिक एवं शारीरिक वञ्चनाओं की कथा है; और इसमें यवन त्रासदियों का रस है। यदि इस धराधाम पर मानव जाति का अस्तित्व है—तो; अपने लक्ष्य तक पहुँच न पाने की, वञ्चित रह जाने की प्रतीति इसे सदैव-सदैव सताएगी और यह अपना प्रतिबिम्ब समझकर त्रासदी को "महान साहित्य" कहता रहेगा।

किन्तु एक कलाकार के लिए यह थोड़ा कठिन होता है कि वह अपनी त्रासदी का अभिज्ञान प्राप्त कर ले—और; अपनी असमर्थता, अपने लक्ष्य तक पहुँच न पाने के दर्द की दवा सोचे। वह व्यथा के अपार तटहीन सागर की निर्मम तरंगों की दया पर निर्भर है। यह तरंगें कभी उसे आमोद की क्षणिक ऊँचाइयों पर उठा ले जाती हैं और कभी अचानक ऊपर से नीचे फेंक देती हैं। कलाकार ऐसी भावात्मक संक्रान्तियां आजीवन झेलता रहता है। यही संक्रान्तियां उसकी कला की रँगा-रंगी, वैविध्य, सार्वभौमिकता और सबके लिए सलीब उठाने की क्रिया के रूप में दिखाई ही दे जाती हैं। इस प्रकार की निस्सीम व्यथा का प्रारम्भ व्यक्ति की समस्याओं से होता है, जैसे—प्रेम में असफलता से। किन्तु व्यथा सागर के तट नहीं होते। सबसे बड़ी बात यह है कि यह काल का जादू तोड़ देता है, दिक्काल को प्रभावहीन बनाकर कलाकार को अपने युग, अपनी परिस्थितियों, अपने जीवन से दूर ले जाता है और कलाकार की कला को सार्वभौमिकता प्रदान करता और चिरत्व देता है।

सम्भवतः यह सारी बातें मीर को ज्ञात नहीं थीं। वह सिग्मण्ड-फ्रायड से बहुत पहले मृत्यु शैया पर सो चुके थे किन्तु अचेतन रूप से वह जानते थे कि उनकी कला दुःख, दर्द का फल है। नश्वर काव्य नहीं:—

میرؔ اپنے تاریخی پس منظر میں

حسن واصف عثمانی

خود اردو شاعری بڑی ہو یا نہ ہو، میرؔ کی شاعری بہت بڑی ہے کیونکہ اس کی بنیاد بڑی مضبوط ہے۔ یہ ایک فرد کی جسمانی اور ذہنی نامرادیوں کی کہانی ہے اور اس میں یونانی ٹریجڈی کا لطف ہے۔ جب تک آدمی اس زمین پر سلامت ہے اس کو نارسائی اور محرومی کا احساس ہمیشہ ستائے گا اور وہ ٹریجڈی کو اپنی ذات کا آئینہ سمجھ کر اسے عظیم ادب کہتا رہے گا۔

لیکن ایک فن کار کے لیے یہ ذرا مشکل ہوتا ہے کہ وہ اپنی ٹریجڈی کا احساس کر لے اور نارسائی کے درد کی دوا سوچے وہ اپنے درد کے بے کراں سمندر میں بے رحم موجوں کے رحم و کرم پر ہوتا ہے یہ موجیں کبھی اس کو نشاط و طرب کی وقتی بلندیوں پر اٹھا لے جاتی ہیں اور کبھی اچانک اوپر سے نیچے پھینک دیتی ہیں۔ فن کار ان تیز جذباتی تبدیلیوں سے زندگی بھر، ہر ہر لمحہ گزرتا رہتا ہے۔ یہی تبدیلیاں اس کے فن کی رنگا رنگی، آفاقیت اور سب کے لیے صلیب اٹھانے کا عمل بن جاتی ہیں۔ ایسے بے کراں درد کا آغاز فرد کے سائل سے ہوتا ہے، مثلاً۔ عشق میں ناکامی سے، لیکن درد کے سمندر کے کنارے نہیں ہوتے۔ سب سے بڑی بات یہ ہے کہ یہ وقت کے سحر کو توڑ دیتا ہے۔ زمان و مکان کو نابود کر کے فن کار کو اپنے زمانے، اپنے حالات، اپنی زندگی سے بہت دور لے جاتا ہے اور فن کار کے فن کو آفاقیت دیتا اور دوام بخشتا ہے۔

میرؔ کو یہ ساری باتیں شاید معلوم نہیں تھیں۔ وہ سگمنڈ فرائڈ سے بہت پہلے مر چکے تھے مگر غیر شعوری طور پر وہ جانتے تھے کہ ان کا فن دکھ اور درد کا پھل ہے، فانی شاعری نہیں ؎

مجھ کو شاعر نہ کہو میرؔ کہ صاحب میں نے
درد و غم کتنے کیے جمع تو دیوان کیا

मुझको शायर न कहो 'मीर' की साहब मैंने, दर्दो-ो-ग़म कितने किये जम्अतो दीवान किया

उनके जीवन की प्रथम दुर्घटना "परी सदृश कोमलांगी प्रेमिका से प्रेम" जो संभवतः उनकी सम्बन्धी[1] थी। यह प्रेम असफल था और असफलता भी ऐसी कि मीर पागल हो गये। उन्हें प्यारी-प्यारी सूरत चांद में दिखाई देती थी और फिर वह चाँद से उतरकर उनके पास आ जाती थी।

यह प्रथमानुभव १७, १८ वर्ष की आयु में वज्रपात कर गया क्योंकि यह वज्रपात केवल मीर की कोमल भावनाओं पर ही नहीं था बल्कि उनकी मानसिक प्रक्रिया में बुद्धि और चेतना एवं ज्ञान का सारा संतुलन बिगाड़ करके रख दिया। बादमें इसका उल्लेख मीर ने स्वयं किया—

तवहहुम[2] का बैठा जो नक़्शेदुरुस्त—लगी होने वस्वास[3] से जान गुस्त
नज़र आई इक शक्ल महताब[4] में—कमी आई जिससे ख़ुर-ो-ख़्वाब[5] मे
अगर होश में हूं व गर बेख़बर—वो सूरत रहे मेरे पेश-ए-नज़र[6]
उसे देखूँ जो धर करूं मैं निगह —वही एक सूरत हज़ारों जगह
निगह[7] गर्दिशे-चश्म[8] से फ़ित्ना-साज़[9] मिज़ह[10] आफ़ते-रोज़गारे-दराज़[11]
अजब रंग पर सतह[12] रुख़सार[13] का मगर था वो आईना गुलज़ार[14] का
गुले ताज़ा, शर्मिन्दा, उस रू[15] से हो ख़जिल[16] मुश्क-नाब[17] उसके-गेसू[18] से हो
सरापा[19] प जिस जा नज़र कीजिए वहीं उम्र अपनी बसर कीजिए
कभू सूरते-दिलकश[20], अपनी दिखाये कभू अपने बालों में मुंह को छुपाये
गले में मेरे हाथ डाले कभू तरह दुश्मनों की निकाले कभू
कभू चीं-ब-अबरु[21] कभू हंस के बात कभू बेवफ़ाई कभू इल्तफ़ात

यह "चाँद की सूरत" लाख भ्रम और भ्रान्ति-मात्र हो किन्तु इसका प्रभाव "मीर" के लिए दुख-दर्द का खरा अनुभव था। इस मनोदशा में उनके मुंह से फेन निकलने लगता था, दाँत पर दाँत बैठ जाते थे, प्रमाद एवं उन्माद का प्राबल्य था। शरीर सूखकर काँटा हो गया था। "मीर" साहब ने यह सब झेल तो लिया किन्तु इसके प्रभाव उन पर आजीवन छाये रहे:—

तेरी चाल टेढ़ी तेरी बात रूखी तुझे "मीर" समझा है, यां कम किसू ने

१. मीर के समाज मे निकट सम्बन्धों मे विवाह वर्जित नहीं। २. भ्रम का पक्का प्रभाव। ३. कुशंकाओं। ४. चन्द्रमा। ५. खाना सोना। ६. दृष्टि के सम्मुख। ७. दृष्टि। ८. लोचन, नेत्र। ९. बाघ, बनाव। १०. पलक। ११. ज़माने की लम्बी मुसीबत। १२. ऊपरी भाग। १३. कपोल। १४. उपवन, वाटिका। १५. चेहरा। १६. शर्मिन्दा। १७. मुश्क की सुगंध। १८. केश। १९. सम्पूर्ण शरीर। २०. आकर्षक। २१. मौं।

ان کی زندگی کا پہلا حادثہ "عشق بہ معشوقِ پری تمثال" تھا جو غالباً ان کی عزیز بھی تھیں۔ یہ محبت ناکام رہی اور ناکامی بھی ایسی کہ میرؔ پاگل ہو گئے۔ ان کو یہ پیاری پیاری صورت چاند میں نظر آتی تھی اور پھر وہ چاند سے اتر کر ان کے پاس آ جاتی تھی۔

یہ پہلا تجربہ سترہ اٹھارہ برس کی عمر میں میرؔ پر بڑے ستم توڑ گیا کیونکہ یہ صرف قلب و جگر ہی کا صدمہ نہیں تھا بلکہ اس نے دماغ میں لہر نہ فراست کا سارا توازن بگاڑ کے رکھ دیا تھا۔ بعد میں میرؔ نے اس کا ذکر خود کیا ہے

توہم کا بیٹھا جو نقشِ درست   لگی ہونے وسواس سے جان سست
نظر آئی اک شکل مہتاب میں   کمی آئی جس سے خور و خواب میں
اگر ہوش میں ہوں وگر بے خبر   وہ صورت رہے میرے پیشِ نظر
اسے دیکھوں جیدھر کروں میں نگہ   وہی ایک صورت ہزاروں جگہ
نگہ گردشِ چشم سے فتنہ ساز   مژہ آفتِ روزگار و دراز
عجب رنگ پر سطحِ رخسار کا   مگر تھا وہ آئینہ گلزار کا
گلِ تازہ شرمندہ اس رو سے ہو   خجل مشکِ ناب اس کے گیسو سے ہو
سراپا پہ جس جا نظر کیجیے   وہیں عمر اپنی بسر کیجیے
کبھو صورتِ دلکش اپنی دکھائے   کبھو اپنے بالوں میں منھ کو چھپائے
گلے میں مرے ہاتھ ڈالے کبھو   طرح دشمنوں کی نکالے کبھو
کبھو چیں بہ ابرو کبھی ہنس کے بات   کبھو بے وفائی کبھو التفات

یہ چاند کی صورت لاکھ وہم و خیال کا کرشمہ ہو اس کا اثر میرؔ کے لیے دکھ اور درد کا کھرا تجربہ تھا۔ اس عالم میں ان کے منھ سے پھین نکلنے لگتا تھا۔ دانت پر دانت بیٹھ جاتے تھے۔ وحشت اور دیوانگی کا زور تھا۔ بدن سوکھ کر کانٹا ہو گیا تھا۔ میرؔ صاحب نے یہ مرحلہ جھیل تو لیا مگر اس کے اثرات زندگی بھر ان پر طاری رہے۔

تری چال ٹیڑھی تری بات رکھی
تجھے میرؔ سمجھا ہے یاں کم کسو نے

यहाँ से "मीर" के पहुँच न पाने और कटुता ने विद्रोह का रूप धारण किया। जिस परिवार ने "परी सदृश्य कोमलाङ्गना" से उनके मिलन की राह रोकी थी "मीर" उसकी अवस्थाओं, मान्यताओं, विश्वास, कर्म पर संदेह करने लगे। शीघ्र ही यह संदेह निश्चयात्मक घृणा में परिणत हो गया किन्तु उन्होंने अतीत की समस्त पूंजी को ठुकराने में सफलता प्राप्त नहीं की। उन्हें अपने बाप की तरह तसव्वुफ़ से लगाव रहा क्योंकि उन दिनों की परम्परायें, ख़ानक़ाहें और दरवेश समाज से विद्रोह करने वालों का सबसे बड़ा सहारा थे। यह आदमी का स्वागत इस प्रकार करते थे जैसे उसकी व्यक्तिगत समस्यायें ही जगत का सबसे बड़ा सत्य हों। एक कलाकार के लिए यह रवैया बड़ा ही प्रिय होता है।

"मीर" साहब का सूफ़ी हो जाना उनकी सामाजिक एवं राजनैतिक पृष्ठ भूमि को जानदार बनाने वाली वस्तु है और इसी बात से यह पता चलता है कि जब मुग़लसल्तनत अपनी अन्तिम साँसे ले रही थी तो आर्थिक दुरव्यवस्था, अनिश्चिय, गृह-युद्ध और घोरतम घृणा की आँधियों में एक व्यक्ति के लिए जीवित रहना बहुत कठिन था और यदि वह जीवित भी रहना चाहता था तो उसे बहुत सारी परम्पराओं का उत्सर्ग करना पड़ता था। "मीर" जिस वर्ग से सम्बन्ध रखते थे वह मुग़ल सल्तनत के प्रशासन-तन्त्र, अमीरों, सूबेदारों और दरबारों से क़लम या तलवार के द्वारा सम्बद्ध था। इस वर्ग की महत्वाकांक्षायें बहुत बड़ी-बड़ी नहीं थी। यह वर्ग दरबार के षड़यंत्रों और अधिकार हथियाने के संघर्षों का मूक दर्शक था। इसकी कामना मात्र इतनी थी कि जीवन में इतनी शान्ति रहे जो जीवित रहने के लिए आवश्यक है। तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था में इस वर्ग को बड़ा महत्व प्राप्त था क्योंकि मध्य युग से अन्तिम मुग़ल काल तक उन दिनों की जानी बूझी दुनिया की समस्त संस्कृतियों के धारों से यह वर्ग सिंचित होता था। इस वर्ग की शैक्षिक भाषा अरबी थी जिसमें यूनान का दर्शन और उस पर अरब आलोचना और विकसित-चिन्तन की आत्मा विद्यमान थी। फ़ारसी इसकी कार्यपालिकाओं की व्यापारिक एवं राजनैतिक भाषा थी जिसमे अत्यन्त श्रेष्ठ काव्य की समस्त परम्पराओं का क्रम सक्रिय था। उन दोनों के अतिरिक्त यह मध्यम वर्ग भारतीय भाषाओं में से एक-आध भाषाओं के साहित्य से अवश्य परिचित होता था क्योंकि यही वह लोग थे जिन्होंने "पद्मावत" वाले मलिक मुहम्मद जायसी को जन्म दिया था। अवधी ब्रज-भाषा और खड़ी बोली से इस पुराने मध्यम वर्ग का निकट सम्पर्क था।

इस मध्य-वर्ग को सबसे बड़ा आघात और धक्का सन् १७३९ ई० में लगा जब

یہاں سے میرؔ کی نارسائی اور تلخی نے انحراف اور بغاوت کا روپ دھارا۔ جس خاندان نے "معشوق پری تمثال" سے ان کے وصل کی راہ روکی تھی میرؔ اس کے عقیدے، عمل اور محبت پر شبہ کرنے لگے۔ جلد ہی شبہ یقینی نفرت میں بدل گیا۔ مگر انھوں نے ماضی کے سارے سرمائے کو ٹھکرانے میں کامیابی حاصل نہیں کی۔ اپنے باپ کی طرح ان کو تصوف سے لگاؤ رہا۔ کیونکہ ان دنوں تصوف کے سلسلے، خانقاہیں اور درویش سماج سے بغاوت کرنے والوں کا سب سے بڑا سہارا تھے۔ یہ آدمی کو اس طرح خوش آمدید کہتے تھے جیسے اس کے انفرادی مسائل ہی کائنات کی سب سے بڑی حقیقت ہوں۔ ایک فن کار کے لیے یہ رویہ بڑا خوش آئند ہوتا ہے۔

میرؔ صاحب کا صوفی ہوجانا ان کے سماجی اور سیاسی پس منظر کو جاندار بنانے والی چیز ہے اور اسی بات سے یہ پتہ چلتا ہے کہ جب مغل سلطنت اپنے آخری سانس لے رہی تھی تو معاشی بدحالی، بے یقینی، خانہ جنگی اور شدید ترین نفرت کے طوفانوں میں ایک فرد کے لیے زندہ رہنا ہی بہت دشوار تھا اور اگر وہ زندہ بھی رہنا چاہتا تھا تو اس کو بہت ساری روایات کی قربانی دینا پڑتی تھی۔ میرؔ جس طبقے سے تعلق رکھتے تھے وہ مغل سلطنت کی انتظامیہ مشین، امیروں، صوبہ داروں اور درباروں سے قلم یا تلوار کے ذریعے وابستہ تھے۔ اس طبقے کے حوصلے بہت بڑے بڑے نہیں تھے یہ دربار کی سازشوں اور بالادستی کی کوششوں کا خاموش تماشائی تھا۔ اس کو صرف اتنی خواہش تھی کہ زندگی میں اتنا سکون رہے جو زندہ رہنے کے لیے ضروری ہے۔ قدیم سماجی نظام میں اس طبقے کو بڑی اہمیت حاصل تھی کیونکہ قرونِ وسطیٰ سے آخری مغل دور تک ان دنوں کی جانی بوجھی دنیا کی تمام تہذیبوں کے دھارے سے یہ طبقہ سیراب ہوتا تھا۔ اس طبقے کی علمی زبان عربی تھی جس میں یونان کا فلسفہ اور اس پر عرب تنقید اور اضافے کی روح موجود تھی۔ فارسی اس کی دفتری، کاروباری اور سیاسی زبان تھی جس میں اعلیٰ ترین شاعری کی تمام روایات کا سلسلہ جاری تھا۔ ان دونوں کے علاوہ یہ متوسط طبقہ ہندوستان کی ایک آدھ زبان کی ادبیات سے ضرور واقف ہوتا تھا۔ کیوں کہ یہی وہ لوگ تھے جنھوں نے "پدماوت" کے ملک محمد جائسی کو جنم دیا تھا اَودھی، برج بھاشا اور کھڑی بولی سے اس پرانے متوسط طبقے کا نزدیکی تعلق تھا۔

اس متوسط طبقے کو سب سے سخت صدمہ اور دھکا ۱۷۳۹ء میں پہنچا جب نادر شاہ نے حملہ کرکے محمد شاہ رنگیلے کی سلطنت کو بے دم کردیا اور دہلی میں قتل عام کیا۔ نادر شاہ نے

नादिरशाह ने आक्रमण करके मुहम्मद शाह रंगीले के राज्य को बेदम कर दिया और दिल्ली में क़त्ले-आम (सार्वजनिक नर-मेध) किया। नादिरशाह ने मुग़ल सल्तनत के ताबूत मे आख़िरी कीलें ठोकने के साथ-साथ उन लोगों को नाश की ओर ढकेल दिया जो मुग़लों की छत्र-छाया मे जीवन के मध्यम-स्तर पर जीवन यापन कर रहे थे। भारतीय गुट के साथ समाज के प्रबुद्ध वर्ग में विशृङ्खलता आ गई। तलवारें टूट गईं तो क़लम भी बेकार हो गये।

"मीर" की अवस्था नादिरशाही आक्रमण के समय नवजवानी की थी। दिल्ली पर दूसरा आक्रमण सन् १७६० ई० में अब्दाली ने किया तो वह अच्छी, परिपक्व अवस्था के व्यक्ति थे। इसके बाद उन्होंने पानीपत की लड़ाई देखी और अन्ततः भाग्य-चक्र उन्हें साठ वर्ष की अवस्था में लखनऊ ले आया जहां आकर वह संतुष्ट नहीं रहे। दिल्ली उन्हें सदैव याद आती थी:—

ऐ सबा[१], गर शहर के लोगों में हो तेरा गुज़र
कहियो हम सहरा नवर्दों[२] का तमामी[३] हाले-ज़ार[४]
ख़ाके-दिल्ली से किया हमको जुदा[५] यकबारगी
आसमां को थी कदूरत[६] सो निकाला यूं ग़ुबार[७]

ख़राबा दिल्ली का वहचन्द[८] बेहतर लखनऊ से था
वहीं मैं काश मर-जाता सरासीमा[९] न आता यां

बरसों से लखनऊ में अक़ामत[१०] है मुझको लेक
यां के चलनसे रखता हूं, अज़्मे-सफ़र[११] हनोज़

जवाहर तो क्या क्या दिखाया गया ख़रीदार लेकिन न पाया गया
मता-ए-हुनर[१२] फेर कर ले चलो बहुत लखनऊ में रहे घर चलो

रही न गुफ्ता[१३] मेरे दिल में दास्तां[१४] मेरी, न इस दयार[१५] में समझा कोई ज़बां[१६] मेरी

लखनऊ में तीस वर्ष तक आर्थिक दृष्टि से सन्तोष का जीवन व्यतीत करने के बावजूद लखनऊ से उनकी उलझन और घृणा अकारण नहीं थी। यह नगर "मीर" साहब के वर्ग और परम्पराओं से भिन्न था। वह उस दिल्ली के थे जो मिट चुकी

१. समीर, पवन। २. घूमनेवालों। ३. परिणाम। ४. ख़राब हाल। ५. अलग। ६. दुश्मनी। ७. मैल, गर्द। ८. दस गुना। ९. हैरान। १०. स्थिर होना। ११. यात्रा का इरादा। १२. कला। १३. छिपी। १४. हाल। १५. चमन। १६. आवाज़।

مغل سلطنت کے تابوت میں آخری کیلیں ٹھونکنے کے ساتھ ساتھ ان لوگوں کو موت کی سمت ڈھکیل دیا جو مغلوں کے زیر سایہ زندگی کی درمیانی سطح پر جی رہے تھے ۔ ہندوستانی گروہ کے ساتھ سماج کے دانش ور طبقے کا شیرازہ بکھر گیا اور تلواریں ٹوٹ گئیں تو قلم بھی بیکار ہو گئے ۔

میرؔ کی عمر نادر شاہی حملے کے وقت نوجوانی کی تھی ۔ دہلی پر دوسرا حملہ سنہ ۱۷۶۰ء میں ابدالی نے کیا تو وہ اچھے خاصے پختہ عمر کے آدمی تھے ۔ اس کے بعد انھوں نے پانی پت کی تیسری جنگ دیکھی اور آخر کار روزگار کی گردش ان کو ساٹھ سال کی عمر میں لکھنؤ لے آئی جہاں آکر وہ خوش نہیں رہے ۔ دہلی ان کو برابر یاد آتی تھی ؎

اے صبا گر شہر کے لوگوں میں ہو تیرا گزر
کہیو ہم صحرا نوردوں کا تمامی حال زار
خاک دہلی سے جدا ہم کو کیا یک بارگی
آسماں کو تھی کدورت سو نکالا یوں غبار

خرابہ دلی کا وہ چند بہتر لکھنؤ سے تھا
وہیں میں کاش مر جاتا سراسیمہ نہ آتا یاں

برسوں سے لکھنؤ میں اقامت ہے مجھ کو لیک
یاں کے چلن سے رکھتا ہوں عزم سفر ہنوز

جواہر تو کیا کیا دکھایا گیا   خریدار لیکن نہ پایا گیا
متاع ہنر پھیر کر لے چلو   بہت لکھنؤ میں رہے گھر چلو

رہی نہ گفتہ مرے دل میں داستاں میری ؛؛ نہ اس دیار میں سمجھا کوئی زباں میری

لکھنؤ میں تیس سال تک معاشی اطمینان کی زندگی بسر کرنے کے باوجود لکھنؤ سے ان کی الجھن

थी और वहाँ के उस वर्ग से थे जिसे मिटाने वाले लखनऊ और हैदराबाद के उत्थान के कारण बने। लखनऊ ईरानी गुट का केन्द्र था और हैदराबाद तूरानी गुट का। "मीर" साहब की स्वाभाविक प्रवृत्ति इन दोनों से भिन्न थी। वह उस भारतीय गुट के आदमी थे जिसका अन्त पानीपत की लड़ाई में हो गया था।

मुग़लों की राजनीति ने बहुत प्रारम्भिक अवस्था से ही भारतीय गुट को प्रभावहीन बनाने का प्रयत्न किया था। वह जानते थे कि बाबर को ज़हर देने वाले और हुमाऊँ को देश निकाला देने वाले तत्त्व कौन हैं। इसीलिए जब अकबर ने शासन-सूत्र संभाला तो सर्वप्रथम अवसर प्राप्त होते ही उसने भारतीय गुट के धार्मिक नेता सदरुस्सुदूर शेख़ अब्दुन्नबी आदि का अन्त किया।. प्रगतिशीलता तो मात्र बहाना थी, मूल उद्देश्य नवागत ईरानी और तूरानी अमीरों और उनके सदल-बल समर्थकों को आगे बढ़ाकर देश पर लादना था।

इस राजनीति का प्रभाव "मीर" के जीवन पर छाया हुआ था। क्योंकि यही युग उस दल और भारतीय मध्य वर्ग के अन्त का वास्तविक और अन्तिम युग था। कभी इस गुट का नेतृत्व सादाते-बारहा, राजपूतों और भारतीय शेख़ज़ादों के हाथ में था और सन् १७०७ ई० में औरंगज़ेब की मृत्यु से लेकर "मीर" के युग तक यह भारतीय गुट देश की राजनीति और प्रशासन को स्थायित्व एवं दृढ़ता प्रदान करने का प्रयत्न करता रहा। जब तक यह गुट सत्ता धारण किये रहा उत्तरी भारत के असंख्य क़स्बों और गांवों में फैले हुये सूफ़ी, दरवेश, जमीदार और भारतीय उलमा[१] भारतीय सिपाही पेशा लोगों के साथ कार्यशील रहे। औरंगजेब की मृत्यु के उपरान्त भारतीय गुट निरन्तर दुर्बल होता गया और देश में ईरानी और तूरानी गुटों का प्रभाव बढ़ता गया। यह वह लोग थे जिन्हें न मुग़लशासन से लगाव था न भारत से। नवागत विदेशियों के यह दोनों वर्ग मात्र सत्ता, सम्पदा और अधिक से अधिक लाभ उठाने में लगे रहते थे। इन्हें इसको कोई परवाह नहीं थी कि दिल्ली का क्या हाल है और देश की जनता की क्या हालत है। क्योंकि, ईरानी और तूरानी दोनों भारतीय जनता मे अपने को भिन्न, ऊँचा और श्रेष्ठ समझते थे। उनकी बौद्धिक और भावात्मक श्रद्धाभक्ति के सारे केन्द्र भारत से बाहर थे। इस देश में वह व्यवसायिक (पेशेवर) सिपाहियों के रूप में आते थे। ईरान और तूरान के मूल क्षेत्रों में आर्थिक विपन्नता जैसी स्थिति थी। वह बड़े, विश्वव्यापी व्यवसाय के

१. पंडित; शब्दार्थ विद्वान, सामान्य प्रयोग मे धर्म तत्वों का ज्ञाता।

اور نفرت بے سبب نہیں تھی ۔ یہ شہر میر صاحب کے طبقہ اور روایات سے الگ تھا ۔ وہ اس دہلی کے تھے جو سٹ چکی تھی اور وہاں کے اس طبقہ سے تھے جس کو مٹانے والے لکھنؤ اور حیدرآباد کے عروج کا سبب بنے ۔ لکھنؤ ایرانی گروہ کا ایک ذیلی مرکز تھا اور حیدرآباد تورانی گروہ کا ۔ میر صاحب کی طبعی افتاد دونوں سے دور تھی ۔ وہ اس ہندوستانی گروہ کے آدمی تھے جس کا خاتمہ پانی پت کی چوتھی لڑائی میں ہو گیا تھا ۔

مغلوں کی سیاست نے بہت ابتدا سے ہندوستانی گروہ کو بے اثر بنانے کی کوشش کی تھی ۔ وہ جانتے تھے کہ بابر کو زہر دینے والے اور ہمایوں کو دیس نکالا دینے والے عناصر کون ہیں ۔ چنانچہ جب اکبر نے تخت سنبھالا تو سب سے پہلے موقعہ پر اس نے ہندوستانی گروہ کے مذہبی سربراہ صدر الصدور شیخ عبدالنبی وغیرہ کا خاتمہ بالخیر کیا ۔ روشن خیالی تو ایک آڑ تھی اصل مقصد نووارد ایرانی اور تورانی امیروں اور ان کے گروہ در گروہ حامیوں کو آگے بڑھا کر ملک پر مسلط کرنا تھا ۔

اس سیاست کے اثرات میر کی زندگی پر چھائے ہوئے تھے کیونکہ یہی زمانہ اس گروہ اور ہندوستان کے متوسط طبقے کی موت کا حقیقی اور آخری عہد تھا ۔ کبھی اس گروہ کی قیادت سادات بارہہ، راجپوتوں اور ہندوستانی شیخ زادوں کے ہاتھ تھی اور ۱۷۰۷ء میں اورنگ زیب کی موت سے لے کر میر کے زمانے تک یہ ہندوستانی گروہ ملک کی سیاست اور سلطنت کو استحکام دینے کی کوشش کرتا رہا ۔ جب تک یہ گروہ برسر اقتدار رہا شمالی ہندوستان کے بے شمار قصبات اور گاؤں میں پھیلے ہوئے صوفی، درویش، زمیندار اور ہندوستانی علما ہندوستانی پیشہ ور سپاہیوں کے ساتھ برسر کار رہے ۔ اورنگ زیب کی موت کے بعد ہندوستانی گروہ مسلسل کمزور ہوتا گیا اور ملک میں ایرانی اور تورانی گروہوں کا اقتدار بڑھتا گیا ۔ یہ وہ لوگ تھے جن کو نہ مغل سلطنت سے کوئی لگاؤ تھا نہ ہندوستان سے ۔ نووارد غیر ملکیوں کے یہ دونوں طبقے صرف اقتدار، دولت اور زیادہ سے زیادہ فائدہ حاصل کرنے میں لگے رہتے تھے ۔ ان کو اس چیز کی کوئی پروا نہیں تھی کہ دہلی کا کیا حال ہے اور ملک میں عوام کی کیا حالت ہے ؟ کیونکہ ایرانی اور تورانی دونوں ہندوستان کے عوام سے خود کو الگ، بلند اور برتر خیال کرتے تھے ان کی ذہنی اور جذباتی عقیدت و وابستگی کے سارے مرکز ہندوستان سے باہر تھے ۔ اس ملک میں وہ پیشہ ور سپاہیوں اور اہل کاروں کی حیثیت سے آتے

केन्द्रों से पृथक होकर और पिछड़ गये थे किन्तु ईरानी और तूरानी गुटों के विचार से शस्य श्यामला, उर्वरा, "फुल्ल कुसुमित द्रुम दल शोभणी" भारत भूमि घृणा की, और हीन समझने की वस्तु थी ! यह किसी प्रकार की धार्मिक अथवा सांस्कृतिक साम्प्रदायिकता नहीं थी । इस अलग-अलग रहने और अपने को श्रेष्ठ समझने की भावनाओं की जड़ें देश के राजनैतिक ढांचे मे थीं जिसमें नवागन्तुक बुद्धिजीवी और मसिजीवी, कवि और सिपाही राज्य की छत्र-छाया में अधिक उत्कृष्ट स्थान प्राप्त करते थे । राज-भाषा फ़ारसी थी और फ़ारसी की भारतीय शैलियाँ उपेक्षा एवं तिरस्कार की दृष्टि से देखी जाती थीं । "मूल भाषा-भाषियों" ने बौद्धिक संस्कृति की सीमा को अधिक से अधिक सकीर्ण कर रक्खा था । वह काव्य और साहित्य में अपनी विधाओं और शैलियों के अनुसरण—बल्कि अनुकरण पर बल देते थे । भाषा, उपमादि और मुहावरे की सीमा तक सबसे बड़ा कमाल यह था अभारतीय कलाकारों की रचनाओं की निष्प्राण अनुकृति उतारी जाय । नादिरशाह (ईरानी) के आक्रमण के उपरान्त यह साहित्यक प्रवृत्ति और बलवती हो उठी थी । सैनिक एवं राजनैतिक पराजय ने बुद्धि, साहित्य एवं संस्कृति को भी दास बनाकर रख दिया था। यह वह युग था जिसमें भारतीयता की अभिव्यक्ति का एक ही साधन—उर्दू शायरी, हिन्दवी या रेखता था । यह वह दुनिया थी जिस पर परायेपन की छायाएं बहुत हल्की थीं और "मीर" को यह प्रतीत होता था कि इस राज्य में उनका डंका बज रहा है । यहाँ न विदेशी लश्कर है न नवागन्तुक प्रतिद्वन्दी । यह अपनी दुनिया है और "मीर" इस दुनिया के मिट्टी-पानी से जो जी चाहता वह मूरत ढालते हैं:—

रेख़ता रुतबे को पहुंचा या हुआ उसका है मोतक़िद कौन नहीं "मीर" की उस्तादी का
पढ़ते फिरेंगे गलियों में इन रेख़तों को लोग मुद्दत रहेंगी याद ये बातें हमारियां
रेख़ता खूब ही, कहता है जो इन्साफ़ करो चाहिए अहले सुख़न "मीर" को उस्ताद करें
दिल किस तरह न खींचें अशआर रेख़ते के बेहतर किया है मैंने इस ऐब को हुनर से

रेख़ता काहे को था इस रुतब-ए-आला में "मीर"
जो ज़मीं निकली उसे ता आसमां मैं ले गया

फ़िया था रेख़ता पर्दा सुख़न का सो ठहरा है यही अब फ़न हमारा

इस प्रकार "मीर" के लिए रेख़ता एक दोधारी तलवार है जिसका एक पक्ष उनके अन्तःद्वंन्द्वों की सान पर चढ़ाया गया है । वह "सुख़न का पर्दा" है जिसकी ओट से वह अपने "अहम्" की अभिव्यक्ति करते हैं । यह "सुख़न गोई" स्वान्तः सुखाय है । दूसरी ओर तलवार की धार पर कलाकार सुलभ अहंकार ने सान

تھے۔ ایران اور توران کے علاقوں میں معاشی افسردگی تھی۔ وہ بڑی عالمی تجارت کے راستے سے الگ اور پسماندہ ہو چکے تھے۔ مگر ایرانی اور تورانی گروہوں کے نزدیک سرسبز زرخیز اور شاداب ہندوستان نفرت و حقارت کی چیز تھا۔ یہ کوئی مذہبی یا تہذیبی تعصب نہیں تھا۔ اس علیحدگی پسندی اور احساس برتری کی جڑیں ملک کے سیاسی ڈھانچے میں تھیں۔ جس میں نووارد اہل قلم شاعر اور سپاہی سلطنت کے سائے میں بہتر حیثیت حاصل کرتے تھے۔ سرکاری زبان فارسی تھی اور فارسی کے ہندوستانی اسالیب حقارت کی نظر سے دیکھے جاتے تھے۔ "اہل زبان" نے ذہنی تہذیب کے دائرے کو تنگ سے تنگ تر کر رکھا تھا۔ وہ شعر و ادب میں اپنے اسالیب و اصناف کی پیروی بلکہ نقل پر زور دیتے تھے۔ زبان استعارے اور محاورے کی حد تک سب سے بڑا کمال یہ تھا کہ غیر ہندوستانی فن کاروں کے کلام کا بے جان چربہ اتارا جائے۔ نادر شاہ کے حملے کے بعد اس ادبی رجحان نے اور طاقت پکڑلی تھی۔ فوجی اور سیاسی شکست نے ذہن ادب اور تہذیب کو بھی غلام بنا کر رکھ دیا تھا۔ یہ وہ دور تھا جس میں ہندوستانیت کے اظہار کا ایک ہی ذریعہ اردو شاعری ہندوی یا ریختہ تھا۔ یہ وہ دنیا تھی جس پر غیریت کے سائے بہت ہلکے تھے اور میرؔ کو احساس تھا کہ اس سلطنت میں ان کا ڈنکا بج رہا ہے۔ یہاں نہ غیر ملکی لشکر ہیں نہ نووارد حریف۔ یہ اپنی دنیا ہے اور میرؔ اس دنیا کے مٹی پانی سے جو بھی چاہتا ہے وہ مورت ڈھالتے ہیں ؎

ریختہ رتبے کو پہنچایا ہوا اس کا ہے　　معتقد کون نہیں میرؔ کی استادی کا

پڑھتے پھریں گے گلیوں میں ان ریختوں کو لوگ　　مدت رہیں گی یاد یہ باتیں ہماریاں

ریختہ خوب ہی کہتا ہے جو انصاف کرو　　چاہیے اہلِ سخن میرؔ کو استاد کریں

دل کس طرح نہ کھینچیں اشعار ریختے کے　　بہتر کیا ہے میں نے اس عیب کو ہنر سے

ریختہ کاہے کو تھا اس رتبۂ اعلیٰ میں میرؔ
جو زمیں نکلی اسے تا آسماں میں لے گیا

کیا تھا ریختہ پردہ سخن کا　　سو ٹھہرا ہے یہی اب فن ہمارا

اس طرح میرؔ کے نزدیک ریختہ ایک دو دھاری تلوار ہے جس کا ایک رخ ان کی داخلی شورش سے سان پر رکھا گیا ہے وہ سخن کا پردہ ہے جس کی اوٹ سے وہ اپنی انا کا اظہار کرتے ہیں۔ یہ سخن گوئی ذاتی تسکین کا وسیلہ ہے۔ دوسری طرف تلوار کی ایک دھار پر فن کارانہ غرور نے سان چڑھائی

चढ़ाई है। "मीर" रेखता को ऐब से हुनर में बदलने, उसे अमर बनाने और सर्वप्रियता प्रदान करने की चर्चा करते हैं तो यह उनका बढ़ाई हांकना नहीं बल्कि "साहित्य साहित्य के लिए" वाला विशुद्ध दृष्टिकोण है जो "साहित्य जीवन के लिये" के बाज़ारी नारे के पूर्व समस्त महान कलाकारों का दृष्टिकोण था। "मीर" भी अपनी कला पर अभिमान रखते हैं जिसे वह "ज़मीन से आसमान तक" ले गये।

काव्य और कला का यह उपयोग नब्बे वर्ष की उम्र पाने वाले "खुदा-ए-सुख़न" को असामान्य विशिष्टता प्रदान करता है। वह इसीलिए दरबार के कवि न बन सके। और लखनऊ में आकर भी, जो उनके जीवन में अपेक्षाकृत सम्पन्नता और सुख का समय था, वह लखनऊवालों से बहुत दूर रहे। बहुत विख्यात कहानी है कि उनके कोठे की खिड़की किसी अमीर के पाईं बाग़ में खुलती थी किन्तु "मीर" को उसका ज्ञान नहीं था। एक दिन किसी मित्र ने खिड़की खोल दी और उनको भी ध्यान दिलाया तो वह बोले, "बरसों बीत गये लेकिन हमने यह खिड़की खोली ही नहीं थी। क्या पता कि क्या दिखाई देता है?"

यह "मीर" का सच्चा चित्र है। दरीचों से प्रकाश और कदाचित सुगन्ध के झोंके भी आ सकते हैं यह उनको नहीं ज्ञात था। वह दरीचे बन्द ही रखने के अभ्यस्त थे क्योंकि उन्हें न तो प्रकाश की आवश्यकता थी न सुगन्धि की, न पराई हरियाली न आवारा समीर की। "मीर" के लिए वह कोठा ही सब कुछ था जहां वह चाँद की सूरत और अपने ग़म लिए बैठे रहते थे। मन-मस्तिष्क में पुरानी स्मृतियों का जो संघर्ष चल रहा था वह रेख़ते के नश्तर ढाला करता था। काल की निर्ममता से लड़ने के लिए "मीर" के पास मात्र यही अकेला अमोघ अस्त्र था—अर्थात अपने मन की बातों को शायरी का ऐसा रूप देना जिसमें आप बीती के साथ-साथ जग बीती का रस भी हो:—

मिसरा कभी-कभी कोई मौज़ूं करूं हूं मैं   किस ख़ुशसलीक़गी से जिगर खूं करूं हूं मैं

जिगर को खून करने की प्रक्रिया नितान्त निजी है। यह समाज में मार्ग प्रदर्शन का कोई स्थान प्राप्त करने के लिए नहीं है बल्कि स्वयं अपने आपको शक्ति प्रदान करने के लिए है किन्तु इसके उपरान्त भी जब "मीर" अपनी कला की चर्चा करते हैं तो उनका स्वर बदल जाता है वह विश्व-विजय और विश्वात्मा की व्याप्ति की प्रतीति के साथ बोलते हैं:—

सारे आलम पर हूँ मैं छाया हुआ   मुस्तनद है मेरा फ़रमाया हुआ

अहं का यह उद्कोष अपनी कला पर आस्था का फल है और यह सच भी है

تھی۔ میرؔ ریختہ کو عیب سے ہنر میں بدلنے، اس کو لازوال بنانے اور قبولیت عامہ کا رتبہ دینے کا تذکرہ کرتے ہیں تو یہ ان کی تعلّی نہیں بلکہ "ادب برائے ادب" کا نظریہ ہے جو "ادب برائے زندگی" کے بازاری نعرے سے پہلے تمام بڑے فن کاروں کا مطمح نظر تھا۔ میرؔ بھی اپنے فن پر نازاں ہیں جس کو وہ زمین سے آسمان تک لے گئے۔

شعر و شاعری کا یہ استعمال نوّے سال کی عمر پانے والے "خدائے سخن" کو غیر معمولی انفرادیت عطا کرتا ہے۔ وہ اسی لیے دربار کے شاعر نہ بن سکے۔ اور لکھنؤ میں آکر بھی جوان کی زندگی میں خوش حالی اور اطمینان کا زمانہ تھا، لکھنؤ والوں سے دور رہے۔ بہت مشہور قصّہ ہے کہ ان کے بالاخانے کی کھڑکی ایک امیر کے پائیں باغ میں کھلتی تھی مگر میرؔ کو اس کا علم نہیں تھا۔ ایک دن کسی دوست نے کھڑکی کھول دی اور ان کو بھی توجہ دلائی تو وہ بولے "برسوں گزر گئے لیکن ہم نے یہ کھڑکی کھولی ہی نہیں تھی۔ کیا معلوم کہ نظر کیا آتا ہے؟"

یہ میرؔ کی سچی تصویر ہے۔ دریچوں سے روشنی اور شاید خوشبو کے جھونکے بھی آسکتے ہیں یہ ان کو نہیں معلوم تھا۔ وہ دریچے بند رکھنے کے عادی تھے۔ کیونکہ ان کو نہ تو روشنی درکار تھی نہ خوشبو، نہ دوسروں کا سبزہ اور آوارہ بادِ صبا۔ میرؔ کے لیے وہ بالا خانہ ہی سب کچھ تھا جہاں وہ چاند کی صورت اور اپنے غم لیے بیٹھے رہتے تھے۔ دل و دماغ میں پرانی یادوں کا جو تصادم جاری تھا وہ ریختہ کے نشتر ڈھالا کرتا تھا۔ وقت کی بے رحمی سے لڑنے کے لیے میرؔ کے پاس صرف یہی اکیلا کارگر حربہ تھا یعنی اپنے من کی باتوں کی شاعری کا ایسا روپ دینا جس میں آپ بیتی کے ساتھ ساتھ جگ بیتی کا بھی لطف ہو ؎

مصرعہ کبھی کبھی کوئی موزوں کروں ہوں میں کس خوش سلیقگی سے جگر خوں کروں ہوں میں

جگر کو خون کرنے کا یہ عمل قطعی ذاتی ہے۔ یہ سماج میں کسی رہنمائی کی جگہ کے لیے نہیں بلکہ اپنے آپ کو تسکین دینے کی خاطر ہے لیکن اس کے باوجود جب میرؔ اپنے فن کا ذکر کرتے ہیں تو ان کا لب و لہجہ بدل جاتا ہے وہ جہاں گیری اور جہاں بانی کے احساس کے ساتھ بولتے ہیں ؎

سارے عالم پر ہوں میں چھایا ہوا
مستند ہے میرا فرمایا ہوا

انا کا یہ احساس اپنے ذریعہ شاعری پر اعتماد کا نتیجہ ہے اور یہ واقعہ بھی ہے کہ

कि "मीर" ने रेख़ते को आत्माभिव्यक्ति का साधन बनाया तो फिर इस मैदान में उस्तादी का हक़ भी अदा कर दिया। अतीत में जो कुछ काव्य-उपलब्धि थी उसके सामने "मीर" ने अकेले ही एक बड़ा संग्रह तैयार करके छोड़ दिया। उनका यह कुल्लियात उनके जीवन के मध्य-काल में ही ख्याति प्राप्त कर चुका था और उसकी ख्याति विन्ध्याचल के पार दक्षिण की पहाड़ियों तक पहुँच गई थी।

मात्र ख्याति ही नहीं कविता ने उन्हें आजीविका से निश्चिन्त किया था, दरबारों से सम्बन्धित रक्खा था। सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान की थी। नवाब समसामुद्दौला, रिआयत ख़ाँ, महानारायण, राजा युगल किशोर, महाराजा नागर मल, सूरजमल जाट, बहादुर सिंह, वजीहुद्दीन ख़ाँ, हसन रज़ा ख़ाँ और फिर लखनऊ में लखलुट आसिफ़उद्दौला—सबने खरी कला और बाँके तिरछे कलाकार की क़द्र की। यह सफलताएँ ऐसी न थीं कि "मीर" को आनन्द न मिलता और तुष्टि न प्राप्त होती।

हैं मुश्ते-ख़ाक लेकिन, जो कुछ हैं "मीर" हम हैं मक़दूर से ज़्यादा मक़दूर है हमारा

परिस्थितियों की इन जटिलताओं ने काव्य सृजन पर अडिग रक्खा था और यही काव्य सृजन उस बदमिज़ाज एकान्त प्रिय कवि को समाज से सम्बद्ध रक्खे हुई थी। उनके शेर एक व्यक्ति की कहानी थे किन्तु यह कहानी सम्पूर्ण समाज में बिखरी हुई थी। हर जगह क्रियाशील और हर अवसर पर काम देने वाली। "शोल-ए-इश्क़" में अपने प्रेम-दर्शन और अपने काव्यात्मक चिन्तन को वह इस अतिशयोक्ति से वर्णित करते हैं:—

मुहब्बत ने ज़ुलमत[१] से काढ़ा है नूर[२] न होती मुहब्बत न होता ज़हूर[३]
मुहब्बत बिन इस जा न आया कोई मुहब्बत से खाली न पाया कोई
मुहब्बत ही इस कारख़ाने में है मुहब्बत से सब कुछ ज़माने में है
मुहब्बत को, आतिश[४] से अख़गर[५] है दिल मुहब्बत न होवे तो पत्थर है दिल
मुहब्बत से है इन्तज़ामे-जहाँ[६] मुहब्बत से गर्दिश[७] में हैं आसमाँ[८]
मुहब्बत से परवाना, आतिश बजाँ[९] मुहब्बत से बुलबुल है गर्म-फ़ुगाँ[१०]

यह मौलिक भावना "मीर" के विचार से पञ्चभूतों की सृष्टि में सारी रंगारंगी और वैविध्य का कारण और इस सृष्टि के हर अस्तित्व में निहित है :—

इसी आग से शम्अ को है गुदाज़[११] इसी के लिए गुल है, सरगर्मे-नाज़[१२]

१. अत्याचार। २. प्रकाश। ३. स्पष्ट होना। ४. अग्नि। ५. चिनगारी। ६. संसार। ७. विपत्ति। ८. गगन। ९. जलना। १०. गाना। ११. कोमल। १२. खिलना।

میر نے ریختہ کو اپنے اظہار کا ذریعہ بنایا تو پھر اس میدان میں استادی کا حق ادا کر دیا۔ ماضی میں جو کچھ شعری سرمایہ تھا اس کے مقابلے میں میر نے اکیلے ہی ایک بڑا مجموعہ تیار کر کے چھوڑ دیا۔ ان کا یہ کلیات ان کی زندگی کے درمیانی حصہ ہی میں شہرت پا چکا تھا اور اس کی شہرت بندھیاچل کے پار دکن کی پہاڑیوں تک پہنچ گئی تھی۔

صرف شہرت ہی نہیں، شاعری نے ان کو معیشت سے بے فکر کیا تھا۔ درباروں سے وابستہ رکھا تھا۔ احترام اور عزت عطا کی تھی۔ نواب صمصام الدولہ، رعایت خاں، مہا نرائن، راجہ جگل کشور، مہاراجہ ناگرمل، سورج مل جاٹ، بہادر سنگھ، وجیہہ الدین خاں، حسن رضا خاں اور پھر لکھنؤ میں لکھ لٹ آصف الدولہ ـــــ سب نے کھرے فن اور بانکے ترچھے فن کار کی قدر کی۔ یہ کامیابیاں ایسی نہ تھیں کہ میر کو مسرت نہ ملتی اور تسلی نہ ہوتی ؎

ہیں مشتِ خاک لیکن جو کچھ ہیں میر ہم ہیں — مقدور سے زیادہ مقدور ہے ہمارا

حالات کے ان پیچ و خم نے ان کو سخن گوئی پر ثابت قدم رکھا تھا اور یہی سخن گوئی اس بدمزاج خلوت گزیں شاعر کو سماج سے وابستہ رکھے ہوئے تھی۔ ان کے شعر ایک فرد کی داستان تھے مگر یہ داستان پورے معاشرے میں بکھری ہوئی تھی۔

اگر یہ کامیابیاں نصیب نہ ہوتیں تو میر شاید ہی اپنی "بیتی" میں عشق پر ایسی توجہ دے سکتے جو اب ان کے کلام میں نظر آتی ہے۔ ان کے یہاں عشق ایک ناتمام اور تشنۂ ازل جذبہ ضرور ہے لیکن ہے یہ پورے عالم میں جاری و ساری۔ ہر جگہ کارفرما اور ہر موقع پر کارگر "شعلۂ عشق" میں اپنے فلسفہ اور حکمت نظری کو وہ اس مبالغہ سے بیان کرتے ہیں ؎

محبت نے ظلمت سے کاڑھا ہے نور — نہ ہوتی محبت نہ ہوتا ظہور
محبت بن اس جا نہ آیا کوئی — محبت سے خالی نہ پایا کوئی
محبت ہی اس کارخانے میں ہے — محبت سے سب کچھ زمانے میں ہے
محبت کی آتش سے اخگر ہے دل — محبت نہ ہووے تو پتھر ہے دل
محبت سے ہے انتظامِ جہاں — محبت سے گردش میں ہیں آسماں
محبت سے پروانہ آتش بہ جاں — محبت سے بلبل ہے گرمِ فغاں

یہ بنیادی جذبہ میر کے نزدیک آگ، ہوا، پانی اور مٹی کی دنیا میں ساری رنگا رنگی کا سبب

इस-आतिश से गर्मी है, ख़ुरशीद[1] में यही जान ज़र्रे[2] की, नौमीद[3] में
इसी से क़यामत है, हर चार ओर इसी फ़ितना, गर का है, आलम में शोर

और इस भावना को "मीर" भौतिकता से उठाकर आध्यात्मिक जगत मे ले जाते हैं। भौतिक जगत का यह खेल अपने नैरन्तर्य और चिरत्व के कारण अधिभौतिकता की एक समस्या बन जाती है। यह कोई नई वस्तु नहीं। हमारे क्लासिकल तसव्वुफ़ का इल्मे-कलाम (न्याय शास्त्र) है। अस्तित्व की एकमेवता की मान्यता, बल्कि प्रत्यक्ष विश्वास जिसका प्रतिपादन मध्य युग में उन्दलस (स्पेन) के दार्शनिक मुहीमुद्दीन इब्नुल-अरबी ने "फ़ुतूहातुल-मकीय:" और "फ़ुसूसुल-हकम" में किया है और उस "शेख़े-अकबर" (सर्वश्रेष्ठ आचार्य) के इस दर्शन को भारत में "मीर" से छियानबे वर्ष पूर्व शेख़ मुहिब्बुल्लाह इलाहाबादी (देहान्त सन् १६३८ ई०) ने बड़े वेग और शक्ति से फैला दिया था। यहाँ तक कि वह तसव्वुफ़ के शेख़े-अकबर के सम-विशेषण बनकर "शेख़े-कबीर" (बड़े आचार्य) की उपाधि पा चुके थे।

इसमें कोई सन्देह नही कि "मीर" ने मीर मुहम्मद अली और उनके एक श्रद्धालु भक्त सैयद अमानुल्लाह की संगति के प्रभाव से सूफियाना रीतियों परम्पराओं विधानों के प्रति आस्था प्राप्त की थी किन्तु यह उनकी कच्ची उम्र का समय था। उस समय जो उन्होंने सुना वह विचित्र-विचित्र घटनाएँ, अफ़लातूनी प्रेम की कहानियाँ, चमत्कार और अलौकिक क्रियाओं के गल्प थे। इन प्रभावों से "मीर" ने सिद्ध पुरुष सूफ़ियों की महिमा अवश्य ज्ञात की, इसके साथ-साथ उन्होंने सूफ़ियों के लौकिक प्रेम को आध्यात्मिकता की परछाइयों में परिणत कर देने का ढंग भी जाना लेकिन तसव्वुफ़, का क्लासिकल तसव्वुफ़ का इल्मे-कलाम जो अस्तित्व की एकमेवता के नशे में मस्त है, एक उच्चतर मानसिक स्तर था। "मीर" ने इसे स्वयं ज्ञात किया और फिर बिल्कुल इसी के हो रहे। जिन शेरों में उन्होंने इस एकमेवता की चर्चा की है उनमें वह बहुत खुलकर तसव्वुफ़ के इल्मे-कलाम का प्रचार करते हैं :—

बरसों लगी थीं, आँखें दरवाज़-ए-हरम[4] से, पर्दा उठा तो आँखें लड़ियाँ[5] हमारी, हम से

अर्थात् वह स्वयं ही दर्शक हैं, स्वयं ही दृश्य। जो ज्ञात सृष्टि है उस पर मे

१. सूर्य। २. धन। ३. निराशा। ४. काबा शरीफ़ (इस्लाम धर्म के अनुसार ईश्वर की पूजा का मुख्य स्थान) का द्वार,। ५. लड़ना।

اور اس کائنات کے ہر وجود میں پوشیدہ ہے ؎

اسی آگ سے شمع کو ہے گداز　　اسی کے لیے گل ہے سرگرم ناز
اس آتش سے گرمی ہے خورشید میں　　یہی جان ذرّے کی نومید میں
اسی سے قیامت ہے ہر چار اُور　　اسی فتنہ گر کا ہے عالم میں شور

اور اس جذبہ کو میرؔ مادیت سے اٹھا کر عالمِ روحانی میں لے جاتے ہیں۔ طبعی دنیا کا یہ نظریہ اپنے تواتر اور دوام کی وجہ سے مابعدالطبیعیات کا ایک مسئلہ بن جاتا ہے۔ یہ کوئی نئی چیز نہیں۔ ہمارے کلاسیکل تصوّف کا علم کلام ہے۔ وجود کی وحدت کا یقین بلکہ عین الیقین جو قرونِ وسطیٰ میں اندلس کے ایک فلسفی محی الدین ابن العربیؒ نے فتوحات المکیہ اور فصوص الحکم میں بیان کیا اور اس "شیخ اکبرؒ" کا یہ فلسفہ ہندوستان میں میرؔ سے چھیانوے سال پہلے شیخ محب اللہؒ الہ آبادی (المتوفی ۱۶۴۸ء) نے بڑی قوت اور شدت سے پھیلا دیا تھا۔ یہاں تک کہ وہ تصوف کے "شیخ اکبرؒ" کے ہم صفت بن کر "شیخ کبیرؒ" کا لقب پا چکے تھے۔

اس میں کوئی شک نہیں کہ میرؔ نے اپنے دادا، میر محمد علی اور پھر ان کے ایک جانشین سید امان اللہ کے اثر صحبت سے صوفیانہ آداب، رسوم اور روایات کا احترام حاصل کیا تھا لیکن یہ ان کی کچی عمر کا زمانہ تھا۔ اس وقت جو انھوں نے سُنا وہ عجیب و غریب واقعات، افلاطونی عشق کی کہانیاں، کرامات اور چمتکار کے فسانے تھے۔ ان اثرات سے میرؔ نے صوفیان باصفا کی عظمت ضرور معلوم کی اس کے ساتھ ساتھ انھوں نے صوفیوں کے مجازی عشق کو حقیقت کی پرچھائیوں سے بدل دینے کا طریقہ بھی جانا لیکن تصوف، کلاسیکل تصوف کا علم کلام جو وحدت الوجود کے نشے میں سرمست ہے ایک بلند ذہنی منزل تھا۔ میرؔ نے اس کو خود ہی معلوم کیا اور پھر بالکل اس کے ہو رہے۔ جن اشعار میں انھوں نے وجود کی وحدت کا ذکر کیا ہے ان میں وہ بہت کھل کر تصوف کے علم کلام کا پرچار کرتے ہیں ؎

برسوں لگی رہیں آنکھیں در وازۂ حرم سے
پردہ اٹھا تو آنکھیں لڑیاں ہماری ہم سے

یعنی وہ خود ہی شاہد ہیں اور خود ہی مشہود۔ جو عالم ہے وہ معلوم ہے ظواہر کے دھندلکے چھٹتے ہی جو حقیقت مطلق نظر آئی وہ اپنا ہی چہرہ تھا ؎

माया की आच्छादन हटते ही, धुंधलके फटते ही जो चरम सत्य दिखाई दिया वह अपनी ही छवि थी ।

यह वो ही, सूरतें हं या मुनअकिस[1] है, आलम[2] या आलम-आइना है उस या रे-ख़ुदनुमा[3] का

यह "यारे ख़ुदनुमा" भी हमारे प्रचीन मूफ़ियाना सिलसिलों की एक विशेष व्यञ्जना है जो इस्लामी ब्रह्म के मात्र अकेले होनें के सिद्धान्त को अपरिवर्तित रखने के लिए इस एकमेव की अस्तित्वक्ता के नियम को एक अनादि, अनन्त ऊँकार रूपी नाम रखने वाले अल्लाह पर ले जाकर समाप्त कर देते हैं । "मीर" को इस पर आस्था जमाते देखकर विस्मय नहीं होता क्योंकि वह हर हाल में परम्परागत धर्म की पकड़ और उसकी ऊपरी, प्रत्यक्ष आडम्बरवादी आराधना से स्वतंत्र नहीं थे । और तसव्वुफ़ के उस दृष्टिकोण को स्वीकार करना उनके मानसिक ढाँचे के लिए कठिन था जो उन्दलस के शेख़े-अकबर और इलाहाबाद के "शेख़े-कबीर" ने फैलाया था ।

यही कारण है कि "मीर" के यहाँ परमपरागत धर्म की चर्चा आधिकारिक रूप में हैं । तसव्वुफ़ की आत्मा और उसके मूल रस से अनभिज्ञ हैं और एक विशेष सम्प्रदाय की मान्यताओं पर दृढ़ता से जमे हैं । उन्होंने बड़े वेग से अपने शीया होने को व्यक्त किया है और उसी अभिव्यक्ति में वह भावनाओं से पूर्णतः ओतप्रोत दिखाई देते हैं :—

पहुंचे है तेरे हाथ तलक कब किसू का वस्त[4] क्या समझें शेख़ हाल को फ़ितरत[5] हं उसको, पस्त[6]
हूं जूं नुसैरी[7] साक़िए कौसर[8] का महवो-मस्त[9] मस्कन[10] अलीनगर हं मेरा मैं अली परस्त[11]
पैग़म्बर-इस जगह का, अली हं ख़ुदा अली

ना शह से कुछ ग़रज़ हं, हमें ना वज़ीर से-नै एतक़ाद[12] शेख़ से नै कुछ फ़क़ीर से
रखते नहीं हं, काम सग़ीर-ो-कबीर[13] से-हं लाग अपने जी को उसी एक अमीर से
मौला[14] अली, वकील[15] अली बादशा[16] अली

अथवा

हं "मीर" परेशां-दिल-ो-आवा-र-ओ-मुज़्तर[17] क्या तेरी सिफ़त[18] कर सके या हुनरे-सफ़दर[19]
हं वस्फ़[20] तेरा हय्यिज़े-इम्कान[21] से बाहर कहते हं ख़िरदवर[22] तेरी क़ुदरत[23] को नज़र[24] कर
क्या मद्ह[25] हं, ये-जो तुझे हम शाह कहे हैं
सच्चे हं वही लोग जो अल्लाह कहे हं

१. दर्पण । २. विश्व । ३. दोस्त । ४. हस्त (हाथ) । ५. जन्म । ६. तुच्छ । ७. एक मानव वर्ग का नाम । ८. स्वर्ग की नहर । ९. मतवाला । १०. निवास स्थान । ११. पुजारी । १२. विश्वास करना । १३. बड़ा । १४. प्रभु । १५. वकील । १६. सम्राट । १७. निरर्थक । १८. गौरव । १९. सैन्य पंक्तियां फाड़ने वाला । २०. प्रशंसा करना । २१. मुमकिन । २२. बुद्धिमा । २३. प्रकृति । २४. दृष्टि । २५. प्रशंसा ।

یہ دو ہی صورتیں ہیں یا منعکس ہے عالم یا عالم آئینہ ہے اس یار خود نما کا

یہ یار "خود نما" بھی ہمارے صوفیانہ سلسلوں کی ایک اصطلاح ہے جو اسلامی توحید کو برقرار رکھنے کے لیے وحدت الوجود کو ایک ازلی، ابدی اور اسم ذات رکھنے والے اللہ پر لے جاکر ختم کر دیتے ہیں۔ میر کو اس پر ایمان لاتے دیکھ کر حیرت نہیں ہوتی کیوں کہ بہرحال وہ روایتی مذہب کی گرفت اور ظاہر پرستی سے ماورا نہ تھے اور تصوف کے اس نظریے کو قبول کرنا ان کی ذہنی ساخت کے لیے دشوار تھا جو اندلس کے "شیخ کبیر" نے پھیلایا تھا۔

یہی وجہ ہے کہ میر کے یہاں روایتی مذہب کا شعوری پرچار ہے۔ وہ تصوف کی روح اور مغز سے ناواقف ہیں اور ایک فرقہ کے عقائد پر سختی سے قائم ہیں۔ انھوں نے بڑی شدت سے اپنے تشیع کا اظہار کیا ہے اور اظہار میں وہ جذبات سے مغلوب نظر آتے ہیں ؂

پہنچے ہے تیرے ہاتھ تلک کب کسو کا دست کیا سمجھے شیخ حال کو فطرت ہے اس کی پست
ہوں جوں نصیری، ساقیِ کوثر کا محو و مست سکن علیؑ نگر ہے مرا میں علیؑ پرست
پیغمبر اس جگہ کا علیؑ ہے خدا علیؑ

نہ شہ سے کچھ غرض ہے ہمیں نہ وزیر سے نے اعتقاد شیخ سے نے کچھ فقیر سے
رکھتے نہیں ہیں کام صغیر و کبیر سے ہے لاگ اپنے جی کو اسی اک امیر سے
مولا علیؑ وکیل علیؑ، بادشا علیؑ

یا

ہے میر پریشاں دل و آوارہ و مضطر کیا تیری صفت کر سکے یا حیدرِ صفدر
ہے وصف ترا حیز امکان سے باہر کہتے ہیں خرد در تری قدرت کو نظر کر
کیا مدح ہے یہ جو تجھے ہم شاہ کہے ہیں؟
سچے ہیں وہی لوگ جو اللہ کہے ہیں

اور یہ جذبہ بڑھتا چلا جاتا ہے یہاں تک کہ ان کو سارا عالم اپنا ہم زبان نظر آتا ہے اور جو ہم زبان نہیں وہ "بوالفضول" معلوم ہوتے ہیں ؂

نزدیک سب کے اس کو ہے درجہ قبول کا اک عندیہ ہے سید و شیخ و مغول کا
کب معتبر ہے صرف کسی بوالفضول کا باطن علیؑ ہے ظاہر خوب رسول کا

यह भावना बढ़ती चली जाती है यहाँ तक कि उन्हें समस्त विश्व अपनी ही बात कहता दिखाई देता है और जो एकस्वर हो उनके साथ नहीं वह "बुलफ़िज़ूल" प्रतीत होते हैं :—

नज़दीक सबको उसके हैं वर्जा क़ुबूल का-इक इन्वियां[1] हैं, सैयद-ो-शेख़-ो मग़ूल[2] का कब मोतबर[3] हैं, हर्फ़ किसी, बुलफ़ज़ूल[4] का-बातिन[5] अली हैं, ज़ाहिरे-ख़ूबे-रसूल[6] का

ख़ाक-उसके फ़र्क़[7] पर जो कहे था जुदा[8] अली

लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि वह किसी प्रकार की साम्प्रदायिक संकीर्णता से ग्रस्त थे। अपने समकालीनों में से ख़्वाजा मीर "दर्द" का नाम उन्होंने जितनी श्रद्धा और प्रेम से लिया है वह यह सिद्ध करने के लिए प्रर्याप्त है कि "मीर" का रवैया धार्मिक घृणा की भावनाओं से शून्य था। इसके बावजूद अपनी धार्मिक मान्यता की यह अभिव्यक्ति स्थान-स्थान पर बहुत तेज़ है। इसका कारण केवल यह है कि वह मान्यताओं को कला के द्वारा अभिव्यक्त कर रहे थे और यह धर्म नहीं बल्कि काव्य है जहाँ उनका स्वर इसलिए ऊँचा है कि इसकी ऊंचाई ही उनकी व्यक्तिगत तृप्ति का साधन है। अपने धर्म का उद्घोष करके वह स्वयं को सन्तुष्ट कर रहे हैं।

किन्तु तसव्वुफ़ की वास्तविक आत्मा से वंचित होने से जहाँ वह परम्परागत धर्म के दल विशेष की ओर अधिक झुक गये हैं वहाँ इस बात ने सबसे बड़ी हानि यह पहुँचाई है कि "मीर" की बुद्धिमत्ता को जीवन और जगत के सन्दर्भ में एक आत्मिक शान्ति की प्रतीत से भी रोक दिया है। एक सच्चे सूफ़ी के लिए जीवन और मृत्यु, सुख-दुख, स्वतंत्रता-परतंत्रता (विवशता)—सभी एक तथ्य के अलग-अलग पक्ष हैं। वह बाह्य-जगत में सत्-असत् तक को एक मूल पाता है और अपने आन्तरिक जगत में हर्ष और दुःख किसी की छाया को प्रभावकारी नहीं होने देता। "मीर" का यह हाल न था। संसार उनके लिए विवशता और दुःखों का घर थी। यह जिस "यारे-ख़ुद-नुमा" का आइना थी वह विवशता और दुःख की ज़ंजीरों का जन्मदाता था—वह स्वयं बेबस, पीड़ित और बिलकुल ही विवश थे :

नाहक़[9] हम मजबूरों पर ये तोहमत[10] है मुख़्तारी[11] की

जो चाहें सो आप करे हैं हमको अबस[12] बदनाम किया

या

१. राय। २. मुग़ल। ३. विश्वासनीय। ४. बेकार। ५. मिथ्यावादी। ६. इस्लाम धर्म का संस्थापक (मुहम्मद साहब)। ७. अन्तर। ८. पृथक। ९. व्यर्थ में। १०. दोषारोपण। ११. अख़्तेयार। १२. बेकार।

خاک اُس کے فرق پہ جو کہے تھا جدا علیؔ

لیکن اُس کے یہ معنی نہیں ہیں کہ وہ تعصب کا شکار تھے۔ اپنے ہم عصروں میں انھوں نے جس احترام اور عقیدت سے خواجہ میر دردؔ کا نام لیا ہے وہ یہ ثابت کرنے کے لیے کافی ہے کہ میرؔ کا ذہن مذہبی منافرت سے پاک تھا۔ اُس کے باوجود عقیدے کا یہ اظہار جگہ جگہ تیز ہے۔ اُس کی وجہ صرف یہ ہے کہ وہ عقائد کو اُن کے ذریعہ ظاہر کر رہے تھے اور یہ مذہب نہیں بلکہ شاعری ہے۔ جہاں ان کا لب و لہجہ اس لیے بلند ہے کہ اُس کی بلندی ہی ذاتی تسکین کا ذریعہ ہے۔ اپنے مذہب کا اعلان کرکے وہ خود کو اطمینان دلا رہے ہیں۔

لیکن۔ تصوف کے جوہر اصلی سے محرومی نے جہاں ان کو روایتی مذہب کی گروہ بندیوں میں جکڑ دیا وہاں سب سے بڑا نقصان یہ پہنچایا کہ میرؔ کی دانش مندی کو کائنات اور دنیا کے سلسلے میں ایک روحانی راحت کے احساس سے باز رکھا۔ ایک سچے صوفی کے نزدیک زندگی اور موت، رنج اور راحت، جبر اور اختیار۔ سب ہی ایک حقیقت کے الگ الگ پہلو ہیں۔ وہ عالم خارجی میں خیر و شر تک کو ہم آہنگ پاتا ہے اور اپنے داخلی عالم میں مسرت اور غم کسی کی پرچھائیوں کو مؤثر نہیں ہونے دیتا۔ میرؔ کا یہ حال نہ تھا۔ دنیا ان کے نزدیک جبر اور دکھ کا گھر تھی یہ جس "یار خود نما" کا آئینہ تھی وہ جبر اور دکھ کی زنجیروں کا جنم داتا تھا ـــ وہ خود بے بس، غم دیدہ اور مجبور محض تھے ؎

ناحق ہم مجبوروں پر یہ تہمت ہے مختاری کی
جو چاہے سو آپ کرے ہیں ہم کو عبث بدنام کیا

یا

دیدنی ہے شکستگی دل کی
کیا عمارت غموں نے ڈھائی ہے

بے بسی کے ایسے احساس کا پتہ ان کی ساری شاعری میں ملتا ہے اور میرؔ کے نشتر زیادہ تر ایسے ہی ہیں۔ ان میں ایک گوشت و پوست کے انسان کی تکلیف، ناکامی خواہشوں کی موت اور موت کی طلب ملتی ہے۔ ان کو زودِ حیات کا کوئی عرفان نہیں مگر اس کے لمحہ بہ لمحہ گھٹنے اور کم ہونے کا اندازہ ہے۔ وہ زندگی سے موت کی سمت سفر سے آگاہ

दीदनी[1] है शिकस्तगी[2] दिल की क्या इमारत ग़मों ने ढाई है !

बेबसी की ऐसी प्रतीति का पता उनके समस्त काव्य में मिलता है और "मीर" के "नश्तर" अधिकतर ऐसे ही हैं। उनमें एक रक्त-मांस के पिण्ड, भौतिक मानव के कष्ट, असफलताएँ, कामनाओं की ओर से हताशा की अन्यमनस्कता और मृत्यु की आकाक्षां मिलती है। उन्हें जीवनी शक्ति के प्राबल्य का कोई संज्ञान नहीं है किन्तु इसके क्षण-क्षण क्षीण होते जाने की प्रतीति है। वह जीवन में मृत्यु की ओर यात्रा से परिचित हैं और मृत्यु उनके विचार से चिंतन और कर्म की चरम सीमा है। इसके पार क्या है यह वह नहीं जानते न जानना चाहते हैं। उनकी समस्त समस्याएँ केवल सांस लेती काव्य की समस्याए हैं और उनकी सबसे बड़ी समस्या आनन्द की खोज है जो "मीर" के अपने कथनानुसार उन्हें कभी मिली ही नहीं। मन-बुद्धि की इस दशा से ग्रस्त होकर वह पूर्णतः मानवीय, मानवता प्रिय भी नहीं रह गये। उनकी सबसे भड़कने, एकान्त प्रिय होने और अहमान्यता की कहानियों से उनका जो चित्र बनता है वह यह है कि "मीर" को समाजिक जीवन व्यतीत करना नहीं आता था। वह कम घुलने-मिलने वाले थे और इसलिए ऐसे थे कि कोई आदमी उनकी दृष्टि मे जँचता ही नहीं था। लोगों से बहुत जल्द रुष्ट हो जाते थे। गहरी और उत्साहपूर्ण मैत्री, प्रसन्न वदन हो मिलना-जुलना और खुले दिल से तत्वों को स्वीकार कर लेना उनकी बिसात से बाहर था।

आधुनिक मनोविज्ञान की कसौटी पर यदि "मीर" को परखा जाए तो वह (NARSCISM) से ग्रस्त पाये जाएंगे। उनका बात करने का ढंग भी यह गवाही देता है कि उनका "आत्मज्ञान" तर्कसम्मत नहीं था और अहम्मन्यता एवं आत्म-श्लाघा की सीमाओं तक जा पहुँचता था।

हैं मुश्ते-ख़ाक लेकिन जो कुछ हैं "मीर" हम हैं मक़दूर से ज़्यादा मक़दूर है हमारा

"मीर" के अहंकार और उस अहंकार की दुर्बलता का यह विश्लेषण ठीक हो या नहीं, इतनी बात मान लेने में कोई अतिशयोक्ति न होगी कि वह अपने युग के तीव्र परिवर्तनों, कठिनाइयों और आपदाओं के कारण निराशावादी हो गये थे और इस करैले को नीम चढ़ाने के लिए उनकी छोटी उम्र से लेकर परिपक्वता तक की सभी प्रकार की वंचनाओं और अभावों का एक क्रम निरन्तर रहा। इस प्रकार "मीर" धीरे-धीरे रेशम के कीड़े की तरह एक ख़ोल में घुसते चले गये।

१. देखने योग्य। २. टूटा-फूटा रूप।

ہیں اور موت ان کے خیال میں فکر و عمل کی حد ہے اس کے پار کیا ہے یہ وہ نہیں جانتے نہ جاننا چاہتے ہیں ۔ ان کے سارے مسائل صرف سانس لیتے بدن کے مسائل ہیں اور سب سے بڑا مسرت کی تلاش ہے جو میرؔ کے اپنے بیان کے مطابق کبھی ان کو ملی ہی نہیں ۔ مزاج اور شعور کی اس کیفیت میں مبتلا ہو کر وہ انسان دوست بھی نہیں رہ سکتے ۔ ان کی وحشت، خلوت پسندی اور تکبر کی کہانیوں سے ان کی جو صورت بنتی ہے وہ یہ ہے کہ میرؔ کو سماجی زندگی بسر کرنا نہیں آتی تھی ۔ وہ کم آمیز تھے اور اس لیے کم آمیز تھے کہ کوئی آدمی ان کی نظر میں جنچتا ہی نہیں تھا ۔ لوگوں سے ناراض بہت جلد ہو جاتے تھے ۔ گہری اور گرم جوش دوستی، کھلے دل سے اعتراف اور خندہ پیشانی سے ملنا جلنا ان کی بساط کے باہر تھا ۔

جدید نفسیات کی کسوٹی پر اگر میرؔ کو پرکھا جائے تو وہ نرگسیت (NARSCISM) کا شکار قرار پائیں گے ۔ ان کا انداز سخن بھی اکثر یہ گواہی دیتا ہے کہ ان کی خود آگاہی غیر منطقی تھی اور خود پرستی تک جا پہنچی تھی ؎

ہیں مشتِ خاک لیکن جو کچھ ہیں میرؔ ہم ہیں
مقدور سے زیادہ مقدور ہے ہمارا

سرکشی سے فرد نہیں آتا ٭ حیف بندے ہوئے خدا نہ ہوئے

یہ میرؔ کی انا اور انا کی کمزوری کا جائزہ درست ہو یا غلط اتنی بات مان لینے میں مبالغہ نہ ہوگا کہ وہ اپنے عہد کی تیز رفتار تبدیلیوں، مشکلات اور مصائب کی وجہ سے قنوطی ہو گئے تھے اور اس کریلے کو نیم چڑھانے کے لیے ان کی نو عمری سے لے کر بڑھاپے تک محرومیوں کا ایک سلسلہ قائم رہا ۔ اس طرح میرؔ رفتہ رفتہ ریشم کے کیڑے کی طرح خول میں گھستے چلے گئے۔

کیا یہ سب ان کی عظمت کی نفی ہے ؟ یہ کون کہہ سکتا ہے ؟ میرؔ اردو کے سب سے بڑے شاعر ہیں اور ان کی شاعری بڑی شاعری ہے کیوں کہ تمام خرابیوں کے باوجود میرؔ کے احساسِ جمال، قوتِ تخیل اور تصورِ حسن پر کوئی شبہ نہیں کیا جا سکتا ۔ انھوں نے اردو شاعری کو ایک ایسے محبوب کا تصور دیا ہے جو روشنی کی طرح شفاف ہے ؎

क्या यह सब उनकी महानता के पक्ष में ऋणात्मक, नकारात्मक है ? यह कौन कह सकता है ? "मीर" उर्दू के सबसे बड़े कवि हैं और उनकी रचना महान है क्योंकि सभी दोषों और विकारों के बाद भी "मीर" की सौन्दर्य-चेतना, कल्पना-शक्ति, और सौन्दर्य की अद्भुत कल्पना पर कोई सन्देह नहीं किया जा सकता। उन्होंने उर्दू काव्य को ऐसे प्रेम-पात्र की कल्पना दी है जो ज्योति के समान विशुद्ध एवं परिष्कृत है।

वो आए बज़्म[1] में इतना तो "मीर" ने देखा फिर उसके बाद चिराग़ों में रोशनी न रही

और यह प्रेम-पात्र केवल ज्योति ही नहीं है बल्कि काया, सुगन्ध और रंग भी है। यह भौतिक है किन्तु भौतिकता के विचारों से हीन, सौंदर्य-मात्र की प्रतिमूर्ति :

जब लग गये झमकने रुख़सारे-यार[2] दोनों तब मेहरो-महने अपनी आँखें छुपा लियाँ[3] हैं

खिलना कम कम कली ने सीखा है उसकी आँखों की नीम-ख़्वाबी[4] से

नाज़ुकी उसके लब की क्या कहिये पंखड़ी इक गुलाब की सी है।

यह "मीर" का वही प्रेम-पात्र है जो कभी चाँद में अपनी झलकियाँ दिखाता था और अब वह नारी-सौन्दर्य, यौन-आकर्षण एवं मादकता तथा सौन्दर्य की एक कसौटी बनकर सदैव सम्मुख रहता है। यद्यपि "मीर" उससे भी मुक्ति चाहते हैं। पलायन के भी इच्छुक हैं :

याद उसकी इतनी—ठीक नहीं, "मीर" बाज़ आ[5] नादान ! फिर वो दिल से भुलाया न जायगा

इश्क़ करते हैं उस परी रू[6] से "मीर" साहब भी क्या दवाने हैं

फिरते हैं "मीर" ख़्वार[7] कोई पूछता नहीं इस आशिक़ी[8] में इज़्ज़ते-सादात[9] भी गई

यह उनका जीवन से पलायन नहीं बल्कि प्रत्यक्ष अनुभव की कटुता है। प्रेम में सफलता भाग्य में न थी इसलिए उनके मन में प्रेमिका की कल्पना एक मिश्रित कल्पना है। जिसमें असफलता, यातना और वञ्चना की प्रतीति भी मिल गई है। यह उनकी अपनी विशेषता है कि जिसकी सीमा निराशा से बिल्कुल मिली हुई है किन्तु "मीर" को निराशावादी कहना इस शब्द का बड़ा ही ग़लत प्रयोग है।

निराशावादिता उस मनःस्थिति का नाम है जिसमें व्यक्ति ने चेतन रूप से यह निर्णय कर लिया हो कि जीवन, जगत और मानव में न तो कल्याण एवं परितोष

१. महफ़िल। २. मित्र। ३. लिया। ४. मदहोशी। ५. मान जा। ६. परी की आत्मा। ७. आवारा, व्यर्थ। ८. प्रेम पथ। ९. गौरव (सय्यदी)।

وہ آئے بزم میں اتنا تو میرؔ نے دیکھا پھر اس کے بعد چراغوں میں روشنی نہ رہی

اور یہ محبوب صرف روشنی ہی نہیں ہے بلکہ جسم، خوشبو اور نکہت بھی ہے۔ وہ مادی ہے مگر مادے کی کثافت سے ماورا اور حسنِ محض کا پیکر ہے

جب لگ گئے جھپکنے رخسارِ یار دونوں
تب مہر و مہ نے اپنی آنکھیں چھپالیاں ہیں

کھلنا کم کم کلی نے سیکھا ہے اس کی آنکھوں کی نیم خوابی سے
نازکی اس کے لب کی کیا کہیے پنکھڑی اک گلاب کی سی ہے

یہ میرؔ کا وہ محبوب ہے جو کبھی چاند میں اپنی جھلکیاں دکھاتا تھا اور اب وہ نسوانی حسن، جنسی رعنائی اور جمالیات کا ایک معیار بن کر ہمیشہ نظروں کے سامنے رہتا ہے۔ گو میرؔ اس سے فرار بھی چاہتے ہیں

یاد اس کی اتنی خوب نہیں میرؔ باز آ نادان پھر وہ دل سے بھلایا نہ جائے گا

عشق کرتے ہیں اس پری رو سے میرؔ صاحب بھی کیا دوانے ہیں؟

پھرتے ہیں میرؔ خوار کوئی پوچھتا نہیں اس عاشقی میں عزتِ سادات بھی گئی

یہ ان کا زندگی سے فرار نہیں ہے بلکہ تجربے کی تلخی ہے۔ عشق میں کامیابی تقدیر میں نہ تھی اس لیے ان کے ذہن میں محبوب کا تصور ایک مرکب تصور ہے جس میں ناکامی، اذیت اور محرومی کا تصور بھی شامل ہے۔ یہ ان کی مخصوص انفرادیت ہے جس کی سرحد قنوطیت سے بالکل ملی ہوئی ہے لیکن میرؔ کو قنوطی کہنا اس اصطلاح کا بڑا غلط استعمال ہے۔

قنوطیت اس کیفیت کا نام ہے جس میں انسان نے شعوری طور پر یہ فیصلہ کر لیا ہو کہ زندگی، انسان اور کائنات میں نہ تو خیر کی قوت ہے نہ مسرت کی گنجائش۔ اسی کے ساتھ قنوطیت کا یہ دعویٰ بھی ہوتا ہے کہ وہ جس حقیقت تک پہنچی ہے وہ ناقابلِ بحث اور

की शक्ति है न आनन्द प्राप्ति की कोई सम्भावना। इसी के साथ निराशावादिता का यह भी दावा होता है कि वह जिस तथ्य तक पहुँची वह अटल और परिवर्तनीय है! इस अर्थ में "मीर" को निराशावादी कहना संभव ही नहीं। यह अवश्य है कि उनकी व्यक्तिगत वेदना कभी तीव्रता से, बाढ़ बनकर शेष सर्वस्व को लपेट में ले लेता है:

चमन में नौह्-ओ-ज़ारी[1] से किस गुल का ये मातम है?
जो शबनम है तो गिरियां[2] है जो बुलबुल है तो नालां[3] है

मेरी नुमूद[4] ने मुझको किया बराबर ख़ाक मैं नक़्शे-पा[5] की तरह पाय माल[6] हूँ अपना

ना मुरादाना ज़ीस्त् करता था "मीर" का तौर याद है हमको

लेकिन इस समस्त प्रबलता के बाद भी यह अनुभव नहीं है कि ना मुरादाना ज़ीस्त के अतिरिक्त संसार में कुछ है ही नहीं। शोक, पीड़ा और दुःख का यह स्वर प्रत्यक्ष अनुभव के तिलिस्म ने पैदा किया था। "मीर" ने जो युग देखा था विलाप-संगीत तो था ही:—

शहां[7], कि कुह्ले-जवाहर[8] थी, ख़ाकेपा जिनकी उन्हीं की आंख में फिरती सलाइयां देखीं
दिल की वीरानी[9] का, क्या मज़कूर[10] है यह नगर सौ मरतबा लूटा गया

यह मर्सिया शाह आलम के अन्धे किये जाने का है और नादिरशाह और अब्दाली के लश्करों की लूटमार का है। उन दिनों वाह्य-संसार में कोई वस्तु बिना टूटे नहीं रह गयी थी। साम्राज्य को ख़ैबर की घाटी से आने वाले लश्करों ने आहत कर दिया था। समाज में आर्थिक विछिन्नता थी। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है "मीर" जिस भारतीय दल से सम्बन्धित थे उसका अन्त हो चुका था। क़स्बों, गाँवों और नगरों में वर्गीभूत जीवन आधार हिल गये थे। हर वस्तु बहाव की स्थिति में थी और अन्ततोगत्वा "मीर" को दिल्ली छोड़नी पड़ी थी:—

दिल्ली के न थे कूचे औराक़े-मुसव्विर[11] थे जो शक्ल नज़र आई तस्वीर[12] नज़र आई

और "मीर" को पूरब आकर ईरानी गुट के एक सरदार की छत्र-छाया में आजीविका के साधन ढूंढने पड़े। वह इस परिस्थिति में खिन्न थे किन्तु पूर्ण निराशा उनके यहाँ नहीं थी:—

१. रोना, पीटना। २. रोने वाला। ३. रोने वाला। ४ पैदा होना। ५. टाँग। ६ कुचला हुआ। ७. बादशाह। ८. वृद्ध जौहर। ९. ख़ामोशी, उजाड़पन। १०. कहा हुआ। ११. चित्रों के पन्ने। १२. चित्र।

اٹل ہے ان معنوں میں میرؔ کو قنوطی کہنا ممکن ہی نہیں ۔ یہ ضرور ہے کہ ان کا ذاتی غم کبھی کبھی شدت سے سیلاب بن کر ماسوا کو لپیٹ میں لے لیتا ہے ؎

چمن میں نوحہ وزاری ہے کس گل کا یہ ماتم ہے؟
جو شبنم ہے تو گریاں ہے جو بلبل ہے تو نالاں ہے

مری نمود نے مجھ کو کیا برابر خاک
میں نقش پا کی طرح پائمال ہوں اپنا

نامرادانہ زیست کرتا تھا
میرؔ کا طور یاد ہے ہم کو

لیکن ان میں ساری شدت کے باوجود یہ احساس نہیں ہے کہ نامرادانہ زیست کے سوا دنیا میں کچھ ہے ہی نہیں ۔ رنج والم کا یہ لہجہ مشاہدے کے طلسم نے پیدا کیا تھا ۔ میرؔ نے جو زمانہ دیکھا تھا وہ نغمۂ ماتم تو تھا ہی ؎

شہاں کہ کحل جواہر تھی خاک پا جن کی
انھیں کی آنکھوں میں پھرتی سلائیاں دیکھیں

دل کی ویرانی کا کیا مذکور ہے
یہ نگر سو مرتبہ لوٹا گیا

یہ مرثیہ شاہ عالم کے اندھے کیے جانے کا ہے اور نادر شاہ اور ابدالی کے لشکروں کی لوٹ مار کا ہے ۔ ان دنوں خارجی دنیا میں کوئی چیز سلامت نہیں تھی ۔ مملکت کو درہ خیبر سے آنے والے لشکروں نے زخمی کر دیا تھا، سماج میں معاشی انتشار تھا ۔ جیسا کہ پہلے لکھا جا چکا ہے ۔ میرؔ جس ہندوستانی گروہ سے وابستہ تھے اس کا خاتمہ ہو چکا تھا ۔ قصبے، گاؤں اور شہروں میں طبقاتی زندگی کی بنیادیں ہل گئی تھیں ۔ ہر شے بہاؤ کی حالت میں تھی اور میرؔ کو آخر کار دلی کو خیرباد کہنا پڑا تھا ؎

دلی کے نہ تھے کوچے اوراق مصور تھے
جو شکل نظر آئی تصویر نظر آئی

اور میرؔ کو پورب آکر ایرانی گروہ کے ایک سردار کے سائے میں رزق کا وسیلہ ڈھونڈنا پڑا تھا۔

मेरे सलीक़े से मेरी निभी मुहब्बत में   तमाम उम्र में, नाकामियों से काम लिया

यही कारण है कि वह हर प्रकार की मानसिक, शारीरिक व्यथा की चर्चा तो बल देकर करते हैं और उनको महत्त्व भी देते हैं किन्तु साहस और आशा शेष रहती है ।

अब रञ्ज-ो-दर्द-ो-ग़म का पहुँचा काम जाँ तक   पर हौसले से शिकवा आया नहीं ज़ुबाँ तक

क्या शब[1] हुई ज़माने-में जो फिर हुआ न रोज़[2]   क्या ऐशबे-फ़िराक़[3] तुझी को ख़बर नहीं ?

किस दिन चमन में यारब[4] होगी सबा[5] गुल-आफ़शाँ[6]
कितने शिकस्ता पर[7] हम दीवार के तले हैं

यह आशा और निराशा का द्विविधात्मक द्वन्द्व आधुनिक मनोविज्ञान के लिए *अब कोई समस्या नहीं रह गया है । अब काव्य रचना की जटिल प्रक्रिया के एक-एक* तार पर तार्किक पकड़ संभव हो गई है और आवश्यकता इसी बात की है कि "मीर" को अच्छी तरह समझने के लिए सामाजिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन को केवल पृष्ठभूमि में स्थान देकर "मीर" के व्यक्तित्व में भावनात्मक-द्वन्द्व की उत्ताल तरंगों का गहन निरीक्षण, पर्यवेक्षण किया जाए क्योंकि यही द्वन्द्व उनका अपना स्वर, उनकी महिमा और उनकी कला—सब कुछ है ।

यह द्वन्द्व है क्या ? जीवन की कामना, मृत्यु के विश्वास और अमरत्व की आकांक्षा का शंकु है । यह मनोवैज्ञानिक शंकु प्रत्येक महान् काव्य में कार्यशील होता है । काव्य मनस्तत्व की गति ही तो है ? और यह मनस्तत्व (प्रज्ञा, विवेक, संज्ञान आदि) जैविक विकास के उच्च स्तरों पर उत्पन्न हुआ है । मानव इस विकास की सबसे बड़ी उपलब्धि है । इसकी चेतना इसे निरीक्षण, अनुभव और भाव-अवगाहक से यह तीन शिक्षाएँ देता है:—

(१) मौत सबको आती है ।

(२) जीते रहने में बड़ा आनन्द है ।

(३) मैं न मरूँ तो अच्छा है ।

अतएव "मीर के काव्य में भी मृत्यु, नाश और समाप्ति पर बार-बार बल दिया गया है । वह अपने युग की विकीर्ण परिस्थियों और जीवन के सस्ते हो जाने

१. रात्रि । २. प्रतिदिन । ३. जुदाई । ४. ईश्वर, अधिक । ५. पुष्पी समीर । ६. बूँद युक्त वस्तु । ७. पंख ।

وہ اس صورت حال سے دل گرفتہ تھے لیکن پوری مایوسی ان کے یہاں نہیں تھی ۔

مرے سلیقے سے میری نبھی محبت میں تمام عمر میں ناکامیوں سے کام لیا

یہی سبب ہے کہ وہ روح اور جسم کی سب کلفتوں کا بیان تو زور دے کر کرتے ہیں اور ان کو اہمیت بھی دیتے ہیں مگر حوصلہ اور امید باقی رہتی ہے ۔

اب رنج و درد و غم کا پہنچا کام جہاں تک پر حوصلے سے شکوہ آیا نہیں زباں تک

کیا شب ہوئی زمانے میں جو پھر ہوا نہ روز کیا اے شب فراق تجھی کو خبر نہیں

کس دن چمن میں یا رب ہوگی صبا گل افشاں
کتنے شکستہ پر ہم دیوار کے تلے ہیں

یہ امید اور نا امیدی کی دوگونہ کشمکش جدید نفسیات کے لیے کوئی معمہ نہیں رہ گئی ہے ۔ اب شعر و سخن کے پیچیدہ عمل کے ایک ایک تار پر منطقی گرفت کی جا سکتی ہے اور ضرورت اسی بات کی ہے کہ میرؔ کو اچھی طرح سمجھنے کے لیے سماجی اور تمدنی مطالعہ کو صرف پس منظر میں جگہ دے کر میرؔ کی شخصیت میں جذبات کی سیلابی کشمکش کا مشاہدہ کیا جائے کیونکہ یہی کشمکش ان کا مخصوص لب ولہجہ ان کی عظمت اور ان کا فن سب کچھ ہے ۔

یہ کشمکش ہے کیا ؟ یہ جینے کی خواہش موت کے یقین اور نہ مرنے کی تمنا کا مثلث ہے۔ یہ نفسیاتی مثلث ہر بڑی شاعری میں کارفرما ہوتا ہے ۔ شاعری شعور و ادراک کی حرکت ہی تو ہے اور شعور و ادراک حیاتیاتی ارتقا کے بلند مرحلوں میں پیدا ہوا ہے ۔ انسان اس ارتقا کی سب سے بڑی تصویر ہے ۔ اس کا شعور اس کو مشاہدے، تجربے اور خیال آرائیوں سے یہ تین سبق دیتا ہے :۔

(۱) موت سب کو آتی ہے ۔
(۲) جیتے رہنے میں بڑا مزا ہے۔
(۳) میں نہ مروں تو اچھا ہے۔

چنانچہ میرؔ کی شاعری میں بھی موت، فنا اور خاتمے پر بار بار زور دیا گیا ہے ۔ وہ اپنے عہد

से अधिक उस मृत्यु की अनुभूति द्वारा ग्रस्त है जिससे किसी की बचत ही नहीं और जो अवश्यम्भावी है:—

क्या रंग-ो-बू-व-बादे-सहर[1] सब हैं गर्मे-राह[2] क्या है जो इस चमन में है ऐसी चला-चली

मजलिसों की मजलिसें बरहम[3] हुई लोग वह पल मारते कीधर[4] गये ?

आए अदम[5] से हस्ती[6] में तिस पर नहीं क़रार
है इन मुसाफ़िरों का, इरादा कहां के तई (तं)

बनी सूरतें कैसी-कैसी, बिगाड़ी समझते नहीं हो फलक क्या करे है ?

इस मौज-ख़ेज़दहर[7] में तू है हुबाब[8]-सा आंखें खुली तेरी तो ये आलम है, ख़्वाब-सा

चार दीवारि-ये-अनासिर[9] "मीर" ख़ूब जागह है, पर है, बे बुनियाद[10]

अगर "मीर" के मन में मृत्यु की यही प्रतीति अनुभूत तथ्य हो आस्था की निधि बन जाती तो वह अवश्य निराशावादी हो जाते किन्तु एक तो क्लासिकल तसव्वुफ उनके इस आड़े वक्त पर काम आया और दूसरे जीवन की प्रचुर आनन्द-मयता ने एक सशक्त प्रेरणा का काम दिया और मृत्यु की अवश्यंभाविता के विश्वास का तोड़ करने के लिए उन्होंने इसे एक निरन्तर संघर्ष की स्थिति निश्चित करने का आधार स्थापित कर दिया:—

मौत इक मांदगी[11] का-वक़्फ़ा[12] है यानी आगे चलेंगे दम लेकर

मरना है ख़ाक होना हो ख़ाक उड़ते फिरना इस राह में अभी तो दरपेश[13] मरहले हैं[14]

रहे-मर्ग से क्यों डराते हैं लोग ? बहुत इस तरफ़ को तो जाते हैं लोग

यह मृत्यु की अवश्यंभाविता के विश्वास का तोड़ है। इस प्रकार मृत्यु एक अन्त नहीं रह जाता बल्कि एक नया प्रारम्भ बन जाता है:—

मौत क्या मंज़िले मुराद[15] है "मीर" यह भी, इक दिल का, ही तवक़्क़ुफ़[16] है

---

१. सुबह की हवा। २. पथ, रास्ता। ३. अप्रसन्न। ४. किधर। ५. न होना। ६. होना। ७. जमाना। ८. बुलबुला। ९. उनसुर की हवा। १०. नींव। ११. थकावट। १२. थोड़ी देर रुकना। १३. विद्यमान, मौजूद। १४. उद्देश्य। १५. तमन्ना, इच्छा। १६. देर करना।

کی انتشاری حالت اور زندگی کی ارزانی سے زیادہ اس موت کے احساس میں مبتلا ہیں جس سے کسی کی بچت ہی نہیں اور جو دنیا کا دستور ہے ؂

کیا رنگ و بوو بادِ سحر سب ہیں گرمِ راہ　　کیا ہے جو اس چمن میں ہے ایسی چلا چلی

مجلسوں کی مجلسیں برہم ہوئیں　　لوگ وہ پل مارتے کیدھر گئے

آئے عدم سے ہستی میں بس نہیں پر نہیں قرار
ہے ان مسافروں کا ارادہ کہاں کے تئیں

بنی صورتیں کیسی کیسی بگاڑیں　　سمجھتے نہیں ہم فلک کیا کرے ہے

اس موج خیز دہر میں تو ہے حباب سا　　آنکھیں کھلیں تری تو یہ عالم ہے خواب سا

چار دیواریٔ عناصر میرؔ　　خوب جاگہ ہے پر ہے بے بنیاد

اگر میرؔ کے ذہن میں موت کا صرف یہی احساس یقین کی دولت بن جاتا تو وہ قنوطی ضرور ہو جاتے۔ لیکن ایک تو کلاسیکل تصوف ان کے اس آڑے وقت میں کام آیا اور دوسرے لذت حیات کی طاقت ور محرک نے کام دیا اور موت کے یقین کا توڑ کرنے کے لیے انھوں نے اس کو عہد دوام کا مرحلہ قرار دینے کی داغ بیل ڈال دی ؂

موت اک ماندگی کا وقفہ ہے　　یعنی آگے چلیں گے دم لے کر

مرنا ہے خاک ہونا ہو خاک اڑتے پھرنا　　اس راہ میں ابھی تو درپیش مرحلے ہیں

رہ مرگ سے کیوں ڈراتے ہیں لوگ　　بہت اس طرف کو تو جاتے ہیں لوگ

मौत का वक़्फ़ा इस रस्ते में क्या है "मीर" समझते हो ?
हारे मांदे राह के हैं हम लोग कोई दम लो लेंगे

———

यूं "मीर" की निराशावादिता एक सीमित प्रतीति की तरह दिखाई देती है। वह जीवन और शरीर के विघटन को मानते अवश्य हैं किन्तु यह उनकी स्वीकारोक्ति है। उनकी यह आस्था नहीं कि मौत ही सब कुछ है। मौत हर ओर है "मीर" केवल इतना अनुभव करते हैं:—

ज़िनहार[1] न जा पर वरिशे-दौरे-ज़माँ[2] पर   मरने के लिए लोगों को तैयार करे है

———

ज़िन्दगी करते हैं मरने के लिए अह्ले जहाँ[3]   वाक़या[4] "मीर" है दरपेश अजब यारों को

———

बहुत सइ[5] करिये तो मर रहिये "मीर"   बस-अपना तो इतना ही मक़दूर[6] है

———

यह मानवीय विवशता की चर्चा है कि वह मृत्यु के विधान से बच नहीं सकता। इसके लिए जीवन के क्रम को सदैव बनाये रखना संभव ही नहीं। किन्तु इसे "मीर" मानवीय जीवन का आनन्द भी समझते हैं:—

लज़्ज़त से नहीं ख़ाली जानों का, खपा जाना   कब ख़िज़्र-ओ-[7]मसीहा[8]ने मरने का मज़ा जाना

इस सीमा तक संघर्ष द्वन्द्वात्मक था किन्तु "मीर" को मौत की तलवार से किसी के न बचने का विश्वास भी था और जीते रहने के आनन्द की अनुभूति भी। यही अनुभूति उन्हें यह कहने पर विवश करती थी कि मृत्यु आयगी भी तो वह मृत्यु न होगी, "माँदगी का वक़्फ़ा" होगी और "हम दम लेकर आगे चलेंगे"। अब शंका का तीसरा पक्ष देखिये जहाँ यह अंकित है कि "मैं न मरूँ तो अच्छा है"। इस इच्छा ने उन्हें तसव्वुफ़, इल्मे-कलाम और दार्शनिकता की ओर उन्मुख किया और वह कभी न मरने की कामना में स्वयं को अनादि एवं अनन्त तत्व से सम्बद्ध करने लगे:—

जिस्म[9] के ख़ाकी[10]का, जब पर्दा उठा   हम हुए वह "मीर" वह सब हम हुआ

———

खींचा है आदमी ने बहुत दूर आपको   इस पर्दे-में ख़याल तो कर टुक ख़ुदा न हो

———

१. हरगिज़। २. युग का दौर। ३. जगत वाले। ४. बात। ५. कोशिश। ६. भरसक। ७. एक पैग़म्बर का नाम। ८. ईसा मसीह। ९. शरीर। १०. मिट्टी वाला।

یہ احساس مرگ کا توڑ ہے۔ اس طرح موت اک آخری حرف نہیں رہ جاتی بلکہ ایک دوسری ابتدا بن جاتی ہے ؎

موت کیا۔ منزل مراد ہے میرؔ یہ بھی اک دل کا ہی توقف ہے

موت کا وقفہ اس رستے میں کیا ہے میرؔ سمجھتے ہو
ہارے ماندے راہ کے ہیں ہم لوگ کوئی دم سو لیں گے

یوں میرؔ کی قنوطیت ایک محدود احساس کی طرح نظر آتی ہے۔ وہ جسم و جاں کے لیے شکست و ریخت اور فنا کے قائل ضرور ہیں لیکن یہ ان کا اعتراف ہے، ایمان نہیں کہ موت ہی سب کچھ ہے۔ موت ہر سمت ہے اس کا میرؔ کو احساس ہے ؎

زنہار نہ جا پرورشِ دورِ زماں پر مرنے کے لیے لوگوں کو تیار کرے ہے

زندگی کرتے ہیں مرنے کے لیے اہلِ جہاں واقعہ میرؔ ہے درپیش عجب یاروں کو

بہت سعی کیجے تو مر رہیے میرؔ بس اپنا تو اتنا ہی مقدور ہے

یہ انسانی مجبوری کا بیان ہے کہ وہ موت کے قانون سے بچ نہیں سکتا۔ نہ اس کے لیے جسم و جاں کو ہمیشہ سلامت رکھنا ممکن ہے لیکن میرؔ اس کو انسان کی زندگی کا لطف بھی سمجھتے ہیں ؎

لذت سے نہیں خالی جانوں کا کھپا جانا ٭ کب خضر و مسیحا نے مرنے کا مزا جانا

اس حد تک کشمکش دوگونہ رہی۔ یعنی میرؔ کو موت کی تلوار سے کسی کے نہ بچنے کا یقین بھی تھا اور جیتے رہنے کی لذت کا احساس بھی۔ یہی احساس ان کو یہ کہنے پر مجبور کرتا تھا کہ موت آئے گی تب بھی وہ موت نہ ہوگی، ماندگی کا وقفہ ہوگی اور ہم دم لے کر آگے چلیں گے۔ اب مثلث کے تیسرے کونے کو دیکھئے جہاں پر لکھا ہے کہ "میں نہ مروں تو اچھا ہے"۔ اس خواہش نے ان کو تصوف، علم کلام اور تفلسف پر مائل کیا اور وہ کبھی نہ مرنے کی تمنا میں خود کو ازلیت اور ابدیت سے وابستہ اور پیوستہ کرنے لگے ؎

جسم کے خاکی کا جب پردہ اٹھا ہم ہوئے وہ میرؔ وہ سب ہم ہوا

यह आदमी "मीर" जो अनादि एवं अनन्त परम तत्त्व में जा मिला है। जो तिलोंक के परे जा पहुँचा है और उस अस्तित्व में विलीन हो गया है जो अनादि है और कालातीत, अजर। यूँ बूंद सागर से मिलकर अपनी इस कामना की तुष्टि का साधन बनता है कि "काश में न मरूँ तो अच्छा है।"

"मीर" की यह मानसिक यात्रा एक विचित्र सी मानसिक सीमा पर आकर समाप्त हो जाती है। मृत्युजय होने और अमरत्व प्राप्त करने की कामना में उन्होंने जीव को ब्रह्म से जा मिलाया और स्रष्टा की सृष्टि में विलीन कर दिया तो मानव जाति की महिमा उनके काव्य का मूल-भूत मूल्य बन गई। उनको तसव्वुफ़ और इल्मे-कलाम ने एक सृजनात्मक दृष्टिकोण यह दे दिया कि राज्यों और शासनों के पतन, नगरों के विध्वंस-विनाश, सार्वजनिक हत्याकाड और व्यथाओं-वेदनाओं के प्रवाह में तिनकों की तरह उड़ जाने वाला आदमी असार और हीन नहीं बल्कि वस्तुतः वह धरती पर सजीव ईश्वरीय प्रतिमा, अस्तित्व का महानतम तत्व और शाश्वत सत्य का ऐसा प्रतिरूप है जिसके प्रति समस्त चराचर जगत में, लिखित ब्रह्मांडों में, स्वयं मानवीय में, सम्मान है। मन्सूर के "अनल हक़[१]" की तरह "मीर" की यह प्रतीति उन्हीं भावोच्छ्वास की एक प्रदीप्ति प्रदान करता है और "मीर" की शायरी को दिक्-काल की सीमाओं के बन्धनों से छुड़ा देता है। मानवीय महत्ता की यह प्रतीति उन्हें भी उच्चता और श्रेष्ठता प्रदान करती है :—

मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक बरसों   तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलते हैं

———

बरसों लगी रही हैं जब मेह्र-रो-मह्की, आँखें   तब कोई हम सा साहब साहब[२]-नज़र बने हैं

———

मानवीय अस्तित्व की महिमा जब अनुभूति अथवा प्रतीति से विश्वास बन गई तो उसने "मीर" की वह सारी उदासी, निराशा और कटुता छीन ली है जिसके लिए वह उतने विख्यात अथवा बदनाम रहे हैं :—

मरते हैं हम तो आदमे-ख़ाकी की, शान पर   अल्लाह रे दिमाग़ कि है आसमान पर
गर्बे इन्सान है ज़मीं से बले   हैं दिमाग़ उनके आसमानों पर

———

आदमी से मलक[४] को क्या निस्बत[५]   शान अरफ़ा[६] है, "मीर" इन्सां की

१. मनसूर द्वारा कहा हुआ शब्द। २. मालिक। ३. फ़रिश्ता। ४. सम्बन्ध। ५. सर्वोच्च।

کھینچا ہے آدمی نے بہت دور آپ کو   اس پردے میں خیال تو کر ٹک، خدا نہ ہو

یہ آدمی میرؔ ہے جو ازلیت اور ابدیت میں جا ملا ہے۔ آسمانوں کے پرے جا پہنچا ہے اور اس وجود میں ضم ہے جس کی ابتدا ہے نہ زوال یوں قطرہ سمندر سے مل کر اپنی اس خواہش کی تسکین کو پہنچا ہے کہ "کاش میں نہ مروں تو اچھا ہے۔"

میرؔ کا یہ ذہنی سفر ایک عجیب و غریب منزل پر آکر ختم ہوتا ہے۔ موت پر فتح یاب ہونے اور حیات جاوید پانے کی تمنا میں جب انھوں نے انسان کو خدا سے جا ملایا اور خالق کو مخلوق سے پیوست کیا تو انسانی مخلوق کی عظمت ان کی شاعری کی بنیادی قدر بن گئی۔ ان کو تصوف اور علم کلام نے ایک مثبت نظریہ یہ دے دیا کہ مملکتوں اور سلطنتوں کے زوال، شہروں کی تباہی، قتل عام اور شدتِ غم میں تنکوں کی طرح اڑ جانے والا آدمی بے حیثیت اور بے وقر نہیں ہے بلکہ درحقیقت وہ زمین پر خدا کی صورت، وجود کا جزو اعظم اور حقیقت مطلق کا ایسا مظہر ہے جس کا احترام کائنات میں ہے دنیا میں ہے اور خود انسان کے دل میں ہے۔ منصور کے "انا الحق" کی طرح میرؔ کا یہ احساس ان کی فن کاری کو ایک نعرۂ مستانہ کی والہانہ کیفیت دیتا ہے اور میرؔ کی شاعری کو زمان و مکان سے بے قید کر دیتا ہے۔ انسان کی اس عظمت کا احساس ان کو بھی بلند و بالا کرتا ہے ؎

مت سہل ہمیں جانو پھرتا ہے فلک برسوں
تب خاک کے پردے سے انسان نکلتے ہیں

برسوں لگی رہی ہیں جب مہر و مہ کی آنکھیں   تب کوئی ہم سا صاحب، صاحب نظر بنے ہے

انسانی وجود کی عظمت جب احساس سے یقین بن گئی ہے تو اس نے میرؔ سے وہ ساری فسردگی، مایوسی اور تلخ کامی چھین لی ہے جس کے لیے وہ اتنے مشہور یا بدنام ہیں ؎

مرتے ہیں ہم تو آدم خاکی کی شان پر   اللہ رے دماغ کہ ہے آسمان پر
گرچہ انسان ہیں زمیں سے دلے   ہیں دماغ ان کے آسمانوں پر

آدمی سے ملک کو کیا نسبت   شان ارفع ہے میرؔ انساں کی

हैं मुश्ते-ख़ाक लेकिन जो कुछ हैं "मीर" हम हैं   मक़दूर से ज़्यादा मक़दूर है हमारा

"मक़दूर से ज़्यादा मक़दूर है हमारा"—यह एक घोषणा है, दावा है और मृत्यु रूपी तथ्य की स्वीकृति के उपरान्त भी जीवन के अगणित क्षणों में जीवन पर विजय प्राप्त करने के प्रयत्न और साहस का फल है। "मीर" के विचार से "मक़दूर" तो वह था जिसने उन्हें व्यक्तिगत जीवन के प्रेम में असफल रक्खा, मुग़ल सल्तनत को नष्ट किया, नादिरशाह और अब्दाली का रूप धारण किया समस्त देश में तबाही और विशृंखलता फैलाई और "मीर" से दिल्ली के कूचे और बाज़ार दूर किये। लेकिन इस "मक़दूर से ज़्यादा हमारा मक़दूर" था जिसके बल पर नब्बे वर्ष तक "मीर" ने अयुक्त स्थितियों से संघर्ष किया और अपने ग़म को दुनिया के काम से संगत कर दिया। यह "हमारा मक़दूर" था कि वह कला के क्षेत्र में आये और सब पर शासन किया। यह साम्राज्य उन्होंने स्वयं निर्माण किया था। इसके वह सम्राट बने और आज तक हैं।

"मीर" को मरे एक लम्बा समय बीत चुका है। इस अवधि में उनके काव्य और कला का सम्मान और स्वीकृति बढ़ती ही गयी है और बढ़ती ही जायगी। क्योंकि उन्होंने अपने काव्य में अपने उस व्यक्तित्व को निहित कर दिया था जो प्रत्येक मानव में है। यह व्यक्तित्व वह है जो हार मानना नहीं जानती और शोकार्द्र स्वर में भी अपनी विशिष्टता और अपनी अस्तित्वत्ता की घोषणा करती रहती है। यही उनकी सदाबहार महत्ता का मूल भेद है।

ख़ुश हैं दीवानगी-ए-मीर से सब   क्या जुनूं कर गया शऊर[1] से वह

उनका "जुनून" वाह्य स्थितियों से उत्पन्न हुआ था किन्तु उनकी कला उनकी चेतना (शऊर) से उद्भूत हुई थी और यह शऊर दिन-ब-दिन रेख़ते के रूप में ऐसी भावनायें ढालता गया जो आज एक ही समय में हमारे इतिहास के पृष्ठ, व्यक्ति के इतिहास और समाज के विघटन की कहानी का काम देते हैं और हमें अपनी भावनाओं को तृप्त एवं संस्कृत बनाने का एक सफल ढंग सिखाते हैं।

ہیں مشت خاک لیکن جو کچھ ہیں میرؔ ہم ہیں   مقدور سے زیادہ مقدور ہے ہمارا

"مقدور سے زیادہ مقدور ہے ہمارا" یہ ایک اعلان ہے، دعویٰ ہے اور موت کی حقیقت کے اعتراف کے باوجود زندگی کے ان گنت لمحوں میں زندگی پر فتح یابی کی کوشش اور ہمت کا نتیجہ ہے۔ میرؔ کے نزدیک مقدور تو وہ تھا جس نے ان کو ذاتی عشق میں ناکام رکھا۔ مغل سلطنت کو برباد کیا۔ نادر شاہ اور ابدالی کی شکل اختیار کی۔ سارے ملک میں تباہی اور انتشار کو پھیلایا۔ اور میرؔ سے دہلی کے کوچہ و بازار دور کیے۔ لیکن اس مقدور سے زیادہ "ہمارا مقدور تھا جس کے بل پر میرؔ نے نوے سال تک ناموافق حالات سے جدوجہد کی اور اپنے غم کو دنیا کے غم سے ہم آہنگ کر دیا۔ یہ ہمارا "مقدور" تھا کہ وہ فن کے میدان میں آئے اور سب پر حکمراں بنے۔ سلطنت انھوں نے تعمیر کی۔ اس کے شہنشاہ بنے اور آج تک ہیں۔

میرؔ کو مرے مدت گزر چکی ہے اس مدت میں ان کی شاعری اور فن کا احترام و اعتراف بڑھتا ہی گیا ہے اور بڑھتا ہی جائے گا کیوں کہ انھوں نے اپنی شاعری میں اپنی اس شخصیت کو سمو دیا تھا جو ہر انسان میں ہے یہ وہ شخصیت ہے جو ہار ماننا نہیں جانتی اور الم ناک لہجے میں اپنی انفرادیت کا اور زندہ رہنے کا اعلان کرتی ہے۔ یہی ان کی سدا بہار عظمت کا راز ہے ؎

خوش ہیں دیوانگیٔ میرؔ سے سب   کیا جنوں کر گیا شعور سے وہ

ان کا جنون خارجی حالات کا نتیجہ تھی۔ مگر ان کا فن ان کے شعور کی بخشش تھا۔ اور یہ شعور دن بہ دن ریختہ کے قالب میں ایسے جذبات ڈھالتا گیا جو آج بیک وقت ہمارے تاریخ کے صفحات، فرد کی تاریخ اور سماج میں انتشار کی کہانی کا کام دیتے ہیں اور ہمیں اپنے جذبات کی تسکین و تہذیب کا ایک کامیاب سلیقہ سکھاتے ہیں۔

मीर -कालीन लखनऊ

नादिम सीतापुरी

सन् १७८१ ई० में वज़ीरुल-मुमालिक[1] नवाब आसिफुद्दौला के आह्वान पर जब "मीर" लखनऊ पहुँचे तो फ़ैज़ाबाद की जमी-जमाई राजनैतिक बिसात भी लखनऊ स्थानान्तरित हो चुकी थी। उस युग में दिल्ली से लखनऊ की यात्रा जूए-शीर[2] लाने से कम न थी। बहली, बैलगाड़ी, ऊँटगाड़ी—और जगह-जगह नावों से आना पड़ता था। "मीर" दिल्ली से चले, मेरठ आए, फर्रुखाबाद में ठहरे—दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह कोस पर पड़ाव करते, सुस्ताते और दम लेते लखनऊ पहुँचे। "आबेहयात"[3] में उल्लेख है :—

"लखनऊ पहुँचकर जैसा कि मुसाफिरों का दस्तूर है, एक सराय में उतरे। मालूम हुआ कि आज एक जगह मुशायरा है, रह न सके; उसी वक्त गजल लिखी और मुशायरे में जाकर शामिल हुए। उनकी वज्अ[4] कदीमाना[5]—खिड़कीदार पगड़ी, पचास गज़ के घेर का जामा, एक पूरा थान पिस्तोलिये का कमर से बँधा, एक रूमाल पटरीदार तह किया हुआ उसमें आवेज़ाँ[6] मशरूअ का पाजामा जिसके अरज[7] के पाँयचे, नागफ़नी की अनीदार जूती जिसकी डेढ़ बालिश्त ऊँची नोक, कमर में एक तरफ सैफ़ यानी सीधी तलवार, दूसरी तरफ कटार, हाथ में जरीब[8]—गरज[9] जब दाख़िले-महफ़िल[10] हुए तो वह शहर लखनऊ—नये अन्दाज़, नयी तराशें, बाँके-टेढ़े जवान जमा—उन्हें देखकर सब हँसने लगे।"

"आबे-हयात" का चित्रण कुछ गलत नहीं। दिल्ली के रहन-सहन, आचार

१. तब तक अवध के शासक "वज़ीर…"अर्थात् "देशों के मंत्री" ही कहे जाते थे। २. दूध की नहर, आलंकारिक अर्थ—अत्यन्त दुष्कर कार्य। ३. कवियों के इतिहास को "तजकिरा" कहा जाता था। "आबे-हयात" सबसे अधिक प्रसिद्ध "तज़किरा" है। इसका नाम "आबेहयात" अर्थात् अमृत रखने का प्रयोजन यह था कि विगत महापुरुषों को चिरकालीन जीवन इसी ग्रन्थ ने दिया। ४. वेश-भूषा। ५. प्राचीन। ६. लटकता हुआ। ७. चौड़ाई। ८. छोर। ९. अर्थात्। १६ सभा में प्रविष्ट।

میرؔ کے عہد کا لکھنؤ

ناؔدم سیتاپوری

۱۷۸۲ء میں وزیر الممالک نواب آصف الدولہ کی طلبی پر جب میرؔ لکھنؤ پہونچے تھے تو فیض آباد کی جمی جمائی بساط سیاست بھی لکھنؤ منتقل ہو چکی تھی۔ اس زمانے میں دلّی سے لکھنؤ کا سفر "جوئے شیر" لانے سے کم نہ تھا۔ ہفتوں اور مہینوں کی راہ تھی اونٹ گاڑی بہلی۔ بیل گاڑی اور جگہ جگہ کشتیوں سے اتارا تھا۔ میرؔ دلّی سے چلے میرٹھ آئے۔ فرخ آباد میں ٹھہرے۔ دس دس پندرہ پندرہ کوس پر پڑاو کرتے۔ سستاتے اور دم لیتے لکھنؤ پہونچے۔ صاحب تذکرہ آب حیات کا بیان ہے کہ :-

"لکھنؤ پہونچ کر جیسا مسافروں کا دستور ہے ایک سرا میں اترے معلوم ہوا کہ آج یہاں ایک جگہ مشاعرہ ہے رہ نہ سکے اسی وقت غزل لکھی اور مشاعرے میں جا کر شامل ہوئے ان کی وضع قدیمانہ — کھڑکی دار پگڑی، پچاس گز کے گھیر کا پاجامہ۔ ایک پورا تھان پستولئے کا کمر سے بندھا ایک رومال پٹری دار تہ کیا ہوا اس میں آویزاں۔ مشروع کا پاجامہ جسکے عرض کے پائنچے۔ ناگ پھنی کی انی دار جوتی جسکی ڈیڑھ بالشت اونچی نوک۔ کمر میں ایک طرف سیف یعنی سیدھی تلوار — دوسری طرف کٹار۔ ہاتھ میں جریب۔ غرض جب داخل محفل ہوئے تو وہ شہر لکھنؤ، نئے انداز۔ نئی تراشیں۔ بانکے ٹیڑھے جوان جمع انھیں دیکھ کر

और नागरिक-व्यवहारों पर उस समय तक मुहम्मद शाही युग की छाप थी। उन दिनो यह सैनिक वेश-भूषा "मुहम्मद शाही जवानों" का विशिष्ट लक्षण समझी जाती थी और इस सैनिक वेश-भूषा का अर्थ हीं यह था कि इस व्यक्ति ने दिल्ली के संक्रमणकाल की परिस्थितियों और निरन्तर आक्रमणों का वीरोचित ढंग से सामना किया है। इसके विपरीत, लखनऊ एक नयी निष्ठा, नया निश्चय और नवोल्लास लेकर अस्तित्व में आया था। खिड़कीदार पगड़ी की जगह यहाँ मसाले की कामदार आड़ी-तिरछी टोपी ने ले ली थी और मशरूअ के पाजामे के स्थान पर गुलबदन का रेशमी खिंचा हुआ घुटन्ना आ गया था, जिसके रेशमी इज़ारबन्द में कुञ्जियों का गुच्छा नाचता रहता। तीन-तीन कमरतोइयों का चुस्त अँगरखा, पावों में अनीदार जूती की जगह कामदार घतैला, मेंहदी-रचे हाथों में रेशमी रूमाल, कल्ले में पिस्तयी पानों की ख़ुशबूदार गिलौरी दबी, होठों पर लाखा, सीधी माँग—अमीरों और अभिजात वर्ग की यही वेश-भूषा थी। "मीर" का रूप-वेश उस महफ़िल के लिए बिल्कुल अपरिचित सिद्ध हुआ। सभा-विधान के आचार यहाँ की संस्कृति की जान सही फिर भी नवयुवक यदि "मीर" को देखकर मुस्कुरा पड़े हों तो आश्चर्य की बात नहीं।

कुछ दिनों बाद उन्हें आसिफ़ुद्दौला के सम्मुख प्रस्तुत होने का अवसर मिला। जब वह पहुँचे तो आसिफ़ुद्दौला मुर्गों की लड़ाई देखने में लीन थे। "मीर" ने अदब से सलाम पेश किया। नवाब; जो साक्षात शिष्टाचार, सशरीर सभ्यता और पूर्णतः स्नेह और प्रेम थे; कुछ वेश-भूषा से, कुछ रूप-आकृति से तुरन्त पहचान गये और पूछा—

"तुम 'मीर मुहम्मद तक़ी' हो?"

उन्होंने तसलीम अर्ज़ की। नवाब ने स्नेहालिंगन किया, अपने साथ बैठक तक ले गये। अपनी रचनाएं सुनायीं, "मीर" ने जी खोलकर दाद दी, "मीर" से भी कुछ सुनाने की फ़रमाइश की गयी। उन्होंने भी कुछ शेर पढ़े। नवाब बहुत प्रसन्न हुए। सालारजंग[1] ने करबद्ध निवेदन किया—"श्रीमन्त की आज्ञानुसार 'मीर' साहब प्रस्तुत हैं। इनके लिए उचित आदेश हो।"

आज्ञा हुई कि निकट भविष्य में आदेश होगा। अतः दो-ही-तीन दिन में दो सौ रुपया दरमाहे[2] का आदेश हो गया।

१. एक उपाधि; एक सैनिक पद। किन्तु यह सैनिक लोग सामान्य नागरिक जीवन से पृथक नहीं होते थे। २. मासिक वेतन।

سب ہنسنے لگے۔

"آب حیات" کی یہ مرقع کشی غلط نہیں۔ دلّی کی معاشرت تہذیب اور تمدن پر اس وقت تک "محمد شاہی عہد" کی چھاپ تھی اس زمانے تک سپاہیانہ وضع و قطع "محمد شاہی جوان" ہونے کی امتیازی علامت سمجھی جاتی تھی اور اس شجاعانہ تراش خراش کے معنی ہی یہ تھے کہ اس شخص نے دلّی کے ہنگامی حالات اور متواتر حملوں کے زمانے کا مجاہدانہ اور سپاہیانہ مقابلہ کیا ہے۔! اس کے برخلاف "لکھنؤ" ایک نیا عزم اور ولولہ لے کر صفحۂ وجود پر آیا تھا۔ کھڑکی دار پگڑی کی جگہ یہاں مصالحے کی کامدار آڑی ترچھی ٹوپی نے لے لی تھی اور مشروع کے پاجامے کے بجائے گلبدن کا ریشمی کھنچا ہوا گھٹنا جیسے ریشمی ازار بند میں گنجوں کا گچھا رقص کناں۔ تین تین "کر تو ئیوں" کا چست انگرکھا۔ پاؤں میں انی دار جوتی کی جگہ کامدار گٹھیلا مہندی سے رچے ہوئے ہاتھوں میں ریشمی رومال۔ گلے میں پستئی پانوں کی خوشبو دار گلوری دبی۔ ہونٹوں پر لاکھا۔ سیدھی مانگ! امرا اور خواص کی یہی وضع قطع تھی! میرؔ کی وضع اس محفل کے لئے بالکل نامانوس اور اجنبی ثابت ہوئی۔ آداب مجلس یہاں کی شائستہ تہذیب کی جان سہی پھر بھی تعجب نہیں جو میرؔ کو دیکھ کر نوجوان مسکرا دئے ہوں۔

چند روز کے بعد بارگاہ آصفی میں باریابی کا موقع ملا۔ جب یہ پہنچے تو آصف الدولہ مرغوں کی لڑائی دیکھنے میں منہمک تھے۔ میرؔ نے مودبانہ سلام پیش کیا۔ نواب سراپا اخلاق سراسر تہذیب۔ ہمہ تن خلوص و محبّت! کچھ وضع قطع سے اور کچھ قیافے سے فوراً پہچان گئے اور پوچھا۔

تم میرؔ محمد تقی ہو——!

انھوں نے تسلیم عرض کی—نواب بغلگیر ہوئے اپنے ہمراہ نشست گاہ تک لے گئے اپنا کلام سنایا۔ میرؔ نے جی کھول کر داد دی۔ میرؔ سے بھی کچھ سنانے کی فرمائش کی گئی۔ انھوں نے بھی چند شعر پڑھے۔ نواب بہت محظوظ ہوئے۔

سالار جنگ نے دست بستہ عرض کیا۔!

میرؔ صاحب حسب الحکم عالی حاضر ہیں ان کے لئے مناسب حکم فرمایا جائے۔

उर्दू काव्य के प्रारंभिक युग के पोषण-संरक्षण का जितना बड़ा अवसर अवध-दरबार को मिला, दिल्ली के भाग्य में वह नहीं था। क्योंकि उर्दू काव्य ने जब पालने मे पाँव फैलाए तो बूढ़ी दिल्ली जीवन की अन्तिम साँसें ले रही थी। और वहाँ के गुणी जन (विशेषतः बुद्धिजीवी) उस विभ्रष्ट वातावरण और टूटते-बिखरते समाज में जैसे जी रहे थे उसका अनुमान भी नहीं किया जा सकता। बुद्धिजीवियों के लिए मरण-तुल्य कठिनाई तब उत्पन्न होती है जब मानसिक शान्ति में विघ्न हों और मानसिक व्यग्रता की स्थिति उत्पन्न हो जाए—और दिल्ली में यही चतुर्दिक व्याप्त था। सिराजुद्दीन अली ख़ाँ "आरज़ू" और मीर मुहम्मद "सोज़" ने इसीलिए दिल्ली छोड़ दी। मीर "हसन", मिर्ज़ा मुहम्मद रफ़ी "सौदा" और अशरफ़ अली "फ़ुग़ाँ" भी इस स्थिति को सहन न कर सके। दिल्ली जैसे प्रिय जन्मस्थल को छोड़ने वालों में इनके अतिरिक्त मीर जीवन "अफ़कार", ख्वाजा हसन "हसन", मीर शेर अली "अफ़सोस", इलाही बख़्श "मारूफ़", ज़ियाउद्दीन "ज़िया", मिर्ज़ा जाफ़र अली "हसरत"—यहाँ तक कि ग़ुलाम हमदानी "मुसहफ़ी", इंशाउल्लाह ख़ाँ "इंशा", कलन्दर बख़्श "जुर्रत", और सआदत यार खाँ "रंगीन"—सभी आगे पीछे आकर लखनऊ में जमा हो गये।

स्वयं लखनऊ भी गुणवानों और कलाकारों से विहीन न था। हाफिज रहमत ख़ाँ रुहेला के बेटे मुहब्बत खाँ "मुहब्बत" और आसिफ़ुद्दौला के राजनैतिक सम्बन्धों में यद्यपि ईस्ट इंडिया कम्पनी एक दीवार बनकर अड़ गयी थी फिर भी दरबार में उनके सम्मान में कोई कमी नहीं की गई। साहित्यिक गोष्ठियों और मुशायरों में उन्हें सदैव विशिष्ट स्थान प्राप्त रहा। तालिब अली खाँ "ऐशी", मिर्ज़ा तक़ी "हवस", मीर फरज़न्द अली "मौज़ूँ", ग़ुलाम अशरफ़ "अफसर"—न जाने कितने थे जिनका नाम तो कहीं-कहीं "तज़किरों" में नज़र आ जाता है लेकिन कब्र के निशान तक का पता नहीं।

"मीर" ने लखनऊ के छोटे बड़े तीन नवाबी दरबार देखे। वे नवाब आसिफ़ुद्दौला के युग में लखनऊ आये। नवाब वज़ीर अली खाँ का अत्यल्पकालीन नवाबी दौर (२८ रबीउलअव्वल से ३ शाबान सन् १२१२ हिजरी तक)[१] उनके सामने ही प्रारंभ होकर समाप्त हुआ और नवाब सआदत अली ख़ाँ के शासन

१. लगभग ४ मास ५ दिन।

ارشاد ہوا کہ عنقریب حکم صادر کیا جائے گا۔ چنانچہ دو ہی تین دن کے اندر دو سو روپیہ "در ماہہ" (ماہانہ) کا فرمان جاری ہو گیا۔

اردو شاعری کے ابتدائی دور کی سرپرستی کا جتنا بڑا موقع دربار اودھ کو ملا۔ دلّی کے نصیب میں وہ سعادت نہیں آئی کیونکہ اردو شاعری نے جب پانے میں پاؤں پھیلائے تو بوڑھی دلّی زندگی کی آخری سانسیں لے رہی تھی اور یہاں کے اہل کمال اس اچٹتی ہوئی ناسازگار فضا اور ماحول میں جس طرح جی رہے تھے اس کا اندازہ ہی نہیں کیا جا سکتا اہل کمال کی سب سے بڑی موت ذہنی سکون کا انتشار اور قلبی اضطراب ہے جو یہاں پورے طور پر موجود تھا سراج الدین علی خاں اور میر محمد سوز نے اسی خلفشار میں دلّی کو خیرباد کہا اور میر حسنؔ۔ میرزا رفیع سودا اور اشرف علی فغاںؔ بھی اس افراتفری کو برداشت نہ کر سکے! دلّی جیسے وطن عزیز کو چھوڑنے والوں میں ان کے علاوہ میر جیون انگارؔ۔ خواجہ حسن حسنؔ۔ میر شیر علی افسوس۔ الٰہی بخش معرفت۔ ضیاء الدین ضیاؔ۔ میرزا جعفر علی حسرتؔ یہاں تک کہ غلام ہمدانی مصحفی۔ انشاء اللہ خاں انشاؔ۔ قلندر بخش جرأتؔ اور سعادت یار خاں رنگینؔ آگے پیچھے آکر سب ہی لکھنؤ میں جمع ہو گئے۔!

خود لکھنؤ بھی اہل کمال اور ارباب فن سے خالی نہ تھا۔

حافظ رحمت خاں روہیلہ کے بیٹے محبّت خاں محبّتؔ اور آصف الدولہ کے سیاسی تعلقات میں اگرچہ ایسٹ انڈیا کمپنی ایک دیوار بن کر حائل ہو چکی تھی پھر بھی دربار میں انکی عزت و تکریم میں کوئی کمی نہیں کی گئی۔ ادبی محفلوں اور مشاعروں میں ہمیشہ انھیں ممتاز مقام حاصل رہا۔ طالب علی خاں عیشیؔ میرزا تقی ہوسؔ۔ میر فرزند علی موزوںؔ۔ غلام اشرف اخترؔ! نہ جانے کتنے تھے جن کا نام تو کہیں کہیں تذکروں میں نظر آ جاتا ہے لیکن قبر تک کا پتہ نہیں۔

میرؔ نے لکھنؤ کے چھوٹے بڑے تین نوابی دربار دیکھے نواب آصف الدولہ کے زمانے میں لکھنؤ آئے۔ نواب وزیر علی خاں کا مختصر نوابی دور (۲۸۔ ربیع الاول سے ۳۔ شعبان ۱۲۱۲ھ تک) ان کی نگاہوں کے سامنے ختم ہوا اور نواب سعادت علی خاں کے عہد کا بڑا حصّہ (۱۲۱۲ھ لغایت ۱۲۲۵ھ) بھی انھوں نے دیکھا۔

का एक बड़ा भाग (सन् १२१२ हिजरी से सन् १२२५ हिजरी तक)[१] भी उन्होंने देखा।

आसिफ़ुद्दौला की आँख बन्द होते ही अवध अंग्रेज़ी-षड्यंत्रों का केन्द्र बन गया। पहले तो नवाब वज़ीर अली ख़ाँ को उनका उत्तराधिकारी बनाया गया लेकिन जब नवाब सआदत अली ख़ाँ से आधे राज्य पर सौदा हो गया तो वज़ीर अली ख़ाँ को वंचित करके नवाब सआदतअली ख़ाँ को सिंहासनासीन कर दिया गया।

दिल्ली के राजनैतिक उतार-चढ़ाव को "मीर" ने बहुत निकट से देखा था। दरबारी और राजनैतिक जोड़-तोड़ से उन्हें तनिक भी लगाव नहीं था इसलिए इस नई क्रान्ति पर सब कुछ छोड़कर एकान्त में जाकर बैठ रहे।

उक्त "आबेहयात" में ही वर्णित है :—

"जब नवाब आसिफ़ुद्दौला मर गए, सआदत अली ख़ाँ का दौर हुआ तो यह दरबार जाना छोड़ चुके थे। वहाँ किसी ने तलब न किया। एक दिन नवाब की सवारी जाती थी। यह तहसीन की मस्जिद पर सरे-राह[२] बैठे थे। सवारी सामने आई। सब उठ खड़े हुए। 'मीर' साहब उसी तरह बैठे रहे। सैयद इंशा ख़्वासी[३] में थे। नवाब ने पूछा—'इंशा; यह कौन शख़्स[४] है जिसकी तमकनत[५] ने इसे उठने भी न दिया?' (इंशा ने) अर्ज़[६] की—'जनाबे-आली,[७] यह वही गदा-ए-मुतकब्बिर,[८] जिसका ज़िक्र[९] हुज़ूर में अक्सर आया है। गुज़ारे[१०] का यह हाल और मिज़ाज का यह आलम। आज भी फ़ाक़े[११] ही से होगा।' सआदत अली ख़ाँ ने ख़िलअते-बहाली[१२] और एक हज़ार रुपया दावत[१३] भिजवाया। जब चोबदार लेकर गया 'मीर' साहब ने वापस कर दिया और कहा कि 'मस्जिद में भिजवाइये, यह गुनहगार[१४] इतना मुहताज[१५] नहीं।' सआदत अली ख़ाँ जवाब सुनकर मुतअज्जिब[१६] हुए। मुसाहिबों ने फिर समझाया। ग़रज़ नवाब के हुक्म से सैयद इंशा ख़िल-अत लेकर गए और अपनी तर्ज़[१७] पर समझाया कि 'न अपने हाल पर, बल्कि अपने अयाल[१८] पर रहम कीजिये। और, बादशाहे-वक़्त[१९] का हदिया[२०] है इसे क़ुबूल फ़रमाइये।' 'मीर' साहब ने कहा कि 'साहब

१. लगभग सन् १७९८ ई० से सन् १८१० ई० तक। २. रास्ते के किनारे। ३. साथ चलने वाले विशिष्ट जन। ४. व्यक्ति। ५. अभिमान। ६. निवेदन। ७. श्रीमन्त। ८. अहंकारी-भिखारी। ९. चर्चा। १०. आजीविका। ११. उपवास। १२. नियुक्ति का जोड़ा। १३. आमन्त्रण का। १४. विनम्रता सूचक व्यंजना 'मो सम कौन कुटिल…'। १५. दीन-दरिद्र। १६. विस्मित। १७. ढंग। १८. आश्रित-जन। १९. वर्तमान शासक। २०. भेंट।

آصف الدولہ کی آنکھ بند ہوتے ہی اودھ انگریزوں کی سازشوں کا گڑھ بن گیا پہلے تو نواب وزیر علی خاں کو ان کا جانشین بنایا گیا لیکن جب نواب سعادت علیخاں سے آدھے ملک کا سودا ہو گیا تو وزیر علیخاں کو محروم کرکے نواب سعادت علیخاں کو تخت نشین کر دیا گیا۔

مولانا۔ محمد حسین آزاد لکھتے ہیں:۔

جب نواب آصف الدولہ مر گئے، سعادت علیخاں کا دور ہوا تو یہ دربار جانا چھوڑ چکے تھے۔ وہاں کسی نے طلب نہ کیا ایک دن نواب کی سواری جاتی تھی۔ یہ تحسین کی مسجد میں سر راہ بیٹھے تھے سواری سامنے آئی سب اٹھ کھڑے ہوئے میر صاحب اسی طرح بیٹھے رہے۔ سید انشا خواصی میں تھے۔ نواب نے پوچھا کہ انشا یہ کون شخص ہے۔ جس کی تمکنت نے اسے اٹھنے بھی نہ دیا۔ عرض کی جناب عالی! یہ وہی گدائے متکبر ہے، کا ذکر حضور میں اکثر آیا ہے۔ گزارے کا وہ حال اور مزاج کا یہ عالم۔ آج بھی فاقے ہی سے ہوگا۔

سعادت علی خاں نے خلعت بحالی اور ایک ہزار روپیہ دعوت بھجوایا۔ جب چوب دار لے گیا میر صاحب نے واپس کر دیا اور کہا کہ مسجد میں بھجوائیے یہ گنہگار اتنا محتاج نہیں۔ سعادت علی خاں جواب سن کر متعجب ہوئے۔ مصاحبوں نے پھر سمجھایا۔ غرض نواب کے حکم سے سید انشا خلعت لے کر گئے اور اپنی طرز پر سمجھایا کہ نہ اپنے حال پر بلکہ اپنے عیال پر رحم کیجئے اور بادشاہ وقت کا ہدیہ ہے اسے قبول فرمائیے۔ میر صاحب نے کہا کہ صاحب۔ وہ اپنے ملک کے بادشاہ

वह अपने मुल्क के बादशाह हैं मैं अपने मुल्क का बादशाह हूँ। कोई नावाक़िफ़[1] इस तरह पेश आता[2] तो मुझे शिकायत न थी वह मुझसे वाक़िफ़, मेरे हाल से वाक़िफ़—इस पर, इतने दिनों के बाद, एक दस रुपये के ख़िदमतगार के हाथ ख़िल-अत भेजा। मुझे अपना फ़क़्रो-फ़ाक़ा[3] क़ुबूल है मगर ये ज़िल्लत[4] उठाई नहीं जाती।' सैयद इंशा की लस्सानी[5] और लफ़्फ़ाज़ी[6] के सामने किसकी बात पेश जा[7] सकती। 'मीर' साहब ने क़ुबूल फ़रमाया और दरबार में कभी-कभी जाने लगे।" लेकिन दरबार से यह नया सम्बन्ध बिलकुल क्षणिक और अस्थायी था। कुछ दिनों बाद फिर विच्छिन्न हो गया।

यद्यपि लखनऊ के नवाबी युग की साहित्यिक गोष्ठियों और मुशायरों का ऐतिहासिक वर्णन नहीं मिलता फिर भी इन मुशायरों की व्यवस्था और उसके नियम दिल्ली के मुशायरों से कुछ विशेष भिन्न नहीं थे। उस युग में जन साधारण के मुशायरों की रीति अधिक प्रचलित नहीं थी। दरबारी मुशायरों के अतिरिक्त अमीरों और रईसों के यहाँ भी मुशायरों का आयोजन हुआ करता था। जिनमें उपस्थित समुदाय का सत्कार हुक़्क़े-पान से किया जाता था। काव्य-कला में दक्ष एवं पारंगत आचार्यों का विशेष सम्मान इन महफ़िलों की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता थी। उनके मान-दान का विशेष ध्यान रखना मुशायरों के आयोजकों का मुख्य कर्तव्य हुआ करता था।

वर्तमान लखनऊ की नींव तो नवाब आसिफ़ुद्दौला ने ही रखी लेकिन इसके केन्द्रीय महत्त्व प्राप्त करने का प्रारम्भ अकबर के काल में ही हो चुका था। शेख़ अब्दुर्रहीम बिजनौरी को सन् १५९० ई० में अकबरी दरबार से अवध की सूबेदारी का ख़िल-अत मिला। लखनऊ पहुँच कर उन्होंने "पीर मुहम्मद शाह के टीले" पर "पँच-महले" का निर्माण कराया और उसके निकट ही "शेख़ैन दरवाज़ा" के नाम से एक ऊँचा फाटक और "मच्छी-भवन" के नाम से एक किला भी बनवाया। "महमूद नगर", "शाहगंज" और "मिर्ज़ा-मण्डी" उसी युग के मुहल्ले हैं। उस युग के सबसे अधिक भरे-पुरे बाज़ार "चौक" के दक्षिण में सम्राट के नाम पर "अकबरी दरवाज़े" का निर्माण हुआ जो आज भी उस बीते युग की याद ताज़ा किये हुए है।

१. अपरिचित, अनभिज्ञ। २. व्यवहार करता। ३. दीनता और उपवास। ४. अपमान ५. वाक्-पटुता। ६. शब्द-जाल। ७. चल सकना।

ہیں میں اپنے ملک کا بادشاہ ہوں کوئی ناواقف اس طرح پیش آتا تو مجھے شکایت نہ تھی وہ مجھ سے واقف میرے حال سے واقف اس پر اتنے دنوں کے بعد ایک دس روپے کے خدمت گار کے ہاتھ خلعت بھیجا مجھے اپنا فقر و فاقہ قبول ہے مگر یہ ذلت نہیں اٹھائی جاتی سید انشا کی لسانی اور لفاظی کے سامنے کس کی بات پیش جا سکتی میر صاحب نے قبول فرمایا اور دربار میں کبھی کبھی جانے لگے۔"

لیکن دربار سے یہ نیا توسل بالکل عارضی اور وقتی تھا کچھ دنوں کے بعد منقطع ہو گیا۔ اگرچہ لکھنؤ کے نوابی دور کی ادبی محفلوں اور مشاعروں کی تاریخی تفصیلات عام طور سے نہیں ملتیں پھر بھی ان شاعروں کی ترتیب تہذیب دلی کے مشاعروں سے کچھ زیادہ مختلف نہیں تھی اس زمانے میں عوامی مشاعروں کا زیادہ رواج نہیں تھا درباری مشاعروں کے علاوہ امراء اور رؤسا کے یہاں بھی مشاعرے منعقد ہوا کرتے تھے جن میں حاضرین کی تواضع حقہ پان سے کی جاتی تھی۔ اساتذۂ فن اور استادوں کا احترام ان محفلوں اور مجلسوں کی اہم خصوصیت تھی اور ان کی نازبرداری "صاحب مشاعرہ" کا فرض اوّلین ہوتا تھا۔

آج کے لکھنؤ کی داغ بیل تو نواب آصف الدولہ ہی نے ڈالی ــــ لیکن اس کی مرکزی ہیئت کا آغاز جلال الدین اکبر کے زمانے میں ہو چکا تھا شیخ عبدالرحیم بجنوری کو ۱۵۹۰ء میں دربار اکبری سے اودھ کی صوبیداری کا خلعت ملا۔ لکھنؤ پہونچ کر انھوں نے پیر محمد شاہ کے ٹیلے پر "پنچ محلا" تعمیر کیا اور اس کے قریب ہی "شیخین دروازہ" کے نام سے ایک بلند پھاٹک اور "پنچھی بھون" کے نام سے ایک قلعہ بھی بنوایا۔ محمود نگر شاہ گنج اور مرزا منڈی اسی عہد کے محلے ہیں۔ اس زمانے کے سب سے "بھرے پُرے" بازار چوک کے جنوب میں شہنشاہ ہند کے نام سے "اکبری دروازہ" تعمیر ہوا جو آج بھی اس عہد رفتہ کی یاد تازہ کئے ہوئے ہے۔

शेख़ अब्दुर्रहीम का शासन-काल लखनऊ के प्रारम्भिक विकास-काल का सफल नमूना था। उसका मक़बरा[1] "नदान महल" में बना हुआ है जिसे नादानों[2] ने "नादान महल" बना दिया।

शेख़ अब्दुर्रहीम की मृत्यु के उपरान्त एक ओर तो स्वयं शेख़ज़ादों[3] में दो दल बन गये। दूसरी ओर राम नगर के पठानों की शक्ति बढ़ी। "गोल दरवाज़े" तक उनका प्रभाव-क्षेत्र था और "बेली गारद" का इलाका नवहरा के शेखों के अधिकार में था। "मच्छी भवन", "पँच महला" और "मुबारक महला" पूर्ववत शेख़ज़ादों के क़ब्ज़े में थे। एक विचित्र प्रकार की अराजकता और विशृंखलता व्याप्त थी। आये दिन उत्पात मचे रहते; लड़ाई-दंगे, हत्याए, मार-काट—कभी एक पक्ष की शक्ति बढ़ जाती तो कभी दूसरा पक्ष अधिक बल-सम्पन्न हो जाता। कभी एक का पल्ला भारी होता तो कभी दूसरे का। मुग़ल सूबेदारों का न कोई मान था न कोई महत्त्व। मच्छी-भवन के फाटक पर बाँके शेख़ज़ादों ने एक नंगी तलवार लटका रक्खी थी जिसके प्रति सम्मान प्रकट करने पर हर आने वाला बाध्य था। चाहे कोई हो उस तलवार के सामने सर झुकाए बिना "मच्छी भवन" में प्रवेश नहीं पा सकता था।

उसी आतंकपूर्ण काल में, सन् १७३२ ई० में नवाब सआदत ख़ाँ बुरहानुल-मुल्क[4] अवध के सूबेदार बनाकर दिल्ली से भेजे गये। शेख़ज़ादों ने अपने अभ्यास के अनुसार उनकी भी राह रोकी किन्तु उन्होंने बड़ी नीतिज्ञता और कुशलतापूर्वक "मच्छी भवन" पर क़ब्ज़ा कर लिया। और तलवार के एक ही वार में उस नंगी तलवार का आतंक उखाड़ दिया जो वस्तुतः शेख़ज़ादों की सत्ता और उनके प्रभाव की द्योतक थी। बुरहानुलमुल्क की नीतिज्ञता और उनके प्रताप का हाल यह था कि इतना महत्त्वपूर्ण कार्य उन्होंने बिना रक्तपात के कर डाला—किसी की नकसीर तक न फूटी।

बुरहानुलमुल्क अभी कुछ शांति की साँस भी नहीं लेने पाए थे कि सन् १७३९ ई० में नादिर के हमले की ख़बर पहुँची। अपने भाँजे और दामाद सफ़दरजंग को प्रबन्ध सूत्र सौंप कर यह व्यग्रतापूर्वक दिल्ली की ओर भागे किन्तु उनके पहुँचने-पहुँचते दिल्ली का सुहाग लुट चुका था। एक लाख बीस हज़ार मानवीय शरीर रक्त-रंजित धूल में सन चुके थे और पन्द्रह हजार घायल मृत्यु की सिसकियाँ ले

१. मृतक-समाधि। २. अज्ञो। ३. शेख़ के पुत्रों। ४. एक पदवी। शब्दार्थ : देश का अकाट्य तर्क।

شیخ عبدالرحیم کا زمانہ لکھنؤ کے ابتدائی دور ارتقاء کا ایک کامیاب نمونہ تھا ان کا مقبرہ "ندان محل" میں بنا ہوا ہے جسے نادانوں نے "نادان محل" بنا دیا۔

شیخ عبدالرحیم کی وفات کے بعد ایک طرف تو "شیخ زادوں" میں دو گروہ پیدا ہو گئے۔ دوسری طرف رام نگر کے پٹھانوں کا زور بڑھا۔ "گول دروازے" تک ان کا عمل دخل تھا اور بیلی گارد کا علاقہ "شیوخ بہرہ" کے زیر نگیں! مچھی بھون۔ چوک محلا اور مبارک محلا بدستور قدیم شیخ زادوں کے قبضے میں تھے! ایک عجیب افراتفری اور تراج کا عالم تھا آئے دن ہنگامے: جنگ و جدال۔ کشت و خون! کبھی اس کا زور بڑھا تو کبھی اس کا کبھی ایک پلّہ بھاری ہوا تو کبھی دوسرے کا؟ مغل صوبے داروں کی نہ کوئی عزّت تھی نہ وقعت! مچھی بھون کے پھاٹک پر بانکے شیخ زادوں نے ایک ننگی تلوار لٹکا رکھی تھی جس کی تعظیم ہر آنے والے پر واجب و لازم تھی! کوئی شخص بھی اس تلوار کے سامنے سر جھکائے بغیر مچھی بھون میں داخل نہیں ہو سکتا تھا۔ اسی پرآشوب زمانہ ۱۷۳۲ء میں نواب سعادت علی خاں برہان الملک اودھ کے صوبے دار بنا کر دہلی سے بھیجے گئے! شیخ زادوں نے حسب عادت ان کی بھی راہ روکی۔۔۔ مگر انھوں نے بڑے ہی تدبّر اور ہوش مندی سے مچھی بھون پر قبضہ کر لیا اور تلوار کے ایک ہی وار میں اس "ننگی تلوار" کا قلع قمع کر دیا جو شیخ زادوں کے جبروت و اقتدار کی نشانی تھی! برہان الملک کے تدبر اور اقبال کا حال یہ تھا کہ اہم مہم بلا کسی خون خرابے کے سر کر لی کسی کی نکسیر تک نہ پھوٹی!

برہان الملک ابھی امن و سکون کی سانس بھی نہ لینے پائے تھے ۱۷۳۹ء میں نادری حملے کی خبر پہونچی۔ اپنے بھانجے اور داماد صفدر جنگ کو عنانِ انتظام سپرد کر کے یہ بیتابانہ دِلّی کی طرف بھاگے مگر ان کے پہونچتے پہونچتے دلّی کا سہاگ لٹ چکا تھا ایک لاکھ بیس ہزار انسانی لاشیں خاک و خون میں نہا چکی تھیں اور پندرہ ہزار مجروح اور زخمی موت اور زندگی کے دوراہے پر سسکیاں لے رہے تھے۔ برہان الملک ان دلدوز

रहे थे। बुरहानुलमुल्क उन हृदय-विदारक, विभत्स दृश्यों को सहन न कर सके और अभी नादिर दिल्ली ही में था कि उन्होंने जीवन से श्रेयस्कर समझकर मृत्यु का आह्वान कर लिया।

अबुलमनसूर खां सफ़दर जंग का शासन-काल दस वर्ष रहा। वे सन् १७३९ ई० में पदारूढ़ हुए और सन १७५६ ई० में उन्होंने मृत्यु का आलिंगन किया। उनके स्थान पर उनके होनहार सुपुत्र नवाब शुजाउद्दौला मनोनीत हुए। उनके अट्ठारह वर्षीय शासनकाल[1] में कई रक्त-रंजित युद्ध हुए। बक्सर की प्रलयंकर लड़ाई, पानीपत का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण युद्ध और रुहेलों के संघर्ष की घटनाएँ उन्हीं के काल की थीं।

सफ़दरजंग की तरह शुजाउद्दौला ने भी अपना शासन-केन्द्र फ़ैज़ाबाद में ही रक्खा। वे कभी-कभी लखनऊ आ जाया करते थे किन्तु यहाँ जमकर कभी न रहे। इसी कारणवश न तो उन दिनों लखनऊ की आर्थिक प्रगति हुई न सांस्कृतिक।

दुर्रानी, अब्दाली, मराठों और जाटों के निरन्तर आक्रमणों से दिल्ली नष्ट होती चली जा रही थी। अभिजात वर्ग, धनी-मानी लोग, विद्वज्जन और अद्वितीय कलाकार धीरे-धीरे दिल्ली छोड़कर परदेशों[2] में आश्रय ढूंढ़ने निकले जा रहे थे। दक्षिण भारत (हैदराबाद), बंगाल (मुर्शिदाबाद), मैसूर, अवध और अजीमाबाद— यही गिनती के स्थान थे जहाँ भद्रजन के लिए मान-सम्मान भी सुलभ था और आजीविका भी। इन स्थानों पर विद्या एवं ज्ञान का भी मान था और काव्य एवं साहित्य का भी। फ़ैज़ाबाद उन दिनों अवध की राजधानी था और दिल्ली के कितने ही गुणी-जन यहाँ पहुँच गये थे।

लेकिन शुजाउद्दौला की आँख बन्द होते ही बक्सर की लड़ाई में अंग्रेज़ों का भाग्य जाग उठा। दिल्ली का देशव्यापी साम्राज्य निरन्तर आक्रमणों से निश्चेष्ट होकर अन्तिम साँसें गिन रहा था। भारत "तख्ते-ताऊस" के वैभव से विहीन हो चुका था; और तैमूर के वंशजों के प्रताप-सूर्य को राहु ग्रस चुका था। लाल-किले के मुग़ल-शासक अब राजनीति की बिसात के मात्र बेजान मुहरे रह गये थे। जिन्हें कभी सादाते-बारहा, कभी मराठे और रुहेले उंगलियों पर नचा रहे थे।

सन् १७७५ ई० में जब आसिफ़ुद्दौला को शुजाउद्दौला के उत्तराधिकार का

१. व्यवहारिक रूप में सर्वसत्ता सम्पन्न होते हुए भी उनके शासन-काल को सौबाशाह के नाते या परम्परा पालन स्वरूप "मंत्रीत्व-काल" ही कहा जाता था। २. जन्म स्थान के अतिरिक्त सर्वस्व को वह लोग परदेश ही समझते थे।

اور جگر خراش مناظر کی تاب نہ لا سکے اور ابھی نادر دلی ہی میں تھا کہ انھوں نے زندگی پر موت کو ترجیح دی

ابو المنصور خاں صفدر جنگ کا عہد فرمانروائی دس برس تک رہا۔ وہ ۱۷۳۹ء میں برسرِ اقتدار آئے اور ۱۷۵۶ء میں داعی اجل کو لبیک کہا! ان کی جگہ پر ان کے ہونہار فرزند نواب شجاع الدولہ فرمانروا نامزد ہوئے جن کے اٹھارہ سالہ دور وزارت میں کئی خون آشام لڑائیاں ہوئیں۔ بکسر کی قیامت خیز جنگ! پانی پت کا فیصلہ کن معرکہ اور روہیلوں سے نبرد آزمائی انھیں کے عہد کارزار سے تعلق رکھتی ہے۔

صفدر جنگ کی طرح شجاع الدولہ نے بھی اپنا دارالخلافت فیض آباد ہی میں برقرار رکھا۔ کبھی کبھی لکھنو آجایا کرتے تھے۔ جم کر یہاں کبھی نہیں رہے یہی وجہ تھی کہ لکھنو کو نہ اقتصادی ترقیاں نصیب ہوئیں نہ تمدنی!

درانی۔ ابدالی۔ مرہٹے اور جاٹوں کے متواتر حملوں سے دلی برابر تاراج ہوتی چلی جا رہی تھی۔ شرفاء۔ امرا علما اور یگانۂ روزگار ارباب کمال ڈھیر سے ڈھیرے دلی کو خیرباد کہہ کر آوارہ وطن ہوتے جا رہے تھے۔ دکن۔ بنگال۔ میسور۔ مرشدآباد۔ اودھ اور عظیم آباد! اس وقت یہی چند پناہ گاہیں تھیں جہاں شرفا اور اہل کمال کے لئے عزت بھی تھی اور روٹی بھی ـــ! علم و فن کی قدر تھی اور شعروادب کی بھی! فیض آباد ان دنوں اودھ کا پایۂ تخت تھا دلی کے کتنے ہی اہل کمال یہاں پہونچ گئے تھے!

شجاع الدولہ کی آنکھ بند ہوتے ہی بکسر کی لڑائی میں فتح یاب انگریزوں کے نصیب جاگ اٹھے! دلی کی ہندوستان گیر شہنشاہیت۔ درانیوں۔ ابدالیوں۔ مرہٹوں۔ روہیلوں جاٹوں کے متواتر حملوں سے بیجان ہوکر آخری سانسیں لے رہی تھی۔ ہندوستان تخت طاؤس کی آب و تاب سے محروم ہو چکا تھا اور آل تیمور" کا نیر اقبال گہن میں پہونچ چکا تھا

لال قلعہ کے مغل بادشاہ ہندستان کی بساط سیاست پر ایک بے جان مہرے کی طرح رقص کناں تھے! جنھیں کبھی مرہٹے۔ کبھی سادات بارہہ اور کبھی روہیلے انگلیوں پر نچاتے تھے!

अवसर मिला तो अवध और दिल्ली के मध्य उन संधियों की दुर्भेद्य दीवार खड़ी हो चुकी थी जो बक्सर की लड़ाई के बाद अंग्रेज़ों और शुजाउद्दौला के मध्य हुई थीं। कहने को तो आसिफ़ुद्दौला अब भी दिल्ली के अधीनस्थ थे किन्तु व्यावहारिक रूप से वह उस सर्वोच्च सत्ता के प्रभाव-क्षेत्र से मुक्त हो चुके थे। उन्हें अब दिल्ली वालों से अधिक अपने अंग्रेज़ "मित्रों" की इच्छाओं का ध्यान था। आसिफ़ुद्दौला में न तो शुजाउद्दौला जैसी नीतिज्ञता थी न बुद्धिमानी। वीरता और साहसिकता आदि शासकोचित गुणों के स्थान पर उनके स्वभाव ने दयालुता, दानशीलता, सात्विकता और करुणा जैसे अराजनैतिक गुण ग्रहण कर लिये थे। दरबार के वातावरण ने शीघ्र ही उन्हें अपने रंग में रंग लिया। दानशीलता और कृपा के स्रोत उबलने लगे, बाप-दादा की कमाई हुई सम्पत्ति लुटने लगी और वह भी इतनी बेदर्दी के साथ कि राजकीय कोषागार में तृण भी शेष न रहा। जो कुछ वह ले सके उन्होंने माँ से लिया और जब उधर से निराशा हुई तो उनसे रूठ कर अपनी जमी-जमाई बिसात लिये लखनऊ चले आए। आसिफ़ुद्दौला ने जिस शुभ घड़ी में लखनऊ में पदार्पण किया उसके प्रभावस्वरूप यहाँ की दुनिया ही बदल गयी।

इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि लखनऊ के वास्तविक संस्थापक आसिफ़ुद्दौला—मात्र आसिफ़ुद्दौला ही थे। लखनऊ पहुँचकर उन्होंने अपने निवास के लिए "मच्छी भवन" के पास ही "दौलतख़ाना" नामक महल बनवाया। चिनहट का "नुज़हत बख़्श", बबियापुर का महल, "चारबाग़" और "ऐशबाग़" की "कोशकें"[1]—यह सभी आसिफ़ी युग के ऐतिहासिक निर्माण हैं। लेकिन, आसिफ़ुद्दौला के निर्माणकाल की अद्वितीय इमारत एक ही है जो आज भी बड़े इमामबाड़े के रूप में विद्यमान है और निर्माण-कला की एक दुर्लभ उपलब्धि मानी जाती है।

आसिफ़ुद्दौला के निवास स्थान "दौलतख़ाना" नामक महल के आस-पास ही गोमती-तट पर "नया" लखनऊ बसा जिसमें इमामबाड़ा तो है ही, रूमी दरवाज़ा भी अपना अलग गौरव रखता है।

नवाब बुरहानुलमुल्क के ज़माने में ही उनके सरदारों ने अपने नाम से कटरे बसाने शुरू कर दिये थे। "सैयद हुसैन ख़ाँ का कटरा", "ख़ुदायार ख़ाँ का कटरा", "बेज़न बेग ख़ाँ का कटरा", "अबू तुराब ख़ाँ का कटरा", "वफ़ाबेग ख़ाँ का

१. तुर्की शैली के महल।

۱۷۷۵ء میں جب نواب آصف الدولہ کو شجاع الدولہ کی جانشینی کا افتخار حاصل ہوا تو اودھ اور دہلی کے درمیان ان معاہدوں کی آہنی دیوار حائل ہو چکی تھی جو بکسر کی لڑائی کے بعد شجاع الدولہ اور انگریزوں کے مابین براہ راست ہوئے تھے! کہنے کو تو آصف الدولہ اب بھی دلی کے متوسلین میں تھے لیکن عملاً وہ اس اقتدار اعلیٰ سے بہت دور پہونچ چکے تھے۔ انھیں اب دلی سے زیادہ اپنے حلیف انگریزوں کی پاس خاطر کا خیال تھا۔ شجاع الدولہ کی طرح آصف الدولہ میں تدبّر تھا نہ ہوش مندی! شجاعت اور بہادری کے بجائے ان کی فطرت نے رحمدلی۔ فیاضی۔ نیک نفسی اور رقیق القلبی جیسے غیر سیاسی جذبات کو قبول کر لیا تھا۔ درباری ماحول نے جلد ہی انھیں اپنے رنگ میں رنگ لیا۔ داد و دہش اور فیاضی کے چشمے ابلنے لگے۔ باپ دادا کی کمائی ہوئی دولت لٹنے لگی اور اس بے دردی کے ساتھ۔ کہ شاہی خزانے میں بھیروں ناچ گیا۔ جو کچھ لے سکے مال سے حاصل کیا اور جب ادھر سے مایوسی ہوئی تو ان سے روٹھ کر اپنی جمی جمائی بساط سلئے لکھنؤ چلے آئے۔ آصف الدولہ نے جس نیک ساعت سے لکھنؤ میں قدم رکھا یہاں کی دنیا ہی بدل گئی۔

اس حقیقت سے انکار نہیں کیا جا سکتا کہ اس نئے لکھنؤ کے 'اصلی' جنم داتا" آصف الدولہ اور صرف آصف الدولہ ہی تھے! لکھنؤ پہونچ کر آصف الدولہ نے اپنے قیام کے لئے "مچھی بھون" کے قریب ہی "دولت خانہ" کے نام سے ایک محل بنوایا۔ چنہٹ کا "نزہت بخش" بہیاپور کا محل۔ چار باغ اور عیش باغ کی کوٹھیں؟ یہ سب عہد آصفی کی تاریخی تعمیرات ہیں۔ لیکن آصف الدولہ کے تعمیری دور کی یگانہ روزگار عمارت ایک ہی ہے جو آج بھی بڑے امام باڑہ کی شکل میں موجود ہے اور فن تعمیر کا ایک نادر نمونہ تسلیم کیا گیا ہے۔

آصف الدولہ کے رہائشی محل "دولت خانہ" کے گرد و پیش "گومتی ندی کے کنارے" نیا لکھنؤ آباد ہوا جس میں "امام باڑہ" کے علاوہ "رومی دروازہ" ایک روشن منارے کی شان رکھتا تھا۔

نواب برہان الملک کے زمانے میں ان کے سرداروں نے اپنے نام سے "کٹڑے" آباد کرنا شروع کر دئے تھے۔ سید حسین خاں کا کٹڑہ۔ خدا یار خاں کا کٹڑہ۔ بزن بیگ خاں

कटरा" और "मुहम्मद अली ख़ाँ का कटरा"—ये सब उसी ऐतिहासिक युग के प्राचीन मुहल्ले हैं।

आसिफ़ुद्दौला के युग में फ़ैजाबाद उजड़ने और लखनऊ बसने लगा। "नख़ास", "रकाबगंज", "अमानीगंज", "मुफ़्तीगंज", "दौलतगंज", फ़तहगंज", "बेगमगंज", "नवाबगंज", "वज़ीरगंज", "तरमनीगंज", "हसनगंज", "भवानीगंज", "बालकगंज", "अलीगंज", "तहसीनगंज", "ख़ुदागंज", "अम्बरगंज", "महबूबगंज", "ख़यालीगंज", "तोप दरवाज़ा", "अहाता ख़ानसामाँ", "झाऊलाल का पुल", "बावली", "टिकैत राय का बाज़ार", "सूरत सिंह का अहाता", "नगरिया"······गोमती के दक्षिण में दूर तक लखनऊ फैल गया। जिसे जहाँ जगह मिली वहीं बस गया। यहाँ तक कि गोमती पार भी कई मुहल्ले आबाद हो गए।

आसिफ़ुद्दौला अपनी निष्पक्षता, दयालुता, क्षमाशीलता, उदारता और अत्यन्त दानशीलता के सद्व्यवहारों के आधार पर लोकप्रिय व्यक्तित्व रखते थे। अवध का प्रत्येक निवासी—हिन्दू-मुसलमान, धनी-निर्धन—सभी उनसे सचमुच प्रेम रखते थे।

प्रोफ़ेसर मसऊद हसन रिजवी ने अपने "नवाबों का लखनऊ" शीर्षक लेख में कहा है :—

"आसिफ़ुद्दौला के अह्द[1] में लखनऊ में नंगा-भूखा आदमी मुश्किल ही से मिल सकता था। वह ग़रीबों और हाजतमन्दों[2] की ख़बरगीरी[3] इस तरह करते थे कि लखनऊ में यह जुमला[4] एक मसल[5] बन गया था—'जिसको न दे मौला[6], उसको दिलाये आसिफ़ुद्दौला'···और यह तरीक़ा तो आसिफ़ुद्दौला के इन्तक़ाल[7] के बाद भी मुद्दत[8] तक जारी[9] रहा कि लखनऊ के दुकानदार अपनी दुकान खोलते वक़्त और ख़ोनचे[10] वाले ख़ोनचा उठाते वक्त आसिफ़ुद्दौला का नाम लेते थे और 'या[11] आसिफ़ुद्दौला वली'[12] का फ़िक़रा[13] ज़बान पर लाते थे।"

आसिफ़ुद्दौला के प्रभुत्वकाल को राजनैतिक दृष्टि से तो अधिक सफल नहीं कहा जा सकता लेकिन उनका दरबार उस युग का सबसे अधिक जीता-जागता दरबार था। विभिन्न मतों और विपरीत पथगामी दृष्टिकोण के लोगों के सुन्दर

१. युग। २. आवश्यकता-ग्रस्त (अभाव ग्रस्त)। ३. बिना मांग किये आवश्यकता पूरी करने का ध्यान रखना। ४. वाक्य। ५. कहावत। ६. ईश्वर। ७. देहावसान। ८. दीर्घकाल। ९. निरन्तर चलना। १०. खान बड़े थाल को कहते हैं, खानचा छोटे को। अपभ्रंश में 'खोंचा' कहते है। ११. हे, ऐ! १२. सिद्धपुरुष, ईश्वर के साथ अनन्य भाव मे स्थिर हुए लोग। १३. वाक्यांश।

کا کٹرہ ۔ ابوتراب خاں کا کٹرہ ۔ وفا بیگ خاں کا کٹرہ ۔ اور احمد علی خاں کا کٹرہ ۔! یہ سب اسی تاریخی زمانے کے قدیم محلے ہیں ۔

آصف الدولہ کے زمانے میں فیض آباد اجڑا اور لکھنؤ آباد ہو گیا ۔! نخاس ۔ رکاب گنج امانی گنج ۔مفتی گنج ۔ دولت گنج ۔ فتح گنج ۔ بیگم گنج ۔ نواب گنج ۔ وزیر گنج ۔ ترمنی گنج ۔حسن گنج ۔ بھوانی گنج ۔ بالک گنج ۔ علی گنج ۔ تحسین گنج ۔ خدا گنج ۔عنبر گنج ۔ محبوب گنج ۔خیالی گنج ۔ توپ دروازہ ۔ احاطہ خانساماں ۔ جھاؤلال کا پل ۔ باولی ۔ٹکیت رائے کا بازار ۔صورت سنگھ کا احاطہ ۔ نگریا ۔! دریائے گومتی کے جنوب میں دور تک لکھنؤ پھیل گیا ۔جسے جہاں بھی جگہ ملی وہیں بس گیا ۔ یہاں تک کہ گومتی پار بھی کئی محلے آباد ہو گئے ۔!

آصف الدولہ اپنی بے تعصبی کریم النفسی ۔ سیر چشمی ۔ دریا دلی اور فیاضانہ حسن سلوک کے اعتبار سے ایک ہر دلعزیز شخصیت کے مالک تھے ۔ اودھ میں رہنے والے چاہے وہ ہندو ہوں یا مسلمان ! امیر ہوں یا غریب سبھی ان کو دل و جان سے پیار کرتے تھے ۔

پروفیسر مسعود حسن رضوی نے اپنے ایک مضمون (نوابوں کے لکھنؤ) میں لکھا ہے ۔

" آصف الدولہ کے عہد میں لکھنؤ میں ننگا بھوکا آدمی مشکل ہی سے مل سکتا تھا وہ غریبوں اور حاجتمندوں کی خبرگیری اس طرح کرتے تھے کہ لکھنؤ میں یہ جملہ ایک مثل بن گیا تھا ۔

"جس کو نہ دے مولا ـــــ اس کو دے آصف الدولہ"

"اور یہ طریقہ تو آصف الدولہ کے انتقال کے بعد بھی مدت تک جاری رہا کہ لکھنؤ کے دوکان دار اپنی دوکان کھولتے وقت اور خوانچے والے خوانچہ اٹھاتے وقت آصف الدولہ کا نام لیتے تھے اور " یا آصف الدولہ ولی " کا فقرہ زبان پر لاتے تھے ۔"

آصف الدولہ کا عہد اقتدار سیاسی اعتبار سے زیادہ کامیاب زمانہ نہیں کہا جا سکتا لیکن ان کا دربار اپنے زمانے کی سب سے زیادہ جیتی جاگتی سرکار ضرور تھی ۔ اور مختلف عقیدے اور متضاد نظریات کا یہ دربار ایک حسین اور دلکش مرقع تھا ! جہاں نہ ایرانیوں تورانیوں کی باہمی آویزش تھی نہ ہندو مسلمانوں میں کسی قسم کی چشمک !

संयोग का यह दरबार आदर्श रूप था। जहाँ न तो ईरानियों और तूरानियों के आपसी संघर्ष[1] थे न हिन्दू-मुसलमानो में किसी प्रकार का टकराव। संकीर्णता, पक्षपात और अन्धोन्माद का तो नाम तक न था! मुसलमान उमरा[2] तो थे ही; बहुत से महत्त्वपूर्ण पद हिन्दुओं को भी प्राप्त थे। उनमें से कुछ मुख्य लोग: मुंशी साहब, राय राजा शिवकुमार, महाराजा दिग्विजय सिंह, राजा हुलास सिंह, राजा भवानी मेघ सिंह, राजा नवाज सिंह, राजा टिकैत राय, राजा मोती सिंह, राजा झाऊलाल, राजा मेहरा जैसे एक से एक गुणी और अपने युग के सर्वश्रेष्ठ लोग—राजनीतिज्ञ, नीतिपरायण प्रशासक, विद्वान, वीर और युद्ध कला के विशारद महारथी, ललित कलाओं के पारंगत शास्त्री, तलवार के धनी—सभी प्रकार के गुणी यहाँ एकत्र हो गए थे।

दिल्ली से सम्बन्ध-विच्छेद के उपरान्त अवध की संस्कृति ने जो नया चोला बदला उससे हमारा रहन-सहन, हमारी सभ्यता-संस्कृति सभी प्रभावित हुए। भाषा और साहित्य पर भी इसका गहरा असर पड़ा और रीति-रिवाज, आचार-व्यवहार के सभी क्षेत्रों तक इसकी व्यापक प्रभावकारिता स्पष्ट झलक उठी। दरबारी शिष्टाचार में भी एक विशेष प्रकार का गौरव उत्पन्न हुआ। अभिजात वर्ग और जन-सामान्य के मध्य प्रेम और पारस्परिक सद्भावनाओं का नया संबंध स्थापित हुआ। और, धीरे-धीरे एक बिलकुल नया समाज बन गया जिसमें रोगियों के प्रति सेवा-भाव, दीन-दुखियों से प्रेम और सहानुभूति, पड़ोसियों के पारस्परिक सद्भाव पर निर्भर अधिकार; और अनाथों, और विधवाओं के प्रति कर्तव्य के बन्धनों से नये सामाजिक मूल्य पुनः स्थापित हुए। हर वर्ग में सम्पूर्ण एकीभाव और सबका पारस्परिक मेल-जोल वह बातें थीं जो उस समाज का प्राण कही जा सकती हैं। मुँह बोले रिश्तों का सांस्कृतिक और भावनात्मक महत्त्व इतना अधिक था कि अवध में शताब्दियों तक किसी प्रकार की साम्प्रदायिक अशान्ति नहीं उत्पन्न हुई। और यह बात केवल आसिफ़ुद्दौला तक ही सीमित नहीं थी, अवध के सभी शासकों के कार्यकाल में समान रूप से पायी जाती थी; कि, उन दिनों न तो किसी प्रकार के साम्प्रदायिक दंगे हुए न धर्म के नाम पर लज्जाजनक लड़ाइयाँ दिखाई दीं।

फारसी उस युग में विद्याओं की माध्यम, साहित्यिक और सरकारी भाषा थी।

१. विशेष विवरण के लिए कृपया श्री हसन वासिफ़ उस्मानी का लेख देखें। २. अमीर केवल धनवान ही नहीं बल्कि अधिकारी होते थे। उमरा बहुवचन है।

تعصب تنگ نظری اور کور باطنی کا نام تک نہ تھا۔ مسلمان امرا تو تھے ہی۔ بہت سے کلیدی عہدے ہندوؤں کے ہاتھ میں بھی تھے منشی صاحب رائے راجہ شیو کمار۔ مہاراجہ ٹکیت سنگھ۔ راجہ ہولاس سنگھ۔ راجہ بھوانی میگھ سنگھ۔ راجہ نواز سنگھ۔ راجہ ٹکیت رائے۔ راجہ موتی سنگھ۔ راجہ جھاؤ لال۔ راجہ مہرا جیسے ایک سے ایک یگانۂ روزگار۔ سیاست داں، اہل قلم، اہل سیف، فنون لطیفہ کے ماہر تلوار کے دھنی یہاں موجود تھے۔

دلی سے قطع تعلق کے بعد اودھ کے معاشرے نے جو نیا چولا بدلا اس نے ہماری معاشرت کو بھی متاثر کیا اور تہذیب کو بھی! زبان پر بھی اس کا اثر پڑا اور ادب پر بھی۔ رہن سہن کے طریقوں میں بھی تبدیلی ہوئی اور رسم و رواج میں بھی۔ درباری آداب و ملحوظات میں ایک قسم کا تنوع پیدا ہوا۔ خواص اور عوام کے درمیان خلوص و محبت کا ایک نیا رشتہ قائم ہوا۔ اور دھیرے دھیرے نیا سماج جنم پا گیا! جس میں غریبوں سے پیار بھی تھا اور بیماروں سے ہمدردی کا جذبہ بھی! پڑوسیوں اور ہمسایوں کے بھی حقوق تھے اور لاوارث یتیموں اور بیواؤں کی ذمہ داریاں بھی! تمام فرقوں میں باہمی میل جول اور اتحاد اس نئے سماج کی روح تھا۔ منھ بولے رشتے اس دور کی وہ جاندار قدریں تھیں جنھوں نے صدیوں اودھ کو فرقہ وارانہ ہنگاموں سے دور رکھا! آصف الدولہ ہی پر کیا منحصر اودھ کے تمام فرماں روا اور تاجداروں کے دور حکومت کو یہ خصوصیت حاصل ہے کہ ان کے عہد میں نہ کبھی فرقہ وارانہ فسادات ہوئے اور نہ مذہب کے نام پر شرمناک لڑائیاں——!

فارسی اس زمانے کی علمی۔ ادبی اور سرکاری زبان تھی۔ شاہی کارخانے کا ذکر کیا۔ ہندو مسلمانوں کی ہر چھوٹی بڑی سرکار کا تمام دفتری نظام فارسی میں تھا۔ منشی۔ متصدی۔ دیوان۔ داروغہ۔ سبھی فارسی زبان کے ماہر ہوتے تھے حساب کتاب کا کام عام طور پر کائستھوں کے

शाही कारख़ाने की क्या चर्चा—हिन्दू-मुसलमानों की हर छोटी-बड़ी सरकार का समस्त प्रशासन फ़ारसी में चलता था। मुंशी, मुतसद्दी, दीवान, दारोग़ा—सभी फ़ारसी भाषा में कुशल होते थे। हिसाब-किताब का काम सामान्यतया कायस्थों के लिए विशेष था जिनमें एक से एक योग्य गणितज्ञ और गद्यकार थे। लेखन की "मुंशियाना" शैली पहले ही प्रचलित हो चुकी थी। लेकिन इस शैली का उपयोग अधिकतर प्रबन्धात्मक और "माल" के मामलों में किया जाता था। गद्य-लेखन की कला मात्र "वक़ायानिगारों"[1] और "अख़बारनवीसों"[2] तक ही सीमित नहीं थी बल्कि विद्यानुरागवश और साहित्य-रचना के उद्देश्य से भी पर्याप्त लेखन होता था। प्राचीन गद्यकारिता के अपूर्व नमूने आज भी उस विद्यानुरागी युग की गौरवगाथा याद दिलाते हैं। मुल्ला मुहम्मद "फ़ायक़" की "इन्शा-ए-फ़ायक़" उस युग की उच्चकोटि की गद्य का उदाहरण है।

सामान्य बोल-चाल की भाषा में भी परिवर्तन आरम्भ हो गए थे और उर्दू तेजी से फ़ारसी का स्थान लेती जा रही थी। फिर भी शिक्षित वर्ग और सामान्य-जन की भाषा में एक प्रकार का स्पष्ट अन्तर अवश्य था। फ़ारसी की तरह उर्दू की देख-रेख, परिष्कार और शुद्धि में भी रुचि उत्पन्न हो गई थी। विद्वज्जन और भाषाविद् इस नयी भाषा को क्षेत्रगत सामान्यता से पृथक रखने की विशेष भावना रखते थे। जिस प्रकार दिल्ली में लाल किले की भाषा को टकसाली[3] और प्रामाणिक भाषा का स्थान प्राप्त था उसी प्रकार लखनऊ के असंख्य परिवारों ने इसकी भाषागत विशेषताओं की सुरक्षा को अपना कर्तव्य बना लिया। स्वयं आसिफ़ुद्दौला को इस नयी भाषा की प्रगति से विशेष लगाव था।

इस युग में भाषा में बहुत से सुधार हुए। बहुत से मुहावरे बदले गए और

१. हर महत्वपूर्ण स्थान पर गुप्त रूप से कुछ लोग नियुक्त होते थे जो समस्त घटनाओं की वास्तविक सूचनाएं केन्द्र को भेजा करते थे। उनकी रिपोर्टों का बड़ा राजनैतिक एवं प्रशासनिक महत्व होता था। २. अख़बारनवीस भी इसी प्रकार समाचार देने का कार्य करते थे। किन्तु इनके कार्य का महत्त्व थोड़ा कम था। ३. संस्कृत आदि प्राचीन भाषाओं में व्याकरण के नियमों का कड़ाई से पालन किया जाता था, व्याकरण भाषा की समस्त आवश्यकताएं पूरी करने वाली, अर्थात् सर्वांगपूर्ण होती थी और व्याकरण-सम्मत न होने पर किसी भी प्रयोग को मान्यता नहीं प्राप्त हो सकती थी। किन्तु जिन भाषाओं का गठन इतना नियमित नहीं उनके लिए नया ढंग यह माना गया था कि स्थान विशेष के प्रचलन को शुद्ध एवं प्रामाणिक माना जाए। और शब्दों एवं भाषा के प्रयोग में उस स्थान को वही महत्त्व दिया जाय जो सिक्कों के मामले में टकसाल को होता है। उस स्थान-विशेष सामान्य प्रचलन प्रामाणिक माना जाता है। लाल क़िले की भाषा इसी आधार पर प्रामाणिक मानी जाती थी।

لئے مخصوص تھا جن میں ایک سے ایک قابل حساب داں اور انشا پرداز موجود تھے منشیانہ طرز تحریر اس سے پہلے ہی رواج پا چکی تھی لیکن اس کا استعمال زیادہ تر مالی اور انتظامی معاملات میں کیا جاتا تھا انشا پردازی کا فن وقائع نگاروں اور اخبار نویسوں تک محدود نہیں تھا بلکہ اس کی علمی اور ادبی اہمیت بھی تھی۔ قدیم انشا پردازی کے نادر نمونے آج بھی اس علمی دور کے شاندار کارناموں کی یاد دلاتے ہیں۔ ملّا محمد فائق کی "انشائے فائق" اسی زمانے کی انشا پردازی کا اعلا نمونہ ہے۔

عام بول چال کی زبان بھی بدلنا شروع ہو گئی تھی "اردو" تیزی کے ساتھ فارسی کی جگہ لیتی چلی جا رہی تھی پھر بھی عوام اور خواص کی زبان اور لب و لہجے میں ایک خاص قسم کا امتیاز تھا۔ فارسی کی طرح اردو کی دیکھ ریکھ سے بھی دلچسپی پیدا ہو چلی تھی؛ اہل علم اور اہل زبان اس نئی زبان کو علاقائی عمومیت سے ممتاز و ممیز رکھنے کا ایک خاص جذبہ رکھتے تھے جس طرح دلّی میں لال قلعہ کی زبان کو ٹکسالی اور مستند زبان کا درجہ حاصل تھا اسی طرح لکھنؤ کے بیشمار خاندانوں نے اس کی لسانی اہمیت کی نگہداشت اپنا فریضہ بنا لیا تھا۔ خود آصف الدولہ کو نئی زبان کی ترقی سے خاص لگاؤ تھا۔

اس دور میں زبان میں بہت سی اصلاحات ہوئیں بہت سے محاورے بدل گئے اور زبان کے قواعد میں بھی تبدیلیاں ہوئیں انداز تخاطب میں بہت سی تبدیلیاں ہوئیں آداب بندگی اور کورنش کے ساتھ "تسلیم" میں کچھ زیادہ مٹھاس محسوس کی گئی۔ "تم اور آپ" میں ایک قسم کا سلیقہ پیدا کر کے "آپ کدھر جاؤ گے" متروک قرار دیا گیا اس کی جگہ پر "کدھر جائیں گے" کو رواج دیا گیا۔

शब्दों का रूप भी बदला। सम्बोधन के शब्दों में भी परिष्कार हुआ। "आदाब", "बन्दगी" और "कोरनिश" के साथ "तस्लीम" में कुछ अधिक मिठास प्रतीत हुई। "तुम" और "आप" में एक प्रकार का सलीक़ा पैदा करके "आप किधर जाओगे" जैसे प्रयोग निषिद्ध हुए और "आप किधर जाएंगे" का प्रचलन हुआ।

इन्हीं दिनों शब्दों के लिंग-निर्णय के सम्बन्ध में भी कुछ विशेष बातों पर ध्यान रक्खा गया। कुछ शब्दों का प्रयोग माधुर्य आदि की दृष्टि से निषिद्ध हुआ और कुछ नये शब्द प्रचलित हुए। धीरे-धीरे लखनऊ इस नयी भाषा के सुधार-आन्दोलन का सबसे बड़ा केन्द्र बन गया। शेख़ इमामबख़्श "नासिख़" जिन्हें इस सुधार आन्दोलन का नेता कहा जाता है उसी युग में पले थे। उन्होंने "मीर" और मिर्ज़ा (सौदा) दोनों का युग देखा था। "इंशा" और "क़तील" जैसे धुरन्धर उनकी दृष्टि में थे।

शिक्षा की प्रगति में उस युग को क्या स्थान मिला इस का विस्तृत विवरण तो दुर्लभ है। फिर भी जो कुछ ज्ञात है वह यह कि मकतब और पाठशाले स्थान-स्थान पर स्थापित थे। इसके अतिरिक्त विद्वज्जन व्यक्तिगत रूप से भी जन-कल्याण के भाव से शिक्षा दिया करते थे। इसका किसी प्रकार का पारिश्रमिक लेना वे अपमानजनक समझते थे। जो लोग शिक्षा देकर आजीविका अर्जित करते थे उनका दृष्टिकोण भी व्यवसायिक नहीं था। ऐसे शिक्षकों की आवश्यकता पूर्ति अमीर और रईस लोग करते थे। उनका विशेष मान-सम्मान उस युग की सबसे बड़ी विशेषता थी। लगभग हर मस्जिद-मन्दिर के साथ एक मकतब-पाठशाला हुआ करते थे।

लखनऊ का सबसे बड़ा शिक्षालय "फ़िरंगीमहल" मुल्ला निज़ामुद्दीन मुहालवी के संरक्षण मे औरंगज़ेब आलमगीर के युग में स्थापित हुआ था। लेकिन आसिफ़ुद्दौला के युग तक इस विद्यालय से दूर-दूर के लोग ज्ञान-लाभ करने लगे थे और इसकी ख्याति दूर-दूर जा पहुँची थी। इस महान् विद्यालय ने अपना कार्यक्षेत्र केवल इस्लामी शिक्षाओं तक ही सीमित न रक्खा था। अरबी-फ़ारसी आदि भाषाओं के (शुद्ध भाषा की दृष्टि से) विकास में भी इसका बड़ा हाथ था। इल्मे-कलाम (जो दार्शनिक सिद्धान्तों के आधार पर धर्म की व्याख्या करता था), दर्शन-शास्त्र, तर्क-शास्त्र आदि पर उस युग में प्रचलित अन्य विषयों की अपेक्षा कुछ अधिक ध्यान दिया जाता था। "फ़िरंगीमहल" ने परम्परागत धार्मिक ज्ञान की तरह अन्य विद्याओं को भी प्रश्रय दिया था।

تذکیر و تانیث میں کچھ تفریق ہوئی۔ محاورات بدلے گئے۔ بہت سے الفاظ متروک قرار دئے گئے۔ کچھ نئی اصطلاحوں نے مناسب جگہ حاصل کی۔ رفتہ رفتہ لکھنؤ اس نئی زبان کی اصلاحی تحریک کا سب سے بڑا مرکز بن گیا۔ شیخ امام بخش ناسخ جنھیں زبان کی اصلاحی تحریک کا قائد کہا جاتا ہے اسی دور کے پروردہ تھے انھوں نے میرؔ کا زمانہ بھی دیکھا تھا اور میرزا کا بھی! انشا اور قتیلؔ جیسے باکمال ان کی نگاہوں میں تھے۔

تعلیمی ترقیوں میں اس زمانے کو کتنا حصہ ملا؟ اس کے شواہد و آثار پر بہت کچھ گم نامی کے پردے پڑے ہوئے ہیں۔ مکتب اور پاٹھ شالے جگہ جگہ قائم تھے اس کے علاوہ اہل علم اپنے طور بھی درس و تدریس کا کام مفاد عامہ کی خاطر انجام دیا کرتے تھے اور اس سلسلے میں کسی قسم کی اجرت یا معاوضہ لینا کسر شان سمجھتے تھے۔ جو لوگ معلمی کو بطور پیشہ اختیار کئے ہوئے تھے ان کا نقطۂ نظر بھی کاروباری نہیں تھا پیشہ ور معلموں کی سرپرستی عام طور سے امرا اور روسا کیا کرتے تھے اور ان کی عزت و تکریم اس زمانے کی سب سے بڑی خصوصیت تھی۔ تقریباً ہر مسجد اور مندر کے ساتھ ایک مکتب اور پاٹھ شالہ منسلک تھا۔

لکھنؤ کی سب سے بڑی علمی درس گاہ "فرنگی محل" ملا نظام الدین سہالوی کی سرپرستی میں بعہد اورنگ زیب عالمگیر قائم ہوئی تھی لیکن آصف الدولہ کے عہد تک اس کے علمی فیضان کی شہرت ہندوستان سے باہر جا چکی تھی! اس عظیم درس گاہ نے اپنا دائرۂ عمل اسلامی تعلیمات ہی تک محدود نہیں رکھا بلکہ عربی اور فارسی کی لسانی ترقیوں میں بھی اس کا بہت بڑا ہاتھ رہا۔ علم الکلام۔ فلسفہ اور منطق اس دور کے مروجہ علوم میں ایک خاص اہمیت رکھتے تھے "فرنگی محل" نے علوم منقول کی طرح معقولات کی

यूं तो कर्बला की दारुण-दुर्घटना[1] की याद किसी न किसी ढंग से सभी युगों में मनाई जाती रही है लेकिन भारतवर्ष में दक्षिण के "शीया" मतावलम्बी राजवंशों के बाद "अज़ादारी" (कर्बला की दुर्घटना का शोक मनाना) जिस प्रकार प्रचलित हुआ उसकी जैसी बात कहीं अन्यत्र नहीं मिलती। अवध में ताज़ियादारी की प्रथा तैमूर के स्थापित किये हुए उस ताज़िये से पूर्व भी पायी जाती थी जिसके विषय में इतिहासविद् एकमत हैं कि वह दुर्घटनाग्रस्त इमाम साहब के रौजे[2] की पहली नकल थी। खैराबाद[3] (ज़िला सीतापुर) अब तो खराबाबाद बन चुका है लेकिन अवध के नवाबों के युग में इसे निज़ामत (कमिश्नरी) का केन्द्र माना जाता था। यूसुफ़ ख़ाँ ग़ाज़ी ने अपने सगे मामा सुल्तान मसऊद गजनवी (सुल्तान महमूद गजनवी के पुत्र) के शासनकाल में इस पर अधिकार किया था। उनका मज़ार[4] भी यहीं है। आशूरा[5] के दिन अस्र[6] के वक्त उसी मज़ार से बावन डण्डे का ताज़िया उठता है। कहा जाता है कि ताज़ियादारी के इतिहास में यह वह पहला ताजिया है जो तैमूर के ताज़िये के पहले ही रक्खा गया था। आज भी जब कि शताब्दियाँ बीत चुकी हैं यह नियमित रूप से रक्खा जाता है और पूर्ववत उठता है। इस ताज़िये की बनावट और आकृति सामान्य रूप से प्रचलित ताज़ियों और ज़रीहों[7] से भिन्न है।

अन्याय-ग्रस्त इमाम साहब[8] का शोक मनाने से आसिफ़ुद्दौला को विशेष लगाव था और उसके प्रभाव आज भी किसी-न-किसी सीमा तक लखनऊ में विद्यमान हैं। मुहर्रम का चाँद देखते ही हर अज़ाख़ाने[9] और इमामबाड़े में कर्बला की दुर्घटना की याद मनाने के लिए शोक-सभाएं (मातम के आयोजन) होती हैं। काला—शोक का प्रतीक वस्त्र और हरे कपड़े पहन लिये जाते हैं और सभी इमामबाड़ों में चाँदी-सोने के अलम[10] और ताज़िये या ज़रीहें बड़े सम्मान से रख दिये जाते हैं।

१. इस्लाम के प्रवर्तक हज़रत मुहम्मद साहब के नाती—हज़रत इमाम हुसैन को, अत्याचारी शासक "यज़ीद" को सत्ता को धर्म-सम्मत न मानने के अपराध में, भूखा प्यासा रखकर उनके कुल बहत्तर साथियों सहित, यजीद की सेना ने अत्यन्त निर्दयतापूर्वक कर्बला के मैदान में मार डाला था। २. पवित्र पुरुष की क़ब्र। ३. खैराबाद कहते हैं उस स्थान को जो शुभत्व का स्थान हो, ख़राबाबाद—उजड़े-पुजड़े स्थल को कहा जाता है। ४. बुज़ुर्ग को क़ब्र। ५. दशम; हिजरी सन् के पहले महीने मुहर्रम की दशमी इसी दिन कर्बला में हज़रत हुसैन की अत्यन्त अमानुषिक हत्या हुई थी। ६. तीसरे पहर लगभग ४-५ बजे दिन। ७. एक विशेष प्रकार को ताज़िया सामान्य अर्थ-क़ब्र। ८. हज़रत हुसैन। ९. शोक भवन, वह विशेष इमारतें जो इमाम साहब की याद मनाने के लिए ही विशिष्ट कर दी जाती हैं। १०. ध्वजा; हजरत इमाम हुसैन की ध्वजा की अनुकृति।

بھی سرپرستی کی!

یوں تو واقعہ کربلا کی المناک یاد کسی نہ کسی نہج سے ہر اسلامی دور میں منائی جاتی رہی ہے لیکن ہندوستان میں دکن کی شیعہ ریاستوں کے بعد جس اہتمام کے ساتھ لکھنو میں عزاداری نے رواج پایا اس کی مثال کہیں اور نہیں ملتی۔ اودھ میں تعزیہ داری کا وجود تیمور کے بنا کردہ اس تعزیہ سے بھی قبل ملتا ہے جس کی نسبت مورخین یک زبان ہیں کہ روضۂ امام مظلوم کی یہ پہلی نقل ہے۔ خیرآباد (ضلع سیتاپور) نوابین اودھ کے دور میں اس کو نظامت (کمشنری) کا درجہ حاصل تھا۔ یوسف خاں غازی نے اپنے حقیقی ماموں سلطان مسعود غزنوی (ابن محمود غزنوی) کے زمانے میں اسے فتح کیا تھا ان کا مزار بھی یہیں ہے اور عاشورہ کے دن عصر کے وقت اسی مزار سے "بادن ڈنڈے کا تعزیہ" اٹھتا ہے۔ کہا جاتا ہے کہ یہ تعزیہ تمام دنیا کی تاریخ عزاداری میں وہ پہلا تعزیہ ہے جو تیمور کے تعزیہ سے پہلے رکھا گیا تھا اور آج کئی سو سال سے اپنے مقررہ وقت پر پابندی کے ساتھ رکھا جاتا ہے اور حسب دستور قدیم اٹھتا ہے اس تعزیہ کی شکل و مشابہت ان عام تعزیوں اور ضریحوں سے مختلف ہے جو ہندوستان میں رائج ہیں۔

عزاداریٔ امام مظلوم سے آصف الدولہ کو خاص لگاؤ تھا اس کے اثرات آج تک نہ کچھ موجود ہیں۔ محرم کا چاند دیکھتے ہی ہر عزاخانے اور امام باڑہ میں واقعۂ کربلا کی یاد منانے کے لئے صف ماتم بچھ جاتی ہے سیاہ ماتمی لباس سبز کپڑے زیب تن کر لئے جاتے ہیں اور تمام امام باڑوں میں چاندی سونے کے علم اور تعزیے یا ضریحیں احترام کے ساتھ رکھ دی جاتی ہیں۔

आसिफ़ी-युग में केवल दस दिनों तक मुहर्रम का शोक मनाया जाता था। बारह मुहर्रम को हज़रत इमाम का "सोयम"[1] मनाकर शोक समाप्त कर दिया जाता था लेकिन नवाब नसीरुद्दीन हैदर के ज़माने से शोक के दिनों में लगभग एक मास का समय बढ़ा दिया गया। अर्थात् अब इमाम साहब के चेहलुम[2] के बाद शोकावधि समाप्त होती थी।

जिस प्रकार लखनऊ की स्थापना का वास्तविक श्रेय आसिफ़ुद्दौला को है उसी प्रकार यहाँ के मुहर्रम और अज़ादारी को भी उनकी आस्था पर ही निर्भर समझना चाहिए। इसका जीता-जागता प्रमाण वह इमामबाड़ा है जो स्थापत्य-कला की दृष्टि से एक विस्मय समझा जाता है। मोलवी अब्दुल हलीम "शरर" ने "गुज़श्ता लखनऊ" में लिखा है—

"सन् १७८४ ई० में लखनऊ में क़हत[3] पड़ गया था और शुरफ़ा-ए-शहर[4] तक फ़ाक़ाकशी[5] में मुब्तिला[6] थे। उस नाज़ुक[7] मौक़े पर रिआया[8] की दस्तगीरी[9] के लिए इमामबाड़े की इमारत छेड़ दी गई। चूँकि शरीफ़ लोग दिन को मज़दूरी करने में अपनी बेइज़्ज़ती ख़याल करते थे इसलिए तामीर[10] का काम दिन की तरह रात को भी जारी रहता और ग़रीब-व-फ़ाक़ाकश शुरफ़ा-ए-शहर रात के अँधेरे में आके मज़दूरी में शरीक हो जाते और मशअलों[11] की रोशनी में काम करते।

"किफ़ायतुल्लाह नामक एक बेमिस्ले-ज़माना[12] मेमार[13] का नक़्शा पसन्द किया और उसी के मुताबिक़ इमारत बनना शुरू हो गई जो १६७ फ़ीट लम्बी और ५२ फ़ीट चौड़ी है। ईंट और निहायत[14] आला[15] दर्जे के चूने से यह इमारत बनाई गई जिसमें फ़र्श से छत तक लकड़ी (और लोहे) का नाम नहीं है। इस इमारत को शाहाने-मुग़लिया[16] की संगीन[17] इमारतों से किसी क़िस्म का तअल्लुक़[18] नहीं है। लखनऊ में उस कसरत[19] से संगमरमर दस्तयाब[20] नहीं हो सकता था। लेकिन, इमामबाड़ा और आसिफ़ुद्दौला की दूसरी इमारतों को

१. मृत्यु के तीसरे दिन एक प्रकार का संस्कार होता है जिसमें मृतक को शान्ति प्रदान करने के लिए पुण्यकर्म आदि होते हैं। इस संस्कार के दिन को भी याद मनाई जाती है। मानो यह घटना इसी वर्ष की हो। २. चालीसवें दिन एक प्रकार से श्राद्ध होता है। ३. अकाल। ४. सम्भ्रान्त नागरिक। ५. उपवास। ६. फँसे। ७. गम्भीर। ८. प्रजा। ९. सहायता। १०. निर्माण। ११. अपभ्रंश रूप "मशाल"। १२. लोक में अद्वितीय। १३. निर्माता, गृह निर्माण के कारीगर, राज। १४. अत्यन्त। १५. उच्चकोटि। १६. मुग़ल सम्राटों। १७. प्रस्तर निर्मित। १८. सम्बन्ध। १९. आधिक्य। २०. प्राप्य।

عہد آصفی میں صرف دس روز تک محرم کا سوگ منایا جاتا تھا۔ بارہ محرم کو امام کا "سوئم" منا کر سوگ بڑھا دیا جاتا تھا لیکن نواب نصیر الدین حیدر کے زمانے سے "زمانہ غدر" میں تقریباً ایک مہینے کا اضافہ کر دیا گیا یعنی اب امام مظلوم کے چہلم کے بعد سوگ بڑھایا جاتا تھا۔

جس طرح لکھنؤ کی بنیاد آصف الدولہ کی خوش نیتی کی رہین منت ہے اسی طرح یہاں کا محرم اور عزاداری بھی ان کے جذبہ عقیدت کا نتیجہ ہے اور اس کا جیتا جاگتا ثبوت ان کا تعمیر کردہ وہ "امامباڑہ" ہے جو فن تعمیر کا عجوبہ سمجھا جاتا ہے۔ مولانا عبدالحلیم شرر مرحوم نے گذشتہ لکھنؤ میں لکھا ہے۔

> ۱۷۸۴ء میں اودھ میں قحط پڑ گیا تھا اور شرفائے شہر تک فاقہ کشی میں مبتلا تھے اس نازک موقع پر رعایا کی دستگیری کے لئے امام باڑہ کی عمارت چھیڑ دی گئی۔ چونکہ شریف لوگ دن کو مزدوری کرنے میں اپنی بے عزتی خیال کرتے تھے اس لئے تعمیر کا کام دن کی طرح رات کو بھی جاری رہتا اور غریب و فاقہ کش شرفاء شہر رات کے اندھیرے میں آ کے مزدوروں میں شریک ہو جاتے اور مشعلوں کی روشنی میں کام کرتے۔
>
> کفایت اللہ نام کا ایک بے مثل زمانہ معمار کا نقشہ پسند کیا اور اسی کے مطابق عمارت بننا شروع ہو گئی جو ۱۶۷ فٹ لمبی اور ۵۲ فٹ چوڑی ہے اینٹ اور نہایت اعلیٰ درجے کے چونے سے یہ عمارت بنائی گئی جس میں فرش سے چھت تک لکڑی اور لوہے کا نام نہیں ہے اس عمارت کو شاہان مغلیہ کی سنگین عمارتوں سے کسی قسم کا تعلق نہیں ہے لکھنؤ میں اس کثرت سے سنگ مرمر دستیاب نہیں ہو سکتا تھا۔ لیکن "امام باڑہ" اور آصف الدولہ کی دوسری عمارتوں کو

देखिये तो एक नयी खुशनुमायी[1] और निराली अजमत-वो-शान[2] रखती हैं। इमामबाड़े की लदाव[3] की छत जो कड़ा[4] दे के बनायी गयी है इतनी बड़ी है कि इतनी बड़ी लदाव की छत सारी दुनिगा में कहीं नहीं है और इसी वजह से यह भी दुनिया की अजूब-ए-रोज़गार[5] कारीगरियो में शुमार[6] की जाती है।"

आसिफ़ी-युग और उसके बाद के निर्माण अधिकतर लखौरी ईंटों और बड़े ही मूल्यवान मसालों से हुए हैं। उन दिनों सीमेण्ट का आविष्कार नहीं हुआ था। अब से पचीस-तीस वर्ष पूर्व निर्माण-शास्त्र के विशेषज्ञों ने बड़ी खोज के उपरान्त पता लगाया था कि उस युग की बनी हुई इमारतों की मज़बूती और स्थायित्व का रहस्य केवल चूने को फूंकने और बनाने की कला में ही नहीं, बल्कि, उन दिनों सीमेण्ट के स्थान पर एक विशेष वस्तु काम में लाई जाती थी जिसके मिश्रण में बेल का गूदा और माश (उड़द) का आटा सबसे महत्त्व के तत्त्व थे।

उस इमामबाड़े की एक और विशेषता ऐसी है जिसकी चर्चा "शरर" से कदाचित भूल से रह गई है। इसके ऊपरी भाग में एक "भूल-भुलैयाँ" भी बनाई गई है जिसके सैकड़ों दरों में फँसकर आदमी रास्ता भूल जाता है। कहा जाता है कि इस इमारत के नीचे भी इसी प्रकार की भूल-भुलैयाँ और तहख़ाने बने हुए हैं जिनमें अवध के शासकों के गुप्त कोष सुरक्षित रक्खे जाते थे। कहा जाता है कि सन् १८५७ ई० के विप्लव के उपरान्त अग्रेज़ों ने इसका कोना-कोना छान मारा लेकिन कुछ भी हाथ न लगा, थक हार कर बैठ रहे। और, उन्होंने इस भूल-भुलैयाँ के रास्तों को चुनवा दिया। लखनऊ-स्थापत्य पर दिल्ली और आगरे का बहुत प्रभाव पड़ा है; बल्कि यूं समझना चाहिए कि यहाँ कुशल इंजीनियरों और योग्य निर्माताओं ने नई खोजें करके निर्माण-कला की नई शैली को प्रचलित किया जो पूर्वी स्थापत्य कला की अपेक्षा पश्चिमी स्थापत्य कला-शैली से अधिक निकट है।

वंश-परम्परा की दृष्टि से लखनऊ के नवाब ईरानी नस्ल के थे इसलिए उनकी सभ्यता और उनका रहन-सहन मुग़लों से कुछ अधिक भिन्न नहीं था। विशेषतः बावर्चीखानों के व्यवस्था-वैभव में बहुत कुछ मुग़ल दरबार से मिलता-जुलता था यद्यपि इसमें भी सुधार और संशोधन हुए। पाक-शास्त्र या पाक कला का अब तक

१. देखने में सुन्दर। २. गौरव और आभा। ३. बिना कड़ा दिये, केवल मसाले लादकर बनाई गई छत लदाव की छत कही जाती थी। ४. कड़ा या शहतीर जो छत का भार सम्भालता है। ५. लोक मे अनोखा। ६. गिनी।

دیکھئے تو ایک نئی خوشنمائی اور نرالی عظمت و شان رکھتی ہیں ۔
امام باڑہ کے لداؤ کی چھت جو کڑا دے کے بنائی گئی ہے اتنی بڑی ہے کہ اتنی بڑی لداؤ کی چھت ساری دنیا میں کہیں نہیں ہے اور اسی وجہ سے یہ بھی دنیا کی عجوبہ روزگار کاری گریوں میں شمار کی جاتی ہے۔"

عہد آصفی اور اس کے بعد کی تعمیرات زیادہ تر "لکھوری اینٹوں" اور بڑے قیمتی مصالحوں سے بنائی گئی ہیں ۔ اس وقت تک "سیمنٹ" کی دریافت نہیں ہوئی تھی ۔ اب سے پچیس تیس سال قبل ان قدیم عمارتوں کے ماہرین تعمیرات نے کافی ریسرچ اور تحقیق کے بعد یہ پتہ لگایا تھا کہ اس دور کی بنی ہوئی عمارتوں کی پائیداری کا راز صرف "چونے" کے پھونکنے اور بنانے کا ہنر نہیں بلکہ اس زمانے میں "سیمنٹ" کی جگہ پر ایک خاص چیز استعمال کی جاتی تھی جس کے مرکب میں "بیل" کا گودا اور ماش کا آٹا سب سے اہم جزو تھے۔

اس امام باڑے کی ایک اور خصوصیت ایسی ہے جس کا تذکرہ شرر سے سہواً رہ گیا ہے ۔ اس کے بالائی حصے میں ایک "بھول بھلیاں" بھی بنائی گئی ہے جس کے سیکڑوں دروں میں پھنس کر آدمی راستہ بھول جاتا ہے ! کہا جاتا ہے کہ اس امام باڑے کے نیچے بھی اس قسم کی ایک "بھول بھلیاں" اور تہ خانے بنے ہوئے ہیں جس میں شاہان اودھ کے خفیہ خزانے محفوظ کئے جاتے تھے ۔ بیان کیا جاتا ہے کہ غدر ۱۸۵۷ء کے بعد انگریزوں نے اس کا کونا کونا چھان مارا لیکن کچھ بھی ہاتھ نہ لگا ـــ تھک ہار کر بیٹھ رہے اور اس "بھول بھلیاں" کے راستوں کو چنوا دیا ۔!

لکھنؤ کے فن تعمیر پر دلی اور آگرے کا بہت ہی کم اثر پڑا بلکہ یوں سمجھنا چاہیئے کہ یہاں کے ذہین انجینیروں اور قابل معماروں نے جدتیں کر کے فن تعمیر کے ایک نئے اسلوب اور انداز کو رواج دیا جو مشرق سے زیادہ مغربی طرز تعمیر سے قریب کہا جا سکتا ہے ۔

اودھ کے نواب نسبی اور خاندانی طور پر "ایرانی النسل" تھے اس لئے ان کی تہذیب اور معاشرت بنیادی طور پر مغلوں سے کچھ زیادہ مختلف نہیں تھی خصوصاً باورچی خانوں کا تزک و احتشام بہت کچھ مغل دربار سے ملتا جلتا تھا حالانکہ اصلاح اور ترمیم اس میں بھی ہوئی!

कोई निश्चित नाम नहीं था केवल वह बावर्चियों का धन्धा समझा जाता था। लखनऊ ने इसे "फ़ने-बकावली" का नाम देकर गौरवान्वित किया।

गोश्त[1] और मसालों में डूबी हुई "बिरियानी"[2] की तुलना में कई प्रकार के "पुलाव"[3] तैयार किए गए। आसिफ़ुद्दौला के समय उनके बावर्चीख़ाने का व्यय साठ हज़ार मासिक था। और कला-कुशल बावर्चियों के वेतन बारह सौ मासिक थे। "शीरमाल"[4] तो विशेष रूप से लखनऊ का आविष्कार ही है। इस क्षेत्र में क्रमिक विकास हुआ और "नानख़ताई" अस्तित्व में आई जिसे एक हल्की-फुल्की सी शीरमाल का स्थान दिया जा सकता है। धार्मिक उत्सवों (मजलिसों आदि) में प्रसाद स्वरूप उन्हें बाँटने की प्रथा एक युग में अत्यधिक थी।

नवाब आसिफ़ुद्दौला के युग मे उनके सामने एक बावर्ची प्रस्तुत किया गया जो केवल माश की दाल पकाता था। उससे वेतन पूछा गया तो उसने पाँच सौ रुपये मासिक बताये। और हाथ जोड़कर निवेदन किया कि "महाराज, एक शर्त पर नौकरी करूँगा। एक दिन पहले हांडी पकाने का हुक्म दिया जाए और जब सेवक तैयारी की सूचना दे उसी वक्त भोग लगा लिया जाय।"

शर्त स्वीकार हुई और वह पाँच सौ रुपये के दरमाहे पर नौकर रख लिया गया। कुछ महीनों के बाद नवाब को माश की दल का ध्यान आया। सरफ़राज़ुद्दौला[5] को आज्ञा हुई कि कल हम माश की दाल खाएँगे।

आज्ञापालन में विलम्ब ही क्या था, नये बावर्ची को आज्ञा हुई कि कल अपनी कला का प्रदर्शन करे।

दूसरा दिन आया। हांडी तैयार हुई। बावर्ची सेवा में प्रस्तुत हुआ और उसने निवेदन किया कि दाल तैयार है, परसने की आज्ञा हो। नवाब किसी काम में व्यस्त थे, "हूँ" करके भूल गये। वह फिर उपस्थित हुआ और नवाब भूल गए। वह तीसरी बार फिर गया लेकिन फिर वही "हूँ-हाँ"—झुँझला कर वह वापस आया और हाँडी सहन में खड़े एक सूखे पेड़ की जड़ मे उँड़ेल कर बिना किसी से कुछ कहे-सुने बावर्चीख़ाने से बाहर चला गया।

कुछ देर बाद आसिफ़ुद्दौला को ध्यान आया। दाल मांगी गई तो पता चला कि वह तो हाँडी फेंक-फाँक कर बाहर चला गया। उसकी इस अशिष्टता पर

१. मास। २. एक विशेष ढंग से विशिष्ट सामग्रियों से पके हुए चावल। ३. चावल, राजसी ढंग से पके हुए। ४. अत्यन्त राजसी ढंग से पकी विशिष्ट प्रकार की रोटियाँ। ५. एक पदवी।

کھانا پکانے کا فن اب تک بلا کسی نام کے باورچیوں سے منسوب تھا! لکھنؤ نے اسے فن کمال سے نوازا۔

گوشت اور مصالحوں میں ڈوبی ہوئی "بریانی" کے مقابلے پر کئی قسم کے "پلاؤ" تیار کئے گئے آصف الدولہ کے زمانے میں ان کے باورچی خانے کا خرچ ساٹھ ہزار ماہانہ تھا اور فنکار باورچیوں کی تنخواہیں بارہ سو روپیہ تک تھیں۔ "شیرمال" کو خاص لکھنؤ کی ایجاد ہی ہے اس میں بھی بتدریج ترقی کی گئی اور "تافتان" وجود میں آئی جسے ایک ہلکی پھلکی شیرمال کا درجہ دیا جا سکتا ہے۔ مجالس اور محافل میں ان کی تقسیم کا رواج ایک زمانے میں عام طور پر تھا۔

نواب آصف الدولہ کے عہد میں ایک باورچی پیش کیا جو صرف ماش کی دال پکاتا تھا۔ تنخواہ پوچھی گئی تو اس نے پانچ سو روپیہ ماہوار بتائی اور دست بستہ عرض کی —— کہ خدا وند ایک شرط سے نوکری کروں گا۔ ایک دن پہلے ہانڈی پکانے کا حکم دیا جائے —— اور جب نمک خوار تیاری کی اطلاع دے اسی وقت تناول فرمائی جائے!

شرط منظور ہوئی۔ پانچ سو روپیہ "درماہے" پر نوکر رکھ لیا گیا۔! چند ماہ کے بعد نواب کو ماش کی دال کا خیال آیا سرفراز الدولہ کو حکم ہوا کہ —— کل ہم ماش کی دال کھائیں گے!

تعمیل حکم میں دیر ہی کیا تھی نئے باورچی کو حکم ہوا کہ کل اپنے کمال فن کا مظاہرہ کرے!

دوسرا دن آیا! دال کی ہانڈی تیار ہوئی! باورچی خدمت اقدس میں حاضر ہوا اور عرض کی کہ دال تیار ہے تناول فرمالی جائے۔ نواب کسی کام میں مشغول تھے "ہوں" کرکے بھول گئے! وہ پھر حاضر ہوا اور نواب پھر بھول گئے سہ بارہ پھر گیا۔ مگر "ہوں ہاں" کے سوا کوئی بات نہیں ہوئی۔! جھنجھلا کر باورچی واپس آیا ہانڈی صحن میں کھڑے ہوئے ایک سوکھے درخت کی جڑ میں انڈیل دی اور بلا کچھ کہے سنے باورچی خانے سے باہر چلا گیا۔

کچھ دیر کے بعد آصف الدولہ کو ہوش آیا۔ دال طلب کی گئی تو پتہ چلا کہ وہ ہانڈی پھینک کر چلا گیا۔ اس کی بد تہذیبی پر سخت اظہار ناراضگی کیا گیا اور تلاش

अत्यन्त कोप प्रकट किया गया और उसे ढुंढवाया गया लेकिन पता न चला ।

"शरर" लिखते हैं कि कुछ दिनों बाद देखा गया तो जिस पेड़ के नीचे दाल फेंकी गयी थी वह हरा-भरा हो गया था !

उस युग में लखनऊ ने जीवन के हर क्षेत्र में सफलताएँ प्राप्त की थीं । भाँति-भाँति की वस्तुओ का उत्पादन आरम्भ हुआ ।

खाने की तम्बाकू जो दिल्ली में "ज़र्दा" के नाम से विख्यात हो चुकी थी उसका यह नाम भी यहाँ नहीं पसन्द किया गया क्योंकि यहा "ज़र्दा" मीठे चावलों को कहते हैं । इसका केवल नाम ही नही बदला गया बल्कि तम्बाकू मे नये-नये मसाले और सुगंधियाँ मिलाकर उसके स्वाद मे सुधार किया गया । खाने के तम्बाकू के साथ ही साथ पीने वाला तम्बाकू भी नये ढंग से प्रस्तुत किया गया जो उस "गुड़ाकू" और सूखे तम्बाकू से अधिक परिष्कृत था जिसका प्रचलन दिल्ली में था ।

मिट्टी के बर्तन उन दिनों के विशेष उत्पादन समझे जाते थे और दिल्ली के अतिरिक्त आगरे में भी बनते थे लेकिन जिस प्रकार की चिकनी मिट्टी गोमती ने दी वह यमुना-तट पर प्राप्य नहीं थी । इस मिट्टी से बने हल्के-फुल्के बर्तन "काग़ज़ी बर्तन" कहलाने लगे । काग़ज़ी सुराहियाँ, काग़ज़ी हाँडियाँ और काग़ज़ी आबख़ोरे[1] उस युग के "आविष्कार" थे और इसका श्रेय आसिफ़ुद्दौला के लखनऊ को था ।

"मीर" ने इसी लखनऊ मे जीवन के अन्तिम तीस वर्ष बिताये--किन्तु सिसक-सिसक कर, तड़प-तड़प कर ! उनकी हर साँस दिल्ली की यादों मे बसी हुई थी । उनकी हर साँस तो उस अतीत का सुमिरन थी जो लाल-किले और जामा मस्जिद के पास मित्र-मण्डली में बीते थे ।

अपने जीवन का एक तिहाई लगभग यहीं बिताने के बाद भी "मीर" न जाने क्यों इस नयी दुनिया से अलग-थलग रहे । कदाचित उनकी बोझिल पलकों की ओट से जहाँगीर और शाहजहाँ के युग की दिल्ली उन्हें देखकर मुस्करा रही थी और कह रही थी कि "हर नवनिर्माण आगामी विनाश की पूर्व-पीठिका मात्र होता है ।"

१. कुल्हड़—तो, उतने कलात्मक नहीं होते !

کرائی گئی لیکن پتہ نہ چلا

شرر لکھتے ہیں ——چند روز بعد دیکھا گیا تو جس درخت کے نیچے دال پھینکی گئی تھی وہ سرسبز ہو گیا تھا

اس زمانے میں لکھنو نے زندگی کے ہر شعبہ میں خاطر خواہ کامیابی حاصل کی مصنوعات میں طرح طرح کی چیزیں سامنے لائی گئیں

کھانے کا تمباکو جو دلّی میں "زردہ" کے نام سے شہرت پا چکا تھا لکھنو نے اس کے اس نام کو قبول نہیں کیا کیونکہ زردہ یہاں میٹھے چاولوں کو کہتے ہیں۔ اس کے علاوہ تمباکو میں نئے نئے مصالحے اور خوشبوئیں شامل کر کے اس کی لذت بڑھائی گئی۔ کھانے کے تمباکو کے ساتھ ہی پینے والا تمباکو بھی نئے رنگ میں پیش کیا گیا جو اس "گڑاکو" اور خشک تمباکو سے مختلف تھا جو دلّی میں اس وقت رائج تھے

مٹی کے برتن اس زمانے کی خاص مصنوعات میں شمار کئے جاتے تھے اور دلّی کے علاوہ آگرے میں بھی بنتے تھے لیکن جس قسم کی چکنی مٹی گومتی ندی نے دی وہ جمنا سے دستیاب نہیں ہو سکتی تھی چنانچہ اس مٹی سے بنے ہوئے ہلکے پھلکے برتن "کاغذی" برتن کہلانے لگے۔ کاغذی صراحیاں۔ کاغذی ہانڈیاں اور کاغذی آبخورے اسی عہد کی ایجاد تھیں اور اس ایجاد کا سہرا آصف الدولہ کے لکھنو کے سر تھا

میر نے اسی لکھنو میں زندگی کے تیس برس بتائے —— مگر سسک سسک کر۔ تڑپ تڑپ کر! ان کی ہر سانس دلّی کی یادوں میں بسی ہوئی تھی۔ ہر نفس اس ماضی میں ڈوبا ہوا تھا جو لال قلعہ اور جامع مسجد کے گرد احباب کی صحبت میں گذرا تھا

اپنی زندگی کا ایک تہائی حصہ لکھنو میں بسر کرنے کے باوجود میر اس نئی دنیا سے نہ جانے کیوں الگ تھلگ رہے شاید ان کی بوجھل پلکوں کی اوٹ سے جہانگیر اور شاہجہاں کے دور کی دلّی انھیں دیکھ کر مسکرا رہی تھی اور یہ کہہ رہی تھی کہ ہر تعمیر بربادی کا پیش خیمہ ہوتی ہے

हदीसे कासनात

حدیث کائنات

मीर देहलवी

डाक्टर "अख़्तर" ओरेनवी

मैंने अपने किसी पिछले लेख में यह कहा था कि नई पीढ़ी के आलोचकों का यह कर्त्तव्य है कि उर्दू के कवियों और साहित्यकारों को परम्परागत आलोचना की क़ैद से निकालें। उनकी कला का शुद्धतम मान निर्धारित करें और पूर्णरूपेण निष्पक्ष भाव से उनका अनुशीलन करें। बड़े कलाकार अपने युग और अपने कलातन्त्र (स्कूल) से प्रभावित अवश्य होते हैं किन्तु उनकी कला में युग और कला-तन्त्र से परे भी बहुत कुछ होता है। इसके अतिरिक्त प्रभाव स्वीकार करने का ढंग भी विशिष्ट होता है। नवीनता और विशिष्टता के बिना कोई कलाकार भी ध्यान देने योग्य नहीं होता। हम "मीर" और "गालिब" की आवाज़ों को अच्छी तरह पहचान सकते हैं—उनके विशिष्ट स्वर को, लहजे को, आँच और उड़ान को, वर्णन-शैली और अनुभवों की रीति को, दृष्टिकोण और अर्थवत्ता को।

"मीर" के विषय में एक सामान्य विचार यह फैला हुआ है कि उनकी शायरी में निराशा और अतृप्त कामना का सन्ताप है, और कुछ नहीं। लोग कहते रहे हैं कि "मीर" "आहः" हैं और "सौदा" "वाहः"—लेकिन यह "आह" और "वाह" के लेबिल हम "मीर" और "सौदा" की शायरी पर चिपका नहीं सकते। इन दोनों के यहाँ "आह" और "वाह" के अतिरिक्त भी बहुत कुछ है। "मीर" के काव्य में नैराश्य भाव पाया अवश्य जाता है किन्तु उन्होंने जीवन को अन्य दृष्टिकोणों से भी देखा है। मेरा विचार है कि "मीर" के नैराश्य में ही भावनात्मकता भी है और कहीं इस भावनात्मकता में रोमांस (वियोग शृङ्गारात्मक) का रंग भी झलकता है। किन्तु उनके नैराश्य में चिन्तन की गहराई और प्रज्ञा का स्फुरण भी है। और रोमानी ढंग के अतिरिक्त भी वह हताशा और निराशा को यथार्थात्मक (तथ्यात्मक) रूप में भी अपनी शायरी में स्थान देते हैं। "मीर" की शायरी के विचार-पक्ष पर अभी तक पूरा ध्यान नहीं दिया गया। सृजन की ऊँचाइयों का अधिचेतन

میرؔ دہلوی

ڈاکٹر اختر اورینوی

میں نے اپنے کسی گزشتہ مضمون میں لکھا تھا کہ نئی نسل کے ناقدوں کا یہ فرض ہے کہ اردو کے شاعروں اور ادیبوں کو روایتی تنقید کی قید سے نکالیں۔ ان کے فن کی صحیح قدر و قیمت متعین کریں۔ اور بغیر کسی تعصب کے ان کا جائزہ لیں۔ بڑے فن کار اپنے دور اور دبستان سے ضرور متاثر ہوتے ہیں۔ لیکن ان کے فن میں بہت کچھ ماورائے دور و دبستان بھی ہوتا ہے۔ اس کے علاوہ اثر قبول کرنے کا انداز بھی انفرادی ہوتا ہے۔ جدت اور انفرادیت کے بغیر کوئی فن کار قابل اعتنا نہیں۔ ہم میرؔ اور غالبؔ کی آوازوں کو اچھی طرح پہچان سکتے ہیں۔ ان کے لب و لہجہ کو آہنگ کو۔ آنچ اور اڑان کو۔ انداز بیان اور تجربات کی نوعیت کو انداز نظر اور معنویت کو

میرؔ کے متعلق ایک عام خیال یہ پھیلا ہوا ہے کہ ان کی شاعری میں یاس و حسرت ہے اور کچھ نہیں۔ لوگ کہتے رہے ہیں کہ میرؔ "آہ" ہیں اور سوداؔ "واہ" لیکن یہ "آہ" اور "واہ" کے لیبل ہم میرؔ اور سوداؔ کی شاعری پر چپکا نہیں سکتے۔ ان دونوں کے یہاں "آہ" اور "واہ" کے علاوہ بھی بہت کچھ ہے۔ میرؔ کی شاعری میں یاسیت بھی پائی جاتی ہے لیکن انھوں نے زندگی کو دوسرے زاویوں سے بھی دیکھا ہے۔ میرا خیال یہ ہے کہ میرؔ کی یاسیت میں کہیں کہیں جذباتیت بھی ہے اور کہیں اس جذباتیت پر رومان کا سایہ پڑتا ہے۔ لیکن ان کی یاسیت میں فکری گہرائی اور بصیرت بھی ہے اور رومانیت کے بجائے وہ یاس و قنوط کو حقیقت پسندانہ طور پر بھی اپنی شاعری میں جگہ دیتے

समस्पर्श करनेवाला कलाकार मात्र भावुकता से अभिप्रेरित नहीं हो सकता। भावना उसकी सहचरी होती है, सहायिका होती है, स्वामिनी नहीं होती। वह भावना के प्रदाह और चुभन और कल्पना की उड़ान के मध्य अपने ध्यान का सन्तुलन बनाए रखता है। यह भी हमारी आलोचना का एक बगापन रहा है कि "ग़ालिब" को सदैव चिन्तन पक्ष की शायरी का अग्रदूत समझा गया और "मीर" को भावना-पक्ष की शायरी का। हालाँकि ग़ालिब ने भावप्रधान कविता के अत्यन्त उत्कृष्ट नमूने छोड़े और "मीर" ने चिन्तन-प्रधान काव्य की सफल कृतियाँ प्रस्तुत कीं। सच्चाई तो यह है कि उच्चकोटि का काव्य बिना भाव, कल्पना और चिन्तन के सन्तुलित रूप से एकाकार हुए असंभव है। हाँ यह अवश्य है कि किसी शायर में इन तीन तत्त्वों में से कोई एक तत्त्व अधिक प्रधान दिखता है। किसी में भाव-पक्ष प्रधान होता है किसी में कल्पना-पक्ष अधिक होता है और कहीं चिन्तन-पक्ष का प्राधान्य दिखाई देता है।

"मीर" की शायरी में निराशा आदि के साथ-साथ प्रबल आशावादी तत्त्वों का भी अस्तित्व दिखाई देता है और कर्म की ओर प्रवृत्त करने की पुकार भी सुनाई देती है। हाँ, "मीर" इतने सुघड़ तो हैं कि कर्म प्रवृत्ति के लिए आह्वान करते समय वे ढोल नहीं पीटते। वह आप बीती के माध्यम से जीवन को प्रस्तुत करते हैं। वह जग-बीती को आप बीती बना लेते हैं। वस्तुतः "मीर" का एक विशिष्ट स्वर और भाव है। उनके स्वर में एक अद्भुत-चमत्कारिक तत्व है। उनके शब्दों की लय में एक व्यथापूर्ण आँच है। वह जीवन के जिस पक्ष के विषय में भी कहते हैं बड़े प्रभावशाली ढंग से कहते हैं। "मीर" की शायरी निराशा के रूप मे प्रतिफलित नहीं होती अपितु दृष्टि प्राप्त होती है, प्रज्ञा जागती है। और कभी-कभी जीवन के प्रति अनुराग निष्टा और समादर के भाव भी जागृत हो जाते हे और लगता है कि जीवन लाख क्षयिष्णु हो पर है बड़ा मनोरम, सुन्दर, सरस। मे तो जब भी "मीर" को पढ़ता हूँ मुझे जीवन पर प्यार आने लगता है और जीवन के कुछ अभावग्रस्त क्षणों की याद आने लगती है। "मीर" के स्वभाव में बड़ी नज़ाकत और नफ़ासत थी। उनका दिल भी नाज़ुक था और मन भी नाज़ुक। ऐसा प्रतीत होता है कि वे नज़ाकत को पसन्द भी करते थे और भोंडेपन से उन्हें घृणा भी थी। "मीर" के जीवन के अध्ययन से सार यह निकलता है कि उसका अन्दरूनी रूप बड़ा ही नाज़ुक है। निम्नलिखित शेर की यथार्थवादिता मुलाहज़ा हो—और आप जगत को "मीर" के विशिष्ट दृष्टिकोण से देखिए और उससे कर्म की प्रेरणा ग्रहण कीजिए:—

ہیں ۔ میرؔ کی شاعری کے فکری عناصر پر ابھی تک پورے طور پر توجہ نہیں کی گئی ۔ تخلیقی بلندیوں پر پہنچنے والا فن کار جذباتیت سے کام نہیں لے سکتا ۔ جذبہ اس کی مدد کرتا ہے لیکن دامنگیر نہیں ہوتا ۔ وہ جذبہ کے سوز و گداز اور تخیل کی پرواز کے درمیان توازن قائم کرتا ہے ۔ یہ بھی ہماری تنقید کا یک گناپن رہا ہے کہ غالبؔ کو ہمیشہ فکری شاعری کا علم بردار قرار دیا گیا اور میرؔ کو جذباتی شاعری کا ۔ حالانکہ غالبؔ نے جذباتی شاعری کے نہایت پاکیزہ نمونے چھوڑے اور میرؔ نے فکری فن کاری کے نہایت کامیاب نمونے پیش کیے ۔ حقیقت تو یہ ہے کہ اعلیٰ شاعری بغیر جذبہ، تخیل اور فکر کے اتحاد و توازن کے ناممکن ہے ۔ ہاں یہ ضرور ہے کہ کسی شاعر میں ان تین عناصر میں سے کوئی ایک عنصر زیادہ نمایاں نظر آتا ہے ۔ کسی میں جذباتی کیفیت زیادہ ہوتی ہے کسی میں تخئیلیت زیادہ اور کسی میں تفکر نمایاں

میرؔ کی شاعری میں یاس و قنوط کے علاوہ ہمیں رجائیت کے میلانات بھی ملتے ہیں اور دعوت عمل کی پکار بھی سنائی دیتی ہے ۔ ہاں میرؔ کو اتنا سلیقہ ہے کہ وہ دعوت عمل دینے کے لیے ڈھول نہیں پیٹتے وہ آپ بیتی کے انداز میں زندگی کو پیش کرتے ہیں وہ جگ بیتی کو آپ بیتی بنالیتے ہیں ۔ اصل میں میرؔ کا ایک مخصوص لب و لہجہ ہے ان کی آواز میں ایک خاص کسک ہے ۔ ان کے آہنگ میں ایک دردمندانہ آنچ ہے ۔ وہ زندگی کے جس پہلو کے متعلق بھی کہتے ہیں بڑے پر اثر انداز میں کہتے ہیں ۔ میرؔ کی شاعری سے مایوسی نہیں پیدا ہوتی ۔ عبرت اور بصیرت حاصل ہوتی ہے ۔ اور کبھی کبھی زندگی سے محبت ہوجاتی ہے ۔ زندگی گزراں ہونے کے باوجود بڑی دلکش اور خوبصورت ہے ۔ میں تو جب بھی میرؔ کو پڑھتا ہوں مجھے زندگی سے پیار آنے لگتا ہے ۔ اور زندگی کے محروم لمحات کی یاد آنے لگتی ہے ۔ میرؔ کی طبیعت میں بڑی نزاکت و نفاست تھی ۔ ان کا دل بھی نازک تھا اور ذہن بھی نازک ۔ ایسا معلوم ہوتا ہے کہ وہ نزاکت کو پسند بھی کرتے تھے اور بھونڈے پن سے انھیں نفرت تھی ۔ میرؔ کا مطالعۂ حیات یہ ہے کہ اس کا اندرونی روپ نہایت نازک ہے ۔ مندرجہ ذیل شعر کی حقیقت پسندی ملاحظہ ہو اور آپ کائنات کو میرؔ کے مخصوص زاویے سے دیکھئے ۔ اور اس سے درس عمل لیجئے ؎

ले साँस भी अहिस्ता कि नाज़ुक है बहुत काम आफ़ाक़[1] की इस कारगहे-शीशागरी[2] का

"मीर" ने अपने प्रिय के कामिक अस्तित्व में नज़ाकत को बड़े गहरे ढंग से अनुभव किया :

नाज़ुकी उसके लब[3] की क्या कहिए ? पंखड़ी एक गुलाब की सी है

मुझे अचानक "मीर" का यह शेर याद आता है। कितना प्रगतिशील और कैसा आधुनिक शेर है—क्या इसमें आप "इक़बाल" की आवाज़ नहीं सुन रहे हैं :

खुदा साज था आज़रे-बुत-तराश हम अपने तईं आदमी तो बनाएं[*]

"मीर" एक महान कलाकार की तरह सदैव आदमी बनाने के इच्छुक रहे। आदमी बनाना सबसे बड़ी कलाकारी है। यह कलाकारिता भी है और ईश्वरीय-सन्देश-वहन का महाकार्य भी। यही मानव की वह सृजनात्मकता है जो उसे मूल स्रस्टा अनादि ब्रह्म की ओर सीधे दिखा देने वाला—इस सृष्टि कर्म को सिद्ध कर देने वाला बनाती है। मिट्टी से ईश्वर बनाना संभव नहीं, ईट-पत्थर से भी संभव नहीं, स्फटिक और चाँदी-सोने से भी संभव नहीं। हाँ, हम मानवीय अन्तर से उद्भूत शक्ति में ईश्वर के तत्त्व प्रत्यस्थापित कर सकते हैं। "ग़ालिब" की भी प्रतीत थी :

"आदमी[4] को भी मुयस्सर[5] नहीं इन्साँ[6] होना"

सामान्य जन को संस्कृत कर आदमी बनाना और आदमीयत को परिपूर्ण कर देना ही वस्तुतः मानवीयता है और यही "ख़ुदासाज़ी का पहला जीना है। "बुत-तराशी" से "ख़ुदासाज़ी" नहीं होती। "शिर्क" एक हास्यपाद क्रिया है। "मीर" का एक औसत दर्जे का शेर मुलाहिज़ा हो :

हाथ रखे हाथ पर बैठें हो क्या बेख़बर[7] चलने को हैं कारवाँ कुछ तो किया चाहिए

इस शेर में स्पष्ट रूप से कर्म-प्रवृत्ति का सन्देश है और ऐसे बहुत से शेर "मीर" के यहाँ मिलते हैं जो जीवन का इंकार नहीं करते, उसे स्वीकार करते हैं और जीवन को स्वीकार करते ही हमें कर्म-तत्पर कर देते हैं।

"मीर" ने प्रेम के विघटनकारी तत्त्व और इसकी विनाशकारिका शक्ति के विषय में भी बहुत कुछ लिखा है। जैसे—

ऐ हमदम[8] इब्तदा[9] से है आदमकुशी[10] में इश्क़ तबए-शरीफ़[11] अपनी न ईधर[12] को लाइये

१. ब्रह्माण्ड। २. शीशा ढालने का कारखाना; सूक्ष्म से सूक्ष्म तत्त्वों का निर्माण स्थल। ३. अधर। [*] पूर्ण व्याख्या श्री नज़ीर सिद्दीक़ी के लेख में देखिये। ४. सामान्य, असंस्कृत मानव। ५. दुर्लभ है, भाग्य मे नही, सुलभ नही। ६. पूर्ण मानव। ७. अज्ञान। ८. साथी। ९. प्रारम्भिक युग मे ही। १०. मनुष्यों के हनक मे प्रवृत्त। ११. ध्यान, मन। १२. इधर।

لے سانس بھی آہستہ کہ نازک ہے بہت کام آفاق کی اس کارگہِ شیشہ گری کا

میرؔ نے محبوب کے سراپا میں نزاکت کو بڑے گہرے انداز میں محسوس کیا ؎

نازکی اس کے لب کی کیا کہیے پنکھڑی اک گلاب کی سی ہے

مجھے اچانک میرؔ کا یہ شعر یاد آتا ہے ۔ کتنا ترقی پسندانہ اور کتنا عصری شعر ہے۔ کیا آپ اس میں اقبالؔ کی آواز کہیں سن رہے ہیں :

خدا ساز تھا آذر بت تراش
ہم اپنے تئیں آدمی تو بنائیں

میرؔ ایک بڑے فن کار کی طرح ہمیشہ آدمی بنانے کے آرزو مند رہے ۔ آدمی بنانا سب سے بڑی فن کاری ہے ۔ یہ فن کاری بھی ہے اور پیمبری بھی ۔ اور یہی وہ تخلیق تو ہے جو آدم کو خدا نما بنا دیتی ہے ۔ خدا سازی مٹی سے ممکن نہیں، سنگ و خشت سے ممکن نہیں مرمر اور نقرہ و طلا سے بھی ممکن نہیں ہاں ہم قلب آدم سے خدا سازی کر سکتے ہیں ۔ غالبؔ کو بھی احساس تھا ع،

آدمی کو بھی میسر نہیں انساں ہونا

عام بشر کو آدمی بنانا اور آدمیت کی تکمیل دراصل انسانیت ہے اور یہی خداسازی کا پہلا زینہ ہے ۔ بت تراشی سے خدا سازی نہیں ہوتی، شرک ایک نہایت مضحک عمل ہے میرؔ کا ایک اوسط درجے کا شعر ملاحظہ ہو ۔

ہاتھ رکھے ہاتھ پر بیٹھے ہو کیا بے خبر
چلنے کو ہے کارواں کچھ تو کیا چاہیے

اس شعر میں نمایاں طور پر دعوت عمل ہے اور ایسے بہت سے شعر میرؔ کے یہاں ملتے ہیں جو نفی حیات نہیں کرتے بلکہ اثبات حیات کرتے ہیں اور آمادۂ عمل ۔

میرؔ نے عشق کی تخریبی صلاحیت کے متعلق بھی بہت کچھ لکھا ہے مثلاً ؎

اے ہمدم ابتدا سے ہے آدم کشی میں عشق
طبع شریف اپنی نہ ایدھر کو لائیے

किन्तु तनिक दृष्टि का सन्तुलन देखिये कि प्रेम की सृजनात्मक-निर्माणत्मका शक्ति को वे यूँ प्रस्तुत करते हैं :

कोहकन[1] क्या पहाड़ तोड़ेगा ? इश्क़ ने जोर आज़मायी[2] की

अर्थात प्रेम वह निर्माणात्मक शक्ति है जिससे पहाड़ तोड़कर जुए-शीर भी लाया जा सकता है। बिना प्रेम के यह असम्भव है। "मीर" ने प्रेम के विशेष प्रकार के रस-आनन्द को भी बड़े गहरे तौर पर महसूस किया है। कहते हैं:—

सब मज़े बरकिनार[3] आलम[4] के यार[5] जब हम किनार[6] होता है

"मीर" के यहाँ अगर एक ओर "ले साँस भी अहिस्ता" की प्रेरणा मिलती है तो दूसरी ओर उनके यहाँ क्रान्ति की सशक्त प्रेरणा भी मिलती है। कहते हैं:—

ख़ामोश रहें कब तक ज़िन्दाने-जहाँ[7] में हम
हंगामा क़यामत[8] का शोरिश[9] से उठा जावे

"मीर" को जीवन के मौलिक-सौंदर्य, इसकी मकीरमता की बड़ी गहरी अनुभूति-बल्कि प्रतीत है। जीवन से दूरी उनके लिए दुखद है। मानवीय जीवन के साथ मृत्यु की त्रासदी घटित तो होती है किन्तु स्वयं जीवन दुखमय नहीं है। कहते हैं:—

क्या दिलकश[10] है बज़्मे-जहाँ[11] की जाते याँ-से जिसे देखो
वो, ग़मदीदा[12], रन्जकशीदा[13], आह ! सरापा-हसरत[14] है !

"मीर" की यथार्थवादिता और साहसिकता मुलाहज़ा हो:—

आबे-हयात[15] वही नऽ; जिसपर ख़िज़्र-ो-सिकन्दर[16] मरते रहे ?
ख़ाक-से हमने भरा वो-चश्मा[17] यह भी हमारी हिम्मत है

"मीर" इस क्षिति-तत्त्व-प्रधान पृथ्वी के महत्त्व और इसकी ठोस यथार्थता को

१. प्रसिद्ध प्रेमी फ़रहाद, पहाड़ का-खोदने वाला। २. शक्ति प्रदर्श। ३. एक ओर। ४. संसार। ५. प्रिया। ६. आलिङ्गन बद्ध। ७. संसार रूपी कारागार। ८. प्रलय (अत्यधिक, अप्रत्याशित)। ९. जन-रव, शोर, एक प्रकार का उत्पात। १०. मनोरमता, आकर्षण। ११. संसार रूपी सभा। १२. ग़म देखे हुआ। १३. दुःख झेले हुआ। १४. साक्षात तृष्णा। १५. अमृत। १६. एक प्रचलित दन्त कथा कुछ दिनों तक ग्रन्थों में भी पौराणिक—इसके साथ उद्धृत होती आई है कि पहले धरती पर अमृत की झील थी। एक बार एक साथ हज़रत ख़िज़्र (एक अमर पैग़म्बर; जो अमरत्व प्राप्त कर अगम मार्गों में मार्ग-प्रदर्शन किया करते थे और ईश्वरीय आदेश से भक्तजन की सहायता करते थे) और सिकन्दर नामक एक राजा को (प्रख्यात वंश विजेता नहीं) ईश्वरीय आदेश मिले कि अमृत-पान करलो वरन् अमृत-स्रोत लुप्त हो जायगा। राजा साहब अमृत की झील की ओर हज़रत ख़िज़्र के मार्ग-प्रदर्शन में चला—मार्ग में राजा को असीम कष्ट झेलने पड़े और वह हज़रत ख़िज़्र का हाथ छोड़कर अँधेरे में भटक भी गया; उसे कुछ मिला नहीं ! अमृत नियत समय पर पर लुप्त हो गया। १७. वही अमृत-झील।

لیکن نظر کا توازن ملاحظہ ہو کہ عشق کی تعمیری قوت کو وہ یوں پیش کرتے ہیں کہ ؎

کوہکن کیا پہاڑ توڑے گا عشق نے زور آزمائی کی

عشق وہ تعمیری قوت ہے جس سے پہاڑ توڑ کر جوئے شیر بھی لایا جا سکتا ہے، بغیر عشق کے یہ ناممکن ہے۔ میرؔ نے نشاط محبت کو بھی بڑے گہرے طور پر محسوس کیا ہے۔ کہتے ہیں ؎

سب مزے درکنار عالم کے یار جب ہم کنار ہوتا ہے

میرؔ کے یہاں اگر ایک طرف "لے سانس بھی آہستہ" کی تعلیم ملتی ہے تو دوسری جانب ان کے یہاں دعوت انقلاب بھی موجود ہے۔ کہتے ہیں ؎

خاموش رہیں کب تک زندان جہاں میں ہم
ہنگامہ قیامت کا شورش سے اٹھا جاوے

میرؔ کو زندگی کی دل کشی کا بڑا گہرا احساس ہے۔ زندگی سے دوری البتہ باعث حسرت ہے۔ انسانی حیات موت کے المیہ سے دوچار ہوتی ہے مگر وہ خود المناک نہیں۔ کہتے ہیں ؎

کیا دل کش ہے بزم جہاں کی جاتے یاں سے جسے دیکھو
وہ غم دیدہ، رنج کشیدہ، آہ سراپا حسرت ہے

میرؔ کی حقیقت پسندی اور حوصلہ مندی ملاحظہ ہو ؎

آبِ حیات وہی نا جس پر خضر و سکندر مرتے رہے
خاک سے ہم نے بھرا وہ چشمہ یہ بھی ہماری ہمت ہے

میرؔ اس خاکدان کی اہمیت اور واقفیت کو پیش کرتے ہیں۔ اور کمال ہمت اس امر کو بتاتے ہیں کہ ہم مٹی کو اکسیر بنا دیں۔ خاک کو آب حیواں میں تبدیل کر دیں ایسے اشعار کے ہوتے ہوئے بھلا ہم میرؔ کو شاعر یاس و قنوط کہہ سکتے ہیں؟ ہاں

प्रस्तुत करते हैं और चरम रूप से करणीय इसे बताते हैं कि हम इस मिट्टी में ही शाश्वत-तत्त्व उत्पन्न कर दें। तुच्छ मिट्टी को अमृत में परिणित कर दें। ऐसे शेरों के होते हुए हम भला "मीर" को निराशावादिता और जीवन के प्रति विरक्त दृष्टिकोण रखने वाला कवि कह सकते हैं ? हाँ, "मीर" जानते हैं कि जीवन में निराशाएँ, हताशाएं, अतृप्ति, तृषित कामनाएं भी हैं, शोक-व्यक्त भी—किन्तु वह प्रभात का संगीत खोज रहे हैं, कहते है :

शब[1] शोर-ो-फ़ुगाँ[2] करते गई; मुझको तो-अब तो
बिलकश हो, टुक; ऐ मुर्गे-चमन[3] ! वक़्ते-सहर[4] है।

"मीर" मनुज और इस धरा-धाम को बहुत महत्त्व देते हैं। सुनिये :

कर काम को दिल में; गई अर्श पर तो क्या ?
ऐ आहे-सहरगाह[5] ! अगर तुझमें असर है

"मीर" की मानसिक-प्रवृत्ति अत्यन्त स्वस्थ है किन्तु भ्रामक नहीं। वे जीवन के सुखद-दुखद दोनों पक्षों, हास-विलाप दोनों विधाओं से परिचित हैं :

चलते हो तो चमन को चलिए सुनते हैं कि बहारां है
पात हरे हैं फूल खिले हैं कम कम बाद-व-बारां है

इसके साथ ही क्षण-भंगुर जीवन का व्यथा-पक्ष देखिए :

कहा मैंने कितना है गुल का सिबात — कली ने ये सुनकर तबस्सुम किया

"मीर" की यथार्थवादिता और तथ्य-दर्शन में एक अत्यन्त सूक्ष्म कर्म-संदेश मुलाहिज़ा हो :

'उड़ने की यक हवस है हमको क़फ़स से वरना—शाइस्त-ए-परोबन-बाज़ू में पर कहाँ है'

किन्तु "मीर" यह चाहते हैं कि ऐसे पर पैदा हों जो उड़ने की शाइस्तगी हासिल कर लें। "मीर" का यह शेर अत्यन्त विख्यात है :

'मर्गे-मजनूँ से अक़्ल गुम है "मीर" — क्या दिवाने ने मौत पाई है'

"मीर" ने मरण की अर्थवत्ता भी उपलब्ध कर ली थी और यह अर्थवत्ता सामान्य तर्क बुद्धि से परे है। "मीर" का कहना यह है कि यदि मनुष्य चाहे तो त्याग एवं बलिदान और प्रेम-मार्ग के रक्तदान से मृत्यु को भी अनन्तता, सनातनत्व में परिणत कर सकता है। "मीर" के विशिष्ट स्वर और उनके कोमल शब्द एवं माधुर्य ने शेर को दिक्-काल से परे कर दिया, सार्वभौम बना दिया और कही हुई बातों से अधिक अनकहे पहलू उभार दिये—"मीर" के ऐसे ही शेर

१. रात को। २. आर्त-क्रन्दन। ३. वाटिका के पक्षी। ४. प्रात-वेला। ५. प्रात-वेला का क्रन्दन, निनाद।

میرؔ جانتے ہیں کہ زندگی میں یاس و حسرت بھی ہے، غم والم بھی، لیکن اس کے باوجود وہ نغمۂ سحر کے متلاشی ہیں کہتے ہیں ؎

شب شور و فغاں کرتے گئی مجھ کو تو اب تو
دلکش ہو ٹک اے مرغ چمن وقتِ سحر ہے

میرؔ آدم زاد اور اس خاکدان ارضی کو بہت اہمیت دیتے ہیں۔ سنئے ؎

کر کام کو دل میں گئی عرش پہ تو کیا
اے آہ سحر گاہ اگر تجھ میں اثر ہے

میرؔ کی ذہنیت نہایت صحت مندانہ ہے لیکن فریب کارانہ نہیں۔ وہ زندگی کے نشاط سے بھی واقف ہیں اور ماتم سے بھی ؎

چلتے ہو تو چمن کو چلیے۔ سنتے ہیں کہ بہاراں ہے
پات ہرے ہیں، پھول کھلے ہیں، کم کم باد و باراں ہے

زندگی گزراں کی رعنائی دیکھیے ؎

کہا میں نے کتنا ہے گل کا ثبات کلی نے یہ سُن کر تبسم کیا

میرؔ کی حقیقت پسندی اور اس حقیقت بینی کے اندر ایک لطیف دعوت عمل ملاحظہ ہو ؎

اڑنے کی یک ہوس ہے ہم کو قفس سے ورنہ
شائستۂ پریدن بازو میں پر کہاں ہے

لیکن میرؔ یہ چاہتے ہیں کہ ایسے پر پیدا ہوں جو اڑنے کی شائستگی حاصل کرلیں۔ میرؔ کا یہ شعر نہایت مشہور ہے ؎

مرگِ مجنوں سے عقل گم ہے میرؔ کیا دوانے نے موت پائی ہے

میرؔ نے موت کی معنویت کو بھی محسوس کرلیا تھا اور یہ معنویت ماورائے عقلیت ہے میرؔ کا کہنا یہ ہے کہ اگر انسان چاہے تو ایثار و قربانی اور عشق کی خوں فشانی سے موت کو

सह्ले-मुम्तने (सरल किन्तु परमगूढ़) कहे जाते हैं। इस कलात्मक सादगी पर नैपुण्य न्योछावर होते हैं। अब "मीर" का एक मनोवैज्ञानिक शेर सुनिए :

बावले से जब तलक बकते थे, सब करते थे प्यार   अक़्ल की बातें किया क्या हमसे नादानी हुई

शैशव में भी यही स्थिति होती है और अगम, गूढ़ तथ्यों में रमे हुए साधक की अवस्था में भी मानवीय समाज तर्क-बुद्धि की गुरु-गंभीरता के बोझ को बड़ी कठिनाई से सहन कर पाता है और बावलेपन को पसन्द करता है। वस्तुतः चेतना तत्त्व (विवेक, तर्क-बुद्धि) की उम्र बहुत थोड़ी है और अचेतन की शक्ति आदिम, बहुत गहरी, परम निगूढ़—सनातन अत्यन्त प्राचीन एवं दक्षता। "मीर" में अपने निम्न-लिखित शेर में अपने जीवन-दर्शन को मानों-चित्रित कर दिया। यही उनका सन्देश भी है। वह रोने और विसूरने की प्रेरणा कभी नहीं देता :

फ़क़ पर भी था "मीर" के इक रंग   कफ़नी पहनी, सो ज़ाफ़रानी थी

इसका यह अर्थ नहीं कि "मीर" कभी रोए नहीं। जब तक कोई रोएगा नहीं उसका आत्म-शोध नहीं हो सकता। रोने से जीवन-शोधन भी होता है और कला-शोधन भी।

मेंह[1] तो बौछाड़ का देखा है बरसते तुमने।
इसी अन्दाज़ से थी अश्क[2]-फ़िशानी इसकी॥

परन्तुः—

"बात की तर्ज़[3] को देखो तो कोई जादू था।"

'मीर' की काव्यसाधना के विषय में क्षिप्र निर्णय देना अत्यन्त त्रुटिपूर्ण बात है। 'मीर' को स्वयं ही इसकी अनुभूति थी कि उसकी कला में जीवन चेतना की चमकीली झाँकी विद्यमान है। कहते हैं:—

सहेल है मीर का समझना क्या?
हर सुख़न[4] उसका इक मुक़ाम[5] से है॥

'मीर' विभिन्न जीवन-स्थलों से परिचित थे। साधारण जनता और विशिष्ट वर्गों को चाहिए कि केवल एक स्थान पर खड़े होकर 'मीर' के काव्य को न परखें अपितु विभिन्न जीवन-क्षेत्रों से 'मीर' की कला को परखें। 'मीर' जीवन को विषमता से परिचत थे। जीवन में एक-अंगिता और यकबगापन वास्त-विकता के विरुद्ध है। मनुष्य का मस्तिष्क एवं भावनाएं दोनों बड़ी अड़चन में पड़ जाते हैं। मनुष्य की इच्छाओं तथा आशाओं की सीमा नहीं है। और इसे

१. पानी। २. आँसू बहाना। ३. ढंग। ४. बात। ५. विशेषता।

بھی ابدیت میں تبدیل کر سکتا ہے۔ میرؔ کے مخصوص لب و لہجے نے اس کی لطافت و نزاکت نے شعر کو آفاقی بنا دیا اور کہی ہوئی باتوں سے زیادہ ان کہے پہلو سامنے ابھرتے ہیں میرؔ کے ایسے ہی اشعار سہل ممتنع کہے جاتے ہیں ایسی سادگی پر پُرکاری صدقے ہو جاتی ہے۔ میرؔ کا ایک نفسیاتی شعر سنیئے ؎

باولے سے جب تلک بجتے تھے سب کرتے تھے پیار
عقل کی باتیں کیں کیا ہم سے نادانی ہوئی

عالم طفلی میں بھی یہی حال ہوتا ہے اور عالم جذب و سلوک میں بھی۔ انسانی سماج عقل کے بوجھ کو بڑی مشکل سے برداشت کرتا ہے۔ اور باولے پن کو پسند کرتا ہے اصل میں شعور کی عمر بہت تھوڑی ہے اور لاشعور کی قوت بہت پرانی، بہت گہری، بہت قدیم اور توانا۔ میرؔ نے اپنے مندرجہ ذیل شعر میں اپنے فلسفۂ زندگی کو مصور کر دیا۔ یہی اس کا پیغام بھی ہے، وہ رونے اور بسورنے کی دعوت بھی نہیں دیتا ؎

فقر پر بھی تھا میرؔ کے اک رنگ کفنی پہنے سوز عفرانی تھی

اس کا یہ مطلب نہیں کہ میرؔ کبھی رویا نہیں، جب تک کوئی روئے نہیں اس کا تزکیہ نفس نہیں ہو سکتا۔ رونے سے تزکیہ حیات بھی ہوتا ہے اور تزکیۂ فن بھی۔

مینہ تو بوچھار کا دیکھا ہے برستے تم نے
اسی انداز سے تھی اشک فشانی اس کی

لیکن :

بات کی طرز کو دیکھو تو کوئی جادو تھا

میرؔ کی شاعری کے بارے میں عجلت پسندانہ رائے دینی نہایت غلط بات ہے۔ میرؔ کو خود یہ احساس تھا کہ اس کے فن میں شعورِ حیات کی جلوہ گری ہے۔ کہتے ہیں ؎

سہل ہے میرؔ کا سمجھنا کیا ہر سخن اس کا اک مقام سے ہے

ہر مختلف مقامات حیات سے واقف تھے، عوام خواص کو چاہیے کہ محض ایک مقام پر کھڑے ہو کر میرؔ کی شاعری کو نہ جانچیں بلکہ مختلف مقامات زندگی سے میرؔ

किसी स्थान पर विश्राम नहीं मिल पाता। एक सन्तुष्टि दूसरी असन्तुष्टि की याद दिलाती है। कहते है:—

काबे मे जां बलब थे हम दूरि ए[1] बुतां मे।
आए हैं फिर से यारो अबके खुदा के हां से॥

मन्दिर, मस्जिद, (दैरव हरम)[1] तथा बुत ख़ाना, अधर, कपोल, जीवन मरण काबा सब कुछ है। किन्तु अन्तिम लक्ष्य कोई नहीं। जीवन अपने घुमाव फिराव के होते हुए भी तृप्त है एक नशा है:—

उम्र भर हम रहे शराबी से।
दिले[2] पुरख़ूं कि एक गुलाबी[3] से॥

'मीर' का ये मतला[4] भी कितना स्वस्थ एवं सशक्त है। आपने 'बाले जिब्रील'[5] के शेरों को पढ़ा होगा। 'इक़बाल' ने जिस रंग में इस काव्य-कोष की ग़ज़लों में अपने शिकवे को दोहराया है वह उर्दू कविता में एक सम्मान पूर्ण चीज़ है। मीर ने इस प्रकार के प्रयोग को कितने सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है। कहते हैं:—

कोई हो महरमे-शोख़ी[6] तेरा तो मैं पूछूं।
कि बज़्मे ऐश जहां क्या समझ के बरहम की॥

'महरमे शोख़ी' की तरकीब कितनी सुन्दर है। उपर्युक्त शेर को 'ग़ालिब' के इस शेर के साथ पढ़िए:—

नक़्श[7] फ़रियादी है किसकी शोख़िए[8] तहरीर का।

'ग़ालिब' के शेर में विचार-पक्ष प्रबल है और 'मीर' भावात्मकता एवं श्रृंगारिता के प्रधान कवि हैं। 'मीर' का एक संदेश सुनिए और मुझे विदाई की आज्ञा दीजिए:—

नालए इज्ज़[9] नुक्से उलफ़त है।
रंज ब मेहनत कमाले राहत है॥
तावम-ए मर्ग ग़म ख़ुशी का नहीं।
दिले आज़ुर्दा[10] गर सलामत है॥

इन शेरों में आशाओं और साहस का आभास होता है। मीर की काव्य-साधना भाग्य के नव प्रभावों से युक्त है।

१. बुतों से दूरी (मूर्तियों से दूरी) २. रक्तमय हृदय ३. शराब (रंगीनी) ४. ग़ज़ल की प्रथम पंक्ति। ५. डा० इक़बाल की किताब। ६. चचंलता का साक्षी। ७. रेखाएं ८. लेखन की चंचलता। ९. क्षमा प्रार्थना। १०. दुखी दिल।

کے فن کا جائزہ لیں۔ میرؔ زندگی سے واقف تھے۔ زندگی میں یک طرفہ پن اور یک لگے پن حقیقت پسندی کے خلاف ہے۔ انسان کا ذہن اور اس کا دل دونوں بڑے پیچ و خم سے دوچار ہوتے ہیں۔ انسان کی آرزو مندیوں اور حسرتوں کی انتہا ہیں اور اسے کسی مقام پر چین حاصل نہیں ہوتا، ایک لذت دوسری محرومی کی یاد دلا دیتی ہے۔ کہتے ہیں ؎

کعبے میں جاں بلب تھے ہم دوریٔ بتاں سے آئے ہیں پھر کے یارو اس کے خدا کے یاں سے

دیر و حرم، کعبہ و بت خانہ، لب و رخسار، حیات و موت سب مقامات ہیں منزل آخر کوئی نہیں۔ زندگی اپنے پیچ و خم کے باوجود اک سرور ہے اک نشہ ہے ؎

عمر بھر ہم رہے شرابی سے دل پر خوں کی اک گلابی سے

میرؔ کا یہ مطلع بھی کتنا فتح مندانہ اور توانا ہے۔ آپ نے بال جبریل کے اشعار پڑھے ہوں گے اقبالؔ نے جس رنگ میں اس مجموعے کی غزلوں میں اپنے شکوے کو دہرایا ہے وہ اردو شاعری میں خاصے کی چیز ہے۔ میرؔ نے اسی طرح کے تجربے کو کتنے لطیف انداز میں پیش کیا ہے کہتے ہیں ؎

کوئی ہو محرم شوخی ترا تو میں پوچھوں
کہ بزم عیش جہاں کیا سمجھ کے برہم کی

محرم شوخی کی ترکیب کتنی لطیف اور پرمعنی ہے، مندرجہ بالا شعر کو غالبؔ کے اس شعر کے ساتھ پڑھیے ؎

نقش فریادی ہے کس کی شوخیٔ تحریر کا

غالبؔ کے شعر میں فکری عنصر نمایاں ہے اور میرؔ کے یہاں جذبی اور جمالی عنصر۔ میرؔ کا ایک پیغام سنیے اور مجھے رخصت عطا کیجئے ؎

نالۂ عجز نقص الفت ہے رنج و محنت کمال راحت ہے
تا دم مرگ غم خوشی کا نہیں دل آزردہ گر سلامت ہے

ان اشعار میں کتنی رجائیت پائی جاتی ہے کتنی حوصلہ مندی۔ میرؔ کی شاعری کی تقدیر جدید نئی تاثیرات سے پُر ہے۔

"मीर" की कविता

ठाकुर प्रसाद सिंह

हिंदी के लेखक और आलोचक इधर अक्सर यह बात कहने लगे हैं कि हिंदी-उर्दू दोनों एक हैं और यदि देवनागरी लिपि को हिंदुस्तान की एक-मात्र लिपि मान लिया जाय तो यह निश्चय करना मुश्किल होगा कि उर्दू और हिंदी में ख़ास फ़र्क़ क्या है ? एक हिंदी के लेखक के नाते मुझे इस बात से बहुत ख़ुश होना चाहिए लेकिन इसके उल्टे में बहुत दुखी हो जाता हूँ। कारण, कि जो लोग इस तरह की बातें करते हैं वे जब पिछले सौ-डेढ़ सौ वर्षों के साहित्य की प्रगति का विवरण देते हैं तो उसमें विना किसी हिचक के मीर, दाग़, ग़ालिब ऐसे बड़े नाम छोड़ जाते हैं और इस बात का भी ख़याल नहीं करते कि अगर कोई हिंदुस्तानी साहित्य है तो उसे बढ़ाने और ज़माने के लायक़ बनाने में जितना हाथ हिंदी के कवियों का है उतना ही उर्दू के शायरों का भी है। विना इस सच्चाई के माने केवल लिपि की एकता से यह बात साफ़ होने की नहीं। ज़रूरत इस बात की है कि पिछले सौ-डेढ़ सौ वर्षों के साहित्य के इतिहास को भाषा के विकास के साथ-साथ रखकर देखा जाय और इस बात का सही अंदाज़ लगाया जाय कि उत्तर भारत में जो भाषा धीरे-धीरे साहित्य की भाषा बनी है उसका विकास कैसे हुआ है ? हिंदी के महत्त्वपूर्ण कवि भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र जहाँ एक ओर ब्रजभाषा के बहुत बड़े कवि थे वहीं उर्दू और फ़ारसी पर भी उनका ख़ासा अधिकार था और वे "रसा" के नाम से उर्दू में शायरी भी किया करते थे। उनके अलावा राजा शिवप्रसाद "सितार-ए-हिंद" या उनके आस-पास के कितने-ही लिखने-पढ़ने वाले उर्दू के अच्छे जानकार थे और उन्होंने खुलकर ऐसे मुहावरों का प्रयोग अपनी भाषा में किया है जो उर्दू शायरी में बराबर प्रयोग में आते रहे हैं। बाद में चलकर हिंदी का "स्टैंडर्ड" बनाने की कोशिश में उसे अधिक से अधिक संस्कृत की ओर ले जाया गया लेकिन प्रेमचंद, सुदर्शन या बाद के पंजाब या उर्दू से आये हुए कितने-ही लिखने-पढ़ने वालों ने एक

میرؔ کی شاعری

ٹھاکر پرشاد سنگھ

ہندی کے قلم کار اور ناقد ادھر اکثر یہ بات کہنے لگے ہیں کہ ہندی اور اردو دونوں ایک ہیں اور اگر دیو ناگری کو ہندوستان کے واحد رسم الخط کی حیثیت سے اختیار کر لیا جائے تو یہ فیصلہ کرنا دشوار ہوگا کہ اردو اور ہندی میں خاص فرق کیا ہے۔ ہندی کے مضمون نگار کی حیثیت سے مجھے اس بات پر بہت خوش ہونا چاہیے لیکن اس کے برعکس میں بہت دکھی ہو جاتا ہوں کیونکہ جو لوگ اس طرح کی باتیں کرتے ہیں وہ جب گزشتہ سو ڈیڑھ سو برسوں کی ادبی ترقیوں کا تذکرہ کرتے ہیں تو میرؔ، غالبؔ، داغؔ جیسے بڑے نام نظر انداز کرنے میں ذرا بھی تامل نہیں کرتے اور اس کا بھی لحاظ نہیں رکھتے کہ اگر واقعی کوئی ہندوستانی ادب ہے تو اسے پروان چڑھانے اور زمانے کے لائق بنانے میں ہندی والوں کا جتنا حصہ ہے اتنا ہی اردو والوں کا بھی ہے۔ اس صداقت کے اعتراف کے بغیر محض رسم الخط میں یکسانیت لا دینے سے بات صاف ہونے کی نہیں۔ ضرورت اس بات کی ہے کہ گزشتہ صدی ڈیڑھ صدی کی ادبی تاریخ کو لسانی ارتقا کے عوامل کے ساتھ دیکھا جائے اور اس حقیقت کی صحیح قدر سنجی کی جائے کہ شمالی ہند میں جو زبان رفتہ رفتہ ادب کی زبان بنی اس کا ارتقا کیسے ہوا۔ ہندی کے نہایت اہم شاعر بھارتیندو بابو ہرش چندر جہاں برج بھاشا کے بہت بڑے شاعر تھے وہیں انھوں نے اردو فارسی میں بھی خاصی دست گاہ بہم پہونچائی تھی اور وہ اردو زبان میں شعر کہتے تھے اور رساؔ تخلص فرماتے تھے۔ ان کے علاوہ راجہ شیو پرشاد "ستارۂ ہند" یا ان کے معاصرین میں سے متعدد لکھنے پڑھنے والے اردو میں کافی دخل رکھتے تھے اور انھوں نے ایسے محاوروں کا استعمال کھل کے کیا ہے جو اردو میں مستعمل و مروج تھے۔ بعد کے دور میں ہندی کا معیار بنانے کی کوشش میں اسے زیادہ سے زیادہ سنسکرت سے قریب لایا گیا لیکن

अलग भाषा लिखने का अपना आग्रह बनाये रखा : इसलिए, जब मैं यह कहता हूँ कि हिंदी और उर्दू दोनों साहित्य पिछले १०-१५ वर्षों मे बहुत नज़दीक आये हैं तो मेरा मतलब उन लोगों से बिल्कुल भिन्न होता है जो उर्दू को हिंदी की केवल एक शैली मानते हैं। सही बात तो यह है कि उत्तर भारत में विशेष रूप से दोनों भाषाओं का साहित्य लगभग साथ-साथ रचा गया है। एक का रुजहान अधिक से अधिक फ़ारसी की तरफ़ था तो दूसरी का संस्कृत की तरफ़ और बीच में, कितने ही कारणों से, दोनों में काफ़ी दूरी भी आ गयी; लेकिन; एक ज़मीन, एक आसमान, एक देश और एक पानी इन सारी दूरियों को कम करते हैं और अब ऐसा लगता है कि ये दूरियाँ कल शायद ख़यालों में रह जाएं तो रह जाएं, साहित्य मे नहीं रहने जा रही हैं।

"मीर" की शायरी पढ़ने के सिलसिले में यह बातें बार-बार मन में उठती हैं। क्योंकि, "मीर" के पहले, उत्तर भारत में हिंदी (उर्दू जिसका नाम बाद में पड़ा) भाषा या साहित्य नाम की कोई चीज़ थी ही नहीं। "ख़ुसरू" का नाम खड़ी बोली और हिंदी की कविताओं के लिए अवश्य लिया जाता है लेकिन आज तक इस बात का निश्चय नहीं हो पाया कि वे रचनाएं सचमुच "ख़ुसरू" की ही हैं। ऐसी हालत में हमें यह स्वीकार करना होगा कि दिल्ली के बाज़ारों में बोली जाने वाली आम बोल-चाल की भाषा ने धीरे-धीरे एक साहित्यिक भाषा का स्वरूप लिया और वह इतनी विकसित हो गयी कि उसमें बाद में "ग़ालिब"-ऐसे कवियों को अपनी भावनाओं के प्रकटीकरण में सुख मिला। सच पूछिए तो भाषा की शक्ति की पहचान तभी होती है जब कोई बहुत-बड़ा लेखक उसे अपनी रचना का माध्यम बनाता है। पहले तो भाषा की कमज़ोरी से वह झिझकता है, फिर धीरे-धीरे मन-चाही शब्दावली उस भाषा में बढ़ाना शुरू करता है, अपने मन के मुहावरों को चुनकर भाषा को इस लायक़ बनाता है कि वह उसके विचारों को सही तरह से पढ़ने वालों के पास तक ले जा सके। इन कोशिशों का असर धीरे-धीरे रंग लाता है और साधारण बोल-चाल की बोली धीरे-धीरे एक मज़बूत भाषा के रूप में बदल जाती है। भाषा और साहित्य का अध्ययन करने वालों के लिए इस परिवर्तन का अध्ययन बड़ा ही मनोरंजक होता है। इसीलिए जब मैं "मीर" को पढ़ता हूँ तो उनके सारे साहित्य में मुझे बोली से उभर कर भाषा बनने की यह कहानी बार-बार याद आती है। लाल-क़िले से जामा मस्जिद तक रास्ते पर बोली जाने वाली बोली को ही "मीर" ने एक दिन उर्दू की सच्ची कसौटी

پریم چند، سدرشن یا پنجاب یا اردو سے آئے ہوئے بعد کے کتنے ہی لکھنے پڑھنے والوں نے ایک الگ زبان لکھنے کا اصرار جاری رکھا۔ اس لیے۔ جب میں یہ کہتا ہوں کہ گزشتہ دس پندرہ برسوں میں اردو اور ہندی ایک دوسرے سے بہت قریب آئے ہیں تو میرا مدعا ان لوگوں سے بالکل مختلف ہوتا ہے جو اردو کو ہندی کی صرف ایک شیلی (اسٹائل) مانتے ہیں۔ صحیح تو یہ ہے کہ دونوں زبانوں کا ادب شمالی ہند میں تقریباً بہ یک وقت تخلیقی مراحل سے گزرا ہے: ایک میں فارسی عنصر غالب تھا اور دوسری میں سنسکرت عنصر۔ عہد وسطیٰ میں مختلف وجوہات کی بنا پر دونوں زبانوں میں کافی فاصلہ بھی پیدا ہو گیا لیکن ایک زمین ایک آسمان، ایک ملک اور ایک پانی ان فاصلوں کو گھٹاتے ہیں اور اب ایسا معلوم ہوتا ہے کہ غالباً کل یہ فاصلے محض خیالی رہ جائیں تو رہ جائیں حقیقتاً ادب میں رہنے نہیں جا رہے ہیں۔

میر کی شاعری کے مطالعہ کے سلسلے میں یہ باتیں بار بار دل میں پیدا ہوتی ہیں کیونکہ میر سے پہلے شمالی ہند میں ہندی (جس کا نام اردو بعد میں پڑا) زبان یا ادب نام کی کوئی چیز موجود ہی نہ تھی۔ خسرو کا نام کھڑی بولی اور ہندی کی شاعری کے سلسلے میں ضرور لیا جاتا ہے لیکن آج تک قطعیت کے ساتھ یہ فیصلہ نہ ہو سکا کہ وہ تخلیقات واقعتاً خسرو کی ہی ہیں۔ ایسی حالت میں ہمیں یہ قبول کرنا پڑے گا کہ دلی کے بازاروں میں مروج عام بول چال کی زبان نے بتدریج ایک ادبی زبان کا قالب اختیار کیا اور وہ اس قدر وسعت اختیار کر گئی کہ بعد کے دور میں غالب جیسے شعرا کے جذبات و احساسات کے اظہار کی متحمل ہو گئی۔ سچ پوچھیے تو زبان کی صلاحیت کی پہچان اسی وقت ہوتی ہے جب کوئی بہت بڑا فن کار اسے ذریعۂ اظہار بناتا ہے۔ ابتدا میں تو زبان کی تنگ دامانی سے وہ جھجکتا ہے لیکن آہستہ آہستہ خاطر خواہ ذخیرۂ الفاظ و اسالیب بیان کا اضافہ شروع کر دیتا ہے۔ وہ اپنے مافی الضمیر کے بموجب محاوروں کا انتخاب کرکے زبان کو اس قابل بناتا ہے کہ اسے ترسیل جذبات و احساسات میں زیادہ سے زیادہ کامیابی ہو سکے۔ ان کوششوں کا اثر آہستہ آہستہ رنگ لاتا ہے اور عام بول چال کی زبان آہستہ آہستہ وسیع و ہمہ گیر زبان بن جاتی ہے۔ لسانیات اور ادبیات کا ذوق رکھنے والوں کے لیے اس تبدیلی کا مطالعہ بہت دلچسپ

कहा था—तब, उनकी यह बात एक ऐतिहासिक महत्त्व रखती थी। शुरू से ही उर्दू पर दिल्ली के बाज़ारों की कितनी गहरी छाप है; इसका अंदाज़ हमें "मीर" और उनके आस-पास उभरने वाले शायरों की कविता में क़दम-क़दम पर मिलता है। अपने जीवन-काल में "मीर" ने उसे जाने कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया और जब बाद में और भी कवि और लेखक आये तो उन्हें एक मज़बूत और प्राण से भरी हुई भाषा लिखने और व्यवहार करने के लिए मिली। इसीलिए यदि "मीर" को "ख़ुदा-ए-सुख़न" कहा जाता है तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है। "वली" दक्किनी, "सौदा", "नज़ीर" अकबराबादी, "अनीस" और "ग़ालिब" के होते हुए भी यह कहा जा सकता है कि जो बात "मीर" में है वह और किसी में नहीं है। उनका लिखा हुआ बहुत-कुछ साहित्य बाद में अगर इतना प्रचलित न रह गया और उनकी भाषा कहीं-कहीं पुरानी लगने लगी तो इसका यह मतलब नहीं कि "मीर" छोटे शायर हैं। सच तो यह है कि उनके कारण ही और शायरों की हस्तियाँ हैं। इसलिए वे उस बड़ी इमारत की नींव हैं जिस पर उत्तर भारत के बड़े साहित्यों की बुलंद इमारत खड़ी है।

"मीर" को और कई विशेषताओं के लिए पढ़ा जाना चाहिए लेकिन मैं तो यहाँ ख़ास तौर से यही कहना चाहता हूँ कि आज से डेढ़ सौ वर्ष पहले निखार पाने वाली शायरी के धूप-छाँही रंग का अध्ययन करने के लिए विशेष रूप से "मीर" को पढ़ना होगा। बड़ी बात यह नहीं है कि "मीर" ने बोल-चाल की भाषा लिखी है, बल्कि, बड़ी बात यह है कि उनकी शायरी में बोल-चाल का एक मुहावरा या एक शब्द जो सड़क पर से उठाकर रखा गया है, अपनी नयी जगह पर हीरे की तरह चमकता है। जो बाहर धूल थी वह "मीर" के हाथ पड़ कर हीरा बन जाता है, यह बात उनका साहित्य पढ़ते समय क़दम-क़दम पर याद आती है। उदाहरण के लिए कुछ शेर यहाँ पेश हैं:—

पत्ता-पत्ता, बूटा-बूटा हाल हमारा जाने है,
जाने-न-जाने गुल ही न जाने, बाग़ तो सारा जाने है।

कल तक हमने तुमको रखा था सौ परदे में कली के रंग
सुब्ह शिगुफ़्ता गुल जो हुए तुम सबने किया नज़्ज़ारा आज।

क्या कहिए कुछ बन नहीं आती जंगल-जंगल हो आये
छाँह में जाकर फूलों की हम इश्क़-ो-जुनूँ को रो आये।

ہوتا ہے۔ اس لیے جب میں میرؔ کو پڑھتا ہوں تو ان کے کلام میں مجھے بولی کی منزل سے ترقی کرکے ابھرتی ہوئی، تشکیل پاتی ہوئی ادبی زبان کی یہ کہانی بار بار یاد آتی ہے۔ لال قلعے سے جامع مسجد تک شاہراہوں پر بولی جانے والی بولی ہی کو میرؔ نے ایک دن اردو کی سچی کرلی کہا تھا تب ان کی اس بات کی ایک تاریخی اہمیت تھی۔ ابتدا ہی سے اردو پر دلی کے بازاروں کا کتنا گہرا اثر ہے اس کا اندازہ ہمیں میرؔ اور ان کے قریبی عہد میں ابھرنے والے شاعروں کے کلام سے قدم قدم پر ہوتا ہے اپنی مدت العمر میں ہی اسے میرؔ نے جانے کہاں سے کہاں پہونچا دیا۔ اور جب بعد میں اور بھی شعرا وادبا آئے تو انھیں ایک زندہ اور حیات تازہ کی قوتوں سے معمور زبان استعمال کے لیے ملی۔ اس لیے اگر میرؔ کو خدائے سخن کہا جاتا ہے تو اس میں مبالغہ نہیں۔ ولیؔ دکنی، سوداؔ، نظیرؔ اکبرآبادی، انیسؔ اور غالبؔ کی اہمیت تسلیم کرتے ہوئے بھی بلا خوفِ تردید یہ کہا جاسکتا ہے کہ جو بات میرؔ کے یہاں ہے وہ اور کسی میں نہیں۔ ان کا تخلیق کردہ ادب اگر بعد کے دور میں اتنا مقبول نہ رہا اور ان کی زبان اگر بعد میں نسبتاً نامانوس معلوم ہونے لگی تو اس کے معنی یہ نہیں کہ میرؔ کا مرتبہ بھی گھٹ گیا۔ حقیقت تو یہ ہے کہ انھیں کی وجہ سے اور شعرا کی ہستیاں ہیں اس لیے وہ اس عظیم الشان عمارت کی بنیاد ہیں جس پر شمالی ہند کے ادب کی رفیع الشان تعمیر قائم ہے۔

میرؔ کو اور کئی خصوصیات کے لیے پڑھا جانا چاہیے۔ لیکن میں تو یہاں خاص طور سے یہی کہنا چاہتا ہوں کہ آج سے ڈیڑھ سو برس پہلے نکھار حاصل کرنے والی شاعری کی دھوپ چھاؤں کے رنگ کا مطالعہ کرنے کے لیے خصوصیت سے میرؔ کو پڑھنا ہوگا۔ بڑی بات یہ نہیں کہ میرؔ نے بول چال کی زبان لکھی ہے بلکہ بڑی بات یہ ہے کہ ان کی شاعری میں بول چال کا ایک محاورہ یا ایک لفظ جو سڑک سے اٹھا کے برگزیدہ کیا گیا ہے اپنی نئی جگہ پر ہیرے کی طرح جگمگا رہا ہے۔ جو باہر مشت غبار تھا۔ وہ میرؔ کے ہاتھ پڑ کر ہیرا بن جاتا ہے۔ یہ بات ان کے کلام کے مطالعہ کے دوران ہر ہر لحظہ محسوس ہوتی ہے۔ مثالاً کچھ اشعار یہاں پیش ہیں۔

پتہ پتہ بوٹا بوٹا حال ہمارا جانے ہے ؎ جانے نہ جانے گل ہی نہ جانے باغ تو سارا جانے ہے

जब नाम तेरा लीजे तब चश्म भर आवे
इस जिंदगी करने को कहाँ से जिगर आवे ?

हम ख़ाक में मिले तो मिले लेकिन ऐ सिपह्र
उस शोख़ को भी राह प' लाना ज़रूर था ।

उल्टी हो गयीं सब तदबीरें कुछ न दवा ने काम किया,
देखा इस बीमारिये-दिल ने आख़िर काम तमाम किया ।

अह्दे-जवानी रो-रो काटा पीरी में लीं आँखें मूँद,
यानी रात बहुत थे जागे सुब्ह हुई आराम किया ।

सरज़द हमसे बेअदबी तो वहशत में भी कम ही हुई,
कोसों उसकी ओर गये पर सिजदा हर-हर गाम किया ।

याँ के सुपेद-ो-सियह में हमको दख़्ल जो है सो इतना है,
रात को रो-रो सुब्ह किया और दिन को जूँ-तूँ शाम किया ।

लेकिन और भी ऐसी कितनी-ही चीज़ें हैं जो सीधे या टेढ़े तरीक़े से लेखक पर असर डालती हैं और छन कर वह असर रचनाओं में आता है । यहाँ यह बात सोचने की है कि दिल्ली के उजड़ने या हिंदुस्तान की सल्तनत के बार-बार मिट्टी में मिलने का जितना असर उर्दू की कविता पर है उतना हिंदी की कविता पर नहीं है । लखनऊ के नये तरीक़े से बसने और वहाँ नवाबों की छाया में एक अलग तरह के साहित्य के रचे जाने के जो कारण थे वे दिल्ली के टूटे और बिखरे हुए माहौल में रचे जाने वाले साहित्य से अलग थे । दिल्ली का रूप कुछ-कुछ शहीदों जैसा हो गया था । बार-बार के हमले और लूट-पाट ने उसका तार-तार हिला दिया था; जबकि; लखनऊ में, गोमती के किनारे, ज़माने की ओर से पीठ फेर कर, कुछ लोग बालू के नये घरौंदे बनाने में लगे हुए थे । इसीलिए दिल्ली और लखनऊ की कविता के मूल (मन:स्थितियाँ) अलग-अलग हैं । दिल्ली में कष्ट सहनेवाला क़दम-क़दम पर मिटनेवाला एक आदमी दिखलायी पड़ता है जिसका मन अपने और ज़माने के दर्दों के बीच मथा जा रहा है । लखनऊ में ऊपरी तड़क-भड़क, छीन-झपट अधिक है । इसे लोगों ने बाद में "चोटी-कंघी का साहित्य" भी कहा ।

کل تک ہم نے تم کو رکھا تھا سو پردے میں کلی کے رنگ　　　صبح شگفتہ گل جو ہوئے تم سب نے کیا نظارہ آج

کیا کہیے کچھ بن نہیں آتی جنگل جنگل ہو آئے　　　چھاؤں میں جا کر پھولوں کی ہم عشق و جنوں کو رو آئے

جب نام ترا لیجیے تب چشم بھر آوے　　　اس زندگی کرنے کو کہاں سے جگر آوے

ہم خاک میں ملے تو ملے لیکن اے سپہر　　　اس شوخ کو بھی راہ پہ لانا ضرور تھا

الٹی ہو گئیں سب تدبیریں کچھ نہ دوا نے کام کیا　　　دیکھا اس بیماریٔ دل نے آخر کام تمام کیا

عہد جوانی رو رو کاٹا پیری میں لیں آنکھیں موند　　　یعنی رات بہت تھے جاگے صبح ہوئی آرام کیا
سرزد ہم سے بے ادبی تو وحشت میں بھی کم ہی ہوئی　　　کوسوں اس کی اور گئے پر سجدہ ہر ہر گام کیا
یاں کے سپید و سیہ میں ہم کو دخل جو ہے سو اتنا ہے　　　رات کو رو رو صبح کیا اور دن کو جوں توں شام کیا

اور بھی ایسی کتنی ہی چیزیں ہیں جو براہ راست یا بالواسطہ طور پر فن کار پر اثر انداز ہوتی ہیں اور وہ اثر مختلف پردوں سے گزر کے تخلیق میں حل ہو جاتا ہے۔ یہاں یہ بات سوچنے کی ہے کہ دلی کے اجڑنے یا ہندوستان کی سلطنت کے بار بار برباد ہونے کا جتنا اثر اردو کی شاعری پر ہے اتنا ہندی شاعری پر نہیں۔ لکھنؤ کے نئے سرے سے بسنے اور وہاں نوابوں کے زیر سایہ ایک مختلف وضع کے ادب کی تخلیق کے جو اسباب تھے وہ دلی کی شکست و انتشار کے ماحول میں تخلیق کیے جانے والے ادب سے مختلف تھے۔ دلی ایک حد تک شہدا کے مزاج میں رنگ گئی تھی۔ بار بار کے حملوں اور لوٹ پاٹ نے اس کا تار تار جھنجھوڑ دیا تھا جب کہ لکھنؤ میں ساحلِ گومتی پر زمانے کی طرف سے رُخ پھیر کے کچھ لوگ ریت کے نئے گھروندے بنانے میں مصروف تھے۔ اسی لیے بنیادی حالت قلبی کے اعتبار سے دلی اور لکھنؤ کی شاعری بالکل الگ الگ ہے۔ دلی میں انسان الم آشنا، الم نصیب اور ہر ہر لمحہ مٹتا رہنے والا ہے جس کا دل غم دل اور غم روزگار کی کشمکش و کشاکش میں مضطر ہے لکھنؤ میں مصنوعی و ظاہری ترک بھڑک، چھینا جھپٹی زیادہ ہے۔ اسے بعد میں لوگوں نے کنگھی

"मीर" की गठन दिल्ली की थी लेकिन विपत्ति की मार से उन्हें रहना लखनऊ में पड़ा। लखनऊ उनके मन के ख़िलाफ़ पड़ता था इसलिए वे एक ओर दिल्ली के छूटने और दूसरी ओर लखनऊ में रहने के दर्द से बराबर तबाह रहते थे। उनकी इस परेशानी का असर उनके अधिकांश साहित्य पर पड़ा। केवल लखनऊ के ख़िलाफ़ या दिल्ली के पक्ष में लिखी गयी कुछ कविताओं का उदाहरण देने से ही यह बात सिद्ध न होगी। इसके लिए "मीर" के पूरे साहित्य को डूब कर पढ़ना ज़रूरी होगा। एक शाही वातावरण कैसे उतर कर हल्के-फुल्के ग़ैरज़िम्मेदार तरीक़े की दुनिया में समा गया, यह बात "मीर" ने बड़े ही दर्द से स्वीकार की है। आज लगभग वही दर्द उर्दू का हर अच्छा शायर कुछ दूसरी तरह से महसूस करता है। उर्दू साहित्य तो आज लिखा जा रहा है लेकिन उसको पढ़ने और सुनने वाले धीरे-धीरे कम होते जा रहे हैं। इसका कारण यह है कि उर्दू का लिखना-पढ़ना धीरे-धीरे कम होता जा रहा है और अच्छे सुनने वाले या पढ़ने वाले जहाँ से आते हैं वहाँ से उनका आना धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। उर्दू यों भी शुरू से ही गाँव की ज़ुबान नहीं थी। अब वह शहरों से भी धीरे-धीरे निकलती जा रही है। ऐसी हालत में उर्दू के अच्छे शायरों को बड़ी दिक़्क़त का सामना करना पड़ रहा है। इसका नतीजा यह हो रहा है कि उर्दू फिर सरल और सीधी हो रही है और उसमें बोल-चाल के अधिकाधिक शब्द आने लगे हैं। लाचारी उर्दू के शायरों को लगभग उसी हाल में रखती रही है जिसमें कभी लखनऊ के शायर पड़े हुए थे। "मीर" का अध्ययन करने वालों को इस तरफ़ भी ध्यान देना चाहिए और फिर से बोल-चाल की तरफ़ जाने वाली अपनी भाषा की शक्ति को समय रहते पहचान कर उसे मंज़ूर करना चाहिए। यदि वे इस संबंध में कुछ करना चाहेंगे तो उन्हें सबसे बड़ी मदद "मीर" की शायरी से ही मिलेगी। यदि उर्दू को आगे बढ़ना है तो उसको फिर से नये मुहावरे धूल में से उठा कर अपनी शायरी के बीच में रखने होंगे और इस ज़माने की परेशानी को उसके द्वारा साफ़ और सही तरीक़े से पढ़ने वालों के सामने रखना होगा। उन्हें अपने ज़माने के दर्द को अपनी भाषा के आईने में यदि सही तरह से चमकाना है तो "मीर" की यह सतरें उन्हें मदद करेंगी :—

मुंह तका ही करे है जिस-तिस का
हैरती है ये आईना किस का ?

چولی کا ادب کہا ہے۔ میر بنیادی طور سے دہلوی تھے لیکن مصائب و حالات کے تقاضے نے انھیں لکھنؤ میں قیام اختیار کرنے پر مجبور کیا۔ لکھنؤ ان کی طبیعت کے خلاف واقع ہوا تھا۔ اسی لیے وہ دلی کے چھوٹنے اور لکھنؤ میں رہنے کی دوہری اذیت میں مبتلا تھے۔ ان کی اس پریشانی کا اثر ان کے کلام کے بیشتر حصے پر خوب پڑا۔ صرف لکھنؤ کے ذم یا دلی کی مدح میں جو اشعار موجود ہیں ان سے یہ بات ثابت نہ ہوگی۔ اس کے لیے میر کے مکمل کلام کا غائر مطالعہ ضروری ہے۔ ایک شاہی ماحول کس طرح پست ہوکے ہلکے پھلکے غیر ذمہ دار انداز کی دنیا میں آکے ضم ہو گیا اس بات کا میر نے شدید کرب کے ساتھ اعتراف کیا ہے۔ آج اردو کا ہر اچھا شاعر تقریباً وہی درد ذرا مختلف نوعیت سے محسوس کرتا ہے۔ اردو ادب کی تخلیق تو آج بھی جاری ہے لیکن اس سے لطف اندوز ہونے والوں کی تعداد رفتہ رفتہ کم ہوتی جارہی ہے۔ اس کی وجہ یہ ہے کہ اردو لکھنا پڑھنا اب آہستہ آہستہ کم ہوتا جارہا ہے اور اچھے قارئین و سامعین جس کارخانہ میں ڈھلتے تھے اس کی رفتار اب بہت سست ہوتی جارہی ہے۔ اردو یوں بھی کبھی گاؤں کی زبان نہیں تھی اب آہستہ آہستہ شہروں سے بھی نکلتی جارہی ہے۔ ایسی حالت میں اردو کے اچھے شاعروں کو بڑی دقت کا سامنا کرنا پڑ رہا ہے۔ اس کا نتیجہ یہ ہو رہا ہے کہ اردو اب پھر سہل اور سادہ ہو رہی ہے اور اس میں عام بول چال کے الفاظ زیادہ سے زیادہ آتے جارہے ہیں۔ مجبوری اردو کے شاعروں کو تقریباً اسی حال میں رکھتی رہی ہے جس میں کبھی لکھنؤ کے شاعر پڑے ہوئے تھے۔ میر کا مطالعہ کرنے والوں کو اس پہلو پر بھی توجہ کرنی چاہیے اور بول چال کی زبان کی طرف پھر سے جانے والی اپنی زبان کی غیر مرئی قوتوں کو وقت رہتے پہچان کر قبول کرلینا چاہیے۔ اگر وہ اس سلسلے میں کچھ کرنا چاہیں گے تو اس سلسلے میں سب سے بڑی مدد انھیں میر کی شاعری سے ہی ملے گی۔ اگر اردو کو آگے بڑھنا ہے تو پھر سے نئے محاوروں کو دھول سے اٹھا کے اپنی شاعری میں جگہ دینی ہوگی اور اس دور کے تقاضوں کو ان نئے اندازوں سے ناظرین کے سامنے زیادہ صاف اور صحیح طریقے سے رکھنا ہوگا انھیں اپنے زمانے کے درد کو اگر اپنی زبان کے شیشے میں اتارنا ہے اور اسے حقیقی نور و رنگ بخشنا ہے تو میر کے یہ اشعار یقیناً ان کے لیے مدد و معاون ثابت ہوں گے۔

शाम ही से बुझा-सा रहता है
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिस का।

ताब किसको जो हाले-"मीर" सुने
हाल ही और कुछ है मजलिस का।

मुद्दआ जो है सो वो पाया नहीं जाता कहीं
एक आलम जुस्तजू में जी को अपने खो गया।

बेकसी मुद्दत तलक बरसा की अपनी गोर पर
जो हमारी ख़ाक पर से हो के गुज़रा रो गया।

है उसके हर्फ़े-ज़ेरे-लबी का सभों में ज़िक्र
क्या बात थी कि जिसका यह बिस्तार हो गया?

तू वह मताअ है कि पड़ी जिसकी तुझपे आँख
वह जी को बेचकर भी ख़रीदार हो गया।

मिला है ख़ाक में किस-किस तरह का आलम याँ
निकल के शहर से टुक सैर कर मज़ारों का।

दिल की आबादी की इस हद है ख़राबी कि न पूछ
जाना जाता है कि इस राह से लश्कर निकला

हम रहरवाने राहे-फ़ना हैं बरंगे-उम्र
जाएंगे ऐसे खोज भी पाया न जायगा।

दिल की वीरानी का क्या मज़कूर है?
यह नगर सौ मरतबा लूटा गया।

टूटने के इस दर्द के अलावा भी "मीर" में बहुत-कुछ है। वे कुछ उन हिम्मती लोगों में थे जो विपत्तियों में भी सपने देखने का हौसला रखते हैं। इतिहास इस बात का गवाह है कि विपत्तियाँ लोगों पर आयीं, गुज़र गयीं, उनकी याद भी बाद

منہ تکا ہی کرے ہے جس تس کا	حیرتی ہے یہ آئینہ کس کا
شام ہی سے بجھا سا رہتا ہے	دل ہوا ہے چراغ مفلس کا
تاب کس کو جو حالِ میرؔ سنے	حال ہی اور کچھ ہے مجلس کا

مدعا جو ہے سو وہ پایا نہیں جاتا کہیں	ایک عالم جستجو میں جی کو اپنے کھو گیا
بے کسی مدت تلک برسا کی اپنی گور پر	جو ہماری خاک پر سے ہو کے گزرا رو گیا
ہے اس کے حرفِ زیرِ لبی کا سبھوں میں ذکر	کیا بات تھی کہ جس کا یہ بستار ہو گیا
تو وہ متاع ہے کہ پڑی جس کی تجھ پہ آنکھ	وہ جی کو بیچ کر بھی خریدار ہو گیا

ملا ہے خاک میں کس کس طرح کا عالم یاں	نکل کے شہر سے ٹک سیر کر مزاروں کا

دل کی آبادی کی اس حد ہے خرابی کہ نہ پوچھ	جانا جاتا ہے کہ اس راہ سے لشکر نکلا

ہم رہروانِ راہِ فنا ہیں برنگ عمر	جائیں گے ایسے کھوج بھی پایا نہ جائے گا

دل کی ویرانی کا کیا مذکور ہے	یہ نگر سو مرتبہ لوٹا گیا

شکست و ریخت کے اس درد کے علاوہ بھی میرؔ کے پاس بہت کچھ ہے۔ وہ کچھ ان حوصلہ مندوں میں سے تھے جو سخت ترین مصائب میں بھی خواب دیکھنے کا حوصلہ رکھتے تھے۔ تاریخ گواہ ہے کہ مصائب لوگوں پر آئے، گزر گئے — ان کی یاد بھی بعد میں باقی نہیں رہتی لیکن مصائب کے ہجوم میں دیکھے ہوئے خواب زیادہ دوام حاصل کرتے ہیں اور آسانی سے ٹوٹتے نہیں — اور وہ صدیوں تک صرف اس لیے زندہ رہتے ہیں کہ وہ خواب جنھوں نے دیکھے تھے وہ خود ہجوم مصائب میں مبتلا تھے۔ اور اسی عالم میں انھوں نے پرورش پائی تھی

में बाक़ी नहीं रहती लेकिन विपत्तियों के बीच देखे हुए सपने कहीं अधिक मज़बूत सिद्ध होते हैं और वे सैकड़ों वर्षों तक केवल इसलिए जीते रहते हैं कि उन्हें जिन लोगों ने देखा था वे ख़ुद उन विपत्तियों के बीच पले थे। इन्हीं सपनों को हम "न मिटने वाला साहित्य" कहते हैं और इन्हीं के बल पर हम सभ्यता और संस्कृति को आगे बढ़ते, सँवरते और नया रूप लेते देखते हैं। पता नहीं नादिरशाह, अहमदशाह अब्दाली तथा ऐसे कितने ही ख़ूंख़ार लोगों के हमलों से जली दिल्ली की गलियों में धुएं और जलन की कैसी बू रही हो, वह झोंका तो आया और निकल गया लेकिन "मीर" के साहित्य में एक दूसरा झोंका अब भी बचा हुआ है।

कहीं क्या बाल तेरे खुल गये थे ?
कि झोंका बाव का कुछ मुश्कबू था।

यह सुगंधित झोंका "मीर" ने आने वालों को सौंपा है कि जिससे वे ज़रूरत के समय दुनिया की हर गली में भरी हुई उबासी और सड़न से अपने को बाहर कर सकें और सपने के बीच जी सकें। पता नहीं यह झोंका न होने पर हमारी आपकी क्या हालत होगी। यह प्राणमय चेतना और सुगंधित स्वप्न सबसे बड़ी विरासत है जो हमें "मीर"-ऐसे शायरों से मिली है। जब हम "मीर" की याद करते हैं तो उनके साथ-साथ यह झोंका अपने आप हमें आकर लपेट लेता है और हम एक ताज़गी से भर जाते हैं।

ایسے ہی خوابوں کو دوامی ادب کہا جاتا ہے اور انھیں کے بل پر ہم تہذیب و ثقافت کو مائل ارتقا، آراستہ و پیراستہ ہوتے اور جدید اطوار و انداز اختیار کرتے دیکھتے ہیں۔ معلوم نہیں نادر شاہ، احمد شاہ ابدالی اور ایسے ہی کتنے خون خوار لشکروں کے بہیمانہ حملوں میں خاکستر ہوئی دلی کی گلیوں میں دھوئیں اور جلن کی کیسی بو رہی ہو ـــــ وہ جھونکا تو آیا اور گزر گیا لیکن میرؔ کے ادب میں ایک اور لطیف تر جھونکا آج بھی موجود ہے ـــــ

کہیں کیا بال تیرے کھل گئے تھے ؎ کہ جھونکا باؤ کا کچھ مشک بو تھا

یہ لطیف و معطر جھونکا میرؔ نے آنے والوں کو سونپا ہے جس سے وہ بہ وقت ضرورت دنیا کی ہر گلی میں بھری ہوئی سرانڈھ اور اباسی سے خود کو بچا لے جا سکیں اور خوابوں کی دنیا میں زندگی بسر کر سکیں معلوم نہیں یہ جھونکا موجود نہ ہونے کی شکل میں ہماری آپ کی کیا حالت ہوتی۔ یہ حیات آور شعور اور معطر خواب سب سے عظیم ورثہ ہے جو ہمیں میرؔ اور اس قبیل کے شعرا سے ملا ہے۔ جب ہم میرؔ کی یاد کرتے ہیں تو ان کے تصور کے ساتھ ساتھ یہ جھونکا آ کر ہمیں خود میں غرق کر لیتا ہے اور ہم ایک تازگی کے احساس سے لبریز ہو جاتے ہیں۔

———

मीर की शाइरी का पसमंज़र

श्री रामनाथ "सुमन"

उर्दू शाइरी की फ़िज़ा आज बहुत बदली हुई है, महज़ इस ख़ातिर कि ज़माना भी आज बहुत बदल चुका है। ख़ास तौर से ग़ज़ल के लिए आज की ज़िन्दगी के असलूब बहुत मुआफ़िक़ नहीं हैं; हमारे तसव्वुर आज बहुत पेचीद: हो गये हैं; हमारी जज़्बाती सदाक़तें बोलना चाहती हैं पर अपने ही अन्दर उलझ-उलझकर रह जाती हैं। रंगीनियाँ हैं पर सिर्फ़ आँखो को लुभाकर ख़त्म हो जाती हैं, दिल को बहुत कम उभार पाती हैं; बातें हैं, पर वे जो ज़बान पर रक़्स करती हैं, दिल की गहराइयों से नहीं उठतीं। लग़िज़शें हैं, क़दम-क़दम पर हैं, पर सदाक़तों की रोशनी, जो रास्ता दिखा सकती थी, मुँह पर तारीकी की चादर लपेट सो गयी है; तख़य्युल का दायरा बढ़ गया है पर एहसास की गहराइयाँ खो गयी हैं। इक़्तिसादी भूलभुलैया में ज़िन्दगी बस अपनी राह से भटककर रह गयी है। न वे बातें हैं, न बात सुनने वाले हैं; न दर्द है, न हमदर्दियाँ हैं। हाँ, ज़बान जरूर तेज़ हो गयी है और ज़्यादा बोलने लगी है।

ऐसे वक़्त उर्दू ग़ज़ल के बादशाह 'मीर' की याद, हम जैसे कुछ मनचलों को, जो अब भी पुरानी वज़ा-क़ता, शऊर और मिय्यारे ज़िंदगी के सपने देखते हैं और इंसानियत के दर्द को हर तरह की ज़रूरियाते ज़िंदगी के ऊपर जगह देने के आदी हैं, रह रहकर आती है। उर्दू ग़ज़ल ने 'मीर' से 'जिगर' तक एक लम्बा रास्ता तै किया है लेकिन इस लंबी राह की हर मंज़िल पर 'मीर' का साया है, उनकी छाप है। उर्दू शाइरी, ख़ास तौर से उर्दू ग़ज़ल पर, निगाह डालते वक़्त 'मीर' को भूलना किसी तरह मुमकिन नहीं।

सबसे बड़ी बात जो 'मीर' में हम देखते हैं, वह आग है जो उन्हें वालिद, चचाजान और दीगर दुरवेशों से हासिल हुई थी। यह आग, अनचाहे, उनके बचपन में जली और ज़िन्दगी के आख़री लमहे तक उनमें, कई-कई सूरतों में

میرؔ کی شاعری کا پس منظر

شری رام ناتھ سُمنؔ

اردو شاعری کی فضا آج بہت بدلی ہوئی ہے۔ زمانہ بھی بہت بدل چکا ہے۔ خصوصاً غزل کے لیے تو آج کی زندگی کے اسلوب بہت زیادہ موافق نہیں۔ ہمارے تصوّرات آج بہت پیچیدہ ہو گئے ہیں۔ آج بھی ہماری جذباتی حقیقتیں قالب اظہار میں آنے کو مضطر ہیں لیکن اپنے ہی پیچ و خم میں الجھ کے رہ جاتی ہیں۔ رنگینیاں موجود ہیں لیکن نظروں کو لبھا کے رہ جاتی ہیں دل کو بہت کم متوجہ کرپاتی ہیں۔ باتیں نوک زبان پر الفاظ و اصوات کی صورت میں موجود ہیں لیکن کوئی آواز دل کی گہرائیوں سے نہیں اٹھتی۔ قدم قدم پر لغزشوں کے امکان ہیں لیکن رہ نما رونما نہیں ہوتا، تیرگی میں منھ چھپائے سو رہا ہے۔ تخیّل کا دائرہ وسیع ہوا ہے لیکن احساس کی گہرائیوں سے رشتے کٹ گئے ہیں۔ گم کردہ راہ زیست اقتصادی بھول بھلیوں میں الجھ کے رہ گئی ہے نہ وہ باتیں ہیں نہ وہ سننے والے نہ وہ درد ہیں اور نہ وہ ہمدردیاں — ہاں، یہ ضرور ہے — کہ زبان زیادہ تیز، زیادہ گرم گفتار ہوگئی ہے

ایسے وقت میں غزل کے بادشاہ میرؔ کی یاد ہم جیسوں کو رہ رہ کے آتی ہے۔ ہم۔ جو اب بھی قدیم وضع قطع، شعور اور معیار زندگی کے دل دادہ ہیں۔ اور لوازم حیات کی ہر قسم سے انسانیت کے رشتے اور اس کے درد کو بلند مقام دینے کے عادی ہیں۔ اردو غـــزل میرؔ سے جگرؔ تک ایک طویل رہ گزر سے گزری ہے۔ لیکن اس رہ گزر کی ہر منزل پر میرؔ کے نقش ثبت ہیں۔ عموماً اردو شاعری اور خصوصاً غزل کے مطالعہ کے وقت میرؔ کو فراموش کرنا کسی طرح ممکن نہیں

اور میرؔ کے یہاں جو سب سے بڑی چیز ہم پاتے ہیں وہ اک آگ ہے جس کی چنگاریاں اٹھیں

नमूदार होती रही। यह आग इश्क़ की आग है। और वह इश्क़ क्या है ? वही जिस की निस्बत उनके वालिद ने कभी फ़र्माया था—"आलम में जो कुछ है इश्क़ का ज़हूर है। आग सोज़े इश्क़ है; पानी रफ़्तारे इश्क़ है, ख़ाक क़रारे इश्क़ है, हवा इज़्तरारे इश्क़ है ! मौत इश्क़ की मस्ती है; हयात इश्क़ की होशयारी है; रात इश्क़ का ख़्वाब है, दिन इश्क़ की बेदारी है। तवक्क: क़ुर्बे इश्क़ है; गुनाह बआदे इश्क़ है; बिहिश्त इश्क़ का शौक़ है......और मुक़ामे इश्क़ तो अबूदियत, अशरफ़ियत, ज़ाहिदियत, सदीक़ियत, ख़ुलूसियत, मुश्ताक़ियत और हबीबियत से बलन्द और बरतर है।" यही आग 'मीर' की ज़िंदगी का सरमायए नाज़ है। वह ताहयात, उन में लगी रही। उनकी शाइरी इसी आग की एक लपट है; उनकी फ़क़ीरी और अकड़ इसी आग की चिनगारियाँ हैं। अपने ज़माने के लिहाज़ से उनको जो मर्तब: मिला था, जो इज़्ज़त मिली थी, लखनऊ के दरबार में ख़ास तौर से, उनकी जैसी क़दर थी, वह किसी दूसरे शाइर को नसीब नहीं हुई। हर तरह की आसाइश के सामान उनकी पकड़ में थे फिर भी हम उन्हें अपनी अकड़ में सब कुछ बार-बार ठुकराते हुए देखते हैं। यह वही अमारत और जाहो हश्मत पर शाने फ़ुक़्र की तसल्लुत का इज़्हार है। दिल में जो फ़क़ीरी और इश्क़ की आग थी, वह कभी नहीं बुझी—न शाइरी में, न ज़िंदगी मे।

दूसरी बात मीर की शाइरी के मुतल्लिक़ अर्ज़ है कि उनमें अपने दर्द के साथ ज़माने का दर्द भी है। उनमें ज़िंदगी के लुत्फ़ हैं पर वे बंदगी की आग़ोश में बँधे हुए हैं; उनमें इश्क़ की मजाज़ियत है पर वह हक़ीक़त के एहसास से तड़पती है; उनमें मस्ती है पर इंसान के दुख-दर्द पर सौ-सौ आँसू बहानेवाली; उनमें तख़य्युल है पर वह जो आसमान को ज़मीन पर खेंच लाता है। एक अजीब पागलपन है जो ठहर-ठहरकर अपने को दिल के आइने में देख लिया करता है। उसके दर्दे फ़ुरक़त में महबूब के क़ुर्बो इत्तसाल की बेहोशियाँ हैं। मीर एक साथ बहुतेरी शख़सीयतें रखनेवाला शख़्श है।

इश्क़ मीर की शाइरी का ख़ास रंग है। और यह इश्क़ मजाज़ी रंग लेकर भी कभी हविसपरस्ती और ख़ारजियत की तरफ़ मायल नहीं हुआ। उसमे एक ऐसा सोज़ोगुदाज़ है कि इश्क़िया तजुर्बा जज़्बे में डूब डूब जाता है। छोटे-छोटे अल्फ़ाज़ अपने अन्दर मानी का समन्दर समेटे हुए हैं। कहने के ढंग में ऐसी सादगी है गोया हम शेर नहीं पढ़ रहे, महबूब से सचमुच बातें कर रहे हैं। उनके हाँ इश्क़ो मुहब्बत के नाज़ुक जज़्बात तस्वीर जैसे खिंच कर रह गये हैं और इस मुसव्विरी

اپنے والد محترم، چچا جان اور دیگر درویشان باصفا سے حاصل ہوئی تھیں۔ یہ آگ بغیر کسی علم و خواہش کے عہد طفلی میں ہی سلگ اٹھی تھی اور زندگی کے آخری لمحے تک ان کے وجود کے مختلف مظاہر میں نمودار ہوتی رہی۔ یہ آگ عشق کی ہے۔ اور عشق کون سا ہے ؟ وہی جس کے متعلق ان کے والد محترم نے فرمایا تھا۔ عالم کا ہر وجود، وجود عشق، ہر ظہور، ظہور عشق، ہر نمود، نمود عشق ہے، عناصر اربعہ میں سے آتش سوز عشق ہے۔ آب رفتار عشق۔ خاک قرار عشق ہے، باد اضطرار عشق ہے۔ محبت عشق کی مستی ہے، حیات عشق کی ہشیاری، رات عشق کا خواب ہے، دن عشق کی بیداری، تقویٰ قرب عشق ہے، عصیاں بُعد عشق، بہشت عشق کا شوق ہے..... اور مقام عشق عبودیت، اخلاص، زہد، صدیقیت، مشائیت ــــ حتیٰ کہ حبیبت سے بھی بلند و برتر ہے۔"

یہی آگ میر کی زندگی کا سرمایۂ افتخار ہے۔ یہ آگ مدت العمر ان کے وجود میں روشن رہی۔ ان کی شاعری اسی آگ کی ایک لپٹ ہے۔ ان کی نفقیری اور بد دماغی اسی آگ کی چنگاریاں ہیں۔ ان کے دور کو ملحوظ رکھ کے انھیں جو مرتبہ و اعزاز حاصل تھا، دربار لکھنؤ میں ان کی جیسی مقدرت تھی وہ کسی اور شاعر کو نصیب نہیں ہوئی۔ ہر طرح کے سامان آسائش ان کی دسترس میں تھے لیکن ہم کمال استغنا سے انھیں بار بار سب کچھ ٹھکراتے دیکھتے ہیں۔ یہ استغنا اس شان فقر کا مظہر ہے جو دنیا وی جاہ و حشم کو ہیچ گردانتا ہے۔ دنیا سے بے رغبتی جو ان کی اس شان کی بنیاد تھی اسی سوز عشق کے جذب دل ہونے کی بنا پر تھی ــ خواہ نجی زندگی ہو خواہ شعر و ادب کی ـ ہر جگہ، ہر دور میں یہ سوز قائم رہا۔

میر کی شاعری میں جو دوسری بات ہے وہ یہ کہ ان کے یہاں درد زندگی کے ساتھ زمانے کا درد بھی ہے۔ ان کے پاس لطف زندگی ہے لیکن وہ آداب بندگی کے پابند ہیں۔ ان کے یہاں لباس مجاز میں عشق کی نمود موجود ہے لیکن عرفان حقیقت کی تڑپ وہاں بھی کارفرما ہے۔ ان کے یہاں مستی ہے لیکن انسان کے دکھ درد پر سو سو آنسو بہانے والی۔ ان کے پاس تخیل ہے لیکن وہ آسمان کو سطح زمین پر کھینچ لاتا ہے۔ ان کے یہاں ایک عجیب قسم کا جنون ہے جو تھوڑے تھوڑے وقفہ کے بعد دل کے آئینے میں اپنا جائزہ لے لیتا ہے۔ ان کے درد فرقت میں محبوب کے قرب و اتصال کی بے خودیاں ہیں۔ غرضیکہ میر ایک ہی ذات میں مختلف شخصیت کے مرکب ہیں۔

عشق میر کی شاعری کا خاص رنگ ہے۔ یہ عشق مجازی رنگ اختیار کرنے کے باوجود کبھی ہوس پرستی و خارجیت کی طرف مائل نہیں ہوا۔ ان کے پاس ایک ایسا سوز و گداز ہے کہ عشقیہ تجربہ

में तस्कीन ही नहीं, एक हर्कत, एक हलचल भी है। सारी फ़िज़ा इल्लारा से भरी हुई है। अल्फ़ाज़ चुनिंदा हैं. तरन्नुम और मुलायमियत की ज़बान से बोलते हैं और दिल पर एक नश्तर छोड़ जाते हैं।

बात इतनी कि मीर के नज़दीक शाइरी ख़ुद एक तहज़ीब है—तहज़ीब जो सबके बूते की नहीं और जो मुहब्बत की मज़ार पर ख़ून के सौ-सौ आँसू गिराने लुट जाने और अपने को निसार कर देने से आती है; जो फ़ितरत की बलंदी और बालीदगी पर पलती है और कुरबानी की फ़िज़ा में नमूदार होती है। मीर में क़यामत का शोर और बेचैनी है लेकिन उस पर एक बंदिश भी है; प्यास है पर कहीं गिरावट नहीं है; नींद है पर बेहोशी नहीं है; नाकामियत है लेकिन उड़ती जिन्दगी के वज्द में डूबी हुई है। न सिर्फ़ ग़ज़लियात बल्कि मस्नवियात में भी हम यही देखते हैं कि उनका इश्क़े आसमानी ज़मीन के चाँद पर मायल है। यह ज़मीन और आसमान का इश्तराक, मजाज़ी इश्क़ के एक शाइर के लिए कोई ग़ैरमामूली बात नहीं है।

इनकी शाइरी क्या है, इनके गहरे दर्द की एक तड़प, एक उछाल है; वह महज़ एक पर्दा है जिसके पीछे एक सिसकते दिल की आवाज है, आरज़ुओं और तमन्नाओं की एक दुनिया है। ख़ुद ही कहा है :—

किया था शेर को पर्दः सुख़न का,
वही आख़िर को ठहरा फ़न हमारा।

कब और ग़ज़ल कहता मैं इस ज़मीं में लेकिन,
पर्दे में मुझे अपना अहवाल सुनाना था।

एक और बात, जिसकी तरफ़ ऊपर कहीं हमने इशारा किया है, यह है कि इश्क़ को बंदगी से उन्होंने ऊँचा उठा दिया है; उनकी इबादत इंसान को माबूद और उनकी परस्तिश बुतों को ख़ुदा बना छोड़ती है—

परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
नज़र में सबों की ख़ुदा कर चले।

मीर की एक और ख़ुसूसियत यह है कि वह इश्क़ के सच्चे पुजारी की तरह हर तरह की फ़िरक़ापरस्ती से ऊपर हैं। उनकी पूजा दैरोहरम के दायरे में बँधी नहीं है; उसमें इंसान बस इंसान है, न हिंदू, न मुसलमान, न ईसाई। कहते हैं:—

جذبے میں غرق ہو جاتا ہے۔ چھوٹے چھوٹے الفاظ میں معانی کے بحرِ زخار موجزن ہیں اور اس کے باوجود طرزِ کلام میں ایسی سادگی ہے گویا شعر نہیں کہہ رہے ہیں، محبوب سے واقعتاً گفتگو کر رہے ہیں۔ ان کے یہاں عشق و محبت کے نازک جذبات تصویر کی طرح کھنچ کے رہ گئے ہیں۔ اور اس تصویر میں تسکین ہی نہیں ایک حرکت اور ایک ہلچل بھی ہے۔ فضا پُر اخلاص ہے۔ الفاظ چنندہ ہیں، ترنم و نزاکت کی زبان سے بولتے ہیں اور دل پر ایک نشتر کا اثر چھوڑ جاتے ہیں

بات یہ ہے کہ میر کے نزدیک شاعری خود ایک تہذیب ہے۔ تہذیب جو ہر کس و ناکس کے بس کی نہیں یہ تہذیب محبت کے مزار پر خون کے آنسو بہانے، لٹ جانے اور خود کو نثار کر دینے سے حاصل ہوتی ہے۔ فطرت کی بلندی اور پاکیزگی سے یہ پرورش پاتی ہے اور قربانی کی فضا میں نمودار ہوتی ہے۔ میر کے یہاں قیامت کا شور و اضطراب ہے لیکن اس پر ایک بندش بھی ہے۔ پیاس ہے لیکن گراوٹ نہیں۔ نیند ہے لیکن بے ہوشی نہیں۔ ناکامی ہے لیکن مبارزتاً زندگی کے ادراک سے وجد میں آئی ہوئی، نہ صرف غزلوں بلکہ مثنویوں میں بھی یہ صاف نظر آتا ہے کہ ان کا عشق آسمان زمین کے چاند پر مائل ہے۔ یہ زمین و آسمان کا نقطۂ اتصال و اشتراک عشق مجازی کے ایک شاعر کے لیے کچھ غیر معمولی نہیں

ان کی شاعری کیا ہے؟ ان کے گہرے درد کی ایک تڑپ، ایک والہانہ جست۔ وہ صرف ایک پردہ ہے جس کے پیچھے ایک سسکتے دل کی صدا ہے۔ آرزوؤں اور تمناؤں کی ایک دنیا ہے۔ انھوں نے خود ہی فرمایا ہے ؎

کیا تھا شعر کو پردہ سخن کا
وہی آخر کو ٹھہرا فن ہمارا

کب اور غزل کہتا میں اس زمیں میں لیکن
پردے میں مجھے اپنا احوال سنانا تھا

ایک اور بات جس پر سطور بالا میں اشارہ ہو چکا ہے، خصوصی توجہ کے لائق ہے کہ انھوں نے عشق کو بندگی سے بلند کر دیا تھا۔ ان کی عبادت انسان کو معبود اور ان کی پرستش بتوں کو خدا بنا کے چھوڑتی ہے ؎

मज़हब से मेरे क्या तुझे, मेरा दयार और,
मैं और, यार और, मेरा कारबार और।

किसको कहते हैं नहीं मैं जानता इस्लामो कुफ़्र,
दैर हो या काबा मतलब मुझको तेरे दर से है।

काबा पहुँचा तो क्या हुआ ऐ शेख़,
सई कर टुक पहुंच किसी दिल को।

मीर में अकबराबाद (आगरा) की वीरानी झाँकती है, दिल्ली की तुगयानी लहराती है और लखनऊ की रंगीनी इठलाती है। तीनों मिलकर एक हो गयी हैं। इसीलिए ज़बान की सेहरकारी के साथ उनमें अलफ़ाज़ व मानो का तवाज़ुन है। सबसे बड़ी बात यह कि उनमें सोज़ोगुदाज़ के साथ एक ऐसा ज़ब्त है जो उनके दर्द को बेपनाह गहराइयों में ले जाता और फिर वहाँ से अहसास के ऐसे मंज़र लाकर पेश करता है कि कलेजा मसोस-मसोस कर रह जाता है। उनका इश्क़ इंसानी सीरत और ख़सलत की बुनियादों से रचा गया है। उसमें एक अजब निखार है। वह ख़ालिस इंसानी इश्क़ है इसलिए कि यही उनकी असलियत है, यही उनकी ज़िंदगी के रमूज़ में बसा हुआ है। इसलिए भी कि इंसान का मर्तबः उनकी निगाह में सबसे बरतर है। ख़ुद कहते हैं :—

मत सहल हमें जानो, फिरता है फ़लक बरसों,
तब ख़ाक के पर्दे से इंसान निकलते हैं।

मरता हूँ मैं तो आदमे ख़ाकी की शान पर।

हमें तो शर्म दामनगीर होती है ख़ुदा होते।

शुरू से अख़ीर तक मीर काँटों में घिसटते, मुसीबतों की चट्टानों और वादियों में सीने के बल चलते रहे। इसलिए उनमें दर्दोग़म की ऐसी तस्वीरें मिलती हैं कि दिल को पकड़ लेती हैं। कभी उन्होंने कहा था—"दुनिया सिमट आई है मेरे दीदएतर में।" और यह एक असलियत है कि दर्द उनके हर लफ़्ज़ के झरोखे से झाँकता है। यह ग़म जो उन पर छा गया था, सिर्फ़ उनका इन्फ़रादी ग़म नहीं है, यह एक तहज़ीब और तमद्दुन की मौत का ग़म है, इसीलिए वह ग़मे ज़माना भी है। यह बजा कि इस ग़म पर अहसास की ऐसी चाशनी है कि उसने एक इन्फ़रादी शख़सीयत हासिल कर ली है; यह भी मानता हूँ कि उनमें 'फ़ानी' के

پرستش کی یاں تک کہ اے بت تجھے
نظر میں سبھوں کی خدا کر چلے

میر کی ایک اور خصوصیت یہ ہے کہ وہ عشق کے سچے پرستار کی طرح ہر قسم کی فرقہ بندی اور تعصب سے بلند ہیں۔ ان کی عبادت دیر و حرم کے دائروں میں محدود نہیں، ان میں انسان صرف انسان ہے، نہ ہندو، نہ مسلمان، نہ عیسائی۔ وہ کہتے ہیں ؎

مذہب سے میرے کیا تجھے میرا دیار اور
میں اور یار اور میرا کاروبار اور

کس کو کہتے ہیں نہیں میں جانتا اسلام و کفر
دیر ہو یا کعبہ مطلب مجھ کو تیرے در سے ہے

کعبے پہنچا تو کیا ہوا اے شیخ
سعی کر ٹک پہنچ کسی دل کو

میر کے یہاں اکبر آباد (آگرہ) کی ویرانی جھانکتی ہے۔ دل کی طغیانی لہراتی ہے اور لکھنؤ کی رنگینی اٹھلاتی ہے اور تینوں کے عناصر جمع ہو کر ایک وجود واحد بن گئے ہیں۔ اسی لیے زبان کی سحر کاری کے ساتھ ان کے یہاں الفاظ و معانی کا توازن ہے۔ سب سے بڑی بات یہ ہے کہ با ایں ہمہ سوز و گداز ایک ایسا ضبط ہے جو ان کے درد کو بے پناہ گہرائیوں میں لے جاتا ہے اور پھر وہاں سے احساس کی ایسی وارداتوں کے سراغ لے آتا ہے کہ قاری دسائع دل تھام کے رہ جاتا ہے۔ ویسے ان کا عشق انسانی سیرت و فضائل کی نفسیاتی و حقیقی شہادتوں کی بنا پر معرض وجود میں آیا ہے۔ اس میں ایک عجیب نکھار ہے۔ وہ خالص انسانی عشق ہے۔ لہٰذا یہی ان کی اصلیت ہے اور یہی ان کی حیات کے رموز میں بسا ہوا ہے۔ یہ اس لیے بھی ہے کہ انسان کا مرتبہ ان کی نگاہ میں سب سے برتر ہے۔ وہ خود فرماتے ہیں ؎

مت سہل ہمیں جانو پھرتا ہے فلک برسوں تب خاک کے پردے سے انسان نکلتے ہیں

ग़म का जमालयाती हुस्न और फ़िलसफ़ाना रंग नहीं है । इनके ग़म में इन्तहाई सादगी है, एक मख़्सूस अंदाज़ है जो एक इन्फ़रादी तजुर्बे का बयान है और इसीलिए दिल को छूता है । इनके दिल में एक तुग़यानी का आलम है और भाटे की, उतार की वीरानी भी है । जिन मुसीबतों के बीच ज़िन्दगी भर चलते रहे हैं उनकी झलक सारी शाइरी में मिलती है । हर मंजिल पर गहरी अफ़सुर्दगी और दर्द का एहसास इनके साथ है । दिल के सनमख़ाने में इश्क़ की हज़ार-हज़ार तमन्नाएँ और हुस्न की सौ-सौ अदाएँ मचलती हैं पर जैसे उनकी ज़बान बंद कर दी गयी हो, वे अबोली, दर्द में डूबी रह जाती हैं । इनके विसाल में भी फ़िराक़ का रस समो गया है, इसीलिए सारी ख़्वाहिशों और तमन्नाओं के साथ भी इश्क़ एक इबादत बनकर रह गया है । उनके इन्फ़रादी ग़म में ग़मे ज़माना की चोख़ यों घुल-मिल गयी है कि उसे अलग करना मुश्किल है । इनकी ग़ज़लों में हज़ारहा दिलों की धड़कनें सुनाई पड़ती हैं; इनकी शाइरी में सदहा दिलों की उम्मीदें और हसरतें, सदहा आँखों की नाउम्मीदियाँ, सदहा लबों की तश्नगी और हलावत है । यहाँ ज़िंदगियाँ जादू से उठती हैं, रोती हैं और उठती हैं, तड़पती हैं और उठती हैं । पूजा की घंटियाँ बजती हैं; एक बेज़ुबान तस्वीर उभरती है, अपनी ख़ामोश निगाहों से कुछ कहते-कहते रह जाती है और फ़िर उदासी की चादर मुंह पर डाल सो जाती है । बस यही है मीर की शाइरी ।

अख़ीर में उनके कलाम के चंद नमूने देता हूँ । ये नमूने ऐसे हैं जो ख़ुद अपनी अज़मत का इज़हार करते हैं और किसी तर्जुमाने इसरार की ज़रूरत नहीं रखते ।

आबले की सी तरह ठेस लगी, फूट बही,
दर्दमंदी में गयी सारी जवानी इसकी ।

जब नाम तेरा लीजिए तब चश्म भर आवे,
इस ज़िंदगी करने को कहाँ से जिगर आवे ?

शाम ही से बुझा सा रहता है,
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिस का ।

होश जाता नहीं रहा लेकिन,
जब वह आता है तब नहीं आता ।

مرتا ہوں میں تو آدمِ خاکی کی شان پر

ہیں تو شرم دامن گیر ہوتی ہے خدا ہوتے

شروع سے آخر تک میر کانٹوں میں گھسیٹے اور مصائب کی وادیوں اور سنگلاخ چٹانوں پر سینے کے بل چلتے رہے ہیں اس لیے ان کے پاس اس درد و غم کی بے اختیار دل کو گرفت میں لے لینے والی درد و غم کی تصویریں ہیں۔ کبھی انھوں نے کہا تھا ہے "دنیا سمٹ آئی ہے مرے دیدۂ تر میں" اور یہ حقیقت ہے کہ درد ان کے ہر لفظ کے چہرے سے جھانکتا ہے۔ یہ غم جو ان پر چھا گیا تھا محض انفرادی نہیں یہ ایک تہذیب و تمدن کی موت کا غم ہے اسی لیے کہ وہ غم زمانہ بھی ہے۔ یہ درست ہے کہ اس غم پر احساس کی ایسی چاشنی ہے کہ اس نے ایک انفرادی شخصیت اختیار کر لی ہے... مجھے یہ بھی تسلیم ہے کہ ان میں فانی کے غم کا جمالیاتی حسن اور فلسفیانہ رنگ نہیں۔ ان کے غم میں انتہائی سادگی ہے، ایک مخصوص انداز ہے جو ایک انفرادی تجربے کا بیان ہے۔ اسی لیے وہ دل نشیں ہے۔ ان کے دل میں ایک طغیانی کا عالم ہے اور جذبے کے اتار کی ویرانی بھی ہے۔ جن مصائب کے درمیان انھوں نے اپنی راہ پیدا کی ہے اس کی جھلک ان کی کل شاعری میں ملتی ہے۔ ہر منزل پر گہری افسردگی اور درد کا احساس ان کے ساتھ ہے۔ دل کے صنم خانے میں عشق کی ہزار ہزار تمنائیں اور حسن کی سو سو ادائیں مچلتی ہیں لیکن ایسا معلوم ہوتا ہے گویا وہ مہر بہ لب ہوں۔ وہ بیان کی آلودگی سے محفوظ، درد میں غرق رہ جاتی ہیں۔ ان کے وصال میں فراق کا رنگ سمویا ہوا ہے۔ اسی لیے خواہشوں اور تمناؤں کے باوجود ان کے لیے عشق ایک عبادت بن کے رہ گیا ہے۔ ان کے انفرادی غم میں غم زمانہ کی چیخ یوں گھل مل گئی ہے کہ اسے الگ کرنا مشکل ہے۔ ان کی غزلوں میں ہزارہا دلوں کی دھڑکنیں سنائی دیتی ہیں۔ ان کی شاعری میں صدہا دلوں کی امیدیں اور حسرتیں، صدہا آنکھوں کی نا امیدیاں، صدہا لبوں کی تشنگی اور حلاوت ہے۔ یہاں زندگی گویا بہ زور سحر پیدا ہوتی ہے، محو گریہ ہوتی ہے، نمو حاصل کرتی ہے، تڑپتی ہے اور بیدار ہوتی ہے، پو جاکی گھنٹیاں بجتی ہیں، ایک بے زبان تصویر ابھرتی ہے، اپنی خاموش نگاہوں سے کچھ کہتے کہتے رہ جاتی ہے اور پھر اداسی کی ایک چادر منھ پر ڈال کر سو جاتی ہے بس، یہی ہے میر کی شاعری کی کل تفصیل کا اجمال

ان کے کلام سے تھوڑا انتخاب بہ طور نمونہ پیش ہے۔ یہ نمونہ ایسا ہے جو ان کی عظمت کے اظہار کے لیے کافی ہے، کسی ترجمان اسرار کی اسے احتیاج نہیں ؎

बेख़ुदी ले गयी कहाँ हमको,
देर से इन्तज़ार है अपना।

अबके जुनूँ में फ़ासला शायद न कुछ रहे,
दामन के चाक और गरेबाँ के चाक में।

दिल किस क़दर शिकस्ता हुआ था कि रात मीर,
जो बात लब पे आई, वह फ़रियाद हो गयी।

आग थे इब्तिदाए इश्क़ में हम,
अब जो हैं ख़ाक, इन्तिहा है यह।

उससे घबरा के जो कुछ कहने पं आ जाता हूँ,
दिल को फिर दिल में लिये चुपका चला जाता हूँ।

या रब ! कोई तो वास्ता सरगश्तगी का है,
इक इश्क़ भर रहा है जमीं आसमान में।

मीर इन नीम बाज़ आँखों में,
सारी मस्ती शराब की सी है।

सिरहाने मीर के आहिस्तः बोलो,
अभी टुक रोते रोते सो गया है।

खिलना कम कम कली ने सीखा है,
उसकी आँखों की नीमख़्वाबी से।

आतश बलंद दिल की न थी वर्ना ऐ कलीम,
यक शोला बर्क़ ख़िरमने सद कोहे तूर था।

आगे किसी के क्या करें दस्ते तमअ दराज़,
वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे - धरे।

सरापा आरज़ू होने ने बंदा कर दिया हमको,
वगर्ना हम ख़ुदा थे गर दिले बेमुद्दआ होते।

آبلے کی سی طرح ٹھیس لگی، پھوٹ بہی
دردمندی میں گئی ساری جوانی اس کی

جب نام ترا لیجئے تب چشم بھر آوے
اس زندگی کرنے کو کہاں سے جگر آوے

شام ہی سے بجھا سا رہتا ہے
دل ہوا ہے چراغ مفلس کا

ہوش جاتا نہیں رہا لیکن جب وہ آتا ہے تب نہیں آتا

بے خودی لے گئی کہاں ہم کو دیر سے انتظار ہے اپنا

اب کے جنوں میں فاصلہ شاید نہ کچھ رہے دامن کے چاک اور گریباں کے چاک میں

دل کس قدر شکستہ ہوا تھا کہ رات میرؔ
جو بات لب پہ آئی وہ فریاد ہو گئی

آگ تھے ابتدائے عشق میں ہم اب جو ہیں خاک انتہا ہے یہ

اس سے گھبرا کے جو کچھ کہنے پر آجاتا ہوں
دل کی پھر دل میں لیے چپکا چلا جاتا ہوں

یارب کوئی تو واسطہ سرگشتگی کا ہے اک عشق بھر رہا ہے زمین آسمان میں

पूछा जो मैंने दर्दे मुहब्बत से मीर को,
रख हाथ उसने दिल पे टुक अपने रो दिया ।

वह दर्दे दिल नहीं तो क्यों देखते हो मुझको,
पलकें झुका लियां हैं, आंखें चुरा लिया हैं ।

हसरत उसकी जगह थी ख़्वाबीद:
मीर का खोलकर कफ़न देखा ।

कहते तो हो यूं कहते यूं कहते जो वह आता,
यह कहने की बातें हैं, कुछ भी न कहा जाता ।

میرؔ ان نیم باز آنکھوں میں ساری مستی شراب کی سی ہے

سرہانے میرؔ کے آہستہ بولو ابھی ٹک روتے روتے سوگیا ہے

کھلنا کم کم کلی نے سیکھا ہے اس کی آنکھوں کی نیم خوابی سے

آتش بلند دل کی نہ تھی ورنہ اے کلیم
یک شعلہ برق خرمن صد کوہِ طور تھا

آگے کسو کے کیا کریں دستِ طمع دراز
وہ ہاتھ سوگیا ہے سرہانے دھرے دھرے

سراپا آرزو ہونے نے بندہ کردیا ہم کو وگرنہ ہم خدا تھے گر دلِ بے مدعا ہوتا

کہتے تو ہو یوں کہتے یوں کہتے جو وہ آتا
یہ کہنے کی باتیں ہیں کچھ بھی نہ کہا جاتا

پوچھا جو میں نے دردِ محبّت سے میرؔ کو
رکھ ہاتھ اس نے دل پہ ٹک اپنے رو دیا

وہ دردِ دل نہیں تو کیوں دیکھتے ہو مجھ کو پلکیں جھکا لیا ہے، آنکھیں چرا لیا ہے

حسرت اس کی جگہ تھی خوابیدہ میرؔ کا کھول کر کفن دیکھا

'मीर की शायरी के कुछ पहलू'

रघुपति सहाय फ़िराक़ गोरखपुरी

मीर की ग़ज़लों के शेरों की बड़ी संख्या में तथा उसकी लगभग हर 'मसनवी'[१] में जो कहानी कही गई है या जीवन का चित्र अंकित किया है इन सब की स्पष्ट विशेषता तथा अवलम्बित भाव दुःखदर्द, करुणा तथा अलकल भावनाओं एवं अनुभवों की अभिव्यक्तियाँ हैं। इस प्रकार यदि हम मीर को केवल 'शाएरे-ग़म'[२] या 'मुसव्विरे ग़म'[३] कहें तो उचित होगा। मीर के यहाँ वेदना अभिव्यक्ति अथवा करुणा का विश्लेषण स्वयं एक विषय है जिसका विश्लेषण और विस्तार 'मीर' के विवेचनात्मक अध्ययन के लिए ज़रूरी है।

यहाँ केवल एक ऐसी वास्तविकता की ओर ध्यान आकर्षित कराना है जिसे मीर' का मामूली अध्ययन करने वाले भी टाल जाते हैं। वह यह है कि 'मीर' की ग़ज़लों में बहुत से ऐसे महत्वपूर्ण 'अशआर'[४] मिलते हैं जिनका अवलम्बित भाव दुःख दर्द या रज अथवा ग़म नहीं। इन शेरों की संख्या सैकड़ों तक पहुँचती है। उदाहरणार्थ :—

मौत एक मांदगी का वक़फ़ा,[५] है यानी आगे चलेंगे दम लेकर।

रंगेगुल[६] व बूए गुल[७] होते हैं हवा दोनों क्या क़ाफ़ला[८] जाता है तू भी जो चला चाहे

कुछ मौजे हवा पेचाँ[९] ऐ मीर नज़र आई शायद कि बहार आई ज़ंजीर नज़र आई

आस्माँ[१०] से ज़मीन नपवायी बात क्या आदमी की बन आई

१. मसनवी—मन्ज़ूम क़िस्सा अर्थात् क़िस्से या कहानी को काव्य रूप मे बाध देना। २. ऐसा कवि जिसके काव्य का केन्द्रीय भाव दुःख दर्द हो। ३. ग़मो की तस्वीर खीचने वाला। ४. शेर का बहुवचन। ५. थोड़ा समय। ६. फूल का रंग। ७. फूल की गन्ध। ८. कारवाँ। ९. उलझी हुई। १०. आकाश।

میرؔ کی شاعری کے کچھ پہلو

رگھوپتی سہائے فراقؔ گورکھپوری

میرؔ کی غزلوں کے کثیر التعداد اشعار اور میرؔ کی قریب ہر مثنوی میں جو کہانی کہی گئی ہے یا زندگی کی جو تصویر کھینچی گئی ہے ان سب کی نمایاں خصوصیت اور مرکزی احساس دکھ درد، غم اور ناکامی کے جذبات و تجربات کا اظہار ہے۔ اس لحاظ سے ہم میرؔ کو شاعرِ غم یا مصورِ غم کہنے میں حق بہ جانب ہوں گے۔ میرؔ کے یہاں غم کا اظہار یا غم کی ترجمانی خود ایک موضوع ہے جس کا تجزیہ و تفسیر میرؔ کے نقادانہ مطالعے کے لیے ضروری ہے فی الحال ایک ایسی حقیقت کی طرف توجہ دلانا ہے جسے میرؔ کو روا روی میں پڑھنے والے نظر انداز کر جاتے ہیں وہ یہ ہے کہ میرؔ کی غزلوں میں بہت سے ایسے اہم اشعار ملتے ہیں اور ان کی تعداد سیکڑوں تک پہونچتی ہے جن کا موضوع دکھ، درد یا رنج و غم نہیں ہے مثلاً

موت اک ماندگی کا وقفہ ہے ؛ یعنی آگے چلیں گے دم لے کر

رنگِ گل و بوئے گل ہوتے ہیں ہوا دونوں
کیا قافلہ جاتا ہے تو بھی جو چلا چاہے

کچھ موجِ ہوا پیچاں اے میرؔ نظر آئی   شاید کہ بہار آئی زنجیر نظر آئی

آسماں سے زمین نپوائی   بات کیا آدمی کی بن آئی

अब उठा है काबे से और झूम पड़ा मैख़ाने[१] पर
बादह[२] कशों का झुरमट है गा सागर और पैमाने पर

वजहे[३] बेगानगी[४] नहीं मालूम तुम जहाँ के हो वाँ के हम भी हैं।

नाज़ुकी[५] उसके लब[६] की क्या कहिये पंखड़ी इक गुलाब की सी है।

इलाही कैसे होते हैं जिन्हें है बन्दगी[७] ख़्वाहिश मुझे तो शर्म दामनगीर होती है ख़ुदा होते

या 'मीर' की वह प्रसिद्ध ग़ज़ल जिसकी रदीफ़[८] है 'मैं नशे में हूँ'।

यही जाना कि कुछ न जाना हाय सो[९] भी एक उम्र में हुआ मालूम

अब[१०] के जुनूं[११] में फ़ासला शायद न कुछ रहे दामन के चाक और गरेबां के चाक में

इश्क़ ही इश्क़ है जिधर[१२] देखो सारे आलम में भर रहा है इश्क़

अब तो जाते है बुतकदे से मीर फिर मिलेंगे अगर ख़ुदा लाया

पत्ता पत्ता बूटा बूटा हाल हमारा जाने है
जाने न जाने गुल ही न जाने बाग़ तो सारा जाने है

सरसरी[१२] तुम जहान से गुज़रे वरना हर जा[१३] जहाने दीगर[१४] था

क़ाफ़ला, क़ाफ़ला जाते हैं चले क्या क्या लोग 'मीर' ग़फ़लतज़दा[१५] हैरान से क्या बैठे हैं

दूर बहुत भागो[१६] हो हमसे सीख तरीक़[१७] ग़ज़ालों[१८] का
वहशत करना शेवा[१९] है कुछ अच्छी आँखो वालों का

पैदा कहाँ हैं ऐसे परागन्दहतबा[२०] लोग
शायद कि तुमको 'मीर' से सुहबत[२१] नहीं रही।

१. मदिरालय। २. मदिरा का सेवन करने वाला। ३. कारण। ४. अजनबीपन। ५. कोमलता। ६. होंठ। १३. आदर-सत्कार की अभिलाषा। ७. कविता के अन्तिम शब्द जिनमे अनुप्रास पाया जाता है। अर्थात् कविता के वह अन्तिम शब्द जिनकी आवाज़ें मिलती-जुलती है। ८. अर्थात् एक लम्बी आयु गुज़रने के बाद ज्ञात हुआ। ६. इस दफ़ा। १०. उन्माद या प्रमाद की अवस्था। ११. जिस ओर। १२. थोड़े समय के लिए। १२. जगह,स्थान। १४. दूसरी अवस्था, दूसरी दुनिया। १५. लापरवाह। १६. भागते हो। १७. तरीका,नियम। १८. हिरनों। १६. तरीक़ा, आदत। २०. परेशान। २१. संगत।

ابر اٹھا ہے کعبے سے اور جھوم پڑا میخانے پر
بادہ کشوں کا جھرمٹ ہے گا ساغر اور پیمانے پر

وجہ بیگانگی نہیں معلوم   تم جہاں کے ہو واں کے ہم بھی ہیں

نازکی اس کے لب کی کیا کہیے   پنکھڑی اک گلاب کی سی ہے
الٰہی کیسے ہوتے ہیں جنھیں ہے بندگی خواہش   ہمیں تو شرم دامن گیر ہوتی ہے خدا ہوتے
یا میرؔ کی وہ معرکہ آرا غزل جس کی ردیف ہے "میں نشے میں ہوں"
یہی جانا کہ کچھ نہ جانا ہائے   سو بھی اک عمر میں ہوا معلوم

اب کے جنوں میں فاصلہ شاید نہ کچھ رہے   دامن کے چاک اور گریباں کے چاک میں

عشق ہی عشق ہے جدھر دیکھو   سارے عالم میں بھر رہا ہے عشق

اب تو جاتے ہیں بت کدے سے میرؔ   پھر ملیں گے اگر خدا لایا

پتا پتا بوٹا بوٹا حال ہمارا جانے ہے
جانے نہ جانے گل ہی نہ جانے باغ تو سارا جانے ہے

سرسری تم جہان سے گزرے   ورنہ ہر جا جہانِ دیگر تھا

قافلہ قافلہ جاتے ہیں چلے کیا کیا لوگ   میرؔ غفلت زدہ حیران سے کیا بیٹھے ہو

دور بہت بھاگو ہو ہم سے سیکھ طریق غزالوں کے   وحشت کرنا شیوہ ہے کچھ اچھی آنکھوں والوں کا

इब्तदाए[1] इश्क़ है रोता है क्या   आगे आगे देखिए होता है क्या

कहा मैंने कितना है गुल को सबात[2]   कली ने यह सुनकर तबस्सुम[3] किया

मत सहल[4] हमें जानो फिरता है फ़लक[5] बरसों[6]   तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलते हैं

मर्गे मजनूं प अक़्ल गुम है मीर   क्या दीवाने ने मौत पाई है

किया था रेख़्ता[8] पर्दा सुख़न का   सो ठहरा है यही अब फ़न हमारा

ग़ैरते[9] यूसुफ है यह वक़्ते अज़ीज़[10]   मीर इस को रायगां[11] खोता है क्या

धोखा[12] है तमाम बहरे दुनिया   देखेगा कि होंठ तर[13] न होगा

इन अशआर की व्याकुलता, व्यग्रता, करुणा, वेदना तथा रोने धोने से कोई सम्बन्ध नहीं। इसी तरह के दूसरे शेर जो 'मीर' के कुल्लियात में मिलेंगे इनकी संख्या चार पाँच सौ से कम हरगिज़ न होगी जिनमें हुस्न व इश्क़ से सम्बन्धित बहुत कम बातें कही गई हैं। प्रेम में मग्न शेर जो 'मीर' के यहाँ मिलते हैं उनमें भी एक हज़ार से ही अधिक ऐसे हैं जिनमें 'आहो-फ़ुगाँ'[14] 'गिरयाओ ज़ारी,[15] तथा वदेना व करुणा का वर्णन बिल्कुल नहीं है। इस प्रकार ऐसे डेढ़ हज़ार शेरों का पूरा दीवान[16] कुल्लियाते मीर से उद्धृत अथवा संकलित किया जा सकता है ऐसे शेर अर्थपूर्ण हैं। मोहक भाव प्रस्तुत करते हैं। तथा जो अत्याधिक व्यक्तिक अपील (चिन्ताकर्षण) में पूर्ण हैं जिसका उदाहरण उर्दू की पूरी शायरी में नहीं मिलता। वह 'मीर' की और केवल 'मीर' की देन है। 'मीर' के दुःख दर्द पर ही नहीं बल्कि 'मीर' की दृष्टात्मक शक्ति तथा महान चेतना पर भी बल देने की आवश्यकता है। 'मीर' हमें रोना रुलाना ही नहीं सिखाता सोचने, ग़ौर करने तथा गहरी से गहरी भावनाओं का अनुभव भी कराता है और वेदना से दूर बहुत दूर पराकाष्ठाओं पर ले जाता है। इस सम्बन्ध में शायरी के प्रारम्भ काल से लेकर आज तक प्रत्येक भाषा की शायरी में जिस प्रकार के महान श्रद्धात्मक, उत्तम

१. आरम्भ। २. अस्थायित्व। ३. मुस्कुराई, अर्थात् खिल उठी। ४. सरल। ५. गगन, आकाश। ६. वर्षों। ७. मजनूं की मौत पर। ८. ग़ज़ल। ९. अहम्। १०. प्रिय। ११. बेकार, व्यर्थ। १२. यह संसार समुद्र रूप में है परन्तु धोखा है, छल है। १३. तर होना, भीगना—छलकना। १४. शोक पूर्ण। १५. रोना धोना। १६. शेरों तथा ग़ज़लों का संकलन।

پیدا کہاں ہیں ایسے پراگندہ طبع لوگ　　شاید کہ تم کو میرؔ سے صحبت نہیں رہی

دنیا کی سیر میرؔ کی صحبت میں ہو گئی　　قسمت سے مجھ کو آج یہ بے ادب دیا ملا

ابتدائے عشق ہے روتا ہے کیا　　آگے آگے دیکھیے ہوتا ہے کیا

کہا میں نے گل کا ہے کتنا ثبات　　کلی نے یہ سن کر تبسم کیا

مت سہل ہمیں جانو پھرتا ہے فلک برسوں　　تب خاک کے پردے سے انسان نکلتے ہیں

مرگ مجنوں پہ عقل گم ہے میرؔ　　کیا دوانے نے موت پائی ہے

کیا تھا ریختہ پردہ سخن کا　　سو ٹھہرا ہے یہی اب فن ہمارا

غیرتِ یوسف ہے یہ وقتِ عزیز　　میرؔ اس کو رائگاں کھوتا ہے کیا

دھوکا ہے تمام بحرِ دنیا　　دیکھے گا کہ ہونٹ تر نہ ہوگا

ان اشعار کا اضطراب، بے صبری، بے چینی، دکھ درد، رونے دھونے سے کوئی تعلق نہیں رکھتا اسی طرح کے دوسرے اشعار جو میرؔ کے کلیات میں ملیں گے ان کی تعداد بھی چار پانچ سو سے کم ہرگز نہیں ہے۔ جن میں حسن و عشق سے متعلق باتیں بہت کم کہی گئی ہیں۔ عشقیہ اشعار جو میرؔ کے یہاں ملتے ہیں ان میں بھی ایک ہزار سے زیادہ ہی ایسے ہیں جن میں آہ و فغاں، گریہ وزاری کرب و اذیت کا ذکر بالکل نہیں ہے۔ اس طرح اندازاً ڈیڑھ ہزار اشعار کا ایک پورا دیوان کلیات میرؔ سے اخذ یا مرتب کیا جا سکتا ہے۔ ایسے اشعار کی گہری معنویت۔ غائر نظری۔ لہجہ کی دل کشی

तथा कोमल विषयों का वर्णन किया गया है बिल्कुल उसी तरह के विषय हमें मीर के यहाँ मिलते है।

'मीर' केवल अपने दुर्भाग्य, माशूक़[1] की क्रूरता, विमुखता तथा निर्दयता एवं उससे वियोग के वर्णन का ही शायर नहीं है बल्कि जीवन की गहरी से गहरी वास्तविकताओं का कवि है। 'मीर' के हज़ारों शेरों पर 'असगर गोंडवी' के एक शेर से इस सत्यता का आभास होता है :—

ग़ज़ल क्या इक शरारे[2] मानवी गर्दिश[3] में है असग़र
यहाँ अफ़सोस गुंजाईश[4] नहीं फरियादो[5] मातम की

'मीर' के कुछ अच्छे शेर जो प्रेम तथा सौंदर्य से सुसज्जित है उनका अध्ययन कर देखिए—

हम तौरे इश्क़ से तो वाक़िफ़[6] नहीं हैं लेकिन सीने में जैसे कोई दिल को मसला करे है

. .

मसाएब[7] और थे पर दिल का जाना अजब इक सानिहा[8] सा हो गया है

———

हो गई शहर शहर रुसवाई ऐ मेरी मौत तू भली आई

———

रात फिर शमा सर को धुनती रही क्या पतिंगे ने इल्तिमास[9] किया

———

जाता है आसमाँ[10] लिए कूचे[11] से यार के आता है जो भरा डरो दीवार देखकर

..

मर जाते जो इस गुल बिन सारा यह ख़लल[12] जाता
निकला ही न दम[13] वरना कांटा सा निकल जाता

———

दूर बैठा 'ग़ुबारे मीर'[14] इससे इश्क़ बिन यह अदब नहीं आता

———

इस दौर में इलाही मुहब्बत को क्या हुआ छोड़ा वफ़ा को उन ने मुरव्वत को क्या हुआ

———

इशक़ हमारे ख़याल पड़ा है ख़्वाब[15] गया आराम गया
दिल का जाना ठहर[16] गया है सुबह गया या शाम गया

—

१. प्रेमिका, नायिका। २. चिन्गारी, मानवी। ३. चक्र, चालू स्थिति। ४. सामर्थ्य-शक्ति। ५. विनय, अर्थपूर्ण, तथा शोक। ६. परिचित। ७. कष्ट। ८. घटना, वृतान्त। ९. प्रार्थना-निवेदन। १०. आकाश। ११. गली, गलियारा। १२. खराबी। १३. श्वास। १४. धूल। १५. स्वप्न। १६. निश्चित है।

اور زبردست انسانی اپیل ایسی ہے جس کی مثال پوری اردو شاعری میں نہیں ملتی۔ غم سے قطع نظر ماورائے غم جو تنقید حیات ایسے اشعار میں ہمیں ملتی ہے وہ میر کی اور صرف میر کی دین ہے میر کے دکھ اور درد ہی پر نہیں بلکہ میر کی بصیرت اور بلند فکری پر بھی زور دینے کی ضرورت ہے۔ میر ہمیں رونا رلانا ہی نہیں سکھاتا بلکہ سوچنا اور غور کرنا اور گہرے سے گہرے احساسات حاصل کرنا بھی سکھاتا ہے اور غم سے بہت دور اور بہت بلندیوں پر لے جاتا ہے۔ اس امر میں آغاز شاعری سے لے کر آج تک کی ہر زبان کی شاعری میں جو اونچی سے اونچی گہری سے گہری یا پاکیزہ سے پاکیزہ لطیف سے لطیف اور نازک سے نازک باتیں کہی گئی ہیں بالکل اسی حیثیت کی باتیں ہمیں میر کے یہاں ملتی ہیں۔

میر صرف اپنی بدنصیبی، معشوق کی سنگ دلی، دبے اعتنائی۔ معشوق کے جور وستم یا بے توجہی معشوق سے جدائی کا شاعر نہیں ہے۔ بلکہ زندگی کے گہرے سے گہرے حقایق کا شاعر ہے، میر کے ہزاروں اشعار پر اصغر گونڈوی کا یہ شعر صادق آتا ہے ؎

غزل کیا اک شرار معنوی گردش میں ہے اصغر
یہاں افسوس گنجایش نہیں فریاد و ماتم کی

دیکھا آپ نے کہ میر غزل کے پردے میں صرف مرثیہ نگاری نہیں کرتے۔ میر کے کچھ بہترین عشقیہ و جمالیاتی اشعار سنئے ؎

ہم طور عشق سے تو واقف نہیں ہیں لیکن   سینے میں جیسے کوئی دل کو ملا کرے ہے

مصائب اور تھے پر دل کا جانا   عجب اک سانحہ سا ہو گیا ہے

ہو گئی شہر شہر رسوائی   اے مری موت تو بھلی آئی

رات بھر شمع سر کو دھنتی رہی   کیا پتنگے نے التماس کیا

جاتا ہے آسماں لیے کوچے سے یار کے   آتا ہے جی بھرا در و دیوار دیکھ کر

शाम ही से बुझा सा रहता है   दिल हुआ है चिराग़मुफ़लिस[१] का

आलम[२] आलम इश्क़ो मुहब्बत दुनिया दुनिया शोहरत[३] है
दरया दरया रोता हूं मैं सहरा[४] सहरा वहशत[५] है

याद उसकी इतनी ख़ूब नहीं मीर बाज़ आ   नादान फिर वह जी से भुलाया न जायगा

उससे यों गुल ने रंग पकड़ा है   शमा से जैसे लें चिराग़ लगा

वस्लो-हिजरां[६] मन्ज़िलें दो हैं जो राहे[७] इश्क़ की
दिल ग़रीब इन में ख़ुदा जाने कहां मारा गया

लेते ही नाम उसका सोते से चौंक उठे हो   है ख़ैर मीर साहब कुछ तुमने ख़्वाब देखा

बहुत सई[८] कीजिए तो मर रहिए मीर   बस अपना तो इतना ही मक़दूर[९] है

तड़पे है जबकि सीने में उछले है दो दो हाथ   गर दिल यही है 'मीर' तो आराम हो चुका

फोड़ा सा सारी रात जो पकता रहेगा दिल   तो सुबह तक तो हाथ लगाया न जाएगा

आए हैं मीर मुंह को बनाए ख़फ़ा[१०] से आज
शायद बिगड़ गई है कुछ उस बेवफ़ा से आज

लगा न जी को कहीं क्या सुना नहीं तूने
जो कुछ कि 'मीर' का इस आशक़ी ने हाल किया

दिल से उठता है जां से उठता है   यह धुआं सा कहां से उठता है

क़ामत[११] ख़मीदा[१२] रगं शिकस्ता[१३] बदन[१४] निज़ार[१५]
तेरा तो 'मीर' ग़म में अजब हाल हो गया

१. दीन । २. दुनिया, दुनिया । ३. प्रसिद्धि, ख्याति । ४. जगल जगंल । ५. उद्विग्नता-विक्षाम। ६. संयोग वियोग । ७. प्रेम का मार्ग । ८ कोशिश, चेष्टा । ९. शक्ति, साधन । १० रुष्ट । ११. क़द, शरीर की ऊंचाई । १२. झुका हुआ । १३ शिकस्ता का अर्थ टूटा हुआ परन्तु यहां पर तात्पर्य है हल्का पन । १४ शरीर । १५. क्षीण ।

مر جاتے جو اس گل بن سارا یہ خلل جاتا
نکلا ہی نہ دم ورنہ کانٹا سا نکل جاتا

دور بیٹھا غبار میرؔ اس سے   عشق بن یہ ادب نہیں آتا

اس دور میں الٰہی محبت کو کیا ہوا   چھوڑا وفا کو ان نے مروت کو کیا ہوا

عشق ہمارے خیال پڑا ہے خواب گیا آرام گیا
دل کا جانا ٹھہر گیا ہے صبح گیا یا شام گیا

شام ہی سے بجھا سا رہتا ہے   دل ہوا ہے چراغ مفلس کا

عالم عالم عشق و محبت دنیا دنیا شہرت ہے
دریا دریا روتا ہوں میں صحرا صحرا وحشت ہے

یاد اس کی اتنی خوب نہیں میرؔ باز آ   نادان پھر وہ دل سے بھلایا نہ جائے گا

جن جن کو تھا یہ عشق کا آزار مر گئے   اکثر ہمارے ساتھ کے بیمار مر گئے

اس سے یوں گل نے رنگ پکڑا ہے   شمع سے جیسے لیں چراغ لگا

وصل و ہجراں منزلیں دو ہیں جو راہِ عشق میں
دلِ غریب ان میں خدا جانے کہاں مارا گیا

मेरे सलीक़े से मेरी निभी मुहब्बत में तमाम उम्र[1] मैं नाकामियों से काम लिया

दिल की वीरानी का क्या मज़कूर[2] है यह नगर सौ मरतबा लूटा गया

मेरे तग़ईरे[3] हाल पर मत जा इत्तिफ़ाक़ात[4] हैं ज़माने के

जहाँ से देखिए एक शेएर शोर अंगेज़[5] निकले है
क़यामत[6] का सा हंगामा है हर जा[7] मेरे दीवां में

किस का काबा[8] कैसा क़िब्ला[9] कौन हरम और[10] क्या अहराम[11]
इस कूचे के बाशिन्दों[12] ने सब को यहीं से सलाम किया

इक वहम[13] नहीं बेश मेरी हस्तिए-मौहूम[14] इस पर भी तेरी ख़ातिरे-नाज़ुक[15] प गरां[16] हूँ

फिर न आये जो हुए ख़ाक में जा आसूदा[17] ग़ालिबन[18] ज़ेरे[19] ज़मीं मीर है आराम बहुत

सर उठाते ही हो गये पामाल[20] सब्ज़ा-ए-नौ[21] दमीदा के मानिन्द[22]

हम गिरफ़्तारे[23] हाल हैं अपने ताएरे पर बुरीदा[24] के मानिन्द

जी में था कि उससे मिलिये तो क्या क्या न कहिए 'मीर'
पर जब मिले तो रह गये नाचार[25] देख कर

वे लोग तुमने एक ही शोख़ी में खो दिए पैदा किए थे चर्ख़[26] ने जो ख़ाक छान कर

मुझको शाएर न कहो 'मीर' कि साहब मैंने दर्दे दिल कितने किए जमा तो दीवाना किया

१. जीवन भर । २. वर्णन । ३. बदली हुई स्थिति । ४. घटनाएँ । ५. कोलाहल मुक्त । ६. प्रलय । ७. स्थान । ८. हज़रत इब्राहीम द्वारा मक्के मे निर्मित किया हुआ ख़ुदा का घर। इस भवन की शकल चतुर्भुज की तरह है । ६. काबा की एक दिशा । वैसे इस शब्द का प्रयोग अत्याधिक आदर प्रकट करने के लिए किया जाता है । १०. पवित्र स्थान। ११. हज करने की नियत करना । १२. निवासियों । १३. भ्रम । १४. अनुमेय जीवन । १५. नाज़ुक स्वभाव । १६. भारी । १७. तृप्त । १८. सम्भवत: । १६. भूमि के नीचे नीचे अर्थात दफ़न होकर । २०. नष्ट । २१. ताज़ा उगा हुआ सब्ज़ा (घास तथा अन्य फूल पत्तियाँ) । २२. प्रकार। २३. परिस्थितियो मे जकड़े हुए । २४. वह पंछी जिसके पर काट दिये गए हों । २५. विवश । २३. चर्ख़ का शाब्दिक अर्थ पहिए से होता है परन्तु यहा आकाश के रूप मे लिया गया है ।

بہت سعی کیجیے تو مر رہیے میر   بس اپنا تو اتنا ہی مقدور ہے

تڑپے ہے جب کہ سینے میں اچھلے ہے دو دو ہاتھ   گر دل یہی ہے میر تو آرام ہو چکا

پھوڑا سا ساری رات جو پکتا رہے گا دل   تو صبح تک تو ہاتھ لگایا نہ جائے گا

آئے ہیں میر منہ کو بنائے خفا سے آج
شاید بگڑ گئی ہے کچھ اس بے وفا سے آج

لگا نہ جی کو کہیں کیا سنا نہیں تو نے   جو کچھ کہ میر کا اس عاشقی نے حال کیا

دل سے اٹھتا ہے جاں سے اٹھتا ہے   یہ دھواں سا کہاں سے اٹھتا ہے

قامت خمیدہ، رنگ شکستہ، بدن نزار   تیرا تو میر غم سے عجب حال ہو گیا

مرے سلیقہ سے میری نبھی محبت میں   تمام عمر میں ناکامیوں سے کام لیا

دل کی ویرانی کا کیا مذکور ہے   یہ نگر سو مرتبہ لوٹا گیا

میرے تغیر حال پر مت جا   اتفاقات ہیں زمانے کے

جہاں سے دیکھیے اک شعر شور انگیز نکلے ہے   قیامت کا سا ہنگامہ ہے ہر جا میرے دیواں میں

کس کا کعبہ، کیسا قبلہ، کون حرم ہے، کیا احرام   اس کوچے کے باشندوں نے سب کو یہیں سے سلام کیا

मुहब्बत ने ज़ुल्मत[1] से काढ़ा है नूर[2]   न होती मुहब्बत न होता ज़ुहूर[3]

मुस्तक़िल[4] रोने से शायद कि बुझे आतिशे[5] दिल
एक दो आंसू. तो और आग लगा देते है

उपरोक्त शेर प्रेम और सौंदर्य से सम्बन्धित हैं और जिस ग़म के लिए 'मीर' को लोग बदनाम करते हैं इसी वेदना से सम्बन्धित हैं। इन शेरों से सम्बन्धित मन और मस्तिष्क में कल्पनाओं के संसार की रचना होती है। ऐसा संसार जिसमें आलोचना को विशेष स्थान प्राप्त है,। साहित्य के अध्ययन में नैतिक साहित्य के रचयिताओं के व्यक्तित्व के वाह्य तथा आन्तरिक पहलुओं का अनुमान करना बड़ा महत्व रखता है। 'मीर' की ग़ज़लों का अध्ययन करने तथा इनमें मगन होने के बाद तथा उनकी मन्द अंकारों का अपने अन्दर समावेश करने के बाद, उनकी मन्द गति से प्रभावित होने के बाद, उनकी गहराइयों, में डूबने के वाद हम निम्न-लिखित निष्कर्षों पर पहुंचते हैं।

१—अब से लगभग २२५ वर्ष पूर्व जब 'मीर' की आयु में परिपक्वता आ चली थी अर्थात १८ वीं शताब्दी के मध्य में सम्पूर्ण भारत में केवल उर्दू भाषा में नहीं उस युग की समस्त भाषाओं में 'मीर' सबसे बड़ा शायर था बल्कि महान्-तम् व्यक्तित्व था। अमीर ख़ुसरु, कबीर और फिर सैकड़ों वर्ष बाद सूरदास, तुलसीदास की जिस प्रकार की महानता से हम परिचित हैं वही महानता १८ वीं शताब्दी के मध्य में प्राप्त हुई थी और इसको मानने के लिए हम मजबूर हैं।

'मीर' ने किसी प्रकार के धार्मिक सम्प्रदाय की आधार शिला नहीं रखी। कार्यात्मक रूप से कोई महान सुधारात्मक कार्य नहीं किया, किसी राजनीतिक धुरन्-धर की तरह राजपाट में कोई काया पलट नहीं की, कोई महान बौद्धिक खोज नहीं की, किसी शासन की नींव नहीं रखी। सामाजिक दृष्टि से, धन और वैभव की दृष्टि से 'मीर' का व्यक्तित्व महान न था बल्कि इस दृष्टि से तो उनकी स्थिति बिल्कुल साधारण थी! इन समस्त बातों के साथ 'मीर' के काव्य का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए मजबूर हैं कि हिन्दुस्तान में मीर अपने समय का सबसे महान व्यक्ति था। यह बात हम तो न 'ग़ालिब' के लिए कह सकते हैं और नहीं 'इक़बाल' के लिए बल्कि 'मीर' के बाद से आज तक

१. अन्धकार । २. तेज़ । ३. प्रकट होना । ४. निरन्तर ५। . दिल की आग ।

اک وہم نہیں بیش مری ہستی موہوم — اس پر بھی تری خاطر نازک پہ گراں ہوں

پھر نہ آئے جو ہوئے خاک میں جا آسودہ — غالباً زیرِ زمیں میرؔ ہے آرام بہت

سر اٹھاتے ہی ہو گئے پامال — سبزۂ نو دمیدہ کے مانند
ہم گرفتارِ حال ہیں اپنے — طائرِ پر بریدہ کے مانند

جی میں تھا کہ اس سے ملیے تو کیا کیا نہ کہیے میرؔ — پر جب ملے تو رہ گئے ناچار دیکھ کر

دے لوگ تم نے ایک ہی شوخی میں کھو دیے — پیدا کیے تھے چرخ نے جو خاک چھان کر

مجھ کو شاعر نہ کہو میرؔ کہ صاحب میں نے — درد و دل کتنے کیے جمع تو دیوان کیا

محبّت نے ظلمت سے کاڑھا ہے نور — نہ ہوتی محبت نہ ہوتا ظہور

مستقل رونے سے شاید کہ بجھے آتش دل
ایک دو آنسو تو اور آگ لگا دیتے ہیں

مندرجہ بالا اشعار عشقیہ اور جمالیاتی ہیں اور جس غم کے لیے لوگ میرؔ کو بدنام کرتے اسی غم سے متعلق ہیں ۔ ان اشعار کے متعلق ایک دنیائے خیال دل و دماغ میں جنم لیتی ہے تنقید کی ایک پوری کائنات مرتب ہو جاتی ہے۔ مطالعہ ادب میں اخلاق ادب کی شخصیت کے خارجی اور داخلی پہلو اور شخصیت کا پورا پورا اندازہ لگانا بڑی اہمیت رکھتا ہے ۔ میرؔ کی غزلوں کو دیکھنے اور ان میں ڈوبنے کے بعد ان کی مدھم جھنکاروں کو اپنے اندر جذب کرنے کے بعد ان کی ہم آہنگی سے متاثر ہونے کے بعد ان کی تہ در تہ گہرائیوں تک پہنچنے کے بعد ہم اتنی باتیں کہہ سکتے ہیں :-

यद्यपि अनेक महान व्यक्तित्व मुसलमानों में पैदा हुए हैं लेकिन कोई हस्ती ऐसी पैदा नहीं हुई जिसे हम हिन्दुस्तान की सबसे बड़ी हस्ती कह सकें ।

हम ने 'मीर' को १८ वीं शताब्दी के मध्य युग का सबसे बड़ा व्यक्ति क्यों कहा ? इसलिए कि जब पूरे हिन्दुस्तान में. जीवन के किसी भी अंग में कोई भी असाधारण श्रेष्ठ व्यक्ति न था उस समय लगभग पाँच सात सौ अशआर द्वारा हमारी चेतना तथा उन्मत्त स्थिति को अत्याधिक गम्भीरताओं तथा श्रेष्ठताओं एवं आन्तरिक अनुभवों से परिचित कराके 'मीर' ने यह प्रमाणित कर दिया कि वह अपने युग का सबसे बड़ा व्यक्तित्व है । उसके जैसी बौद्धिक शक्तियों का व्यक्ति हिन्दुस्तान में कोई दूसरा न था । 'मीर' के चुने हुए अशआर में हमको केवल शायरी का मज़ा (स्वाद) नहीं मिलता, बल्कि एक महान व्यक्तित्व की श्रेष्ठता का अनुभव होता है । उर्दू ही नहीं विश्व के सम्पूर्ण साहित्य में सम्भवतः दो ही चार शायर ऐसे गुज़रे हैं जो अपनी शायरी में अपनी तस्वीर खींच सके या जिन्होंने अपने व्यक्तित्व के लक्षणों को इस प्रकार के अनुपेक्षिक भाव में प्रस्तुत किया हो, जिस प्रकार 'मीर, ने किया है । 'मीर' के युग में जीवन के किसी अंग में कोई महान व्यक्तित्व था ही नहीं । लोग किसी तरह जी रहे थे और बस । 'मीर' ही वह अकेला व्यक्ति है जिसने उस युग में, जीवन का लक्ष्य. उसकी समस्त गम्भीरताओं को श्रेष्ठता के साथ प्रस्तुत किया । लोग तो जी ही रहे थे लेकिन 'मीर' ने बताया है कि जीना है क्या ? लोग संसार में निवास कर रहे थे लेकिन 'मीर' ने बताया कि यह संसार है क्या ? लोग इश्क़ भी कर रहे होंगे, परन्तु यह मीर ही ने बताया कि इसकी सीमाएं कहाँ तक पहुँचती हैं ।

२—मीर के एक विवरण पर सम्भव है कि कुछ देशवासी आपत्ति या सन्देह प्रकट करें । मैंने कहा है कि 'मीर' तो अपने वक़्त का सबसे बड़ा भारतवासी है लेकिन 'ग़ालिब' और 'इक़बाल' अपनी महानताओं (जिनसे इन्कार नहीं किया जा सकता) के बावजूद अपने युग के सर्वोत्तम भारतीय न थे । जहाँ तक ग़ालिब का सम्बन्ध है, मैं केवल दो तीन नाम लूँगा । महर्षि दयानन्द सरस्वती स्थापक आर्य समाज, स्थापक आचार्य राजा राममोहन राय ब्रह्म समाज, राम कृष्ण परम हंस, दादा भाई नौरोजी, रवीन्द्र नाथ टैगोर के पिता महर्षि दिवेन्द्र नाथ टैगोर, यह समस्त व्यक्तित्व ग़ालिब से महान थे, यद्यपि 'ग़ालिब' अपने युग के सर्वोत्तम भारतीय साहित्यकार थे । अब इक़बाल को ले लीजिए । इनके सामायिकयों में टैगोर हैं, स्वामी विवेकानन्द हैं, स्वामी रामतीर्थ हैं, महर्षि रमन हैं, अरविन्द

۱۔ ہم اس نتیجے پر پہنچنے کے لیے مجبور ہیں کہ اب سے اندازاً سوا دو سو برس پہلے جب میرؔ کی عمر پختہ ہو چلی تھی یعنی اٹھارویں صدی کے وسط میں سارے برصغیر ہندوستان میں میرؔ اتنا ہی نہیں کہ اردو زبان اور اس زمانے میں یہاں کی تمام زبانوں کی شاعری کو دیکھتے ہوئے سب سے بڑا شاعر تھا۔ بلکہ سب سے بڑا آدمی بھی تھا۔ جو عظمت ہم امیر خسروؔ یا کبیرؔ اور سیکڑوں برس بعد سورداس اور تلسیؔ داس سے منسوب کرتے ہیں وہی عظمت اٹھارویں صدی کے وسط میں ہم میرؔ سے منسوب کرنے کے لیے مجبور ہیں۔

میرؔ نے کسی مذہبی فرقے کی بنیاد نہیں ڈالی۔ عملی طور پر کوئی بڑا اصلاحی کام نہیں کیا۔ کسی سیاسی سورما کی طرح راج پاٹ میں کوئی کایا پلٹ نہیں کی کوئی بہت بڑی علمی دریافت نہیں کی کسی حکومت کی بنیاد نہیں ڈالی سماجی لحاظ سے، دولت و ثروت کے لحاظ سے میرؔ کی کوئی نمایاں حیثیت نہیں تھی۔ بلکہ معمولی حیثیت سے بھی کم ہستی تھی، ان تمام باتوں کے ہوتے ہوئے صرف کلام میرؔ کے مطالعے سے ہم اس نتیجے پر پہنچنے کے لیے مجبور ہیں کہ ہندوستان میں میرؔ اپنے وقت کا سب سے بڑا انسان تھا۔ ہم یہ بات نہ غالبؔ کے لیے کہہ سکتے ہیں نہ اقبالؔ کے لیے بلکہ میرؔ کے بعد سے آج تک اگرچہ کئی بڑی بڑی ہستیاں مسلمانوں میں پیدا ہوئیں لیکن کوئی ایسی ہستی پیدا نہیں ہوئی جسے ہم ہندوستان بھر کی سب سے بڑی ہستی کہہ سکیں۔ ہم نے میرؔ کو اٹھارویں صدی کے وسط کا سب سے بڑا آدمی کیوں کہا؟ اس لیے کہ جب ہندوستان بھر میں کسی شعبۂ زندگی میں کوئی غیر معمولی عظمت کی حامل ہستی نہیں تھی اس وقت صرف تقریباً پانچ سات سو اشعار کے ذریعے سے ہمارے شعور و وجدان کو انتہائی گہرائیوں اور بلندیوں اور داخلی تجربات سے روشناس کرا کے میرؔ نے یہ ثابت کر دیا کہ وہ اپنے زمانے کا ہندوستان میں سب سے بڑا انسان ہے۔ اس دل و دماغ کا آدمی سارے ہندوستان میں کوئی دوسرا نہیں تھا۔ میرؔ کے منتخب اشعار میں ہم کو صرف شاعری کا مزا نہیں ملتا بلکہ ایک دیو قامت شخصیت کی عظمت کا اندازہ ہوتا ہے۔ اردو ہی نہیں دنیا بھر کے ادب میں شاید دو چار ہی شاعر ایسے گزرے ہوں جو اپنی شاعری میں اپنی تصویر کھینچ سکے ہوں۔ یا اپنی شخصیت کے خط و خال کو اس ناقابل فراموش انداز میں نمایاں کر سکے ہوں جس طرح میرؔ نے کیا ہے۔ میرؔ کے زمانے میں کسی شعبۂ زندگی میں کوئی بڑا آدمی تھا ہی نہیں۔ لوگ کسی طرح جی رہے تھے اور بس۔ میرؔ ہی وہ فرد واحد ہے جس نے اس زمانے میں جینے کے معنی اس کی تمام گہرائیوں رمزیتوں اور بلندیوں کے ساتھ پیش کیا لوگ تو جی رہے تھے۔ میرؔ نے بتایا جینا ہے کیا؟ لوگ دنیا میں

घोष, जी० सी० बोस हैं, गांधी और जवाहरलाल नेहरू हैं और कम से कम एक दर्जन और ऐसे नाम गिनवाये जा सकते हैं जो 'इक़बाल' से कहीं अधिक श्रेष्ठ भी हैं। यहां प्रश्न केवल शायरी का नहीं, बल्कि व्यक्तित्व का है और सम्पूर्ण व्यक्तित्व की श्रेष्ठता का । इन्हीं कारणों से मैंने 'ग़ालिब' और 'इक़बाल' को उनके युग का सर्वोत्तम भारतीय नहीं कहा और 'मीर' को लगभग सौ वर्ष के युग का सर्वोत्तम भारतीय कहा है ।

३—जब मुझे 'मीर' के युग के अन्य शायरों जैसे ख्वाज़ामीर'दर्द' और उनके भाई मीर'असर' और मीर 'सोज़' 'सौदा' 'बेदार' क़ायम चांदपुरी और 'शाह हातिम' या 'तअय्युन' आदि का कलाम[1] देखने को मिला तो मुझे यह भ्रम हो गया कि इन शायरों के भाव, शैली तथा अनुभव करने का ढंग उसी प्रकार के हैं जो 'मीर' के हैं फिर 'मीर' में एसी क्या विशिष्टता और श्रेष्ठता है ? इस पहेली का समाधान उस वक्त हुआ जब गूढ़ता पूर्वक 'मीर' के अशआर की तुलना उनके समकालीन शायरों के अशआर से की । भाव तथा शैली की एकता एवं तुल्यता ने मुझे भ्रम में डाल दिया था । 'मीर' के अशआर में जो ठहराव है और आधार में जो गम्भीरता है वह उसके समकालीन शायरों के मनमोहक गीतों में नहीं है ! यही बात 'मीर' के अशआर के अर्थपूर्ण अनुभवों पर लागू होती है । उसके कलाम में जो दूरदर्शिता है जो अर्थ है जो संकेत है वह उसके समकालीन शायरों के कलाम में नहीं । इसके अतिरिक्त उनमें व्यक्तिक चेतना आकर्षण का भी अभाव है इसी प्रकार का भ्रम इंगलैंड में शेक्सपियर के समकालीन कवियों तथा नाटककारों की रचनाओं से लोगों के दिलों में पैदा हो गया था परन्तु जब दुविधाओं के साथ शेक्सपियर की रचनाओं का अध्ययन किया जाता है तो यह भ्रम दूर हो जाता है । प्रत्येक बड़े साहित्यकार की रचना में स्पष्ट विशेषताओं के साथ कुछ अप्रदर्शित गुण भी होते हैं! अस्पष्ट गुणों का अनुभव करना आलोचनात्मक दृष्टि से सूक्ष्म तथा महत्वपूर्ण कार्य है । अर्ध-शताब्दी से पूर्व अंग्रेज़ी साहित्य की रचनाओं का जिन लोगों ने अध्ययन किया है वह जानते हैं एक कवीयत्री

'इलाघलिरोल काक्स' की कविताओं को काफ़ी समय तक लोग 'वर्ड्सवर्थ, (WORDSWORTH) की कविताओं से तुलना करने के योग्य समझते थे लेकिन यह भ्रम शीघ्र ही मिट गया । कृत्रिम शौर्य तथा वास्तविक ऐश्वर्य का भेद खुलकर रहता है । यह भी होता है कि हम जिस समय या जिस ज़माने में किसी बड़े शायर

१. काव्य रचना ।

رہ رہے تھے ۔ میرؔ نے بتایا دنیا ہے کیا ؟ لوگ عشق بھی کر رہے ہوں گے ۔ میرؔ نے بتایا کہ عشق کی سرحدیں کہاں پہنچتی ہیں ؟

۲ ۔ میرؔ کے ایک بیان پر ممکن ہے کہ کچھ اہل وطن تامل کریں یا اعتراض کریں ۔ میں نے کہا ہے کہ میرؔ تو اپنے وقت کا سب سے بڑا باشندۂ ہند ہے لیکن غالبؔ اور اقبالؔ اپنی ناقابل انکار بڑائی کے باوجود اپنے زمانے کے سب سے بڑے ہندوستانی شہری نہیں تھے ۔ جہاں تک غالبؔ کا تعلق ہے میں صرف دو تین نام لوں گا ۔ مہرشی دیانند سرسوتی بانی آریہ سماج ۔ راجہ رام موہن رائے بانی برہمو سماج ۔ رام کرشن پرم ہنس دادا بھائی نوروجی ۔ رابندر ناتھ ٹیگور کے والد مہرشی دویندر ناتھ ٹیگور ۔ یہ سب ہستیاں غالبؔ سے بڑی ہستیاں ہیں ۔ البتہ غالبؔ اپنے زمانے کے سب سے بڑے ہندوستانی ادیب تھے ۔ اب اقبالؔ کو لے لیجیے ۔ ان کے ہم عصر میں ٹیگور ہیں ۔ سوامی وویکانند ہیں ۔ سوامی رام تیرتھ ہیں ۔ مہرشی رمن ہیں ۔ اروند گھوش ہیں ۔ جی سی بوس ہیں ۔ گاندھی جی اور جواہر لعل نہرو ہیں ۔ اور کم از کم ایک درجن اور ایسے نام گنوائے جاسکتے ہیں جو اقبالؔ سے کہیں زیادہ وزنی ہیں ۔ کیوں کہ یہاں سوال محض شاعری کا نہیں ہے بلکہ شخصیت کا ہے ۔ اور پوری شخصیت کی عظمت کا ۔ انھیں وجوہ سے میں نے غالبؔ اور اقبالؔ کو ان کے زمانے کا سب سے بڑا ہندوستانی نہیں کہا ۔ اور میرؔ کو لگ بھگ سو برس کے زمانے کا سب سے بڑا ہندوستانی کہا ۔

۳ ۔ جب مجھے میرؔ کے ہم عصروں مثلاً خواجہ میر دردؔ اور ان کے بھائی میر اثرؔ اور میر سوزؔ ۔ سوداؔ بیدارؔ ۔ قائم چاند پوری اور شاہ حاتمؔ یا یقینؔ وغیرہم کا کلام دیکھنے کو ملا تو مجھے یہ بھرم ہوگیا کہ ان شعرا کا بھی لب و لہجہ ۔ انداز بیان اور انداز احساس وہی ہے جو میرؔ کا ہے ۔ پھر میرؔ کو ان سب پر فوقیت کیوں دی جائے ؟ یہ معمہ اس وقت کھلا جب بہت غور سے میرؔ کے اشعار کا مقابلہ ان کے ہم نواؤں کے اشعار سے میں کر سکا ۔ لب و لہجہ کی یکسانیت یا مشابہت نے مجھے دھوکے میں ڈال دیا تھا ۔ میرؔ کے اشعار میں جو ٹھہراؤ ہے اور جو تہ در تہ گہرائیاں ہیں وہ ان کے ہم عصروں کے دلکش نغموں میں نہیں ہیں ۔ میرؔ کے اشعار کی معنویت میرؔ کے ہم عصر شعرا کے کلام میں نہیں ہے ۔ نہ وہ دور رسی ہے ۔ نہ وہ رمز و کنایات ہیں ۔ نہ اتنی زبردست انسانی اپیل ۔ کچھ اسی طرح کا بھرم انگلستان میں شکسپیر کے ہم عصر شعرا اور ناٹک کاروں کے کلام سے لوگوں کے دلوں میں پیدا ہوگیا تھا ۔ جب ذرا تامل کے ساتھ شکسپیر کے کلام کا مطالعہ کیا جاتا ہے تب ہی یہ بھرم دور ہوتا ہے ۔ ہر بڑے شاعر کے کلام میں نمایاں محاسن کے علاوہ کچھ غیر نمایاں خوبیاں ہوتی ہیں ۔ غیر نمایاں محاسن کا اندازہ لگانا تنقید کا ایک نازک اور اہم مسئلہ ہے ۔ جن لوگوں کو ادب سے

या साधारण शायर की काव्य रचना से प्रभावित होकर जिस प्रकार की हर्ष उन्मत्त स्थिति में मग्न रहते हैं उस वक़्त हम इस बात को भूल जाते हैं कि :—

रेख़ता के तुम्हीं उस्ताद नहीं हो ग़ालिब कहते हैं अगले ज़माने में कोई 'मीर' भी था

दूर क्यों जाइये इसी लेख में जो 'मीर' के अशआर मैंने नक़ल किये हैं उन्हीं में से एक एक शेर पर ठहरकर विचार कीजिए और उस शेर का पूरा प्रभाव अपने ऊपर छा जाने दीजिए और याद कीजिए कि किसी दूसरे उर्दू शायर के अशआर में वह बात है भी या नहीं।

वैसे तो आरम्भ से अब तक उर्दू में महान शायर गुज़रे हैं लेकिन प्रायः साहीत्यक वार्तालाप में मीर और ग़ालिब के नाम एक अक्ष रेखा अथवा आधार का रूप प्राप्त कर चुके हैं। अब लगभग सौ वर्ष पूर्व तक अर्थात जब ग़ालिब जीवित थे तो कोई 'मीरी' होता था और कोई 'सौदाई' अर्थात 'मीर' व सौदा या 'मीर' मिर्ज़ा को एक दूसरे के समक्ष लाया जाता था। ज़माने की दृष्टि मे 'मीर' व 'ग़ालिब' की तुलना की जाती है। कोई 'ग़ालिब' को श्रेष्ठ मानता है तो कोई 'मीर' को। ग़ालिब को प्राथमिकता देना एक साहित्यक फ़ैशन बन चुका है।

यह तो एक शगुन है कि 'ग़ालिब' पर 'हाली' की—'यादगारे ग़ालिब' तथा 'मेहर' की पुस्तक के बाद से अब तक इस विषय में अनुसन्धान कार्य जारी है जिसके लिये ग़ालिब हर प्रकार से इसके अधिकारी भी हैं। 'मिर्ज़ा ग़ालिब' फ़िल्म बन चुकी है। स्वयं जब मैं बी० ए० का विद्यार्थी था अंग्रेज़ी में ग़ालिब के विषय में एक लेख लिखा था जो उस समय की प्रसिद्ध पत्रिका 'EAST AND WEST' में प्रकाशित हुआ था। बम्बई से निकलने वाली इस पत्रिका में मुश्किल से किसी भारतीय का लेख प्रकाशित होता था। मेरे इस लेख को मेरे अंग्रेज़ प्रोफ़ेसर एस० जी० डन ने अध्ययन करने के पश्चात् मुझसे कहा कि इसे कुछ बढ़ा दो तो मैं इसे ऑक्सफ़ोर्ड मे छापवा सकूं, लेकिन मैं खोया खोया सा आदमी हूँ मेरी परेशानियों ने मुझे इसका अवसर न दिया कि इस लेख में इतनी वृद्धि कर सकूं कि वह एक छोटी सी पुस्तक का रूप धारण कर ले। यह बात भी विचार करने योग्य है कि इक़बाल ने उम्र भर 'मीर' का नाम नहीं लिया और ग़ालिब के विषय में अत्यधिक प्रभावशाली कविता लिख डाली है। इक़बाल के स्वभाव तथा व्यक्तित्व में वह घुलावट थी ही नहीं जो किसी व्यक्ति का मीर से प्रभावित होने की ओर निर्देशित करे और फिर मीर की श्रेष्ठता एवं उसका मानुषिक काव्य इक़बाल की चेतना को अपनी ओर कैसे आकर्षित कर सके 'जब कि वह अहम शक्ति

نصف صدی پہلے کی انگریزی شاعری اور شہرت شاعری کا اندازہ ہے وہ جانتے ہیں کہ ایک خاتون شاعرہ الا دھیلردل کا کس کی نظموں کو بہت دنوں تک لوگ ورڈس ورتھ کی نظموں کا ہم پلہ سمجھتے تھے لیکن یہ بھرم بہت جلد مٹ گیا۔ نقلی عظمت اور حقیقی عظمت کا فرق کھل کر رہتا ہے۔ یہ بھی ہوتا ہے کہ ہم جس وقت یا جس زمانے میں کسی بڑے شاعر یا معمولی شاعر کے کلام کے زیر اثر ایک قسم کے وجدانی سکر یا شدت کے شکار رہتے ہیں اس وقت ہم اس بات کو بھول جاتے ہیں کہ :

ریختہ کے تمھیں استاد نہیں ہو غالبؔ
سنتے ہیں اگلے زمانے میں کوئی میرؔ بھی تھا

دور کیوں جایے اسی مضمون میں جو میرؔ کے اشعار میں نے نقل کیے ہیں ان میں ایک ایک شعر پر ٹھہر کر غور کیجیے اور اس شعر کا پورا پورا اثر اپنے اوپر طاری ہونے دیجیے اور پھر سوچیے یا یاد کیجیے کہ کسی بھی دوسرے اردو شاعر کے اشعار میں وہ بات ہے بھی یا نہیں جو میرؔ کے اشعار میں ہے۔

۴۔ یوں تو آغاز سے اب تک اردو میں بڑے بڑے شاعر گزرے ہیں لیکن اکثر ادبی گفتگو میں میرؔ، غالبؔ کے نام ایک محور کی حیثیت حاصل کر چکے ہیں اب سے اندازاً سو برس پہلے تک یعنی جب غالبؔ زندہ تھے تو کوئی میرؔی ہوتا تھا اور کوئی سوداؔئی۔ یعنی میرؔ و سوداؔ، یا میرؔ و مرزا کو ایک دوسرے کے مقابلے میں لایا جاتا تھا۔ فی زمانہ میرؔ غالبؔ کا موازنہ و مقابلہ کیا جاتا ہے کوئی غالبؔ کو ترجیح دیتا ہے کوئی میرؔ کو۔ غالبؔ کو ترجیح دینا ایک ادبی فیشن ہوگیا ہے یہ تو ایک نیک شگون ہوگیا ہے کہ غالبؔ پر حالیؔ کی یادگار۔ غالبؔ اور مہرؔ کی کتابوں کے بعد سے تحقیقی تحریروں اور کتابوں کا سلسلہ اب تک جاری ہے۔ غالبؔ ہر طرح سے اس کے مستحق ہیں۔ مرزا غالبؔ فلم بن چکا ہے۔ خود میں نے جب بی۔اے کا طالب علم تھا انگریزی میں ایک مقالہ لکھا تھا جو زمانے کے سب سے مشہور رسالے 'EAST AND WEST' میں شایع ہوا تھا۔ بمبئی سے نکلنے والے اس انگریزی رسالے میں مشکل سے کسی ہندوستانی کی تحریر چھپتی تھی۔ میرے اس مضمون کو میرے انگریز پروفیسر ایس جی ڈن نے پڑھ کر مجھ سے کہا کہ اسے کچھ بڑھا دو تو میں اسے آکسفورڈ میں چھپوا سکوں۔ لیکن میں کھویا کھویا آدمی ہوں میری پریشانیوں نے مجھے اس کا موقع نہ دیا کہ اس

को अपना लक्ष्य समझते थे। मेरी युवावस्था के समय कुछ लोगों को छोड़कर 'मीर' के गूढ़ अध्ययन तथा उसको पहचानने की योग्यता लोगों में न थी। मैं अपने शिक्षक प्रो० 'नासिरी' का उम्र भर आभारी रहूँगा कि उन्होंने 'मीर' को उर्दू का सबसे बड़ा शायर बताकर मुझे मीर के काव्य का अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया। इस अध्ययन से केवल मेरी साहित्य-रुचि ही गम्भीर नहीं हुई बल्कि इसने मेरी जीवन-रुचि को भी अत्यधिक गूढ़ एवं सुदृढ़ बना दिया।

हम 'ग़ालिब' और 'मीर' के सम्बन्ध में किस निष्कर्ष पर पहुँचें और क्या हुक्म लगायें ? ग़ालिब की आवाज गालिब की आवाज़ है। 'मीर' की आवाज़ पूरी इन्सानियत (मनुष्यत्व) की आवाज़ है। ग़ालिब के शेर, विशेष कल्पनाओं के अनोखेपन, उनकी कोमलता एवं सुन्दरता तथा मुख्य परिस्थितियों को बड़े ही रुचिकर भाव में सूक्ष्म अवलोकन के साथ प्रस्तुत करते हैं। इस सम्बन्ध में उर्दू का कोई शायर ग़ालिब का प्रतिद्वन्दी नहीं हो सकता। ग़ालिब के अशआर पर एक निश्चित एवं विशेष आत्माभिमान की मुहर है लेकिन मीर के काव्य की वेदना एवं चंचलता में धरती की कोख की आँच अनुभव होती है। यों तो मुख्य विषय तथा विवरण 'मीर' के अशआर में भी है लेकिन इस पर्दे में 'मीर' जीवन और प्रकृति पर और पूर्ण अस्तित्व के अर्थ पर हुक्म लगाते हुए सुनाई देते हैं। मीर का युग भारत के निराश्रय और विवशता का युग है और ग़ालिब के युग में भी प्रबल व्याकुलताएँ अपना नग्न रूप धारण किये हुए थीं। 'मीर' और 'ग़ालिब' दोनों के अशआर में निराश्रय एव विवशता के भाव दृष्टिगोचर हैं। परन्तु इस प्रकार के निराश्रय एवं विवशता के भाव तथा प्रबल गतिशीलता के अभाव, जिनकी ओर ग़ालिब के काव्य में स्वयं इक़बाल ने संकेत प्रस्तुत किये हैं 'मीर' के अशआर में भिन्न रूप धारण किए हुए हैं। 'मीर' की विवशता महाभारत के उन वीरों की विवशता प्रतीत होती है जो कुरू क्षेत्र के रण में युद्ध करते हुए अपनी पराजय से अवगत हो जाते थे। मीर हमारी दृष्टि में ज़ख़्मों से चूर घायल रणवीर के रूप में सामने आते हैं। जिसने प्रबल शक्तियों के समक्ष पीठ नहीं दिखाई। जिसने जीवनयुद्ध हारकर भी जीवन के प्रति उद्वेग भाव प्रस्तुत नहीं किये और जिसने जीवन से भागना नहीं सीखा।

ग़ालिब का ग़म ग़ालिब की आत्म वेदना है। मीर का ग़म एक एतिहासिक युग की करुणा भी है। और सम्पूर्ण मनुष्यत्व की वेदना भी। मीर के ग़म में सांसारिक भावना दृष्टि गोचर है और इसी टकराव से झंकारें सुनाई देती हैं। ग़ालिब की वेदना में

مضمون میں اتنا اضافہ کرسکوں کہ وہ ایک چھوٹی سی کتاب ہوجائے یہ بات بھی سوچنے کی ہے کہ اقبال نے عمر بھر میر کا نام نہیں لیا اور غالب پر ایک نہایت زور دار نظم لکھ ڈالی ۔ اقبال کی طبیعت و شخصیت میں وہ گھلاوٹ نہیں تھی جو کسی انسان کو میر سے متاثر ہونے کی توفیق عطا کرتی اور پھر میر کی آفاقیت اور انسانیت گیر شاعری اقبال کے دل و دماغ کو اپنی طرف کیسے کھینچتی ۔ جب وہ خودی اور ملت کو اپنا نصب العین بنائے بیٹھے تھے ۔ میری جوانی کے زمانے میں چند لوگوں کو چھوڑ کر میر کے غائر مطالعے اور میر شناسی کی توفیق لوگوں کو حاصل نہیں تھی میں اپنے استاد پروفیسر ناصری کا یہ احسان عمر بھر نہیں بھول سکتا کہ انھوں نے میر کو اردو کا سب سے بڑا شاعر بتا کر مجھے کلام میر کے مطالعے کی طرف مائل کیا اس مطالعے نے صرف میرا ذوق ادب گہرا نہیں کیا بلکہ اس کے ساتھ ساتھ میرا مذاق زندگی بھی زیادہ گہرا اور مستحکم بنا دیا۔ ہم غالب اور میر کے متعلق کس نتیجے پر پہونچیں اور کیا حکم لگائیں ۔ غالب کی آواز غالب کی آواز ہے ۔ میر کی آواز پوری انسانیت کی آواز ہے ۔ غالب کے اشعار مخصوص خیالوں کے انوکھے پن ۔ مخصوص خیالوں کی نزاکت و لطافت ۔ مخصوص صورت حال کو انتہائی دلکش انداز میں بہترین نوک پلک کے ساتھ پیش کرتے ہیں اس امر میں اردو کا کوئی شاعر غالب کا حریف نہیں ہوسکتا ۔ غالب کے اشعار پر ایک متعین اور مخصوص انفرادیت کی مہر ہے لیکن میر کے کلام کے سوز و ساز میں دھرتی کی کوکھ کی آنچ محسوس ہوتی ہے ۔ یوں تو مخصوص موضوع و مضمون میر کے اشعار میں بھی ہیں لیکن اس پردے میں میر حیات و کائنات پر اور پورے وجود کے معنی پر حکم لگاتے ہوئے سنائی دیتے ہیں میر کا زمانہ ہندوستان کی بے بسی اور معذوری کا زمانہ ہے اور غالب کا زمانہ بھی انتشار اور بے چینی کا شکار تھا میر اور غالب دونوں کے اشعار میں معذوری و مجبوریت کے عناصر نظر آتے ہیں ۔ لیکن یہ معذوری و مجبوریت اور حرکت کی گرما گرمی کا فقدان جس کی طرف غالب کے کلام میں خود اقبال نے اشارہ کیا ہے میر کے اشعار میں ایک عجیب چیز بن جاتا ہے ۔ میر کی معذوری مہا بھارت کے ان سورماؤں کی معذوری معلوم ہوتی ہے جو کرکشیتر کے کارزار میں سینہ سپر ہوکر لڑتے ہوئے اپنی شکست سے دو چار ہوجاتے تھے ۔ میر اس گھائل اور زخموں سے چور چور سورما کی شکل میں ہماری آنکھوں کے سامنے آتے ہیں جس نے آفاقی قوتوں کے سامنے پیٹھ نہیں پھیری ۔ جو زندگی کی لڑائی ہار کر بھی زندگی سے بیزار نہیں ہوا ۔ اور زندگی سے فرار اختیار نہیں کی

सांत्वना की सामग्री नहीं है लेकिन "मीर" के ग़म में ज़ख़्म ही मरहम बन जाता है "मीर" का ग़म वह ग़म है जिसके विषय में WORDSWORTH ने कहा है।

इन्सानियत का वह निरन्तर और उदास संगीत जो रुचिकर है अरुचिकर नहीं जिसमें आत्म शुद्धि और गम्भीर अध्ययन की अधिकतम शक्ति एवं कुशलता विद्यमान है।

'मीर' के आंसु संसार के आँसू हैं पूरा वातावरण ठंडी साँसें लेता दिखाई और सुनाई देता है यह ग़म साहस को नहीं तोड़ते। 'मीर' के वेदना युक्त शेरों को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं—पहला प्रेम और सौंदर्य के पारस्परिक सम्बन्धों का आधार, दूसरा जीवन और सृष्टि से सम्बन्धित विचारों का प्रेरक। प्रेम तथा सौंदर्य से सम्बंधित 'मीर' के जिस प्रकार के वेदना युक्त शेर हैं वह किसी व्यक्तिगत "आशिक़"के साथ व्यक्तिगत "माशूक़" की क्रूरता, विमुखता एवं निर्दयता की कहानियाँ नहीं हैं बल्कि सदैव से रहने वाले प्रेम और सौंदर्य के टकराव की ओर संकेत करते हैं। विश्व की ऐसी कोई प्रेम गाथा नहीं है। चाहे वह राम और सीता की कहानी हो या राधा व कृष्ण की, चाहे "लैला" और "मजनू" की दास्तान हो या "शीरीं" और "फ़रहाद" की अथवा इनके अतिरिक्त और सौंदर्य की अन्य कोई दास्तान क्यों न हो। हाँ, वह दास्तान सदैव एक दुःखद घटना होती है लेकिन "मीर" के यहाँ प्रेम वेदना अपनी परोकाष्ठा पर होते हुए भी प्रेमी के व्यक्तित्व को तपा-तपा कर कुन्दन बना देती है। जीवन और सृष्टि के सम्बन्ध में जो वेदनापूर्ण 'अशआर' 'मीर' ने कहे हैं उसमें वह प्रकृति और व्यक्ति दोनों की महानता का अनुभव कराते हैं यह शेर हमें स्तब्ध भी कर देते हैं और साहस भी बढ़ाते हैं। 'मीर' के शब्दों से यह निष्कर्ष नहीं निकलते बल्कि 'मीर' के भाव से और उनके शेरों की आवाज़ से यह परिणाम निकलते हैं। 'मीर' की आवाज़ बड़ी गम्भीर आवाज़ है आज तक किसी अन्य उर्दू शायर को ऐसी गम्भीर आवाज़ प्राप्त नहीं हुई बल्कि मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि किसी फ़ारसी शायर को भी ऐसी आवाज़ प्राप्त नहीं हुई।

आज कल कुछ लोगों का यह विचार है कि शायर को ऐसा नहीं करना चाहिए कि समस्त राष्ट्र शोक में डूब जाए लेकिन 'मीर' की वेदना अपंगु बना देने वाली वेदना नहीं है और यों तो 'मीर' के समय में सम्पूर्ण भारत पर विवशता एवं उदासीनता छायी हुई थी जैसा की 'मीर' ने कहा था—

غالب کا غم غالب کا غم معلوم ہوتا ہے میرؔ کا غم ایک دور تاریخ کا بھی غم ہے اور پوری انسانیت کا بھی غم ہے ۔ میرؔ کے غم میں کائنات بنام انسان کا منظر آتا ہے اور اسی تصادم کی جھنکاریں سُنائی دیتی ہیں ۔ غالب کے غم میں تسکین و تشفی کا سامان نہیں ہے لیکن میرؔ کے غم میں زخم ہی مرہم بن جاتا ہے ۔ میرؔ کا غم وہ غم ہے جس کے بارے میں ورڈس ورتھ WORDSWORTH نے کہا ہے

"انسانیت کی وہ مسلسل اور اداس موسیقی جو ناخوشگوار نہیں ہے اور سمع خراش نہیں ہے بلکہ جس میں تزکیہ نفس اور درس سنجیدگی کی وافر قوت وصلاحیت ہوتی ہے"۔

میرؔ کے آنسو کائنات کے آنسو ہیں پوری فضا ٹھنڈی سانسیں لیتی ہوئی دکھائی اور سُنائی دیتی ہے یہ غم حوصلہ شکن نہیں ہوتا میرؔ کے غم انگیز اشعار کو ہم دو حصوں میں بانٹ سکتے ہیں ۔ ایک حسن و عشق کے باہمی تعلقات سے وابستہ دوسرا حیات و کائنات پر بحیثیت مجموعی اظہار خیال کا حامل ۔ حُسن و عشق سے متعلق میرؔ کے جو غم انگیز اشعار ہیں وہ کسی منفرد عاشق کے ساتھ کسی منفرد معشوق کی بے اعتنائیوں یا جوروستم کی داستاں نہیں ہیں بلکہ حسن و عشق کے ازلی تصادم کی طرف اشارہ کرتے ہیں دنیا میں محبت کی کوئی ایسی داستان نہیں ہے خواہ وہ رام اور سیتا کی داستان ہو ۔ خواہ رادھا اور کرشن کی داستان ہو ۔ خواہ لیلیٰ اور مجنوں کی داستان ہو یا شیریں اور فرہاد کی داستان ہو یا ان کے علاوہ حسن و عشق کی کوئی اور داستان ہو وہ داستان ہمیشہ ایک المیہ ہوتی ہے لیکن میرؔ کے یہاں عشق کا غم انتہائی طور پر غم انگیز ہوتے ہوئے بھی عاشق کی شخصیت کو تپا تپا کے کندن بنا دیتا ہے ۔ حیات و کائنات پر جو غم انگیز اشعار میرؔ نے کہے ہیں وہ کائنات بنام انسان کی روداد ہوتے ہوئے کائنات و انسان دونوں کی عظمت کا احساس کراتے ہیں یہ اشعار ہمیں مبہوت بھی کرتے ہیں اور ہمارا حوصلہ بھی بڑھاتے ہیں، میرؔ کے الفاظ سے یہ نتیجے مرتب نہیں ہوتے بلکہ میرؔ کے لہجے سے اور ان کے اشعار کی صوتیات سے یہ نتیجے مرتب ہوتے ہیں ۔ میرؔ کی آواز بڑی تہہ دار آواز ہے آج تک کسی دوسرے اردو شاعر کو اتنی تہ در تہ آواز نصیب نہیں ہوئی بلکہ میں تو یہاں تک کہوں گا کہ کسی فارسی شاعر کو بھی ایسی آواز نصیب نہیں ہوئی ۔

آج کل کچھ لوگوں کا یہ خیال ہے کہ شاعر کو ایسا نہیں کہنا چاہیے کہ پوری قوم غمگین ہو جائے لیکن میرؔ کا غم مجبور کر دینے والا غم نہیں ہے اور یوں تو میرؔ کے زمانے میں ہندوستان بھر پر ایک وقفۂ معذوری و مجہولیت مسلط ہو گیا تھا لیکن جیسا کہ میرؔ ہی نے کہا تھا

छाती[1] सराहइये उन लोगों की जो उल्फ़त[2] को निभायें।

अक़बाल ने कहा है—

शाएर की नवा[3] हो कि मुग़न्नी[4] की सदा[5] हो

जिससे चमन अफ़सुर्दा[6] हो वह बादे[7] सहर क्या

उदासीनता केवल विवशता तथा निराश्रय भाव को ही जन्म नही देती बल्कि इन्हीं से साहसी व्यक्तित्व भी जन्म लेते हैं। ऐसी उदासीनता, ऐसी वेदना रचनात्मक योग्यता भी रखती है और आगे चलकर कार्यान्वित रूप भी धारण कर लेती है। हमें ग़म से मुंह नहीं मोड़ना है बल्कि ग़म की आँखों में आँखें डाल कर उसका मुक़ाबला करना है ग़म से हम आँखें बन्द कर ही कैसे सकते है मृत्यु, रोग, निर्धनता ख़ून हत्या, आग लगने की घटनाएं, डाका और चोरी, शत्रुता तथा पारस्परिक सम्बंधों की असमानता जीवन के लगभग प्रत्येक अंग में अन्याय से अधिक लाभ अर्जित करने की इच्छा, वस्तुओं के बढ़ते हुये मूल्य, अस्वस्थ घरेलू जीवन, योग्य आधीनस्थ कर्मचारी तथा अयोग्य अधिकारी, घूस, छल द्वारा अपहरण किया हुआ धन, लघु कालीन तथा दीर्घ कालीन युद्ध, खाने पीने की वस्तुएँ तथा दवाइयों में मिलावट, भयानक अपराध, घृणा की आग, शासन, निर्दयता, लापरवाही, एवं अनुशासन हीनता, विभिन्न राष्ट्रों का पारस्परिक तनाव तथा टकराव, इश्क़ व मुहब्बत की[8] नाकामियाँ, भरी दुनिया में जीवन की तनहाइयाँ[9] अशक्त तथा निराश्रय जीवन, वृद्धावस्था, भूख, बेरोज़गारी, बेईमानियाँ, सूखा एवं बाढ़ की स्थिति विभिन्न प्रकार के भय तथा आपत्तियाँ सैकड़ों प्रकार की निराशायें, रहने के लिए मकानों का अभाव, अनिश्चित भविष्य, धोखे बाज़ी, ज़बर्दस्तियाँ सैकड़ों परेशानियाँ और बेचैनियाँ—क्या ग़म के इन कारणों से हम अपरिचित हो सकते हैं यह स्थिति तो आज की है जब संसार इतनी प्रगति कर चुका है—'मीर' के समय में तो स्थिति और भी गंभीर थी समस्त एशिया और अफ़्रीक़ा में इन सब बातों के अतिरिक्त यदि हम ग़म के कारण के विषय में यह समझ लें कि बड़ी सीमा तक वह ग़म दूर हो गये या कम हो गये तो भी शान्तिमय जीवन की खोज में हमारी दृष्टि भटकेगी।

सर्वमान्य कवि 'वर्जल' ने व्यक्ति से सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु में जिसे आँसुओं की भावना या आंसुओं की मिठास कहा है वह भाव शेष रह जाता है। इसके अति-

१. हौसला बढ़ाइये, साहस पैदा कीजिए। २. प्रेम, स्नेह। ३. आवाज़। ४. गवैया। ५. आवाज़। ६. उदासीन। ७. सुबह की हवा। ८. असफलताएं। ६. अकेलापन या एकान्त।

پھاڑتی سراہیے ان لوگوں کی جو الفت کو نبا ہیں

اقبال نے بھی کہا ہے کہ

شاعر کی نوا ہو کہ مغنی کی صدا ہو

جس سے چمن افسردہ ہو وہ باد سحر کیا

افسردگی محض معذوری اور مجہولیت نہیں پیدا کرتی مردانہ وار شخصیتیں بھی افسردگی کے دستخط میں آتی ہیں ایسا غم خلاقانہ صلاحیتیں رکھتا ہے اور عمل کا سرچشمہ بن جاتا ہے۔ ہمیں غم سے آنکھیں بند نہیں کرنا ہیں بلکہ غم کی آنکھوں میں آنکھیں ڈال دینا ہے غم سے ہم آنکھیں بند کر ہی کیسے سکتے ہیں۔ موتیں۔ بیماریاں۔ افلاس۔ خون۔ قتل آتش زنی۔ ڈاکہ اور چوری دشمنیاں اور بدمزگیاں زندگی کے قریب قریب ہر شعبے میں ناانصافیاں حد سے زیادہ منافع خوری بڑھتی ہوئی قیمتیں۔ ناخوشگوار گھریلو زندگی قابل ماتحت اور ناقابل افسر رشوت، غبن چھوٹی بڑی جنگیں، غذاؤں اور دواؤں میں ملاوٹ، بھیانک جرائم، نفرت کی آگ، حکومت کی بیدردیاں، لاپرواہیاں اور بدمزگیاں مختلف حکومتوں کا باہم تناؤ اور تصادم عشق و محبت کی ناکامیاں بھری دنیا میں زندگی کی تنہائیاں بے بس اور بے سہارا زندگی ضعیفی و بھوک، بے روزگاری، بے ایمانیاں، خشک سالی اور سیلاب طرح طرح کے خوف و خطرات ہزاروں طرح کی محرومیاں، مکانوں کی قلت غیر متعین مستقبل، دھوکے بازی زبردستیاں صدہا پریشانیاں اور بے چینیاں کیا غم کے ان اسباب سے ہم آنکھیں بند کر سکتے ہیں؟ یہ حال تو آج کا ہے جب دنیا اتنی ترقی کر چکی ہے میر کے وقت میں تو حالات اور برے تھے۔ پورے ایشیا اور افریقہ میں ان تمام باتوں کے علاوہ اگر غم کے ان اسباب کو ہم یہ سمجھ لیں کہ بہت بڑی حد تک دور ہو گئے یا کم ہو گئے تو بھی اطمینان کی زندگی ہاتھ نہیں آئے گی۔ شاعر اعظم و رجل نے انسان سے متعلق ہر چیز میں جسے احساس اشک یا آنسو کی چاشنی کہا ہے وہ قائم رہ جاتا ہے البتہ یہ غم جس کے خارجی اسباب کچھ نہیں ہوتے اپنے اندر ایک تشفی یا قوت شفا رکھتا ہے۔ انسان اپنے دکھ سے تشفی بخش یا تسکین آور خیالات بھی اخذ کر لیتا ہے۔ خوش و خرم زندگی بھی ایک نازک بلند قسم کا المیہ ہے غم سے فرار ناممکن ہے۔ البتہ دیکھنا یہ ہے کہ ہمارا غم کمزور قسم کا غم ہے محض جذباتی قسم کا غم ہے ایک بیمار مزاج اور کردار کی پیداوار ہے یا ایک صالح و توانا قسم کا غم ہے جس کا سرچشمہ احساس زندگی کی گہرائیوں سے پھوٹتا ہے اگر ہمارا غم آخرالذکر قسم

रिक्त यह ग़म जिसके वाह्य कारण कुछ नहीं होते अपने अन्दर सांत्वना की शक्ति रखता है।

मनुष्य अपने दुःख से सन्तुष्टि तथा धीरज सम्बन्धी विचारों को भी उद्धृत कर लेता है। सुख सम्पन्न जीवन भी कोमल एवं विशाल क़िस्म की दुःखद घटना है। ग़म से मुक्ति प्राप्त करना असम्भव है तदापि देखना यह है कि हमारा ग़म कमज़ोर क़िस्म[1] का ग़म है, केवल भावनात्मक क़िस्म का ग़म है, एक रोगी स्वभाव तथा चरित्र की उत्पत्ति है या एक योग्य और शक्तिशाली क़िस्म का ग़म है जिसका स्रोत जीवन भवना गहराइयों की भावना से फूटता है। यदि हमारी वेदना का भाव उपरोक्त अन्तिम प्रकार का है तो हम फरिश्तों तथा देवताओं की तुलना में आ सकते हैं। समस्या यह है कि हमारी वेदना में श्रेष्ठता है या नहीं। वेदना को वास्तविकता का तत्व समझना पुण्यता नहीं है।

'ग़ालिब' और 'मीर' के ग़म में एक महान भेद है। 'ग़ालिब' का ग़म 'ग़मे-जानाँ'[2] या ग़मे-दौराँ[3] है—दूसरे शब्दों में 'ग़मे ग़ालिब' है। यह एक व्यक्तिगत क़िस्म का ग़म है और इसीलिए ज़रा छोटे क़िस्म का ग़म है तदापि १८५७ ई० के क़रीब जब ग़ालिब ने वह क़तानुमा ग़ज़ल कही जिसका एक शेर यह है :—

बागे फ़िराक़े सुहबते शबको जली हुई,
इक शमा रह गई थी सो वह भी ख़मोश है।[4]

तो ग़ालिब की वेदना श्रेष्ठ वेदना का रूप धारण कर लेती है। वह एक महान दुःखद घटना बन जाती है और सितारों को छू लेती है वरना ग़ालिब के अधिकतर अशआर की उत्तरदायी ग़ालिब की व्यक्तिगत असफलताएँ हैं। ग़ालिब संभवता 'मीर' से कम बौद्धिक शक्तियों के व्यक्ति न थे परन्तु उनके स्वभाव की आत्मावलम्बित भावना के कारण उनके ग़म को वह श्रेष्ठता प्राप्त न हो सकी।

हम सबके अन्तः में 'मीर' घर किये हुए है परन्तु हमारे स्वभाव ओर चरित्र की कमज़ोरियाँ इस 'मीर' को प्रदर्शित होने का अवसर नहीं देतीं। 'मीर' स्पष्टता: अपनी वेदना प्रकट करते हैं लेकिन वस्तुतः वह समस्त संसार की वेदना है। 'मीर' अस्तित्व में वेदना के तत्वों की अवेहलना नहीं करते बल्कि उनको अति आवश्यक समझते हैं और हमें इसका अनुभव भी करा देते हैं। यह ग़म हमको रुलाता भी है और हमारे आँसू भी पोंछता है। यह जादूगरी 'मीर' के स्वर, भाव

१. प्रकार। २. जान का ग़म। ३. ज़माने का ग़म, करुण वियोग रात्रि की मन में लिये हुये। ४. इक दीप रह गया है अतः वह भी मौन है।

کا غم ہے تو ہم فرشتوں اور دیوتاؤں کی ہم سری کر سکتے ہیں ۔ مسئلہ یہ ہے کہ ہمارے غم میں آفاقیت ہے یا نہیں ۔ غم کو حقیقت کا جزو سمجھنا قنوطیت نہیں ہے ۔

غالب اور میر کے غم میں بڑا فرق ہے غالب کا غم جاناں یا غم دوراں در اصل غم غالب ہے ۔ یہ ایک بہت ذاتی قسم کا غم ہے اور اس لیے ذرا چھوٹے قسم کا غم ہے البتہ ۱۸۵۷ء کے قریب جب غالب نے وہ قطعہ نما غزل کہی جس کا ایک شعر یہ ہے :

داغِ فراقِ صحبتِ شب کی جلی ہوئی
اک شمع رہ گئی ہے سو وہ بھی خموش ہے

تو غالب کا غم آفاقی غم بن جاتا ہے ۔ ایک بلند المیہ کا غم بن جاتا ہے اور ستاروں کو چھو لیتا ہے ۔ ورنہ غم سے متعلق غالب کے زیادہ تر اشعار محرک غالب کی ذاتی ناکامیاں ہیں ۔ غالب غالباً میر سے کم تر دل و دماغ لے کر نہیں پیدا ہوئے تھے ۔ لیکن ان کے مزاج میں جو خود مرکزیت تھی اس نے عام طور سے ان کے غم کو آفاق گیر نہیں ہونے دیا ۔

ہم سب کے اندر ایک میر بیٹھا ہوا ہے ۔ لیکن ہمارے مزاج و کردار کی کمزوریاں روبکار ہونے کا موقع نہیں دیتیں میر بہ ظاہر اپنا رونا روتے ہیں ورنہ ہیں وہ فی الحقیقت سارے زمانے کا رونا ۔ میر وجود میں غم کے عناصر کو ناقابلِ اخراج جزو سمجھتے ہیں اور ہم کو اس کا احساس کرا دیتے ہیں ۔ یہ غم ہم کو رلاتا بھی ہے اور ہمارے آنسو بھی پونچھتا ہے ۔ یہ سحر کاری میر کے لیے' لہجہ یعنی ان کے غم انگیز اشعار کی صوتیات سے پیدا ہوتی ہے میر کا سوز و ساز یا میر کے آنسو بھی آگ یا کچا پانی نہیں ہیں ۔ میر کا غم سطحیت سے بہت پاک ہے ۔ میر ناکامیوں اور محرومیوں کو کامرانی یا آسودگی بتاتے تو جھوٹ بولتے ۔ البتہ میر نے ناکامیوں اور محرومیوں کو ایسی آفاقیت اور از خود ماورائیت عطا کر دی ہیں جو اضطراب کو سکون میں بدل دیتی ہیں ۔

عرفی کا شعر ہے ؎

در دلِ ما غمِ دنیا غمِ معشوق شود
بادہ چوں خام بود پختہ کند شیشۂ ما

میر کے عشقیہ اشعار غم جاناں کو غم دنیا کی گیرائی اور وسعت عطا کرتے ہیں ۔

अर्थात उनके वेदना-युक्त शेरों की तान से पैदा होती है। 'मीर' की वेदना तथा संगीत अथवा 'मीर' के आँसू कच्ची आग या कच्चा पानी नही है। 'मीर' की वेदना असमता से परे है। यदि 'मीर' असफलताओं तथा निराशाओं को सफलता एवं तृप्ति का नाम देते तो वह सर्वथा असत्य प्रतीत होता परन्तु 'मीर' ने असफलताओं एवं निराशाओं को ऐसी श्रेष्ठता प्रदान की है, कि फलत: वे असफलताएँ एवं निरशाएँ अपने उचित रूप से स्वयं प्रदर्शित हो जाती हैं जो व्याकुलता एवं व्यग्रता को 'शान्ति' की स्थिति में परिवर्तित कर देती हैं। 'उर्फ़ी' का शेर है—

'दर दिले, मा, ग़मे दुनिया, ग़मेमाशूक़ शवद,
बादह चूँ ख़ाम बुवद पुख़्ता कुनद शीशा-ए मा।

'मीर' के इश्क़ से सम्बन्धित शेर ग़मे-जानाँ[1] को ग़मे-दुनिया[2] की गम्भीरता एवं विशालता प्रदान करते हैं। 'मीर' के ग़मे जानाँ में पूरी सांसारिक वेदना या ग़मे-दौराँ का समावेश है। यह साधारण कार्य नहीं है। 'ग़ालिब' के ग़म को, "सीने में जैसे कोई दिल को मला करे" प्रकार का भाव प्राप्त नहीं हुआ।

५—'ग़ालिब' ने बहुत से दार्शनिक और अध्यात्मिक शेर कहे हैं परन्तु अधिकतर अच्छे से अच्छे शेरों में वह यर्थाथवादिता (REALISM) अथवा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण से आगे कम ही बढ़े हैं वैसे इस प्रकार के शेरो को उन्होंने अत्यन्त मनमोहक और मनोरंजक बना दिया है। क्योंकि 'ग़ालिब' बहुत बड़े कलाकार हैं फिर भी साधारणतय: उनके अशआर में विषय-व्याख्या तथा कल्पना-शक्ति अत्यन्त मात्रा में है और जो वस्तु नहीं मिलती अथवा जिस विषय का अत्यन्त अभाव है वह है असीमित स्थिति की भावना अथवा असीमित उन्मत्त स्थिति। 'मीर' यह भावना तथा उन्मत्त स्थिति उन ख़ामोशियों से पैदा करते हैं जो उनके विनम्र एवं मन्द भाव में गतिशील है। यह पर्दों में छिपी हुई भावना तथा उन्मत्त स्थिति नहीं बल्कि भौतिक अस्तित्व के आधार से इस प्रकार की भावना एवं उन्मत्त स्थिति का जन्म होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि यही संसार अपने अन्त: में असीमावाद का समावेश किये हुये है। 'मीर' के शेर एक प्रकार से मानवीय लेख (HUMAN DOCUMENT) हैं जो मानवता का वास्तविक रूप अंकित करते हैं और साथ ही हमें यह अनुभव भी कराते हैं कि यह तात्विक काव्य (ELEMENTAL POETRY) है। इस प्रकार की तात्विकता का ग़ालिब के यहाँ नितान्त अभाव है। फ़ारसी के

१. प्रेमिका का ग़म। २. संसार का ग़म।

میرؔ کے غمِ جاناں میں پورا غمِ زندگی یا غمِ دوراں سمویا ہوا ہے۔ یہ معمولی کارنامہ نہیں ہے۔ غالبؔ کے غم کو "سینہ میں جیسے کوئی دل کو ملا کرے ہے" والا لہجہ نصیب نہیں ہوا۔

۵۔ غالبؔ نے بہت سے فلسفیانہ و متصوفانہ اشعار کہے ہیں لیکن زیادہ تر اچھے سے اچھے اشعار ہیں وہ واقعہ نگاری REALISM یا نفسیاتی تجزیہ سے آگے کم ہی بڑھے ہیں۔ البتہ اس قسم کے اشعار کو انھوں نے نہایت دلکش اور دل نشین بنا دیا ہے۔ کیوں کہ غالبؔ بہت بڑے فن کار ہیں پھر بھی عموماً ان کے اشعار میں مضمون آفرینی و خیال آرائی تو ضرور ملتی ہے۔ اور جو چیز نہیں ملتی ہے یا بہت کم ملتی ہے وہ ہے لامحدود کا احساس یا لامحدود کا وجدان۔ میرؔ یہ احساس و وجدان ان خاموشیوں سے پیدا کرتے ہیں جو ان کے نرم اور دھیمے لہجے میں جاری و ساری ہیں۔ یہ کوئی معرّا احساس و وجدان نہیں ہے بلکہ مادی وجود کی آخری تہوں سے اس احساس و وجدان کی جڑیں پھوٹتی ہیں ایسا معلوم ہوتا ہے کہ یہی دنیا اپنے اندر لامحدود کو جذب کیے ہوئے ہے۔ میرؔ کے اشعار ایک ایسے انسانی دستاویز HUMAN DOCUMENT ہیں جو ہماری انسانیت کی ٹھیٹ سے ٹھیٹ ترجمانی کرتے ہیں اور ساتھ ہی ساتھ ہمیں یہ احساس کراتے ہیں کہ یہ عنصری شاعری ELEMENTAL POETRY ہے یہ بات یا یہ عنصریت ہم غالبؔ کے یہاں بالکل نہیں پاتے۔ فارسی کے شعراء میں بھی یہ عنصریت مفقود ہے میرؔ کے اشعار وہ پیمانے ہیں جن سے سیال خیالات و جذبات چھلکے پڑتے ہیں۔ اور اس کے ساتھ ہی ساتھ اس پیمانے کی تہوں یا گہرائیوں کی ہم تھاہ بھی نہیں لگا سکتے پیمانے ہیں یا بحر ناپیدا کنار؟ غالبؔ کے عشقیہ اشعار میں سپردگی یا استیصال جذبات کی بہت کم مثالیں ہیں۔

غالبؔ عموماً اپنے موضوعات و خیالات پر خود مسلط ہیں۔ برعکس اس کے میرؔ اپنے محسوسات و موضوعات کو اپنے اوپر طاری کر لیتے ہیں۔ اور اپنی شخصیت کو ان میں حل ہو جانے دیتے ہیں ایسا ہی کرنے سے یا ایسا ہی ہونے سے شعر میں لامحدود کا احساس پیدا ہوتا ہے۔

۶۔ شاعری میں داخلیت و خارجیت کی بحث بھی آپڑتی ہے۔ ایک طرف تو میرؔ کے یہاں شدید داخلیت نظر آتی ہے لیکن جس بات پر ابھی تک کسی نے روشنی نہیں ڈالی وہ بات یہ ہے کہ شاید ہی اردو کا کوئی شاعر احساس حسن کے معاملے میں ان منتخب خارجی مناظر کی مصوری میں اتنے جیالے حواس خمسہ کا ثبوت دے سکا ہو جن کی مثالیں میرؔ کے اشعار میں

कवियों में भी इस प्रकार की तात्विकता नहीं पायी जाती । 'मीर' के अशआर वह पैमाने हैं जिनसे विशाक्त कल्पनाएँ एवं भावनाएँ छलकी पड़ती हैं और इसके साथ ही साथ इस पैमाने के आधार तथा गहराइयों का हम अनुमान भी नहीं कर सकते । पैमाने हैं कि ऐसी लहरें कि जिनका कोई किनारा ही नहीं ?

ग़ालिब साधारणतया अपने विषय तथा कल्पनाओं पर स्वयं छाये हुए हैं । और इसकी अपेक्षा 'मीर' अपनी भावनाओं तथा विषयों को अपने ऊपर आच्छादित कर लेते है और अपने व्यक्तित्व को उसमें लीन हो जाने देते हैं । ऐसा ही करने से या ऐसी ही उत्पन्न-स्थिति से शेर में असीमित-स्थिति की भावना जन्म लेती है ।

६—काव्य में अन्तंवाद तथा वाह्यवाद सम्बन्धी-वाद विवाद भी चल पड़ता है एक ओर तो 'मीर' के यहाँ अन्तः शक्तियों की प्रबलता है लेकिन जिस विषय पर अभी तक किसी ने प्रकाश नहीं डाला वह यह की शायद ही उर्दू का कोई शायर भावना की सुन्दरता के विषय में उन चुने हुए वाह्य दृश्यों को चित्रकारी में जागृत भावनाओं का प्रमाण दे सका हो जिसका उदाहरण हमें 'मीर' के काव्य में मिलता है । यह वाह्यवाद-अन्तंवाद पर आधारित है और इसी से प्रबल भावुकता जन्म लेती है । मीर की ज्ञानेन्द्रियों (SENSORY NERVES) की गतिविधि अत्यन्त तीव्र है। मीर के अनेकों अशआर में वाह्यशक्ति की जागरुकता अनुभव होती है । यही वह कौशल था जिसने 'मीर' को कुछ ऐसी मसनवियों[1] की रचना के लिये विवश किया जिन में वाह्य दृश्य के चित्र अंकित किये गये हैं । यों तो दृश्यचित्रण कला में मीर ने अपनी समस्त कुशलताओं का प्रयोग नहीं किया है फिर भी उनकी ग़ज़लों में इस प्रकार की झाँकियाँ विद्यमान हैं जो मीर को जागरुक बौद्धिक शक्तियों का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं :—

डूबे उछले है रात भर ख़ुरशीद[2] उसने देखा है तुझको दरिया पर,
रात भर शमा सर को धुन्ती रही क्या पतिंगे ने इल्तिमास किया
कुछ मौजे हवा[3] पेचाँ[4] ऐ 'मीर' नजर आई, शायद की[5] बहार आई जंजीर नजर आई

एक जंगल में अकेला प्रेमी और उसके मनोभाव का कैसा जीवित चित्रण किया गया है । फिर ऐसे उदाहरण जहाँ 'माशूक' (प्रेमिका) को एक विकसित सुमन की उपमा दी गयी है या बहार की झाँकियाँ प्रस्तुत की गयी हैं कमर तक लम्बी

१. मन्ज़ूम किस्सा या कहानी अर्थात किसी क़िस्से या कहानी को काव्य रूप दे देना । २. सूर्य । ३. पवन की लहरें । ४. उलझी हुई । ५. सम्भवतः ।

ہم کو ملتی ہیں یہ خارجیت داخلیت میں ڈوبی ہوئی ہیں۔ اور اسی سے نہایت حساس خارجیت بن گئی ہے۔ میرؔ کے رگ احساس SENSORY NERVES غیر معمولی حد تک بیدار ہیں۔ میرؔ کے اکثر اشعار میں ہمیں خارجیت کی دولت بیدار ملتی ہے۔ یہی وہ صلاحیت تھی جس نے میرؔ سے کچھ ایسی مثنویاں کہلائیں جن میں خارجی مناظر کی سچی تصویریں کھینچی گئی تھیں۔ یوں تو منظر نگاری کے میدان میں میرؔ اپنی پوری طاقت صرف نہیں کرتے پھر بھی ان کی غزلوں میں ایسی جھلکیاں مل جاتی ہیں جو میرؔ کے جیتے جاگتے حواس خمسہ کا ثبوت پیش کرتی ہیں۔

مثلاً ؎

ڈوبے اچھلے ہے رات بھر خورشید
اس نے دیکھا ہے تجھ کو دریا پر

رات بھر شمع سر کو دھنتی رہی
کیا پتنگے نے التماس کیا

کچھ موجِ ہوا پیچاں اے میرؔ نظر آئی
شاید کہ بہار آئی زنجیر نظر آئی

کیا کہیے کچھ بن نہیں آتی جنگل جنگل ہو آئے
چھا نہہ میں جا کر پھولوں کی ہم عشق وجنوں کو رو آئے

ایک جنگل میں تنہا عاشق اور اس کی کیفیات قلب کی کیسی جان دار تصویر کھینچی ہے پھر ایسے ٹکڑے جہاں معشوق کو نوگل کہا گیا ہے یا بہار کی جھلکیاں دکھائی گئی ہیں یا کرکر گھانس کا ذکر کیا گیا ہے یا معشوق کی چال سے جہاں ایک اثر لیا گیا ہے یا تشبیہوں اور استعاروں سے کام لیا گیا ہے میرؔ کے بیدار حواس خمسہ کے ایسے ثبوت ہیں جن کی مثالیں بہت کم غزل گو شعراء پیش کر سکے ہیں۔ خارجیت اور داخلیت کی بحث میں یہ حقیقت

घास का वर्णन किया गया है या जहाँ माशूक़ की चाल सें अभिप्राय लिया गया है या उपमाओं तथा रूपकों का प्रयोग किया गया है। यह सब 'मीर' की जागरुक बौद्धिक शक्तियों के ऐसे प्रमाण हैं जिसका उदाहरण बहुत कम ग़ज़ल कहने वाले शायरों ने प्रस्तुत किया है। वाह्यवाद तथा अर्न्तवाद की बहस में इस वास्तविकता की अवहेलना नहीं करनी चाहिए कि अर्न्तवाद काव्य को भी उसी समय प्रबलता प्राप्त होती है जब कवि अपनी उन्मत्त स्थिति के सामर्थ्य से मुक्ति एवं छुटकारा प्राप्त कर लेता है अर्थात जब वह परिस्थितियों से बाध्य न होकर इनसे मुक्त होकर स्वतंत्र वातावरण में निरीक्षण करता है।

'मीर' के आँसुओं तथा उसकी व्यथा का वर्णन तो सभी करते हैं लेकिन 'इश्क़' में 'मीर' के धैर्य और धीरज की सावधानी पर कुछ मुख्य लोगों की ही दृष्टि पड़ती है। जब 'मीर' कहते हैं—

"दरिया दरिया रोता[1] हूँ मैं, सहरा सहरा[2] वहशत[3] है,"

तो हम समक्ष रूप से यह समझ बैठने हैं कि 'मीर' अत्यन्त व्यथित हैं और अपनी प्रबल वेदना का स्पष्टीकरण कर रहे हैं। लेकिन वास्तविकता यह है कि वह अपने दिल में "दरिया दरिया आँसू और सहरा सहरा वहशत" लिये हुए है। केवल इस "दरिया दरिया" और "सहरा सहरा" का अनुमान करने के लिये वह यह कहने पर विवश हो गये कि "दरिया दरिया रोता हूँ में सहरा सहरा वहशत है" वास्तव में न तो वह रो रहे हैं और न ही अपनी चेतना शक्ति खो बैठे हैं। यही धैर्य और सहनशीलता 'मीर' को अपने स्वर तथा भाव की मन्दगति प्रस्तुत करने में मानसिक शक्ति प्रदान करते हैं और इससे उनके अशआर में ऐसी गम्भीरता तथा साहस स्पष्ट होते हैं जिसका उदाहरण अन्यत्र और कहीं नहीं मिलता। यही धैर्य और सहनशीलता 'मीर' के काव्य में अर्न्तकाव्य (SUB-LYRICAL) सम्बन्धित योग्यता उत्पन्न कर देती हैं। 'मीर' अपने विषयों को कम करके, बल्कि शान्त रह के, या लगभग शान्त रह कर, कथित विषय को बहुत बढ़ा देते है। मोटे लोहे को पतला करके अर्थात लोहे की मात्रा को घटाकर वह धार पैदा की जाती है जिसे हम नुकीलापन कहते हैं। होम्योपैथी में (DILUTION) औषिधियों की शक्ति को सैकड़ों, हज़ारों बल्कि लाखों गुना अधिक कर देता है। 'मीर' की अत्यधिक वाक्‌शक्ति अपनी जगह, परन्तु इनके सैकड़ों अशआर की

१. अत्यन्त दुःखों से ग्रस्त। २. जंगल जंगल। ३. उद्विग्नता, अत्यन्त-विक्षोभ-स्थिति।

نظرانداز نہیں کرنا چاہیے کہ داخلی شاعری بھی اس وقت توانا و جان دار ہوتی ہے۔ جب شاعر اپنے حال سے وجدان کی توفیق سے آزادی و نجات حاصل کرلے۔ یعنی جب وہ اپنے حالات کا شکار ہونے کے بدلے ان سے آزاد ہوکر مشاہدہ کرے

میرؔ کے رونے اور تڑپنے کا ذکر تو سبھی کرتے ہیں لیکن عشق میں میرؔ کے ضبط و تحمل یا لیے دیے پن پر خاص خاص لوگ ہی توجہ کرسکتے ہیں۔ جب میرؔ کہتے ہیں ؎

"دریا دریا روتا ہوں میں صحرا صحرا وحشت ہے"

تو بادی النظر میں ہم سمجھ بیٹھتے ہیں کہ میرؔ بے اختیار رو رہے ہیں۔ لیکن حقیقت یہ ہے کہ وہ اپنے دل میں "دریا دریا آنسو اور صحرا صحرا وحشت لیے ہوئے ہیں صرف اسی دریا دریا اور صحرا صحرا کا اندازہ کرنے کے لیے وہ کہنے کے لیے مجبور ہوگئے ہیں کہ "دریا دریا روتا ہوں میں صحرا صحرا وحشت ہے" دراصل نہ وہ رو رہے ہیں اور نہ ہوش و حواس کھو بیٹھے ہیں۔ یہی ضبط و تحمل میرؔ کو اپنی آواز اور لہجے میں وہ آہستہ پن اور دھیما پن پیدا کرنے کی صلاحیت دیتا ہے اور وہ گہرائی یا تہ داری ان کے اشعار میں پیدا کر دیتا ہے۔ جس کی مثال کہیں اور نہیں ملتی۔ یہی ضبط و تحمل میرؔ کے اکثر اشعار میں تحت الشعری SUB-LYRICAL صفت پیدا کر دیتے ہیں۔ میرؔ اپنی تمام باتوں کو کم کرکے بلکہ خاموش رہ کے یا قریب قریب خاموش رہ کے بات کو بہت بڑھا دیتے ہیں۔ موٹے لوہے کو باریک کرکے یعنی لوہے کی مقدار کم کرکے وہ دھار پیدا کی جاتی ہے جسے ہم نشتریت کہتے ہیں۔ ہومیوپیتھی میں DILUTION دواؤں کی قوت کو سیکڑوں ہزاروں لاکھوں گنا تک بڑھا دیتا ہے۔ میرؔ کی بسیار گوئی اپنی جگہ لیکن ان کے سیکڑوں اشعار کی کم گوئی قیامت کا اثر رکھتی ہے۔ ان بیانات کی روشنی میں میرؔ کا یہ شعر سنیئے ؎

کیا جانے دل کو کھینچے ہیں کیوں شعر میرؔ کے
کچھ بات ایسی بھی نہیں ایہام بھی نہیں

۸۔ میرؔ اور غالبؔ کے موازنے میں میں نے ایک بات نہیں کہی۔ وہ یہ ہے کہ غالبؔ کے اشعار اپنے الفاظ و طرزِ بیان کے اندر ہی مرکوز ہیں۔ میرؔ کے اشعار کا مرکز

अवाक्शक्ति साधक और सार्थक दोनों है। इसके उदाहरण में 'मीर' का यह शेर सुनिये :—

क्या जाने दिल को खींचे हैं क्यों शेयर 'मीर' के कुछ बात ऐसी भी नहीं ईहाम भी नहीं,

८—'मीर' और 'गालिब' की तुलना में मैंने एक बात नहीं कही, वह यह कि ग़ालिब के अशआर अपने शब्दों तथा शैली पर ही केन्द्रित हैं जब कि 'मीर' के अशआर का अवलम्बन अदृश्य है। शायरी में ग़ालिब की चेतना शक्ति वास्तव में प्रशंसनीय है। परन्तु 'ग़ालिब' के अशआर में संकेतवाद, विचार-निमज्जिता, आत्मह्रास तथा आत्मप्रदर्शक ज्ञान जैसे तत्वों का अभाव है। यह गुण 'मीर' के उमत्त शेरों में विद्यमान हैं।

६—गालिब ने फ़ारसी के शब्दों तथा व्यंजनाओं का प्रयोग असाधारण कुशलता के साथ किया है। 'मीर' की पूरी काव्यरचना एक ऐसा जंगल है जिसमें हम खो जाते हैं और इस विषय की ओर ध्यान आकर्षित करना भूल जाते हैं कि फ़ारसी शब्दों तथा व्यंजनाओं के कलात्मक एवं रचनात्मक प्रयोग में 'मीर' 'ग़ालिब' से कहीं आगे हैं लेकिन 'मीर' के काव्य में फ़ारसी की मिठास तथा उसके शब्दों का सम्मिश्रण पूरक तत्व के रूप में है। 'मीर' की जादूगरी क्लिष्ठ अथवा सरल शैली से हम इतना प्रभावित हो जाते हैं और इस बात को भूल जाते हैं कि फ़ारसी शब्दों तथा व्यंजनाओं का प्रयोग 'मीर' अपने हाथ में लिये फिरते है। ग़ालिब तकल्लुफ़ के साथ फ़ारसी शब्दों तथा व्यंजनाओं को चुनते हैं। 'मीर' बिना रोक टोक के ऐसा करते हैं।

१०—'मीर' के अतिरिक्त उर्दू का अन्य कोई शायर अपने काव्य में वह चुमकार भाव (CARESSING ACCENT) तथा परिचित आवाज़ की प्रियता (TONE OF INTIMACY) पैदा नहीं कर सका है जिसके प्रभावात्मक आदर्श हमें 'मीर' के यहाँ मिलते हैं। जिस पुचकार के साथ या जिस स्वर के साथ 'मीर' "तुम" शब्द का प्रयोग कर जाते हैं उसमें एक प्रकार का अपनत्व, प्रेम तथा एकता पायी जाती है। इसका उदाहरण उर्दू शायरी में कहीं और नहीं मिलता। अत्यधिक प्रेम पूर्वक "तुम" कोई और शायर बोल ही न सका।

११—'मीर' के दो चार नहीं सौ पचास नहीं बल्कि सैकड़ों अशआर में जो प्रभाव है वह किसी अन्य शायर के बीस पच्चीस शेरों में भी नहीं। प्रभाव ही काव्य की आत्मा है। शेर में प्रभाव का किस प्रकार अविर्भाव होता है? यह ज्ञान प्राप्त होता है संसार के विभिन्न दृश्यों, घटनाओं, दुर्घटनाओं तथा विषयों के

آفاق کا غیب الغیب ہے۔ شاعری میں غالب کی ہوش مندی یقیناً قابل رشک ہے لیکن رمزیت خواب ناکی۔ گم شدگی اور ماورایے ادراک عناصر غالب کے اشعار میں بہت کم ہیں یہ صفات ہمیں میرؔ کے بہترین اشعار میں ملتے ہیں

۹۔ غالب نے فارسی الفاظ و تراکیب کو غیر معمولی چابک دستی سے استعمال کیا ہے میرؔ کا پورا کلام ایک ایسا بڑا جنگل ہے جس میں ہم کھو جاتے ہیں اور ہم اس امر کی طرف توجہ کرنا بھول جاتے ہیں کہ فارسی الفاظ و تراکیب کے فن کارانہ و خلاقانہ استعمال میں میرؔ غالب سے کئی قدم آگے ہیں۔ لیکن میرؔ کے کلام میں فارسی کی چاشنی یا آمیزش ایک ضمنی حیثیت رکھتی ہے۔ میرؔ کے انداز بیان کے جادو بھرے ٹھیٹ پن یا سادگی سے ہم اتنا متاثر ہوجاتے ہیں اور اس بات کو بھول جاتے ہیں کہ فارسی الفاظ و تراکیب میرؔ اپنی ہتھیلیوں میں لیے ہوئے ہیں۔ غالب تکلف کے ساتھ فارسی الفاظ و تراکیب چنتے ہیں میرؔ بے لاگ طور سے ایسا کرتے ہیں

۱۰۔ میرؔ کے سوا اردو کا کوئی شاعر اپنے کلام میں وہ چمکار کا لہجہ CARESSING ACCENT اور آواز کی وہ مانوسیت TONE OF IN TINIACY نہیں پیدا کر سکا جس کی سحرکارانہ مثالیں ہمیں میرؔ کے یہاں ملتی ہیں جس چمکار کے ساتھ یا جس تھرتھراہٹ کے ساتھ میرؔ "تم" کا لفظ استعمال کر جاتے ہیں ان میں ایک طرح کا قرب و مانوسیت یا یگانگی ہے اس کی مثال اردو شاعری میں کہیں اور نہیں ملتی۔ اس قدر پیار بھرا " تم " کوئی اور نہیں بول سکا

۱۱۔ میرؔ کے دو چار نہیں سو پچاس نہیں بلکہ صدہا اشعار میں جو تاثیر ہے وہ کسی اور شاعر کے بیس پچیس اشعار میں بھی نہیں ملتی۔ تاثیر جان شاعری ہے۔ تاثیر شعر میں کیسے پیدا ہوتی ہے؟ دنیا کے مختلف مناظر۔ واردات۔ سانحات و موضوعات کی شدید ہم آہنگی سے یعنی انسانی اور غیر انسانی حقائق کی انسان گری HUMANISING سے جو ہمیں اس کا احساس کرا دیتی ہے کہ یہ آفاق ایک انسانی آفاق ہے۔ دوسری چیز جس سے شعر میں تاثیر پیدا ہوتی ہے وہ اس منتشر کائنات میں ایک داخلی نظام و ہم آہنگی سے ذرے ذرے کے باہمی تعلق کا احساس ہے۔ یہ بھی یاد رکھنا چاہیے کہ تاثیر کی مختلف

अत्यधिक परिचय से अर्थात मानवीय तथा अमानवीय वास्तविकताओं की मानव सम्बन्धी रचना—(HUMANISING) से, जो हमको इस बात का अनुभव करा देती है कि यह संसार एक मानवीय संसार है। दूसरी भावना जिससे शेर में प्रभावुकता का जन्म होता है वह है इस विसर्जित संसार के संचालन का ज्ञान तथा संसार की विभिन्न इकाइयों के पारस्परिक सम्बन्धों का परिचय। यह बात भी उल्लेखनीय है कि प्रभावुकता की विभिन्न मंज़िलें होती हैं। पृथ्वी के प्रत्येक कण, पानी की प्रत्येक बूंद, संसार की प्रत्येक परिस्थिति, घटना तथा कल्पना में यहाँ तक कि प्रत्येक वस्तु में एक प्रकार का कम्पन है और यह कम्पन अत्यन्त गम्भीर एवं प्रभावशाली है। इसी प्रकार के कम्पन, सुरताल तथा धड़कनों से जब शेर की रचना होती है तो इसमें प्रभावुकता उत्पन्न होती है तथा प्रत्येक स्वर गुप्त विषयों का स्वर बन जाता है। 'मीर' अपने उत्तम शेरों में जिनकी संख्या महान है इसी प्रकार के कम्पन तथा स्वर व्यंजना की अन्तिम सीमाओं पर पहुँच जाते हैं। इसीसे उनके काव्य में वह सम्मिश्रण तथा साथ ही साथ वह अत्याधिक विनम्रता उत्पन्न हो जाती है जिसका दूसरा नाम प्रभावुकता है। जहाँ तक प्रभावुकता का सम्बन्ध 'मीर' के प्रतिद्वन्दी न तो 'ग़ालिब' हैं और न 'इक़बाल'। कल्पना तथा उन्मत्तता है के अत्याधिक प्रेम तथा निर्दोषिता से यह प्रभावुकता जन्म लेती है। शायरी, अनूठी, अनजानी, अदृश्य तथा बिल्कुल नयी अथवा अद्भुत बात कहने का नाम नहीं है। न किसी बौद्धिक, दार्शनिक अथवा वैज्ञानिक जटिल समस्या या नियमों के विवरण का नाम है। शायरी के अनूठेपन या उसके सदा सुहाग होने का रहस्य, पुरानी बातों में, उन विषयों, भावनाओं तथा उन घटनाओं में हैं, जिनकी समस्त मानवता उत्तराधिकारी है और जिनसे संसार के समस्त लोग परिचित हैं। इस जीवनचर्या को चमत्कारिक रूप में परिवर्तित कर देना, इसकी अविभावी अथवा जीवन प्रारम्भिक रूप प्रस्तुत करना तथा भौतिक और संसार को काव्यात्मक वास्तविकता के द्वारा एक योग्य आदर्श बना देना इसी को महान काव्य रचना कहते हैं। 'मीर' ने यही कहा है:— २१७

सरसरी[1] तुम जहान से गुज़रे वरना हर जा जहाने[2] दीगर था

ले सांस भी अहिस्ता कि नाज़ुक[3] है बहुत काम
आफ़ाक़[4] की इस कार गाहे[5] शीशा गरी का

१. थोड़े समय के लिए। २. दूसरी स्थिति, दूसरी दुनिया। ३. नाज़ुक से तात्पर्य कोमल से होता है लेकिन यहाँ पर इसका अर्थ 'सूक्ष्मता' की सीमा के अन्तर्गत आता हैं। ४. संसार। ५. क्रिया स्थल।

منزلیں ہوتی ہیں۔ ہر ذرے ہر قطرے ہر عالم ہر واقعہ۔ ہر خیال ہر بات میں ایک تھرتھراہٹ اور یہ تھرتھراہٹ یا تموج تہ در تہ ہوتی ہے انھیں تھرتھراتی ہوئی تھوں یا دھڑکنوں سے جب شعر معمور ہوتا ہے تو اس میں تاثیر پیدا ہو جاتی ہے اور ہر نوا نوائے راز بن جاتی ہے۔ میر اپنے بہترین اشعار میں جن کی تعداد بہت ہے اس تھرتھراہٹ کی آخری تھوں تک پہنچ جاتے ہیں اسی سے ان کے کلام میں وہ گھلاوٹ اور یہ ایک رقت وہ شدت وزنی پیدا ہو جاتی ہے جس کا دوسرا نام تاثیر ہے جہاں تک تاثیر کا تعلق ہے میر کے حریف نہ غالب ہیں نہ اقبال تخیل و وجدان کی انتہائی خلوص و معصومی سے یہ تاثیر پیدا ہوتی ہے۔ شاعری اَن سنی اور ان کہی بالکل نئی اور نرالی بات کہنے کا نام نہیں ہے۔ نہ کسی عقلی فلسفیانہ یا سائنسی ادق مسئلہ یا اصول کے بیان کا نام نہیں ہے۔ شاعری کے نئے پن یا اس کے سدا سہاگ ہونے کا راز پرانی باتوں میں ان باتوں میں ان محسوسات میں اور ان واردات میں جو تمام انسانوں کی جانی پہچانی ہوئی وراثت ہے اور جو سب پر گزرتی ہیں اور گزرتی رہیں گی۔ انھیں معمولات زندگی کو معجزہ بنا دینا ان کا ازلی و ابدی روپ پیش کر دینا اور مادی زندگی و کائنات کو شاعرانہ صداقت کے ذریعہ ایک عالم بے مثال اسی کو بڑی شاعری کہتے ہیں۔ میر نے یہی کہا ہے

سرسری تم جہان سے گزرے
ورنہ ہر جا جہان دیگر تھا

لے سانس بھی آہستہ کہ نازک ہے بہت کام
آفاق کی اس کارگہِ شیشہ گری کا

شاعر صرف خلاق نہیں ہوتا بلکہ کائنات سے بھی دمادم صدائے کن فیکون آتی ہے۔ فطرت کی خلاقی کا وجدان ہی شاعر کو خلاق بناتا ہے بڑے شاعر کے پاس اپنا کوئی خیال نہیں ہوتا۔ اہل دنیا کے خیالوں۔ حالتوں۔ کیفیتوں اور محسوسات کے سوا شاعر کے پاس کچھ نہیں ہوتا۔ شاعر ہمیں خود اپنا درشن کراتا ہے اور یہی اس کی خلاقی ہے اس کی آواز میں ہم ایسا محسوس کرتے ہیں گویا ہم اپنے آپ کو پا رہے ہیں۔ خود آگاہی

शायर केवल रचयिता नहीं होता बल्कि प्रकृति की ओर से भी किसी कार्य को करने की आज्ञा मिलती है और वह कार्य पूरा किया जाता है। प्रकृति की रचना शक्ति का भाव ही शायर को रचयिता बना देता है। महान कवि के पास अपनी कोई कल्पना नहीं होती। संसार के लोगों की कल्पनाओं, दशाओं, स्थितियों तथा भावनाओं के अतिरिक्त शायर के पास कुछ नहीं होता। कवि अपना दर्शन हमें स्वयं कराता है और यही उसकी रचनात्मकता है। उसके स्वर में हम ऐसा अनुभव करते हैं कि जैसे हम स्वयं को पा रहे हों। स्वयं चेतना का यही कार्य, जीवन को प्राप्त करने का यही ढंग, शायरी की पद्धति में भावुकता पैदा करता है। प्रभावपूर्ण काव्य हमको अपनी बौद्धिक शक्ति प्रदान करता है और यह अपनत्व की भावना उसी समय प्राप्त होती है जब हमारी व्यक्तिगत भावना का ह्रास हो जाता है। यह संसार केवल एक क्रिया स्थल नहीं है बल्कि एक शिक्षालय भी है। इसी प्रकार की सृष्टि चेतना अथवा प्राकृतिक भावनाएं 'मीर' ने हमकोप्र दान की हैं। वास्तव में इस चेतना यथार्थवादिता के अस्तित्व के साथ अवास्तविक रँगा-रँगी भी होती है। यही कारण है कि प्रत्येक महान कवि की काव्य रचना में सृष्टि सम्बन्धी वर्णन के साथ एक नये संसार का ज्ञान भी मिलता है। विभिन्न होते हुए भी संसार के यह चित्र वास्तविकता पर आधारित होते हैं और जिनमें पारस्परिक सम्बन्ध भी होते हैं परन्तु एकता नहीं क्योंकि यह चित्र साहित्य तथा काव्य की सृष्टि चेतना में, कवि के आत्मव्यक्तित्व के दर्पण में, प्रतिबिम्बित हैं। ऐसा काव्य जो मधुर स्वरों से सुसज्जित हो, जिसमें सुरीली तान हो, मीर का काव्य है और संसार में इस प्रकार के काव्य रचयिताओं की श्रेणी में मीर का अपना स्थान है।

१२—मेरे इस लेख का अध्ययन करने वाले मेरा समर्थन करें अथवा विरोध परन्तु इन दोनों पक्षों पर मैं अपना निश्चित-निर्णय स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैं ग़ालिब की महानता की अवहेलना नहीं करता। ग़ालिब का संक्षिप्त काव्य संकलन हमारे साहित्य का 'कोहेनूर' है। ग़ालिब ऐसा शायर है, जिसकी महानता से विरोध करके, निरन्तर विद्रोह करके भी इसकी महानता के समक्ष श्रद्धा-पूर्वक शीश झुकाना पड़ता है। डा० 'बिजनौरी' ने कहा था कि भारत के पास दो महान प्रेरणात्मक रचनाएँ हैं। एक "वेदे मुक़द्दस" और दूसरी "दीवाने ग़ालिब" और मैं तो आरम्भ से ही किसी रचना को दैवी प्रेरणा का रूप देने का समर्थक नहीं हूँ चाहे वह कोई वेद हो या पुराण, परन्तु एक श्रेष्ठ साहित्यक वाक्य के रूप में मैं डा० "बिजनौरी" के वर्णन का समर्थन करता हूँ। मैंने यह क्या अद्भुत बात कह

کا یہی عمل زندگی کو پانے کا یہی انداز شاعری میں تاثیر پیدا کرتا ہے ۔ یہ تاثیر شاعری ہمیں ہمارا اپنا ذہن بخشتی ہے اور یہ اپنا پن اس وقت حاصل ہوتا ہے جب ہماری انفرادیت صلیب پر چڑھ جاتی ہے۔ یہ کائنات محض ایک کارزار نہیں ہے بلکہ ایک درس گاہ بھی ہے یہی آفاقی آگاہی یا شعور آفاق میرؔ نے ہم کو دیا ہے ۔ البتہ یہ شعور حقیقت سے مملو ہوتے ہوئے بھی مجاز کی رنگا رنگی و بوقلمونی رکھتا ہے اسی سبب سے ہر بڑے شاعر کے کلام میں آفاقیت کے ساتھ ہمیں ایک نئی کائنات ملتی ہے ۔ مختلف ہوتے ہوئے بھی کائنات کی یہ تصویریں صداقت کی حامل ہوتی ہیں اور باہم ہم آہنگ بھی ہوتی ہیں ۔ البتہ یکساں نہیں ہوتیں کیونکہ یہ شعور کائنات شاعری و ادب میں شاعر کی انفرادی شخصیت کے آئینے میں جلوہ گر ہوتی ہیں غنائی شاعری میں میرؔ کا مقام دنیا کے بڑے سے بڑے غنائی شاعری کی صف میں ہے

۱۲ ۔ میرے اس مضمون کو پڑھنے والے اتفاق کریں یا اختلاف کریں ۔ لیکن ان دونوں گروہوں پر میں اپنا یہ سوچا سمجھا ہوا فیصلہ واضح کر دینا چاہتا ہوں کہ میں غالبؔ کی عظمت سے انکار نہیں کرتا ۔ غالبؔ کا چھوٹا سا دیوان ہمارے ادب کا کوہ نور ہے غالبؔ وہ شاعر ہے جس کی عظمت سے بغاوت کرکے ہمیں پھر بھی اس کی عظمت کے سامنے خلوص کے ساتھ سر جھکانا پڑتا ہے ۔ ڈاکٹر بجنوری نے کہا تھا کہ ہندوستان کے پاس دو الہامی کتابیں ہیں ۔ ایک وید مقدس دوسرا دیوان غالبؔ ۔ اور میں سرے سے کسی کتاب کے الہامی ہونے کا قائل نہیں خواہ وہ وید ہو یا کوئی اور بلند سے بلند مذہبی صحیفہ ہو ۔ لیکن ایک شان دار ادبی فقرے کی حیثیت سے میں ڈاکٹر بجنوری کے بیان سے متفق ہوں ۔ میں نے یہ کیا شگوفہ چھوڑ دیا ؟ اب تک تو میں میرؔ کو غالبؔ سے کہیں بڑا ثابت کر رہا تھا ۔ اور اب میں ڈاکٹر بجنوری سے اپنے اتفاق کا اظہار کر رہا ہوں ۔ تو بات یہ ہے کہ میرؔ کی شاعری کا جو درجۂ حرارت ہے وہاں ہم دیر تک قیام نہیں کر سکتے ۔ ؎

دل تڑپے ہے جان گھلے ہے حال جگر کا کیا ہوگا

اس عالم میں بڑے سے بڑا ادب پرست دیر تک رہ نہیں سکتا ۔ جس عالم میں حساس سے حساس آدمی درجۂ حرارت کو برداشت نہیں کر سکتا وہ عالم غالبؔ کی شعری کائنات ہے یہاں کی گرمی قابل برداشت ہے صرف ہمارے لیے نہیں بلکہ ان صدہا رنگا رنگ

दी ? अभी तक तो मैं 'मीर' को 'ग़ालिब' से कहीं श्रेष्ठ कवि प्रमाणित कर रहा था और अब मैं डा० "बिजनौरी" से अपने समर्थन का स्पष्टीकरण कर रहा हूँ। सत्य तो यह है कि 'मीर' की 'शायरी' का जो तापमान है वहाँ हम अपनी दीर्घ-कालीन स्थिरता को बनाये नहीं रख सकते।

"दिल तड़पे है जान घुले है हाल जिगर का क्या होगा"?

उस स्थिति में बड़े से बड़ा साहित्यक व्यक्ति देर तक नहीं रह सकता जिस स्थिति में अतिभावुक व्यक्ति उस ताप-मान को सहन करने की शक्ति रखता है। वह स्थिति 'ग़ालिब' की काव्य-सृष्टि है। यहाँ की गर्मी सहन करने योग्य है केवल हमारे लिये नहीं बल्कि उन सैकड़ों रंग-बिरँगी फूलों के लिये भी जो ग़ालिब के अशआर में खिलते हुए नज़र आते हैं।

मैंने किसी न किसी कारणवश यह प्रभाव पैदा करना चाहा है कि 'मीर' 'गालिब' से महान हैं इसका कारण वह ही है जिसने 'गालिब' से स्वयं 'मीर' की महानता का समर्थन कराया है। 'ग़ालिब' ने जिस स्वर भाव से मिर्ज़ा "बेदिल" या "ज़हूरी" का वर्णन किया है या जिस भावना के आधार पर "उर्फ़ी" की आवाज़ में 'ग़ालिब' ने अपनी आवाज़ मिला दी है इससे कहीं अधिक प्रेम तथा श्रद्धा भाव से 'ग़ालिब' ने 'मीर' को श्रद्धान्जलि अर्पित की है :—

"सुनते हैं अगले ज़माने में कोई 'मीर' भी था।"

'ग़ालिब' के इस "मिसरे"[1] में सर धुनने का-सा अन्दाज़ है। वह स्वयं इस वास्तविकता को प्रमाणित कर रहा है कि 'मीर' की काव्य रचना में 'ग़ालिब' ने सब कुछ देख लिया था, जिसकी ओर मैंने कुछ संकेत प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। यदि "दीवाने ग़ालिब" हमारे लिये प्रेरणात्मक रचना है तो "कलामे-मीर" स्पष्ट वास्तविकता है जिसकी अपूर्ण व्याख्या प्रेरणात्मक रचनाएँ करती हैं।

१३—मैंने 'मीर' की 'ग़ज़लों के अध्ययन में एक ऐसी कोशिश की है जिसकी ओर अब तक किसी ने ध्यान आकर्षित नहीं किया। यों तो 'मीर' ने लगभग ग़ज़ल कहने के समस्त निश्चित आदर्श प्रस्तुत किये हैं और प्रत्येक निश्चित आदर्श अथवा नियम में शेर कहने में श्रेष्ठता दिखाई है लेकिन 'मीर' के दिल की धड़कने 'मीर' की उन्मत्त स्थिति तथा 'मीर' के स्वर के सरस भाव का जिस पद्धति से अत्याधिक सम्बन्ध है वह पद्धति है 'मिर्ज़ा शौक़' की 'मसनवी' "ज़हरे-इश्क़" की। इस पद्धति

१. शेर की पंक्ति को 'मिसरा' कहते हैं। शेर की पहली पंक्ति को 'मिसरा-ए अव्वल' तथा दूसरी को 'मिसरा-एसानी' कहते हैं।

پھولوں کے لیے جو غالبؔ کے اشعار میں کھلے ہوئے نظر آتے ہیں

میں نے کسی نہ کسی وجہ سے جو یہ اثر پیدا کرنا چاہا ہے کہ میرؔ غالب سے عظیم تر ہیں اس کی وجہ وہی ہے جس نے غالبؔ سے خود میرؔ کی عظمت کا اعتراف کرایا ہے غالبؔ نے جس لب و لہجہ سے مرزا بیدلؔ یا ظہوری کا ذکر کیا ہے یا جس جذبے کے تحت عرفی کی آواز میں غالبؔ نے اپنی آواز ملائی ہے اس سے کہیں زیادہ پرخلوص اور پرعقیدت لہجے میں غالبؔ نے میرؔ کو خراج عقیدت پیش کیا ہے

سنتے ہیں اگلے زمانے میں کوئی میرؔ بھی تھا

غالبؔ کے اس مصرعے میں سر دھننے کا انداز ہے وہ خود اس امر کی غمازی کر رہا ہے کہ میرؔ کے کلام میں غالبؔ نے سب کچھ دیکھ لیا تھا جس کی طرف کچھ اشارے کرنے کی میں نے کوشش کی ہے اگر دیوان غالبؔ ہمارے لیے الہامی کتاب ہے تو کلام میرؔ فی نفسہٖ وہ حقیقت ہے جس کی ترجمانی الہامی کتابیں کرتی ہیں

۱۳۔ میں نے میرؔ کی غزلوں کے مطالعے میں ایک ایسی کوشش کی ہے جس کی طرف اب تک کسی نے اشارہ نہیں کیا ہے یوں تو میرؔ نے قریب قریب تمام بحروں میں طبع آزمائی کی ہے اور ہر بحر یا زمین میں بڑے سے بڑا شعر نکالا ہے لیکن میرؔ کے دل کی دھڑکنیں میرؔ کے وجدان کی تھرتھراہٹیں جس بحر سے سب سے زیادہ ہم آہنگ ہیں وہ بحر ہے مرزا شوق کی مثنوی "زہرِ عشق"۔ اس بحر میں میرؔ کے دل کی دھڑکنیں صاف صاف سنائی دیتی ہیں مثلاً میرؔ کے یہ مصرعے لیجیے ؎

جان ہے تو جہان ہے پیارے

شکوۂ آبلہ ابھی سے میرؔ

کیا دوانے نے موت پائی ہے

پنکھڑی اک گلاب کی سی ہے

में 'मीर' के हृदय का धड़कना स्पष्ट रूप से सुनाई देता है। उदाहरणार्थ 'मीर' की शेरों की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत की जाती हैं।

"जान है तो जहान[1] है प्यारे,"

"शिकवा-ए आबला[2] अभी से 'मीर?"

"क्या दीवाने ने मौत पायी है"

"पंखड़ी इक गुलाब की सी है"

"उम्र भर हम रहे शराबी से"

"'मीर' का तौर[3] याद है हमको,"

"ऐ मेरी मौत तो भली अयी"

इस पद्धति में 'मीर' की ग़ज़लें बड़ी संख्या में हैं और इन ग़ज़लों में हम स्वयं को 'मीर' के स्वभाव से निकट पाते हैं।

१०—'मीर' ने अनुमानतः अस्सी वर्ष तक शायरी करके लगभग डेढ़ हजार ग़ज़लें कहीं हैं। एक बात जो इन ग़ज़लों के सम्बन्ध में हमको किसी सीमा तक निराश कर देती है वह है स्वर और भाव की एकता। इस दोष से ग़ालिब ने स्वयं को बचा लिया है और उन शायरों ने भी जिहोंने संक्षिप्त काव्य रचनाएँ छोड़ी हैं। इसकी अपेक्षा विस्तृत काव्यरचनाओं वाले सभी महान कवि इस दोष से न बच सके। 'मीर' ने ग़ज़ल के मैदान में अनेकानेक ऐसी पद्धतियाँ भी ग्रहण की हैं जो ग़ज़ल के लिये किसी सीमा तक तकल्लुफ़ मे पूर्ण हैं। कुछ ऐसा प्रतीत होता कि 'मीर' बिना कुछ कहे देर तक रह नहीं सकते थे, और प्रत्येक बार ग़ज़ल के लिये उपयुक्त ज़मीन (आधार) हाथ नहीं आती थी। मीर की ऐसी ग़ज़लों के रूप को अनुभव की संज्ञा दी जा सकती है।

यह सब कुछ सत्य है लेकिन यदि 'मीर' की आधी काव्यरचनाओं को भी पृथक कर दिया जाय तो भी लगभग दस हज़ार शेर बच रहेंगे। और यह 'अशआर' हमको ऐसे स्थान पर ले जाते हैं जहाँ समस्त संसार के महान साहित्यकार हमको

१. संसार। २. छाला पड़ने की शिकायत। ३. नियम, तरीक़ा।

عمر بھر ہم رہے شرابی سے

میر کا طور یاد ہے ہم کو

اے مری موت تو بھلی آئی

اس بحر میں میر کی غزلیں بہت بڑی تعداد میں ہیں اور ان غزلوں میں ہمیں میر کے مزاج سے انتہائی قربت کا احساس ہوتا ہے

۱۴۔ میر نے اندازاً اسی برس تک شاعری کرنے میں کم و بیش ڈیڑھ ہزار غزلیں کہی ہیں ایک بات جو ہمیں ان غزلوں کے متعلق کسی قدر ناآسودہ کر دیتی ہے وہ لب و لہجے کی یکسانیت ہے اور محسوسات کی بھی یکسانیت ہے۔ اس علت سے غالب نے اپنے آپ کو بچالیا ہے یا ان شعرا نے بھی جنھوں نے بہت مختصر دیوان چھوڑے ہیں۔ ورنہ ضخیم دیوان چھوڑنے والے قریب قریب سبھی شاعر اس علت کا شکار رہے ہیں میر نے پچاسوں ایسی زمینیں بھی نکالی ہیں جو غزل کے لیے کسی قدر پر تکلف ہیں۔ کچھ ایسا معلوم ہوتا ہے کہ میر بلا کچھ کہے ہوئے دیر تک نہیں رہ سکتے تھے اور ہر بار مناسب زمین انھیں ہاتھ نہیں آتی تھی۔ میر کی ایسی غزلوں کی حیثیت تجرباتی ہے

یہ سب کچھ سہی لیکن اگر ہم میر کا آدھا کلام بھی کاٹ کر پھینک دیں تو کم و بیش دس ہزار اشعار بچ رہیں گے اور یہ اشعار ہمیں ان مقامات پر لے جاتے ہیں جہاں تمام ادبیات عالیہ ہمیں پہنچاتے ہیں۔ اپنی اپنی زبانوں میں مشاہیر شعرا نے جو بہترین باتیں کہی ہیں اس سے زیادہ مانوس و معصوم لہجے میں میر نے اپنی باتیں کہی ہیں۔ میر کا انداز و لہجہ یہی نہیں کہ دوسرے اردو شاعروں کو نصیب نہیں ہوا۔ بلکہ شاید ایشیا اور یورپ کے کسی زبان کے شاعر کو میسر نہیں آیا۔ یہ گھلاوٹ کہیں نظر آتی ہے تو وہ برج بھاشا کی

पहुँचाते हैं। अपनी अपनी भाषाओं में प्रसिद्ध कवियों ने जो बातें कही हैं उससे कहीं अधिक परिचित तथा सरल भाव में 'मीर' ने अपनी बातें कही हैं। 'मीर' का स्वर तथा भाव, यही नहीं कि अन्य कवियों को प्राप्त नहीं बल्कि सम्भवतः सम्पूर्ण एशिया और योरोप की किसी भाषा के कवि को प्राप्त नहीं हुआ। यह घुलावट कहीं नज़र आती है तो वह बृज भाषा के काव्य में या फिर प्राचीन हिन्दी काव्य में 'सूरदास' 'कबीर दास' 'तुलसी दास, तथा 'मीरा बाई' की रचनाओं में। मुझे ऐसा अनुभव होता है कि 'मीर' प्राचीन हिन्दी साहित्य से असाधारण सीमा तक अवगत तथा प्रभावित थे। इनका भाव बृज भाषा के श्रेष्ठ काव्य से उद्धृत है। इसके अतिरिक्त 'मीर' का व्यक्तित्व इतना विकसित है कि बृज भाषा की उच्च कोटि की काव्यरचनाएँ भी इसकी परिधि नहीं कर सकती थीं और न ही अरबी या फ़ारसी की। 'मीर' अपने पथ प्रदर्शकों से भी महान हैं। उन्होंने जो कुछ जहाँ से प्राप्त किया उसको नवीन रूप देकर, पृथक रंग देकर, और उसे कहीं अधिक मूल्यवान बनाकर संसार के सामने प्रस्तुत किया है। वास्तव में 'मीर' के लेनदार[1] स्वयं 'मीर' के देनदार[2] हैं।

१. ऋण देने वाला। २. ऋणी, क़र्ज़दार।

شاعری میں یا قدیم ہندی شاعری میں۔ سورؔ داس۔ کبیرؔ داس۔ تلسیؔ داس اور میرؔا بائی کے یہاں نظر آئیں گی مجھے ایسا محسوس ہوتا ہے کہ میرؔ قدیم ہندی ادب سے غیر معمولی حد تک مانوس و متاثر تھے۔ ان کا لہجہ برج بھاشا کی بہترین شاعری سے ماخوذ ہے اس کے ساتھ ہی ساتھ میرؔ کی شخصیت اتنی بڑی ہے کہ برج بھاشا کی بہترین شاعری اُس کا احاطہ نہیں کرسکتی اور نہ عربی و فارسی کی بہترین شاعری۔ میرؔ اپنے مآخذوں سے بھی بلند ہیں۔ انھوں نے جو کچھ جہاں سے پایا اس کو نیا کرکے ایک انفرادی رنگ دے کر اور اس سے کہیں زیادہ قیمتی بناکر دنیا کو دیا۔ میرؔ کے قرض خواہ خود میرؔ کے مقروض ہیں۔

मीर की उपज तथा परख'

हसन असकरी
पिलखौनवी

आत्म विश्वास—१८ वीं शताब्दी में पतन ग्रस्त मुग़ल संस्कृति के प्राँगण में मीर ने आँखे खोली थीं। अतः स्पष्ट है कि पतन ग्रस्त घटनाओं के अनुभव ने मीर की कला को मुखरित कर दिया। 'मीर' के भाव में विनम्रता एवं वेदना अभिव्यक्ति का जो आकर्षण है उसने मीर को उसके युग में ही अत्याधिक ख्याति प्रदान कर दी थी। इस ख्याति ने 'मीर' में इतना अधिक आत्मविश्वास उत्पन्न कर दिया था कि उसने अपनी भावनाओं और अनुभवों के दर्पण में भावी पीढ़ियों के मत का भी प्रतिबिम्ब देख लिया था। उदाहरणार्थः—

'मत सहल[1] हमें जानो फिरता है फ़लक[2] बरसों[3],
तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलते हैं।

इस शेर में वह अपने उस व्यक्तित्व का परिचय दे रहा है जो भावनाओं और अनुभवों के दृष्टिकोण सें इतना अधिक विकसित हो चुका था कि उसका पूर्ण रूप से अध्ययन करना सरल कार्य न था। अतः उसने अपने मानसिक विकास के फलस्वरूप यह कहा है कि मेरे जैसे व्यक्तित्व प्रतिदिन जन्म नहीं लेते। इनके सृजन हेतु युग को सैकड़ों वर्ष की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। इसी अर्थ को ढँग बदलकर इस प्रकार प्रस्तुत किया हैः—

'बरसों लगी रही हैं जब मेहरो—मह की आँखें,
तब कोई हम सा साहब, साहब नज़र बने हैं।

महान व्यक्तियों के महान कार्यों द्वारा प्रगति करने के विषय में संसार को जिस प्रकार की प्रतीक्षा करनी पड़ती है पहले शेर में भी इसी अर्थ को व्यक्त किया गया है और इसमें भी, परन्तु इस शेर की दूसरी पंक्ति में पहले शेर से अधिक विस्तार के साथ अपने को 'साहबे-नज़र'[4] कहकर अपने अनुभवों तथा भवनाओं

१. सरल। २. गगन। ३. वर्षों। ४. दृष्टि रखनेवाला।

میرؔ کی اُپج اور پرکھ

حسن عسکری پلکھونوی

خود اعتمادی۔ اٹھارھویں صدی کے زوال خوردہ مغل تمدن میں میرؔ نے آنکھیں کھولی تھیں لہذا حادثات زوال کے احساس نے میرؔ کے فن کو فن بنایا، میرؔ کے لہجے میں نرمی اور اظہار درد کی جو کشش ہے اس نے میرؔ کو اس کے دور میں ہی کافی مقبول بنا دیا تھا اس مقبولیت نے میرؔ میں اس درجہ خود اعتمادی پیدا کی کہ اس نے اپنے احساسات و تجربات کے آئینے میں اپنے بعد میں آنے والی نسلوں کی رائے کا عکس بھی دیکھ لیا تھا مثلاً

مت سہل ہمیں جانو پھرتا ہے فلک برسوں
تب خاک کے پردے سے انسان نکلتے ہیں

اس شعر میں وہ اپنی اس شخصیت کا تعارف کرا رہا ہے جس کا احساسات و تجربات کے اعتبار سے اس درجہ پھیلاؤ ہو چکا تھا کہ اس کا پوری طرح سمجھنا آسان نہ تھا لہذا اس نے اپنے ذہنی پھیلاؤ کے اعتبار سے یہ کہا ہے کہ میری جیسی شخصیتیں روزانہ نہیں پیدا ہوتی ہیں ان کے پیدا ہونے کے لیے زمانہ کو سیکڑوں سال انتظار کرنا پڑتا ہے، اسی مفہوم کو تھوڑا سا انداز بدل کر اس طرح بھی پیش کیا ہے

برسوں لگی رہی ہیں جب مہر و مہ کی آنکھیں
تب کوئی ہم سا صاحب، صاحب نظر بنے ہے

بڑی شخصیتوں کے اپنے بڑے کارناموں کے ذریعے سے ابھرنے کے سلسلے میں زمانے کو جو انتظار کرنا پڑتا ہے پہلے شعر میں بھی اسی مفہوم کو پیش کیا گیا ہے اور اس میں بھی مگر اس شعر کے دوسرے مصرعے میں پہلے شعر سے زیادہ وضاحت کے ساتھ اپنے کو صاحبِ نظر کہہ کر اپنے تجربات و احساسات

की महत्वता को प्रकट किया गया है। ऐसे शेरों से मीर की आत्मज्ञानात्मकता के प्रभुत्व पर विशेष रूप से प्रकाश पड़ता है। 'मीर' सामन्ती पतन ग्रस्तयुग की उत्पत्ति था अतएव सामन्तों की भावनाओं का बृह् भार जो उसके मानसिक ठहराव की उत्पत्ति था 'मीर' जैसे भावुक और स्वाभिमानी कलाकार के लिए उसका उठाना अत्यन्त कठिन था। अतः इसी आधार पर उसके मस्तिष्क में इस प्रकार की अभिरुचियाँ उत्पन्न होती थीं:—

"मरता हूँ मै तो आदमे ख़ाकी[1] की शान पर।
अल्लाहरे दिमाग़[2] के है आसमान पर॥"

मीर के युग की राजनीतिक शक्तियाँ मानसिक दृष्टिकोण से अतृप्त थी और कलाकारों की आर्थिक समस्याओं का समाधान शासकों के समक्ष शीश नवाये बिना नही हो सकता था। इस प्रकार दृष्टात्मक रूप से एक तृप्त मस्तिष्क को एक अतृप्त मस्तिष्क के समक्ष झुकने के लिए विवश होना पड़ता था। यह वह मजबूरियाँ थीं जो 'मीर' के मस्तिष्क की यह दशा कर देती थीं कि वह 'आदमे ख़ाकी की शान' को स्थापित रखने के लिए बड़े से बड़े बलिदान के लिये तत्पर हो जाता था।

अर्थात 'मीर' के घर की 'तारीकी'[3] उसके घर का बरसात में टपकना, फ़ाक़ा मस्ती[4] यह सब 'आदमे ख़ाकी की शान' की उत्पत्ति थे। और यह सत्य है कि इन महरूमियों के होते हुए भी दिमाग़,[5] आसमान पर था। उसमें विवश होने के तत्व न थे। इस विवशता की समस्या को उसने इस शेर में प्रस्तुत किया है:—

"सर किसी से फ़रो[6] नहीं आता।
हैफ़[7] बन्दे हुए ख़ुदा न हुए"॥

जो वातावरण और जो मानसिक दशाएँ, एक बड़े कलाकार को क़दम-क़दम पर शक्ति के सामने सर झुकाने के लिये विवश करते हैं, इतिहास साक्षी है 'मीर' ऐसी धृष्टता के समक्ष आसानी से नहीं झुका। इस प्रकार 'मीर' की आशाओं और इच्छाओं के इस रंग से एक व्यक्ति की उसकी अपनी विशेषताओं का ज्ञान होता है और साथ ही उस युग के जीवन संचालन की कमियाँ सामने आती हैं जिनके कारण ज्ञानियों को अज्ञानियों के समक्ष झुकना पड़ता था। 'मीर' ने इन

१. मनुष्य के अस्तित्व की महानता। २. कि। ३. अन्धकार। ४. भुखमरी। ५. स्वभाव।६. नीचा।

کی اہمیت کو ظاہر کیا گیا ہے اپنے اشعار سے میر کی خود شناسی کے ملکہ پر اچھی خاصی روشنی پڑتی ہے، میر زوال خوردہ سامنتی دور کی پیداوار تھا لہذا سامنتوں کے آداب زندگی کا وہ جذباتی بوجھ جو ان کے عقلی ٹھہراؤ کی پیداوار تھا میر جیسے حساس اور خود دار فن کار کے لیے اس کا اٹھانا مشکل تھا لہذا اسی بنا پر اس کے ذہن میں اس قسم کے رجحانات پیدا ہوتے تھے

مرتا ہوں میں تو آدمِ خاکی کی شان پر
اللہ رے دماغ کہ ہے آسمان پر

میر کے دور کا سیاسی اقتدار ذہنی اعتبار سے ناآسودہ تھا اور میر کے دور میں فن کاروں کا اقتصادی مسئلہ سامنتوں کے سامنے جھکے بغیر حل نہیں ہوتا تھا اس طرح فکری اعتبار سے ایک آسودہ ذہن کو ایک ناآسودہ ذہن کے سامنے جھکنے کے لیے مجبور ہونا پڑتا تھا۔ یہ وہ مجبوریاں تھیں جو میر کے ذہن کی یہ کیفیت کر دیتی تھیں کہ وہ آدمِ خاکی کی شان کو قائم رکھنے کے لیے بڑی سے بڑی قربانیوں کے لیے آمادہ ہو جاتا تھا یعنی میر کے گھر کی تاریکی، اس کے گھر کا برسات میں ٹپکنا اس کے فاقے آدمِ خاکی کی شان کے پیداوار تھے اس کی محرومیوں کا یہ نقشہ ہوتے ہوئے بھی یہ حقیقت ہے کہ اس کا دماغ آسمان پر تھا اس میں جھکنے کی صلاحیت نہ تھی۔ اس جھکنے کے مسئلے کو ہی اس شعر میں اس نے اس طرح پیش کیا ہے۔

سر کسی سے فرد نہیں آتا
حیف بندے ہوئے خدا نہ ہوئے

جس ماحول نے اور جن ذہنی حالات نے ایک بڑے فن کار کو قدم قدم پر جھکنے کی طرف مائل کیا تاریخ شاہد ہے کہ وہ اقتدار کی اس بد ذوقی کے سامنے آسانی سے نہیں جھکا لہذا میر کی آرزوؤں اور تمناؤں کے اس رنگ سے ایک فرد کی ذہنی خصوصیات کے سامنے آنے کے ساتھ ساتھ ایک دور کے نظامِ زندگی کی وہ کمیاں سامنے آتی ہیں جن کے باعث داناؤں کو ناداروں کے سامنے جھکنا پڑتا تھا میر نے ان تہذیبی کمیوں کو محسوس کیا اپنے فن کارانہ انداز میں ان سے جنگ کی اور اس سلسلے میں اس نے بہت سے بوجھ اٹھائے وہ ایک بڑا فن کار بھی تھا اور ایک بڑا اصول پرست انسان بھی اس نے اپنے اصولوں کی حمایت اپنے الفاظ سے بھی کی ہے اور اپنے عمل سے بھی

सांस्कृतिक त्रुटियों को अनुभव किया। अपने कलात्मक ढंग से उनसे युद्ध किया और इस प्रकार उसने बहुत से बोझ उठाये। वह एक बहुत बड़ा कलाकार भी था और एक नियमवादी इन्सान भी। उसने अपने नियमों का अनुमोदन अपने शब्दों से भी किया है और अपने कार्यों से भी।

मीर के कलात्मक प्रभाव—'मीर' की कलात्मकता से मीर के पश्चात, आने वाले प्रवीण कलाकार काफ़ी प्रभावित दिखाई देते हैं अर्थात 'ज़ौक़' ने 'ग़ालिब' और 'मोमिन' को ग़ज़ल के मैदान में आगे बढ़ते हुए देखकर कहा था:—

न हुआ, पर न हुआ 'मीर' का अन्दाज़ नसीब,
'ज़ौक़' यारों ने बहुत ज़ोर ग़ज़ल में मारा।

'ज़ौक' ने 'मीर' के कलात्मक स्तर को दृष्टि में रखते हुए यह अभिरुचियां इस लिए प्रस्तुत की हैं कि 'ग़ज़ल' के मामले में 'मीर' की अद्वितीय कुशलताओं से 'ग़ालिब' ने बहुत कुछ सीखा परन्तु वह तब भी 'मीर' का स्तर प्राप्त नहीं कर सके। यह वास्तविकता है कि एक विशेष युग मे ग़ालिब के अन्दाज़ में जो आकर्षण पैदा हुआ उसके विपरीत 'मीर' के लहजे की विमभ्रता, मीर की भाषा की निपुणता की लोक प्रियता तथा 'मीर' के स्वभाव की वेदना ने मीर की ग़ज़ल में जो आभा उत्पन्न की वह ग़ालिब के यहाँ नहीं है। 'ज़ौक' का इस प्रकार का समर्थन करना एक अच्छे स्वभाव का समर्थन है। रहा 'ज़ौक' के व्यंग्य का वह अंग जिससे यह प्रकट होता है कि स्तरीय समकालीन कलाकार की कलात्मक योग्यताओं का प्रकाश अपनी कलात्मक कमियों पर पड़ते हुए देखकर 'ज़ौक़' ने 'ग़ालिब' की अथवा उसके किसी अन्य समकालीन शायर की ग़ज़ल को 'मीर' की ग़ज़ल के साथ रखकर तौलने की चेष्टा करते हुए स्वयं को ग़ज़ल में जोर मारने वाले यारों से अलग कर लिया है। दूसरे शब्दों में इसे इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है कि "मैं तो 'क़सीदे' का रणवीर हूँ इसलिए मेरी ग़ज़ल 'मीर' के सामने कोई महत्व नहीं रखती है। यदि ऐसा होता तो इसमें कोई आपत्ति न थी परन्तु उनकी ग़ज़ल 'मीर' की ग़ज़ल से क्यों हल्की रह गई जिन्होंने ग़ज़ल में पूरा ज़ोर लगाया था। इसी प्रकार 'मीर' की कलात्मक विभूति का समर्थन ग़ालिब ने भी पूरी भावनात्मक शक्ति सहित किया है। परन्तु 'मोमिन' जो गजल का प्रवीण उस्ताद था वह अवश्य मीर को इस प्रकार याद नहीं करता जिस प्रकार 'नासिख़, 'ज़ौक़' और 'ग़ालिब' स्मरण करते हैं। उसके भाव इस प्रकार हैं:—

१. क़सीदा—उर्दू शायरी की उस क़िस्म को कहते हैं जिसमें किसी की प्रशंसा की जाए।

میر کے فن کارانہ تصورات میر کے فنی سلیقہ سے میر کے بعد میں آنے والے ذہین فن کار کافی متاثر نظر آتے ہیں یعنی ذوق نے غالب اور مومن کو غزل کے میدان میں آگے بڑھتے ہوئے دیکھ کر کہا تھا

نہ ہوا پر نہ ہوا میر کا انداز نصیب　　ذوق یاروں نے بہت زور غزل میں مارا

ذوق نے میر کے فن کارانہ معیار کو پیش نظر رکھ کر یہ رجحانات اس لیے پیش کیے ہیں کہ صنف غزل کے تجربات کے سلسلے میں میر کی استادانہ صلاحیتوں سے غالب نے بہت کچھ سیکھا تب بھی وہ میر کا معیار نہیں حاصل کر سکا۔ یہ ایک حقیقت ہے کہ ایک خاص دور میں غالب کے اسلوب بیان میں جو کشش پیدا ہوئی اس سے قطع نظر کرتے ہوئے میر کے لہجے کی نرمی، میر کی زبان کے منجھے ہوئے عوامی رنگ اور میر کی طبیعت کے درد نے میر کی غزل میں جو چمک پیدا کی وہ غالب کے یہاں نہیں ہے ذوق کی اتنی تائید کرنا اچھے مذاق کی تائید کرنا ہے رہا ذوق کی طنز کا وہ پہلو جس سے یہ ظاہر ہوتا ہے کہ ایک معیاری ہم عصر کی فن کارانہ خصوصیات کی روشنی اپنی فن کارانہ کمیوں پر پڑتے ہوئے دیکھ کر ذوق نے غالب کی یا اس کے کسی دوسرے ہم عصر کی غزل کو میر کی غزل کے ساتھ رکھ کر تولنے کی کوشش کرتے ہوئے خود کو غزل میں زور مارنے والے یاروں سے الگ کر لیا ہے۔ دوسرے الفاظ میں اسے یوں پیش کیا جاسکتا ہے کہ میں تو قصیدہ کا مرد میدان ہوں لہذا میری غزل میر کے مقابلے میں کوئی اہمیت نہیں رکھتی ہے تو کوئی مضائقہ نہیں مگر ان کی غزل میر کی غزل سے کیوں ہلکی رہ گئی جنھوں نے غزل پر پورا زور لگایا تھا۔ اسی طرح میر کی فن کارانہ شخصیت کا اعتراف غالب نے بھی پوری جذباتی توانائی کے ساتھ کیا ہے۔ مگر مومن جو غزل کا اچھا خاصہ استاد تھا۔ وہ ضرور میر کو اس طرح یاد نہیں کرتا جس طرح ناسخ، ذوق اور غالب یاد کرتے ہیں اس کا انداز یہ ہے

मुर्दों[1] को तुझ पे देते हैं तरजीह[2] जो हुसूद
'मोमिन' यह जान ले कि सगे ज़ोफ़ाख़ार हैं

इस शेर से 'मोमिन' के आलोचनात्मक कौशल्य पर जो प्रकाश पड़ता है यहाँ पर यह वादविवाद नहीं है मगर 'मीर' के विषय में इस प्रकार की बातों के विरुद्ध 'ग़ालब' ने इस प्रकार आवाज़ उठाई है:—

'ग़ालिब' अपना भी अक़ीदा है बक़ौल 'नासिख़'
आप बे बहरा है जो मोतक़िदे 'मीर' नहीं।

'मोमिन' जैसे लोगों के विचारों का खंडन करते हुए 'गालिब' को कहना पड़ा है कि जो कलाकार 'मीर' के कलात्मक महत्त्व को नहीं मानता वह 'मीर' के प्रवीण व्यक्तित्व को समझने की योग्यता ही नहीं रखता। 'ग़ालिब' ने 'मीर' के व्यक्तित्व का समर्थन अपने पत्रों में भी किया है और अपने शेरों में भी। एक शेर में भी उसने कहा है:—

रेख़ता[3] के तुम्हीं उस्ताद नहीं हो 'ग़ालिब'।
कहते हैं अगले जमाने में कोई मीर भी था॥

'ग़ालिब' ने जिस प्रकार 'मीर' के काव्यात्मक व्यक्तित्व का समर्थन अत्याधिक काव्यात्मक भाव में किया है उससे स्पष्ट होता है कि ग़ालिब के काव्य की शुद्धि 'मीर' के अध्ययन से हुई वरन् 'ग़ालिब' की प्रारम्भिक शायरी, जब वह 'बेदिल' से प्रधावित था यों कहा था—

तर्ज़े बेदिल[4] में रेखता कहना, 'असदु उल्लाह ख़ाँ', क़यामत है।

'बेदिल' के रंग में उसने क्या कहा है ? जटिल युक्तियों से उत्पन्न होने वाली ग्रन्थिमुक्ति भाषा बेदिल के अनुकरण की देन थी जो काल्पनिक विषयों से सुसज्जित थी।

नक़्श[5] नाज़ेबुते[6]-तन्नाज़ व आग़ोशे[7] रक़ीब[8]
पाए[9] ताऊस प-ए ख़ा[10]-म-ए मानी माँगे,

बाज़ार में बिकने वाले भाव व्यंजनाओं की तस्वीर हेतु 'मानी' जैसे प्रमुख चित्रकार की आवश्यकता, फिर उसके क़लम को ताऊस के पैरों की, बन-बन कर उठने की शक्ति पैदा करने की आवश्यकता ने कवि को कल्पनाओं के संसार में कहाँ-कहाँ दौड़ाया है। इस काल्पनिक दौड़ को इस शेर में इस प्रकार प्रस्तुत किया है:—

१. मृतक। २. प्राथमिकता ३. ईर्ष्या करने वाले ४. हिन्दुस्तान की प्रारम्भिक सरल भाषा। ५. बेदिल के अन्दाज़ में, भाव में, ढंग में। ६. भावों के चिन्ह। ७. शोख़ महबूब, चंचल प्रेमिका। ८. गोद। ८. प्रतिद्वन्दी। ६. मोर के पर। १०. ख़ामा=क़लम।

مُردوں کو تجھ پہ دیتے ہیں ترجیح جو حسود
مومن یہ جان لے کہ سگ جیفہ خوار ہیں

اس شعر سے مومن کے تنقیدی شعور پر جو روشنی پڑتی ہے یہاں اس سے بحث نہیں ہے مگر میر کے سلسلے میں اس قسم کے رجحانات کے خلاف غالب نے اس طرح آواز اٹھائی ہے

غالب اپنا یہ عقیدہ ہے بقول ناسخ
آپ بے بہرہ ہے جو معتقد میر نہیں

مومن جیسے لوگوں کے رجحانات کی تردید کرتے ہوئے غالب کو کہنا پڑا ہے کہ جو فن کار میر کی فن کارانہ اہمیت کو تسلیم نہیں کرتا وہ اس بنا پر تسلیم نہیں کرتا کہ وہ میر کی زبردست شخصیت کو سمجھنے کی صلاحیت ہی نہیں رکھتا۔ غالب نے میر کی شخصیت کا اعتراف اپنے خطوط میں بھی کیا ہے اور اپنے اشعار میں بھی کیا ہے ایک دوسرے شعر میں اس نے کہا ہے

ریختہ کے تمھیں استاد نہیں ہو غالب
کہتے ہیں اگلے زمانہ میں کوئی میر بھی تھا

غالب نے جو میر کی شاعرانہ شخصیت کا اعتراف کافی شاندار شاعرانہ انداز میں کیا ہے اس سے یہ ظاہر ہوتا ہے بہ لحاظ اردو غالب کے ذوق شاعری کی اصلاح میر کے مطالعہ سے ہوئی ورنہ غالب کی وہ ابتدائی شاعری جب وہ بیدل سے متاثر تھا اور وہ یہ کہتا تھا

طرز بیدل میں ریختہ کہنا ؛ اسد اللہ خاں قیامت ہے

طرز بیدل میں اس نے کیا کہا ہے؟ پیچیدہ ترکیبوں سے پیدا ہونے والی ایک پیچیدہ زبان بیدل کی تقلید کی دین تھی جو خیالی مضامین سے آراستہ تھی

نقش نازِ بتِ طناز بہ آغوشِ رقیب
پائے طاوس پئے خامۂ مانی مانگے

بازار میں بکنے والے ناز اور نخروں کی تصویر کے لیے مانی جیسے ایک خاص مصور کی ضرورت، پھر اس کے قلم کو طاوس کے پیروں کی بن بن کر اٹھنے کی صلاحیت پیدا کرنے کی

'वर्ते ख़िराम ता कै ख़म्याज़ार काफ़ी'—
इस मौजे-मै को ग़ाफ़िल पैमाना नक़्शे पा है।

टहलने की दशा में 'महबूब' का अँगड़ाई लेना और इस अँगड़ाई और टहलने में उसके यौवन के उन्माद और सरसता का दर्शन। इसमें कवि टहलने के भावों के स्तरीय अध्ययन की योग्यता अनुभव कर रहा है और वह टहलने की दशा में आने वाली अँगड़ाई को मदिरा की लहर से उपमा दे रहा है। इस मदिरा को किस प्याले से पिया जा सकता है ? इसके विषय में कवि कहता है कि महबूब के टहलने के कारण पृथ्वी पर उसके क़दमों से जो पद चिन्ह बन गये हैं उनमें से प्रत्येक चिन्ह उस मदिरा के लिये पैमाने का काम देता है। इस प्रकार के विषयों के सम्बन्ध में ग़ालिब ने स्वयं कहा है—कि "पन्द्रह वर्ष की आयु से लेकर पच्चीस वर्ष की आयु तक काल्पनिक विषयों पर लिखा किया।"

इस काल्पनिक संसार से बाहर निकलने के लिये जहूरी इत्यादि के साथ 'मीर' ने भी ग़ालिब की सहायता की है।

'मीर' ने अपनी ग़ज़ल के विषय में व्यक्तिगत अनुभवों पर प्रकाश डालते हुए कहा है:—

जब ज़म ज़मा[1] करती है सदा चुभती है दिल में,
बुलबुल से कोई सीख ले अन्दाज़[2] सुख़न का।।

'मीर' ने बुलबुल से वेदनाप्रिय भावों की शिक्षा प्राप्त की। इससे स्पष्ट होता है कि उसकी गजल रीढ़वादिता की सीमा के अन्तर्गत नहीं बल्कि अपने व्यक्तिगत अनुभवों से हुई थी। इस प्रकार मीर की शायरी भावी कलाकारों को व्यक्तिगत अनुभवों की ओर आमन्त्रित करती है। 'गालिब' ने जब तक 'बेदिल' का अनुसरण करते हुए काल्पनिक विषयों को लिखा किया तब तक वह ग़ालिब नहीं हो सका परन्तु जब उसने 'मीर' से प्रभावित होकर भाषा के मामले में प्रयोग करने आरम्भ किए तो सरल शब्दों में भी उसने बड़े अर्थ पैदा किए हैं। 'ग़ालिब' की ग़ज़ल की अर्थ-युक्त सरलता में और उस बोझल काल्पनिक शायरी की भाषा में जो बेदिल के अनुकरण की देन थी, बड़ी भिन्नता आ गई है। उदाहरणार्थ—

पूछते हैं वह कि ग़ालिब कौन है—
कोई बतलाओ कि हम बतलाएं क्या।

जन्नातमक भाषा के यह शाब्दिक ढाँचे जिनके द्वारा किसी के जानबूझ करके

१. सुरीली आवाज़। २. बात चीत का ढंग।

ضرورت نے شاعر کو خیالات کی دنیا میں کہاں کہاں دوڑایا ہے اسی خیالی دوڑ کو اس شعر میں اس طرح پیش کیا گیا ہے

درس خرام تا کے خمیازۂ روانی
اس موجِ مے کو غافل پیمانہ نقش پا ہے

ٹہلنے کی حالت میں محبوب کا انگڑائی لینا اس انگڑائی اور ٹہلنے میں اس کی جوانی جن نزاکتوں اور لطافتوں کا اظہار کر رہی ہے اس میں شاعر ٹہلنے کی اداؤں کے ایک معیاری درس کی صلاحیت محسوس کر رہا ہے اور وہ ٹہلنے کی حالت میں آنے والی انگڑائی کو شراب کی لہر سے تعبیر کر رہا ہے اس شراب کو کس پیمانے سے پیا جا سکتا ہے؟ اس سلسلے میں شاعر کہتا ہے محبوب کے ٹہلنے کے باعث زمین پر اس کے قدموں سے جو نقش بن گئے ہیں ان میں سے ہر نقش اس شراب کے لیے ایک پیمانہ کا کام دیتا ہے اس قسم کے مضامین کے متعلق خود غالب نے بھی یہ کہا ہے "پندرہ سال کی عمر سے لے کر پچیس سال کی عمر تک خیالی مضامین لکھا گیا" اس خیالی دنیا سے باہر نکلنے کے لیے ظہوری وغیرہ کے ساتھ میر نے بھی غالب کی کافی مدد کی ہے۔

میر نے اپنی غزل کے سلسلے میں اپنے ذاتی تجربات پر روشنی ڈالتے ہوئے کہا ہے

جب زمزمہ کرتی ہے صدا پھبتی ہے دل میں
بلبل سے کوئی سیکھ لے انداز سخن کا

میر نے بلبل سے جو درد آشنا لہجے کی تعلیم حاصل کی اس سے یہ ظاہر ہوتا ہے کہ اس کی غزل روایت پرستی کے سہارے سے غزل نہیں ہوئی اس کے ذاتی تجربات سے غزل ہوئی تھی لہذا میر کی شاعری اپنے بعد میں آنے والے فن کاروں کو ذاتی تجربات کی دعوت دیتی ہے غالب بھی بیدل کی تقلید میں رہتے ہوئے جب تک خیالی مضامین لکھا گیا تب تک وہ غالب نہیں ہو سکا مگر جب اس نے میر سے اثر انداز ہو کر زبان کے سلسلے میں تجربات کرنے شروع کیے ہیں تو سادہ الفاظ میں بھی اس نے بڑے معنی پیدا کیے ہیں۔ غالب کی غزل کی معنی آفرین سادگی میں اور اس بوجھل خیالی شاعری کی زبان میں جو بیدل کی تقلید کی دین تھی بڑا فرق ہوگیا ہے مثلاً

अन्जान बनने के ढंग को प्रकट किया गया है, वह एक बड़े मानसिक क्रान्ति का पता देते हैं। 'ग़ालिब' के सम्बन्ध में किसी का यह कहना कि ग़ालिब कौन है? ग़ालिब इसका उत्तर देने हेतु एक अछूते ढंग की खोज में है अतः इस विषय में उसने काल्पनिक मार्गों पर इस प्रकार प्रकाश डाला है। क्या वह स्वतः यह कहे कि 'ग़ालिब' देहली का एक अमीरज़ादा[1] है? उसे किस अन्दाज़ से कहना चाहिए कि वह 'उर्दू' और फ़ारसी का एक बहुत बड़ा कवि है? वह किस प्रकार कहे कि वह एक अच्छा मित्र है एक सभ्य मनुष्य है? वह अपने व्यक्तित्व का परिचय देने हेतु इन वास्तविकताओं को समक्ष रखने की आकांक्षा अवश्य करता है, परन्तु वर्णन में ऐसे सौंदर्य के साथ जो उसके कौशल्य के प्रत्येक अंग को दर्शा दे। वह इस सम्बन्ध में जिन शब्दों को चाहता है वह दुर्लभ हैं। परन्तु शब्दों की यह दुर्लभता भी अर्थ के काल्पनिक विकास की अभिलाषी है। इस प्रकार 'ग़ालिब' एक प्रमुख मानसिक स्तर को सामने रखते हुए कहता है:—

यारब[2] वह न समझे हैं न समझेंगे मेरी बात,
दे और दिल उनको जो न दे मुझको ज़ुबां और

इस विषय में प्रमाणिकता हेतु विभिन्न युक्तियों का प्रयोग करने के बाद भी जब वह अपने किसी प्रतिद्वन्दी को अपनी बात नहीं समझा सका और शब्दों के निर्माण के सम्बन्ध में पूर्णतया निराश हो गया तो इस निराशावादिता ने उसे प्रतिद्वन्दी के मन को परिवर्तित करने की प्रार्थना की ओर प्रेरित किया। इस प्रार्थना में जो उसने मस्तिष्क को जाग्रत करने की योग्यता उत्पन्न की वह कुछ ऐसे सांस्कृतिक संकेतों से सम्पन्न है जिनसे मानसिक आभावों का प्रदर्शन होता है। परन्तु इनमें कटुता का कोई स्थान नहीं है। भाषा की सरलता में जीवन के उन मुख्य अनुभवों का समावेश है। यह जीवन के मुख्य अनुभव सांस्कृतिक सौंदर्य को होठों की मुस्कान से उत्पन्न होने वाली रोशनी से प्रदर्शित करते हैं।

'ग़ालिब' के युग की वह भोग विलासिता, जिसने अनुभव शक्ति का ह्रास कर दिया था और जो पेन्शनों वसीक़ों और जागीरों की छाया में पल बढ़ रही थी उस की छाप 'ग़ालिब' अपने ढंग से इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि विवेक और योग्यता का सम्मिश्रण उनकी कलात्मक भावनाओं को स्पष्ट कर देता है:—

बात पर वाँ[3] ज़ुबान कटती है,
वह कहें और सुना करे कोई।

१. धनी व्यक्ति का बेटा। २. कवि भगवान् को सम्बोधित करते हुए कह रहा है। ३. वहाँ।

پوچھتے ہیں وہ کہ غالب کون ہے
کوئی بتلاؤ کہ ہم بتلائیں کیا

عوامی زبان کے یہ لفظی سانچے جن کے ذریعے سے کسی کے تجاہل عارفانہ کو ظاہر کیا گیا ہے وہ ایک بڑے ذہنی انقلاب کا پتہ دیتے ہیں۔ غالب کے متعلق کسی کا یہ کہنا کہ غالب کون ہے؟ غالب اس کا جواب دینے کے ایک اچھوتے انداز کا متلاشی ہے لہذا اس سلسلے میں اس نے تخئیل کی راہوں پر اس طرح روشنی ڈالی ہے۔ کیا وہ اپنی زبان سے یہ کہے کہ غالب دہلی کا ایک امیر زادہ ہے؟ اسے کس انداز سے کہنا چاہیے کہ وہ اردو اور فارسی کا ایک بڑا شاعر ہے؟ وہ یہ کس طرح کہے کہ وہ ایک اچھا دوست اور ایک متمدن انسان ہے؟ وہ اپنی شخصیت کے تعارف کے سلسلے میں ان حقیقتوں کو سامنے لانے کی آرزو ضرور رکھتا ہے مگر بیان کی ایسی رعنائیوں کے ساتھ جو اس کی ہنرمندی کے ہر گوشے کو نمایاں کر دیں وہ اس سلسلے میں جو الفاظ چاہتا ہے وہ الفاظ ناپید ہیں مگر الفاظ کی یہ ناپیدی بھی معنی کی تخئیل نواز وسعت کو سامنے لا رہی ہے اسی طرح غالب ایک خاص ذہنی سطح کو سامنے رکھتے ہوئے کہتا ہے

یارب وہ نہ سمجھے ہیں نہ سمجھیں گے مری بات
دے اور دل ان کو جو نہ دے مجھ کو زباں اور

استدلال کے مختلف حربوں کا استعمال کرنے کے بعد بھی جب وہ اپنے کسی حریف کو اپنی بات نہیں سمجھا سکا اور لفظ سازی کے سلسلے میں پوری طرح مایوس ہو گیا تو اس مایوسی نے اسے اس حریف کے دل کے بدلنے کی دعا کی طرف مائل کیا ہے اس دعا میں جو اس نے ذہن کو گدگدانے کی صلاحیت پیدا کی ہے وہ کچھ ایسے تہذیبی اشارات لیے ہوئے ہے جن سے ذہنی کیفیوں کی نمائش ہوتی ہے مگر اس میں تلخیوں کی گنجائش نہیں ہے زبان کی یہ سادگی ان اہم تجربات زندگی کو اپنے اندر جذب کیے ہوئے ہے جو تہذیبی رعنائیوں کو زیر لب مسکراہٹ کی روشنی سے نمایاں کرتے ہیں

غالب کے دور کی وہ امیرانہ بے حسی جو پینشنوں، وظیفوں اور جاگیروں کے سایہ میں پرورش پا رہی تھی اس کی عکاسی کے سلسلے میں غالب نے جو لب و لہجہ اپنایا ہے اس میں عقل و شائستگی کی آمیزش اس کے شاعرانہ احساسات کو اس طرح نمایاں کرتی ہے

بات پر واں زبان کٹتی ہے ؛ وہ کہیں اور سنا کرے کوئی

वह मानसिक स्तर जो शक्ति के नशे में साधारण मनुष्य को अपनी अभिलाषा व्यक्त करने की आज्ञा ही न देता था और जो अपनी त्रुटियों को आँकने का अवसर प्रदान करने में अयोग्य था, अपने मानसिक पतन का द्योतक था। 'ग़ालिब' के यहाँ मुग़ल संस्कृत के इस मानसिक पतन की भावना काफ़ी महत्त्व रखती है। परन्तु 'मीर' ने इसको बड़ी तीव्रता से अनुभव किया है।

'वेदना अभिव्यक्ति'

> **ज़ेरे[1] फ़लक भला तू रोये है आपको 'मीर'**
> **किस किस तरह का आलम यां[2] ख़ाक हो गया है ॥**

'मीर' की यह वेदना व्यक्तिगत वेदना नहीं बल्कि उन्हें पूरी सभ्यता के नाश होने का दुःख है इस वेदना को उन्होंने इस पंक्ति में स्पष्ट किया है "किस-किस तरह का आलम यां ख़ाक हो गया है।" एक व्यक्ति या एक परिवार के हताश होने तथा उनकी असफलताएँ, यह भावना 'मीर' को एक बड़े मानसिक पतन से अवगत कराती है तथा इतिहास के निर्माण में अभावां का पता देती है। इन अभावों को देखकर 'मीर' मे जिस प्रकार की वेदना स्थिति उत्पन्न होती थी वह शेर के साँचे में ढलकर पतन के कारणों पर विचार करने की माँग करती थी। इस माँग के महत्त्व को मीर के युग का मानसिक पतन समझने में अयोग्य रहा। परन्तु 'मीर' अपनी भावनाओं से दूसरों की भावनाओं को जागृत करने का कर्त्तव्य पूरा करता रहा। 'मीर' की वेदना जिस मानसिक पतन की उत्पत्ति थी उसमें महान क्रान्तिकारी परिवर्तनों से उसके दर्द का इलाज हो सकता था परन्तु ऐसा होना असम्भव था। इसीलिए इसको कहना पड़ा:—

> **पहुँचा न आह दर्द को मेरे कोई तबीब[3],**
> **यारब अजब तरह का कुछ आज़ार[4] है मुझे।**

'मीर' की यह वेदना सामाजिक एव राजनीतिक कुरीतियों के फलस्वरूप उत्पन्न हुई थी। इसकां समझने का अर्थ था पतन के कारणों का गहरा अध्ययन करके जनता । को इससे छुटकारा दिलाने की चेष्टा करना। मानसिक तृप्ति का ऐसा स्तर रखने वाला चिकित्सक, 'मीर' के युग में अप्राप्त था। इस कारण एक उच्चकोटि के कलाकार की माँग का प्रभावहीन एवं अर्थहीन हो जाना, 'मीर' की इस निराशा का आधार बना, "यारब अजब तरह का आज़ार है मुझे।" निराशा

१. आसमान के नीचे। २. यहाँ। ३. चिकित्सक:—यहाँ पर कवि का अभिप्राय है कि उसको कोई भी ऐसा न मिला जो उसकी पीड़ा को उसके दुःख समझ सके। ४. रोग।

وہ ذہنی سطح جو اقتدار کے نشے میں عام آدمی کو زبان کھولنے کی اجازت ہی نہیں دیتی تھی اور اس کو اپنی کمیوں کو پرتانے اور سمجھنے کے لیے آمادہ کرنا بہت مشکل تھا اس طرح وہ اپنے ذہنی زوال کو نمایاں کرتی تھی غالب کے یہاں مغل تمدن کے اس ذہنی زوال کا احساس کافی اہمیت رکھتا ہے مگر میر نے اس کو بڑی شدت کے ساتھ محسوس کیا ہے

اظہارِ درد

زیر فلک بھلا تو روئے ہے آپ کو میر
کس کس طرح کا عالم یاں خاک ہو گیا ہے

میر کا یہ غم انفرادی غم نہیں ہے پورے تمدن کی بربادی کا غم ہے اس غم کا اظہار اس مصرع سے پوری طرح ظاہر ہوتا ہے "کس کس طرح کا عالم یاں خاک ہو گیا ہے" ایک فرد یا ایک خاندان کی محرومیوں اور ناکامیوں کا احساس میر کو ایک بڑے ذہنی زوال کو روشنی میں لانے والی تاریخ سازی کی کمیوں تک پہنچا دیتا ہے ان کمیوں کو دیکھ کر میر پر جو درد کی کیفیت طاری ہوتی تھی وہ شعر کے سانچے میں ڈھل کر اسباب زوال پر غور کرنے کا مطالبہ کرتی تھی اس مطالبے کی اہمیت کو میر کے دور کے ذہنی زوال نے پوری طرح سمجھنے نہیں دیا مگر میر اپنے احساسات سے دوسروں کے احساسات کو جگانے کا فرض برابر ادا کرتا رہا میر کا درد جس ذہنی زوال کی پیداوار تھا اس میں بڑی انقلابی تبدیلیوں کے ہونے سے اس کے درد کا علاج ہو سکتا تھا مگر ایسا ممکن نہیں تھا اسی لیے اس کو کہنا پڑا ہے۔

پہونچا نہ آہ درد کو میرے کوئی طبیب
یارب عجب طرح کا کچھ آزار ہے مجھے

میر کا یہ درد سماجی و سیاسی شعور کی جن کمیوں سے پیدا ہوا تھا ان کو سمجھنے کے معنی تھے اسباب زوال کو دل سوزی کے ساتھ پڑھ کر عوام کو ان سے چھٹکارا دلانے کی کوشش کرنا ذہنی آسودگی کا ایسا معیار رکھنے والے طبیب میر کے دور میں ناپید تھے لہذا ایک بڑے فن کارانہ مطالبے کا بے اثر اور بے معنی ہو کر رہ جانا میر کی اس مایوسی کا سبب بنا "یارب عجب طرح کا آزار ہے مجھے" مایوسی کا یہ نقشہ مسائل زندگی کے جن پیچوں کے باعث بنا

का यह चित्र, जीवन की जिन गूढ़ समस्याओं का कारण बना, उसके समाधान का अभाव, 'मीर' के ऐतिहासिक वातावरण में अनुभव किया जा रहा था। 'मीर' को अतृप्त जीवन ने ही व्यग्र नहीं किया। उसकी भावनाएं जिन रचनात्मक नियमों के स्तर से अवगत थीं, इस प्रकार के स्तर के गिर जाने से भी 'मीर' की सुन्दर भावनाएं व्यथित हुईं, उससे भी 'मीर' को धक्का पहुँचा और वह अत्याधिक व्याकुल हुआ:—

दिल्ली के न थे कूचे[1] औराक़े[2] मुसव्विर[3] थे,
जो शक्ल नज़र आई तस्वीर नज़र आई।

अर्थात 'मीर' की दृष्टि में रचना एवं निर्माण का वह सौंदर्य है जो दिल्ली की गलियों को इस प्रकार की मान्यता देता है जिसको निपुण चित्रकार इस तरह प्रस्तुत करता है कि उसकी अभिरुचि का सौंदर्य मानसिक सुन्दरताओं का सन्देश बन जाता है। जिन रचनात्मक नियमों ने 'मीर' के अन्तःकरण को प्रभावित किया था वे नियम—समाकालीन पतनग्रस्त घटनाओं के कारण उनकी स्थिति में परिवर्तन लाये थे, उसको 'मीर' ने वेदना की दृष्टि से देखा है। वह दिल्ली की राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं के रूप मे देखते हुए कहता है:—

हफ़्त[4] अकलीम हर गली है कहीं,
दिल्ली से भी दयार[5] होते हैं,

दिल्ली की वह राजनैतिक कन्द्रीयता जिसके कारण विभिन्न क्षेत्रों और विभन्न देशों के व्यक्ति इसके सांस्कृतिक चित्र में विभिन्न रंग भर रहे थे उससे 'मीर' की निगाहें इस प्रकार प्रभावित हो रही थीं कि वह दिल्ली की गलियों में विभिन्न संस्कृतियों का मेल देखता था वह मेल 'मीर' जैसे भावुक व्यक्ति के लिये, ऊँटों, घोड़ों और छकड़ों के मन्द गति वाले संसार में बड़ा महत्त्व रखता था। वह उसे एक लघु ससार से विशाल संसार में परिवर्तित कर देता था। 'मीर' की भवनाओं की यही महत्ता 'मीर' को अन्य कलाकारों से भिन्न बना देती है। वह जीवन की रँगारँगी से आनन्द प्राप्त करने की भी योग्यता रखता था परन्तु घटनाओं के चक्र ने उसकी वेदना को जागृत करके कहीं कारण के हल्के रंग का मिश्रण उसकी कला में किया है तो कहीं गहरा रंग दिया है। 'मीर' की शायरी की मुख्य विशेषता यह है कि उसकी भावनाओं ने उसे किसी एक दिशा में लुप्त नहीं होने दिया। 'मीर' के यहाँ वेदना का अधिक स्पष्ट होना उसके भावुक स्वभाव की देन थी जो अपने युग के

१. गलियाँ। २. पृष्ठ। ३. चित्रकार। ४. सात क्षेत्र अर्थात दुनिया। ५. देश, वतन।

ان کے لیے ناحق تدبیری کی میر کے تاریخی ماحول میں عام طور سے محسوس کی جا رہی تھی، میر کو زندگی کی ناآسودگی ہی نے بے چین نہیں کیا اس کا تاریخی شعور تخلیق و تعمیر کی روایات کے جس معیار سے آشنا تھا اس معیار کے گرنے سے میر کا ذوق جمال جو مجروح ہوا اس سے بھی میر کافی بے چین ہوا ہے

دلی کے نہ تھے کوچے اوراق مصور تھے
جو شکل نظر آئی تصویر نظر آئی

یعنی میر کے پیشِ نظر تعمیر و تخلیق کا وہ سلیقہ ہے جس نے دلی کے گلی کوچوں کو وہ معیار نفاست دیا تھا جس کو ایک کامیاب مصور اپنی تصویروں میں اس طرح پیشِ نظر رکھتا ہے کہ اس کا ذوق حسن ذہنی لذتوں کا ایک بڑا پیغام بن جاتا ہے، جن روایات تعمیر و تخلیق نے میر کے ذوق حسن کو متاثر کیا تھا میر کے دور کے حادثات زوال کے باعث ان کا جو نقشہ بدلا اس کو میر نے ایک تصویر درد بن کر دیکھا ہے۔ وہ دلی کو اس کی سیاسی و تہذیبی روایات کی روشنی میں دیکھتے ہوئے کہتا ہے

ہفت اقلیم ہر گلی ہے کہیں
دلی سے بھی دیار ہوتے ہیں

دلی کی وہ سیاسی مرکزیت جس کے باعث مختلف علاقوں اور مختلف ملکوں کے افراد اس کے تہذیبی نقشے میں جو مختلف رنگ بھر رہے تھے اس سے میر کی نگاہیں اس طرح متاثر ہو رہی تھیں کہ وہ دلی کی گلیوں میں جو مختلف تہذیبوں کا میل دیکھتا تھا وہ میل میر جیسے حساس انسان کے لیے اونٹوں، گھوڑوں اور چھکڑوں کی سست رفتار دنیا میں بڑی اہمیت رکھتا تھا یعنی وہ اسے ایک چھوٹی سی دنیا سے نکال کر ایک بڑی دنیا تک پہونچا دیتا تھا میر کے احساسات کی یہی اہمیت میر کو بہت سے فن کاروں سے الگ کرتی ہے وہ زندگی کی رنگا رنگی سے لذت یاب ہونے کی بھی بڑی صلاحیت رکھتا تھا مگر اسباب زوال نے اس کے درد کو ابھار کر کہیں درد کے ہلکے رنگ کی آمیزش اس کے فن میں کی ہے کہیں گہرا رنگ دے دیا ہے میر کی شاعری کی بڑی خصوصیت یہ ہے کہ اس کے احساس نے اسے کسی ایک سمت میں ہی گم نہیں ہونے دیا۔ میر کے یہاں درد کا زیادہ نمایاں ہونا اس کی اس حساس طبیعت کی دین تھی جو اپنے دور

ऐतिहासिक वातावरण का अधिकाधिक ज्ञान रखती थी। उसकी सुन्दर अभिरुचियाँ जीवन के कोमल और उत्तम संकेत लेकर सामने आती हैं परन्तु निरन्तर पतन-ग्रस्त घटनाएं उसकी मानसिक स्थिति को बदल देती हैं।

दिल्ली थी तिलिस्मात[1] कि हर जा गहे 'मीर',
इन आँखों से आह हमने क्या-क्या देखा।

पहली पंक्ति में दिल्ली की सजावट और बनावट के विषय में 'मीर' के मस्तिष्क में आनन्द का हल्का सा जो भाव उभरा है उसे दूसरी पंक्ति में पतन के कारण-वश जन्म लिये दर्द ने उभरने से रोक दिया। अर्थात भूतकाल में दिल्ली का जो चित्र था आज उसमें विशाल परिवर्तन हो गया है। इस परिवर्तन ने आभाव की भावना को उभार कर 'मीर' की मानसिक स्थिति को बदल दिया। 'मीर' की मानसिक दशा का इस प्रकार परिवर्तित होना 'मीर' की भावनाओं को प्रकट करता है। *इतनी अधिक पतन भावना, मुगल संस्कृति के 'मीर' से पूर्व के 'मीर के युग के* और 'मीर' के पश्चात के कलाकारों में, किसी में नहीं है।

एकान्त भावना—जिन भावनाओं तथा अनुभवों ने 'मीर' को 'मीर' बनाया था उन्होंने 'मीर' को अकेला भी कर दिया था अतः इस एकान्त भाव पर उसकी शायरी से जो रोशनी पड़ती है वह उसकी अयोग्यताओं से अधिक उसकी कलात्मक महानताओं को प्रदर्शित करती है यद्यपि 'मीर' का अपने विषय में स्वयं यह समर्थन है:—

सुहबत किसू से रखने का उसको न था दिमाग़,
था 'मीर' बेदिमाग़ को भी क्या मिला दिमाग़,।

'मीर' की वह भावनाएं और अनुभव जिन्होंने उसके काव्य को संकलित किया है उससे उसके बौद्धिक स्तर का ज्ञान होता है जिसके अन्तर्गत उसका व्यक्तित्व भी झलकता है अर्थात वह अपनी कमियों को अनुभव करने की भी योग्यता रखता था और वह स्वयं को बेदिमाग़[2] कहता था। अपनी बेदिमाग़ी का उसका यह समर्थन भी इस बात का प्रमाण नहीं है कि 'मीर' ने अपने व्यक्तित्व का पूर्ण ज्ञान रखते हुए स्वयं को बेदिमाग कहा है। 'मीर' की इस बेदिमाग़ी से जो प्रथक्कता का कल्पना संलग्न है, इस कल्पना के बीच पर्यवेक्षण, अनुभव, रुचि एवं विचारों के नियम के जो पर्दे पड़े हुए हैं उनको 'मीर' ने विभिन्न स्थानों पर विभिन्न तरीकों से उठाया है, अर्थात, यदि कोई उसके पास शिष्यत्व की आकांक्षा लेकर आया है तो

१. अदभुत बातों से पूर्ण। २. रुष्ट तबियत रखने वाला।

کے تاریکی ماحول سے زیادہ سے زیادہ آشنا ہونے کی صلاحیت رکھتی تھی ۔ اس کا ذوقِ حُسن زندگی کے نازک اور لطیف اشارات کو لے کر بھی اس کے سامنے آتا ہے مگر اسبابِ زوال اس کے ذہنی حالات کو بدل دیتے ہیں۔

دلّی تھی طلسمات کہ ہر جاگہ میؔر
ان آنکھوں سے آہ ہم نے کیا کیا دیکھا

پہلے مصرعے میں دلّی کی سجاوٹ اور آرایش کے سلسلے میں میؔر کے ذہن میں لذت کا جو ہلکا سا احساس ابھرا ہے اسے دوسرے مصرعے میں اسبابِ زوال کے دیے ہوئے درد نے ابھرنے سے روک دیا یعنی گزرے ہوئے زمانے میں دہلی کا جو نقشہ تھا آج اس میں بڑی تبدیلی ہو گئی ہے اس تبدیلی نے کمی کے احساس کو ابھار کر میؔر کے ذہن کا نقشہ بدل دیا میؔر کے ذہن کے نقشے کا اس طرح بدلنا میؔر کے احساسات کو ظاہر کرتا ہے اس درجہ احساس زوال مغل تمدن کے میؔر سے قبل کے، میؔر کے دور کے اور میؔر کے بعد کے فن کاروں میں کسی میں نہیں ہے ۔

احساس تنہائیٔ ۔ جن احساسات و تجربات نے میؔر کو میؔر بنایا تھا انھوں نے میؔر کو اکیلا بھی کر دیا تھا لہذا اس اکیلے پن پر اس کی شاعری سے جو روشنی پڑتی ہے وہ اس کی کمیوں سے زیادہ اس کی فن کارانہ عظمت کو نمایاں کرتی ہے حالاں کہ میؔر اپنے متعلق خود یہ اعتراف کرتا ہے ۔

صحبت کسو سے رکھنے کا اس کو نہ تھا دماغ
تھا میؔر بے دماغ کو بھی کیا ملا دماغ

میؔر کے وہ احساسات و تجربات جنھوں نے اس کی شاعری کا نقشہ مرتب کیا ہے ان سے اس کے فکری معیار کا اظہار ہوتا ہے جس کی زد میں اس کی شخصیت بھی آجاتی ہے یعنی وہ اپنی کمیوں کو بھی محسوس کرنے کی صلاحیت رکھتا تھا اور وہ خود کو بے دماغ کہتا تھا اپنی بے دماغی کا اس کا یہ اعتراف بھی یہ ثابت نہیں کر سکتا ہے کہ میؔر نے اپنی شخصیت کا پورا تجزیہ کرکے اپنے کو بے دماغ کہا ہے، میؔر کی اس بے دماغی سے جو علاحدگی کا تصور وابستہ ہے اس تصور کے پیچ میں مشاہدات و تجربات مذاق اور سوچنے کے طریقوں کے جو پردے پڑے ہوئے ہیں ان کو میؔر نے مختلف مقامات پر مختلف

उससे स्पष्ट शब्दों में कह दिया है कि आपकी रुचि काव्य के लिए उपयुक्त नहीं। 'मीर' की इस राय में अनुभवों, निरीक्षणों, भाषा और इसका प्रयोग तथा नये प्रयोगों का एक गुप्त विस्तार है इनको वह व्यक्ति नहीं समझ सकता था जो स्वभाव की समानता का आश्रय लेकर, शायर बनने की आकांक्षा के साथ 'मीर' के पास पहुँचा था। इसके अतिरिक्त वह एक उच्चकोटि के कलाकार के बौद्धिक विकास का जिससे उसकी चेतना पर दबाव पड़ता था, उससे उसका मानसिक स्वास्थ्य हर समय इस स्थिति में रहना कठिन था कि उससे प्रायः लोग संतुष्ट हो सकें और वह छोटे-छोटे प्रश्नों का पूर्णरूप से उत्तर देने में अपनी शक्ति का ह्रास कर बैठे। इस विषय में उसकी बौद्धिक विवशताओं का ज्ञान आवश्यक है। इस तथ्य पर वह स्वयं भी इस प्रकार रोशनी डालता है:—

मिलने वालो फिर मिलिएगा है वह आलमेदीगर[1] में
'मीर' फ़क़ीर को शुक्र है यानी मस्ती का आलम है अब,

प्रथक्कता और एकान्त की यह कल्पना जिसकी 'मीर' नशे से उपमा दे रहा है वह 'मीर' की उस मानसिक तल्लीनता को प्रकाश में ला रही है जिसके द्वारा 'मीर' के कलात्मक व्यक्तित्व को निखरने और सँवरने का अवसर मिला था। यह वह परिस्थितियाँ है जो प्रायः एकान्त और प्रथक्कता की ओर उन्मुख करती है। जहाँ बड़े काम होते हैं वहाँ बड़े अवकाश की खोज भी रहती है। महान प्रसिद्ध व्यक्तित्व में भी कुछ कमियाँ होती हैं मगर इन कमियों को अधिकतर लोग अपने हितों के दर्पण मे देखकर उनके सम्बन्ध में फ़ैसले सुना देते हैं। परन्तु तटस्थता के साथ जब इन फ़ैसलों को देखा और समझा जाता है तो इनमें कुछ अभावों का अनुभव होता है। इसी प्रकार के फ़ैसलों को सामने रखते हुए 'मीर' को अपने व्यक्तित्व को समझाने के सम्बन्ध में कहना पड़ा था:—

तेरी चाल टेढ़ी, तेरी बात रूखी[2]
तुझे 'मीर' समझा है याँ कम किसी ने।

उपज और परख से सुसज्जित वह मानसिक कार्य जो वास्तविकताओं को प्रदर्शित करके स्वस्थ कला के सृजन हेतु कर्तव्य पूरा करता है 'मीर' की आत्म-रचनात्मकता ने उसमें कर्तव्यपरायणता की प्रबल कुशलता पैदा कर दी थी। अतः कल्पना और रचना के मध्य वाह्य आडम्बरों और समय की अनुकूलता में भेद करने वाली नैतिक परम्परा का अनुसरण करना 'मीर' की शक्ति से परे

१. दूसरी दुनिया में। २. नशा, विस्मृति। २. शुष्क, नीरस।

طریقوں سے اٹھایا ہے یعنی اگر کوئی اس کے پاس شاگردی کی آرزو لے کر آیا ہے تو اس سے صاف الفاظ میں کہہ دیا ہے کہ آپ کا ذہن شاعری سے مناسبت نہیں رکھتا ہے۔ میرؔ کی اس رائے میں تجربات و شاہدات، زبان اور اس کے استعمال کی روایات اور نئے تجربات کی ایک بڑی تفصیل جو چھپی ہوئی ہے اس کو وہ شخص نہیں سمجھ سکتا تھا جو طبیعت کی موزونیت کے سہارے پر شاعر بننے کی آرزو لے کر میرؔ کے پاس پہونچا تھا۔ اس کے علاوہ ایک بڑے فن کار کے فکری پھیلاؤ کا جو اس کے ذہن پر دباؤ پڑتا تھا اس سے اس کی ذہنی صحت کا ہر وقت اس کیفیت میں رہنا مشکل تھا کہ اس سے عام طور سے لوگ مطمئن ہو سکیں اور وہ چھوٹے چھوٹے سوالات کے پورے جوابات دینے میں اپنی قوت کو ضائع کرنے کے لیے آمادہ ہو جائے اس سلسلے میں اس کی فکری مجبوریوں کا دیکھنا ضروری ہے اس حقیقت پر وہ خود بھی اس طرح روشنی ڈالتا ہے۔

ملنے والو، پھر ملیے گا ہے وہ عالم دیگر میں
میرؔ فقیر کو سکر ہے یعنی مستی کا عالم ہے اب

علاحدگی اور تنہائی کے اس تصور کو جس کو میرؔ نشے سے تعبیر کر رہا ہے وہ میرؔ کی اس ذہنی مصروفیت کو روشنی میں لا رہا ہے جس کے ذریعے سے میرؔ کی فن کارانہ شخصیت کو نکھرنے اور سنورنے کا موقع ملا تھا یہ وہ حالات ہیں جو تنہائی اور علاحدگی کی طرف عام طور سے لوگوں کو مائل کرتے ہیں، جہاں بڑے کام ہوتے ہیں وہاں بڑی فرصت کی تلاش بھی ہوتی ہے۔ بڑی مشہور شخصیتوں میں کمیاں بھی ہوتی ہیں مگر ان کمیوں کو زیادہ تر لوگ اپنے اغراض کے آئینہ میں دیکھ کر ان کے متعلق کچھ فیصلے سنا دیتے ہیں مگر غیر جانب دارانہ احتیاط کے ساتھ جب ان فیصلوں کو دیکھا اور سمجھا جاتا ہے تو ان فیصلوں کی بہت سی کمیاں سمجھ میں آتی ہیں اسی قسم کے فیصلوں کو سامنے رکھتے ہوئے میرؔ کو اپنی شخصیت کے سمجھانے کے سلسلے میں کہنا پڑا تھا

تری چال ٹیڑھی، تری بات انوکھی
تجھے میرؔ سمجھا ہے یاں کم کسو نے

انچ اور پرکھ کا سجایا ہوا وہ ذہنی عمل جو حقیقتوں کو نمایاں کر کے صحت مند مذاق فن کی پیدائش کا فریضہ ادا کرتا ہے میرؔ کی خودگری نے اس میں اس فریضے کی ادائیگی کی زبردست صلاحیت پیدا کر دی تھی لہذا لفظ و عمل کے بیچ میں ظاہرداریوں اور وقتی مصلحتوں کا بڑا فرق رکھنے والی اخلاقی

था। 'मीर' ने अपने व्यक्तित्व के निर्माण में बड़ा अभ्यास किया था। इस अभ्यास ने उसे जिस प्रकार की दृढ़ न्यायप्रियता प्रदान की वह स्वस्थ प्रवृत्ति की दृष्टि से उसकी कमी न थी, बल्कि विशेषता थी। जिस पतन ग्रस्त सभ्यता में व्यक्तित्व की इस प्रकार की दृढ़ता दुर्लभ थी उसको 'मीर' के चरित्र ने प्रदर्शित किया वह 'मीर' के एकान्त का कारण थी।

रुचि दीक्षा—'मीर' की दृढ़ न्यायप्रियता के ज्ञानात्मक, साहित्यक और नैतिक अंगों ने जिस प्रकार के लक्षण प्रस्तुत किए उनसे 'मीर' की भावी पीढ़ियाँ पूर्ण रूप से प्रभावित हुई हैं। रुचि दीक्षा का जहाँ तक सम्बन्ध है मीर ने इसमें इतना अधिक अभ्यास किया था कि उसने उसे एक निपुण प्रशिक्षक बना दिया था अत: उसने कहा था:—

किस किस तरह से 'मीर' ने काटा है उम्र[1] को,
अब आख़िर[2] आख़िर इन ने है यह रेखता कहा।

वह स्वस्थ रुचि जो अनुभवों व पर्यवेक्षणों से पूर्ण रूप से सुसज्जित होती है उसके लिए लगन और अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है अतः वास्तविकता को दृष्टि में रखते हुए 'मीर' ने कहा है "इस सिलसिले में कोई मुझसे यह पूछे कि मैंने अपनी उम्र किस तरह गुज़ारी है तब मैं इस आख़िर उम्र में अपने 'रेखता' लिखने कि रुचि इस प्रकार पूरी कर सका हूँ जिसको प्राय: लोग अच्छी दृष्टि से देखते हैं।

यहाँ पर 'मीर' अपनी आत्मरचनात्मकता को प्रकाश में लाते हुए यह स्पष्ट कर रहा है कि जिन लोगों में आत्मरचनात्मकता की योग्यता नहीं, वह अच्छे कलाकार नहीं बन सकते। 'मीर' की कला अनुभवों और निरीक्षणों की महत्ता पर बल देती है इन्ही से उसके आत्मविश्वास का जन्म होता है जो उसकी स्वस्थ रुचि का प्रमाण है।

'पैदा कहाँ हैं ऐसे परागन्दह[3] तबा लोग—
अफ़सोस तुमको 'मीर' से सुहबत[4] नहीं रही।

'मीर' अपने लहजे की कोमल रचना द्वारा अपने मानसिक विकास तथा आत्मविश्वास को रोशनी में ला रहा है और यह अनुभव करा रहा है कि आत्म-रचनात्मकता तथा आत्मज्ञान, जो व्यक्तित्व के निर्माण की शिक्षा देते हैं, उस

१. आयु, २. अन्ततोगत्वा, सबसे अन्तिम। ३. रुष्ट स्वभाव वाला। ४. संगत, साथ रहना।

روایات کی پیروی میر کے بس کی بات نہ تھی میر نے اپنی شخصیت کے بنانے کے سلسلے میں بڑا ریاض کیا تھا اس ریاض نے جو اسے حقیقت پسندی کی مضبوطی عطا کی وہ صحت ذوق کے اعتبار سے اس کی کی نہیں تھی خوبی تھی جس زوال خوردہ تمدن میں شخصیتوں کی اس درجہ مضبوطی ناپید تھی اس کا میر کے کردار کو نمایاں کرنا بھی میر کی تنہائی کا سبب تھا

تربیت ذوق ۔ میر کی حقیقت شناس مضبوطی کے علمی ادبی اور اخلاقی پہلوؤں سے تربیت ذوق کے جو اشارات پیدا ہوئے ہیں ان سے میر کے بعد میں آنے والی نسلیں پوری طرح متاثر ہوئی ہیں تربیت ذوق کا جہاں تک تعلق ہے میر نے اس سلسلے میں اس درجہ ریاض کیا تھا کہ اس نے اسے ایک فنی علم بنا دیا تھا

کس کس طرح سے میر نے کاٹا ہے عمر کو
اب آخر آخر آن کے یہ ریختہ کہا

وہ صحت مند ذوق جو تجربات و مشاہدات سے پوری طرح آراستہ ہوتا ہے اس کے لیے بڑی محنت اور ریاض کی ضرورت ہوتی ہے لہذا اسی حقیقت کو پیش نظر رکھتے ہوئے میر نے یہ کہا ہے اس سلسلے میں کوئی مجھ سے دریافت کرے کہ میں نے اپنی عمر کس طرح گزاری ہے تب میں اس آخری عمر میں اپنے ریختہ لکھنے کے ذوق کی ایسی تکمیل کر سکا ہوں جس کو عام طور سے لوگ اچھی نظر سے دیکھتے ہیں یہاں میر اپنی خودگری کو روشنی میں لاتے ہوئے یہ ظاہر کر رہا ہے کہ جن لوگوں میں خودگری کا سلیقہ نہیں ہوتا وہ اچھے فن کار نہیں بن سکتے ہیں، میر کا فن تجربات و مشاہدات کی اہمیت پر زور دیتا ہے انھیں سے اس کی اس خود اعتمادی کی پیدائش ہوتی ہے جو اس کے ذوق کی صحت کو نمایاں کرتی ہے

پیدا کہاں ہیں ایسے پراگندہ طبع لوگ
افسوس تم کو میر سے صحبت نہیں رہی

میر اپنے لہجے کی اس نرم و نازک ساخت کے ذریعے سے اپنی ذہنی وسعت اور خود اعتمادی کو روشنی میں لا رہا ہے اور یہ محسوس کرا رہا ہے کہ خودگری خودگیری اور خود شناسی کے شخصیت ساز اشارات کی تعلیم کے اعتبار سے میر کی صحبت ایک فکری مکتب کی حیثیت رکھتی ہے میر کی صحبت کی اس حیثیت کے خلاف صحت مند ذوق کی طرف سے کوئی آواز نہیں اٹھائی

शिक्षा की दृष्टि से 'मीर' की संगत एक बौद्धिक संस्था का रूप लिये हुए हैं। 'मीर' की संगत के इस रूप के विरुद्ध कोई आवाज़ नहीं उठायी जा सकती।

मीर ने अपनी रुचि दीक्षा के सम्बंध में जिस प्रकार लगन और अभ्यास का परिचय दिया था उसके प्रभाव उसके कलात्मक जीवन में स्पष्ट हो रहे थे और उसके व्यक्तित्व में एक विशेष गति से आकर्षण पैदा हो रहा था उसमें पर्यवेक्षण करने के ढंग का भी बड़ा हाथ था। इसी वास्तविकता को उसने रचनात्मक अन्दाज़ में प्रस्तुत करते हुए कहा है:—

सरसरी[1] तुम जहान से गुज़रे,
वरना[2] हर जा, जहाने दीगर[3] था।

बौद्धिक रचना का 'मीर' का यह अन्दाज़, अनुभवों तथा निरीक्षणों से होने वाली बौद्धिक सुसज्जिता पर बल देते हुए, भावनाओं के जागृत करने के जिस सांस्कृतिक स्तर को दृष्टि में रखने की माँग कर रहा है वह 'मीर' के मानसिक स्वास्थ्य और रुचि दीक्षा के प्रभुत्व के महत्व को समझने में सहायक है। उसके अभावों तथा कटुता भाव के विलक्षणों द्वारा ही, उसके व्यक्तित्व का अध्ययन करने वालों के अपूर्ण भावों से प्रभावित होते हुए, अपनी स्वस्थ रुचि के विस्तार का ज्ञान करने और उससे उचित अर्थ में आनन्दित होने के लिये विचार करने की आवश्यकता पर बल देते हुए कहता है:—

'लुत्फ़'[4] मुझ में भी हैं हज़ारों 'मीर',
'दीदनी'[5] हूँ जो सोच कर देखो।

किसी महान और जटिल व्यक्तित्व से सही तौर से आनन्दित होना उस समय तक सम्भव नहीं जब तक उसके स्वभाव के विभिन्न अंगों का अध्ययन करने और समझने की आवश्यकता का भाव जागृत न हो। कला की रुचि को आगे बढ़ाने के सम्बन्ध में इस आवश्यकता के महत्व को समझने के लिये स्वभावों को उन्मुख करना रुचि दीक्षा का ही एक अन्दाज है।

स्वस्थ मानसिक परम्परा—भावनाओं की जिस जागरूकता से श्रेष्ठ अनुभव पर्यवेक्षण तथा मानसिक सहयोग रचनात्मक तथा निर्माणकारी ढंगों से जीवन के चित्र को सजाने और सँवारने का ऐतिहासिक कर्तव्य पूरा करते हैं 'मीर' के पास भावनाओं की वह ही जागरूकता थी, मगर इस जागरूकता को अत्याचार,

१. थोड़ा बहुत, यहाँ पर इससे तात्पर्य कम समय से है। २. अपितु। ३. दूसरी दुनिया, दूसरी स्थिति। ४. आनन्द, यहाँ पर लुत्फ़ से तात्पर्य विशेषताओं से है। ५. देखने योग्य।

جاسکتی ہے

میرؔ نے اپنی تربیتِ ذوق کے سلسلے میں جو سر کھپایا تھا اس کے اثرات اس کی فن کارانہ زندگی پر جو نمایاں ہو رہے تھے اور اس کی شخصیت میں جو ایک خاص رفتار سے کشش پیدا ہو رہی تھی اس میں مشاہدات کے سلیقے کا بڑا دخل تھا لہذا اسی حقیقت کو اس نے اپنے ذہن ساز اور ذہن نواز لہجے میں پیش کرتے ہوئے کہا ہے

سرسری تم جہان سے گزرے
ورنہ ہر جا جہان دیگر تھا

ذہن سازی اور ذہن نوازی کا میرؔ کا یہ انداز مشاہدات و تجربات کے ذریعے سے ہونے والی ذہنی آرائش پر زور دیتے ہوئے احساسات کے جگانے کے جس تہذیبی معیار کو پیش نظر رکھنے کا مطالبہ کر رہا ہے وہ میرؔ کی ذہنی صحت اور اس کی تربیت ذوق کے ملکہ کی اہمیت کو سمجھنے میں مدد دیتا ہے اس کی کم آمیزی اور احساس درد کی علامتوں کے ذریعے سے ہی اس کی شخصیت کا مطالعہ کرنے والوں کے ادھورے اندازوں سے متاثر ہوتے ہوئے اپنے صحت مند ذوق کی وسعتوں کو سمجھنے اور اس سے صحیح معنوں میں لطف اندوز ہونے کے لیے غور و فکر کی ضرورت پر زور دیتے ہوئے کہتا ہے

لطف مجھ میں بھی ہیں ہزاروں میرؔ
دیدنی ہوں جو سوچ کر دیکھو

کسی بڑی اور پیچیدہ شخصیت سے صحیح معنوں میں لطف اندوز ہونا اس وقت تک ممکن نہیں ہوتا جب تک اس کے ذوق جمال کے مختلف گوشوں کو غور سے دیکھنے اور سمجھنے کی ضرورت کا احساس بیدار نہیں ہوتا ذوق ہنر کو آگے بڑھانے کے سلسلے میں اس ضرورت کی اہمیت کو سمجھنے کے لیے ذہنوں کو مائل کرنا تربیت ذوق کا ہی ایک انداز ہے

صحت مند ذہنی روایات۔ احساسات کی جس بیداری سے شاندار تجربات و مشاہدات اور صحت مند ذہنی تعاون تعمیری اور تخلیقی شاہکاروں سے زندگی کے نقشے کو سجانے اور سنوارنے کا تاریخی فریضہ ادا کرتے ہیں میرؔ کے پاس احساسات کی وہ بیداری تھی مگر اس بیداری کو ظلم و جہالت، غرور و نخوت، بے حسی و بے دردی، غصے اور نفرت کے بنائے ہوئے تخریبی نقشوں پر آنسو بہانے کے

अशिक्षा, अहंकार, अभिमान, ज्ञानहीनता, निर्मोहिता, क्रोध तथा घृणा द्वारा बनाये गये विनाशकारी चित्रों पर आँसू बहाने के साथ-साथ साज, प्यार दिल-सोज़ी [1] के मिश्रण से बनने वाले भाव से स्वस्थ मानसिक सहयोग के लिए 'मीर' ने जो काम किया है वह भी विशेष महत्त्व रखता है।

ख़ुदा[2] साज़ था 'आज़रे'[3] बुत तराश,
हम अपने तईं आदमी तो बनाएँ,

मीर के इस आदमी बनने की माँग में बौद्धिक स्वास्थ्य की, इतिहास निर्मित करने की वह आकांक्षाएँ छिपी हुई हैं जिनसे सहयोग के अनुपम चित्र निर्मित होते हैं मगर मीर के युग की वह राजनीतिक चेतना जो जीवन की समस्याओं के समाधान की दृष्टि से, विवश होते हुए अहंकार और अभिमान के भुलावों के कारण, व्यक्तित्व निर्माण में सहयोग सम्बन्धी आवश्यकताओं को समझने की योग्यता नहीं रखती थी, मीर इससे भी असन्तुष्ट थे। साथ ही धार्मिक अधिपत्य से भी 'मीर' अधिक व्याकुल थे। अतः सहयोग की इस भावना को सामने रख-कर उसने कहा था:—

राह[4] सबको है ख़ुदा से जान अगर पहुँचा है तू,
हों तरीक़े[5] मुख़्तलिफ़[6] कितने ही, मन्ज़िल[7] एक है।

परम्परात्मकता द्वारा उद्धृत, वह मानसिक अभाव जो मनुष्य को मनुष्य से पृथक करके मनुष्य के लिए कठिनाइयाँ उत्पन्न करता है उसको अनुभव करने की योग्यता 'मीर' में इतनी अधिक थी कि धार्मिक आधिपत्य की सीमाएँ भी उसे, उसके आस-पास के वातावरण को भुलाने की ओर उन्मुख नहीं कर सकती थीं। अतः इस विषय में उसने कहा है—

दैरो-हरम[8] से गुज़रे अब दिल है घर हमारा,
है ख़त्म इस आबले पर सैरो-सफ़र[9] हमारा,

अपने युग तथा उसके निकट के सांस्कृतिक लक्षणों के विभिन्न परम्परात्मक रंगों के बौद्धिक महत्त्व को समझते हुए 'मीर' का मानसिक भ्रमण परम्पराओं के मोह से आगे बढ़कर मनुष्य के प्रेम में परिवर्तित हो गया।

मानसिक विकास की यह वह परम्पराएँ हैं जिसमें एक स्वस्थ चेतन ने पतन

१. मन की व्यग्रता। २. भगवान की प्रतिमा बनाने वाला। ३. प्रसिद्ध बुत तराश। ४. सभी का सम्बंध उस अलौकिक शक्ति से है। ५. नियम। ६. भिन्न। ७. लक्ष्य। ८. पुण्य स्थान, तीर्थ स्थान, मन्दिर, मस्जिद। ९. भ्रमण।

ساتھ ساتھ آدمی ساز پیار اور دل سوزی کی آمیزش سے بننے والے لہجے سے صحت مند ذہنی تعاون کے لیے میرؔ نے جو کام کیا ہے وہ بھی کافی اہمیت رکھتا ہے

خدا ساز تھا آذر بت تراش
ہم اپنے تئیں آدمی تو بنائیں

میرؔ کے اس آدمی بننے کے مطالبہ میں ذہنی صحت کی وہ تاریخ ساز آرزوئیں چھپی ہوئی ہیں جن سے تعاون کے شاندار نقشے مرتب ہوتے ہیں مگر میرؔ کے دور کا وہ سیاسی شعور جو مسائل زندگی کے سلجھانے کے اعتبار سے بے دست و پا ہوتے ہوئے غرور و نخوت کے بھلاووں کے باعث تعاون کی آدمی ساز ضرورتوں کو سمجھنے کی صلاحیت نہیں رکھتا تھا میرؔ کو اس سے بھی شکوہ تھا اور مذہبی جمود نے بھی میرؔ کو کافی ستایا تھا لہذا تعاون کے اسی جذبے کو سامنے رکھتے ہوئے اس نے کہا تھا

راہ سب کو ہے خدا سے جان اگر پہنچا ہے تو
ہوں طریقے مختلف کتنے ہی منزل ایک ہے

روایت پرستی کی دی ہوئی وہ ذہنی تنگی جو آدمی کو آدمی سے الگ کرکے اس کے لیے دشواریوں کو پیدا کرتی ہے اس کو محسوس کرنے کی صلاحیت میرؔ میں اس درجہ تھی کہ دیر و حرم کی حد بندی بھی اسے اس کے گرد و پیش کی فضا کو بھلانے کی طرف مائل نہیں کرسکتی تھی لہذا اس سلسلے میں اس نے کہا ہے

دیر و حرم سے گزرے اب دل ہے گھر ہمارا
ہے ختم اس آبلے پر سیر و سفر ہمارا

اپنے دور اور اپنے گرد و پیش کے تہذیبی نقشے کے مختلف روایتی رنگوں کی عقلی اہمیت کو سمجھتے ہوئے میرؔ کا ذہنی سفر روایات کے پیار سے آگے بڑھ کر آدمی کے پیار پر ختم ہوگیا ذہنی کشادگی کی یہ وہ روایات ہیں جن میں ایک صحت مند ذہن نے زوال خوردہ تمدن میں رہتے ہوئے پیار و محبت کا عالمی رنگ بھرا ہے

پیار و محبت کے ان عالمی رجحانات کی نشو و نما کے لیے روایات کے سایہ میں پنپنے والی بیدردیوں سے میرؔ نے جو اختلاف کیا ہے وہ اختلاف اس کی دل سوزی کو اس طرح لیے ہوئے ہے کہ

ग्रस्त सभ्यता में निवास करते हुए स्नेह और प्रेम का लोकप्रिय रंग भरा है। लोकमान्य स्नेह और प्रेम की प्रवृत्ति की उत्पत्ति हेतु परम्परात्मक संरक्षण में विकसित होने वाली निर्मोहिताओं के विषय में "मीर" ने जो विरोध प्रस्तुत किया है वह विरोध उसकी 'दिलसोजी' पर आधारित है। उससे एक ओर अन्धविश्वासिता के विरुद्ध घृणा के चिह्न संगठित हो जाते हैं दूसरी ओर व्यक्तित्व निर्माण की महानता स्पष्ट होती है।

मत रंज[1] कर किसू[2] को कि अपने तो एतिक़ाद[3],
दिल ढाए कर जो काबा बनाया तो क्या हुआ,

मीर के धर्म और प्रेम के अन्तर्गत वेदना का अनुभव वह एक विशेष गुण है जो मनुष्य को मनुष्य के निकट लाता है। उसके लिए 'मीर' अपने प्रमुख भाव में 'दरख़्वास्त' करता है:—

एक दरख़्वास्त[4] पास दिल को है,
नहीं रोज़ा नमाज़ कुछ दरकार।

जिस प्रकार के ऐतिहासिक वातावरण में 'मीर' ने अपने उच्चकोटि के कलात्मक मंच से, मानसिक क्रान्ति की जो आकाक्षाएं प्रस्तुत की हैं इनसे स्पष्ट ही होता है कि निर्मोहिता और ज्ञानहीनता के महान उपद्रव में अट्ठारहवीं शताब्दी के मानसिक पतन को दासता की सीमा तक पहुँचने से रोकने के लिये 'मीर' ने अपने भावों में वह आर्कषण उत्पन्न किया है, वह प्रयोग किए हैं जो उसके मानसिक स्वास्थ्य एवं सहयोग की भावना का अनुपम प्रतिनिधित्व करते हैं।

१. दुःख। २. किसी को। ३. विश्वास, भक्ति। ४. विनती, प्रार्थना, निवेदन दिल सोजी = मन की व्यग्रता।

اس سے ایک طرف بیدرد روایت پرستی سے نفرت کے خط و خال مرتب ہو جاتے ہیں تو دوسری طرف آدمی ساز درد کی اہمیت نمایاں ہوتی ہے

مت رنجہ کر کسو کو کہ اپنے تو اعتقاد
دل ڈھائے کر جو کعبہ بنایا تو کیا ہوا

میرؔ کے مذہب محبت کے نزدیک سب سے بڑی نیکی وہ احساس درد ہے جو آدمی کو آدمی کے قریب پہونچاتا ہے اس کے لیے میرؔ اپنے اک خاص انداز میں درخواستیں کرتا ہے

ایک درخواست پاس دل کی ہے
نہیں روزہ نماز کچھ درکار

جس تاریخی ماحول میں میرؔ نے اپنے بلند فن کارانہ مقام سے ذہنی انقلاب کی جو یہ آرزوئیں پیش کی ہیں ان سے ظاہر ہوتا ہے کہ بیدردی اور بے حسی کے بڑے ہنگامے میں اٹھارھویں صدی کے ذہنی زوال کو غلامی کی رسوائی تک پہونچنے سے روکنے کے لیے میرؔ نے اپنے لہجے میں کشش پیدا کرنے کے لیے جو تجربات کیے ہیں وہ اس کی ذہنی صحت اور جذبۂ تعاون کی شاندار نمایندگی کرتے ہیں

'मीर' का सूफ़ी काव्य—संक्षिप्त परिचय

रसूल अहमद

जिस प्रकार सदा से मनुष्य के सामने जीवन और जगत से सम्बन्धित ऐसी समस्याएँ आती रही हैं जो उसकी बेचैनी तथा अधीरता का कारण रही हैं, उसी प्रकार मनुष्य सदा से इस बात का प्रयत्न कर रहा है कि वह इन समस्याओं का कोई ऐसा समाधान खोजे जो उसकी इस बेचैनी को दूर कर सके तथा उसे शान्ति प्रदान कर सके। इसलिए विभिन्न जातियों और विभिन्न कालों में ऐसे समाधान सामने आए जिन्होंने सफलतापूर्वक मनुष्य को शान्ति प्रदान की। कहने की आवश्यकता नहीं कि जिन साधनों का सम्बन्ध जातियों और कालों के विशिष्ट स्तर के साथ था उनके लिए यह भी आवश्यक ही था कि उनकी एक विशिष्ट भाषा हो। इस लिए मनुष्य ने जीवन और जगत की समस्याओं का समाधान करने के लिए जो-जो प्रयत्न किए हैं उनकी एक विशिष्ट शैली तथा भाषा भी रही है।

उर्दू ग़ज़ल का अभी प्रारम्भ भी नहीं हुआ था कि समाज की रुचि सूफ़ी विचारधारा की ओर हो गई थी। अर्थात समाज ने विचार और व्यवहार के क्षेत्र में सूफ़ी विचारधारा को अपनी समस्याओं का समाधान स्वीकार कर लिया था। ऐसी दशा में जब उर्दू ग़ज़ल का प्रारम्भ हुआ तो इसको उन परिस्थिति से सामना हुआ जो सूफ़ी विचार धारा के विचार तथा व्यवहार पक्ष से सम्बन्धित था। इस प्रकार उर्दू के प्राचीन कवि वह चाहे दक्षिण के रहे हों चाहे उत्तर भारत के सूफ़ी विचार के वातावरण से सम्बन्धित रहे हैं।

कवियों में से कुछ तो किसी न किसी संत के शिष्य भी थे और अपनी मनोदशा को काव्य का रूप दे दिया करते थे। पर कुछ केवल फ़ारसी के अनुकरण में सूफ़ी काव्य की रचना करते थे। पर इसमें सन्देह नहीं कि चाहे जिस प्रकार का रहा हो उर्दू के प्राचीन कवियों का सम्बन्ध सूफ़ी विचार से रहा अवश्य है। हाँ, धीरे-धीरे यह स्थिति अवश्य हो गई कि कवियों का प्रत्यक्ष सम्बन्ध सूफ़ी संतों से कम होता

میرؔ کی صوفیانہ شاعری ـــــ مختصر تعارف

رسول احمد

ہمیشہ سے انسان کے سامنے حیات و کائنات سے متعلق ایسے مسائل آتے رہے ہیں جو اس کے لیے اضطراب کا باعث رہے ہیں انسان اس بات کی بھی ہمیشہ کوشش کرتا رہا ہے کہ وہ ان مسائل کی کوئی ایسی توجیہہ تلاش کرے جو اس کے اضطراب کو سکون سے بدل دے۔ چنانچہ مختلف اقوام اور زمانے میں حالات کے تحت فکر و عمل کی شکل میں ایسی توجیہات وجود میں آئیں جنھوں نے کامیابی کے ساتھ آدمی کو سکون بخشا۔ جن توجیہات کا تعلق قوم اور زمانے کی مخصوص سطح کے ساتھ تھا ان کے لیے ضروری تھا کہ ان کی ایک مخصوص زبان ہو۔ اسی لیے حیات و کائنات کے مسائل سے پیدا ہونے والے اضطراب کو دور کرنے کے لیے جو توجیہات انسان نے پیدا کی ہیں ان کی ایک مخصوص طرز ادا اور زبان بھی رہی ہے۔

اردو غزل پورے طور پر سنور بھی نہ سکی تھی کہ سماج نے تصوف کو فکری اور عملی لحاظ سے اپنے درد کی دوا تسلیم کرلی تھی۔ اور جب اردو غزل کو اس ماحول سے واسطہ پڑا جو تصوف کے قال و حال سے متعلق تھا۔ تو اردو کے قدیم شعرا، خواہ وہ دکن کے ہوں یا شمالی ہند کے تصوف کی طرف متوجہ ہوئے ان میں اکثر کسی نہ کسی بزرگ کے مرید تھے اور اپنے قلبی واردات و کیفیات کو قال کی شکل میں پیش کرتے تھے۔ اکثر محض فارسی شاعری کی تقلید میں متصوفانہ خیالات کا اظہار کرتے تھے۔ بات کیسی بھی رہی ہو اردو کے قدیم شعرا کا تعلق تصوف سے ضرور رہا ہے۔ رفتہ رفتہ شعرا کا تعلق تصوف، خانقاہوں اور بزرگوں کے حلقۂ ارادت سے کم ہوتا گیا اور اردو غزل میں بھی تصوف بڑی حد تک روایاتی موضوع ہوکر رہ گیا۔ ہرچند کہ اردو غزل خانقاہوں سے نکل چکی تھی اور بزرگوں کے حلقۂ ارادت

गया और इस प्रकार उर्दू ग़ज़ल में सूफ़ी विचार एक परम्परागत काव्य विषय मात्र रह गया। यह ठीक है कि उर्दू ग़ज़ल सूफ़ी संतों के प्रभाव क्षेत्र के बाहर हो गई थी पर इस में सन्देह नहीं कि बहुत दिनों तक कवियों के मानसिक क्षितिज पर सूफ़ी विचारों का प्रभाव बना रहा।

यों जिन कवियों के यहां सूफ़ी विचार, विचार और व्यवहार के रूप में प्राप्त होता है, उनकी संख्या अधिक नहीं है। और इस प्रसंग में जिन कवियों का नाम बिना संकोच के लिया जा सकता है उन में, वली, सिराज, मज़हर, आबरू और दर्द की ही गणना की जा सकती है। किन्तु कुछ ऐसे कवि भी हुए हैं जिन के यहां सूफ़ी विचार चाहे व्यवहार की सीमा तक न भी पहुँचे हों पर वैयक्तिक और सामाजिक स्थिति ने उनके जीवन और काव्य को बहुत सीमा तक प्रभावित किया है।

उर्दू कवियों में मुहम्मद तक़ी 'मीर' की भाँति भाग्यवान कवि शायद ही और कोई हुआ हो जिसका उसके बाद के हर छोटे बड़े कवि ने महानता का ऐसा गुण गान किया हो। 'मीर' के बाद के हर छोटे बड़े कवि को 'ज़ौक़' की भाषा में यह कहना पड़ा है कि 'मीर' की शैली का अनुकरण सम्भव न हो सका। जहां तक 'मीर' की ग़ज़ल का सम्बन्ध का 'ज़ौक़' की यह मान्यता मूल्यवान भी है। पर ग़ज़ल के अलावा 'मीर' की रुचि सूफ़ी विचारों की ओर भी हुई और इस रूप में कि 'मीर' के काव्य की एक विशेषता उनके सूफ़ी काव्य को प्राप्त हो गई।

'मीर' के सूफ़ी विचार की ओर झुकाव का कुछ कारण तो तत्कालीन समाज ही है,पर उनके सूफ़ी काव्य की दृष्टि से प्रेरणाओं पर भी एक दृष्टि डालना आवश्यक मालूम होता है जिन्होंने वाह्य वातावरण के अतिरिक्त उनके मन को सूफ़ी विचारों की ओर आकृष्ट कर लिया था।

इस प्रयोग में सबसे आवश्यक मालूम होता है कि 'मीर' के माता पिता तथा उनके पालन पोषण सम्बन्धी वातावरण पर भी एक दृष्टि डाल ली जाए।

जैसा कि 'मीर' के जीवनी लेखकों ने लिखा है। 'मीर' के पिता एक संत स्वभाव के मनुष्य थे। इनके स्वभाव की इस विशेषता का दूसरों पर भी प्रभाव पड़ता था। अतः सय्यद अमानुल्लाह नामक एक व्यक्ति पर 'मीर' के पिता के इस संत स्वभाव का इतना प्रभाव पड़ा कि उसने घर बार छोड़ कर साधु जीवन स्वीकार कर लिया और 'मीर' के पिता की संगति में रहकर जीवन व्यतीत करने लग गया। इधर 'मीर' के पिता सय्यद अमानुल्लाह की भक्ति तथा ईश्वर

سے بھی اس کا تعلق باقی نہیں رہ گیا تھا۔ پھر بھی عرصے تک شعرا کے ذہنوں پر تصوف کا اثر قائم رہا

جن شعرا کے یہاں ہم کو تصوف حال اور قال دونوں صورتوں میں ملتا ہے ان کی تعداد زیادہ نہیں ہے اور اس سلسلے میں بلا تکلف جن شعرا کا نام لیا جا سکتا ہے ان میں ولیؔ سراجؔ، مظہرؔ، آبروؔ اور دردؔ قابل ذکر ہیں۔ بعض ایسے شعرا بھی گزرے ہیں جن کے یہاں تصوف متذکرہ بالا بزرگوں کے مقابلہ میں حال کی حد تک نہ پہنچا ہو پھر بھی انفرادی اور سماجی حالات نے ان کی زندگی کو بہت حد تک متاثر کیا تھا۔

اردو شعرا میں میرؔ کی طرح خوش نصیب شاید ہی کوئی دوسرا گزرا ہوگا جس کی عظمت کا اعتراف بعد کے ہر چھوٹے بڑے شاعر نے نہایت فراخ دلی کے ساتھ کیا ہو۔ جہاں تک میرؔ کے تغزل کا تعلق ہے استاد ذوقؔ کا یہ اعتراف بڑی وقعت رکھتا ہے کہ میرؔ کا انداز کسی کو نصیب نہ ہوا لیکن تغزل کے علاوہ میرؔ کی طبیعت کا میلان تصوف کی طرف بھی ہوا اور اس طرح میرؔ کے کلام کی ایک خصوصیت ان کے صوفیانہ کلام کی بھی تسلیم کی گئی۔

میرؔ کا تصوف کی طرف میلان کچھ تو زمانہ کی روش تھی اور کچھ وہ محرکات جنھوں نے خارجی اثرات کے علاوہ ان کے دل و دماغ کو اس طرف مائل کر دیا۔

اس سلسلے میں میرؔ کے والدین اور ان کے تربیتی ماحول پر ایک نظر ڈالنا ضروری ہے۔ میرؔ کے والد ایک درویش صفت انسان تھے۔ ان کی اس خصوصیت کا دوسروں پر بھی اثر پڑتا تھا۔ چنانچہ سید امان اللہ نامی ایک شخص پر میرؔ کے والد کا اس حد تک اثر پڑا کہ اس نے گھر بار چھوڑ کر درویشی اختیار کر لی اور میرؔ کے والد کی صحبت میں ہی زندگی گزارنے لگ گیا۔ میرؔ کے والد بھی سید امان اللہ کے خلوص و محبت اور خدا طلبی کے جذبے سے اس قدر متاثر ہوئے کہ اسے برادر عزیز کہہ کر مخاطب کرنے لگے اور اسے گھر کے سیاہ و سپید کا مالک بنا دیا۔ اس وقت میرؔ کی عمر سات برس کی تھی، سات برس کی عمر سے دس برس کی عمر تک میرؔ سید امان اللہ کے زیر تربیت رہے جن کی تربیت کا پہلا قوی اثر تصوف ہی تھا۔ نہ صرف وہ خود میرؔ کو تصوف کی طرف مائل کرتے رہتے تھے بلکہ جن بزرگوں کے یہاں وہ تصوف کے متعلق ذکر و اذکار کے لیے آتے جاتے تھے وہاں بھی میرؔ کو ساتھ لے

की प्राप्ति की भावनाओं से इतना प्रभावित हुए कि उसे अपना छोटा भाई मान लिया और अपने घर का एक प्रकार से कर्ता धर्ता बना दिया। इस प्रकार सय्यद अमानुल्लाह् 'मीर' के पूज्य चाचा बने। जिस समय 'मीर' के पिता के साथ सय्यद अमानुल्लाह् का उक्त प्रेम उत्पन्न हुआ था और वह 'मीर' के यहाँ रहने लग गए थे, 'मीर' की आयु सात वर्ष की थी तथा 'मीर' क़ुरान पढ़ते थे। इस सात वर्ष की आयु से दस वर्ष की आयु तक 'मीर' सय्यद अमानुल्लाह् की शिक्षा दीक्षा में रहे। सय्यद अमानुल्लाह् की उक्त शिक्षा दीक्षा का सबसे मुख्य अंग सूफ़ी विचार ही था। न केवल सय्यद अमानुल्लाह् की 'मीर' को सूफ़ी विचारधारा की ओर आकृष्ट करते रहते थे प्रत्युत जिन अन्य व्यक्तियों के यहाँ वह सत्संग के के निमित्त आते जाते रहते थे वहाँ भी वह 'मीर' को अपने साथ ले जाते थे। स्वभावत: उक्त व्यक्ति के सत्संग से भी 'मीर' पर सूफी विचारधारा का प्रभाव पड़ता रहता था। 'मीर' जब दस वर्ष के हुए तब सय्यद अमानुल्लाह् से उनका सदा के लिए वियोग हो गया। अर्थात् सय्यद अमानुल्लाह् का देहावसान हो गया। पर 'मीर' के हृदय पर पिता और चाचा सय्यद अमानुल्लाह् की शिक्षा दीक्षा के सूफ़ी विचारधारा का प्रभाव पड़ चुका था। 'मीर' के हृदय पर सय्यद अमानुल्लाह् के देहावसान का बहुत प्रभाव पड़ा। पर अभी यह घाव भरा भी न था कि 'मीर' के पिता अली मुत्तक़ी का भी देहान्त हो गया।

यद्यपि 'मीर' के पिता के स्वभाव के कारण तथा सय्यद अमानुल्लाह् की शिक्षा दीक्षा के कारण सरलता से इस परिणाम पर पहुँचा जा सकता है कि बचपन में ही 'मीर' सूफ़ी विचारधारा की ओर आकृष्ट हो गए थे। पर उक्त दोनों व्यक्तियों की मृत्यु के बाद आजीविका सम्बन्धी जो विकट परिस्थितियाँ 'मीर' के सामने आईं उनसे भी 'मीर' का झुकाव सूफ़ी विचारधारा की ओर अनिवार्य रूप से हो गया।

पिता की मृत्यु के बाद सबसे विकट समस्या 'मीर' के सामने आजीविका उपार्जन की समस्या आई। अकबराबाद और दिल्ली में वह वर्षों तक मारे-मारे फिरते रहे। सगे सम्बन्धियों में से भी किसी ने उनको दु:ख पहुँचाने में कसर न रक्खी। यह सब एक तरफ था दूसरी तरफ़ इतिहासकारों के शब्दों में दिल्ली का यह हाल था कि:

"बहादुर शाह प्रथम की मृत्यु के बाद से बृटिश राज्य की स्थापना तक दिल्ली

جاتے تھے۔ جس سے میرؔ کے دل پر ان بزرگوں کی صحبت کا اثر پڑتا رہتا تھا۔ سید امان اللہ کے وصال کے ساتھ ان کی تربیت کا یہ سلسلہ اگرچہ ہمیشہ کے لیے ختم ہوگیا پھر بھی میرؔ کے دل پر والد کی صحبت اور سید امان اللہ کی تربیت سے تصوف کی تخم ریزی ہوگئی۔ میرؔ کے دل پر سید امان اللہ کے انتقال کا گہرا اثر پڑا۔ لیکن ابھی یہ زخم تازہ ہی تھا کہ کچھ ہی دنوں بعد میرؔ کے والد کا بھی انتقال ہوگیا۔

ان دونوں بزرگوں کا سایہ سر سے اٹھ جانے کے بعد جن حالات سے میرؔ کو گزرنا پڑا وہ بھی میرؔ کو تصوف کی طرف مائل کرنے میں بڑی اہمیت رکھتے ہیں۔

والد کے انتقال کے بعد سب سے پہلے میرؔ کے سامنے معاشی مسائل نے سر اٹھایا۔ اکبرآباد اور دلی میں وہ برسوں تک سرگردان و پریشان پھرتے رہے۔ اپنوں نے بھی انھیں رنج پہنچانے میں کوئی کسر اٹھا نہ رکھی۔

"بہادر شاہ اول کی وفات سے لے کر برطانوی حکومت کے قیام تک اہل دہلی کو جن مسلسل ہول ناک مصائب کا سامنا کرنا پڑا، ان کے مقابلے میں تیمور کا قتل عام کچھ بھی نہ تھا۔"

اور یہی میرؔ کی شاعری کا دور تھا۔ اس کے لیے ان کو "سخن کا پردہ" اختیار کرنا پڑا اور دل کی بربادی کے پیرائے میں دلی کی بربادی کا مرثیہ لکھنا پڑا۔

دل کی بربادی کا کیا مذکور ہے ٭ یہ نگر سو مرتبہ لوٹا گیا

رہتے ہیں یوں حواس پریشاں کہ جوں کہیں
دو تین آکے لوٹے مسافر اتر رہے

بڑے بڑے تھے گھر جن کے یاں آثار ان کے یہ ہیں اب
میرؔ شکستہ دروازے ہیں گری پڑی دیواریں ہیں

اب خرابہ ہوا جہان آباد ٭ ورنہ ہر اک قدم پہ یاں گھر تھا

वालों को जिन दुखों का सामना करना पड़ा उनके सामने तैमूर का कत्ल आम कुछ-भी न था।"

इधर यह दशा थी उधर 'मीर' के काव्य रचना का काल था, इसलिए 'मीर' को 'सुख़न का पर्दा' अपनाना पड़ा और दिल की बर्बादी के बहाने से दिल्ली की बर्बादी का शोक गीत रचना पड़ा।

दिल की बर्बादी का क्या मज़कूर[1] है।   यह नगर सौ मर्तबा लूटा गया ।।

रहते हैं यों हवास परीशां कि ज्यूं कहीं।   दो तीन आके लूटे मुसाफ़िर उतर रहे ।।

बड़े बड़े थे घर जिनके यां, आसार[2] उनके ये हैं अब
"मीर" शिकस्ता दरवाज़े हैं, गिरी पड़ी दीवारें हैं ।।

अब ख़राबा हुआ जहानाबाद[3]।   वर्ना हर इक क़दम पे यां घर था ।।

मजलिसों की मजलिसें बरहम[4] हुईं।   लोग वे पल मारते किधर गये ।।

पांव के नीचे की मिट्टी भी न होगी हम सी।   क्या कहें उम्र को इस तरह बसर[5] हमने किया

अपना ही हाथ सिर पे रहा अपने यां सदा।   मुश्फ़िक़[6] कोई नहीं है कोई मेहरबां नहीं।

दिल्ली में आज भीख भी मिलती नहीं उन्हें।   था कल तलक दिमाग़ जिन्हें ताज व[7] तख़्त का

शहाँ[8] कि कुहल जवाहर थी ख़ाके पा जिनको।   उन्हीं की आंखों में फिरती सलाइयां देखीं ।।

देश की यह स्थिति थी जब "मीर" पूर्ण रूपेण काव्य की ओर प्रवृत्त हुए थे। इस प्रकार पिता की मृत्यु के उपरान्त "मीर" बहुत दिनों तक दुःखों तथा कठिनाइयों के बीच जीवन बिताते रहे। समय की स्थिति के साथ साथ कभी कभी 'मीर' को क्षणिक शान्ति तथा संतोष का जीवन भी प्राप्त हो जाता था, परन्तु स्थायी रूप में उन्हें शान्ति प्राप्त न हो सकी। यहाँ यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि कुछ व्यक्तियों की मानसिक स्थिति ऐसी होती है कि वह प्रत्येक दशा में भाग्य का रोना रोते रहते हैं और इस प्रकार उनको अपनी अभिलाषाएं कभी

१. वर्णन। २. अवशेष। ३. दिल्ली। ४. अस्त-व्यस्त। ५. व्यतीत। ६. कृपालु। ७. राज्य। ८. शासक।

مجلسوں کی مجلسیں برہم ہوئیں
لوگ وے پل مارتے کیدھر گئے

پاؤں کے نیچے کی مٹی بھی نہ ہوگی ہم سی
کیا کہیں عمر کو اس طرح بسر ہم نے کیا

اپنا ہی ہاتھ سر پہ رہا اپنے ہاں سدا
مشفق کوئی نہیں ہے کوئی مہرباں نہیں!

دل میں آج بھیک بھی ملتی نہیں انھیں
تھا کل تلک دماغ جنھیں تاج و تخت کا

شہاں کہ کحل جواہر تھی خاک پا جن کی
انھیں کی آنکھوں میں پھرتی سلائیاں دیکھیں

ان حالات میں میرؔ کی شاعری پروان چڑھ رہی تھی اور وہ اپنے والد کے انتقال کے بعد سے برابر مصائب و آلام کا شکار بنے رہے۔ کبھی کبھی اطمینان کے لمحات بھی میسر آجاتے تھے لیکن مستقل طور پر انھیں سکون نصیب نہ ہو سکا۔ بعض طبیعتیں فطری طور پر ایسی ہوتی ہیں کہ انھیں ہر حال میں زمانے کے ساتھ شکایت رہتی ہے اور کبھی ان کی آرزوئیں پوری نہیں ہوتیں۔ یہی وجہ ہے کہ میرؔ کی طبیعت نے ابتدا میں جو رنگ اختیار کرلیا تھا وہ ہمیشہ قائم رہا۔

حالاں کہ فکر و عمل کی بہت سی شکلیں ان کے سامنے آچکی تھیں اور اسی کے ساتھ ساتھ صبر و قناعت کی زندگی بھی ان کے سامنے مثالی شکل میں موجود تھی، اور وہ ان تخیلات سے آشنا بھی ہو چکے تھے جن کا تعلق حیات و کائنات

पूर्ण होती दिखाई नहीं देतीं। वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप में भाग्य का रोना रोता ही है। पर किसी किसी में यह बात उसके स्वभाव का अंग बन जाती है। यद्यपि पिता की मृत्यु के बाद जिन परिस्थितियों में 'मीर' को जीवन व्यतीत करना पड़ा वह बिलकुल संतोष प्रद न थे। पर कभी कभी उनको ऐसे अवसर भी प्राप्त हुए जब थोड़ी बहुत शान्ति और संतोष भी उनको प्राप्त हुआ। पर मन की प्रारम्भ से जो स्थिति बन चुकी थी उसमें अन्तर न आया।

परन्तु मन की इस वृत्ति के साथ जो निराशा तथा उदासीनता की वृत्ति थी जीवन के लिए विचार और व्यवहार की कोई ऐसी दशा भी आवश्यक थी जो 'मीर' को काल की इस प्रतिकूल अवस्था में जीवन व्यतीत करने के लिए कोई न कोई मार्ग निकाल सके। वास्तव में विचार और व्यवहार की यह दशा उनके सामने बहुत पहले आ चुकी थी। अर्थात उस काल में जब "मीर" अभी किशोरा-वस्था में ही थे। पिता और चाचा ने उनको सूफी विचार धारा की ओर प्रवृत्त कर दिया था। और इस प्रकार संतोष और धैर्य का जीवन उनके लिए एक आदर्श बन चुका था। इसके अलावा वह ऐसे विचारों से भी परिचिति हो चुके थे जिनका सम्बन्ध-जीवन और जगत की समस्यायो से है।

उन उपायों में से जिनके द्वारा जीवन और जगत की समस्याओं का समाधान करने का प्रयत्न सदा से होता आया है सम्भवतः प्रेम तथा भक्ति ही सब से प्रभाव उपाय रहा है। सूफ़ी लोग सदा से भक्ति पर ज़ोर देते रहे हैं और विभिन्न प्रकार से भक्ति के रहस्य समझाते रहे हैं। परन्तु 'मीर' के पिता जो एक संत स्वभाव के व्यक्ति थे जब कभी प्रसन्न होते, "मीर" से कहते :—

"बेटा इश्क़ अख़्तियार करो, इश्क़ ही इस कारख़ाने पर मुसल्लत [1] है, बे इश्क़ ज़िन्दगी वबाल है, इश्क़ में ज़िन्दगी खोना अस्ल कमाल है।"

इस दशा में 'मीर' के काव्य में भी ऐसे विचारों की प्रतिध्वनि होना स्वाभाविक था, अस्तु, एक स्थान पर कहते हैं :

अर्ज़[2]-ओ-समा[3] में इश्क़ है तारी, चारों ओर भरा है इश्क़।
हम हैं जनाबे इश्क़ के बन्दे, नज़दीक अपने ख़ुदा है इश्क़॥
ज़ाहिर[4]-ओ-बातिन[5], अव्वल[6]-ओ-आख़िर[7], पाईं[8] बाला[9] इश्क़ है सब।
नूर[10]-ओ-ज़ुल्मत[11] मानी-ओ-सूरत, सब कुछ आप ही हुआ है इश्क़॥

१. आच्छादित। २. पृथ्वी। ३. आकाश। ४. प्रकट। ५. अन्तर। ६. प्रारम्भ। ७. अंत। ८. निम्न। ९. उच्च। १०. ज्योति। ११. तमस।

کے مسائل سے ہے

حیات و کائنات کے مسائل کو حل کرنے کے طریقوں میں سب سے موثر عشق کا طریقہ ہے۔ اسی لیے صوفیہ عشق پر بہت زیادہ زور دیتے رہے ہیں اور مختلف طریقوں سے عشق کے نکات بیان کرتے رہے ہیں۔ چنانچہ میرؔ کے والد جو ایک درویش صفت انسان تھے۔ میرؔ سے کہا کرتے تھے کہ

" بیٹا عشق اختیار کرو، عشق ہی اس کارخانے پر مسلط ہے، بے عشق زندگانی وبال ہے، عشق میں دل کھونا اصل کمال ہے :

ان حالات میں میرؔ کے کلام میں ایسے خیالات کی بازگشت ضروری تھی۔

ارض و سما میں عشق ہے طاری، چاروں اُور بھرا ہے عشق
ہم ہیں جناب عشق کے بندے، نزدیک اپنے خدا ہے عشق

ظاہر و باطن، اول و آخر، پائیں بالا عشق ہے سب
نور و ظلمت معنی و صورت، سب کچھ آپ ہی ہوا ہے عشق

ایک طرف جبریل آتا ہے، ایک طرف لاتا ہے کتاب
ایک طرف پنہاں ہے دلوں میں، ایک طرف پیدا ہے عشق

خاک و باد و آب و آتش، سب ہے موافق اپنے تئیں
جو کچھ ہے سو عشق بتاں ہے، کیا کہیے اب کیا ہے عشق

میرؔ نے اپنے والد اور منہ بولے چچا سید امان اللہ کی تلقین اور تربیت کے مطابق عشق اختیار کیا، اور اس طرح ان کے کلام میں تصوف نے جگہ حاصل کرلی جہاں تک تصوف کی مصطلحات کا سوال ہے اور ان تصورات کا جن کا تصوف

एक तरफ़ जिब्रील[१] आता है, एक तरफ़ लाता है किताब[२] ।
एक तरफ़ पिन्हाँ[३] है दिलों में, एक तरफ़ पैदा[४] है इश्क़ ॥
ख़ाक[५]-ओ-बाद[६]-ओ-आब[७]-ओ-आतिश[८], सब है मुवाफ़िक़[९] अपने तईं ।
जो कुछ है सो इश्क़ के बुतां[१०] है, क्या कहिए अब क्या है इश्क़ ॥

इस प्रकार 'मीर" ने अपने पिता और चाचा की शिक्षा दीक्षा के अनुसार भक्ति का पथ स्वीकार किया । और कुछ तो इस शिक्षा दीक्षा का और कुछ काल की प्रवृत्ति का यह प्रभाव पड़ा कि निश्चित रूप से 'मीर' के काव्य की सूफ़ी विचार धारा विशिष्टता बन गई । वैसे जहाँ तक सूफ़ी विचारधारा की परिभाषाओं का प्रश्न है । और उन विचारों का जिनका सूफ़ी विचार धारा के साथ सम्बन्ध है 'मीर' के अतिरिक्त उर्दू के अन्य कवियों के काव्य में भी उनका स्थान है । परन्तु शिक्षा दीक्षा के वातावरण और जीवन की दुःखान्त परिस्थितियों के कारण इस प्रसंग में 'मीर' को एक प्रकार की विशिष्टता प्राप्त है ।

जैसा कि कहा जा चुका है वह सूफ़ी परिभाषाएं जो 'मीर' के काव्य में यत्र तत्र प्राप्त होती हैं, वह उर्दू के ग़ज़ल काव्य में एक परम्परागत रूप प्राप्त कर चुकी है । बहुधा उक्त परिभाषाएं जिनका सम्बन्ध भौतिक पदार्थों से भी है, भौतिक अर्थ भी ले लिए जाते है । परिणाम स्वरूप रचनाओं के दोहरे अर्थ हो जाते हैं । रिन्द, शमा, मैख़ाना, पीरे मुग़ाँ, बुत, बुतख़ाना, दैर, ख़राबात, शेख़, बादा इत्यादि सैकड़ों ऐसे शब्द हैं जो एक ओर भौतिक पदार्थ हैं और दूसरी ओर सूफ़ी परिभाषाएं हैं ।

इन शब्दों के अतिरिक्त जो परम्परागत रूप से उर्दू ग़ज़ल की पूंजी विशेष हैं और जिनसे हर प्रकार की रुचि का व्यक्ति आनन्द प्राप्त कर सकता है, यहाँ "मीर" के उन अशआर (काव्य) को देना आवश्यक मालूम होता है जो सूफ़ी विचारधारा की अभिव्यक्ति करते हैं, तथा जिनमें वह प्रयत्न स्पष्ट रूप से झलकता है जो जीवन और जगत से सम्बन्ध प्रतिकूल तथा विभिन्न रूपी समस्याओं में एक रूपता लाने के लिए किया गया है । और इस प्रकार मनुष्य ने अपने विचार और व्यवहार मे संतोष तथा शान्ति का मार्ग प्राप्त कर लिया है ।

जगत और जीवन की प्रतिकूल समस्याओं के बीच एक रूपता लाने में जिसने सूफ़ी विचारों को रास्ता दिखाया है, वह एक मात्र भक्ति ही है । प्रेम या भक्ति

१. एक देवदूत जो पैग़म्बर के पास ईश्वरी सन्देश लाता था । २. क़ुरान । ३. छिपा हुआ । ४. प्रकट । ५. पृथ्वी । ६. वायु । ७. जल । ८. अग्नि । ९. अनुकूल । १०. प्रेम-पात्र, सूफ़ियों का एक पारिभाषिक शब्द ।

سے خاص تعلق ہے میرؔ کے علاوہ دیگر شعرار کے یہاں بھی پائے جاتے ہیں۔ لیکن تربیتی ماحول اور حالات زندگی کے لحاظ سے میرؔ کو ایک نوع کی خصوصیت حاصل ہے

مصطلحات صوفیہ جو میرؔ کے کلام میں پائی جاتی ہیں وہ اردو کے غزل گو شعرار کے یہاں ایک روایاتی حیثیت پاچکی ہیں۔ اور اکثر ان سے مادی اشیا مراد لے لی جاتی ہیں جس سے شعر ذومعنی ہوجاتا ہے۔ رند، شیخ، میخانہ، پیرمغاں بت، بت خانہ، دیر، خرابات، شمع، بادہ وغیرہ صدہا ایسے الفاظ ہیں جن سے مادی اشیار مراد ہیں اور وہ مصطلحات صوفیہ بھی ہیں۔

ان الفاظ کے علاوہ جو روایاتی طور پر اردو غزل کا سرمایہ بنے ہوئے ہیں اور جن سے ہر ذوق کا انسان لطف حاصل کرتا ہے اور جو صوفیہ کے اس فکر کی غمازی کرتے ہیں جس سے انھوں نے کائنات وحیات کے باہم متضاد مسائل کے درمیان تطابق پیدا کرنے کی کوشش کی ہے اور فکر و عمل سے اطمینان و سکون کی راہ پالی ہے

حیات وکائنات کے اہم مسائل جنھوں نے صوفیہ کی رہ نمائی کی ہے وہ عشق ہے۔ عشق کے علاوہ عقل کا بھی ایک مقام ہے۔ لیکن صوفیہ نے عقل کو محو تماشائے لب بام سے آگے نہیں بڑھنے دیا ہے۔

خدا کی حقیقت کے علم کے بارے میں عقل کی نارسائی کا ذکر شعرا کا ایک خاص موضوع ہے۔ میرؔ نے کہا ہے

مرتبہ واجب کا سمجھے آدمی ممکن نہیں
فہم سودائی ہوا یاں عقل دیوانی ہوئی

صوفیا نے انسان کے حال کو جب وہ تصوف کے رموز سے آشنا ہوجاتا مختلف نام دیے ہیں ہمہ از دست، ہمہ بادست، ہمہ اوست، وحدت فی الکثرت اور کثرت فی الوحدت وغیرہ۔ کبھی انسان یہ سمجھتا ہے کہ حیات وکائنات کے

के अतिरिक्त यद्यपि मनुष्य को बुद्धि का वरदान भी प्राप्त हुआ किन्तु सूफ़ियों ने बुद्धि को इस पथ के प्रदर्शक के रूप में स्वीकार नहीं किया।

ईश्वर अथवा सत्य के साक्षात्कार के प्रसंग में बुद्धि की जिस असमर्थता का वर्णन किया है 'मीर' के काव्य में भी इसका परिचय प्राप्त होता है। अतः कहते हैं :

मर्तबा वाजिब का समझे, आदमी मुमकिन नहीं।
फ़हम सोदाई हुआ याँ, अक़्ल दीवानी हुई।।

सूफ़ी विचार धारा जब मनुष्य के जीवन में ओत-प्रोत हो जाती है, उसको स्थितियों के अपेक्षानुसार विभिन्न नाम दिये गए हैं। हमः अज़ोस्त, हमः बओस्त, हमः ओस्त, वहदत फ़िल कसरत, कसरत फ़िल वहदत इत्यादि उन्हीं विभिन्न स्थितियों के नाम हैं। कभी मनुष्य यह समझने लगता है कि जीवन और जगत में जो कुछ घटित हो रहा है सब उसी ईश्वर की ओर से है और मनुष्य यहाँ कुछ भी करने धरने में विवश है, अस्तु वह कहने लगता है :—

नाहक़[1] हम मजबूरों पर तोहमत[2] है मुख़्तारी[3] की।
चाहते हैं सो आप करे हैं, हमको अबस बदनाम किया।।

और कभी उस एकमेव की हर ओर ज्योति दिखाई देने लगती है तब वह जगत के विभिन्न दृश्यों को अपने और उसके बीच के पर्दे समझने लग जाता है :

गुल[4]-ओ-रंग-ओ-बहार पर्दे हैं। हर अयाँ में है वह निहाँ[5] टुक सोच।।

और :—

गुल-ओ-आइना[6] क्या, ख़ुर्शीद[7]-ओ-मह[8] किया। जिधर देखा तिधर तेरा ही रू था।।

कभी ऐसा अनुभव होता है, कि यद्यपि वह एक ही है पर जगत के विभिन्न दृश्यों के साथ साथ वह भी विभिन्न रूपों में दृष्टि गोचर होता है।

गह[9] गुल है, गाह रंग, गहे बाग़ की है बू। आता नज़र नहीं वह तरहदार[10] इक तरह।।

परन्तु जब वास्तविक दृष्टि उत्पन्न हो जाती है तो जगत के इन विभिन्न रूपों में भी वही एक मेव का दर्शन होने लगता है।

गोश[11] को होश की टुक खोल के सुन शोर-ए-जहाँ।
सब की आवाज़ के पर्दे में, सुख़न[12] साज़ है एक।।

और :

जहाँ जल्वे[13] से उस महबूब के यकसर लबालब है।
नज़र पैदा कर अव्वल फिर तमाशा देख क़ुदरत का।।

१. व्यर्थ। २. आरोप। ३. स्वामित्व। ४. फूल। ५. गोपनीय। ६. दर्पण। ७. सूर्य। ८. चन्द्र। ९. कभी। १०. रूपवान। ११. कान। १२. वाणी। १३. ज्योति।

کارخانے میں جو کچھ ہو رہا ہے وہ سب اس ایک ذات باری تعالیٰ کی طرف سے ہے اور انسان محض مجبور ہے

ناحق ہم مجبوروں پر تہمت ہے مختاری کی
چاہتے ہیں سو آپ کریں ہیں ہم کو عبث بدنام کیا

اور کبھی اس ایک ذات کا ہر طرف جلوہ نظر آنے لگتا ہے اور وہ کائنات کے مختلف مناظر کو محض اپنے اور اس کے درمیان ایک پردہ تصور کرتا ہے۔

گل و رنگ و بہار پردے ہیں
ہر عیاں میں ہے وہ نہاں ٹک سوچ

گل و آئینہ کیا خورشید و مہ کیا
جدھر دیکھا تدھر تیرا ہی رو تھا

کبھی ایسا محسوس ہوتا ہے کہ وہ ایک ہے لیکن مناظر کائنات کے اختلاف کے ساتھ ساتھ وہ بھی مختلف شکلوں میں نظر آتا ہے۔

گہ گل ہے، گاہ رنگ، گہے باغ کی ہے بو
آتا نظر نہیں وہ طرح دار اک طرح

لیکن جب بصیرت پیدا ہو جاتی ہے تو کائنات کے ان مناظر کے اختلاف میں بھی اسی ذات کا جلوہ نظر آنے لگتا ہے۔

گوش کو ہوش کی ٹک کھول کے سُن شورِ جہاں
سب کی آواز کے پردے میں سخن ساز ہے ایک

جہاں جلوے سے اس محبوب کے یکسر لبالب ہے ؛ نظر پیدا کر اوّل پھر تماشا دیکھ قدرت کا

साधना करने के साथ-साथ मनुष्य को कभी कभी ऐसा प्रतीत होने लगता है कि स्वयं उसका अपना रूप भी ईश्वर से भिन्न नहीं है, इस लिए वह अनुभव करने लगता है :—

पहुंचा जो आप को तो, पहुंचा ख़ुदा के तईं।
मालूम अब हुआ कि बहुत मैं भी दूर था॥

और :–

आतिश[1] बुलंद दिल की न थी वर्ना ए कलीम[2]।
यक शोला[3] बर्क़[4]-ए-ख़िरमन[5]-ए-सद[6] कोहतूर[7] था॥

क्योंकि वास्तव में बुंद और समुद्र में कोई अंतर नहीं है :

जुज़[8] मर्तबा[9]-ए-कुल को हासिल करे है आख़िर।
यक क़तरा[10] न देखा जो दरिया न हुआ होगा॥

सत्य यह है कि अंश और अंशी, बुंद और समुद्र, यहाँ और वहाँ, इधर और उधर, कुफ़्र और इस्लाम दैर-ओ-हरम सत्य के मार्ग में केवल पर्दे हैं अन्यथा उसकी मंज़िल की तो यह दशा है :—

हर क़दम[11] पर थी उसकी मंज़िल लेक।
सर से सौदाए जुस्तजू[12] न गया॥

उस पर कि दिल से था नज़दीक।
ग़मे दूरी चले हैं हम लेकर॥

इस पर कि था वह शह[13]-ए-रग से अक़रब[14]।
हरगिज़ न पहुंचा यह दस्ते[15] कोताह॥

यही नहीं कि प्रत्येक पग उसका स्थान है और वह हृदय से निकट है उसके अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं :

है मासेवा[16] क्या जो 'मीर' कहिए।
आगाह[17] सारे उससे है, आगाह॥
जल्वे हैं उसके शानें[18] हैं उसकी।
क्या रोज़ क्या ख़ोर[19] क्या रात क्या माह॥
ज़ाहिर है कि बातिन, अव्वल कि आख़िर।
अल्लाह, अल्लाह, अल्लाह, अल्लाह॥

१. अग्नि। २. मूसा पैग़म्बर। ३. अंगारा। ४. बिजली। ५. खलिहान। ६. सौ। ७. वह पर्वत विशेष जिस पर मूसा को ईश्वरी ज्योति के दर्शन हुए थे। ८. अंश। ९. पूर्ण। १०. बूंद। ११. पग। १२. जिज्ञासा। १३. जीवन नाड़ी। १४. निकट। १५. छोटा हाथ। १६. अतिरिक्त। १७. परिचित। १८. महानता। १९. सूर्य।

کبھی انسان کو ایسا محسوس ہوتا ہے کہ خود اس کا وجود ذات باری سے مختلف نہیں ہے اس لیے اسے اپنی حقیقت کے متعلق محسوس ہونے لگ جاتا ہے کہ

پہنچا جو آپ کو تو میں پہنچا خدا کے تئیں
معلوم اب ہوا کہ بہت میں بھی دور تھا

آتش بلند دل کی نہ تھی ورنہ اے کلیم
یک شعلہ برق خرمن صد کوہ طور تھا

قطرہ بھی دریا ہی ہے، یعنی جزو اور کل میں کوئی فرق نہیں ہے۔

جزو مرتبہ کل کو حاصل کرے ہے آخر
ایک قطرہ نہ دیکھا جو دریا نہ ہوا ہوگا

جزو کل، قطرہ و دریا، یہاں اور وہاں، اِدھر اور اُدھر، کفر و اسلام، دیر و حرم عرفان حقیقت کی راہ میں محض پردے ہیں ورنہ اس کی منزل کا حال یہ ہے

ہر قدم پر تھی اس کی منزل لیک
سر سے سودائے جستجو نہ گیا

اس کے اوپر کہ دل سے تھا نزدیک
غم دوری چلے ہیں ہم لے کر

اس پر کہ تھا وہ شہ رگ سے اقرب
ہرگز نہ پہنچا یہ دست کوتاہ

اتنا ہی نہیں کہ ہر قدم اس کی منزل ہے اور وہ دل سے نزدیک ہے اس کے علاوہ اور کچھ موجود نہیں ہے۔

अगर चश्म है तो वही ऐन[1] हक़ है।
तअस्सुब[2] मुझे है अजब मासेवा से॥

मुँह करिए जिस तरफ़ को सो ही तेरी तरफ़ है।
पर कुछ नहीं है पैदा, कीधर है ऐ ख़ुदा तू॥

यद्यपि ईश्वर की ज्योति सब तरफ़ है, कोई स्थान उससे रिक्त नहीं है किन्तु फिर भी किसी को पता नहीं कि वह कहाँ है। क्योंकि वह मन बुद्धि की सीमा से परे है। तुलसी के शब्दों में।

गो गोचर जहँ लग मन जाई।
सो सब माया जानेहुँ भाई॥

जीवन और जगत से सम्बन्ध रखने वाली समस्याओं के बीच जब तक एकरूपता का अनुभव नहीं होता तब तक मनुष्य के मन को शान्ति प्राप्त नहीं होती। इसके लिए एक ऐसे अस्तित्व का अनुभव आवश्यक है। जो यद्यपि एक हो पर उस एक के ही कारण यह सब कुछ हो। अर्थात एक में अनेक और अनेक में एक का दर्शन किया जा सके।

इसीलिए यह कहना पड़ा :

यही जाना कि कुछ नहीं जाना। सोचो इक उम्र में हुआ मालूम॥
इल्म सब को है यह कि सब तू है। फिर भी अल्लाह कैसा लामालूम[3]॥
गर्चे तू ही है सब जगह लेकिन। हमको तेरी नहीं है जा मालूम॥

जिस्म ख़ाकी[4] का जहाँ पर्दा उठा। हम हुए वह 'मीर' वह सब हम हुए॥
हस्ती अपनी है बीच में पर्दा। हम न होवें तो फिर हिजाब[5] कहाँ॥

लेकिन कब उस बेगाना[6] ख़ू को समझे आलम।
अगर्चे यार आलम आशना[7] है॥
न आलम[8] में है न आलम से बाहर।
यह सब आलम से आलम ही जुदा है॥

और इसीलिए :

आँखें जो हों तो ऐन है मक़सूद[9] हर जगह।
बिज़्ज़ात[10] है जहाँ में वह मौजूद हर जगह॥
वाक़िफ़[11] हो शान[12]-ए-बंदगी से क़ैद-ए-क़िबला[13] क्या।
सिर हर कहीं झुका कि है मसजूद[14] हर जगह॥

१. स्रोत, वास्तविक। २. पक्षपात। ३. अज्ञात। ४. पार्थिव। ५. लज्जा। ६. अलग अलग। ७. परिचित। ८. विश्व। ९. लक्ष्य। १०. अपने आप। ११. परिचित। १२. प्रार्थना का ढंग। १३. वह दिशा जिधर सिज्दा किया जाता है। १४. उद्देश्य।

ہے ما سوا کیا جو میرؔ کہیے
آگاہ سارے اس سے ہیں آگاہ
جلوے ہیں اس کے' شانیں ہیں اس کی
کیا روز' کیا خور' کیا رات' کیا ماہ
ظاہر کہ باطن' اوّل کہ آخر
اللہ' اللہ' اللہ' اللہ
اگر چشم ہے تو وہی عین حق ہے
تعصب تجھے ہے عجب ما سوا سے

منہ کریے جس طرف کو سو ہی تری طرف ہے
پر کچھ نہیں ہے پیدا' کیدھر ہے اے خدا تو

ہر چند کہ ذات باری کا جلوہ ہر طرف ہے' کوئی سمت اس سے خالی نہیں ہے پھر بھی وہ کدھر ہے کسی کو معلوم نہیں' وہ انسان کے علم و ادراک کے حدود میں داخل نہیں ہو سکتا۔

حیات و کائنات سے متعلق متضاد مسائل کے درمیان ہم آہنگی و یکرنگی کے بغیر انسان کا دل و دماغ مطمئن نہیں ہوتا اسی لیے ایک ایسی ذات کا عرفان ضروری ہے' جس کی وجہ سے سب کچھ ہوا اتنا ہی نہیں وہ ایک ہی سب کچھ ہے

یہی جانا کہ کچھ نہیں جانا سو بھی اک عمر میں ہوا معلوم
علم سب کو ہے یہ کہ سب تو ہے پھر بھی اللہ کیسا لا معلوم
گرچہ تو ہی ہے سب جگہ لیکن ہم کو تیری نہیں ہے جا معلوم

جسم خاکی کا جہاں پردہ اٹھا ہم ہوئے وہ میرؔ وہ سب ہم ہوئے

ہستی اپنی ہے بیچ میں پردہ ہم نہ ہوویں تو پھر حجاب کہاں

किन्तु जो हर जगह है उसको मन्दिर मस्जिद वाले अपनी-अपनी सीमा में समझ रहे हैं, इसलिए न उस तक पहुँच हो पाते हैं न वास्तविक संतोष तथा शान्ति ही प्राप्त होती है ।

साकिन-[१]-ए-दैर-ओ[२]-हरम दोनों तलाश में हैं तेरी ।
तू ख़ुदा जाने कहाँ है, क्योंकि तुझको पाइए ।।
गह दैर में हैं गहे हरम हैं । अपना तो यही दीवानापन है ।।
यकजा अटक के रहना है नातमामी[३] वर्ना । सब में वही हक़ीक़त यों सारी हो गई है ।।
उसके फ़रोग़-ए[४]-हुस्न से झमके है सब में नूर ।
शम-ए-हरम हो या हो दिया सोमनात का ।।
बिज़ात है जहाँ में वह मौजूद हर जगह ।
है दीद चश्म-ए-दिल के खुले ऐनजात[५] का ।।

वैसे उसको प्राप्त करने के लिए मनुष्य विभिन्न उपाय सोचता तथा करता रहता है. कभी कभी वह उसे अपने मन-बुद्धि की सीमा में भी बाँध लेने का प्रयत्न करने लग जाता है, किन्तु उसे संतोष और शान्ति उसी समय प्राप्त होती है जब यह समझ लेता है कि :

है इश्क़ ही से चार तरफ़ बहस-ओ-गुफ़्तगू । शोर उस बला-ए-जाँ का जहाँ में कहाँ नहीं ।।
न निकला दूसरा वैसा जहाँ में । वही इक जिन्स है इस कारवाँ में ।।

यद्यपि उसके अतिरिक्त इस जगत रूपी कारवाँ में और कुछ नहीं है पर :

नया आनन[६] फ़आनन[७] उसको देखा । जुदा थी शान उसकी हर जमाँ[८] में ।।

किन्तु जो क्षण प्रतिक्षण नया दिखाई देता है, वह चाहे रंग भेद हो या काल भेद हो अनेक नहीं हो जाता । वह काल और देश भेद में भी रहता अद्वैत ही है । इसीलिए :

तनिक गर्म तो संग रेज़े[९] को देखा । निहाँ उसमें भी शोल-ए-तूर है ।।

और :—

है क़िस्मत-ए-अर्मी-ओ-फ़लक से ग़रज़ नमूद[१०] । जल्वा वगरना सब में है उसके जमाल[११] का ।।

फिर भी :

इदराक[१२] को है ज़ात-ए-मुक़द्दस[१३] में दख़ल क्या ।
उधर नहीं गुज़ार गुमान-ओ-ख़याल का ।।
हैरत से आरिफ़ों[१४] को नहीं राहे मारफ़त[१५] ।
हाल और कुछ है यां उन्हों के हाल[१६]-ओ-क़ाल[१७] का ।।

१. मंदिर का रहने वाला । २. मस्जिद वाला । ३. अपूर्णता ४. सौन्दर्य ज्योति । ५. आप रूप, स्वयं । ६. क्षण । ७. प्रतिक्षण । ८. युग । ९. पाषाण खंड । १०. अभिव्यक्ति । ११. ज्योति । १२. बुद्धि । १३. पवित्र । १४. ज्ञानी । १५. ब्रह्मज्ञान । १६. दशा । १७. कथन ।

لیکن کب اس بیگانہ خو کو سمجھے عالم
اگرچہ یار عالم آشنا ہے
نہ عالم میں ہے نے عالم سے باہر
یہ سب عالم سے عالم ہی جدا ہے

آنکھیں جو ہوں تو عین ہے مقصود ہر جگہ
بالذات ہے جہاں میں وہ موجود ہر جگہ
واقف ہو شانِ بندگی سے قید قبلہ کیا
سر ہر کہیں جھکا کہ ہے مسجود ہر جگہ

جو ہر جگہ ہے اس کو ہم اپنی کم فہمی سے ساکن دیر و حرم سمجھ رہے ہیں نتیجہ یہ ہے کہ اس تک رسائی نہیں ہو پاتی۔

ساکن دیر و حرم دونوں تلاش میں ہیں تری
تو خدا جانے کہاں ہے کیوں کہ تجھ کو پایئے

گہ دیر میں ہیں گہے حرم میں ۔ اپنا تو یہی دیوانہ پن ہے

یک جا اٹک کے رہنا ہے ناتمامی ورنہ ۔ سب میں وہی حقیقت یاں ساری ہوگئی ہے

اس کے فروغِ حسن سے جھمکے ہے سب میں نور ۔ شمع حرم ہو یا ہو دیا سومنات کا
بالذات ہے جہاں میں وہ موجود ہر جگہ ۔ ہے دید چشم دل کے کھلے عین ذات کا

خدا کا عرفان حاصل کرنے کے لیے انسان اپنے طور پر مختلف تاویلیں کرتا رہتا ہے اور اس طرح اسے گویا اپنے فہم و عقل کا مقید کرلیتا ہے۔ لیکن اسے اطمینان و سکون اس وقت تک حاصل نہیں ہوتا جب تک وہ یہ نہیں سمجھ لیتا کہ:

ہے عشق ہی سے چار طرف بحث و گفتگو ٭ شور اس بلائے جاں کا جہاں میں کہاں نہیں

इस प्रकार जैसा कि कहा जा चुका है उर्दू काव्य के प्रारम्भ के पूर्व ही समाज की रुचि सूफ़ी विचारों की ओर हो गई थी। उर्दू काव्य का आरम्भ होने पर स्वभावतः इस विचारधारा का उर्दू काव्य पर प्रभाव पड़ा। प्रारम्भ में उर्दू कवियों का सूफ़ी साधकों से सम्पर्क रहा है, कुल का पारिवारिक सम्बन्ध भी रहा है और कुल सूफ़ी साधकों की शिष्य परम्परा में रहे है। ऐसे उर्दू कवियों का जिनका सूफ़ी साधकों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रहा है यद्यपि धीरे-धीरे उनकी संख्या कम होती गई। पर इस में सन्देह नहीं कि सूफ़ी विचारधारा का जो प्रभाव उर्दू काव्य पर और विशेषतः उर्दू ग़ज़ल पर पड़ चुका था वह शेष रहा, इतना ही नहीं वह प्रभाव उर्दू ग़ज़ल की विशेषता हो गयी।

यहाँ यह कहना सम्भवतः अनुचित न होगा कि यद्यपि सदा से मनुष्य अपनी जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के उपरान्त जिस ओर प्रवृत्त होता है वह जीवन और जगत से सम्बन्धित वह समस्याएँ ही हैं जो उसको अशान्त बनाए रहती है। इतना ही नहीं यह समस्याएँ कुछ व्यक्तियों को इतना प्रभावित कर देती हैं कि वह जीवन की आवश्यकताओं से भी इनको प्राथमिकता दे देते हैं। और इस प्रकार मनुष्य जीवन और जगत की समस्याओं को सुलझाने की चिन्ता में संलग्न हो जाता है यद्यपि वास्तविकता यह है कि इन समस्याओं का पूर्ण रूपेण न तो अब तक समाधान पाया जा सका है न सम्भवतः भविष्य में ही पाया जा सकेगा। किन्तु दूसरी ओर मानो उसके सामने सारे समाधान उपस्थित हैं। इस प्रकार कभी उसको हर क़दम पर मंज़िल दिखाई देने लगती है, पर यात्रा की तृष्णा शान्त नहीं होती।

मनुष्य के मन की यह चिरन्तन अशान्ति जो सार्वदेशिक और सार्वकालिक भी है देश और काल की विशेषताओं के कारण उसके प्रकार भेद होते रहते हैं और इस कारण से ऐसा मालूम होने लगता है कि मानो इनमें कोई एकरूपता नहीं है किन्तु वास्तविकता यह है कि :

नया आलम फ़आलम उसको देखा। जुदा थी शान उसकी हर समाँ में॥

प्रतीति ही उसकी भिन्न प्रकार से होती है उसमें भिन्नता नहीं रहती।

सारी[1] वही हक़ीक़त मलहूज़[2] सब में रखिए कहिये नमूद होवे जो उसके मासेवा कुछ

इस प्रकार मानव मन के सार्वकालिक और सार्वदेशिक चिन्तन ने जिस काल

१. व्याप्त। २. ध्यान में।

نہ نکلا دوسرا ویسا جہاں میں ٭ وہی اک جنس ہے اس کارواں میں
اگرچہ اس کے سوا اس کارواں میں کوئی اور نہیں ہے پردہ کیسا ہے۔
نیا آناً فاناً اس کو دیکھا ٭ جدا تھی شان اس کی ہر زماں میں
لیکن جو آناً فاناً نیا دکھائی دیتا ہے وہ حقیقت میں ایک ہی ہے زمانے کے لحاظ سے اس کی شان خواہ جدا ہو مکان کے لحاظ سے بھی وہ جدا دکھائی دیتا ہے۔ مگر اس اختلاف اور تضاد میں وحدت ہی ہے۔ اس لیے سنگ ریزے اور کوہِ طور میں کوئی فرق نہیں ہے۔
تنک گرم تو سنگ ریزے کو دیکھا   نہاں اس میں بھی شعلۂ طور ہے

ہے قسمت زمین و فلک سے غرض منود   جلوہ وگرنہ سب میں ہے اس کے جمال کا

ادراک کو ہے ذاتِ مقدس میں دخل کیا   ادھر نہیں گمان گزار و خیال کا
حیرت سے عارفوں کو نہیں راہِ معرفت   حال اور کچھ ہے یاں انھوں کے حال وقال کا
اردو شاعری کی ابتدا سے قبل ہی سماج کا تصوف کی طرف جو میلان ہو چکا تھا اس کا لازمی طور پر اثر ہوا۔

یہ کہنا غالباً غیر مناسب نہ ہوگا کہ اگرچہ انسان اپنی ضروریات زندگی کو حاصل کرنے کے علاوہ جس طرف خصوصیت کے ساتھ متوجہ ہوتا ہے وہ حیات وکائنات سے متعلق وہ مسائل ہیں جو اس کو اکثر مضطرب وبے چین کردیا کرتے ہیں۔ بلکہ یہ مسائل بعض طبائع کو اس درجہ متاثر کرتے ہیں کہ ان کے یہاں ضروریات زندگی سے بھی تقدم حاصل ہو جاتا ہے۔ اور اس طرح انسان ایسی فکر میں مبتلا ہو جاتا ہے جس سے وہ حیات وکائنات کے مسائل سلجھا سکے۔ حالانکہ یہ مسائل نہ کبھی سلجھ سکے ہیں نہ آئندہ سلجھ سکیں گے۔ اس طرح کبھی ہر قدم پر منزل معلوم ہونے لگتی ہے پھر بھی سر سے سودائے جستجو جاتا نہیں ہے۔
انسانی ذہن کی یہ عالمگیر پریشانی جو اس کے سامنے حیات وکائنات کے مسائل کے ضمن میں پیدا ہوتی رہتی ہے زمان ومکان کی خصوصیات کے طفیل اس کی مختلف نوعیتیں ہو جایا کرتی ہیں اور اس طرح معلوم یہ ہونے لگتا ہے کہ گویا ان میں کسی طرح کا تطابق نہیں ہے لیکن حقیقت یہ ہے کہ۔
نیا آناً فاناً اس کو دیکھا ٭ جدا تھی شان اس کی ہر زماں میں

में अर्थात उर्दू काव्य के प्रारम्भ से पूर्व विचार और व्यवहार की अपेक्षा से जो रूप धारण किया था कुछ युगीन विशेषताओं तथा प्रवृत्तियों के कारण इसे सूफ़ी मत कहा गया। और शायद यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि उस काल के समाज ने इस सूफ़ीमत में अपने सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक सभी प्रकार की भिन्नताओं और विरोधों का उन्मूलन प्राप्त कर लिया। उस काल के समाज ने इस बात को अनुभव कर लिया कि वास्तविक सत्ता केवल एक ही है, इसलिए भिन्नता तथा विरोध का चाहे जो नाम रूप हो वास्तव में वह व्यर्थ और ऊपरी है :

क्या अरब में, क्या अजम में एक है लैला का शोर।
मुख़्तलिफ़[1] हो गो इबारात[2], उनका महमिल[3] एक है॥
एक से है ख़िरमन-ए-ग़म, दाना-ए-ग़म एक है।
दीदा-ओ-दिल असग़रज़[4] दोनों का हासिल[5] एक है॥
राह सब को है ख़ुदा से, जान अगर पहुँचा है तू।
हों तरीक़े मुख़्तलिफ़ कितने ही मंज़िल एक है॥

और :

किसको कहते हैं, नहीं मैं जानता इस्लाम-ओ-कुफ़्र।
दैर हो या काबा, मतलब मुझको तेरे दर[6] से है॥
दैर-ओ-हरम से गुज़रे, अब दिल है घर हमारा।
है ख़त्म इस आबले पर, सैर-ओ-सफ़र हमारा॥

ऐसी दशा में इसके अतिरिक्त और क्या हो सकता है कि :

याराने-ए-दैर-ओ काबा दोनों बुला रहे हैं। अब देखें "मीर" अपना जाना किधर बने है॥

अंत में "मीर" के सूफ़ी काव्य के सम्बन्ध में जो बातें ध्यान में आती हैं, वह कुछ इस प्रकार हैं :

१—उर्दू काव्य के प्रारम्भ के पूर्व समाज की रुचि सूफ़ीमत की ओर हो गई थी।

२—उर्दू के प्रचीन कवि सूफ़ीमत से प्रभावित थे।

३—उर्दू काव्य की प्रवृत्ति एकता और समझौता है।

४—उर्दू ग़ज़ल में धीरे धीरे सूफ़ी विचार परम्परागत काव्य विषय बन गए।

५—'मीर' के पिता अली मुत्तक़ी और चाचा सय्यद अमानुल्लाह जिनके द्वारा उनकी शिक्षा दीक्षा हुई थी संत स्वभाव के व्यक्ति थे।

१. भिन्न। २. लेखन। ३. स्थान। ४. वास्तव में। ५. प्राप्ति, परिणाम। ६. स्थान, चौखट।

شان ہی اس کی جدا دکھائی دیتی ہے حقیقت میں اس میں کوئی فرق نہیں رہتا۔

ساری وہی حقیقت ملحوظ سب میں رکھیے　کیسے نمود ہووے جو اس کے ماسوا کچھ

اسی طرح انسانی ذہن کی عالمگیر پریشانی نے جس دور میں یعنی اردو شاعری کی ابتدا کے پہلے فکر و عمل کے لحاظ سے جو شکل اختیار کی تھی بعض خصوصیات کے لحاظ سے اسے تصوف کہا گیا۔ اس تصوف میں اس دور کے سماج نے اپنے سماجی، سیاسی، مذہبی ہر قسم کے اختلافات اور تضاد کا علاج پالیا۔ اور محسوس کر لیا کہ حقیقت ایک ہی ہے، اس لیے کوئی بھی صورت اختلاف کی کیوں نہ ہو بے معنی ہے اور سطحی ہے۔

کیا عرب میں کیا عجم میں، ایک ہے لیلیٰ کا شور
مختلف ہوں گو عبارات، ان کا محمل ایک ہے
ایک سے ہے خرمن غم دانائے غم ایک ہے
دیدہ و دل الغرض دونوں کا حاصل ایک ہے

کس کو کہتے ہیں نہیں میں جانتا اسلام و کفر
دیر ہو یا کعبہ مطلب مجھ کو تیرے در سے ہے

دیر و حرم سے گزرے اب دل ہے گھر ہمارا
ہے ختم اس آبلہ پر سیر و سفر ہمارا

ایسی صورت میں اور کیا ہو سکتا ہے کہ:

یاران دیر و کعبہ دونوں بلا رہے ہیں
اب دیکھیں میرؔ اپنا جانا کدھر بنے ہے

میرؔ کی صوفیانہ شاعری کے متعلق جو نکات سامنے آتے ہیں ان کی ترتیب یوں ہو گئی ہے

۱۔ اردو شاعری کی ابتدا سے پہلے سماج کا میلان تصوف کی طرف ہو گیا تھا۔
۲۔ اردو کے قدیم شعراء تصوف سے متاثر تھے۔
۳۔ اردو شاعری کا مزاج اتحاد اور صلح ہے۔

६—'मीर' को अपने पिता के देहावसान के उपरान्त जीवन यापन के लिए जिस प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। तथा दिल्ली में आए दिन जो उलट फेर होते रहते थे उस अशान्त वातावरण ने भी 'मीर' को सूफ़ी विचारधारा की ओर प्रेरित किया।

'मीर' के सूफ़ी काव्य का राजनैतिक, सामाजिक तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में यही संक्षिप्त परिचय है।

۴۔ اردو غزل میں رفتہ رفتہ تصوف ایک روایاتی موضوع بن گیا۔
۵۔ میر کے والد علی متقی اور منہ بولے چچا سید امان اللہ درویش صفت تھے۔
۶۔ میر کو جن مصائب و آلام کا سامنا کرنا پڑا اور دلی میں آئے دن جو حادثات ہوتے رہتے تھے انھوں نے میر کو تصوف کی طرف مائل کیا۔

میرے نزدیک میر کی صوفیانہ شاعری کا تعارف سیاسی، سماجی اور تاریخی پس منظر میں یہی ہے۔

मीर की मसनवियाँ

डाक्टर सलाम सन्देलवी

साहित्य में मसनवियां सबसे अधिक लाभदायक और महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि मानवीय विचारधाराओं का कोई ऐसा अंग नहीं जिसे साहित्य के दर्पण में चित्रित न किया जा सके। ग़ज़ल की अपेक्षा इसकी सीमा अनिश्चित है। अत: इसमें संकरता के स्थान पर विस्तार, संक्षिप्त के स्थान पर पूर्णरूपता और अदूरदर्शिता के स्थान पर दूरदर्शिता के दर्शन होते हैं।

मीर ने भिन्न-भिन्न विषयों पर मसनवियां लिखी हैं किन्तु मसनवी में एक ओर यदि साहित्य के विस्तार पर प्रकाश पड़ता है तो दूसरी ओर मीर के मस्तिष्क की महानता का भी आभास होता है।

मीर की सारी मसनवियों में उनकी प्रेम सम्बन्धी मसनवियां अधिक ध्यान देने योग्य हैं। क्योंकि मसनवियां उनके स्वभाव और संगत की उपज हैं। उनके स्वभाव और संगत के महान प्रभाव की प्रचण्ड ज्वाला जो कि प्रेम सम्बन्धी है उनकी ग़ज़लों में "बर्क़-ए-ख़िरमन सद कोह्-ए-तूर" का रूप धारण करके छाई है। प्रेम की यही विशेषता उनकी मसनवियों में जोश और आन्तरिक तूफ़ान उत्पन्न कर देती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि मीर की प्रेम सम्बन्धी मसनवियां उनकी ग़ज़लों से भिन्न नहीं हैं।

मीर ने अपनी एक मसनवी "मोरनाम:" में प्रेम भाव की एकसूत्रता का आदर्श उपस्थित किया है। जिसमें बताया है कि पशुओं के हृदय में भी प्रेम का सागर लहरें लिया करता है। एक मसनवी "जवान[१]-उरूस" में प्रेम के विस्तार पर प्रकाश डाला है और उस स्थान पर वह बिल्कुल फ़लस्फ़ी प्रतीत होते हैं।

१. इस मसनवी का लेख में कोई नाम नही था अत: आसानी के लिए उसका शीर्षक "जवान-उरूस" रख दिया गया है। (दिल्ली कालेज मैगज़ीन नं० पृष्ठ सं० २६७)

میرؔ کی مثنویاں

ڈاکٹر سلام سندیلوی

اصنافِ سخن میں مثنوی سب سے زیادہ مفید اور کارآمد صنف ہے کیوں کہ جذباتِ انسانی کا کوئی ایسا پہلو نہیں ہے جس کو مثنوی کے آئینہ خانے میں عکس ریز نہ کیا جا سکے غزل کی طرح یہ محدود صنفِ سخن نہیں ہے اس لیے اس میں تنگی کے بجائے پہنائی۔ ایجاز کے بجائے اطناب اور رمزیت کے بجائے وضاحت ملتی ہے

میرؔ نے مختلف موضوعات پر مثنویاں لکھی ہیں ان کی مثنویوں سے ایک طرف اگر اس صنف کی پہنائیوں پر روشنی پڑتی ہے تو دوسری طرف میرؔ کے دماغ کی وسعتوں کا بھی اندازہ ہوتا ہے۔

میرؔ کی ساری مثنویاں اہم ہیں مگر سب سے زیادہ توجہ کی مستحق ان کی عشقیہ مثنویاں ہیں کیوں کہ یہ مثنویاں ان کے مزاج اور ماحول کی پیداوار ہیں اور ان کے مزاج اور ماحول کا یہی شعلۂ عشق ان کی غزلوں میں "برقِ خرمنِ صد کوہِ طور" بن کر چمکتا ہے اور عشق کی یہی چنگاریاں ان کی مثنویوں میں روح اور حرارت پیدا کرتی ہیں۔ اس لحاظ سے کہا جا سکتا ہے کہ میرؔ کی عشقیہ مثنویاں ان کی غزلوں کے رنگ و آہنگ سے جدا نہیں ہیں۔

میرؔ نے اپنی ایک مثنوی "مورنامہ" میں عشق کی ہمہ گیری کا جو تصور پیش کیا ہے اس میں بتایا ہے کہ جانوروں میں بھی عشق کا جذبہ موجزن رہتا ہے۔ اسی طرح مثنوی "جوانِ عروس"[1] میں عشق کی پہنائیوں

[1] اس مثنوی کا مخطوطے میں کوئی نام نہیں تھا اس لیے سہولت کے لیے اس کا عنوان "جوانِ عروس" رکھ دیا گیا ہے۔ (دلی کالج میگزین میر نمبر صفحہ ۲۶۸

उन्होंने फ़लस्फ़ियाना भाव में प्रेम की सत्यता प्रकट करते हुए उसका महत्त्व प्रकट किया है।

मीर की प्रेम सम्बन्धी मसनवियां दो प्रकार की हैं। प्रथम प्रकार की मसनवियों को हम अफ़साना रूपी कह सकते हैं। इन मसनवियों में प्रेम को अफ़साने के रूप में उपस्थित किया है और महत्त्वपूर्ण प्रेम की अमर कथाएँ कही हैं। जिनका सम्बन्ध स्वयं उन्हीं से नहीं है। दूसरी प्रकार की मसनवियां उन्हीं से सम्बन्धित हैं। इन मसनवियों को हम स्वयं बीती कह सकते हैं।

अफ़साना रूपी मसनवियों में हर चन्द के बाक़ायदा प्लाट नहीं मिलते किन्तु जो कुछ भी मिलते हैं इसी संसार से सम्बन्धित हैं और उनमें मीर ने लोगों का जीवन चित्रित किया है।

ऐसी मसनवियों के चरित्र इसी संसार के निवासी हैं किन्तु उनकी विशेषताएं सर्व साधारण की विशेषताओं से उच्च हैं। मीर ने ऐसी मसनवियों में आकर्षण एवं सुन्दरता उत्पन्न करने के लिए ऐसा किया है। अतः इन मसनवियों के नायक और नायिकाएं दोनों ही सुन्दरता की एक आकर्षक मूर्तियां हैं।

प्रेमी का सुन्दर होना यदि आवश्यक नहीं है तो प्रेमी को ज़बरदस्ती सुन्दर बनाना प्लाट को कृत्रिम बनाना है। किन्तु मीर ने नायक को सुन्दरता में प्रधानता प्रदान की है। वह इस तथ्य को नहीं मानते कि नायका भी सुन्दर हो अतएव उन्होंने नायका के विषय में न तो अधिक सत्य तथ्यों को अपनाया है और न अधिक पसन्द किया है। मीर ने "शोला-ए-शौक़" में परसराम के रूप की २६ शेरों में प्रशंसा की है किन्तु परसराम की धर्मपत्नी के विषय में कुछ अधिक नहीं लिखा। इसी प्रकार "दरिया-ए-इश्क़" की नायिका के विषय में भी उसकी सुन्दरता, आकर्षण, रूपमाधुर्य एवं भोलेपन का मुख्यतः वर्णन नहीं किया। उसको कहीं "महपारा", उसके होठों को लाल एवं कहीं उसके चरणों को रूप "निगार आलूद" के रूप में निर्धारित किया है। इश्क़िया में "अफ़ग़ान पिसर" के रूप का रोचक वर्णन किया है किन्तु उसकी प्रेमिका के विषय में कुछ अधिक नहीं लिखा। "जवान उरूस" में कुछ शेर प्रेमिका के अकर्षका व मोहक सुन्दरता के विषय में मिलते हैं। किन्तु अधिकतर नायिका की महिमा जिस हाव-भाव एवं आदर से गाई जाती है वैसा मीर ने नहीं किया। यद्यपि "एजाज़-ए-इश्क़" की नायिका के विषय में पर्याप्त शेर प्राप्त होते हैं।

मीर की मासनवियां संक्षिप्त हैं अतः प्रेमिका को रूपांकित करने का अधिक

پر روشنی ڈالی ہے اور ان کے ہاتھ میں ایک مفکر اور فلسفی کا قلم آگیا ہے۔ انھوں نے فلسفیانہ انداز میں عشق کی حقیقت بیان کی ہے۔

میر کی عشقیہ مثنویوں میں دو قسم کی مثنویاں پائی جاتی ہیں۔ پہلی قسم کو ہم افسانوی کہہ سکتے ہیں۔ ان مثنویوں میں عشق کو افسانہ کے رنگ میں پیش کیا گیا ہے اور اسیران عشق کے قصے بیان کیے گئے ہیں۔ جن کا تعلق ان کی ذات سے نہیں ہے۔ دوسری قسم کی مثنویاں انھیں کی ذات سے تعلق رکھتی ہیں ان مثنویوں کو ہم آپ بیتی کہہ سکتے ہیں۔

افسانوی مثنویوں میں ہر چند کہ باقاعدہ کوئی پلاٹ اور ارتقا نہیں ملتا لیکن جو کچھ ملتا ہے اس کا تعلق اسی مادی دنیا سے ہے اور میر نے ان میں عوام کی زندگی کی عکاسی کی ہے اس لحاظ سے یہ مثنویاں بہت فطری ہیں۔

ایسی مثنویوں کے کردار ہماری ہی دنیا کے رہنے والے ہیں لیکن ان کی خصوصیات عام انسانوں کی خصوصیات سے بلند ضرور ہیں۔ میر نے ایسی مثنویوں میں تاثراتی فضا پیدا کرنے کے لیے ایسا کیا ہے اس لیے ان مثنویوں کے ہیرو اور ہیروئن دونوں حسین ہیں۔ عاشق کا حسین ہونا اگرچہ ضروری نہیں ہے اور عاشق کو زبردستی حسین بنا کر پیش کرنا پلاٹ کو مصنوعی بنانا ہے لیکن میر کے یہاں ہیرو عام طور سے حسین ہوتا ہے اور وہ اس بات کے قائل نہیں ہیں کہ ہیروئن بھی حسین ہو اسی لیے انھوں نے ہیروئن کے معاملے میں زیادہ حقیقت پسندانہ رویہ اختیار کیا ہے چنانچہ "شعلۂ شوق" میں پرس رام کے حسن کا ۲۶ شعروں میں احاطہ کیا ہے۔ مگر پرس رام کی بیوی کے حسن کا کوئی خاص جائزہ نہیں ملتا اسی طرح "دریائے عشق" کی ہیروئن کے حسن و جمال کا بھی کوئی خاص ذکر نہیں کیا ہے البتہ اس کو کہیں "مہ پارہ" اس کے ہونٹوں کو "لعل" اور کہیں اس کے پاؤں کو "نگار آلود" کہنے پر اکتفا کیا ہے۔ "عشقیہ" میں "افغان پسر" کے حسن کی تعریف کی ہے مگر اس کی محبوبہ کے حسن کا ذکر کہیں نہیں ملتا "جوان عروس" میں چند اشعار محبوبہ کی شان میں ملتے ہیں لیکن عام طور سے ہیروئن کی تعریف جس قدر مبالغہ آمیز انداز میں کی جاتی ہے اس سے میر نے بڑی حد تک گریز کیا ہے۔ برخلاف اس کے "اعجاز عشق" کی ہیروئن کی تعریف میں کافی اشعار لکھے ہیں۔

میر کی مثنویاں چوں کہ مختصر ہیں اس لیے محبوب کے سراپا نویسی کی زیادہ گنجائش نہیں نکل سکتی تھی اس قسم کے بیانات سے گریز کا اصل سبب یہ ہے کہ میر کی توجہ عاشق اور معشوق سے زیادہ

स्थान न था। इस प्रकार के लेखों को पृथक करने का मुख्य कारण यह था कि मीर की दृष्टि अधिकतर प्रेम के महत्त्व, उसके गौरव एवं महानता पर होती थी।

मीर के अफ़साना रूपी मसनवियों की मुख्य विशेषता उनका प्रेम एवं यथार्थ सत्य है। जो आडम्बर एवं जाल रहित है। इन चरित्रों पर मीर के महान व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप है। मीर ने अपनी प्रेमिका से आजीवन जो स्वार्थ-रहित प्रेम किया है उसी स्वार्थ-रहित प्रेम की झलक मीर की मसनवियों से प्रकट है। उनकी मसनवियों में नायक और नायिकाएँ दोनों ही परस्पर असीम प्रेम में सम्बद्ध हैं। इसका प्रदर्शन परसराम इन शब्दों में करता है:—

उसे भी मेरे साथ एख़लास है—दिलों में बहम राबेता ख़ास है।

दो दिलों के मध्य यही सम्बन्ध मीर की प्रेम सम्बन्धी मसनवियों की विशेषता है। उनकी अफ़साना रूपी मसनवियां इसी तथ्य को प्रकट करती हैं। चरित्र और प्रेम का यह सम्बन्ध उनकी मसनवियों में हर स्थान पर अटूट सा लगता है। "मोर नामः" भी मीर की एक अत्यन्त आकर्षक मसनवी है। जिससे यह स्पष्ट है कि पक्षीगण भी प्रेम भावना से हीन नहीं हैं। उदाहरणार्थ एक मोर (मयूर) और एक रानी में परस्पर प्रेम हो गया और दोनों ने प्रेम में अपना जीवन त्याग दिया।

परिणाम के विचार से मीर की सारी मसनवियां ट्रेजडी हैं। नायक और नायिका दोनों ही मृत्यु की मदिरा पीकर सदैव की नींद सो जाते हैं। कहीं पर पहले नायक की मृत्यु होती है तो कहीं पर नायिका मृत्यु-राक्षसी को अपनाती है। "दरिया-ए-इश्क़" "एज़ाज़-ए इश्क़" एवं "जवान उरूस" तथा "मोर नामा" में नायक मृत्यु अपनाने में प्राथमिकता प्राप्त करता है तथा 'शोला-ए-शौक़" और "इश्क़िया" में नायिका मृत्यु शैया पर सो जाती है। इन मसनवियों से यह स्पष्ट है कि मीर की दृष्टि में प्रेमी और प्रेमिका दोनों ही प्रेम की भीषण ज्वाला में भस्म हो जायँ यही सत्य प्रेम की पहचान है। चूंकि मीर स्वयं जीवन भर प्रेम की अग्नि में तपते और जलते रहे।

मीर की मसनवियां परिणाम के विचार से असत्य प्रतीत होती हैं। मुख्य रूप से "मोर नामा" के परिणाम को हृदय स्वीकार नहीं करता किन्तु इस मसनवी के अतिरिक्त अन्य मसनवियों में जहां नायक एवं नायिका की भावनाओं को कविता में चित्रित किया गया है सत्यता विद्यमान है। परिणाम के विषय में मीर अपने

خلوص عشق، انجام عشق اور روح عشق پر ہوتی ہے۔

میرؔ کی افسانوی مثنویوں کے کردار کی اعلیٰ خصوصیت ان کا خلوص اور ان کی صداقت ہے جو ریاکاری اور مکر و فریب سے پاک ہے۔ اور ان کرداروں پر خود میرؔ کی شخصیت کی چھاپ موجود ہے جس طرح میرؔ نے اپنی محبوبہ سے تادم آخر بے لوث محبت کی ہے اسی بے لوث محبت کی جھلک ان کی عشقیہ مثنویوں میں بھی جلوہ گر ہے۔ ان کی افسانوی مثنویوں میں ہیرو اور ہیروئن دونوں میں ایک دوسرے سے شدید محبت کا بے پناہ جذبہ موجزن ہے۔ اس کا اظہار پرس رام ان الفاظ میں کرتا ہے

اسے بھی میرے ساتھ اخلاص ہے

دلوں میں بہم رابطہ خاص ہے

دو دلوں کے درمیان یہی رابطہ میرؔ کی عشقیہ مثنویوں کی جان ہے اسی رابطہ پر ان کی افسانوی مثنویوں کا انحصار ہے اور خلوص و محبت کا یہ رشتہ ان کی مثنویوں میں کہیں ٹوٹتا نظر نہیں آتا ہے "مورنامہ" بھی میرؔ کی ایک بہت ہی دل چسپ مثنوی ہے اس میں میرؔ نے اس امر کا انکشاف کیا ہے کہ پرندے بھی عشق کا جذبہ رکھتے ہیں چنانچہ ایک مور اور ایک مورنی میں عشق ہوگیا اس عشق میں دونوں نے جان دے دی۔

انجام کے لحاظ سے میرؔ کی ساری مثنویاں ٹریجڈی ہیں ان میں ہیرو اور ہیروئن دونوں موت کا ساغر پی کر ابدی نیند سو جاتے ہیں۔ کہیں ہیرو پہلے جان بحق تسلیم ہوتا ہے اور کہیں ہیروئن پہلے اجل کو لبیک کہتی ہے۔ "دریائے عشق" "اعجاز عشق" "جوان عروس" "مورنامہ" میں ہیرو جان دینے میں سبقت کرتا ہے اور "شعلہ شوق" اور "عشقیہ" میں پہلے ہیروئن جام شہادت نوش کرتی ہے۔ ان مثنویوں سے یہ بات بالکل واضح ہو جاتی ہے کہ میرؔ کی نظر میں کامیاب عشق کی پہچان یہ ہے کہ عاشق و معشوق محبت کی آگ میں جل کر بھسم ہو جائیں۔ میرؔ چوں کہ ساری زندگی خود آتش عشق میں جلتے بھنتے رہے اس لیے ان کی نظر میں عشق کا مفہوم جلنا بھننا ہے۔

میرؔ کی مثنویاں انجام کے لحاظ سے بڑی حد تک غیر حقیقی ہیں خصوصاً "مورنامہ" کے انجام کو دل نہیں قبول کرتا ہے۔ مگر اس مثنوی کے علاوہ دیگر مثنویوں میں جہاں ہیرو اور ہیروئن کے جذبات کی عکاسی کی گئی ہے ان میں صداقت موجود ہے۔ انجام کے مقابلے میں میرؔ اپنی طبیعت سے مجبور ہیں اس لیے کہ وہ ایک المیہ دل و دماغ لے کر اس خاکدان میں آئے تھے ان کو کائنات کی ہر شئے غم واندوہ

स्वभाव से विवश हूँ चूँकि वह एक शोक संतप्त हृदय एवं मस्तिष्क लेकर उत्पन्न हुए अत: उन्हें संसार की प्रत्येक वस्तु शोक मग्न एवं दुःखी प्रतीत होती थी। ऐसी मसनवियों की उत्पत्ति उर्दू कविता में बहुत कम की गई है।

मीर की अफ़साना रूपी मसनवियों का प्रभाव बाद के कवियों पर पड़ा। मुख्य रूप से मुसहफ़ी की मसनवी "बहर-उल -मुहब्बत" मीर की "दरिया-ए-इश्क़" से प्रभावित होकर निर्मित की थी। इस मसनवी के अतिरिक्त उत्तरी भारत की अन्य मसनवियों में भी मीर के प्रेमी भावनाओं के चिन्ह प्राप्त हैं। मसनवी "असरार-ए-मुहब्बत" में नवाब मुहब्बत खाँ महब्बत ने "सीसी और पन्नों" दोनों को मृत्यु मदिरा का पान करते दिखाया है। इसी प्रकार क़ाज़ी मु० सादिक़ अख़्तर ने भी मसनवी "सरापा नूर" में नायक और नायिका दोनों को प्रेम के अथाह सागर में लुप्त हो जाने का दृश्य चित्रित किया है। इस प्रकार के परिणाम उत्तरी भारत की अधिकांश मसनवियों में रूपांकित हैं। इन सारी मसनवियों पर मीर के गहरे प्रभाव किसी न किसी रूप में पाये जाते हैं और मीर की अफ़साना रूपी मसनवियों की सफलता का यह प्रमाण है।

मीर की अक्सर मसनवियां ऐसी हैं जो स्वयं बीती हैं। उनसे हम मीर के जीवन से सुपरिचित हो सकते हैं। मसनवी "जोश-ए-इश्क़" में मीर ने प्रेम के प्रभावों को ही स्पष्ट नहीं किया बल्कि स्वयं बीती कथा का भी वर्णन किया है और शेरों की उत्पत्ति में स्वानुभवों का उपयोग किया है। अतएव कोई भी शेर सत्य मार्ग से पृथक नहीं है और वह प्रेम में जिस मन्ज़िल के मार्ग से गुज़रे हैं इसकी धूल उनके अन्तस्तल पर अंकित है। इस मसनवी में मीर ने अपनी प्रेमिका के रूप की प्रशंसा की है किन्तु यह प्रशंसा कृत्रिम नहीं प्रतीत होती। इस मसनवी में मीर ने अपनी दशा का चित्रण किया है। इस प्रकार के सत्य तथ्य उर्दू कविता में कमी के साथ मिलते हैं। इस मसनवी की एक मुख्य विशेषता यह भी है कि दृश्य अति-सुन्दर एवं मनोहर ढंग से प्रस्तुत किये गये हैं यद्यपि इनको वर्णित करने में पग-पग पर इस बात का भय बना रहता है कि कहीं सूखापन न आ जाए किन्तु मीर की यह मसनवी सत्य भावनाओं के चित्रण के साथ रूप के वर्णन का भी एक आश्चर्यजनक उदाहरण है। उर्दू मसनवी के इतिहास में इसका नाम स्वर्णिमा शब्दों में लिखा जायगा।

मीर की प्रेम सम्बन्धी मसनवियों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि उन्होंने अफ़साना रूपी मसनवियों को विस्तृत करने का भरसक प्रयत्न किया है और यदा-

میں ڈوبی نظر آتی تھی۔ ایسی مثنویوں کی تخلیق اردو شاعری میں بہت کم کی گئی ہے۔

میر کی افسانوی مثنویوں کا گہرا اثر بعد کے شعرا پر بھی پڑا۔ خصوصاً مصحفی نے مثنوی "بحر المحبت" میر کی "دریائے عشق" سے متاثر ہو کر لکھی ہے۔ اس مثنوی کے علاوہ شمالی ہند کی دوسری مثنویوں میں بھی میر کے جذبۂ عشق کے نقوش و نشانات تلاش کیے جا سکتے ہیں۔ مثنوی "اسرار محبت" میں نواب محبت خاں محبت نے "سسی پنو" دونوں کو جام شہادت نوش کرتے ہوئے دکھایا ہے۔ اسی طرح قاضی محمد صادق اختر نے بھی مثنوی "سراپا نور" میں ہیرو اور ہیروئن دونوں کے عشق میں فنا ہو جانے کا منظر پیش کیا ہے۔ اس قسم کا انجام شمالی ہند کی اکثر مثنویوں میں پیش کیا گیا ہے۔ ان ساری مثنویوں پر میر کے گہرے اثرات کسی نہ کسی شکل میں پائے جاتے ہیں اور میر کی افسانوی مثنویوں کی کامیابی کی یہ ایک دلیل ہے۔

میر کی بعض مثنویاں آپ بیتی کی حیثیت رکھتی ہیں جن سے ہم ان کی سوانح حیات مرتب کر سکتے ہیں مثنوی "جوش عشق" میں میر نے عشق کے اثرات ہی واضح نہیں کیے ہیں بلکہ ان پر جو بیتی ہے اس کی داستان بھی پیش کی ہے اور اشعار کی تخلیق میں ذاتی تجربے سے کام لیا ہے۔ اسی لیے کوئی شعر بھی راہ صداقت سے ہٹا ہوا نہیں ہے اور وہ عشق میں جس جادۂ منزل سے گزرے ہیں اس کی گرد ان کے دامن دل پر بھی ہوئی ہے

اس مثنوی میں میر نے اپنے محبوب کے حسن کی بھی تعریف کی ہے مگر حسن کی یہ تعریف خیالی نہیں معلوم ہوتی اس مثنوی میں میر نے اپنے سارے حالات نظم کر دیے ہیں اس قسم کی سچی اور صحیح باتیں اردو شاعری میں نظر سے بہت کم گزرتی ہیں۔ اس مثنوی کی ایک خوبی یہ بھی ہے کہ واقعات حسین اور دل کش انداز میں پیش کیے گئے ہیں حالاں کہ واقعات کے بیان میں یہ خدشہ قدم قدم پر رہتا ہے کہ کہیں ان پر خشکی اور بے کیفی غالب نہ آ جائے مگر میر کی یہ مثنوی سچے جذبات کی تصویر کے ساتھ ہی حسن بیان کا بھی ایک نمونہ ہے۔ اردو مثنوی کی تاریخ میں اس مثنوی کو ہمیشہ ایک بلند مرتبہ حاصل رہے گا۔

میر کی عشقیہ مثنویوں کے مطالعہ سے معلوم ہوتا ہے کہ انھوں نے اپنی افسانوی مثنویوں میں تخیل سے کام لیا ہے اور کہیں کہیں مافوق العادت عناصر کو بھی داخل کر دیا ہے جن کو آج کے سائنسی دور میں حقیقت پسند انسان باور نہیں کرے گا۔ میر نے منظریہ مثنویاں بھی لکھی ہیں اس سے پتا چلتا ہے کہ

कदा अपने स्वभाव की अमिट छाप डाल दी है। जिनको वर्तमान युग में सत्य प्रिय व्यक्ति पसन्द न करेगा।

मीर ने दृश्यात्मक मसनवियां भी निर्मित की हैं इससे स्पष्टीकरण हो जाता है कि उन्हें प्राकृतिक उत्पत्तियों से अवश्य प्रेम था। इसकी उत्पत्ति में मीर के कुछ सैदनामों को उपस्थित कर सकते हैं। मीर ने दो (२) सैदनामों की रचना की है। इनमें ५४९ शेर हैं। इन सैदनामों में १७ ग़ज़लें भी हैं जिनमें १४६ शेर हैं। इस प्रकार इन सैदनामों में कुल ६९५ शेर हैं।

इन सैदनामों को एक प्रकार की डायरी कह सकते हैं। इनके माध्यम से हम नवाब आसफ़ुद्दौला के युग-कालीन कई स्थानों का भूगोल भी समझ सकते हैं।

"कुल्लियात-ए-मीर" में निन्दक मसनवियां भी सम्मिलित हैं। ये दो भागों में विभाजित की जा सकती हैं। प्रथम व्यक्ति गत एवं द्वितीय व्यक्ति सम्बन्धित नहीं हैं। मीर को कुछ व्यक्तियों द्वारा दुःख पहुँचा था अतः उन्होंने उनके विरोध में भी अपनी लेखनी का उपयोग किया। इन मसनवियों में ईर्ष्या एवं डाह के दर्शन होते हैं। उनकी सहन क्षमता कभी उनका साथ छोड़ देती थी क्योंकि मीर अत्यन्त अनुभवी एवं कोमल हृदय थे और संसार की कई रीतियाँ उन्हें पसन्द न थीं अतः झन्कार निकल जाती थी। उदाहरणार्थ मीर ने "दूर हज्वे ना अहल मुसम्मा ब ज़वान ज़द आलम" में अपना स्वभाव प्रकट किया है।

अन्यथा मीर जैसे सन्त, शोकग्रस्त एवं शोक-संतप्त तथा घायल दिल को किसी की निन्दा करने से क्या तात्पर्य ? किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि वह जब विवश हो जाते थे तो लेखनी क्रियान्वित होने लगती थी उदाहरणार्थ जब बक़ा मीर के विपक्षी बन गये तो मीर ने उनकी निन्दा की। इसमें उन्होंने अपने साहित्यिक व्यक्तित्व के प्रदर्शन के साथ ही मिर्ज़ा सौदा के कवित्त गौरव का प्रदर्शन किया है। क्योंकि बक़ा ने सौदा की काव्य-साधना को तुच्छ कहा था। इसमें मीर के साहस पर प्रकाश पड़ता है।

मीर ने एक मसनवी "मज़म्मत-ए-आइनादार" की रचना की है। श्री अज़हर राही[1] का विचार है कि मीर ने यह मसनवी शायद इनायत उल्लाह अर्थात् कल्लू हज्जाम (सौदा का शिष्य) के लिए लिखी थी। वास्तव में मीर को इससे घृणा थी कि निम्न वर्ग के लोग भी उर्दु कविता की ओर आकर्षित हों। उनकी दृष्टि में कविता बाज़ारी बेहनों, धुनियों एवं जुलाहों से कहीं गौरव पूर्ण है:—

१. दिल्ली कालेज मैगज़ीन "मीर" न० सन् १९६२ ई० पृष्ठ स० १९१।

ان کو فطرت سے دلچسپی ضرور تھی اس کے ثبوت میں ہم میر کے چند صید ناموں کو پیش کر سکتے ہیں۔ میر نے دو "صید نامے" لکھے ہیں جو ۵۴۹ اشعار پر مشتمل ہیں۔ ان صید ناموں کے درمیان ۱۷ غزلیں بھی ہیں جن میں ۱۴۶ اشعار ہیں اس طرح میر نے صید ناموں کے سلسلے میں کل ۶۹۵ اشعار کہے ہیں۔

یہ صید نامے ایک قسم کی ڈائری کی حیثیت رکھتے ہیں۔ ان صید ناموں کے ذریعہ ہم نواب آصف الدولہ کے عہد کے بہت سے مقامات کا جغرافیہ بھی سمجھ سکتے ہیں

میر کی کلیات میں ہجو یہ مثنویاں بھی شامل ہیں جو دو حصوں میں تقسیم کی جا سکتی ہیں۔ شخصی اور غیر شخصی۔ میر کو بعض اشخاص سے صدمہ پہنچا تھا اس لیے انھوں نے ان کے خلاف دل کی بھڑاس نکالی ہے ان مثنویوں میں عناد و تعصب کی آمیزش ہے

میر چوں کہ بہت حساس اور نازک مزاج واقع ہوئے تھے اس وجہ سے ان کو اہل دنیا کی بہت سی باتیں ناگوار معلوم ہوتی تھیں۔ اس لیے کبھی کبھی ان کا شیشۂ ضبط و تحمل ٹوٹ جاتا تھا اور اس سے جھنکار نکل جاتی تھی۔ چنانچہ میر نے " در ہجو نا اہل مسمی بہ زبان زد عالم" میں اپنی مزاجی کیفیت کا اظہار کیا ہے۔ ورنہ میر جیسے درویش صفت، درد مند اور دل ریش کو ہجو سے کیا نسبت مگر محسوس ایسا ہوتا ہے کہ جب وہ عاجز آجاتے تھے تو قلم اٹھا لیتے تھے۔ چنانچہ جب بقا میر کے مدعی بن بیٹھے تو میر نے ان کے خلاف ہجو لکھی اس میں انھوں نے اپنی ادبی شخصیت کے اعتراف کے ساتھ ہی مرزا سودا کے شاعرانہ رتبے کا بھی اعتراف کیا ہے کیوں کہ بقا نے مرزا سودا کی شاعری کو بھی "پست" کہا تھا اس سے میر کی علوئے ہمتی پر روشنی پڑتی ہے

میر نے ایک مثنوی " مذمت آئینہ دار" لکھی ہے۔ اظہر[1] راہی صاحب کا خیال ہے کہ غالباً یہ مثنوی میر نے عنایت اللہ عرف کلو حجام شاگرد سودا کی ہجو میں لکھی ہے در اصل میر اس بات کے خلاف تھے کہ پست طبقہ کے لوگ شاعری کی طـــرف متوجہ ہوں۔ ان کا خیال تھا کہ شاعری حجام، نداف اور بزاز جیسے پیشہ وروں سے بلند چیز ہے

موشگافوں کا نہیں ہے نام اب
مدعیٔ شعـــر ہیں حجام اب

---

[1] دلی کالج میگزین میر نمبر ۱۹۶۲ء صفحہ ۱۹۱

'मूशिगाफ़ों का नहीं है नाम अब—मुर्दई-ए-शेर हैं हज्जाम अब'

इस मसनवी में उन्होंने नाई उद्योग की ख़ुब मरम्मत की है और नाई की कविता ही नहीं प्रस्तुत किया अपितु एक अद्वितीय युद्ध का आरम्भ कर दिया है और नाई उद्योग के विरुद्ध एक भीषण अग्निकाण्ड प्रज्जवलित कर दिया है ।

मीर ने एक अन्य मनोहर मसनवी लिखी है । जिसका शीर्षक "शख़्स-ए-हेच मदां के दावा-ए-हमादानी दाश्त" है । इसको गर्व था कि वह सभी विद्याओं का प्रकाण्ड पण्डित था किन्तु वह निरा अज्ञानी था । उदाहरणार्थ वह "ईहाम" को बहराम गोर समझता था । "तजनीस" का अर्थ अस्प "घोड़ा" बताया था । "बहर-ए-रमल" उसकी दृष्टि में एक सरिता का नाम था । "नख़्ल" को वह एक टापू समझ बैठा था । उसको अपने ढोलक वाद्य एवं गायन कला पर भी गर्व था किन्तु उसमें भी अयोग्य था ।

इस स्थान पर मीर ने उसकी अज्ञानता पर व्यंग किया है । इस मसनवी मे उनकी रचना रीति में तीखापन नहीं है अपितु उनकी महानता प्रकाशित हो उठती है ।

मीर की ऐसी मसनवियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि कविता उस समय एक साधारण सी वस्तु बन गई थी अतएव निम्न वर्ग के लोग भी इसकी ओर आकर्षित होते जा रहे थे । जुलाहे और धुनिये भी कवि होगये थे मीर को यह असह्य था । इसे उन्होंने "तम्बीहुल जुहहाल" में व्यक्त किया है ।

इस मसनवी में मीर ने यह भी प्रकट किया है कि कोई मुख्य और प्रारम्भिक लाभ कविता करने में नहीं है । सत्य तो यह है कि जैसे वर्तमान समय में कविता द्वारा जीविका नहीं चलाई जा सकती वैसे ही मीर युग में भी असम्भव था । इस मसनवी से एक महान सत्य स्पष्ट है जो वर्तमान युग के कवियों के लिए भी शिक्षा है ।

"फिर हुसूल इससे न दुनियां है न दीं—कोई हाजत इससे वाबस्तः नहीं
गर चमार इस कारखाने में न हो—टूटे जूते को कहां लेकर फिरो
चार व नाचार उसकने जाना पड़े—कौड़ियां दे जूती गठवाना पड़े
हाजत इस फ़िरक़े से मुतलक़यां नहीं—जो न हो शायर तो कुछ नुक़सां नहीं
यह तो मैं दुनिया है इस फ़न का कमाल—दीन का इस फ़िरक़े के पूछो न हाल
फिक्र हो जिस जाय रौनक़ बख़्श समां—वां को दीं वारी रक्खो और दिल जमा"

काव्य साधना, धार्मिक एवं सांसारिक दोनों दृष्टिकोण से हानि का कारण है । अतः मीर ने लोगों को काव्य रुचि से पृथक रखने का भरसक प्रत्यन किया है ।

اس مثنوی میں میر نے حجاموں کے پیشہ کی دھجیاں اڑائی ہیں اور حجام کی شاعری کے نقائص ہی نہیں پیش کیے ہیں بلکہ ایک حیثیت سے طبقاتی جنگ چھیڑ دی ہے اور ان کے طبقے کے خلاف بغض وعناد کی آگ بھڑکائی ہے۔

میر نے ایک اور دل چسپ مثنوی لکھی ہے اس کا عنوان ہے "شخصے ہیچ مداں کہ دعوائے ہمہ دانی داشت" اس کو دعویٰ تھا کہ اس کو ہر علم پر عبور ہے مگر کسی علم سے بخوبی واقف نہیں تھا چنانچہ وہ "ایہام" کو بہرام گور سمجھتا تھا "تجنیس" کے معنی اسپ بتائے تھے۔ "بحر رمل" اس کی نظر میں ایک دریا کا نام تھا۔ نخل کو وہ ایک جزیرہ سمجھ بیٹھا تھا۔ اس کو ڈھول بجانے پر بھی ناز تھا خوش گلوئی کا بھی دعویٰ تھا مگر وہ ہر فن میں صفر تھا۔ ہر چند کہ میر نے اس کی بے بضاعتی کا مذاق اڑایا ہے مگر اس مثنوی میں ان کا لب و لہجہ تلخ نہیں ہے بلکہ ان کی ظرافت اور زندہ دلی پر روشنی پڑتی ہے۔

میر کی اس طرح کی مثنویوں سے پتا چلتا ہے کہ ان کے عہد میں شاعری بہت عام ہوگئی تھی اور پست طبقے کے لوگ بھی اس فن شریف کی طرف توجہ کرنے لگے تھے۔ اور بزاز اور نداف بھی شاعر ہوگئے تھے یہ بات میر کو ناپسند تھی اس کا اظہار انھوں نے مثنوی "تنبیہہ الجہال" میں کیا ہے اس مثنوی میں میر نے یہ بھی بتایا ہے کہ شاعری سے کوئی خاص دنیاوی فائدہ نہیں ہے حقیقت یہ ہے کہ جس طرح عہد حاضر میں شاعری کے ذریعہ پیسہ نہیں کمایا جاسکتا ہے اسی طرح میر کے عہد میں بھی شاعری ذریعہ معاش بننے کی صلاحیت نہیں رکھتی تھی۔ اس مثنوی سے ایک زبردست حقیقت سامنے آتی ہے جو دور حاضر کے شعراء کے لیے بھی عبرت ناک ہے

پھر حصول اس سے نہ دنیا ہے نہ دیں　　کوئی حاجت اس سے وابستہ نہیں
گر چمار اس کارخانے میں نہ ہو　　ٹوٹے جوتے کو کہاں لے کر پھرو
چار و نا چار اس کنے جانا پڑے　　کوڑیاں دے جوتی گھٹوانا پڑے
حاجت اس فرقے سے مطلق یاں نہیں　　جو نہ ہو شاعر تو کچھ نقصاں نہیں
یہ تو دنیا میں ہے اس فن کا کمال　　دین کا اس فرقے کے پوچھو نہ حال
کذب ہو جس جائے رونق بخش سمع　　واں کی دیں داری رکھو اور دل جمع

شاعری دنیاوی اور دینی دونوں اعتبار سے خسارہ کا باعث ہے اس لیے میر نے عوام کو شاعری کے چسکے سے باز رکھنے کی تلقین کی ہے

मीर कुछ व्यक्तियों के स्वभाव से अप्रसन्न रहते थे उदाहरणार्थ उनको सौदा का "ज़ौक़-ए-सगं' पसन्द नहीं था। अतः उन्होंने अपनी मसनवी "हज्व-ए-आक़िल" में "नाकसे के बसगां अल्ने तमाम दाश्त" की रचना की।

मीर की एक मसनवी से स्पष्ट है कि वह लोगों के पेटूपन से घृणा करते थे। "हज्व-ए-अकबल" में इससे घृणा के भावों का आभास होता है। उसमें बताया है कि उसका उदर सदफ़ी देग है, उसकी आंत शैतान की आंत है। वह भोजन पर ऐसे गिरता है जैसे मांस पर चील टूटती है—एक बार वह इनका अतिथि हो गया और कितना खाया इन्हीं के शब्दों में सुनिये:—

"चार मन गाजरों का क़लिया था—वह मनो देग सीख दलिया था
रोटियां किस क़दर बताऊँ मैं—जिसको दो चार साल खाऊँ मैं
भूके उसका जो जी निकल जाए—गोर में भी कफ़न निगल जाए"

मीर परनिन्दा में अधिक सफल न हो सके किन्तु व्यक्तिगत एवं स्वयं सम्बन्धी निन्दा में सफल हो गये हैं। चूंकि वह आन्तरिक तथ्यों के कवि थे अतः स्वयं सम्बन्धी दशाओं का अत्यन्त रोचक वर्णन किया है। इसी कारणवश जहाँ उन्होंने अपने दोषों को प्रकट किया है, अपनी निन्दा की है वहाँ सत्यता की नव पंखड़ियां बिखेर दी हैं। उनकी ऐसी मसनवियों से शोक, आन्तरिक टीस एवं दर्द का स्पष्टीकरण है। "नसंग नामा" में मीर ने अपनी यात्रा की कठिनाइयों का वर्णन किया। यह मीर की बहुत बड़ी मसनवी है:—

"क्या कहूं जो अज़ीयतें देखीं—हर क़दम पर क़यामतें देखीं
जो पढ़ेगा "नसग नाम:" यां—होगी सारी हक़ीक़त उस पे अयां"

मीर की यह मसनवियां दिखाने में तो "नसंग-गाँव" की निन्दा करती हैं किन्तु इस निन्दा की ओट में भारत की जीविका के साधनों के दृश्य चित्रित किये गये हैं। जिसके भाग्य में त्रास, विपत्तियां और दुःख, पीड़ा और शोक वर्णित हैं। इसको "भारत के रहन-सहन के हालात का एक जायज़ा" भी कहा जा सकता है।

मीर ने एक मसनवी "हज्व-ए-ख़ाना-ए-ख़ुद" लिखी है। इससे उनके घर की दुर्दशा प्रकट हो जाती है। यह घर इतना कमज़ोर है कि समीर का एक झोंका इसको हिलने पर विवश कर देता है। उसके एक मज़बूत भाग की यह दशा है:—

"कहीं सूराख़ है कहीं है चाक—कहीं झड़ झड़ के ढेर सी है ख़ाक
कहीं घोसों ने खोद डाला है—कहीं चूहे ने सर निकाला है
कहीं घर है किसी छछूंदर का—शोर हर कोने में है मच्छर का
कहीं मकड़ी के लटके हैं जाले—कहीं झींगुर के बे मज़ा नाले

میر کچھ لوگوں کے عادات و خصائل سے بھی نالاں رہتے تھے چنانچہ ان کو سودا کا "ذوقِ سگ" ناپسند تھا اس بنا پر انھوں نے مثنوی "ہجو عاقل" میں "نا کہے کہ بہ سگاں اُنسے تمام داشت" کی تخلیق کی۔ ایک مثنوی سے ظاہر ہوتا ہے کہ وہ لوگوں کے پیٹو پن سے بھی نفرت کرتے تھے "ہجو اکول" میں اس سے نفرت کا اظہار کیا ہے اور بتایا ہے کہ اس کا شکم "صد نی دیگ" ہے۔ اس کی آنت "شیطان کی آنت" ہے وہ کھانے پر اس طرح گرتا ہے جیسے چیل گوشت پر ٹوٹتی ہے۔ ایک بار وہ ان کا بھی مہمان ہو گیا اور کتنا کھایا انھیں کی زبانی سُنیے

چار من گاجروں کا قلیہ تھا | وہ منی دیغ سیخ دلیہ تھا
روٹیاں کس قدر بتاؤں میں | جس کو دو چار سال کھاؤں میں
بھو کے اس کا جو جی نکل جائے | گور میں بھی کفن نگل جائے

میر غیر شخصی ہجویات میں زیادہ کامیاب نہیں ہوئے ہیں مگر شخصی یا ذاتی ہجویات میں انھوں نے کامیابی حاصل کی ہے۔ چوں کہ وہ داخلیت کے شاعر تھے اس لیے اپنے ذاتی جذبات کا تجزیہ بہتر طور پر کر سکتے ہیں یہی وجہ ہے کہ جہاں انھوں نے اپنے ہی دامن کی دھجیاں اڑائی ہیں وہاں صحت و صداقت کی پنکھڑیاں بکھیر دی ہیں ان کی اس قسم کی مثنویوں سے نالہ و فریاد کا دھواں اٹھتا ہوا نظر آتا ہے۔ "تنگ نامہ" میر کی ایک طویل مثنوی ہے جس میں انھوں نے اپنے سفر کی مشکلات کا ذکر کیا ہے

کیا کہوں جو اذیتیں دیکھیں | ہر قدم پر قیامتیں دیکھیں
جو پڑھے گا تنگ نامہ یاں | ہو گی ساری حقیقت اس پہ عیاں

میر کی یہ مثنوی بہ ظاہر تو تنگ گاؤں کی مذمت میں ہے مگر اسی مذمت کے پس پردہ اس میں ہندوستان کے معاشی حالات پیش کیے گئے ہیں۔ جن کی قسمت میں مفلسی اور پریشان حالی لکھی ہے۔ اس کو "ہندوستان کے معاشی حالات کا ایک جائزہ" بھی کہا جا سکتا ہے

میر نے ایک مثنوی "ہجو خانۂ خود" لکھی ہے اس سے ان کے گھر کی خستہ حالی کا نقشہ سامنے آجاتا ہے یہ مکان اس قدر کمزور ہے کہ جب ہوا چلتی ہے تو اس کی دیواریں کانپنے لگتی ہیں اس کا ایک حجرہ کسی قدر مضبوط ہے مگر اس کا بھی یہ حال ہے

کہیں سوراخ ہے کہیں ہے چاک | کہیں جھڑ جھڑ کے ڈھیر سی ہے خاک
کہیں گھوسوں نے کھود ڈالا ہے | کہیں چوہے نے سر نکالا ہے

कोने टूटे हैं ताक़ फूटे हैं—पत्थर अपनी जगह से छूटे हैं
ईंट व चूना कहाँ से गिरता है—जो इसी हुजरे हो में फिरता है"

इस कमरे के आगे दालान के तख़्ते धुएँ से काले हो गये है। बहुत से टूटी दशा में हैं। मकान की मुंडेरों पर यदि कोई पक्षी बैठ जाता है तो वह गिरने लगती है।

मीर की व्यक्ति सम्बन्धी मसनवियां एवं पर व्यक्ति सम्बन्धी मसनवियां दोनों ही अपने समाज का दर्पण हैं। जिनको समाजी मसनवियां कहना उचित है। मसनवी "मुर्ग़ बाज़ां" में मीर ने लखनऊ के जीवन-व्यवस्था पर व्यंग किया है। चूंकि मुर्ग़बाज़ी लखनऊ के अमीरों का सर्वाधिक प्रिय खेल था अतः मीर ने खुलकर उसका विरोध न किया। किन्तु इसे वे घृणा की दृष्टि से ही देखते थे।

"आदमी जो बड़े कहाते हैं—मुर्ग़ मारे बग़ल में आते हैं"

उच्च श्रेणी के व्यक्ति का सर्व स्पष्ट प्रतीक उसके बग़ल में दबा हुआ मुर्ग़ है। यह मसनवी लखनऊ के समाज का यथार्थ चित्रण है। मीर की मसनवी "अजगर नामा" व्यक्तिगत होने के अतिरिक्त सामाजिक भी है। क्योंकि मीर ने इस मसनवी में उल्लेख किया है कि उनके युग के समाज में कवियों की संख्या मे वृद्धि होती जा रही थी। मसनवी "अजगर नामा" उदाहरणीय भाव में है। इसमें मीर ने स्वयं को अजगर स्वीकार किया है। और अन्य कवियों मे किसी को सर्प, किसी को जोंक और किसी को छिपकली व केचुआ आदि आदि। किसी को मूषक भी स्वीकार किया है। इस मसनवी की मुख्य विशेषता यह है कि उसमें अंकित करने का दशा ज्ञान भिन्न-भिन्न स्थानों पर होता है। उदाहरणार्थ उन्होंने अजगर के बल, रूप और और फुफकार का सही चित्रण किया है। इस मसनवी म हर स्थान पर मीर ने उदाहरणीय भाव को स्थान प्रदान किया है। इसमें वह सफल हुए हैं इस प्रकार की उदाहरणीय मसनवियों के रूप उर्दू कविता में शायद ही कभी दिखाई पड़ें। मसनवी के अन्त में मीर ने असत्यता को स्थान नहीं दिया बल्कि सत्यता का उचित रूप चित्रित किया है:—

"मीर की क़द्र क्या उनके कुछ हाथ है—जो वत्बा है मेरा मेरे साथ है
कहाँ पहुंचे मुझ तक यह कीड़े हक़ीर—गया सांप पीटा करें अब लकीर"

मीर ने कुछ ऐसी मसनवियों की रचना की है जिनका सम्बन्ध सामाजिक दोषों से है। उदाहरणार्थ "मज़म्मत-ए-दुनियां" यह नया विषय नहीं है। यह फ़ारसी और उर्दू कविताओं में साधारण है। किन्तु मीर ने मसनवी के मोहक भाव की

کہیں گھر ہے کسی چھچھوندر کا شور ہر کونے میں ہے مچھر کا
کہیں مکڑی کے لٹکے ہیں جالے کہیں جھینگر کے بے مزہ نالے
کونے ٹوٹے ہیں طاق پھوٹے ہیں پتھر اپنی جگہ سے چھوٹے ہیں
اینٹ چونا کہیں سے گرتا ہے جی اسی حجرے ہی میں پھرتا ہے

اس حجرے کے آگے جو ایوان ہے اس کا بھی حال برا ہے۔ تختے دھویں سے سیاہ ہیں۔ بہت سے شکستہ ہیں مکان کی منڈیریں گرتی جا رہی ہیں اور منڈیر پر کوئی پرندہ آکر بیٹھ جاتا ہے تو اس کے گرنے کا خدشہ لاحق ہو جاتا ہے

میر کی شخصی اور غیر شخصی مثنویاں دونوں اپنے سماج کی آئینہ دار ہیں جن کو سماجی مثنویاں کہنا چاہیے مثنوی "مرغ بازاں" میں میر نے لکھنو کی معاشرت پر طنز کیا ہے۔ مرغ بازی چونکہ لکھنو کے امراء کا محبوب شغلہ تھا اسی لیے میر نے کھلم کھلا اس کی مذمت نہیں کی ہے مگر اس کو اچھی نظر سے بھی انہیں نہیں دیکھا ہے

آدمی جو بڑے کہاتے ہیں مرغ مارے بغل میں آتے ہیں

بڑے آدمی کی پہچان یہ ہے کہ اس کے بغل میں مرغ ہو گا یہ مثنوی لکھنو کے ماحول کی صحیح آئینہ دار ہے۔ میر کی مثنوی " اژدر نامہ" شخصی ہونے کے باوجود سماجی بھی ہے۔ کیونکہ میر نے اس مثنوی میں بتایا ہے کہ ان کے عہد میں شعراء کس طرح تیزی سے پیدا ہوتے جا رہے تھے اور معیار سخن گھٹاتے جا رہے تھے۔ مثنوی " اژدر نامہ" تمثیلی انداز میں کہی گئی ہے۔ اس میں میر نے خود کو اژدر قرار دیا ہے اور دیگر شعراء کو سانپ، کچھوا جونک، چھپکلی، گرگٹ، مینڈھک اور چوہا تصور کیا ہے۔ اس مثنوی کی ایک خوبی یہ بھی ہے کہ اس میں مختلف مقامات پر مصورانہ بیانات ملتے ہیں مثلاً انھوں نے اژدر کی قوت، ہیئت اور پھنکار کی صحیح تصویر کھینچی ہے۔ اس مثنوی میں میر نے بڑی کامیابی کے ساتھ ہر موقع پر تمثیلی انداز برقرار رکھا ہے۔ اس قسم کی تمثیلی مثنویاں اردو شاعری میں کم نظر آتی ہیں۔ مثنوی کے آخر میں مجاز کے رُخ سے نقاب اٹھا دی ہے اور حقیقت کا جلوہ دکھایا ہے

میر کی قدر کیا ان کے کچھ ہاتھ ہے جو رتبہ ہے میرا مرے ساتھ ہے
کہاں پہونچیں مجھ تک یہ کیڑے حقیر گیا سانپ پیٹا کریں اب لکیر

میر نے چند مثنویاں ایسی بھی لکھی ہیں جن کا تعلق سماج کی خرابیوں سے ہے مثلاً "مذمت دنیا" ہر چند

रचना से इस विषय को गौरवान्वित किया है। "किज़्ब" को वर्णित करने में मीर ने जो मसनवी लिखी है उसके लिए भाषणीय भाव अपनाया है और उसी असत्य को आकार में लाकर उसके कामों को खोल दिया है।

मीर की कुल मसनवियों (कुल्लियात-ए-मीर) में एक "जंग नाम:" भी प्राप्त हुआ है। जिसको मदहिया भी कहा जा सकता है और रज़्मिया भी। इस मसनवी में मीर ने नवाब आसफ़ुद्दौला और नवाब रामपुर के मध्य परस्पर युद्ध का रूप चित्रित किया है। इस मसनवी में युद्ध के स्पष्ट आकार भी प्राप्य हैं जिनसे इस युग के युद्ध के ढंगों पर प्रकाश पड़ता है। इस मसनवी की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें त्रुटि से काम नहीं लिया गया है।

मीर ने एक मसनवी आगा रशीद ख़त्तात[1] की प्रशंसा में रचित की है। इन्होंने अपनी लेखनी के बल से इस मसनवी में ओज[2] उत्पन्न कर दिया है। और तुलनात्मक ढंग अपनाया है। कथन है कि यह ख़त्तात जब मद निर्मित करता है तो महबूब की "भौं" मिला देता है। "अलिफ़" सुरूप प्रेमिका प्रतीत होता है तथा "लाम" लिखता है तो ऐसा अनुभव होता है कि प्रेमिका के बालों का आभास होता है।

मीर ने आलिमयां मसनवियां अधिक निर्मित की हैं किन्तु जब भी उन्हें दुःखों से मुक्ति मिलती थी तो "तरबिया" भी लिखते थे। निराशा के अत्याचारों का सामना करने वाले कवियों ने यदा-कदा उनकी किरणों को बांध लिया है। और इसका भरसक प्रयत्न किया है। नवाब आसफ़ुद्दौला बहादुर के विवाह के सम्बन्ध में जो मसनवी लिखी है उसके उत्सव के दृश्यों और नगर के प्रकाश का रोचक वर्णन किया है।

> "हर तरफ़ शहर में है आराइश — रहरवां को नहीं है गुन्जाइश
> शीशा बाज़े फ़लक है आतश बाज़ — कहकशां से हुआ हवाई साज़
> नहीं रस्ते में रोशनी के लिये — नज़्म है चश्म-ए-रोशनी के लिए"

आगे चलकर हाथियों की पंक्तियों का वर्णन किया है। बताया है कि किस गौरव एवं शान के साथ हाथी उत्सव में सम्मिलित थे। मीर ने अपनी एक मसनवी में होली तथा विवाह के सम्बन्ध में बताया है कि होली के अवसर पर लखनऊ के दृश्य बड़े मनोहारी होते थे। बड़ी चहल-पहल रहती थी। इस मसनवी में स्थान-स्थान पर होली के उत्सवों को चित्रित किया है—

१. लिखने वाला। २. महानता।

کہ یہ کوئی نیا موضوع نہیں ہے فارسی اور اردو میں عام ہے مگر میرؔ نے اپنے دل کش طرزِ بیان کی مدد سے اس موضوع میں جان ڈال دی ہے۔ کذب کے بیان میں میرؔ نے جو مثنوی لکھی ہے اس کے لیے خطابیہ انداز اختیار کیا ہے اور جھوٹ کو متشکل کر کے اس کے کرتوتوں سے آگاہ کیا ہے

"کلیاتِ میرؔ" میں ایک "جنگ نامہ" بھی ملتا ہے جس کو مدحیہ بھی کہا جا سکتا ہے اور رزمیہ بھی اس مثنوی میں میرؔ نے نواب آصف الدولہ اور نواب رام پور کے مابین جنگ کا نقشہ کھینچا ہے اور نواب آصف الدولہ کی شجاعت کی داد دی ہے۔ اس مثنوی میں جنگی تفصیلات بھی ملتی ہیں جن سے اس عہد کے فنونِ جنگ پر روشنی پڑتی ہے اس مثنوی کی بڑی خوبی یہ ہے کہ اس میں مبالغے سے کام نہیں لیا گیا ہے

میرؔ نے ایک مثنوی آغا رشید خطاط کی تعریف میں بھی لکھی ہے اور فنِ خطاطی کی مناسبت سے تشبیہات سے کام لیا ہے جس سے دل کشی بڑھ گئی ہے۔ لکھتے ہیں کہ یہ خطاط جب "مد" بناتا ہے تو محبوب کی ابروے ملا دیتا ہے "الف" قامت نکورویاں معلوم ہوتا ہے اور "لام" میں زلف سلسلہ مویاں کا لطف آتا ہے

میرؔ نے المیہ مثنویاں زیادہ لکھی ہیں مگر جب کبھی ان کوئٹوں سے فراغ حاصل ہوتا تھا تو "طربیہ" بھی لکھتے تھے۔ یاس کی ظلمت سے کھیلنے والے شاعر نے بعض وقت رجائیت کی کرنوں کو گرفت میں لینے کی بھی کوشش کی ہے۔ نواب آصف الدولہ بہادر کی کدخدائی کے سلسلے میں جو مثنوی لکھی ہے۔ اس میں شادی کے مناظر، شہر کی روشنی وغیرہ کا بڑی تفصیل سے ذکر کیا ہے

ہر طرف شہر میں ہے آرائش ۔۔۔ رہ رواں کی نہیں ہے گنجائش
شیشہ باز فلک ہے آتش باز ۔۔۔ کہکشاں سے ہوا ہوائی ساز
نہیں رستے میں روشنی کے دیے ۔۔۔ نجم ہے چشم روشنی کے لیے

آگے چل کر ہاتھیوں کی قطار کا ذکر کیا ہے۔ اور بتایا ہے کہ کس سجاوٹ کے ساتھ ہاتھی جلوس میں شریک تھے میرؔ نے اپنی ایک مثنوی "جشن ہولی وکدخدائی" میں بتایا ہے کہ ہولی کے زمانے میں لکھنؤ میں کس قدر چہل پہل ہوتی ہے۔ اس مثنوی میں جا بہ جا ہولی کے زمانے کی رنگ رلیوں کی طرف اشارہ کیا ہے

قمقمے جو گلال کے مارے ۔۔۔ مہ وشاں لالہ رخ ہوئے سارے
خوان بھر بھر عبیر لاتے ہیں ۔۔۔ گل کی پتی ملا اڑاتے ہیں

"कुमकुमे ओ गुलाल के मारे — मह वशां लाला पड़ हुए सारे
ख्वान भर भर अबीर लाते हैं — गुल की पत्ती मिला उड़ाते हैं"

मसनवी के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि नवाब आसफ़उद्दौला के समय में होली मुख्य रूप से बड़े ही आकर्षक ढंग से मनाई जाती थी और स्वयं आसफ़-उद्दौला बहादुर इसमें बड़ी रुचि लेते थे। मसनवी "कद ख़ुदाई विष्णु सिंह" का वर्णित भाव पूर्ण रूप से नवाब आसफ़उद्दौला के विवाह वर्णन से अधिकता लिए मिलता है किन्तु मीर ने नवाब बहादुर और विष्णु सिंह के विवाह को चित्रित करने में उनके गौरव और मान का पूर्ण ध्यान रक्खा है। यही इस मसनवी की स्पष्ट विशेषता है। मीर की मसनवियों में "साक़ी नामा" भी सम्मिलित है जिसकी ओर उर्दू के कवियों का ध्यान अधिक नहीं गया किन्तु अरबी और फ़ारसी के कवियों ने इस कला को मुख्य रूप से उन्नति का मार्ग प्रदर्शित किया है। मीर ने अपने साक़ीनामे का आरम्भ प्रार्थना से किया है और ईश्वर की विशेषताओं का वर्णन बड़े ही मोहक ढंग से किया है। तत्पश्चात वर्णन का भाव चमन की ओर आकर्षित हो गया है। मीर की मसनवियों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इनकी सभी मसनवियां मुख्य नहीं हैं। तरविया मसनवियां आकर्षक हैं किन्तु विस्तार को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि पूर्ण स्पष्ट नहीं हैं। प्रशंसनीय मस-नवियां गणना में कम हैं और उनका रंग भी हलका है। स्वाभाविक मसनवियों का विषय अत्यन्त घिसा-पिटा है। वर्णन करने के भाव ते आकर्षण अवश्य उत्पन्न हो गये हैं। सामाजिक मसनवियां अवश्य उचित हैं जो उस युग के रहन-सहन पर प्रकाश डालती हैं। निन्दक मसनवियां बड़ी ही व्यंगरूपता धारण किये हैं किन्तु इनकी तुलना सौदा की निन्दक मसनवियों से नहीं की जा सकती। जिन मसनवियों में मीर ने अपनी दुर्दशा व्यक्त की है उच्च हैं। उनमें उनका स्वयं का प्रतिबिम्ब दर्पित है। जहाँ तक दृश्यात्मक मसनवियों का सम्बन्ध है मीर अपने सैदनामों में सफल हुए हैं। मीर की सम्पूर्ण मसनवियों में उनकी प्रेम सम्बन्धी मस-नवियां सर्वोच्च हैं। जिनमें "ख़्वाब व ख़याल" उर्दू कविता का सर्वोत्तम उदा-हरण है।

مثنوی پڑھنے سے ظاہر ہوتا ہے کہ نواب آصف الدولہ کے عہد میں ہولی خاص اہتمام سے منائی جاتی تھی اور نواب بہادر بہ نفس نفیس ہولی کھیلتے تھے۔ مثنوی "کد خدائی" بشن سنگھ انداز بیان اور جزئیات نگاری کے لحاظ سے کد خدائی نواب بہادر سے بہت ملتی ہے لیکن باکمال شاعر نے نواب بہادر اور بشن سنگھ کی کد خدائی میں فرق مراتب کا پورا پورا لحاظ رکھا ہے اور یہی اس مثنوی کی نمایاں خصوصیت ہے

میر کی مثنویوں میں ساقی نامہ بھی شامل ہے جس کی طرف اردو کے شعرا نے زیادہ توجہ نہیں دی ہے مگر عربی خصوصاً فارسی شعرا نے اس فن کو کافی ترقی دی ہے۔ میر نے اپنے ساقی نامہ کی ابتدا حمد سے شروع کی ہے اور خدا کی صفات کا ذکر بڑے دل نشیں انداز میں کیا ہے۔ اس کے بعد روئے سخن چمن کی طرف پھر گیا ہے

میر کی مثنویوں کا سرسری جائزہ اس امر کا انکشاف کرتا ہے کہ ان کی کل مثنویاں اہم نہیں ہیں طربیہ مثنویاں دل کش ہیں مگر تفصیلات کے اعتبار سے بڑی حد تک تشنہ ہیں۔ مدحیہ مثنویاں تعداد میں کم ہیں اور ان کا رنگ بھی ہلکا ہے۔ اخلاقی مثنویوں کے موضوعات فرسودہ ہیں طرز بیان نے جاذبیت ضرور پیدا کر دی ہے۔ سماجی مثنویاں کسی قدر بہتر ہیں جن سے اس دور کے معاشرے پر روشنی پڑتی ہے۔ ہجویہ مثنویاں تیر و نشتر کی حامل ہیں لیکن ان کا موازنہ سودا کی ہجویات سے نہیں کیا جا سکتا

وہ مثنویاں جن میں میر نے خود اپنا حال زبوں پیش کیا ہے اعلا پائے کی ہیں ان میں ان کی ذات کی پرچھائیاں واضح طور پر نظر آتی ہیں۔ جہاں تک منظریہ شاعری کا تعلق ہے میر نے اپنے صید ناموں میں کامیابی حاصل کی ہے۔ میر کی سب سے زیادہ اہم مثنویاں ان کی "عشقیہ مثنویاں" ہیں جن میں "خواب و خیال" اردو شاعری کا شاہکار ہے

मीर के काव्य में हास्य और व्यंग

गुलाम अहमद फ़ुरक़त काकोरवी

मीर तक़ी 'मीर' चाहे किसी "पर्दा नशीं" की "ज़ुल्फ़-ए-गिरह-गीर" (घुंघराले बालों) के असीर रहे हों अथवा स्वयं अपने उत्पीड़न प्रिय हृदय के वशीभूत, किन्तु उनके प्रेम ग्रस्त होने में सन्देह नहीं हो सकता। अतः उनके पश्चात् भी उर्दू काव्य मण्डली में जिन बड़े-बड़े प्रेमी प्रकार के कवियों ने जन्म लिया उन्हें भी काव्य में उनके मार्ग दर्शक होने का आभारी होने पर विवश होना पड़ा। यह सत्य है कि यदि मानव-जन्म सम्बन्धी ब्रह्मा के विभाग की भूल से 'मजनूं', 'फ़रहाद' और 'वामिक़' जैसे घोर इश्क़ के उस्ताद के बाद उन्होंने जन्म न लिया होता तो विश्वास रखिए कि इन अन्तराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त प्रेमियों को 'मीर' साहब के शेरों से ऐसी स्फूर्ति प्राप्त होती कि उन सबका प्रेम इस लोक की सीमाओं में समा न सकता एवं समस्त संसार प्रेमाधीन होकर इस मृत्यु लोक को रमणीय बना देता। न तो घृणा, उपेक्षा और तिरस्कार की गर्म बाज़ारी होती और न एक मनुष्य दूसरे से संघर्षरत होता, अपितु मनुष्य जाति प्रेम को ही अपना सर्वस्व समझती और प्रेम के ही गीत गाती।

मीर साहब जहां सूफ़ी थे, वहीं वे प्रेम की विधि से भी सुपरिचित थे। प्रेम की शिक्षा उन्हें स्वयं उनके पिता ने ही दी थी और उपदेश दिया था—"बेटा, प्रेम ही ब्रह्मा की इस दिक् कान की सीमाओं को बांधे है। प्रेम न होता तो इस भौतिक सुव्यवस्था का अविर्भाव न होता ...." यह शिक्षा उन्हें दस वर्ष की अवस्था में मिली थी। अतः जब उन्होंने कविता का आरम्भ किया तो प्रेम का ही नारा लगाते उठे—

इश्क़ ही इश्क़ है, जहां देखो सारे आलम में भर रहा है इश्क़।"

अतएव उन्होंने जो प्रेम किया उसे चाहे उनका स्वमेव पागलपन ही समझा

میرؔ کے کلام میں طنز و ہجو

غلام احمد فرقتؔ کاکوروی

میر تقی میرؔ خواہ کسی پردہ نشیں کی زلف گرہ گیر کا شکار رہے ہوں یا خود اپنے ایذا طلب دل کے طاعت گزار۔ مگر ان کے عاشق دل گیر ہونے میں کسی کو کلام نہیں ہو سکتا۔ چنانچہ ان کے بعد بھی اردو کی بزم سخن میں جو بڑے بڑے عشاق قسم کے شعرا پیدا ہوئے انھیں بھی شعر و سخن میں ان کے سامنے سر نیاز خم کرنا پڑا۔ اور یہ واقعہ ہے کہ میرؔ اگر فرشتوں کی فرد گذاشت سے مجنوںؔ، فرہادؔ اور وامقؔ جیسے اساتذۂ عشق کے بعد نہ پیدا ہوئے ہوتے تو یقین مانیے کہ ان بین الاقوامی شہرت کے عاشقوں کی محبت کو میرؔ صاحب کے اشعار سے ایسی جلا ملتی کہ ان کا عشق اس کائنات میں نہ سماتا اور ساری دنیا محبت کی محکوم بن کر دنیا کو قابل رہائش بنا دیتی۔ نہ نفرت و حقارت کی گرم بازاری ہوتی اور نہ ایک انسان دوسرے انسان سے دست و گریباں ہوتا بلکہ بنی نوع انسان محبت ہی کو اپنا اوڑھنا بچھونا بناتا اور اسی کے نغمے گاتا کیوں کہ میرؔ صاحب جہاں صوفی تھے وہاں عشق کے سلیقے سے بھی واقف تھے اور عشق کی تعلیم انھیں خود ان کے والد نے دی تھی اور نصیحت کی تھی کہ "بیٹا عشق اختیار کر، عشق ہی کارخانۂ خدا میں متصرف ہے۔ اگر عشق نہ ہوتا تو نظم کل کی تشکیل نہ ہوتی" اور یہ تعلیم ان کو دس برس کی عمر میں ملی تھی، اسی لیے انھوں نے جب شاعری شروع کی تو عشق ہی کا نعرہ بلند کرتے اٹھے۔

عشق ہی عشق ہے جہاں دیکھو
سارے عالم میں بھر رہا ہے عشق

اسی لیے انھوں نے جو عشق کیا اسے دنیا والے خواہ ان کی ذاتی دیوانگی ہی پھر کیوں نہ محمول

जाय, पर इसमें सन्देह नहीं कि वह भौतिक प्रेम से लेकर अध्यात्मिक प्रेम तक के सभी पैंतरों से परिचित थे और स्वयं को प्रेमावतार समझकर प्रेम-धर्म की संस्थापना चाहते थे किन्तु समय (काल) इस सीमा तक विपरीत था कि उन्हें इस धर्म का सामान्य अनुयायी तक न मिल सका और सम्राट अकबर महान् बाज़ी ले गया जिसने दीन-ए-इलाही का आविष्कार करके कुछ नहीं तो अट्ठारह अपने अनुयायी बना ही लिए थे। स्थिति जैसी भी रही हो उनके प्रेमी नारे को किसी ने दुहराया तक नहीं तत्पश्चात परिणाम यह हुआ कि स्वयं उन्होंने इस प्रेमवाद-प्रेम के धर्म पर व्यंग आरम्भ कर दिया और घोषित कर दिया कि—

सख़्त काफ़िर था जिसने पहले 'मीर' मज़हब-ए-इश्क़ अख़्तियार किया

यह तो आपको मानना ही पड़ेगा कि मीर हमारे और आपकी भाँति बीबी बच्चे वाले थे। यदि स्वयं अपने निकाह के अवसर पर न हँसे होंगे और रोनी सूरत बनाए बैठे रहे होंगे तो अपने पुत्र मीर कल्लू "अर्श" के जन्म के अवसर पर तो उन्हें हँसी आई ही होगी और मीर कल्लू अर्श की पत्नी अर्थात अपनी पुत्र-बधू का डोला उतरते समय तो उनकी बाछें कानों से जा ही मिली होंगी। यदि आप यह कहें कि बीबी बच्चों से वह रो-रोकर ही बातें करते थे या फ्रांस के प्रख्यात चिन्तक 'रूसो' के पिता समान जो अपनी पत्नी के मृत्यु के पश्चात हर समय विलाप कर रोते थे ? 'मीर' भी प्रेम में आह भरते रहे हों तो यह भी सत्य नहीं। मैं डा० सलामत उल्लाह की इस राय से सहमत हूँ।

"प्राय: ! यह देखा गया है कि उच्चकोटि का व्यंग्य घोरतम निराशा से उत्पन्न होता है और बहुत से उदाहरण ऐसे कवियों के दिये जा सकते हैं जिनके आशावादी दृष्टिकोणों पर तनिक भी सन्देह नहीं किया जा सकता किन्तु उनके काव्य का अधिकतर भाग शोक और निराशा की अभिव्यक्तियों से ही भरा पड़ा है। स्विफिट एवं शेले इसके अच्छे उदाहरण हैं। निराशावाद केवल एक दृष्टिकोण नहीं, एक सम्पूर्ण जीवन दर्शन है। हम उसी कवि को निराशावादी कह सकते हैं जो जीवन के उच्चतम मूल्यों की ओर से निराश हो गया हो जिसमें सतत् संघर्ष का हौसला न रह गया हो और जिसकी मनोवृत्ति जीवन के हर मामले में पराजित प्रवृत्ति कहलाने के योग्य हो। इस अर्थ में मीर को निराशावादी कहना अति कठिन है क्योंकि मीर की कविता में जिस प्रकार के शोक की अभिव्यक्ति प्राप्त होती है वह निजी है और केवल प्रेम की असफलताओं और वंचनाओं की अनुभूति से

کریں مگر اس میں شک نہیں کہ وہ عشق مجازی سے عشق حقیقی تک کے ہفت خواں سے واقف تھے اور اپنے آپ کو پیغمبر عشق سمجھتے تھے بلکہ مذہب عشق کی بنیاد بھی ڈالنا چاہتے تھے مگر زمانہ اس کے لیے اس درجہ ناسازگار تھا کہ مذہب عشق میں اپنا ایک معمولی خلیفہ تک میسر نہ آیا اور شہنشاہ اکبر نے باوجود اپنی شاہانہ مصروفیتوں کے دین الٰہی ایجاد کر کے کچھ نہیں تو اپنے اٹھارہ ماننے والے تو پیدا کر ہی لیے۔ بہر صورت جب ان کے نعرۂ عشق پر کسی نے لبیک نہیں کہا تو انھوں نے مذہب عشق پر لعنت ملامت شروع کر دی اور اپنے آپ کو کافر عشق قرار دے کر اپنے ہی اوپر سب و شتم اور طنز کے تیر چلانا شروع کر دیے اور اعلان کر دیا کہ

سخت کافر تھا جن نے پہلے میرؔ　　مذہبِ عشق اختیار کیا

یہ تو آپ کو ماننا ہی پڑے گا کہ میرؔ ہمارے ہی آپ کی طرح بیوی بچوں والے تھے۔ اگر وہ خود اپنے نکاح کے وقت نہ ہنسے ہوں گے اور رونی صورت بنائے بیٹھے رہے ہوں گے تو اپنی اولاد نرینہ میر کلو عرش کی پیدائش کے وقت تو انھیں ہنسی آئی ہی ہوگی۔ اور میر کلو عرش کی بیوی یعنی اپنی بہو کا ڈولا اترواتے وقت تو ناممکن ہے کہ ان کی دونوں باچھیں کانوں سے نہ جا لگی ہوں۔ اگر آپ یہ کہیں کہ وہ بیوی بچوں سے رو رو کر ہی بات کرتے تھے یا فرانس کے مایۂ ناز مفکر روسو کے باپ کی طرح جو اپنی بیوی کے مرنے کے بعد ہر وقت روتا رہتا تھا۔ میرؔ بھی ہر وقت آہ بکا کرتے رہے ہوں تو یہ صحیح نہیں ہے۔ مجھے ڈاکٹر سلامت اللہ کی اس رائے سے اتفاق ہے

"اکثر یہ دیکھا گیا ہے کہ اعلیٰ طنز نگاری بڑی تاریک قنوطیت سے پیدا ہوتی اور بہت سی مثالیں ایسے شاعروں کی دی جا سکتی ہیں جن کی رجائیت پر شبہ نہیں کیا جا سکتا۔ لیکن ان کی بیشتر شاعری غم زندگی کی تفسیر ہے۔ سوئفٹ اور شیلے اس سلسلے میں اچھی مثالیں ہیں۔ قنوطیت صرف نقطۂ نظر میں ہے وہ فلسفۂ زندگی ہے اور قنوطی ہم اس شاعر کو کہہ سکتے ہیں جو زندگی کی اعلیٰ قدروں سے مایوس ہو چکا ہو جس میں جدوجہد کا حوصلہ نہ ہو اور اس کی ذہنیت زندگی کے ہر معاملے میں شکست خوردہ ہو۔ ان معنوں میں میرؔ کو قنوطی کہنا بہت مشکل ہے۔ کیوں کہ میرؔ کی شاعری میں جس غم کا اظہار ملتا ہے وہ ذاتی ہے اور محبت کی ناکامیوں اور محرومیوں کے احساس سے پیدا ہوتا ہے یا غم روزگار سے یا ان کی شاعری میں غیر ذاتی IMPERSONAL غم ہے جو عالم گیر مصیبت کے احساس سے پیدا ہوتا ہے اور جس میں ان کے سماجی شعور کی جھلک نظر آتی ہے"

میرؔ کی پوری زندگی کا اگر آپ جائزہ لیں تو ان کے کلام سے قطع نظر ان کی ہر چیز میں قدرت

उत्पन्न होती है—या, युग की परिस्थितियों का उत्पीड़न है जो उनकी कविता में निर्वैयक्ति (IMPERSONAL) शोक बनकर प्रकट होता है। यह विश्वव्यापी विपत्तियों की अनुभूति से उत्पन्न होता है और इसमें उनकी सामाजिक चेतना की झलक दिखाई देती है।"[1]

यदि आप मीर तकी "मीर" के सम्पूर्ण जीवन का अनुशीलन करें तो उनके काव्य से पृथक उनकी हर-हर बात में प्रकृति उनके साथ में निष्ठुर उपहास करती दिखाई देती है। कहीं घटनाओं और परिस्थितियों के रूप में यह उपवास फूटा होता है औरकहीं हृदयकी व्यंग्य-प्रियता स्वयं उनकी लेखनी से फूटी पड़तीहै। इस चक्रवर्ती विश्व में बिरले ही मीर जैसे अभागे कवि होंगे जिनके जन्म से लेकर मृत्यु तक की हर बात पर पहेली बूझने वाली स्थिति उत्पन्न होती हो। क्या उनकी जन्म तिथि क्या उनका सय्यद होना, क्या उनका वास्तविक नाम एवं क्या उनकी प्रेम कथा और क्या उनकी प्रेमिका पर हवाई विचारों की भरमार। यहाँ तक कि उनके देहावसान का स्थान भी आज तक अज्ञात है। यदि समस्त संसार से उनको घृणा थी तो उनके पुत्र मीर कल्लू 'अर्श' को तो कम से कम बताना चाहिए था कि उनके आदरणीय पिताजी कहाँ दफ़न हैं—उनके जनाज़े में कौन-कौन लोग सम्मिलित थे, उनकी समाधि किस ढंग की थी और उसका निर्माता कौन था। कुछ लोगों का विचार है कि वह आह ही आह थे किन्तु उनके शोक प्रमुख शेरों से लेकर वाह्य विवरण प्रधान काव्य तक हमको स्थान-स्थान पर वाह के शेर भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होते हैं।

अतः उनके काव्य में जब हम हास्य, व्यंग्य अथवा विनोद के पहलू ढूंढते है तो यद्यपि हमे अधिकतर पहलू निराशा और विराग के ही मिलते हैं किन्तु इसके अतिरिक्त यह नहीं कहा जा सकता कि उनके काव्य में व्यंग्य न था या उनके स्वभाव में चंचलता और विनोद प्रियता न थी। यदि आप से बिना बताये मीर के इन शेरों को आपके सामने पढ़ें तो ईमानदारी से बताइये कि क्या आप इन्हें किसी उच्च कोटि के व्यंग्यकार का शेर न कहेंगे?—

जाता हूँ दिन को मिलने तो कहते हैं दिन है "मीर"
जब शब को जाइये तो कहे हैं कि शब है अब

———

मैं तो ख़ूबां को जानता ही हूँ पर मुझे यह भी ख़ूब जानते हैं

———

१. दिल्ली कालेज उर्दू मैगज़ीन "मीर" नम्बर, पृष्ठ १५२, १५३।

کی ستم ظریفی شامل ہے ۔ کہیں واقعات اور حالات کی شکل میں اور کہیں تو ان کی شوخ طبعی خود ان کے نوک قلم سے پھوٹی نکلتی ہے ۔ دنیا میں شاید ہی کوئی بد نصیب شاعر ہوگا جس کی پیدائش سے موت تک اتنے عقلی گدے لگائے گئے ہوں گے ۔ کیا ان کا سن ولادت، کیا ان کی سیادت، کیا ان کا اصلی نام اور کیا ان کے عشق کی داستان ۔ یہاں تک کہ ان کے مرنے کے بعد آج تک ان کی قبر کا پتا نہ لگا اگر سارے جہان سے ان کو نفرت تھی تو میر کلو عرشؔ جو ان کے بیٹے تھے ان کو تو کم از کم بتانا ہی چاہیے تھا کہ ان کے والد صاحب قبلہ کہاں دفن ہیں ؟ ان کے جنازے میں کون کون لوگ شریک تھے، ان کی قبر کس وضع قطع کی تھی ۔ اسے کس نے بنوایا تھا ۔ پھر ایسے شاعر کے کلام میں طنز و مزاح کی تلاش کتنا بڑا کام ہے ۔ مگر آپ کو حیرت ہوگی کہ میرؔ کے حزنیہ کلام سے سے کر ان کی خارجی شاعری تک جگہ جگہ واہ کے اشعار بھی خاصی تعداد میں ملتے ہیں ۔ اور جب ہم میرؔ کی شاعری میں طنز و مزاح یا بذلہ سنجی کے پہلو تلاش کرتے ہیں تو ہر چند کہ اس میں زیادہ پہلو قنوطیت اور یاسیت ہی کے ملتے ہیں مگر یہ بھی نہیں کہا جا سکتا کہ ان کا کلام طنز سے یک لخت خالی ہے ۔ اگر بغیر بتائے ہوئے کوئی میرؔ صاحب کے یہ اشعار آپ کے سامنے پڑھ دے تو ایمان داری سے بتائے کیا آپ انھیں ایک بلند پایہ طنز نگار کے اشعار نہیں کہیں گے

جاتا ہوں دن کو ملنے تو کہتا ہے دن ہے میرؔ
جب شب کو جائیے تو کہے ہے کہ شب ہے اب

میں تو خوباں کو جانتا ہی ہوں
پر مجھے یہ بھی خوب جانتے ہیں

یا پھر ان کے یہ اشعار جن میں کوٹ کوٹ کر زندہ دلی بھری ہوئی ہے

ظالم یہ کیا نکالی رفتار رفتہ رفتہ
اس چال پر چلے گی تلوار رفتہ رفتہ

یہ چھیڑ دیکھ ہنس کے رخِ زرد پر میرے   کہتا ہے میرؔ رنگ تو اب کچھ نکھر چلا

या फिर इन शेरों में ज़िन्दा दिली कूट-कूट कर भरी है :—

ज़ालिम वह क्या निकाली रफ़्तार रफ़्ता रफ़्ता इस चाल पर चलेगी तलवार रफ़्ता रफ़्ता

———

ये छेड़ देख हंस के रखे ज़र्द पर मेरे कहता है "मीर" रंग तो अब कुछ निखर चला

———

इन शेरों को पढ़कर कौन काफ़िर उनकी विनोद शीलता और ज़िन्दादिली से इनकार कर सकता है।

"मीर" किस स्तर के धर्मनिष्ठ त्यागी थे, किस प्रकार रो-रोकर दुआएँ मांगते थे और सामान्य धर्मोपदेशकों के विषय में उनका विचार क्या था। बताइये जो व्यक्ति शेख़ साहब की शान में यह कह सकता हो—

मिल बैठे उस नाई के से कोई घड़ी जो ज़ाहिद तो,
जितने बाल हैं सारे सर में वैसी ही उनकी हजामत हो।

———

उनके विषय में आप कैसे विश्वास कर सकते हैं कि वह आजीवन रोते ही रहे होंगे और उसने अपने अधिकार में रोने का नाम सुरक्षित करा लिया होगा।

यदि आप 'कुल्लियात -ए-मीर' का पूर्ण रूप से अध्ययन करें तो इसी कोटि के सैकड़ों हज़ारों शेर आपको मिलेंगे जिनमें 'मीर' साहब ने उपदेशक, मोहतसिब और शेख़ की बगुला भक्ति और आडम्बर भक्ति का पर्दा अत्यन्त विनोदी ढंग से चाक कर दिया है।

जानिबे मस्जिद थी वह काफ़िर निगाह, शेख़ साहब दोनो ईमां ले गये

———

दाढ़ी सुफ़ेद शेख़ की तू मत नज़र में कर- बगुला शिकार होवे तो लगते हैं हाथ पर

———

तुम्हें तो ज़ुहद-ो-वरअ पर है बहुत अपने ग़रूर, ख़ुदा है शेख़ जी हम भी गुनाहगारों का

———

वाइज़ को यह जलन है शायद कि फ़रबही से, रहता है हौज़ ही में अक्सर पड़ा मगर सा

———

उस एक निगाहे मस्त का छाया ही था फ़रेब, पर शेख़ तर्ज़ देख के हुशियार हो गया।

———

हर महान् कवि की रचना चूंकि अपने युग की दर्पण होती है अतः मीर के काव्य में जो चिड़चिड़ापन है उसका पूर्ण उत्तरदायित्व उस युग की निम्न कोटि की आर्थिक स्थिति पर है।

ان شعروں کو پڑھنے کے بعد کون کافر ہے جو میر کی بذلہ سنجی، خوش طبعی اور زندہ دلی سے انکار کر سکتا ہے

میر کس پائے کے متقی تھے۔ کس طرح رو رو کر دعائیں مانگتے تھے۔ اور عام واعظوں، محتسبوں کے بارے میں ان کی کیا رائے تھی۔ اور پھر جو شخص شیخ کی شان میں یہ کہہ سکتا ہو

مل بیٹھے اس نائی کے سے کوئی گھڑی جو زاہد تو
جتنے بال ہیں سارے سر میں ویسی ہی اس کی حجامت ہو

اس کے بارے میں آپ یہ کیسے یقین کر سکتے ہیں کہ وہ زندگی بھر روتا رہا ہوگا اور اس نے اپنے جملہ حقوق بحق گریہ محفوظ کر لیے ہوں گے

کلیاتِ میر کا اگر آپ بھرپور جائزہ لیں تو سیکڑوں اشعار ملیں گے جن میں انھوں نے واعظ محتسب اور شیخ کی ریاکاری اور ظاہری عبادت کا پردہ ظریفانہ انداز میں چاک کیا ہے

جانب مسجد تھی وہ کافر نگاہ　　شیخ صاحب دین و ایماں لے گئے

داڑھی سفید شیخ کی تو مت نظر میں کر　　بگلا شکار ہو وے تو لگتے ہیں ہاتھ پر

تمھیں تو زہد و ورع پر بہت ہے اپنے غرور　　خدا ہے شیخ جی ہم بھی گناہ گاروں کا

واعظ کو یہ جلن ہے شاید کہ فربہی سے　　رہتا ہے حوض ہی میں اکثر پڑا مگر سا

اس اک نگاہ مست کا کھایا ہی تھا فریب　　پر شیخ طرز دیکھ کے ہشیار ہو گیا

ہر بڑے شاعر کا کلام چونکہ اپنے دور کا آئینہ دار ہوتا ہے۔ اس لیے میر کے کلام میں جو چڑچڑاپن بھی ملتا ہے اس کی ذمے داری اس دور کی کساد بازاری پر عاید ہوتی ہے

उर्दू के व्यंग्य-काव्य में हज्व को भी एक स्थान प्राप्त है जिसका उद्देश्य किसी व्यक्ति को दुख पहुँचाना नहीं होता बल्कि उसका उद्देश्य बुरी आदत को दूर करना और परिस्थिति का सुधार करना होता है। और हज्व का उद्देश्य यही होना चाहिए कि जिस चीज़ का सुधार करना हो उसका उपहास इस भाव में किया जाय कि उसे पढ़कर पाठक के श्री मुख पर हंसी की लहर दौड़ जाय या उन आदतों या कुरीतियों को बुरा समझने लगे। हज्व में विनोद, व्यंग्य, उपहास, हास्य, चुटकी-फबती आदि सभी शामिल होती हैं, किन्तु वह हज्व जो किसी व्यक्ति को अपमानित करने के लिए लिखी जाए व्यंगात्मक काव्यों में नहीं आती। यह चीज़ मीर के यहाँ भी मिलती है और इशां, सौदा, मुस्हफ़ी की अधिकांश हज्वी कविता में स्थान स्थान पर दिखाई देती है। किन्तु मीर ने जो हज्वें लिखी हैं और जिन बातों के दोष गिनाये है वह किसी प्रकार की धार्मिक घृणा और व्यक्तिगत वैमनस्य से बहुत ऊँचा है। बल्कि कई हज्वों में तो उन्होंने स्वयं अपने ऊपर व्यंग किया है।

मीर ज़रीफ़[1] शायर नहीं थे और तबियत के भी अति गम्भीर थे इसलिये उनके हास्य में कोई आर्कषण नहीं है किन्तु उनकी रूमानी शायरी में व्यंग की मिसालें मिलती हैं।

तड़पे है जब कि सीने में उछले है दो दो हाथ, गर दिल यही है 'मीर' तो आराम हो चुका

कुछ तुम्ही मिलने से बेज़ार हुये हो वरना, दोस्ती नगं नहीं ऐब नहीं आर नहीं

इश्क़ करते हैं उस परी रू से, 'मीर' साहब भी क्या दिवाने हैं,

हाल बद गुफ़्तनी नहीं मेरा, तुमने पूछा तो मेहरबानी की

शिकवये आबला अभी से 'मीर', है पियारे हनूज़ दिल्ली दूर

यद्यपि मीर के व्यगं में हमें ग़ालिब की सी शोख़ी नहीं मिलती न मोमिन ख़ां मोमिन के व्यगं की नश्तरियत या दिलजलापन किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उनके व्यंग में एक टीस, एक चुभन और एक कटुमुस्कान है जो किसी अन्य कवि के यहाँ नहीं प्राप्त है।

मीर के जीवनीय एवं प्रयोगात्मक अनुभव अत्यन्त शोकयुक्त एवं कटु और

१. हँसी मज़ाक़ के।

اردو کی ظریفانہ شاعری میں ہجو کو بھی ایک مقام حاصل ہے جس کا مقصد کسی کو اذیت پہونچانا نہیں ہوتا بلکہ اس کا مقصد قبیح عادت کو دور کرنا اور اس کی اصلاح کرنا ہوتا ہے۔ اور ہجو کا مقصد بھی ہونا چاہیے کہ جس چیز کی اصلاح کرنا ہو اس کا تمسخر اس انداز سے اڑایا جائے کہ اسے پڑھ کر پڑھنے والا ہنس دے یا ان عادات و رواسم قبیحہ کو مضحک سمجھنے لگے۔ ہجو میں تفنن، طنز، پھبتی، ظرافت، تمسخر غرض کہ ساری چیزیں شامل ہوتی ہیں۔ مگر وہ ہجو جو کسی کی ذات پر محض اسے ذلیل اور رسوا کرنے کے لیے کی جائے ظریفانہ شاعری کی حدود میں نہیں آتی۔ یہ چیز میرؔ کے یہاں بھی ملتی ہے۔ اور انشاؔ سوداؔ، اور مصحفیؔ کی اکثر ہجویہ شاعری میں جگہ جگہ نظر آتی ہے۔ مگر جو ہجویں میرؔ نے لکھی ہیں اور جن چیزوں کی مذمت کی ہے وہ مذہبی تاثرات اور ذاتیات سے بالاتر ہیں۔ بلکہ اکثر تو انھوں نے خود اپنی ہی ذات کو ہدف بنایا ہے میرؔ ظریف شاعر نہیں تھے اور طبیعتاً بھی بے حد سنجیدہ واقع ہوئے تھے اس لیے ان کے مزاح میں کوئی خاص دل کشی محسوس نہیں ہوتی البتہ ان کی رومانی شاعری میں طنز کی لطیف مثالیں ملتی ہیں۔

تڑپے ہے جب کہ سینے میں اچھلے ہے دو دو ہاتھ — گر دل یہی ہے میرؔ تو آرام ہو چکا

کچھ تمھیں ملنے سے بیزار ہوئے ہو ورنہ — دوستی ننگ نہیں، عیب نہیں، عار نہیں

عشق کرتے ہیں اس پری رو سے — میرؔ صاحب بھی کیا دوانے ہیں

حال بدگفتنی نہیں میرا — تم نے پوچھا تو مہربانی کی

شکوۂ آبلہ ابھی سے میرؔ — ہے پیارے ہنوز دلّی دور

میرؔ کے طنز میں اگرچہ غالبؔ کی شوخی اور مومن خاں مومنؔ کے طنز کی نشتریت یا دل برشتگی نہیں ملتی تاہم اس حقیقت سے انکار نہیں کیا جاسکتا کہ ان کے طنز میں ایک ٹیس، ایک چبھن، اور ایک تلخ مسکراہٹ ہے جو کسی دوسرے شاعر کے یہاں اس انداز میں دور دور نظر نہیں آتی میرؔ کی زندگی کے عملی تجربے بے حد غم انگیز اور تلخ تھے اول افلاس دوسرے زمانے کی

निर्धन है। दुसरे युग का क्षीण महत्त्व तीसरे उनकी कोमल सहन शक्ति का स्वभाव एवं ख़ुद्दारी चतुर्थ व चीत्कारयुक्त वातावरण जिसमें वह पोषित हुये। इन तमाम घटनाओं एवं प्रकृतिक संस्कारों ने उनके मस्तिष्क में एक अजीब खींचां-तानी और अटूट स्वर्णिम जाल रच दिया और यही कारण है कि उनके शोक व दु:ख का ख़मीर तैय्यार हुआ।

व्यंग्य तथा हास्य रस के विषय में रोनाल्ड नाक्स (RONALD KNOX) का कथन है कि "हास्य कवित्त रचियता हिरन के साथ भागता है, किन्तु व्यंग कविता लेखक कुत्तों के संग शिकार खेलता है"। और यह सही है कि हास्य कवित्तरचयिता ज़िंदगी के जाल फ़रेब और उतार चढ़ाव से मज़ा लेता है। उसके विपक्ष में व्यंगात्मक कवित्त रचियता इस नाहमवारी से घृणा करता है और उनकी हंसी उड़ाता है। कभी वह मनुष्यों पर व्यंग कसता है तो कभी सामाजिक दोषों और त्रुटियों को सर्वसाधारण के समक्ष प्रकट करता है, और समाज में रहनेवालों को मनुष्यता से परिचित कराता है। मीर की आन्तरिक एवं वाह्य कविता का यदि आप अध्ययन करेंगे तो उनकी आन्तरिक अथवा रूमानी कविता में एक मनमोहक व्यगं पायेंगे जिसके डान्डें उनकी यासियत से मिल जाते हैं।

ناقدری تیسرے ان کی نازک مزاجی اور خودداری چوتھے وہ صوفیانہ ماحول جس میں وہ پروان چڑھے تھے ان تمام چیزوں نے ان کی ذہنی دنیا میں ایک عجیب کشمکش اور آویزش پیدا کر دی اور اسی سے ان کے فلسفۂ غم کا خمیر تیار ہوا

طنز و مزاح کے سلسلے میں رونالڈ ناکس RONALD KNOX کا کہنا ہے کہ "مزاح نگار ہرن کے ساتھ بھاگتا ہے لیکن طنز نگار کتوں کے ساتھ شکار کھیلتا ہے۔" اور یہ واقعہ ہے کہ مزاح نگار زندگی کی بدعنوانیوں اور اتار چڑھاؤ سے لطف اندوز ہوتا ہے اس کے مقابلے میں طنز نگار ان ناہمواریوں سے نفرت کرتا ہے اور ان کا مذاق اڑاتا ہے۔ وہ کبھی افراد پر طنز کرتا ہے تو کبھی سماج کی حماقتوں کو طشت از بام کرتا ہے اور سماج میں رہنے والوں کو انسانیت سے روشناس کراتا ہے۔ میر کی داخلی اور خارجی شاعری کا اگر آپ مطالعہ کریں گے تو ان کی داخلی یا رومانی شاعری میں ایک پُرکیف طنز پائیں گے۔ جس کے ڈانڈے ان کی یاسیت سے مل جاتے ہیں

मीर का फ़ारसी काव्य

अख़्तर अली तिलहरी

हम चु मीर आज़ुर्दा जाने, बेर पैदा मी शवद
मुग़तनम दानेद रोज़े चन्द ईं दुर्वेश रा।

'मीर तक़ी मीर' काव्य-जगत में भगवान की तरह पूजे जाते हैं। उन्होंने उर्दू-काव्य के शरीर में तरो-ताज़ा आत्मा फूंकी है। सत्य यह है कि काव्य को मीर ने नया जन्म दिया है। मगर उर्दू शायरी के प्रेमियों की भीड़ में कुछ ही लोगों को इसकी जानकारी होगी कि उन्होंने फ़ारसी-काव्य की रंगीन-महफ़िल को भी जिस ढंग से सजाया, उसकी मिसाल दुर्लभ है।

'ख़ुसरो, 'फ़ैज़ी' तो भारतीय-फ़ारसी कवियों में उच्चकोटि के माने गए हैं,, जिनकी सराहना ईरान के महान कवियों को भी करना पड़ी है। पर 'मीर' के फ़ारसी-काव्य को ऐसे कवियों के साथ तो नहीं पेश किया जा सकता, लेकिन इसे तो स्वीकार ही करना पड़ेगा कि 'मीर' की शायरी में जो मिठास और रस है और उससे जो मज़ा मिलता है, उसका जवाब भी नहीं है।

सिराजउद्दीन ख़ाँ 'आरज़ू' फ़ारसी-काव्य की छोटी से छोटी विशेषता से भली-भाँति परिचित थे और उनकी परख का सभी लोहा मानते थे। उन्होंने अपनी पुस्तक "मजमाउन-नफ़ायस" में लिखा है।

"दर अव्वल इश्क़े अशआरे रेख़ता कि ब ज़बाने उर्दू शेरेस्त ब तर्ज़े फ़ारसी तवग़्ग़ुले बिसियार नमूदा, चुनांचे शोहरै आफ़ाक़ अस्त, व बादे आँ ब गुफ़्तने-अशआरे फ़ारसी ब तर्ज़े ख़ास गिर्वीदा, क़ूबले ख़ातिरे-अर्बाबे-सुख़न व दानायाने ईं फ़न गश्त। तबश ब मज़ामीने ताज़ा व ग़ैर मुब्तज़ल मानी परदाज़ अस्त व अशआरे ऊ ब लताफ़त अदाओ अन्दाज़ बसके ज़ेहनेमुनासिब व तबे साक़िब याफ़्ता दर इब्तदाए मश्क़े-शेर रुत्बै सुख़न ब पायै इन्तहा रसानीदा। हर चन्द मीर दीवाने मुख़्तसर दारद, अम्मा ग़ज़लयाते दर्द-मन्दानाओ-आशिक़ाना मी गोयद।"

میؔر کا فارسی کلام

اختر علی تلہری

هم چو میؔر آزرده جانے دیر پیدا می شود
مغتنم دانید روزے چند ایں درویش را

میر تقی میؔر صحیح معنوں میں "خدائے سخن" ہیں۔ انھوں نے اردو شاعری کے جسم میں تازہ روح پھونکی ہے۔ اس کو پائدار زندگی کی توانائی عطا کی ہے۔ لیکن ان کی اردو شاعری کے مداحوں کے جم غفیر میں اس کا علم کم ہی لوگوں کو ہوگا کہ انھوں نے فارسی شاعری کی رنگین بزم کو جس خوش سلیقگی اور جس حسن سے سجایا ہے اس کی نظیر بھی کم یاب ہے۔ خسؔرو۔ فیضؔی تو ہندی نژاد فارسی گو شعرا میں اس بلند حیثیت کے مالک ہیں جس کا اعتراف ایران کے بڑے بڑے شعرا کو بھی کرنا پڑا ہے۔ میؔر کی فارسی شاعری اس درجے میں تو نہیں رکھی جاسکتی۔ لیکن اس کا اقرار بہر حال ناگزیر ہے کہ میؔر کی فارسی شاعری کے کوزہ ہائے قند و نبات کی معتدل شیرینی سے ذوق کے کام و دہن کو جو لذت حاصل ہوتی ہے اس کا بھی جواب نہیں ہے

سراج الدین علی خاں آرزؔو فارسی شاعری کے رگ و پے سے ماہرانہ واقفیت رکھتے تھے اور ان کے نقد شعر کا لوہا سب ہی مانے ہوئے تھے۔ وہ مجمع النفائس میں لکھتے ہیں

" در اوّل مشق اشعار ریختہ کہ بہ زبان اردو شعریست بہ طرز فارسی توغل بسیار نمودہ چنان چہ شہرۂ آفاق است و بعد آں بگفتن اشعار فارسی بہ طرز خاص گردیدہ قبول خاطر ارباب سخن و دانایان ایں فن گشت طبعش بہ مضامین تازہ و غیر مبتذل معنی پرداز است و اشعار او بہ لطافت ادا و انداز بسکہ ذہن مناسب و طبع ثاقب یافتہ در ابتدائے مشق شعر رتبۂ سخن بہ پایۂ انتہا رسانیدہ۔ ہر چند میؔر دیوان مختصر دارد اما غزلیات دردمندانہ

शैख़ ग़ुलाम "मुस्हफ़ी" हमदानी आम तौर पर उर्दू के कवि माने जाते हैं, लेकिन फ़ारसी काव्य की परख का भी वह विशेष ढंग रखते थे। "मीर" के फ़ारसी काव्य के बारे में उन्होंने अपनी पुस्तक "इक़्दे-सुरैया" में लिखा है।

"दावै शेरे फ़ारसी न दारद मगर फ़ारसियश हम कम अज़ रेख़्ता नीस्त मी गुफ़्त कि साले रेख़्ता मौक़ूफ़ करदा बूदम। दरींहाल दोहज़ार शेर गुफ़्ता, तद्वीन करदम।"

"मीर" की फ़ारसी शायरी के महत्व को कई अन्य 'तज़करा-निगारों' ने भी मान्यता दी है और सत्य है कि "मीर" का फ़ारसी-काव्य उनकी उर्दू शायरी का एक प्रकार से अक्स है। भिन्न एहसासात व जज़बात के जो प्रभापूर्ण चित्रण "मीर" के उर्दू अश-आर में मौजूद हैं वे बड़ी हद तक उनमें उनके फ़ारसी-काव्य का ही अक्स दृष्टि-गोचर होता है और कुछ अशआर तो उर्दू का अनुवाद जान पड़ते हैं। लेकिन उर्दू अशआर में जो 'कैफ़' और मोहकता है वह फ़ारसी में नहीं है।

आया तो सही वह कोई दम के लिए लेकिन होंठों प मेरे जब नफ़से-बाज़ पसीं था।

बर सरे मा व दमे नज़ा रसीदी व अबस
मा कुजायेम तो तस्दी कशीदी व अबस

फ़ारसी शेर में बहाव के बजाए बनावट मालूम होती है। "तस्दी" "अज़ सदा" सिर की पीड़ा के अर्थ में, फ़ारसी जगत के लिए नया जान पड़ता है। उर्दू शेर फ़ारसी शेर की तुलना में ज़्यादा प्रभावशाली और सादा है।

आहों के शोले जिस जा उट्ठे हैं मीर शब को
वां जाके सुब्ह-दम देखा, मुश्ते-ग़ुबार पाया।

मीर आए कि ब नीराने-मुहब्बत मी सोख़्त
सुबह दीदेम ब जा मुन्दा कफ़े ख़ाक आंजा।

यहां भी उर्दू शेर अपनी मुहाकाती शैली के कारण अधिक प्रभावशाली है और पूर्ण दृश्य की दर्दनाक तस्वीर आंखों के सामने आ जाती है।

"मीर आए कि ब नीराने मुहब्बत मी सोख़्त"

की तुलना में "आहों के शोले जिस जा उट्ठे हैं मीर शब को" किसी प्रकार भी नहीं प्रस्तुत किया जा सकता।

मीर ने अरबी का "नीराने" "नार" का बहुवचन, आग के अर्थ में प्रयोग किया है। इससे मिसरा बोझिल हो गया है और बहाव में कमी भी आ गई है। फिर दूसरे मिसरे में "मुश्ते-ग़ुबार" अपनी ध्वनि अनुसार "कफ़े-ख़ाक" की तुलना में अधिक

و عاشقانہ می گوید"

شیخ غلام ہمدانی مصحفی عام طور پر اردو کے شاعر سمجھے جاتے ہیں، لیکن فارسی شاعری کی پرکھ کا بھی مخصوص سلیقہ رکھتے تھے میر کی فارسی شاعری کے بارے میں "عقد ثریا" میں لکھتے ہیں

"دعوئ شعر فارسی نہ دارد مگر فارسیش ہم کم از ریختہ نیست می گفت کہ سالے ریختہ موقوف کردہ بودم۔ درآں حال دو ہزار شعر گفتہ تدوین کردم"

میر کی فارسی شاعری کی اہمیت کا اعتراف کئی اور تذکرہ نگاروں نے بھی کیا ہے اور یہ حقیقت ہے کہ میر کی فارسی شاعری ان کی اردو شاعری کا اپنی نوعیت کے لحاظ سے ایک پرتو ہے۔ مختلف احساسات و جذبات کی جو پر اثر تصویریں میر کے اردو اشعار میں ملتی ہیں بڑی حد تک انھیں کا عکس ان کے فارسی اشعار میں نظر آتا ہے۔ اور بعض اشعار تو اردو کا ترجمہ معلوم ہوتے ہیں۔لیکن اردو اشعار میں جو کیف اور جذب ہے وہ فارسی میں نہیں ہے

آیا تو سہی وہ کوئی دم کے لیے لیکن ہونٹوں پہ میرے جب نفس باز پسیں تھا

بر سر ما بہ دم نزع رسیدی بہ عبث
ما کجائیم تو تصدیع کشیدی بہ عبث

فارسی شعر آورد کا آئینہ دار ہے "تصدیع۔" از صداع بہ معنی درد سر" فارسی کے لیے اجنبی اور ثقیل ہے۔ "تو تصدیع" حرف تا کی تکرار نے ہلکا سا تنافر بھی پیدا کر دیا ہے۔" ما کجائیم" کا ٹکڑا البتہ بلیغ ہے اور اس میں وہ سب کچھ آجاتا ہے جس کا اظہار

"ہونٹوں پہ میرے جب نفس باز پسیں تھا"

کے طولانی جملے سے ہوتا ہے۔ اردو شعر فارسی شعر کے مقابلے میں زیادہ اثر آفریں اور رواں ہے

آہوں کے شعلے جس جا اٹھتے ہیں میر شب کو واں جاکے صبح دیکھا مشت غبار پایا

میر جائے کہ بہ نیران محبت می سوخت
صبح دیدیم بہ جا ماندہ کف خاک آں جا

یہاں بھی اردو شعر اپنے محاکاتی انداز بیان کی وجہ سے زیادہ اثر انگیز ہے اور پورے واقعے کی دل دوز تصویر نگاہوں کے سامنے پھر جاتی ہے۔ "آہوں کے شعلے جس جا اٹھتے ہیں میر شب کو" کے متوازی

"میر جائے کہ بہ نیران محبت می سوخت"

मिठास प्रद है और "ग़ुबार" व "ख़ाक" की तुलना में अर्थ के दृष्टिकोण से उचित प्रतीत होता है।

इक मौजे हवा पेचाँ, ए मीर नज़र आई
शायद कि बहार आई, ज़न्जीर नज़र आई।

दिल मी कशद ब सहरा, हंगामे-कार आमद
शोरेस्त दर सरे मन, शायद कि बहार आमद

यहाँ फ़ारसी शेर, उर्दू शेर का अक्स है। उर्दू शेर में जो कैफ़ है, फ़ारसी शेर में उसका कोसों पता नहीं। "मौजे-हवा" के "पेचाँ" होने को रूपकात्मक अन्दाज़ में ज़न्जीर की उपमा में पेश करना और फिर अपनी दीवानगी की समस्त समाग्री एकत्रित हो जाने की ओर संकेत करना "शायद कि बहार आई ज़न्जीर नज़र आई" उनकी महानता एवं निपुणता का स्पष्ट उदाहरण है।

फिर न देखा कुछ बजुज़ यक शोलै पुरपेचो-ताब
शमा तक, तो मैंने देखा था कि परवाना गया

सहर गह दर सरे परवाना रफ़्तम
कफ़े ख़ाकिस्तेर गरमे ब जा बूद

"दर सरे परवाना रफ़्तन" किसी हद तक अविश्वासनीय है। जब तक "परवांना" से बहुत अधिक परवाने न समझे जायँ, उस वक़्त तक "कफ़े ख़ाकिस्तर" (एक मुट्ठी राख) का प्रयोग सही नहीं हो सकता। इसके विपरीत उर्दू शेर का जो अन्दाज़ है, उसके विरुद्ध प्रश्न उठाया नहीं जा सकता। जल जाने के बाद "शोलै पुरपेचो-ताब" का रूप ग्रहण करना तो परवाने के पुरातन काल से चले आरहे रिवायती इश्क़ में पाई जाने वाली बेचैनी का प्रतीक है। इससे उर्दू शेर की महानता और बढ़ जाती है।

न देखा मीरे आवारा को लेकिन—
ग़ुबार इक नातवाँ सा कू-ब-कू था

न दीदम मीर रा दर कूए ऊ लेक
ग़ुबारे नातवाने बा सबा बूद

ऊपर दिए फ़ारसी शेर में "ग़ुबार" का विशेषण "नातवाँ" शायद कुछ लोग पसन्द न करें, पर उर्दू शेर से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि मीर ने "नातवाँ" को "ग़ुबार" के ही विशेषण के रूप में प्रयोग किया है। क्योंकि "ग़ुबार" का विशेषण "नातवाँ" ही मीर के पेशे-नज़र था। यही नहीं "मीर" के लिए विशेषण "आवारा" के प्रयोग से तो शेर में जान आ गई है।

کسی طرح نہیں لایا جا سکتا

میرؔ نے عربی کا "نیران" جمع نار بمعنی آتش استعمال کیا ہے اس سے مصرعہ بوجھل ہو گیا ہے۔ اور روانی ختم ہو گئی ہے۔ پھر دوسرے مصرعے میں "مشت غبار" صوتی اعتبار سے "کفِ خاک" کے مقابلے میں زیادہ شیریں ہے اور "غبار" "خاک" کے مقابلے میں معنوی لحاظ سے بھی مناسب ہے

اک موج ہوا پیچاں اے میرؔ نظر آئی
شاید کہ بہار آئی زنجیر نظر آئی

دل می کشد بہ صحرا ہنگام کار آمد
شوریست در سرِ من شاید کہ بہار آمد

فارسی شعر اردو شعر کا عکس ہے اور جو کیف اردو شعر میں ہے فارسی شعر میں اس کا کوسوں پتا نہیں ہے۔ "موج ہوا" کے "پیچاں" ہونے کو استعارے کی زبان میں زنجیر سے تشبیہہ دینا اور پھر اپنی شوریدگی کے سازو سامان مہیا ہونے کی طرف لطیف اشارہ کرنا "شاید کہ بہار آئی زنجیر نظر آئی" قدرت بیان کے آیاتِ کمال میں سے ہے

پھر نہ دیکھا کچھ بجز یک شعلۂ پُر پیچ و تاب
شمع تک تو میں نے دیکھا تھا کہ پروانہ گیا

سحر گہ بر سرِ پروانہ رفتم
کفِ خاکسترِ گرمے بہ جا بود

"برسرِ پروانہ رفتن" کسی حد تک غیر فطری بات ہے۔ جب تک پروانے سے بہت سے پروانے مراد نہ لیے جائیں "کفِ خاکستر" تحقق نہیں ہو سکتا۔ اردو شعر جس انداز سے کہا گیا ہے۔ اس پر نکتہ چینیوں کا غبار نہیں بیٹھتا۔ جل جانے کے بعد "شعلۂ پر پیچ و تاب" کی شکل میں پروانے کا منتقل ہو جانا اس کے روایتی عشق کے اضطرابِ التہاب کی روشن علامت ہے۔ اس سے اردو شعر کی تابانی بڑھ جاتی ہے

نہ دیکھا میرؔ آوارہ کو لیکن غبار اک ناتواں سا کو بہ کو تھا

نہ دیدم میرؔ را در کوئے او لیک
غبارِ ناتوانے با صبا بود

غبار کی صفت "ناتواں" شاید کچھ اہلِ ذوق ناپسندیدہ سمجھیں اور اسے مرکب اضافی بتائیں مگر اردو شعر

जिस शेर पर समा था कल ख़ानक़ाह में

वह आज मैं सुना, तो है मेरा कहा हुआ।

दोश बर शेरे-तरे, बर रक़्स आमद जाने मा

चूं नज़र करदेम ख़ूब, आँ शेर बर दीवाने मा

यहाँ फ़ारसी शेर के दूसरे मिसरे में गद्य का सा अन्दाज़ आ गया है। उर्दू शेर का दूसरा मिसरा अपनी शैली के लिहाज़ से मधुरता एवं संगीत के सम्मिश्रण से उत्पन्न होने वाली कैफ़ियत का नमूना है। इस से पूर्ण शेर "तग़ज़्ज़ुल" की अंतिम सीमा पर पहुँच गया है।

इस संदर्भ में मीर के जिन शेरों का आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया है। उसका मक़सद केवल यही था कि यह बात स्पष्ट हो जाए कि मीर को उर्दू भाषा की बारीकियों पर निपुणता प्राप्त थी। मीर फ़ारसी भाषा के बहुत अच्छे ज्ञानी थे और उनकी फ़ारसी शायरी भी किसी प्रकार से कम नहीं है। इसमें भी मधुरता अधिक मात्रा में पायी जाती है। पर उर्दू की सी बात नहीं है और शायद इसी कारण उनके फ़ारसी-काव्य पर ध्यान नहीं दिया गया। हालांकि उनका फ़ारसी काव्य हल्का फुल्का, सादा और रवां है। उसमें कोमलता, घुलावट और मधुरता पाई जाती है और इश्क द्वारा उत्पन्न दर्दो-ग़म के चित्रण के लिए उचित है।

निम्नलिखित उदाहरणों से यह तथ्य स्पष्ट हो जायगा।

ए आँकि अज़ दयारे-ग़रीबां रसीदाई

बारे बिगो कि मीर दरां जा चे हाल दाश्त।

ए वह जो कि मुसाफ़िरों के शहर से यहाँ तक पहुँचा है, (ख़ुदा के लिए) यह तो बता दे कि वहाँ (ग़रीब) मीर की क्या दशा है।

ताकुजा शुद मीर ख़ाक-उफ़्तादा अज़ कूए तो आह

ख़िश्ते बालीं हस्तो ऊ दर सायं दीवार नेस्त।

धूल पर पड़ा हुआ मीर (आख़िर) तेरी गली से कहाँ चला गया। वह ईंट जिस पर कभी कभी सिर को टेक लेता था, वह तो है। लेकिन अफ़सोस स्वयं मीर तिरी दीवार के साये में नहीं।

आगह अज़ आमदने-मीर दरीं शहर नियम ईं ख़बर हस्त कि दर कूए तो ग़ोग़ाए हस्त

मुझे ख़बर नहीं कि मीर इस शहर में आ गया है। पर इतना अवश्य जानता हूँ कि तेरी गली में शोर है।

मीर, गोयन्द, दर फ़िराक़ न मुर्द ता चसां बे तो ज़िन्दगानी कर्द।

سے اس کی وضاحت ہو جاتی ہے کہ وہ "ناتواں" کو غبار کی صفت ہی قرار دے رہے ہیں کیونکہ "غبار" کی صفت "ناتواں" ہی میر کے پیش نظر نازک مفہوم ادا کر رہی ہے اور میر کی صفت "آوارہ" سے شعر میں جان آگئی ہے۔ دوسرے مصرعے میں

غبار اک ناتواں سا کو بہ کو تھا

میر کی "صفت آوارگی" کی حسین تعلیل ہے

جس شعر پر سماع تھا کل خانقاہ میں وہ آج میں سُنا تو ہے میرا کہا ہوا

دوش بر شعر ترے، در رقص آمد جانِ ما
چوں نظر کردیم بود آں شعر در دیوانِ ما

دوسرے مصرعے میں نثر نا کیفیت پیدا ہوگئی۔ اردو شعر کا دوسرا مصرعہ اپنے انداز بیان کے لحاظ سے خوش آہنگ شعری مزاج کا حامل ہے اور اس سے پورا شعر تغزل کے آسمان پر پہنچ گیا ہے۔ میر کے چند فارسی اور اردو اشعار کا جو تنقیدی جائزہ پیش کیا گیا ہے۔ اس کا مقصد صرف اس امر کی وضاحت ہے کہ میر کو اردو زبان پر حاکمانہ دسترس حاصل تھی۔ میر فارسی زبان پر بھی قدرت رکھتے تھے اور ان کی فارسی شاعری بھی کم رتبہ نہیں ہے اور اس میں بھی حلاوت و عذوبت اہم مقدار میں موجود ہے مگر اردو کی سی بات نہیں ہے اور شاید اسی وجہ سے ان کا فارسی کلام درخور اعتنا نہیں سمجھا گیا۔ حالانکہ ان کی فارسی شاعری ہلکی پھلکی اور رواں ہے اس میں نرمی گھلاوٹ اور شیرینی ملتی ہے اور عشق کے آفریدہ درد و غم کی تصویر کشی کے لیے بے حد مناسب اور موزوں ہے

اے آنکہ از دیارِ غریباں رسیدہ ای بارے بگو کہ میر در آں جا چہ حال داشت

اے وہ جو مسافروں کے شہر سے یہاں تک پہونچا ہے خدارا یہ تو بتا دے کہ وہاں غریب میر کا کیا حال ہے

تا کجا شد میر خاک افتادہ از کوئے تو آہ خشت بالیں ہست و او در سایۂ دیوار نیست

خاک پر پڑا ہوا میر آخر تیری گلی سے کہاں چلا گیا۔ وہ اینٹ جس پر کبھی کبھی سر کو سہارا دے لیتا تھا وہ تو ہے لیکن افسوس خود میر تری دیوار کے سایے میں نہیں ہے

آگہ از آمدنِ میر دریں شہر نیم ایں قدر ہست کہ در کوئے تو غوغائے ہست

مجھے خبر نہیں کہ میر اس شہر میں آگیا ہے۔ البتہ اتنا ضرور جانتا ہوں کہ تیری گلی میں شور و غوغا ہے

میر گویند در فراق نہ مُرد تا چساں بے تو زندگانی کرد

لوگوں کا کہنا ہے کہ میر فراق میں نہیں مرا بڑے تعجب اور حیرت کی بات ہے کہ پھر تیرے بغیر

लोगों का कहना है कि "मीर" बिरहा में नहीं मरा (बड़े आश्चर्य और अचंभे की बात है) कि फिर तेरे बग़ैर जीवित किस प्रकार रहा।

मी गुफ़्तमश कि दर्दे तो दरमाँ-पज़ीर नीस्त
दीदी कि मीर आख़िर अज़आँ दर्द दर-गुज़श्त ।

मैं कहा करता था कि तेरा दिया हुआ दर्द लाइलाज है आख़िर तूने देख लिया कि मीर इस रोग से जीवित न रह सका।

ईं बेकसी निगर कि कसे चश्म, तर न कर्द
यक अब्र हम, ब ख़ाके ग़रीबाँ गुज़र न कर्द

मेरी बेकसी की यह इन्तहा है कि किसी ने भी मेरी दुर्दशा पर एक आँसू भी नहीं बहाया (और) मेरी बेचारगी यहाँ तक पहुंची कि बादल का एक भी टुकड़ा मेरी ख़ाक पर से नहीं गुज़रा।

"मीर" ने अपने फ़ारसी-काव्य में प्रायः अपनी ईजाद की हुई तरकीबों का प्रयोग किया है। मगर यह बात अलग है कि उर्दू शेरों में यही तरकीबें नगीनों की तरह जड़ी हुई हैं और फ़ारसी अशआर में अधिक स्थानों पर यह तरकीबें नवीनतः पूर्ण और रोचक नहीं हैं। इसका कारण यह हो सकता है कि "मीर" के युग से पहले फ़ारसी-काव्य-साहित्य विशेष रूप धारण कर चुका था और उर्दू में यह बात नहीं आसकी थी। इसलिए "मीर" की साहित्यक खोजों का सिक्का उर्दू जगत में चल गया और उर्दू भाषा के ज्ञानियों ने उनकी कविता को सिर पर रखा और आँखों में जगह दी। पर 'सादी', 'हाफ़िज़', 'नज़ीर', और 'सायब' जैसे काव्य-सम्राट "मीर" की भाषा एवं शैली और उनकी बनाई हुई तरकीबों को स्वीकार न कर सके।

बे ताम्मुल कं शिनासी तर्ज़ें गुफ़्तारे मरा
दीदा नाज़ुक कुन कि फ़हमी हर्फ़े तहदारे मरा ।

सोच विचार से मेरी भाषा और बात-चीत का ढंग समझ में नहीं आसकता। (इसके लिए) आँख को नाज़ुक बनाने की आवश्यकता है, ताकि मेरी तहदार बातें समझ में आसकें। २३२

शब्द "तहदार" मीर को बहुत चहीता है। इसका प्रयोग उन्होंने फ़ारसी में किया है और उर्दू में भी। पर भारत और ईरान के भाषा-विशेषज्ञों और ज्ञानियों के यहाँ इसके प्रयोग का कोई उदाहरण नहीं मिलता। "तह ब तह", "तह-तेग़" और "तह-शमशीर" के उदाहरण प्रर्याप्त हैं और "तह को "तले" (ज़ेर) के अर्थ में प्रायः प्रयोग किया गया है।

وہ کس طرح زندہ رہا

می گفتمش کہ دردِ تو درماں پذیر نیست
دیدی کہ میرؔ آخر ازاں درد در گزشت

میں کہا کرتا تھا کہ تیرا دیا ہوا درد لاعلاج ہے۔ آخر تونے دیکھ لیا کہ میرؔ اس بیماری سے جانبر نہ ہو سکا

ایں بےکسی نگر کہ کسے چشم، تر نہ کرد
یک ابرہم، بہ خاکِ غریباں گزر نہ کرد

میری بےکسی کی یہ انتہا ہے کہ کسی نے بھی میری زبوں حالی پر ایک آنسو بھی نہیں بہایا اور میری بےچارگی یہاں تک پہونچ گئی کہ ابر کا ایک ٹکڑا بھی میری خاک پر سے نہیں گزرا

میرؔ نے اپنی فارسی شاعری میں اکثر اپنی تراشیدہ ترکیبوں سے کام لینے کی کوشش کی ہے لیکن یہ بات الگ ہے کہ اردو اشعار میں ان ترکیبوں کی حیثیت ترشے ہوئے نگینوں کی ہو جاتی ہے اور فارسی اشعار میں بیشتر مقامات پر یہ ترکیبی جدتیں پسندیدہ ثابت نہیں ہوتیں۔ اس کی وجہ ممکن ہے یہ ہو کہ میرؔ کے عہد سے پہلے فارسی کے کاملین شعروادب کا ایک مخصوص مزاج بن چکا تھا اور اردو کو یہ بات حاصل نہیں ہوئی تھی اس لیے میرؔ کے ادبی اختراعات کا سکہ اردو کے قلمرو میں چل گیا اور ارباب ذوق نے ان کو سر پر رکھا، آنکھوں پر جگہ دی۔ لیکن سعدیؔ و حافظؔ، نظیریؔ و صائبؔ کی زبان میرؔ کی اختراعی سعی کو اپنے دامن قبول میں جگہ نہ دے سکی

بے تامل کے شناسی طرزِ گفتارِ مرا
دیدہ نازک کن کہ فہمی حرفِ تہ دارِ مرا

غور و فکر سے میری طرز گفتگو اور بات چیت کی روش سمجھ میں نہیں آسکتی اس کے لیے آنکھ کو نازک بنانے کی ضرورت ہے تاکہ میری تہہ دار باتیں سمجھ میں آئیں

"تہ دار" دقیق اور باریک لفظ میرؔ کو بہت محبوب ہے اس کا استعمال انھوں نے فارسی میں بھی کیا ہے اور اردو میں بھی۔ مگر ایران اور ہندوستان کے اہل زبان کے یہاں اس کے استعمال کی سند نہیں ملتی۔ "تہ بہ تہ" "تہِ تیغ" "تہِ شمشیر" کی مثالیں ملتی ہیں اور "تہ" بہ معنی "زیر" کا استعمال اکثر کیا گیا ہے

بہ آں غیرت بہ عشقِ گل رخاں میرؔ
چہا از مردم "بےتہ" شنیدہ است

ब आँ ग़ैरत ब इश्क़े गुलरुख़ाँ मीर   चहा अज़ मरदुमे बेताब सुनीद नस्त

'मीर' "तग़ज़्ज़ुल" (प्रेम-चर्चा) के सम्राट थे। प्रेम चर्चा के तत्वों पर बनावट और तकल्लुफ़ का साया तक नहीं पड़ना चाहिए। इस कारण उन्होंने उपमा एवं रूपक के प्रयोग से अपने काव्य को बोझिल होने से बचा लिया। कारणवश उनके काव्य में अनोखी बातें और कलात्मक पेचीदगियाँ बस नाम मात्र को नज़र आती हैं।

दिल की बातें कहने के लिए जिस साफ़, सादी प्रभापूर्ण शैली की आवश्यकता होती है। मीर ने उसी को अपनाया है। मीर का हृदय पूर्णतया दुखी और वह स्वयं प्रेम रस में डूबे हुए थे। इसे प्रकट करने के लिए बनावटी अन्दाज़, और पेचदार शैली से काम नहीं लिया जा सकता था।

आँ आमदन चे लुत्फ़ कि आँ बादा-ख़ारे-नाज़

अज़ हाले मैकशाने वफ़ा बेख़बर गुज़श्त।

"बादा ख़ारे नाज़" और "मैकशाने वफ़ा", हरचन्द कि दोनों तरकीबें रूपक के आधीन हैं मगर इनमें बोझलपन और पेचीदगी नहीं है। पर इनसे 'मीर' की शैली की नुमाइन्दगी नहीं होती।

शब-हा ब मा नशस्तो सरे हर्फ़ वा न शुद   आँ नाज़-पेशा रूए-सुख़न, दर नक़ाब दाश्त

इस शेर में "रुए-सुख़न दर नक़ाब दाशतन" और "सरे हर्फ़ वा न शुद" में रूपक के अनुचित प्रयोग के कारण शैली के फ़ितरी अन्दाज़ को बहुत हानि पहुँची है। प्रभाव में कमी भी आगई है।

'मीर' को कहना केवल इतना है कि "नाज़ पेशा महबूब" अनेक रातों को मेरे पास बैठा पर मौन रहा और बात नहीं की।

आँ शोख़ अज़ न्याज़म मग़रूर तर शुद आख़िर

हरगिज़ नबाद सूदम, हर चन्द सज्दा सूदम।

वह शोख़ (महबूब) मेरी प्रशंसात्मक मिति के कारण अधिक मग़रूर हो गया और मेरे माथा टेकने से भी कोई लाभ नहीं हुआ।

ऊपर दिए गए शेर के दूसरे मिसरे में "सूदम" दो बार प्रयोग हुआ है। एक स्थान पर संज्ञा के रूप में और दूसरे स्थान पर "क्रिया" के रूप में। कारण-वश "तजनीसे-लफ़्ज़ी" पैदा हो गई है।

'मीर' ने ग़ज़ल के अतिरिक्त नाना प्रकार की कविता की है पर उसमें वह रस, मधुरता और घुलावट नहीं जो उनकी ग़ज़लों की विशेषता है।

میر خدائے تغزل تھے اور تغزل کے عناصر میں تکلف و تصنع کا عکس نہیں پڑتا اسی لیے دور از کار تشبیہات و استعارات کے استعمال سے انھوں نے اپنے تغزل کا چہرہ مہرہ نہیں بگاڑا یہی وجہ ہے کہ ان کے کلام میں علم بدیع کے صنایع و بدایع خال خال ہی نظر آتے ہیں۔ حدیث دل بیان کرنے کے لیے جس صاف ستھرے پیچیدگی سے پاک انداز بیان کی ضرورت ہے میر نے اس کو اپنا اسلوب بنایا ہے۔ میر سراپا عشق و سراپا سوز تھے اس کی ترجمانی فطری طور پر اس انداز بیان سے نہیں ہوسکتی تھی جو غیر ضروری تکلفات کے بوجھ سے دبا ہوا ہے

زیں آمدن چہ لطف کہ آں بادہ خوارِ ناز

از حالِ مے کشانِ وفا بے خبر گزشت

"بادہ خوارِ ناز" اور "مے کشانِ وفا" ہرچند کہ دونوں ترکیبیں استعارے میں ڈوبی ہوئی ہیں اور ان میں کوئی گرانی اور پیچیدگی بھی نہیں ہے۔ مگر ان سے میر کے اسلوب بیان کی نمائندگی بھی نہیں ہوتی۔

شب ہا بہ ما نشست و سرِ حرف وا نہ شد

آں ناز پیشہ روئے سخن در نقاب داشت

"سر" "رو" اور "نقاب" میں صنعت "مراعات النظیر" ہے۔ اور "روئے سخن در نقاب داشتن" اور "سرِ حرف وا نہ شد" میں استعارے کی کارفرمائی ہے جس کی وجہ سے فطری اسلوب ادا کو نقصان پہونچا ہے اور وہ تاثیر ختم ہوگئی ہے جو میر کی خصوصیات میں شامل ہے

کہنا صرف اس قدر ہے کہ ناز پیشہ محبوب بہت سی راتوں کو میرے ساتھ بیٹھا لیکن خاموش رہا اور بات نہیں کی

آں شوخ از نیازم مغرور تر شد آخر

ہرگز نداد سودم ہرچند جبہہ سودم

وہ شوخ میری نیاز کیشی کی وجہ سے مغرور ہوگیا اور میری جبہہ سائی سے کوئی فائدہ نہیں ہوا ایک جگہ "اسم" کی صورت میں، دوسری جگہ "فعل" کی شکل میں اس کی وجہ سے تجنیس لفظی پیدا ہوگئی ہے

میر نے غزل کے علاوہ دوسرے اصناف میں بھی زمزمہ سرائی کی ہے۔ لیکن ان کے دوسرے فنوں میں وہ رس، وہ مٹھاس، وہ گھلاوٹ نہیں ہے جو ان کی غزلیہ شاعری کا طرۂ امتیاز ہے

از ما حکایتِ غمِ دل می تواں شنید

ما خوب می کنیم بیاں، ایں مقالہ را

अज़ मा हिकायते ग़मे दिल मी तवाँ शुनीद मा ख़ूब मी कुनेम बयाँ, ईं मक़ाला रा ।

हम से दिल के रंज़ोग़म की कहानी भली भांति सुनी जा सकती है (और) उसको कुछ हमीं बयान भी कर सकते हैं ।

यक रह तो हम ब पुर्स अज़ू, ए नसीमे सुब्ह मन ख़ुद न्याफ़्तम सबबे दाग़े लाला रा ।

प्रातः काल की शीतल हवा ! कभी तूही उससे पूछ कि "लाला" के फूल के जिगर में दाग़ क्यूं है । इसका कोई कारण मेरी समझ में तो आता नहीं ।

शोरे तो अन्दलीब, जिगर चाक मी कुनद आमोख़्ती ज़े मीर, मगर तर्ज़ें नाला रा ।

बुलबुल ! तेरे रोने से जिगर टुकड़े टुकड़े होता है । कहीं ऐसा तो नहीं है कि तूने 'मीर' से रोने-धोने का ढंग सीख लिया है ।

कूचे ऊरा चमन करदेम,चूं रुख़सत शुदेम रेख़्त रंगे ताज़ा सद जा, दीदें-ख़ूंबारे मा

जब में बिदा हुआ तो उसकी गली को चमन बना दिया । (क्यूंकि) हमारी ख़ून छिड़कती हुई आँख ने सैकड़ों जगह ताज़ा ख़ून बरसा दिया है ।

जुज़ बदी अज़ कसे नमी आमद रस्मे ख़ूबेस्त दर ज़मानें मरा

बुराई के सिवा किसी से कुछ नहीं मिलता । हमारे ज़माने मे यह बड़ी अच्छी रीति है ।

ता चे पेश आमद नदानम मीर रा दर राहे इश्क़
रोज़गारे शुद कि हाले आँ ज़वाँ मालूम नीस्त

मालूम नहीं प्रेम-मार्ग में मीर पर क्या बीती । एक ज़माना हो गया, इस ज़वान का हाल मालूम नहीं हुआ ।

मालूम शुद कि मन्ज़िले मा नीस्त ईं चमन
बर हर कसे कि चश्म फ़िताद, इज़तराब दाश्त ।

मालूम हुआ कि यह दुनिया (चमन) हमारी मंज़िल नही है क्योंकि यहाँ तो जिस पर नज़र पड़ी वह परेशाँ-हाल और व्याकुल ही दीख पड़ा ।

ख़ाब इमशब हम ब याराँ शुद हराम क़िस्सें ग़म, मीर बाज़ आग़ाज़ कर्द[1]

आज की रात भी दोस्तों पर नींद हराम हो गई है (उड़ गई है) क्योंकि 'मीर' ने अपने दुख का किस्सा फिर छेड़ दिया है ।

सहर हर रोज़ ख़ुर्शीद अज़ सरे कूयत गुज़र दारद
नमी दानद मगर आँ सादा कीं रह सद ख़तर दारद

१. कवि 'मीर हसन' ने भी इस संदर्भ में यह शेर ख़ूब कहा है ।

फिर छेड़ा 'हसन' ने अपना क़िस्सा
बस आज कि शब भी सो चुके हम ।

ہم سے دل کے رنج و غم کی حکایت اچھی طرح سنی جاسکتی ہے اور اس کو اچھی طرح کچھ ہمیں بیان کرسکتے ہیں

یک رہ تو ہم بہ پرس ازو ، اے نسیم صبح
من خود نیافتم سببِ داغ لالہ زار

نسیم صبح کبھی تو ہی اس سے پوچھنا کہ گل لالہ کے جگر میں داغ کیوں ہے ۔ اس کا کوئی سبب میری سمجھ میں تو نہیں آسکا

شورِ تو عندلیبِ جگر چاک می کند آموختی زمیرؔ مگر طرزِ نالہ را

بلبل تیرے نالہ و فریاد سے جگر چاک چاک ہوتا ہے۔ کہیں ایسا تو نہیں ہے کہ تو نے میرؔ سے نالہ وفریا کا ڈھنگ سیکھ لیا ہے ؟

کوچۂ اورا چمن کردیم چوں رخصت شدیم ریخت رنگِ تازہ صد جا دیدۂ خوں بارِ ما

جب میں رخصت ہوا تو اس کی گلی کو چمن بنا دیا ۔ کیوں کہ ہماری چشم خوں فشاں نے سیکڑوں جگہ تازہ خون برسایا ہے

جز بدی از کسے نمی آید بہم خوبیست در زمانۂ ما

برائی کے سوا کسی سے کچھ حاصل نہیں ہوتا ۔ ہمارے زمانے میں یہ بڑی اچھی رسم ہے

تا چہ پیش آمد ندانم میر را در راہِ عشق
روزگارے شد کہ حالِ آں جواں معلوم نیست

معلوم نہیں عشق کے راستے میں میرؔ پر کیا سانحہ گزرا ایک زمانہ ہوگیا اس جوان کا حال نہیں معلوم ہوا

معلوم شد کہ منزلِ ما نیست ایں چمن بر ہر کسے کہ چشم فتاد اضطراب داشت

معلوم ہوا کہ یہ دنیا (چمن) ہماری منزل نہیں ہے کیونکہ یہاں تو جس پر بھی نظر پڑی وہ پریشان حال و مضطرب ہی نظر آیا

خوابِ امشب ہم بہ یاراں شد حرام قصۂ غم میرؔ باز آغاز کرد

آج کی رات بھی دوستوں پر نیند حرام ہوگئی کیوں کہ میرؔ نے اپنے غم کا قصہ پھر شروع کردیا

اسی روشنی میں میرحسنؔ نے بھی کیا خوب کہا ہے

भोर समय सूर्य रोज़ तेरी गली से गुज़रता है। मूर्ख यह नहीं जानता कि इस रास्ते में सैकड़ों ख़तरे हैं।

गुम रहे आशियां फ़रामोशम ताइरे नौ परीदा रा मानम।

मैं अपने ठिकाने का रास्ता भूल गया हूं और उस चिड़िया के समान हूं जिसने अभी उड़ना सीखा हो।

ऊपर के शेर में आनन्ददायक उपमा के कारण शेर में कोई दोष नहीं आया। यह मीर के (IMAGINATION) की बड़ी सुन्दर मिसाल है।

'मीर' की ग़ज़लों के अतिरिक्त अब उनकी दो रुबाइयां, मुसद्दस का एक बन्द. और मसनवी के चन्द शेर भी प्रस्तुत कर रहा हूं ताकि मीर के इस रंग का भी अनुभव हो जाए।

तिफ़्ली हम ए मीर ब ग़फ़लत बुगुज़श्त बरनाइए मन ब ऐशो इशरत बुगुज़श्त
बर शोब जुज़ अफ़सोस कुनूं नतवां कर्द मोहलत कम मुन्दो वक़्ते फ़ुर्सत बुगुज़श्त

मीर मेरा बचपन ग़फ़लत में बीत गया। मेरा यौवन ऐशो आराम की भेंट चढ़ गया। अब बुढ़ापा आ गया। इसमें अब अफ़सोस के सिवा क्या किया जा सकता है। अवकाश का समय बीत गया। अब फ़ुर्सत का समय कहां।

ए ख़त्मे रसुल चारा न दारद दर दम बख़्शाए कि जुर्मे बे निहायत करदम
बर चेहरे ज़र्द, ख़ूनम आमद हर दम यानी कि ज़े फ़र्ते शर्म सुर्ख़ो ज़र्दम

ए मुहम्मद साहब! (अंतिम रसूल) मेरे दर्द का कोई इलाज नज़र नहीं आता आप ही मेरे मोक्ष का (बख़शिश) का कोई प्रबन्ध करें। मैंने अनगिनत गुनाह किए हैं। मेरे ज़र्द चेहरे पर हर समय शर्म की लाली (ख़ून) छायी रहती है। कभी-कभी तो चेहरा गुनाहों के डर से बिल्कुल ही पीला पड़ जाता है।

यक रह ब सर बियाओ ब ख़ाकम अयां निगर दस्तम बिन्हे ब सीनो दिल रा तपां निगर
चश्मे कुशाबईं मिज़हे ख़ूं-फ़िशां निगर लुत्फ़े नमाओ हाले मैंने ख़स्ता-जां निगर
या मुरतज़ा अली, करमत बे निहायत अस्त
हंगामे दस्तगीरीयो वक़्ते इनायत अस्त

एक बार तो मेरे सिरहाने (बालीं) पर पधारिए और मेरी दशा को भली-भांति देखिए। मेरे सीने पर हाथ रखिए और दिल की तड़प और व्याकुलता देखिए। मुझ पर दृष्टि कीजिए और मेरी ख़ून छिड़कती पलकों को देखिए। कृपा मेरी दुरदशा पर तरस खाइए। ऐ (हज़रत) अली! आपकी मुझ पर असीम कृपा और इनायत है। फिर भी इस समय आपकी दया दृष्टि की बहुत आवश्यकता है।

پھر چھیڑا حسن نے اپنا قصّہ بس آج کی شب بھی سو چکے ہم

سحر ہر روز خورشید از سرِ کوئت گزر دارد
نمی داند مگر آں سادہ کیں رہ صد خطر دارد

صبح کے وقت سورج روز تیری گلی سے گزرتا ہے۔ بیوقوف یہ نہیں جانتا کہ اس راستے میں سیکڑوں خطرے ہیں۔

شد رہِ آشیاں فراموشم طائرِ نو پریدہ را مانم

میں اپنے آشیانے کا راستہ بھول گیا ہوں اور اس طائر کے مشابہ ہوں جس نے ابھی اڑنا سیکھا ہو شعر میں لطیف تشبیہہ کی وجہ سے ذوقِ شعر بدمزہ نہیں ہوتا اور یہ میّر کی نادرہ کار تخئیل IMAGINATION کا خاص رنگ ہے

دو رباعیاں، مسدس کا ایک بند اور مثنوی کے چند شعر بھی ملاحظہ کر لیجیے۔

طفلی ہم اے میّر بہ غفلت بہ گزشت برنائیِ من بہ عیش و عشرت بہ گزشت
در شیب جز افسوس کنوں نتواں کرد مہلت کم ماند و وقتِ فرصت بہ گزشت

میّر میرا بچپن غفلت کی نذر ہوا۔ میری جوانی عیش و عشرت کی رنگ رلیوں میں ختم ہوگئی۔ بڑھاپا آگیا اب افسوس کے سوا کیا کیا جا سکتا ہے، فرصت کا زمانہ بیت گیا، اب فرصت کا وقت نہیں رہ گیا

اے ختمِ رُسل چارہ نہ دارد دردم بخشائے کہ جرم بے نہایت کردم
بر چہرۂ زرد، خونم آید ہر دم یعنی کہ ز فرطِ شرم سرخ و زردم

اے کائنات کے سردار محمد مصطفیٰؐ میرے درد کا کوئی درماں، کوئی علاج نظر نہیں آتا۔ آپ ہی میری بخشش کا سامان فرمایئے۔ میں نے بے انتہا گناہ کیے ہیں۔ یہی وجہ ہے کہ فرطِ شرم کی وجہ سے کبھی چہرے پر سرخی کے آثار نمودار ہو جاتے ہیں۔ کبھی چہرہ بالکل زرد پڑ جاتا ہے

یک رہ بسر بیا و بہ خاکم عیاں نگر دستم بنہ بہ سینۂ دل را طپاں نگر
چشمے کشاد ایں مژۂ خوں فشاں نگر لطفے نما و حالِ منِ خستہ جاں نگر

یا مرتضیٰ علی کرمت بے نہایت است
ہنگامِ دست گیری و وقتِ عنایت است

ایک بار تو میری بالیں پر تشریف لایئے، میری حالت دیکھیے، میرے سینے پر ہاتھ رکھیے اور دل کی

ए सबा गर सूए देहली बुगज़री हम चु सर-सर गाह बुगज़र सरसरी ।
बोसा दह बर हर क़दम अज़ सूये मन सूद बर आँ ख़ाक उम्रे रूए मन ।
बर मक़ाबिर, आयते रहमत बुख़ाँ बर मसाजिद, ख़िदमते अज़ मन रसाँ ।
बाद अज़ाँ बुगशा सरे ईं दास्ताँ यानी आँ सर ख़ैले आशुफ़्ता-दीदगाँ ।
अज़ वतन, महजूर, बेदिल, 'मीर' नाम मी कुनद अज़ ग़म बुकाए सब्हो शाम ।

ए सबा ! अगर तेरा गुज़र दिल्ली की ओर हो । चाहे सर-सर (तेज़ हवा) की तरह ज़रा देर ही के लिए जाना तो मेरी ओर से वहाँ हर-हर पग और हर-हर क़दम पर बोसा देना । उस धरती पर काफ़ी समय तक मेरा चेहरा रहा है । मैंने माथा रगड़ा है । वहाँ के मक़बरों पर मेरी ओर से "रहमत की आयतें" पढ़ना । वहाँ की मस्जिदों को मेरा सलाम कहना । इसके बाद मेरी कहानी कहना कि दुखियों का सरदार मीर जो अपने वतन से बिछड़ा हुआ है और व्याकुल है, वह तेरी जुदाई के ग़म में रात-दिन रोता रहता है ।

मीर के फ़ारसी दीवान की एक हस्तलिपि रज़ा लाइब्रेरी, रामपुर में है । एक ब्याज़ (हाथ की लिखी हुई) आज़ाद लाइब्रेरी, मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़ के सुब्हानउल्ला सेक्शन में है । इसमें २६४० शेर हैं । एक दीवान (हस्तलिपि में) प्रो० मसूद हसन रिज़वी की लाइब्रेरी में भी है और मैंने उसी से सहायता ली है ।

تڑپ ملاحظہ فرمایے۔ مجھ پر توجہ کیجیے اور خون برسانے والی پلکوں پر نظر ڈالیے۔ مہربانی فرمایے اور مجھ خستہ جاں کی حالت زار پر نظر کیجیے۔ مشکل کشا آپ کی عنایتیں مجھ پر بے حد حساب ہیں۔ یہ وقت پوری توجہ اور مدد کا ہے

اے صبا گر سوئے دہلی بگذری ہم چو صرصر آہ بگذر سرسری
بوسہ دہ بر ہر قدم از سوئے من بود بر آں خاک عمرے روئے من
بر مقابر، آیۂ رحمت بہ خواں در مساجد خدمتے از من رساں
بعد ازاں بکشا سر ایں داستاں یعنی آں سرخیلِ آفت دیدگاں
از وطن مہجور بیدل میرؔ نام
می کند از غم بکائے صبح و شام

صبا اگر تیرا گزر دہلی کی طرف ہو یا تیز ہوا کی طرح سرسری گزر رہی کیوں نہ ہو میری طرف سے وہاں قدم قدم پر بوسہ دینا۔ اس سرزمین پر ایک زمانے تک میرا قیام رہا ہے۔ میں نے وہاں اپنی پیشانی رگڑی ہے۔ وہاں کے مقبروں پر میری طرف سے رحمت کی آیتیں پڑھنا۔ وہاں کی مسجدوں کو میرا اسلام پہونچانا اور سلام و پیام کے بعد اس داستان کو شروع کرنا کہ آفت کے مارے ہوؤں کا سرغنہ میرؔ جو وطن سے بچھڑ گیا ہے۔ بے قرار و مضطر ہے۔ وہ جدائی کی وجہ سے صبح و شام روتا رہتا ہے

میرؔ کے فارسی دیوان کا ایک قلمی نسخہ رضا لائبریری رام پور میں ہے۔ ایک قلمی بیاض جس میں ۲۹۲۰ اشعار ہیں آزاد لائبریری مسلم یونی ورسٹی علی گڑھ کے سبحان اللہ مرحوم رئیس گورکھپور سکشن میں ہے اور ایک دیوان پروفیسر مسعود حسن رضوی کے کتب خانے میں ہے۔ اور میں نے اسی سے استفادہ کیا ہے

मीर की भाषा

डाक्टर शुजाअत अली सन्दीलवी

"ख़ुदा-ए-सुख़न"[१] मीर तक़ी "मीर" की भाषा में जो सरलता और सादगी, प्रभाव और कोमलता, माधुर्य और रोचकता है उसने जन-साधारण और विशिष्ट-जन दोनों के मन मोह लिये हैं। सबने उनकी भाषा की उत्कृष्टता स्वीकार की और उनका यह दावा मान लिया :

सारे आलम[२] पर हूँ मैं छाया हुआ   मुस्तनद[३] है मेरा फ़रमाया हुआ

"मीर" को अपनी भाषा पर सदैव अभिमान रहा। यह अभिमान कभी-कभी आत्मश्लाघा और आत्म-विज्ञप्ति की सीमा तक बढ़ जाता।

गुफ़्तगू रेख़्ते में हमसे न कर   यह हमारी ज़बान है प्यारे

इस फ़न[४] में कोई बेतह[५] क्या हो मेरा मुआरिज़[६]
अव्वल[७] तो मैं सनद[८] हूँ, फिर ये मेरी ज़बाँ है

किन्तु भाषा-प्रेमी उनके इस अभिमान पर हज़ार जान से क़ुर्बान होते, बात करने की कला सीखने के लिए उनकी हर उग्रता और कठोरता सहन करते; "मीर" के रंगीन विचारों की वाटिका की सैर करने के लिए इसलिए बेचैन रहते कि वहाँ "मीर" की भाषा का लालित्य, उसका रस-रंग उनके चित्त को मदमत्त और मोहित कर लेता। वहाँ उन्हें "मीर" की ग़ज़लों की तुलना में बुलबुल का मधुर गायन भी तुच्छ प्रतीत होता था :

बुलबुल ग़ज़लसरायी[९] आगे हमारे मत कर   सब हमसे सीखते हैं अन्दाज़[१०] गुफ़्तगू के

"अन्दाज़े-गुफ़्तगू" का यह चमत्कार "मीर" को यूं ही नहीं प्राप्त हो गया था। उनकी भाषा की व्यथा, प्रभावकारिता, उनमें निहित दाह और उन सब में निहित मर्मस्पर्शी शक्ति में उनके वातावरण और सांस्कृतिक उत्तराधिकार का बड़ा हाथ

१. कवीन्द्र, कवीश। २. विश्व। ३. प्रामाणिक। ४. कला। ५. छिछला। ६. समता करने वाला। ७. प्रथमतः ८. प्रमाण। ९. ग़ज़ल गाना। १०. ढंग।

میرؔ کی زبان

ڈاکٹر شجاعت علی سندیلوی

خدائے سخن میر تقی میرؔ کی زبان میں جو سادگی و سلاست، تاثیر و لطافت شیرینی و دل کشی ہے اس نے عوام و خواص دونوں کے دلوں کو موہ لیا۔ سب نے ان کی زبان کا کلمہ پڑھا اور ان کے اس دعویٰ کو تسلیم کیا۔

سارے عالم پر ہوں میں چھایا ہوا   مستند ہے میرا فرمایا ہوا

میرؔ کو اپنی زبان پر ہمیشہ فخر رہا یہ فخر کبھی کبھی خود پسندی اور خود نمائی کی حد تک بڑھ جاتا۔

گفتگو ریختے میں ہم سے نہ کر   یہ ہماری زبان ہے پیارے

اس فن میں کوئی بے تہہ کیا ہو مرا معارض
اوّل تو میں سند ہوں، پھر یہ مری زباں ہے

لیکن زبان کے شیدائی ان کے اس فخر و ناز پر ہزار جان سے قربان ہوتے انداز گفتگو سیکھنے کے لیے ہر قسم کی خفگی برداشت کرتے، میرؔ کے رنگین خیالوں کے چمن کی سیر کرنے کے لیے اس لیے بے چین رہتے تھے کہ وہاں زبان میرؔ کی لطافت، خوشبو اور رنگینی ان کے قلب و دماغ کو مسحور و مخمور کردیتی۔ وہاں انھیں میرؔ کی غزل سرائی کے سامنے بلبل کی خوش الحانی بھی بے حقیقت معلوم ہوتی۔

بلبل غزل سرائی آگے ہمارے مت کر   سب ہم سے سیکھتے ہیں انداز گفتگو کے

انداز گفتگو میں یہ کمال میرؔ کو یوں ہی نہیں حاصل ہوگیا۔ ان کی زبان کے درد و اثر اور سوز و گداز میں ان کے ورثہ اور ماحول کا بڑا ہاتھ تھا۔ وہ ایک بہت بڑے درویش

था। वह एक बहुत बड़े दुरवेश बाप के बेटे थे जिनका अन्तर तत्त्व-ज्ञान का दर्पण था, वह शुद्ध प्रेम-योग के स्वाद से सुपरिचित थे और भगवद्-प्रेम से विभोर रहते थे, जिनकी शिक्षा यह थी :

"बेटा, प्रेम अपनाओ। प्रेम ही इस कर्म-क्षेत्र पर हर ओर से छाया हुआ है। यदि प्रेम न होता तो यह सारी व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाती। प्रेम-विहीन जीवन मरुस्थल है और प्रेम में सर्वार्पण ही वास्तविक उत्कर्ष है। प्रेम ही निर्माण करता है और प्रेम ही परिणति है।"

"मीर" के कानों में दिन-रात यही शब्द पड़ते। उनके चतुर्दिक भगवद्-प्रेम के मतवालों की भीड़ रहती। उनके स्नेहशील पिता ने अपने होनहार पुत्र की शिक्षा-दीक्षा के लिए अपने एक शिष्य-विशेष सैयद अमानुल्लाह को चुना। सैयद साहब भी भक्त जीव थे और रात-दिन भगवत्-प्रेमियों की मण्डलियों की सुसंगति में ही बिताते थे। गुरु-पुत्र की सेवा करना बड़ा सौभाग्य समझते थे। "मीर" से उन्हें प्रगाढ़ स्नेह था। वह सम्पूर्ण मनोयोग से उन्हें पढ़ाते और छाया की तरह अपने ही साथ रखते थे। "मीर" पर उनकी शिक्षा और सन्तों की सुसंगति का बड़ा प्रभाव पड़ा। करुणा, त्याग, धैर्य एवं सन्तोष जैसे गुण उनका स्वभाव बन गये। दुःख का विषय है कि सैयद अमानुल्लाह की स्नेह-छाया और संरक्षण से "मीर" शीघ्र ही वंचित हो गये। अभी उनकी अवस्था बारह वर्ष की होगी कि सैयद अमानुल्लाह अपने इष्ट से जा मिले। उनके देहावसान के कुछ ही दिनों बाद "मीर" के सर से उनके पिता की छाया भी हट गयी। "मीर" अनाथ और आश्रयहीन हो गए। इस अनाथावस्था ने उनके करुणा-कोमल मन को और भावुक, और सम्वेदनशील बना दिया। उनके भाई हज़रत यूसुफ़[1] के भाइयों से अधिक निर्मम सिद्ध हुए। न थक कर बैठ रहने का स्थान, न आगे बढ़ने का मार्ग—इसी घोर संघर्ष और भीषण अन्तर्द्वन्द्व ने उनका जीना दूभर कर दिया। यथासाध्य वे धैर्य, संयम एवं सन्तोष से काम लेते रहे किन्तु कब तक? अन्ततोगत्वा गृहत्याग पर विवश हुए और दिल्ली की ओर चल खड़े हुए। अल्पायु "मीर" पर गृह-त्याग से जो कुछ बीत गई उसका ठीक-ठीक अनुमान कौन कर सकता है? दिल्ली पहुँचकर कुछ दिनों तक ठोकरें खाने के बाद उनकी पहुँच अमीर समसामुद्दौला तक हो गयी। उन्होंने सहारा दिया लेकिन यह सहारा भी नादिरशाह के हमले ने तोड़

१. एक पैग़म्बर जिनके सौतेले भाइयों ने उन्हें धोखे से अन्धे कुँवें में गिरा दिया था और ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी थी कि उन्हें एक ग़ुलाम की तरह बिकना पड़ा था।

باپ کے بیٹے تھے، جن کا دل حقیقت و معرفت کا آئینہ تھا جو عشق حقیقی کی لذت سے آشنا تھے، اور محبت الٰہی میں سرشار رہتے تھے۔ جن کی تعلیم یہ تھی کہ

"بیٹا عشق اختیار کرو۔ عشق ہی کا اس کارخانے پر تسلط ہے۔ اگر عشق نہ
ہوتا تو یہ تمام نظام درہم برہم ہوجاتا۔ بے عشق کی زندگانی وبال ہے
اور عشق میں دل کھونا اصل کمال ہے۔ عشق بسازد و عشق بسوزد"

میرؔ کے کانوں میں دن رات یہی الفاظ پڑتے، ان کے اردگرد عشق و محبت الٰہی کے متوالوں کا ہجوم رہتا شفیق باپ نے ہونہار بچے کی تعلیم کے لیے اپنے ایک خاص مرید، سید امان اللہ کو انتخاب کیا۔ سید صاحب صاحب دل بزرگ تھے اور دن رات اللہ والوں کی صحبت میں رہتے تھے۔ پیرزادے کی خدمت کرنا بڑی سعادت سمجھتے تھے میرؔ سے انھیں بے حد محبت تھی وہ بڑی توجہ سے ان کو پڑھاتے اور سایہ کی طرح اپنے ساتھ رکھتے۔ میرؔ پر ان کی تربیت اور بزرگان دین کی صحبت کا بہت اثر ہوا وہ دمندی بے نیازی، صبر، قناعت، ان کی فطرت ثانیہ بن گئی۔ افسوس ہے کہ سید امان اللہ کی شفقت اور سرپرستی سے میرؔ بہت جلد محروم ہوگئے۔ ابھی ان کی عمر گیارہ بارہ برس کی ہوگی کہ سید امان اللہ محبوب حقیقی سے جاملے، ان کے انتقال کے کچھ ہی دنوں بعد میرؔ کے سر سے بزرگ باپ کا سایہ بھی اٹھ گیا۔ میرؔ یتیم و بے سہارا ہوگئے یتیمی کے داغ نے ان کے گداختہ دل کو اور زیادہ گداز بنادیا۔ بھائی برادران یوسف سے زیادہ بے مہر ثابت ہوئے 'نہ جائے ماندن نہ پائے رفتن' کی کشمکش اور کشاکش سے میرؔ کے لیے زندگی دوبھر ہوگئی۔ مقدور بھر صبر و ضبط کرتے رہے لیکن تابکے، آخر گھر چھوڑنے پر مجبور ہوئے اور دلی کا رُخ کیا۔ کم عمری میں جلا وطنی سے میرؔ کے دل پر جو بیت گئی اس کا اندازہ کون کرسکتا ہے؟ دلی پہنچے کچھ دنوں ٹھوکریں کھانے کے بعد، امیر صمصام الدولہ تک رسائی ہوگئی انھوں نے سہارا دیا لیکن یہ سہارا بھی نادر شاہ کے حملے نے ختم کردیا امیر موصوف قتل کردیے گئے۔ میرؔ نے اپنی آنکھوں سے دلی کی بربادی دیکھی، اس بربادی کا ان کے غم زدہ دل پر گہرا اثر ہوا، کسی نہ کسی طرح وہ دلی سے اکبرآباد واپس آگئے۔ یہاں آنے پر بھی انھیں سکون نہ حاصل ہوسکا۔ وہ ایک ایسے سانحے

दिया। अमीर महोदय मार डाले गए। "मीर" ने अपनी आँखों से दिल्ली की बर्बादी देखी। इस बर्बादी का उनके दुःख-विदग्ध, सम्वेदनशील मन पर बहुत गंभीर प्रभाव पड़ा। किसी न किसी प्रकार वे दिल्ली से अकबराबाद वापस आ गए। यहाँ आने पर भी उन्हें शान्ति न मिल सकी और वह एक ऐसी आपदा में फँसें जिसने न केवल उनके पीड़ित मन की शांति सदा के लिए हर ली बल्कि उनमें एक प्रकार का उन्माद, मनोविकार अथवा पागलपन उत्पन्न कर दिया। उनके काव्य में स्थान-स्थान पर इस ओर संकेत मिलते हैं।

मसायब[१] और थे, पर दिल का जाना — अजब इक सानिहा-सा[२] हो गया है

"मीर" जबसे गया है दिल तबसे — मैं तो कुछ हो गया हूँ सौदाई[३]

दिल तड़पे है जान खपे है हाल जिगर का क्या होगा
'मजनूं-मजनूं' लोग कहे हैं मजनूं क्या हम-सा होगा ?

दिल की कुछ तक़सीर[४] नहीं है आँखें उससे लग पड़ियां[illegible]
मार रखा सो उनने[illegible] मुझको किस ज़ालिम से जा लड़ियां[illegible]

"जुनूं"[५] के यही लक्षण अकबराबाद को सदा सर्वदा के लिए त्यागने के कारण बने। *उन्हीं के कारण "मीर" के भाई को उनसे और अधिक शत्रुता करने का* अवसर मिल गया। इस बार वह अकबराबाद से चले तो अन्य पीड़ाओं के साथ-साथ प्रेम-पीर भी उनके साथ थी। उन्हें कदाचित यह विश्वास हो गया था कि अब संभवतः वह अकबराबाद न आ सकें :

यूं उठे आह उस गली से हम — जैसे कोई जहाँ से उठता[६] है

"मीर" अश्रुपूरित नयन और प्रेम-विदग्ध मन लिये दिल्ली की ओर चल पड़े और अपनी सौतेली माँ के भाई सिराजुद्दीन अली ख़ाँ "आरज़ू" के पास पहुँचे। योग्य मामूं ने "मीर" की शिक्षा-दीक्षा पर विशेष ध्यान दिया और कुछ ही दिनों में उन्हें भाषा का जौहरी बनाकर इस योग्य कर दिया कि वह काव्य-लोक के अधिष्ठाता बन सके। दुःख का विषय है कि "मीर" को आरज़ू की ज्ञान-सरिता से तृप्त होने का अधिक अवसर न मिल सका। उनके सौतेले भाई के विरोध ने उनके प्रेम-प्रकरण को कुछ इतना बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत किया कि "आरज़ू" भी "मीर" के विरोधी हो गए। "मीर" को उनके संरक्षण से भी वंचित होना पड़ा। इसने "मीर" का उन्माद और बढ़ा दिया। उत्कट प्रेमोन्माद और विछोह की

१. *विपत्तियाँ*। २. *अघटनीय घटना*। ३. *पागल, उन्मादी*। ४. *अपराध, दोष, क़ुसूर*। [illegible] *लड़ पड़ीं*। [illegible] उन्होंने। [illegible] जा लड़ीं। ५. उन्माद, पागलपन। ६. जहान से उठना = संसार से विदा हो जाना।

سے دو چار ہو گئے، جس نے نہ صرف ان کے غم زدہ قلب کے سکون کو ہمیشہ کے لیے برباد کر دیا بلکہ ان میں آشفتہ سری، اور وحشت و دیوانگی بھی پیدا کر دی۔ ان کے کلام میں اس کی طرف جا بجا اشارے ملتے ہیں

مصائب اور تھے پر دل کا جانا   عجب اک سانحہ سا ہو گیا ہے

میر جب سے گیا ہے دل تب سے   میں تو کچھ ہو گیا ہوں سودائی

دل تڑپے ہے، جان کھپے ہے، حال جگر کا کیا ہو گا
مجنوں مجنوں لوگ کہے ہیں، مجنوں کیا ہم سا ہو گا

دل کی کچھ تقصیر نہیں ہے، آنکھیں اس سے لڑ پڑیاں
مار رکھا سو ان نے مجھ کو کس ظالم سے جا لڑیاں

یہی آثار جنوں اکبرآباد کو ہمیشہ ہمیشہ کے لیے چھوڑنے کا سبب بنے، انھیں کی بدولت میر کے بھائی کو اور زیادہ مخالفت و عداوت کرنے کا موقع مل گیا۔ اس مرتبہ وہ اکبرآباد سے چلے تو غم روزگار کے ساتھ ساتھ غم عشق بھی ہمراہ تھا۔ انھیں شاید اس بات کا یقین ہو گیا تھا کہ اب وہ اکبرآباد نہ آسکیں

یوں اٹھے آہ اس گلی سے ہم   جیسے کوئی جہاں سے اٹھتا ہے

میر چشم گریاں و دل بریاں دلی کی طرف روانہ ہو گئے اور اپنے سوتیلے ماموں سراج الدین علی خاں آرزو کی خدمت میں حاضر ہوئے۔ باکمال ماموں نے میر کی تعلیم و تربیت پر خاص توجہ دی اور تھوڑے ہی عرصے میں میر کو زبان کا جوہری بنا کر اس قابل کر دیا کہ وہ اقلیم سخن کے تاجدار بن سکیں۔ افسوس ہے کہ میر کو آرزو کے چشمۂ علم سے زیادہ سیراب ہونے کا موقع نہیں مل سکا۔ بھائی کی مخالفت نے عشق میر کو اتنی ہوا دی کہ آرزو بھی مخالف ہو گئے۔ میر کو ان کے دامن تربیت سے محروم ہونا پڑا۔ اور اس محرومی

भावनाओं से उनका काव्य भरा हुआ है। "ख़ान-आरज़ू" के बाद "मीर" ने मीर जाफ़र से ज्ञान-लाभ किया। मीर सआदत अली अमरोहवी[1] की प्रेरणा से "मीर" ने रेख़ते में शेर कहना शुरू किया। और अपनी श्रम-साधना और अभ्यास से नगर के कवियों में गण्य-मान्य समझे जाने लगे। "मीर" ने स्वयं मीर सआदत अली को अपनी काव्य-साधना का प्रेरक माना है:

"...और उन श्रीमान् ने मुझे रेख़ते में शेर कहने पर प्रेरित किया जो फ़ारसी शेर की तरह शाही किले की भाषा में रचा जाने वाला काव्य है और उन दिनों उसका प्रचलन बहुत हो रहा था। मैंने भी बहुत परिश्रम किया और इतना अभ्यास कर लिया कि नगर के कवियों में प्रामाणिक और मान्य समझा जाने लगा। मेरे शेर शहर भर में गूंज गए और हर छोटे-बड़े के कानों तक पहुंच गए।"

—ज़िक्रे-मीर[2] पृष्ठ ६४

प्रेम-पीर और विपन्नता-जन्य परिस्थितियों का प्रकोप तो था ही; "मीर" काव्य-सृजन का रोग भी लगा बैठे। जामा-मस्जिद की सीढ़ियों का पुण्य-प्रताप और "खुमारे-चश्मे-साक़ी"[3] के संयोग नें उनके काव्य में "दुर से हज़ारचन्द आब[4]" उत्पन्न कर दी और उनकी ख्याति देश के कोने-कोने नें फैल गई। "मीर" ने इसे बार-बार व्यक्त किया है :—

सरसब्ज़[5] मुल्के-हिन्द में ऐसा हुआ कि "मीर" ये रेख़ता लिखा हुआ मेरा बकन[5] गया

रेख़ता काहे को था इस रुतब-ए-आला[7] में "मीर"
जो ज़मीं निकली उसे ता[8] आसमां में ले गया

"मीर" को भाषा और भावों की अभिव्यक्ति पर यह अधिकार यूंही नहीं प्राप्त हो गया। उम्र भर वह अपने "ख़ूने-दिल"[8] की "गुलाबी"[9] से मस्त और उसी के ख़ुमार में मस्त रहे। और काव्य को जीवन की सच्ची दाह प्रदान करने के लिए वह सुबह से शाम तक शमा की तरह जलते और पिघलते रहे।

तब गर्म-सुख़न कहने लगा हूं मैं कि इक उम्र ज्यूं शमअ सरे-शाम से ता सुब्ह जला हूं

१. देखिये डाक्टर मुहम्मद हसन का लेख। २. "मीर" की आत्म-कथा, मूल फ़ारसी में। ३. मधुबाला (प्रेमिका) के आंखों की मस्ती। ४. मोती से सहस्रगुनी आभा। ५. फलना-फूलना (व्यंजना लोकप्रियता) ६. दक्षिण। ७. उच्चस्तर। ८. तक। ६. हृदय का रक्त (प्रत्येक अंग मे संचारित रक्त ही प्राण है। हृदय में संचित रक्त समस्त शरीर का है; उसकी क्षति प्राण की क्षति है; मानसिक पीड़ाएं उसी रक्त को प्रभावित करती हैं। किन्तु काव्य मे अधिकतर कामनाओं को मन का प्राण और उनकी हत्या को मन की हत्या समझा जाता है। व्यंजना यह है कि हत् आशाओं का रक्त पान करके वह कला-सृजन करते थे।) १०. मदिरा का प्याला।

کے جنون کو اور بھی بڑھا دیا میرؔ کے جذب و جنون کی کیفیات سے ان کا کلام بھرا ہوا ہے
خان آرزو کے بعد میرؔ نے میر جعفر سے استفادہ کیا۔ میر سعادت علی امروہوی کی تحریک سے میرؔ نے ریختہ میں شعر کہنا شروع کیا۔ اور اپنی مشق و محنت سے شہر کے موزوں گویوں میں مستند سمجھے جانے لگے۔ میرؔ نے خود میر سعادت علی کو شعر گوئی کا محرک تسلیم کیا ہے

"آں عزیز مرا تکلیف موزوں کردن ریختہ، کہ شعریست بطور شعر فارسی،
بہ زبان اردوئے معلیٰ بادشاہ ہندوستان و دراں وقت رواج داشت کرد، خودکشی
کردم و مشق خود برتبہ رساندم کہ موزونانِ شہر رامستند شدم شعر من در تمام
شہر دوید و بگوشِ خورد و بزرگ رسید" (ذکر میرؔ صفحہ ۶۴)

غم عشق اور غم روزگار کے ساتھ ساتھ میرؔ کو سخن کا بھی روگ لگا بیٹھے۔ جامع مسجد کی سیڑھیوں کے فیضان اور "خمار چشم ساقی" کی آمیزش نے ان کے سخن میں دُر سے ہزار چند آب پیدا کردی اور ان کی شہرت ملک کے کونے کونے میں پھیل گئی۔ میرؔ نے اس کا اظہار متعدد بار کیا ہے

سر سبز ملک ہند میں ایسا ہوا کہ میرؔ — یہ ریختہ لکھا ہوا میرا دکن گیا

ریختہ کاہے کو تھا اس رتبۂ اعلیٰ میں میرؔ
جو زمیں نکلی اسے تا آسماں میں لے گیا

میرؔ کو زبان و بیان پر یہ کمال یوں ہی نہیں حاصل ہوگیا۔ عمر بھر وہ اپنے خون دل کی گلابی سے مست و مخمور رہے، اور سخن کی گرمی کے واسطے، صبح سے شام تک شمع کی مانند جلتے اور پگھلتے رہے

تب گرم سخن کہنے لگا ہوں میں کہ اک عمر
جوں شمع سرِ شام سے تا صبح جلا ہوں

اور یہی وجہ ہے کہ ان کی ہر بات فریاد بن جاتی ہے اور ان کا ہر بول آہ۔ اور اس

और यही कारण है कि उनकी हर बात "फ़रियाद" बन जाती है और उनका हर बोल "आह!"। और इस का इतना असर होता है कि आपदाएं और विपत्तियां भेजने वाला "आसमान" स्वयं विपत्तिग्रस्त हो जाता है :

तकलीफ़ न कर†, आह! मुझे जुम्बिशे-लब[1] की मैं सद-सुख़न-आग़श्ता-ब-ख़ूं ज़ेरे-ज़बां[2] हूं

दिल किस क़दर[3] शिकस्ता[4] हुआ था कि रात "मीर"
जो बात लब[5] पे आई वह फ़रियाद हो गई

आह मेरी ज़बान पर आई यह बला आसमान पर आई[6]

अर्थ यह; कि, उन का हर वचन क्रन्दन बन जाता है और उनका हर वर्णन आह है। और, उनकी पूरी शायरी "दर्द-ो-ग़म" का संकलन। इसीलिए उन्होंने अपने को शायर नहीं कहा, दर्द-ो-ग़म को जमा करने वाला बताया है :

मुझको शायर न कहो "मीर" कि साहब मैंने दर्द-ो-ग़म कितने किये जमअ तो दीवान किया

"दर्द-ो-ग़म" की अभिव्यंजना में सादगी और सच्चाई है, कृत्रिमता और आडम्बर नाम को भी नहीं। उनके प्रत्येक शब्द में व्यथा भरी है इसलिए शब्द-शब्द मर्मस्पर्शी है। वह जटिलतम एवं सूक्ष्मतम मनोभावों की क्रिया-प्रक्रिया को सरल से सरल भाषा में सीधे-सादे ढंग से इस प्रकार व्यक्त करते हैं कि सुनने वाले कलेजा थाम कर रह जाते हैं। उनके काव्य में असामान्य सम्मोहन है। उनके अन्तर की कारुणिकता और द्रवणशीलता शेरों के सांचे में ढलकर लोगों के मनों को पिघला देती है। "मीर" स्वयं भी अपने काव्य की प्रभावकारिता पर कभी-कभी चकित हो जाते थे :

क्या जानूं दिल को खींचे हैं क्यों शेर "मीर" के कुछ तर्ज़ ऐसी भी नहीं, ईहाम भी नहीं

वह स्वयं अपने रेख़ते से इतने आत्म-विभोर होते हैं कि प्रमाद-सा छा जाता है:—

दीवाना हो गया तू "मीर" आख़िर रेख़ता कह-कह
न कहता था मैं ऐ ज़ालिम कि ये बातें नहीं भलियां×

लेकिन इन बातों के सुफलित होने का "मीर" को विश्वास था। वह यह भी

† कष्ट न दे। १. होंठ हिलाने। २. मेरी स्वर-तंत्री में सैकड़ों भाव रक्त में सने (अर्थात इतने आहत कि वाणी द्वारा व्यक्त न हुए) निहित हैं। ३. कितना। ४. टूटा हुआ। ५. होंठ। ६. एक सर्वशक्तिमती न्यायी शक्ति में विश्वास के कारण यह मान्यता है कि आह प्रभावहीन नहीं होती। अतः कवि को उत्पीड़ित करने वाली आकाशस्थ शक्तियों पर भी आह का प्रभाव हुआ। आसमान पर आना चरम सीमा पर पहुंचने की व्यंजना भी देता है। यह मुहावरा प्रकट होने और सबके समक्ष आ जाने का भी बोध कराता है। कहते हैं आह दिल से उठती है, तब तक गुप्त रहती है किन्तु ज़बान पर आते ही सब पर प्रकट हो जाती है, प्रत्यक्ष आ जाती है। ×भली नहीं।

کا اتنا اثر ہوتا ہے کہ مصیبتیں اور بلائیں نازل کرنے والا آسمان خود گرفتار بلا ہوجاتا ہے

تکلیف نہ کر آہ! مجھے جنبش لب کی
میں صد سخن آغشتہ بہ خوں زیر زباں ہوں

دل کس قدر شکستہ ہوا تھا کہ رات میرؔ
جو بات لب پہ آئی وہ فریاد ہوگئی

آہ میری زبان پر آئی یہ بلا آسمان پر آئی

غرض میرؔ کی زبان فریاد اور ان کا بیان آہ ہے، ان کی پوری شاعری درد وغم کا مجموعہ، اسی لیے انھوں نے اپنے کو شاعر کے بجائے درد وغم جمع کرنے والا بتایا ہے

مجھ کو شاعر نہ کہو میرؔ کہ صاحب میں نے
درد و غم کتنے کیے جمع تو دیوان کیا

درد و غم کے اظہار میں سادگی اور سچائی ہے، تصنع اور بناوٹ نام کو نہیں، ایک ایک لفظ درد و اثر سے بھرا ہوا ہے، وہ قلبی واردات اور کیفیات کو سیدھے سادے انداز اور آسان سے آسان الفاظ میں اس طرح بیان کرتے ہیں کہ سننے والے کلیجہ تھام لیتے ہیں۔ان کے کلام میں بلا کی تاثیر ہے، ان کے دل کا سوز و گداز اشعار کے سانچے میں ڈھل کر لوگوں کے دلوں کو پگھلا دیتا ہے۔ میرؔ خود بھی اپنے کلام کی تاثیر پر کبھی کبھی حیرت زدہ ہوجاتے تھے

کیا جانوں دل کو کھینچے ہیں کیوں شعر میرؔ کے
کچھ طرز ایسی بھی نہیں ایہام بھی نہیں

وہ خود اپنے ریختے سے اتنا زیادہ متاثر ہوتے ہیں کہ جنون کی کیفیت طاری ہوجاتی ہے

دوانہ ہوگیا تو میرؔ آخر ریختہ کہہ کہہ
نہ کہتا تھا میں اے ظالم کہ یہ باتیں نہیں بھلیاں

जानते थे कि "यह बातें" उन्हीं के दम तक हैं, उनके बाद ऐसी बातें करने वाला कोई न होगा।

"मीर" ने आजीवन अभावों और असफलताओं से ग्रस्त रहकर यह बातें सीखीं; भाग्य पर सन्तुष्ट रहे; न किसी के सामने हाथ फैलाया न कभी दामन पसारा। दिल पर जो कुछ बीतती थी वाणी उसे व्यक्त कर देती थी। स्वाभिमान और आत्मविश्वास को कभी हाथ से न जाने दिया। दुर्भाग्यवश उनके समकालीनों ने उनकी कोमलता और सच्चाई को समझने का प्रयत्न नहीं किया। भ्रमवश आत्मसम्मान को अहंकार और उग्र भावुकता को चिड़चिड़ापन समझने लगे। "मीर" कितनी व्यथा, कितने शोक-सन्ताप और कितने करुण स्वर में कह रहे हैं :

हालत तो यह कि मुझको ग़मों से नहीं फ़राग़[1] दिल सोज़िशे-दरूँ[2] से जलता है ज्यूँ चिराग़
सीना तमाम चाक है सारा जिगर है दाग़ है नाम मजलिसों में मेरा "मीर" बे दिमाग़
अज़बसकि[3] बे दिमाग़ी ने पाया है इश्तहार[4]

"मीर" ने अपनी व्यथा का यह भाव बार-बार व्यक्त किया है :

मुए सहते-सहते जफ़ाकारियाँ[5] कोई हमसे सीखे वफ़ादारियाँ
हमारी तो गुज़री इसी तौर उम्र यही नाला[6] करना यही ज़ारियाँ[7]
फ़िरिश्ता जहाँ काम करता न था[8] मेरी आह ने बर्छियाँ मारियाँ†
किया दर्द-ो-ग़म ने मुझे नाउमीद कि मजनूँ को ये ही थीं बीमारियाँ

यह तड़प और विह्वलता, यह अधीरता और व्यग्रता "मीर" ही के हिस्से में आई थी :

यह जो चश्मे-पुर-आब[9] हैं दोनों एक ख़ाना ख़राब हैं दोनों
रोना आँखों का रोइए कब तक फूटने ही के बाब[10] हैं दोनों
कुछ न पूछो कि आतिशे-ग़म[11] से जिगर-ो-दिल कबाब[12] हैं दोनों
एक सब आग एक सब पानी दीद-ओ-दिल अज़ाब[13] हैं दोनों

वह सदैव इसी "अज़ाब" में मुब्तिला रहे :

चश्म रहने लगी पुर आब बहुत शायद आवेगा ख़ूने-नाब[14] बहुत
दिल के दिल ही में रह गए अरमाँ[15] कम रहा मौसमे शबाब[16] बहुत

१. मुक्ति। २. आन्तरिक दाह। ३. यद्यपि ४. विज्ञापन। ५. उत्पीड़न। ६. क्रन्दन। ७. रुदन। ८. अर्थात शुद्ध ब्रह्म का कार्य-क्षेत्र †. मारीं ६. डबडबाई आँखें। १०. फूटने ही वाली। ११. वेदनाग्नि। १२. इस सीमा तक गलित कि सामान्य कण भी शेष न रहें। एक रेशा भी न बचे। १३. (दीदा (आँख) व-दिल=दीदा-ओ-दिल) दैवी कोप, घोर यातना। १४. शुद्ध रक्त। १५. अरमान; कोमल कामनाएं। १६. यौवन-ऋतु।

لیکن ان باتوں کی تاثیر کا میرؔ کو یقین تھا وہ یہ بھی جانتے تھے کہ یہ باتیں انھیں کے دم تک ہیں، ان کے بعد ایسی باتیں کرنے والا کوئی نہ ہوگا

میرؔ نے یہ باتیں تمام عمر ناکامیوں اور محرومیوں میں مبتلا رہ کر سیکھیں، قسمت پر شاکر رہے، نہ کسی کے سامنے ہاتھ پھیلایا نہ کبھی دامن پسارا، دل پر جو کچھ بیتتی تھی زبان اس کو ادا کر دیتی تھی، خودداری و خود اعتمادی کو کبھی ہاتھ سے نہیں جانے دیا، زمانے کے ظالم ہاتھوں کی بہ دولت لوگ خودداری کو خودسری اور نازکت مزاجی کو تنک مزاجی سمجھنے لگے خود میرؔ کس سوز و گداز اور حسرت و افسوس کے ساتھ کہہ رہے ہیں

حالت تو یہ کہ مجھ کو غموں سے نہیں فراغ　　دل سوزش درونی سے جلتا ہے جوں چراغ
سینہ تمام چاک ہے سارا جگر ہے داغ　　ہے نام مجلسوں میں مرا میرؔ بے دماغ
از بسکہ بے دماغی نے پایا ہے اشتہار

میرؔ نے اپنی اس کیفیت غم کو بار بار بیان کیا ہے

موئے سہتے سہتے جفا کاریاں　　کوئی ہم سے سیکھے وفاداریاں
ہماری تو گزری اسی طور عمر　　یہی نالہ کرنا یہی زاریاں
فرشتہ جہاں کام کرتا نہ تھا　　مری آہ نے برچھیاں ماریاں
کیا درد و غم نے مجھے ناامید　　کہ مجنوں کو یہ ہی تھیں بیماریاں

یہ کرب و اضطراب، یہ بے چینی اور بیتابی، میرؔ ہی کے حصے میں آئی تھی

یہ جو چشم پُرآب ہیں دونوں　　ایک خانہ خراب ہیں دونوں
رونا آنکھوں کا روئیے کب تک　　پھوٹنے ہی کے باب ہیں دونوں
کچھ نہ پوچھو کہ آتش غم سے　　جگر و دل کباب ہیں دونوں
ایک سب آگ ایک سب پانی　　دیدۂ و دل عذاب ہیں دونوں

وہ ہمیشہ اسی عذاب میں مبتلا رہے

چشم رہنے لگی پر آب بہت　　شاید آوے گا خونِ ناب بہت
دل کے دل ہی میں رہ گئے ارمان　　کم رہا موسم شباب بہت

वह "मौसमे-शबाब" का ही शोक नहीं मनाते बल्कि वह अत्यन्त दीर्घकाल से प्रेम के असाध्य रोग द्वारा ग्रस्त और अत्याचार और उत्पीड़न झेलने के अभ्यस्त हैं।

बेकली बेख़ुदी[१] कुछ आज नहीं — एक मुद्दत से वह[२] मिज़ाज नहीं
दर्द गर ये है तो मुझे बस है — अब दवा की कुछ एहतियाज[३] नहीं
हमने अपनी सी की बहुत लेकिन — मर्ज़े-इश्क़[४] का इलाज नहीं

इश्क़ में जी को सब्र-ो-ताब[५] कहाँ ? — उससे आँखें लगीं[६] तो ख़्वाब कहाँ ?
गिर्-यि-ए-शब[७] से सुर्ख़[८] हैं आँखें, — मुझ बलानोश[९] को शराब कहाँ ?
इश्क़ का घर है "मीर" से आबाद — ऐसे फिर ख़ानमाँ-ख़राब कहाँ ?

इसी प्रेम-प्रदाह ने उन्हें उम्र भर अव्यवस्थित रक्खा। उनके दिल को प्रेमोत्ताप से पिघला दिया जिसका फल यह हुआ कि उनकी हर बात प्रेमाग्नि की लपट या चिंगारी प्रतीत होती है :

दिलसोख़्ता[१०] हूं मुझको तकलीफ़े-हर्फ़[११] मत[१२] कर — इक आग की लपट-सी निकले है हर सुख़न से

"मीर" के सुख़न से आग की लपट उनकी सोख़्ता-सामानी की वजह से निकलती रही। इसकी व्याख्या उन्हीं के शब्दों में सुनिये :

"मीर" दरिया है सुने शेर ज़बानी उसकी — अल्ला-अल्ला रे तबीयत की रवानी[१३] उसकी
आबले[१४] की सी तरह ठेस लगी फूट बहे — दर्दमन्दी[१५] में गई सारी जवानी उसकी
मेंह तो बौछार का देखा है बरसते तुमने — उसी अन्दाज़ की थी अश्क-फ़शानी[१६] उसकी
एक है अह्द में अपने वह परागन्दामिजाज[१७] — अपनी आँखों में न आया कोई सानी[१८] उसकी
बात की तर्ज़ को देखो तो कोई जादू था — पर मिली ख़ाक + में सब सहरबयानी[१९] उसकी

एक और ग़ज़ल में अपनी मानसिक उच्छृंखलता, प्रदग्ध मनःस्थिति और अग्निमता को उन्होंने बड़ी व्यथा और उत्ताप के साथ व्यक्त किया है :

मैं कौन हूं ? ऐ हम नफ़सां[२०] सोख़्ताजां[२१] हूं — इक आग मेरे दिल में है जो शोला-फ़िशां[२२] हूं
तकलीफ़ न कर आह मुझे जुम्बिशे-लब[२३] की — मैं सद-सुख़न-आग़श्ता-ब-ख़ूं-ज़ेरे-ज़बां हूं

१. आत्मतल्लीनता। २. पूर्वावस्था। ३. आवश्यकता। ४. प्रेम-रोग। ५. धैर्य। ६. "आँखें लगना" में श्लेष है; "नींद आ जाना" भी इसमें निहित है और "प्रेम हो जाना" भी। दूसरा अर्थ अभिप्रेत है। ७. रात के रोने। ८. बहुत गहरा लाल रंग। ९. श्लेष इसमें भी है : "अत्यधिक शराब पीने वाले" भी इसका अर्थ है किन्तु, यहाँ अभिप्रेत है : विपत्तियों को मद्य के समान पीने वाला। १०. दिलजला। ११. कुछ कहने का कष्ट। १२. न दे। १३. प्रवाह १४. फफोले (जो जलने से नहीं चोट से उठे हों।) १५. व्यथापूर्ण अवस्था। १६. आँसू झर-झरकर बहना। १७. विशृंखल स्वभाव का। १८. अनुरूप, समान। +मिट्टी में मिल जाना। १९. मोहक वाणी। जादू की तरह विमुग्धकारी वचन। २०. साथी, समान जीवन व्यतीत करने वाले। २१. प्रेमी; जिसकी आत्मा तक प्रेमाग्नि में भस्म हो चुकी हो। २२. आग उगलने वाला। २३. होंठ हिलाने।

وہ موسم شباب ہی کا ماتم نہیں کرتے بلکہ وہ مدت سے عشق کے لاعلاج مرض میں مبتلا ہیں اور ظلم و ستم کے عادی ہیں

بے کلی بے خودی کچھ آج نہیں ایک مدت سے وہ مزاج نہیں
درد گر یہ ہے تو مجھے بس ہے اب دوا کی کچھ احتیاج نہیں
ہم نے اپنی سی کی بہت لیکن مرض عشق کا علاج نہیں

عشق میں جی کو صبر و تاب کہاں اس سے آنکھیں لگیں تو خواب کہاں
گریۂ شب سے سرخ ہیں آنکھیں مجھ بلا نوش کو شراب کہاں
عشق کا گھر ہے میرؔ سے آباد ایسے پھر خانماں خراب کہاں

اسی سوز عشق نے انھیں عمر بھر خانماں خراب رکھا، ان کے دل کو گرمیٔ عشق سے پگھلا دیا جس کا نتیجہ یہ ہوا کہ ان کی ہر بات، آتش عشق کا شعلہ یا شرارہ معلوم ہوتی

دل سوختہ ہوں مجھ کو تکلیف حرف مت کر
اک آگ کی لپٹ سی نکلے ہے ہر سخن سے

میرؔ کے سخن سے آگ کی لپٹ ان کی سوختہ سامانی کی وجہ سے نکلتی رہی۔ اس کی تشریح انھیں کی زبانی سنیے

میرؔ دریا ہے سُنے شعر زبانی اس کی اللہ اللہ ری طبیعت کی روانی اس کی
آبلے کی سی طرح ٹھیس لگے پھوٹ بہے دردمندی میں کٹی ساری جوانی اس کی
مینھ تو بوچھار کا دیکھا ہے برستے تم نے اسی انداز کی تھی اشک فشانی اس کی
ایک ہے عہد میں اپنے وہ پراگندہ مزاج اپنی آنکھوں میں نہ آیا کوئی ثانی اس کی
بات کی طرز کو دیکھو تو کوئی جادو تھا پر ملی خاک میں سب سحر بیانی اس کی

ایک اور غزل میں اپنی آشفتہ مزاجی، سوختہ جانی اور شعلہ فشانی کو بڑے سوز و گداز کے ساتھ بیان کیا ہے

میں کون ہوں اے ہم نفساں سوختہ جاں ہوں اک آگ مرے دل میں ہے جو شعلہ فشاں ہوں
تکلیف نہ کر آہ مجھے جنبش لب کی میں صد سخن آغشتہ بہ خوں زیر زباں ہوں

हूँ ज़र्द[1] ग़मे-ताज़ा-निहालाने-चमन[2] से इस बाग़े-ख़िज़ाँ-दीदा[3] में मैं बर्गे-ख़िज़ाँ[4] हूँ
रखती है मुझे ख़्वाहिशे दिल बसकि§ परेशाँ दरपे[5] न हो इस वक़्त ख़ुदा जाने कहाँ हूँ
इक वह्म[6] नहीं बेश[7] मेरी हस्तिये-मौहूम[8] इस पर भी तेरी ख़ातिरे-नाज़ुक[9] पे गराँ[10] हूँ

यह दर्द भरी बातें और उस पर यह वर्णन-शैली, भला कौन इसे सुन सकता है ? पत्थर से पत्थर दिल भी मोम हो जाता है। "मीर" के शब्दों में जो घुलावट और असर है, उनकी भाषा में जितनी प्रभावकारिता और जैसा आत्मिक-प्रवाह है; उनके कथन में जो आडम्बरहीनता और स्वाभाविकता; वेदनामयता है उन सबने मिलकर उनके काव्य को व्यथाओं और प्रभावकारिता की चित्रशाला बना दिया है। इस चित्रशाला में उनके व्यक्तित्व का प्रत्येक पहलू पूर्णतः प्रकाश में आता है। उनकी सादगी और सच्चाई, स्वाभिमान और सन्तोष के साथ-साथ उनका कामना-शून्य जीवन, उनका क्रन्तियुक्त युग, उनके कटु-अनुभव और उनकी मानसिक घटनाओं के सभी भाव-प्रभाव सुस्पष्ट हो जाते हैं—भाषा की सरलता, कथन शैली का लालित्य, भावना की सच्चाई ने उनके काव्य को तिगुनी शक्ति प्रदान कर दी है। "मीर" ने भाषा और अभिव्यंजना के लिए कुछ अपने नियम बना लिये थे जिन पर वह दृढ़तापूर्वक आचरण करते थे। उनके विचार से :

"शेर में ज़बान[11] और रोज़मर्रा[12] निहायत[13] साफ़[14] हो, रवानी[15] को किसी सूरत में हाथ से न देना चाहिए रकीक[16] ख़यालात[17] और अवाम[18] के जज़्बात-ो-आदात[19] या गुफ़्तगू[20] से शेर को कोई लगाव न हो; इसके साथ-साथ शेर में कोई ख़ास अन्दाज़े-बयान[21] और नादिर[22] बात होनी चाहिये।"

इन्हीं विशेषताओं के आधार पर वह अपनी भाषा पर गर्व करते थे :

गुफ़्तगू[23] रेख़्ते में हमसे न कर यह हमारी ज़बान है, प्यारे !

१. पीला। २. वाटिका के नव मुकुलितों के शोक में। ३. ऐसी वाटिका जो पतझड़ झेल चुकी हो। ४. पतझड़ की पत्ती। § इस सीमा तक। ५. सताने पर उद्यत, पीछे पड़े। ६. भ्रम। ७. अधिक। ८. भ्रम सा अस्तित्व (जो न होने के बराबर हो)। ९. असहिष्णु मन। १०. भारी, दुस्सह, दुर्वह। ११. भाषा। १२. रोज़मर्रा भाषा के प्रयोग की उस विधि विशेष का नाम है जिसका विधान सामान्यतः व्याकरण नहीं करती, दैनिक जीवन में बहुत से शब्द विशेष ढंग से ही प्रयुक्त होते हैं। "रोज़मर्रा" और "मुहावरा" में एक सूक्ष्म अन्तर है। मुहावरा विशेष रूप से ऐसी शब्द-योजना को कहते हैं जिनकी कोई विशिष्ट व्यंजना शब्दों के सामान्य अर्थ से पृथक भी होती है। रोज़मर्रा अधिकतर विशिष्ट व्यंजना उत्पन्न नहीं करते। किन्तु शब्द-योजना की एक विधि विशेष होते हैं। १३. अत्यन्त। १४. स्पष्ट। १५. प्रवाह। १६. निम्नकोटि के, निकृष्ट अश्लील। १७. विचार। १८. असंस्कृतजन। १९. भावनायें और आदतें। २०. बातचीत। २१. वर्णन-शैली। २२. अद्भुत। २३. अभिप्राय यह है कि इस विषय पर बातचीत मत करो।

ہوں زرد غم تازہ نہالانِ چمن سے — اس باغِ خزاں دیدہ میں میں برگِ خزاں ہوں
رکھتی ہے مجھے خواہشِ دل بسکہ پریشاں — درپے نہ ہو اس وقت خدا جانے کہاں ہوں
اک وہم نہیں بیش مری ہستیٔ موہوم — اس پر بھی تری خاطرِ نازک پہ گراں ہوں

یہ درد بھری باتیں اور اس پر یہ انداز بیان سننے کی تاب کسے ہو سکتی ہے ؟ پتھر سے پتھر دل بھی موم ہو جاتا ہے ۔ میرؔ کے الفاظ میں جو گھلاوٹ اور اثر ہے ان کی زبان میں جو سوز اور تاثیر ہے، ان کے بیان میں جو بے ساختگی اور درد مندی ہے، ان سب نے مل کر ان کے کلام کو غم و اثر کا مرقع بنا دیا ہے ۔ اس مرقع میں میرؔ کی شخصیت کا ہر پہلو نمایاں ہے ۔ ان کی سادگی اور سچائی، خودداری اور قناعت کے ساتھ ساتھ ان کی نامرادانہ زیست، ان کا انقلاب انگیز ماحول، ان کے تلخ تجربات اور قلبی واردات کی تمام کیفیتیں ظاہر ہو جاتی ہیں ۔ زبان کی سلاست، بیان کی لطافت، جذبے کی صداقت نے ان کے کلام کو سہ آتشہ بنا دیا ہے ۔ میرؔ نے زبان و بیان کے لیے چند اصول بنا لیے تھے جن پر وہ سختی کے ساتھ عمل کرتے تھے ۔ ان کے نزدیک ـــ

"شعر میں زبان اور روزمرہ نہایت صاف ہو، روانی کو کسی صورت میں ہاتھ سے نہ دینا چاہیے، رکیک خیالات اور عوام کے جذبات و عادات یا گفتگو سے شعر کو کوئی لگاؤ نہ ہو اسی کے ساتھ ساتھ شعر میں کوئی خاص انداز بیان اور نادر بات ہونا چاہیے ۔ وہ انھیں خصوصیات کی بہ دولت اپنی زبان پر فخر کرتے تھے"

گفتگو ریختے میں ہم سے نہ کر — یہ ہماری زبان ہے پیارے

میرؔ حسن بیان کے ساتھ لطفِ زبان کو ضروری سمجھتے ہیں
حسن تو ہے ہی کر و لطفِ زباں بھی پیدا
میرؔ کو دیکھو کہ سب لوگ بھلا کہتے ہیں

الفاظ کی سلاست اور بیان کی روانی سے شعر کا ایک ایک لفظ آب دار موتی سے زیادہ تابناک بن جاتا ہے ۔ میرؔ نے اس پر خاص توجہ دی

"मीर" अभिव्यक्ति के सौष्ठव के साथ-साथ भाषा-लालित्य को भी आवश्यक समझते हैं:

हुस्न तो है ही, करो लुत्फ़े ज़बां[1] भी पैदा   "मीर" को देखो कि सब लोग भला कहते हैं

शब्दों की सरलता और भाषा के प्रवाह से शेर का एक-एक शब्द आबदार मोती से अधिक द्युतिमान बन जाता है। "मीर" ने इस पर विशेष ध्यान दिया है:

देखो तो किस रवानी से कहते हैं शेर "मीर"   दुर[2] से हज़ारचन्द[3] है उनके सुख़न में आब

हरचन्द है सुख़न को तश्बीह[4] दुर से लेकिन   बातें मेरी सुनो तो तुम फेंक दो गुहर को

"मीर" ने अपनी काव्य-मुक्ता में यह द्युति अपने अन्तर के दाह, अपने मन की कोमलता और पसीजने की असामान्य योग्यता, प्रेम-तप-क्षीण काया और आर्द्र मन, अपनी तन्मयता तथा घोर परिश्रम से उत्पन्न की। उन्होंने विशेष रूप से इसका ध्यान रक्खा कि उनकी कोई बात बिना आन्तरिक दाह और उत्तम सृजनात्मकता, बिना उद्वेलनशीलता और अर्थवत्ता के न हो—कि, इनके बिना भला बात में प्रभाव कहां ?

बे सोज़े-दिल[5] किन्हूं[6] ने कहा रेख़ता तो क्या   गुफ़्तारे-ख़ाम[7] पेशे-अज़ीज़ां[8] सनद[9] नहीं

दफ़्तर[10] लिखे हैं "मीर" ने दिल के अलम[11] के यह
यां[12] अपने तौर-ो-तर्ज़[13] में वह फ़र्द हो गया[14]

"मीर" की भाषा में यह प्रभाव "दिल के अलम के दफ़्तर" लिखने के कारण उत्पन्न हुआ। यह "दफ़्तरे अलम" स्वयं उनके जीवन की घटनाएं और परिस्थितियां हैं। "मीर" ने भाषा और जीवन का सम्बन्ध सदैव बनाये रक्खा। वह भाषा, भाषा नहीं जो मन की पीड़ा व्यक्त न करती हो। जिसमें सूक्ष्मतम एवं कोमलतम अनुभूति, प्रतीति एवं विचार व्यक्त न किये जा सकें। यह गुण बिना गहन अध्ययन और सूक्ष्म दृष्टि के दुर्लभ है। "मीर" ने मानवीय जीवन और उसके चतुर्दिक विद्यमान परिस्थितियों का अध्ययन बहुत सूक्ष्म दृष्टि से किया। उन्होंने जो कुछ देखा उसे अपने दिल की गुलाबी से रंग और सुगन्धि प्रदान की और वर्णन इस ढंग से किया कि सुनने वाले दिल थाम कर रह गये। "मीर" की भाषा की सर्वग्राह्यता और लोकप्रियता का एक रहस्य यह भी है कि औपचारिक एवं आडम्बरयुक्त शब्दों का प्रयोग करने से वे बचते हैं, वह बात का वर्णन

१. भाषा का रस-लालित्य। २. मोती। ३. सहस्रगुना। ४. उपमा। ५. दिल की जलन। ६. किन्हीं लोगों। ७. कच्ची, अपरिपक्व बात। ८. सम्भ्रान्त (सुशिक्षित) जन के सम्मुख। ९. प्रामाणिक। १०. ग्रन्थ। ११. पीड़ा, विपत्ति, शोक। १२. यहां। १३. शैली। १४. अद्वितीय।

دیکھو تو کس روانی سے کہتے ہیں شعر میرؔ   دُر سے ہزار چند ہیں ان کے سخن میں آب

ہرچند ہے سخن کو تشبیہہ دُر سے لیکن   باتیں مری سُنو تو تم پھینک دو گہر کو

میرؔ نے اپنے گوہر سخن میں یہ آب و تاب اپنے سوز دروں، اپنے دل گداختہ، اپنی خستگی و برشتگی اور اپنی محویت و محنت سے پیدا کی، انھوں نے اس امر پر خاص زور دیا کہ ان کی کوئی بات بے سوز و ساز بے شورش و بے معنی نہ ہو، اس کے بغیر بات میں اثر کہاں ؟

بے سوز دل کنھوں نے کہا ریختہ تو کیا
گفتار خام پیش عزیزاں سند نہیں

دفتر لکھے ہیں میرؔ نے دل کے الم کے یہ
یاں اپنے طور و طرز میں وہ فرد ہوگیا

میرؔ کی زبان میں یہ اثر دل کے الم کے دفتر لکھنے کی بہ دولت ہوا، یہ دفترِ الم خود ان کی زندگی کے حالات و واقعات ہیں، میرؔ نے زبان اور زندگی کے تعلق کو ہمیشہ قائم رکھا وہ زبان زبان نہیں ہے جو درد دل کی ترجمان نہ ہو، جس میں نازک سے نازک احساسات و خیالات ادا نہ کیے جاسکیں، یہ خوبی بغیر وسیع مطالعے اور گہرے مشاہدے کے ناممکن ہے میرؔ نے حیات انسانی اور گرد و پیش کے حالات کا بڑی گہری نظر سے مطالعہ کیا انھوں نے جو کچھ دیکھا اس کو اپنے دل کی گلابی سے رنگین و معطر کیا، اور اس انداز سے بیان کیا کہ سننے والے دل تھام کر رہ گئے۔ میرؔ کی زبان کی مقبولیت و محبوبیت کا ایک راز یہ بھی ہے کہ وہ پرتکلف الفاظ استعمال کرنے سے گریز کرتے ہیں۔ وہ بات کو سیدھے سادے انداز میں بیان کرتے ہیں ان کے یہاں عام پسند الفاظ کا استعمال زیادہ ہے، وہ الفاظ کے جوہری ہیں اور ایک کامل صناع کی طرح ان کا استعمال حسب موقع کرنے پر قدرت رکھتے ہیں

میرؔ صناع ہے ملو اس سے   دیکھو باتیں تو کیا بناتا ہے

सीधे-सादे ढंग से करते हैं। उनके यहाँ सर्वग्राह्य शब्दों का प्रयोग अधिक है। वह शब्दों के जौहरी हैं और निपुण कलाकार की तरह उनका उपयोग उचित अवसर पर ही करने का अधिकार रखते हैं।

"मीर" सन्नाअ[1] है, मिलो इससे देखो बातें तो क्या बनाता है

ख्वाजा अहमद फ़ारूक़ी लिखते हैं: " 'मीर' की कलात्मक शैली को उनके व्यक्तित्व से अलग करके देखना कठिन है। 'मीर' को शब्द रूप में परिणत कर देने से ही उनकी काव्य-कला अस्तित्व में आती है। उनकी वर्णनशैली की वाह्य-विशेषताएं उनके व्यक्तित्व के आन्तरिक गुणों से उत्पन्न हुई हैं। उन्होंने अपना विशेष स्वर अपने आप को मिटाकर प्राप्त किया है। 'मीर' ने अपना संबंध जामा मस्जिद की सीढ़ियों, जन-सामान्य के जलसों और जीवन की सामान्य नगण्य वस्तुओं से कभी विच्छिन्न नहीं किया। उनके काव्य में 'दीवार के साये में सोने', 'राह के काँटे', 'मकड़ी के जाले', 'बुझते हुए दीये', 'लुटे हुए नगर' और इसी प्रकार की स्थितियों और वस्तुओं की चर्चा अधिकतर मिलती है। यही कारण है कि उनकी भाषा सरल, सुबोध और उनकी उपमाएं हृदयग्राही, मर्मस्पर्शी और प्रभावोत्पादक हैं।"

"मीर" की यह भाषा ग़ज़लों में भी है और मसनवियों में भी और इसी भाषा और उसकी विशिष्ट शैली के कारण वह "ख़ुदा-ए-सुख़न" माने गए हैं। काव्य-कला के गण्य-मान्य आचार्यों ने उन्हें श्रद्धा-पुष्प अर्पित किये: "सौदा", "मुसहफ़ी", "नासिख़", "आतिश", "ग़ालिब", "ज़ौक़", "शेफ़्ता", "मजरूह", "रिन्द", "जलाल", "अमीर", सैयद इमदाद इमाम "असर", "हाली" "अकबर", "नसीम", "शाद", "साक़िब", "फ़ानी" और हज़रत "असर" लखनवी —सबने "मीर" का अनुकरण करने पर गर्व किया है और यह भी स्वीकार किया है कि प्रयत्न करने पर भी वह "मीर" की भाषा की सरलता-सुबोधता और उनके हृदयग्राही वर्णन-लालित्य अपने काव्य में उत्पन्न न कर सके।

"ग़ालिब" ने कहा:

"ग़ालिब" अपना ये अक़ीदा[2] है बक़ौले "नासिख़"[3]
आप बेबहरा[4] हैं जो मोतक़िदे-"मीर"[5] नहीं

१. सृजनशील निर्माता। २. आस्था, विश्वास। ३. "नासिख़" के कथनानुसार। ४. ज्ञानहीन, मूर्ख। ५. 'मीर" के प्रति आस्थावान।

خواجہ احمد فاروقی لکھتے ہیں

"میر کے اسلوب کو اس کی شخصیت سے الگ کرکے دیکھنا مشکل ہے۔ میر کو الفاظ میں تحویل کرنے سے ہی اس کا شاعرانہ آرٹ صورت پذیر ہوتا ہے اسس کے انداز بیان کی خارجی خصوصیات، اس کی شخصیت کے داخلی امتیازات ہی کی پیدا کردہ ہیں، انھوں نے یہ لب و لہجہ اپنے آپ کو مٹا کر حاصل کیا ہے ... میر نے اپنا تعلق جامع مسجد کی سیڑھیوں، عوام کے جلسوں اور زندگی کی معمولی معمولی چیزوں سے کبھی منقطع نہیں کیا۔ ان کے کلام میں دیوار کے سائے میں سونے، راہ کے کانٹے، بکڑی کے جالے، بجھتے ہوئے دیے، لٹے ہوئے نگر، اور اس قسم کی حالتوں اور چیزوں کا ذکر اکثر ملتا ہے۔ یہی وجہ ہے کہ ان کی زبان سادہ سلیس اور ان کی تشبیہات موثر و دل نشین ہیں "

میر کی یہ زبان، غزلوں میں بھی ہے اور مثنویوں میں بھی، اور اسی زبان اور اسس انداز بیان کی بہ دولت وہ خدائے سخن تسلیم کیے گئے۔ اساتذہ فن نے ان کی بارگاہ سخن میں نذر عقیدت پیش کی۔ سودا، مصحفی، ناسخ، آتش، غالب، ذوق، شیفتہ، مجروح، رند، جلال امیر، سید امداد امام اثر، حالی، اکبر، نسیم، شاد، ثاقب، فانی اور حضرت آثر لکھنوی سبھی نے میر کی پیروی کرنے پر فخر کیا ہے، اور یہ بھی اعتراف کیا ہے کہ باوجود کوشش کے وہ میر کی سلاست زبان و لطافت بیان اپنے کلام میں پیدا نہ کرسکے

غالب نے کہا

غالب اپنا یہ عقیدہ ہے بہ قول ناسخ
آپ بے بہرہ ہے جو معتقد میر نہیں

ذوق نے ناکامی کا اعتراف کیا

نہ ہوا پر نہ ہوا میر کا انداز نصیب
ذوق یاروں نے بہت زور غزل میں مارا

مجروح نے میر کی خوش بیانی کی داد یوں دی

یوں تو ہیں مجروح شاعر سب فصیح میر کی پر خوش بیانی اور ہے

"ज़ौक़" ने अपनी विफलता स्वीकार की :

न हुआ पर न हुआ "मीर" का अन्दाज़ नसीब   "ज़ौक़" यारों ने बहुत ज़ोर ग़ज़ल में मारा

"मजरूह" ने "मीर" की सुन्दर अभिव्यंजना की दाद यूं दी :

यूं तो हैं "मजरूह" शायर सब फ़सीह[1]   "मीर" की पर ख़ुशबयानी और है

और "हाली" ने स्पष्ट शब्दों में "मीर" के अनुकरण की घोषणा की :

"हाली" सुख़न में "शेफ़्ता" से मुस्तफ़ीज़[2] हूं
"ग़ालिब" का मोतक़िद हूं मुक़ल्लिद[3] हूं "मीर" का

रईसुल-मुतग़ज़्ज़िलीन[4] "हसरत" मोहानी भी "मीर" का शेव-ए-गुफ़्तार[5] पैदा न कर सके :

शेर मेरे भी हैं पुर-दर्द वलेकिन "हसरत"   "मीर" का शेव-ए गुफ़्तार कहां से लाऊं

"मीर" के शेव-ए-गुफ़्तार में यह प्रभावशीलता और आकर्षण क्यों हैं इससे स्वयं "मीर" भी अपने को अनभिज्ञ दिखाते हैं :

क्या जानूं दिल को खींचे हैं क्यों शेर "मीर" के   कुछ तर्ज़ ऐसी भी नहीं ईहाम भी नहीं

लेकिन इसके बावजूद "मीर" ने यह भविष्यवाणी की थी कि उनकी उस्तादी का हर उस्ताद "मोतकिद" होगा :

रेख़्ता रतबे को पहुंचाया हुआ उसका है   मोतक़िद कौन नहीं "मीर" की उस्तादी का ?

बाबा-ए-उर्दू डाक्टर मोलवी अब्दुल हक़ "मीर' की उस्तादी" का कारण भाषा की प्राञ्जलता और वर्णन शैली की नवीनता बताते हैं। और, "मीर" को न केवल उनके प्रमुख समकालीनों में बल्कि उर्दू के सभी विख्यात कवियों में से सर्वश्रेष्ठ समझते हैं। वह लिखते हैं कि :

"उनका काव्य अनुपयुक्त उपमाओं, प्रतीकों, रूपकों आदि, अतिरञ्जित अतिशयोक्तियों और अस्वाभाविक विवरणों से सर्वथा मुक्त है। भोंडे और बेजा आडम्बर और कृत्रिमता तथा व्यर्थ के शब्दजाल का उनके यहां कही नाम भी नहीं। वह भावात्मक संक्रमण, संघर्ष आदि के रूपों और भावों की ध्वनियों† को अत्यन्त सादी, सरल किन्तु प्राञ्जल भाषा में ऐसे आकर्षक ढंग से व्यक्त करते हैं कि जो बात वह कहना चाहते हैं वह सीधी दिल में उतर जाती है। तात्पर्य यह कि उनका काव्य भाषा के सम्पूर्ण सौष्ठव एवं प्रवाह की दृष्टि से 'सहले-

१. प्राञ्जलता, सौष्ठव, लालित्यादि से युक्त भाषा प्रयोग करने वाले। २. लाभान्वित (ज्ञान लाभ की ध्वनि निहित) ३. अनुगामी। ४. ग़ज़ल कहने वालों के सरदार—एक विशेषण जो "हसरत" मोहानी को प्राप्त था। ५. कहने का ढंग। †जिस प्रकार अर्थ की विभिन्न भूमिकाएं और शब्द की ध्वनियां होती हैं उसी प्रकार भावों के भी विभिन्न 'भेद' होते हैं।

اور حالی نے صاف صاف میر کی تقلید کا اقرار کیا

حالی سخن میں شیفتہ سے مستفیض ہوں
غالب کا معتقد ہوں مقلد ہوں میر کا

رئیس المتغزلین حسرت موہانی بھی میر کا شیوۂ گفتار پیدا نہ کر سکے

شعر میرے بھی ہیں پُر درد و لیکن حسرت
میر کا شیوۂ گفتار کہاں سے لاؤں

میر کے شیوۂ گفتار میں یہ تاثیر اور کشش کیوں ہے ؟ خود میر بھی اس سے اپنی ناواقفیت کا اظہار کرتے ہیں

کیا جانوں دل کو کھینچے ہیں کیوں شعر میر کے
کچھ طرز ایسی بھی نہیں ایہام بھی نہیں

لیکن اس کے باوجود میر نے پیشین گوئی کی تھی کہ ان کی استادی کا ہر استاد معتقد ہوگا۔

ریختہ رتبے کو پہنچایا ہوا اس کا ہے
معتقد کون نہیں میر کی استادی کا

بابائے اردو ڈاکٹر مولوی عبدالحق ، میر کی استادی کا سبب زبان کی فصاحت اور بیان کی جدت بتاتے ہیں اور میر کو نہ صرف ان کے اپنے ممتاز ہم عصروں بلکہ تمام اردو کے مشاہیر شعرا سے برتر سمجھتے ہیں۔ وہ لکھتے ہیں کہ :

"ان کا کلام دور از کار استعارات بعید از قیاس مبالغے اور خلاف عادت امور سے پاک ہے بھونڈے اور بے جا تکلف و تصنع اور فضول لفاظی کا نام نہیں ، وہ قلبی واردات اور کیفیات کو نہایت سادہ ، شستہ اور صاف زبان میں ایسے دلکش اسلوب سے بیان کرتے ہیں کہ جو بات وہ کہنی چاہتے ہیں وہ دل میں اتر جاتی ہے ۔ غرض یہ کہ ان کا کلام بہ لحاظ فصاحت و روانی سہل ممتنع ہے اور سہل ممتنع کلام کا تجزیہ کر کے الگ الگ اس کی خوبیوں کا گنوانا ناممکن ہے ... شاعر کے کلام کا ایک بڑا معیار اس کے کلام کی تاثیر ہے اگر اس معیار پر میر صاحب کے کلام کو جانچا جائے تو ان کا رتبہ اردو شعراء میں سب سے اعلیٰ پایا جاتا ہے ۔ ان کے

मुम्तनअ'[१] है। और 'सहले मुम्तनअ' काव्य का विश्लेषण करके अलग-अलग उसके गुणों को गिनवाना संभव नहीं। कवि की रचनाओं की एक बड़ी कसौटी उसका प्रभाव है। यदि इस कसौटी पर मीर के कलाम को परखा जाए तो उनका स्थान उर्दू शायरों में सर्वोच्च पाया जाता है। उनके शेर आर्द्रता, प्रेम जनित विदग्धता और व्यथा के सजीव चित्र हैं। जबान से निकलते ही दिल में जाकर बैठ जाते हैं।

यद्यपि 'मीर साहब' के शेरों के शब्द मुलायम, धीमे, सरल और सादे होते हैं लेकिन उनकी तह में असीम जोश या दर्द छुपा होता है। शब्दों की सरलता और विन्यास की सादगी अक्सर लोगों को धोखा देती है और वह उनपर बेख़बर गुज़र जाते हैं, यह नहीं देखते कि इन सरल शब्दों और साधारण शब्द-योजना में शायर ने कौन-कौन से कौशल भर रक्खे हैं। इस दृष्टिकोण से 'मीर' साहब का काव्य सम्पूर्णतम अर्थ में अद्वितीय है और ध्यान से पढ़ने के योग्य है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि पाठक प्राचीन शब्द या मुहावरे अथवा आधुनिक भाषा में अव्यवहृत विन्यास देखकर शेर छोड़ देते हैं और यह नहीं देखते कि उसी शब्द अथवा विशिष्ट प्रयोग ने, जिसे अप्रचलित समझा जाता है, विशिष्ट-रस उत्पन्न कर दिया है।"

—इन्तिख़ाबे-कलाम-''मीर' —पृष्ठ २०, २१

"मीर" साहब ने ठेठ हिन्दी के शब्दों और ऐसे प्राचीन शब्दों का, जो अब प्रचलित नहीं, पर्याप्त मात्रा में प्रयोग किया है। किन्तु उन्हीं शब्दों ने शेर में जान डाल दी है। ऐसे शब्दों का भोलापन और उनकी सादगी बरबस प्रभावित कर लेते हैं। "आँखें मूंदना", "लोहू में नहाना", "बेवफ़ाइयां", "प्यारियां", "बास करना",[२] इत्यादि सहस्रों शब्द और मुहावरे हैं जिन्हें "मीर" साहब ने प्रयोग करके प्रमाणिकता और लोकप्रियता प्रदान कर दी थी:

अह्दे-जवानी[३] रो-रो काटा, पीरी में लीं आँखें मूंद
यानी रात बहुत थे जागे सुब्ह हुई आराम किया

—————

क्योंकर गली से उसकी उठकर मैं चला जाता
यां ख़ाक में मिलना था, लोहू में नहाना था

गुल[४] को महबूब[५] में क़यास[६] किया फ़र्क़ निकला बहुत जो बास किया

१. उस काव्य शिल्प को कहते। जो देखने में लगे कि ऐसा तो कोई भी कह सकता है, किन्तु वास्तव में जब प्रयत्न करे तो अच्छे-अच्छों से भी वह बात न बन पड़े। २. सूंघना। ३. यौवनकाल। ४. फूल। ५. प्रेम-पात्र, अपना प्रिय। ६. अनुमान।

درد کی تصویریں ہیں ۔ زبان سے نکلتے ہی دل میں جا کر بیٹھ جاتے ہیں ۔ ۔ ۔ اگرچہ میر صاحب کے اشعار کے الفاظ ملائم ۔ دھیمے ، سلیس اور سادہ ہوتے ہیں لیکن ان کی تہ میں غضب کا جوش یا درد چھپا ہوتا ہے ۔ الفاظ کی سلاست اور ترتیب کی سادگی لوگوں کو اکثر دھوکا دیتی ہے وہ ان پر سے بے خبر گزر جاتے ہیں اور یہ نہیں دیکھتے کہ شاعر نے ان سلیس الفاظ اور معمولی ترکیب میں کیا کیا کمال بھر رکھے ہیں ۔ میر صاحب کا کلام اس بارے میں اپنا جواب نہیں رکھتا اور غور سے پڑھنے کے قابل ہے ۔ بعض اوقات ایسا بھی ہوتا ہے کہ پڑھنے والے قدیم الفاظ یا محاورے یا متروک ترکیب کو دیکھ کر شعر چھوڑ دیتے ہیں اور یہ نہیں دیکھتے کہ اسی لفظ یا ترکیب نے جسے وہ متروک سمجھتے ہیں خاص لطف پیدا کر دیا ہے

میر صاحب نے کثرت سے متروک اور ہندی کے الفاظ استعمال کیے لیکن ان الفاظ نے شعر میں جان ڈال دی الفاظ کا بھولا پن اور ان کی سادگی دل پر خاص اثر کرتی ہے آنکھیں موندنا ، لوہو میں نہانا ، بے وفائیاں ، پیاریاں ، باس کرنا ۔ وغیرہ ہزاروں الفاظ اور محاورے ہیں ، جن کو میر صاحب نے استعمال کرکے قبولیت کی سند دے دی ہے

عہد جوانی رو رو کاٹا پیری میں لیں آنکھیں موند
یعنی رات بہت تھے جاگے صبح ہوئی آرام کیا

کیوں کر گلی سے اس کی اٹھ کر میں چلا جاتا
یاں خاک میں ملنا تھا ، لوہو میں نہانا تھا

گل کو محبوب میں قیاس کیا   فرق نکلا بہت جو باس کیا

یارب کدھر گئے وے جو آدمی روش تھے
اوجڑ دکھائی دے ہیں شہر و دیہہ و نگر سب

یہ بستیاں اجڑ کے کہیں بستیاں بھی ہیں   دل ہو گیا خراب ، جہاں بھر رہا خراب

था रब[1] किधर गये वे जो आदमी रविश[2] थे उजड़[3] दिखाई दे हैं शहरो-देहो-नगर सब

ये बस्तियाँ उजड़ के कहीं बस्तियाँ[4] भी हैं दिल हो गया ख़राब जहाँ घर रहा ख़राब

मत हम नमाज़ियों को ख़ाना-साज़े-दीं[5] जानो कि एक ईंट की ख़ातिर ये ढाते हैंगे मसीत[6]

ऐ बुए-गुल समझ के महकियो पवन के बीच ज़ख़्मी पड़े हैं मुर्ग़[7] हज़ारों चमन के बीच

दिल वह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके पछताओगे सुनो हो यह बस्ती उजाड़ के

हाल मेरा शहर में कहते रहेंगे लोग देर इस फ़साने[8] के तईं होने तो दो मशहूर टुक

दिवाना हो गया तू "मीर" आख़िर रेख़ता कह-कह
न कहता था मैं ऐ ज़ालिम कि ये बातें नहीं बनियाँ

तब थे सिपाही अब हैं जोगी आह जवानी यूँ काटी
ऐसी थोड़ी रात में हमने क्या-क्या स्वांग रचाए हैं

हो जो तेरा-सा रंग गुल का है रीझें हम तब जब ऐसी बू भी हो

जो चाहे मिल किसू से या सबसे तू जुदा[9] रह पर हो सके तो प्यारे टुक दिल का आशना[10] रह

नहीं वस्वास[11] जी गँवाने के हाय रे ज़ौक़[12] दिल लगाने के

इस कदूरत[13] को हम समझते हैं ढब हैं ये ख़ाक में मिलाने के

आजकल बेक़रार हैं हम भी बैठ जा चलनेहार हैं हम भी

"मीर" ने हिन्दी के शब्दों की तरह अरबी-फ़ारसी के शब्द भी बड़ी विशेषता-पूर्वक प्रयोग किये हैं किन्तु इस प्रकार कि शेर की सरलता, प्रवाह और प्रभाव-कारिता में कोई अन्तर नहीं आया। "मीर" साहब के काव्य में सादगी, सफ़ाई, शब्दों, रोज़मर्रे और मुहावरे का विशेष ध्यान, कल्पना में ऊँचाई के साथ वेदना और प्रभाव इतना अधिक है कि किसी और शायर को न नसीब हुआ है न होगा।

१. पालनहार। २. जिनमें मानवीय-ढंग थे। ३. उजाड़। ४. अब क्रियाओं से इस प्रकार बहुवचन बनाने का प्रचलन नहीं। ५. धर्म का घर बसाने वाला। ६. मस्जिद (जो ख़ुदा का घर कहलाता है)। ७. पक्षी। ८. कथा। ९. विलग। १०. परिचित। ११. आशंका। १२. अभिरुचि। १३. वैमनस्य, मनोमालिन्य।

مت ان نمازیوں کو خانہ ساز دیں جانو   کہ ایک اینٹ کی خاطر یہ ڈھاتے ہیں گے مسیت

اے بوئے گل سمجھ کے ہلیو پون کے بیچ
زخمی پڑے ہیں مرغ ہزاروں چمن کے بیچ

دل وہ نگر نہیں کہ پھر آباد ہو سکے   پچھتاؤ گے سنو ہو یہ بستی اجاڑ کے

حال میرا شہر میں کہتے رہیں گے لوگ دیر   اس فسانے کے تئیں ہونے تو دو مشہور ٹک

دوانا ہو گیا تو میر آخر ریختہ کہہ کہہ   نہ کہتا تھا میں اے ظالم کہ یہ باتیں نہیں بھلیاں

تب تھے سپاہی اب ہیں جوگی آہ جوانی یوں کاٹی
ایسی تھوڑی رات میں ہم نے کیا کیا سوانگ رچائے ہیں

ہو جو تیرا سا رنگ گل کا ہے   دیکھیں ہم تب، جب ایسی بو بھی ہو

جی چاہے مل کسو سے یا سب سے تو جدا رہ
پر ہو سکے تو پیارے ٹک دل کا آشنا رہ

نہیں وسواس جی گنوانے کے   ہائے رے ذوق دل لگانے کے

اس کدورت کو ہم سمجھتے ہیں   ڈھب ہیں یہ خاک میں ملانے کے

آج کل بے قرار ہیں ہم بھی   بیٹھ جا چلنے ہار ہیں ہم بھی

वह जितने धैर्य, शान्ति, आन्तरिक दाह और गर्म आह के साथ अपने विचारों, को शेरों की आकृति प्रदान करते हैं। वह उन्हीं का हिस्सा है और ईश्वर ने उन्हें ही यह गुण प्रदान किया है: १४८

ईं सआदत बज़ोरे-बाज़ू नीस्त ता न बख़्शद ख़ुदा-ए-बख़्शिन्दा[1]

उर्दू शायरी में बहुत से बड़े-बड़े शायर पैदा हुए और पैदा होंगे लेकिन "मीर" जैसा दृष्टि-सम्पन्न, साक्षात वेदना और व्यथा, सशरीर ज्ञान और कौशल और ख़ुदा-ए-सुख़न शायर पैदा होना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। "मीर" का यह कहना तथ्य एवं सच्चाई पर निर्भर है:

बरसों लगी हुई हैं जब मेहरो-मह[2] की आँखें तब हम सा कोई साहब, साहब नज़र[3] बने हैं

उस "साहिबे-नज़र" की बातों पर नजर रखने वाले सदैव सर धुनते रहेंगे।

बातें हमारी याद रहें फिर बातें ऐसी न सुनियेगा
पढ़ते किसू को सुनियेगा तो देर तलक सर धुनियेगा।

क्योंकि उनकी बातों में वह रंगत, वह महक, वह सौन्दर्य, वह आकर्षण, वह गरिमा है कि संसार के श्रेष्ठतर लोगों को कभी नसीब नहीं हो सकी। बड़े-बड़ों ने प्रयत्न किया लेकिन असफल रहे:

गुल ने हज़ार रंगे-सुख़न सर किया वले दिल से गईं न बातें तेरी प्यारी-प्यारियाँ

———

१. यह गुण बाहुबल से नहीं प्राप्त होता जब तक प्रदान करने वाला प्रभु प्रदान न करे। २. सूर्य-चन्द्र। ३. दृष्टि-सम्पन्न।

میرؔ نے ہندی کے الفاظ کی طرح عربی فارسی کے الفاظ بھی بڑی خوبی سے استعمال کیے ہیں، مگر اس طرح کہ شعر کی سلاست و روانی اور تاثیر میں کوئی فرق نہیں آیا۔ میرؔ صاحب کے کلام میں سادگی وصفائی الفاظ روز مرے اور محاورے کی پابندی۔ بیان میں تازگی، خیال میں بلندی کے ساتھ درد اور اثر اتنا زیادہ ہے کہ کسی اور شاعر کو نصیب نہیں ہوا ہے، نہ ہوگا، وہ جس سکون، خاموشی، سوز اور آہ گرم کے ساتھ اپنے خیالات کو شعر کا پیکر بناتے ہیں وہ انھیں کا حصّہ ہے اور خدا نے انھیں کو یہ نعمت بخشی ہے

ایں سعادت بہ زور بازو نیست تا نہ بخشد خدائے بخشندہ

اردو شاعری میں بہت سے بڑے بڑے شاعر پیدا ہوئے اور پیدا ہوں گے لیکن میرؔ جیسا صاحب نظر، پیکر حزن و ملال، مخزن فضل و کمال اور خدائے سخن شاعر پیدا ہونا، ناممکن نہیں تو مشکل ضرور ہے۔ میرؔ کا یہ کہنا حقیقت و صداقت پر مبنی ہے

برسوں لگی رہی ہیں جب مہر و مہ کی آنکھیں تب کوئی ہم سا صاحب! صاحب نظر بنے ہے

اس صاحب نظر کی باتوں پر اہل نظر ہمیشہ سر دھنتے رہیں گے

باتیں ہماری یاد رہیں پھر باتیں ایسی نہ سنیے گا
پڑھتے کسو کو سنیے گا تو دیر تلک سر دُھنیے گا

کیونکہ اس کی باتوں میں وہ نکہت، وہ مہک، وہ حسن وہ رعنائی اور وہ کشش ہے کہ خوبان جہاں کو بھی کبھی نصیب نہیں ہوسکی، بڑے بڑوں نے کوشش کی لیکن ناکام رہے

گل نے ہزار رنگ سخن سر کیا ولے دل سے گئیں نہ باتیں تری پیاری پیاریاں

मीर तकी मीर - एक तअस्सुर

डाक्टर कमला सांकृत्यायन

सिरहाने 'मीर' के आहिस्ता बोलो।
अभी टुक रोते-रोते सो गया है।

उपरोक्त पंक्तियों को कहने वाले 'मीर' का प्रादुर्भाव उस काल में हुआ जब कि दिल्ली में साहित्य-सर्जन के लिए उर्दू को ही गंभीरतापूर्वक अपनाया जा चुका था। उस काल की भाषा तथा भाव में ओज पैदा हो गया था। भाषा में वाक्य-विन्यास तथा व्याकरण में स्थिरता आ गई थी। फ़ारसी के भाव-व्यंजना का उपयोग अधिक मात्रा में किया जा रहा था। उस काल की कविता की विशेषता यह है कि उस में भावों में समानता नहीं थी। इस काल के कवियों ने लम्बी कविताएं भी अधिक लिखी हैं। इस काल की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उर्दू काव्य का केन्द्र अब दिल्ली से उठ कर लखनऊ आ गया। बहुत से प्रतिष्ठित कविगण भी दिल्ली से उठ कर लखनऊ चले आए। इन्हीं कवियों में 'मीर' भी एक हैं जो उचित रूप से उर्दू के ग़ज़ल कहने वालों में सबसे प्रमुख माने जाते हैं। उनकी काव्यकृति में करुणा का जो माधुर्य एवं रस मिलता है, वह अन्य कवियों में कम ही देखने को मिलता है।

मीर की काव्य रचना लगभग दो हज़ार पृष्ठों पर फैली हुई है। इनके कतिपय ऐसे भी शेर हैं जिनकी भाषा अब कुछ बदल-सी गई है। उनके कुछ शेर ऐसे हैं जो पुराने ज़माने में कहे गये होने पर भी चिर-नवीन हैं। उनके कुछ ऐसे सुन्दरतम् रचनाएं भी हैं जो जादू का असर रखते हैं। ऐसी रचनाओं में कवि का स्वर जीवन-स्वर बन जाता है। इन रचनाओं में जो विशिष्टता है, जिस विनम्रता और तीव्रता तथा माधुर्य के दर्शन होते हैं इतना अन्य कवियों की कृतियों में नहीं। उनकी ऐसी रचनाएं उर्दू काव्य की बहुमूल्य निधि हैं।

उदाहरण स्वरूप कुछ शेर यहां प्रस्तुत हैं—

میر تقی میرؔ — ایک تاثر

ڈاکٹر کملا سنسکرتائین

سرہانے میرؔ کے آہستہ بولو
ابھی ٹک روتے روتے سو گیا ہے

اس شعر کے خالق میر تقی میرؔ اس دور میں پیدا ہوئے تھے جب دلی میں ادبی تخلیق کے لیے اردو اختیار کی جاچکی تھی۔ زبان اور جذبات میں جلا پیدا ہوچکی تھی۔ زبان میں نکھار اور قواعد میں نظم و ترتیب کا کام تکمیل پاچکا تھا۔ فارسی اسالیب اور طرز ادا کا استعمال زیادہ کیا جارہا تھا۔ اس زمانے کی شاعری کی خصوصیت یہ ہے کہ اس وقت جذبات اور موضوعات اظہار میں کوئی توازن نہیں تھا۔ نہ یہ ضروری تھا کہ کسی خاص صنف سخن کو خصوصیت حاصل ہوگئی ہو۔ اسی دور میں طول طویل نظمیں، مثنویاں، مسدس، مخمس اور مختصر غزلیں، غرض کہ سب ہی کچھ لکھا گیا ہے۔ اس دور کی سب سے بڑی خصوصیت جس چیز کو قرار دیا جاسکتا ہے وہ یہ ہے کہ شعر و سخن میں قطبیت اور مرکزیت کا جو مقام پہلے دلّی کو حاصل تھا وہ اب لکھنو منتقل ہوگیا تھا۔ بہت سے سربرآوردہ شعرا دلی سے مراجعت کرکے لکھنو آگئے تھے۔ انھیں میں سے میرؔ بھی ایک تھے۔ میرؔ اردو غزل گویوں میں سب سے نمایاں اور منفرد مقام کے مالک ہیں۔ ان کے کلام میں درد و حزن کی جو چاشنی، شیرینی اور رس ہے وہ دوسرے شعرا کے یہاں کم ہی دیکھنے میں آتا ہے

میرؔ کا کلام تقریباً دو ہزار صفحات پر پھیلا ہوا ہے۔ ان کے بعض اشعار ایسے بھی ہیں جن کی زبان اب اجنبی و نامانوس سی ہوچکی ہے۔ اور ان کے بعض شعروں کا یہ عالم ہے کہ وہ انقلابات زمانہ کی اس قدر گردشیں گزر جانے کے باوجود اب بھی تازہ و شاداب ہیں اور ہنوز ان کی حلاوت میں کوئی نقص واقع نہیں ہوا۔ اور اسی بنا پر وہ ہمیشہ نئے ہیں۔ ان کے بعض اشعار میں تو افسوں طرازی اور سحر سازی کی کیفیت ہے۔ ایسے کلام میں شاعر

इधर से अब उठ कर जो गया है — हमारी ख़ाक पर भी रो गया है
मसाइब और थे पर दिल का जाना — अजब इक सानहा सा हो गया है
सिरहाने 'मीर' के आहिस्ता बोलो — अभी टुक रोते-रोते सो गया है

'मीर' की वेदना उन अकेले की नहीं है बल्कि उसमे सम्पूर्ण जगत की संवेदनाए व्याप्त हैं। उनमें अपना दर्द भी है और युग का दर्द भी समाविष्ट है। वे स्वयं में मस्त हैं पर दुनिया के दुख-दर्द की ओर से बेख़बर नहीं हैं। वे दुनिया के दुखों पर सौ-सौ आंसू रोते हैं, उस दर्द को ख़ुद महसूस करते हैं। उनकी ऐसी कल्पनाएं हैं जो आसमान और जमीन को एक सूत्र में बांधना चाहती हैं।

मीर के काव्य को गहराई से अध्ययन करने पर हम उनमें कई विशेषताएं पाते हैं। उनकी रचनाओं प्रेम-भावना अधिक और गहरी है। यह ऐसा प्रेम है जो हृदय में उमड़ता है, इन्सान और इन्सानियत के प्रति इसकी गहरी आस्था दिखाई देती है। यह ऐसा प्रेम है जो कवि के मस्तिष्क के अतिरिक्त वातावरण में भी व्याप्त है। इस प्रेम के विना मनुष्य कुछ भी नहीं। इस विशेष तरह के प्रेम ने 'मीर' की जवानी में मधुरता ला दी थी, किन्तु दुनिया ने उनको उस माशूक़ा को उनसे अलग कर दिया। इसी कारण उनके प्रेम में मिलन की ख़ुशी नहीं बल्कि विरह वेदना ही छा गई और इसी विरह में वह रोये, पागल भी हुए, लेकिन उनके कवि हृदय के लिए इस तरह का रोना फ़ायदेमन्द ही हुआ। क्योंकि इस जुदाई के ग़म से वे इस तरह जकड़े गये कि फिर वे उससे चाहने पर भी अलग नहीं हो सकते थे। और इसी ग़मे जुदाई के दर्द के कारण उनकी कलम में निखार आ गया। इसी संवेदना के कारण इनका काव्य आम जनता के दिल को गहराई से छू सकने में सफल हुआ। उन में इस तरह का करुणरस इतना लबालब भर गया था जो मानव हृदय पर तुरत असर करता है। प्रेम की व्यापकता पर विश्वास रख कर 'मीर' साहेब एक जगह पर फ़रमाते हैं—

इश्क़ ही इश्क़ है जहां देखो — सारे आलम में भर रहा है इश्क़।
इश्क़ माशूक़ है इश्क़ आशिक़ है — यानी अपना ही मुब्तला है इश्क़।
कौन मक़सद को इश्क़ बिन पहुंचा — आर्ज़ू इश्क़ मुद्दआ है इश्क़।

जवानी में 'मीर' प्रेम की अग्नि में ख़ूब जले थे, प्रेम के कारण उनमे रवानगी आ गई थी, लेकिन बुढ़ापे में अब उनमें प्रेम का जोश ठंडा पड़ गया था। सब तरफ़ निराशा ही निराशा दिखाई पड़ती थी। अब उनमें वह गरमजोशी नहीं रह गई थी। कोई ऐसी चीज़ भी नहीं थी जिसके सहारे कवि अपनी थकी हुई ज़िन्दगी को टिका देते,

کی نواخود نوائے حیات ہوجاتی ہے۔ ان اشعار میں جو انفرادیت ہے اور ان میں جس قسم کی تندی اور شیرینی نظر آتی ہے وہ دوسرے شاعروں میں نہیں۔ ان کے اسی قسم کے کلام کو زبان اردو کا مایۂ افتخار کہا جاتا ہے۔ مثالاً بعض اشعار ملاحظہ ہوں ؎

ادھر سے ابر اٹھ کر جو گیا ہے ہماری خاک پر بھی رو گیا ہے
مصائب اور تھے پر دل کا جانا عجب اک سانحہ سا ہو گیا ہے
سرہانے میرؔ کے آہستہ بولو ابھی ٹک روتے روتے سو گیا ہے

میرؔ کا درد، غم انفرادی و ذاتی نہیں درحقیقت آفاقی ہے۔ ان کے یہاں غم دل اور غم روزگار کا امتزاج ہے۔ وہ اپنی ذات میں گم ہیں لیکن کائنات سے بے خبر نہیں۔ وہ دنیا کے حالات پر آٹھ آٹھ آنسو روتے ہیں، کائنات کا درد خود محسوس کرتے ہیں۔ اپنے تصورات میں وہ آسمان و زمین کو ایک سررشتہ میں مربوط دیکھنا چاہتے ہیں

میرؔ کے کلام کا غائر مطالعہ کرنے سے ہم ان میں کئی صفات پاتے ہیں۔ ان کے تمام جذبات پر جذبۂ عشق محیط ہے۔ یہ عشق ایسا ہے جو قلب کی گہرائیوں سے امڈتا ہے، انھیں بنیادی طور پر انسان اور انسانیت پر گہرا بھروسہ ہے۔ ان کا عشق ایسا ہے جو صرف داخلی کیفیات پر ہی محیط نہیں بلکہ اس نے گردوپیش کی کل کائنات کو اپنے حلقہ میں لے لیا ہے۔ اور احساس پیدا کرا دیتا ہے کہ اس عشق سے عاری انسان کا وجود وجود عبث ہے۔ اس عشق نے ہی انھیں جوانی میں حلاوت پیدا کی تھی۔ حالانکہ عشق زمانے کو کبھی راس نہیں آتا اور زمانے نے ان کے اور ان کی معشوقہ کے درمیان حائل ہو کے اپنی سی کر دیکھی تھی۔ اس کا نتیجہ یہ ضرور ہوا کہ ان کے وصل کی کامرانیوں کی جگہ ہجر کی تلخ کامیاں غم و آلام کی تیرگی بن کر ان پر چھائیں، فراق میں روئے بھی، مجنوں بھی ہوئے لیکن ان کے دل شاعرانہ کے لئے یہ سب مفید ہی ثابت ہوا۔ ان غموں نے اس طرح انھیں جکڑ لینا چاہا کہ وہ پھر اس سے مدت العمر نجات حاصل نہ کر سکے۔ میرؔ نے بھی اس بندش کا احترام نبھایا۔ لیکن اس طرح کہ یہ غم زندگی ان کے فن کا نکھار بن گیا۔ اور اس کا یہ نتیجہ ہوا کہ ان کا کلام عوام کے دلوں کی گہرائی میں اتر سکنے میں کامیاب ہوا ان میں سوز و ساز سے ایک ایسا آہنگ پیدا ہوا ہے جو انسانی قلوب پر فی الفور اثر کرتا ہے۔ عشق کی ہمہ گیری پر ایمان لاتے ہوئے میرؔ صاحب فرماتے ہیں ؎

عشق ہی عشق ہے جہاں دیکھو سارے عالم میں بھر رہا ہے عشق
عشق معشوق ہے عشق عاشق ہے یعنی اپنا ہی مبتلا ہے عشق

उसका सहारा लेते। बस यही एक दर्द-इश्क़ था जो उनको किसी तरह जलाये हुए था और यह इश्क़ पाक और बहुत ऊंचा उठा हुआ इश्क़ था, यह कोई ग़ैरमामूली इश्क़ नहीं था। इस इश्क़ में इन्सान अपने सुख की ख़्वाहिश नहीं रखता बल्कि वह देवता की पूजा करने लगता है। 'मीर' भी अपने इस इश्क़ को ज़ाहिर करते हुए कहते हैं—

परस्तिश की यां तक किए बुत तुझे नज़र में सबों की ख़ुदा कर चले।

यह कल्पना नहीं है, पर यह इन्सान की ज़िन्दगी की हक़ीक़त है। इन्सान के साथ इश्क़ करते भी इन्सान ख़ुदा तक पहुंच सकता है। इसमें सूफ़ी प्रेममार्गी भाव की झलक दिखाई पड़ती है।

अक्सर कवियों और शायरों के चरित्र में बन्धन नहीं होता, वे बन्धनमुक्त रहते हैं और इसी लापरवाही में वे अपना बड़प्पन समझते हैं। पर 'मीर' में वह बात नहीं देखी जाती। वे तो इन्सान को प्यार करते हैं, हरेक इन्सान के दर्द को अपना दर्द समझते हैं। इसीलिए वे इन्सान को बहुत ऊंची जगह देते हुए कहते हैं—

"मरता हूं मैं तो आदमे ख़ाकी की शान पर अल्लाह रे दिमाग़ कि है आसमान पर।"

इन्सान की इज़्जत और स्वाभिमान को ख़ासियत देते हुए मीर नीचे लिखा गया ज़ोरदार शेर कहते हैं—

इलाही कैसे होते हैं जिन्हें है बन्दगी ख़्वाहिश हमें तो शर्म दामनगीर होती है ख़ुदा होते।

हम देखते हैं कि 'मीर' साहब की रचनाओं में प्रेम की पीर है गहरी हमदर्दी है, गहरा दर्द है जो उनके जीवन का सहारा है। ज़माने से चला आया दर्दे इश्क़ इन पर इतना हावी हो गया है कि वे मिलन में भी जुदाई का दर्द महसूस करते हैं। उनका निजी दर्द ज़माने के दर्द के साथ एक हो गया है। इसीलिए उनकी शायरी में जहां कवि के दिल का दर्द छाया है वहां ज़माने की दर्द भरी आवाज़ भी सुनाई देती है।

मीर ने बहुत सहा बहुत तकलीफ़ें झेलीं, लेकिन उन्होंने अपने दुख को दूसरे लोगों के दुख़ के साथ मिला दिया है। तभी तो उनका हमदर्दी से लबालब भरा हुआ दिल कह उठता है—

"शिकवा करूं हूं बख़्त का इतने ग़ज़ब न हो बुतां
मुझको ख़ुदा न ख़्वास्ता तुम से तो कुछ गिला नहीं
चश्म सफ़ेद व अश्क सुर्ख़ आह दिले हज़ीं है यां
शीशा नहीं है, मय नहीं, अब्र नहीं हवा नहीं।

کون مقصد کو عشق بن پہنچا آرزو عشق، مدعا ہے عشق

جوانی میں میر آتش عشق میں خوب تپے تھے اور اسی نے ان کے کلام کو روانی بخشی تھی۔ لیکن ضعیفی میں جب یہ عشق سرد پڑ گیا تھا تو ہر طرف یاس و حرماں ہی نظر آ رہے تھے۔ اب ان میں وہ گرم جوشی باقی نہیں تھی۔ کوئی ایسی چیز بھی نہیں تھی جس پر وہ زندگی کے دور میں وہ تکیہ کرتے۔ لیکن وہی عشق تھا جو اس دور میں ذرا سا بدل کر ان میں ایک آتش سوزاں کی حرارتیں قائم رکھے ہوئے تھا۔ ان کا یہ عشق نہایت پاکیزہ اور بہت بلند تھا اور عشق کے عام تصورات سے الگ واقع ہوا تھا۔ یہ عشق کسی تلذذ طلبی کے لیے نہیں ہوتا۔ بلکہ اس میں عاشق فنائیت کی ایک ایسی منزل پر ہوتا ہے جہاں مکمل خود فراموشی کے عالم میں وہ اپنے وجود سے بے خبر ہو جاتا ہے۔ میر اپنے اس عشق کی وارداتوں کے اظہار میں فرماتے ہیں ؎

پرستش کی یاں تک کہ اے بت تجھے ؛ نظر میں سبھوں کی خدا کر چلے

یہ محض تخیل و تصور نہیں۔ ان کی زندگی کی حقیقت ہے۔ وہ اس حقیقت کو برملا محسوس کرا دیتے ہیں کہ عشق مجازی سے عشق حقیقی کی بصیرت حاصل کی جاتی ہے۔ ان کے عشق کی وسعتیں صوفیائے کرام کے مسلکِ عشق کی گہرائیوں تک پہنچا دیتی ہیں

اکثر شعرا اپنے ذاتی حیات و کردار میں پابندیاں قبول نہیں کرتے اور لاپروائی اور بے قیدی کے اس عالم کو ہی اپنا منتہائے کمال اور اپنی اصل عظمت سمجھتے ہیں۔ لیکن میر میں یہ بات نہیں۔ وہ تو انسان سے پیار کرتے ہیں اور ہر انسان کے غم کو اپنا غم سمجھتے ہیں۔ اسی لیے وہ انسان کی صحیح عظمت کی نشان دہی کرتے ہوئے رقم طراز ہیں ؎

مرتا ہوں میں تو آدم خاکی کی شان پر ؛ اللہ رے دماغ کہ ہے آسمان پر

انسان کی عزت نفس اور اس کی خودداری کو دائمی توقیر عطا کرتے ہوئے میر کہتے ہیں ؎

الٰہی کیسے ہوتے ہیں جنھیں ہے بندگی خواہش ؛ ہمیں تو شرم دامن گیر ہوتی ہے خدا ہوتے

ہم دیکھتے ہیں کہ میر صاحب کے کلام میں عشق کی حقیقی تڑپ اور درد ہے۔ ان کے انداز میں گہری ہمدردی کی وابستگی ہے اور ان کا ذاتی غم ایک انداز میں ان کی زندگی کا سہارا ہے۔ وہ درد عشق جو عرصۂ دراز سے چلا آتا ہے ان پر اس قدر حاوی ہو گیا ہے کہ وہ وصل میں بھی ہجر کی لذت، الم کی چاشنی کا ذائقہ محفوظ رکھتے ہیں

ان کا ذاتی غم غم ہستی سے اس طرح متصل ہو گیا ہے کہ وہ ذاتی غم کے اظہار میں کائنات کی الم رسیدگی کا بھی اظہار کر جاتے ہیں

कहीं कहीं 'मीर' साहेब ऐसे शेर भी कह देते हैं जो बहुत ही भावपूर्ण और पुरअसर होते हैं। एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है—

"मत तुरबते मीर को मिटाओ रहने दो ग़रीब का निशाँ है।

धर्म के प्रति उनका असीम प्रेम है, पर तो भी 'मीर' रूढ़िवादी नहीं हैं। धर्म की आड़ में बरती जाने वाली नीचता पूर्ण व्यवहार को वे कभी माफ़ नहीं करते। बल्कि इस नीचता से वे बेलाग ही रहते हैं। मध्ययुग के प्रेममार्गी सूफ़ी सन्तों की तरह इनका रास्ता, और ख़ुदा को याद करने का ढंग भी प्रेम से लबालब भरा हुआ है। इस प्रेम ने ही उनमें मस्ती का आलम पैदा कर दिया है, उनको बेख़ुदी बख़्शी है। उसी मस्ती के आलम में वे फ़रमाते हैं—

'मिलने वालो फिर मिलिएगा हम हैं आलम में दीगर में
मीर फ़क़ीर को सुक्र है यानी मस्ती का आलम है अब।

बेख़ुदी ले गई है कहाँ हमको देर से इन्तज़ार है अपना।

इस तरह हम देखते हैं उर्दू साहित्य के निर्माण में 'मीर' का बहुत बड़ा हाथ है। उर्दू साहित्य से यदि मीर को अलग कर दिया जाय तो वह अनाथ हो जायगा। 'मीर' का इसी लिए बहुत बड़ा स्थान है। उनके जैसे शायर पहले हुए थे और न बाद में होंगे। वे उर्दू शायरी में ख़ुदा के रूप में माने जाते हैं। इसी लिये उन तक पहुंचना मामूली काम नहीं है। ज़माने के दर्द की अनुभूति ने उनकी क़लम को भी पैनी बना दिया, लिखावट में जादू डाल दिया। उनके दर्द में इन्सान अपना दर्द खोज लेता है।

उन महान् शायर की याद में ये कुछ श्रद्धा के फूल न्योछावर हैं।

میرؔ نے تن تنہا آلام و مصائب کے ہجوم کے نرغے میں زندگی بسر کی۔ لیکن کہیں ان کے کلام میں ان کا غم تنہا ان کا نہیں نظر آتا۔ اسی لیے ہمدردی کا قوی احساس ان کے دل کی زبان بن جاتا ہے ؎

شکوہ کروں ہوں بخت کا اتنے غضب نہ ہو بتاں
مجھ کو خدانخواستہ تم سے تو کچھ گلا نہیں
چشم سفید و اشکِ سرخ آہ دلِ حزیں ہے یاں
شیشہ نہیں ہے، مے نہیں، ابر نہیں، ہوا نہیں

کہیں کہیں تو میرؔ صاحب ایسے اشعار بھی کہہ دیتے ہیں جو بہت ہی پُر از جذبات و غیر معمولی طور پر پُر اثر ہوتے ہیں۔ ایک مثال پیش ہے ؎

مت تربتِ میرؔ کو مٹاؤ رہنے دو غریب کا نشاں ہے

میرؔ کو مذہب سے گہری وابستگی تھی لیکن وہ متعصب اور کٹر نہیں۔ مذہب کی آڑ میں حرص و آز کی پرستش اور ریاکاریوں کو وہ کبھی برداشت نہیں کرتے اور ان پر بے لاگ رائے ظاہر کرتے ہیں۔ قرونِ وسطیٰ کے صوفیا عشاق کی طرح ان کی راہ اور ان کی یادِ خدا کا انداز خالص عشقیہ ہے۔ اس عشق نے ان میں والہانہ انداز پیدا کیے ہیں اور انھیں بے خودی بخشی ہے۔ اسی مستی کے عالم میں وہ فرماتے ہیں ؎

ملنے والو پھر ملیں گے ہم ہیں عالم دیگر میں میرؔ فقیر کو سکر ہے یعنی مستی کا عالم ہے اب

بے خودی لے گئی ہے داں ہم کو دیر سے انتظار ہے اپنا

اس طرح ہم دیکھتے ہیں میرؔ کا اردو ادب کی تعمیر میں بہت بڑا ہاتھ ہے۔ اگر میرؔ کو الگ کر کے اردو ادب کو دیکھا جائے تو یہ ادب تشریح مغز ہو کے رہ جائے گا۔ میرؔ کا مرتبہ بہت عالی ہے۔ ان جیسے شاعر یکتا و نادر روزگار ہوتے ہیں۔ انھیں خدائے سخن کی حیثیت دی جاتی ہے۔ اسی لیے ان کا ہم پلہ ہونا آسان نہیں۔ درد کے عرفان حقیقی نے ان کے کلام کو جو بصیرت افروزی عطا کی ہے وہ واقعی انھیں سحر آفریں اور سحر طراز بنا دیتا ہے۔ ان کے درد میں ہر انسان اپنا درد تلاش کر لیتا ہے

یہ چند سطور ایک بے مایہ قلم سے اس عظیم المرتبت شاعر کی خدمت میں نذرِ عقیدت کی حیثیت سے حاضر ہیں

मीर और भावात्मक-एकात्म्य की खोज

सैयद एहतिशाम हुसैन

आश्चर्य है कि "मीर" के आलोचकों ने उनके जीवन और काव्य के सुविस्तृत क्षेत्रों में कोई स्पष्ट सम्बन्ध-सूत्र ढूंढने और उनके किन्हीं पक्षों को तर्कसम्मत सिद्ध करने का प्रयास क्यों नहीं किया ! इस विषय पर लिखने वालों में से अक्सर ने उनकी अन्तःमुखी प्रवृत्तियों पर इतना अधिक बल दिया है कि वाह्य-लोक से उनका जो सम्बन्ध था वह उपेक्षित होकर रह गया। लोगों ने; अधिक से अधिक "ज़िक्रे-मीर[1]" के प्रारम्भिक पृष्ठों के प्रकाश में; उन्हें सर्वस्वहीन, अस्त-व्यस्त मना, असफल प्रेमी, प्रेम और भक्ति (की तसव्वुफ़ शाखा) का मर्मज्ञ—और ग़ज़लों के प्रकाश में; एकान्त-प्रिय, निराशावादी (अथवा पीड़ा-प्रिय), मनुष्यों से भागने वाला और आनन्दप्रद वाटिका के वासन्ती मोद की ओर से आँखें मूँदकर अपने मन के पतझड़ नें ही रस लेने वाला—निर्धारित किया है। इस प्रकार उन्हें मानो मात्र एक तरह की रुग्ण अथवा अर्ध-रुग्ण भावुकता का ही कवि सिद्ध किया है। यह लोग यह बात भूल गए हैं कि उनकी यह अन्तःमुखी भावुकता जीवन के उन अनुभवों की प्रतिक्रिया अथवा प्रतिबिम्ब थी जो उन्हें "मर- मर के ज़िन्दगी करने" के प्रयत्न में प्राप्त हुए थे और अट्ठारहवीं सदी ईस्वी के हिन्दुओं और मुसलमानों में ऊँच-नीच, धनी-निर्धन, कवि-अकवि, अच्छे-बुरे–प्रत्येक प्रकार के लोगों से मिलते रहने का फल थे।

तथ्य यह है कि "मीर" अपने युग और वातावरण के वाह्य, और सपनों एवं विचारों के आन्तरिक तत्वों के संघर्ष के कवि हैं। और—यद्यपि मूल रूप से ग़ज़ल के ही कवि होने के कारण उन्होंने इस संघर्ष को भावात्मक प्रतीकों और हार्दिक प्रतीतियों के रूप में ही प्रस्तुत किया है किन्तु उनका सम्बन्ध जीवन के वाह्य वातावरण से बहुत गहरा है। दर्शन एवं मनोविज्ञान की भाषा में कह सकते हैं

१. मीर तक़ी "मीर" का फ़ारसी में आत्म चरित।

میرؔ اور جذباتی ہم آہنگی کی جستجو

سیّد احتشام حسین

تعجب ہے کہ میرؔ کے نقادوں نے میرؔ کی زندگی اور شاعری کے وسیع دائرے میں کوئی واضح ربط تلاش کرنے اور بعض گوشوں کی توجیہہ کرنے کی کوشش کیوں نہیں کی۔ اکثر لکھنے والوں نے ان کی داخلیت پر اتنا زور دیا کہ بیرونی دنیا سے میرؔ کا جو تعلق تھا وہ نظر انداز ہوگیا۔ لوگوں نے زیادہ سے زیادہ ذکر میرؔ کے ابتدائی صفحات کی روشنی میں انھیں ایک بے سر و ساماں، پریشاں خاطر، عاشق نامراد، عشق و تصوف کے نکتہ شناس' اور غزلیات کی روشنی میں گوشہ نشین، قنوطی (یاغم پسند)، مردم بیزار اور فرحت بیز گوشۂ چمن کی بہار سے آنکھیں موند کر اپنے دل کی خزاں میں لذت لینے والا قرار دیا ہے۔ اس طرح انھیں گویا محض ایک قسم کی مریض یا نیم مریض داخلیت ہی کا شاعر ثابت کیا ہے۔ لکھنے والے اس بات کو بھول گئے ہیں کہ یہ داخلیت زندگی کے ان تجربات کا ردِّ عمل یا عکس تھی جو انھیں "مرمر کر زندگی کرنے" کی کوشش میں پیش آتے تھے اور اٹھارویں صدی کے ہندوؤں مسلمانوں میں اعلیٰ اور ادنیٰ، امیر اور غریب، شاعر اور غیر شاعر، اچھے اور برے ہر قسم کے انسانوں سے ملتے رہنے کا نتیجہ تھی

حقیقت یہ ہے کہ میرؔ اپنے وقت اور ماحول کے خارجی اور اپنے خوابوں اور خیالوں کے داخلی عناصر کی کشمکش کے شاعر ہیں اور گو بنیادی طور سے غزل گو ہونے کی وجہ سے انھوں نے اس کشمکش کو داخلی علامات اور قلبی کیفیات کی شکل ہی میں پیش کیا ہے لیکن ان کا ربط زندگی کے خارجی ماحول سے بہت گہرا ہے۔ فلسفہ اور

कि मानसिक-संसार बाह्य-जगत से पूर्णतः पृथक नहीं हो सकता । भावना जिस प्रकार की प्रतीति से उद्भूत होती है उसका एक बाह्य अस्तित्व भी होता है; और—कल्पना जो चित्र बनाती है उसके रंग आस-पास में व्याप्त पार्थिव-जगत से ही प्राप्त किये जाते हैं । सम्वेदनशील व्यक्ति के अनुभव व्यर्थ नहीं जाते और वह उन्हीं से अपनी भावनाओं और विचारों का संसार बड़ी कुशलतापूर्वक सजा लेता है ।

"ज़िक्रे-मीर" का "मीर" एक ऐसे बाप का बेटा है जो उसके लिए केवल संन्यास और प्रेम की ही पूंजी छोड़ गया । जिस "मीर" को सम्बन्धियों से प्रेम-स्नेह के स्थान पर कोप-शोक-तिरस्कार की कटुताएं मिलीं; जिसने अल्पावस्था में ही श्रम करना सीखा और आजीवन दर-दर की धूल फांकी; जिसने बारह-तेरह नौकरियां कीं; सैनिक अभियानों में सम्मिलित होकर ऊँचे-नीचे रास्तों, बीहड़ मैदानों, ऊबड़-खाबड़ तराइयों, क़स्बों और देहातों में अपने समय का हर सुख-दुःख देखा; जिसने राज्य बदलते; सिंहासन छूटते; राजाओं को रंक और रंकों को धनी और सरदार बनते देखा; जिसने सरदारों और अमीरों के पारस्परिक होड़ में विद्वेष एवं षड़यंत्र, वफ़ादारियां और बेवफ़ाइयां देखीं । जिसने विदेशी आक्रामकों के अत्याचार अपनी आंखों से देखे; और अधिकार एवं शक्ति के लोभ में युद्ध-रत स्वदेशी रुहेलों, मराठों, सिक्खों, जाटों और मेवातियों की अनाचारी यंत्रणाएं-उद्दण्डताएं भोगीं; सेनाओं के साथ किलों में बन्द हुआ, नागरिकों के साथ नगर-प्राचीरों की आड़ में छुपा और सर्ववंचित, गृहहीन होकर मारा-मारा फिरा—"ज़िक्रे-मीर" में हम जिस "मीर" से मिलते हैं वह एकान्तवासी और मानव-विरक्त कवि नहीं है । उसने अन्य बहुत से कवियों के प्रतिकूल जीवन के व्यवहारिक-संघर्ष में एक पात्र के रूप में भाग लिया है और अपने जीवन का एक बड़ा भाग अपनी दिल्ली से दूर विभिन्न स्थानों पर बिताया है—यहां तक, कि भौतिक दृष्टि से अभाव-मुक्ति और मानसिक शान्ति की खोज उसे लखनऊ ले आई जहां ऊपरी सम्मान और राज्याश्रय प्राप्त होने के उपरान्त भी निरन्तर अट्ठाइस वर्ष घोर मानसिक यंत्रणा में बिताकर उसने असंतोष एवं संघर्ष की स्थिति में ही प्राण त्यागा ।

क्या उनके यह समस्त अनुभव बेकार गए ? क्या उसने उन सबको शेरों और ग़ज़लों का स्वरूप प्रदान कर चिरस्थायी नहीं कर दिया ? क्या यह "मीर" जिसकी चर्चा हुई उस "मीर" से भिन्न है जो "ख़ुदा-ए-सुख़न" बनकर अपनी कला

نفسیات کی زبان میں کہہ سکتے ہیں کہ دل کی دنیا خارج کی دنیا سے یکسر الگ نہیں ہوسکتی جذبہ جس کیفیت کا شکار ہوتا ہے وہ ایک خارجی وجود بھی رکھتی ہے اور تخیل جو تصویریں بناتا ہے اس کے رنگ و روغن بھی گرد و پیش کی دنیا ہی سے حاصل کیے جاتے ہیں۔ حساس انسان کے تجربے رائگاں نہیں جاتے اور وہ ان سے اپنے جذبہ و خیال کی کائنات بڑی خوبی سے سجا لیتا ہے۔ ذکر میر کا میر ایک ایسے باپ کا بیٹا ہے جو اس کے لیے صرف فقر و عشق کی پونجی چھوڑ گیا، جسے عزیزوں کی محبت اور شفقت کے بجائے غم و غصہ کی تلخی ملی جس نے کم عمری ہی میں محنت کرنا سیکھا اور عمر بھر در در کی خاک چھانی، جس نے بارہ تیرہ ملازمتیں کیں، فوجی مہموں کے ساتھ اونچے نیچے راستوں، بیہڑ میدانوں ناہموار وادیوں، قصبوں اور دیہاتوں میں زمانے کے گرم و سرد دیکھے، جس نے حکومتیں بدلتے، تاج و تخت چھوٹتے، شاہوں کے فقیر اور فقیروں کے امیر بننے کا نظارہ کیا، جس نے سرداروں اور امیروں کی رقیبانہ چشمکیں، وفاداریاں اور بے وفائیاں دیکھیں، جس نے بیرونی حملہ آوروں کے مظالم اپنی آنکھوں سے دیکھے اور قوت و اقتدار حاصل کرنے کے لیے برسرِ پیکار ملکی مہم آزما روہیلوں، مرہٹوں، سکھوں، جاٹوں اور میواتیوں کے جبر و ظلم کا مزا چکھا، فوجوں کے ساتھ قلعوں میں بند ہوا، شہریوں کے ہمراہ شہر پناہ فصیلوں کے سایہ میں چھپا اور بے خانماں ہوکر مارا مارا پھرا۔ ذکر میر میں ہم جس میر سے ملتے ہیں وہ گوشہ نشین اور مردم بیزار شاعر نہیں ہے۔ اس نے بہت سے دوسرے شعرا کے برعکس زندگی کی خارجی کش مکش میں ایک اداکار کی حیثیت سے شرکت کی ہے اور عمر کا ایک حصہ دہلی سے دور مختلف مقامات پر گزارا ہے یہاں تک کہ آسودگی اور سکونِ دل کی تلاش اسے لکھنؤ لے آئی جہاں ظاہری عزت اور سرپرستی کے باوجود اٹھائیس سال کربِ مسلسل میں گزار کر اس نے پریشانی اور کشمکش ہی میں جان دی

کیا اس کے یہ سارے تجربے بے کار گئے؟ کیا اس نے ان سب کو شعر و غزل کے پیکروں میں ڈھال کر ہمیشہ کے لیے زندہ نہیں کر دیا؟ کیا یہ میر جن کا ذکر ہوا اس میر سے مختلف ہے جو خدائے سخن بن کر اپنے فن میں نمایاں ہوتا ہے، جو دلی

में विशिष्ट स्थान रखता है ? जो दिल्ली के गली-कूचों की रौनक का चितेरा है और उनकी बर्बादी पर विलाप करता है ? जो नगर के अमरदों[1] और हसीनों के गीत गाता और अपने दिल की बर्बादी पर सन्तप्त विलाप करता है। जो सबसे मुंह मोड़ कर अपने "दिले-ख़ूं-गश्ता" (ख़ून हो गए दिल) की "बहार" देखने और "दिले-पुरख़ूं की इक गुलाबी" से मस्त और आत्म-विस्मृत रहने में ही लीन है ?

यह संभव ही नहीं कि एक अनुभूति-सम्पन्न, सम्वेदनशील और ईमानदार कवि अपने दिल की दुनिया में कुछ और हो और अपने दैनिक कर्मों की दुनिया में कुछ और। वस्तुस्थिति यह है कि इन दोनों दुनियाओं में एक साथ रहने और जीने—और—दोनों के मध्य सम्बन्ध बनाये रखने का संघर्ष है जो "मीर" के लिए जानलेवा बन गया है। और, इसी संघर्ष एवं प्रयत्न की अपूर्व कलात्मक अभिव्यंजना है जिसने उन्हें एक आसाधारण कवि बनाया है।

इसमें सन्देह नहीं कि "मीर" के काव्य का अध्येता समग्र रूप से यही प्रभाव ग्रहण करके उठेगा कि "मीर" भावुक, स्वभाव के शीघ्र उत्तेजित हो जाने वाले, अव्यवस्थित विचारधारा के, विकल-मन, दुर्दशाग्रस्त व्यक्ति और असफल प्रेमी हैं। उन्हें प्रेमी और मानव दोनों स्थितियों में अपने अस्तित्व की महत्ता और विशिष्टता का बोध है; इस बोध ने उनमें एक विशेष ढंग का बांकपन पैदा कर दिया है। यही बातें उनके काव्य का केन्द्र-बिन्दु निर्धारित करती हैं और यही उनके काव्य की मौलिक लय एवं झंकार का आयोजन करती हैं। किन्तु वस्तुतः यह "मीर" का पूर्ण चित्र नहीं। इसमें तो उनके व्यक्तित्व के अधिक व्यापक पहलू उचित स्थान पाने से रह जाते हैं। उनकी अनुभूति एवं चेतना के सभी पक्ष इसमें सम्मिलित नहीं हैं। उदाहरणार्थ—मुग़लों के पतन-काल में जीवन जिस सांस्कृतिक संघर्ष और भौतिक अस्त-व्यस्तता द्वारा ग्रस्त था उसका एक प्रत्यक्ष रूप भी था जिसे उस युग के इतिहासकार अपनी पकड़ में न ला सके लेकिन कवियों ने उस नैतिक अधःपतन और आत्मिक व्यग्रता का चित्रण इस प्रकार किया है कि उस युग की मूल-प्रवृत्तियों को समझने में सहायता मिलती है। ग़ज़लों के फुटकर शेरों के अतिरिक्त इस भाव का अति स्पष्ट चित्रण "सौदा" की हज्वों[2] और शहर-आशोबों[3] में, "मीर" की कुछ मसन-

१. समयौन आकर्षण की सुज्ञात विकृति जैसे पात्र ढूंढती है उन्हें ही "अमरद" कहा जाता है। इनके लिए नपुंसकता अनिवार्य नहीं। उन दिनों उर्दू काव्य में नारी की चर्चा वर्जित थी अतः पुंलिंग प्रयोग में अमरदों की चर्चा को नारी-सौंदर्य का प्रतीक समझा जाता था। २. घृणा और रोष की अभिव्यक्ति की एक विधा जिसमें पात्र के दोष वर्णन किये जाते हैं। ३. सम्पूर्ण नगर व्यापी संकट के सम्बन्ध में रचित प्रबन्ध-काव्य।

کے گلی کوچوں کی رونق اور بربادی کا معنوز اور نوحہ خواں ہے، جو شہر کے امردوں اور حسینوں کے گیت گاتا اور اپنے دل کی بربادی پر مرثیہ خوانی کرتا ہے، جو سب سے منھ موڑکر اپنے دلِ "خوں گشتہ" کی بہار دیکھنے اور "دل پر خوں کی اک گلابی سے" مست و بے خود رہنے میں محو ہے؟ یہ ممکن ہی نہیں ہے کہ ایک حساس اور مخلص شاعر اپنے دل کی دنیا میں کچھ اور ہو اور اپنے روز مرہ کے تجربات کی دنیا میں کچھ اور، حقیقت یہ ہے کہ ان دونوں دنیاؤں میں ایک ساتھ رہنے اور جینے، دونوں کے درمیان کوئی ربط قائم کرنے کی جدو جہد ہے جو میرؔ کے لیے جان لیوا بن گئی ہے اور اسی کش مکش اور کوشش کا نادر اور فن کارانہ اظہار ہے جس نے انھیں غیر معمولی شاعر بنایا ہے

اس میں شک نہیں کہ میرؔ کی شاعری کا مطالعہ کرنے والا مجموعی طور پر یہی تاثر لے کر اٹھے گا کہ میرؔ ایک نازک طبع، پریشاں فکر، زبوں حال اور ناکام عاشق ہیں، انھیں عاشق اور انسان دونوں حیثیتوں سے اپنے وجود کی عظمت اور رتبہ کی اہمیت کا احساس ہے، اس احساس نے ان میں مخصوص انداز کا بانکپن پیدا کردیا ہے اور یہی باتیں ان کی شاعری کا مرکزی نقطہ اور بنیادی آہنگ فراہم کرتی ہیں۔ لیکن اصل یہ ہے کہ یہ میرؔ کی مکمل تصویر نہیں ہے۔ اس میں ان کی شخصیت کے بعض وسیع تر پہلو نمایاں ہونے سے رہ جاتے ہیں، اس میں ان کے احساس اور شعور کے تمام گوشے شامل نہیں ہیں۔ مثلاً مغلوں کے عہد زوال میں زندگی جس تہذیبی کشاکش اور مادّی بے چینی میں مبتلا تھی اس کی ایک ظاہری حیثیت بھی تھی جسے اس زمانے کے مورخ اپنی گرفت میں نہ لاسکے لیکن شاعروں نے اس اخلاقی انحطاط اور روحانی اضطراب کی عکاسی اس طرح کی ہے کہ اس عہد کے مزاج کے سمجھنے میں مدد ملتی ہے۔ غزلوں کے منفرد اشعار کے علاوہ اس کیفیت کی واضح صورت گری سوداؔ کی ہجووں اور شہر آشوبوں میں، میرؔ کی بعض مثنویوں، مخمسوں اور نظموں میں، نظیرؔ اکبرآبادی کی متعدد منظومات میں، حاتمؔ، ناجیؔ، قائمؔ اور دوسرے شعرا کے کلام میں ہو جاتی ہے۔ جہاں اس عہد کی تاریکیں گونگی

वियों[1], मुख़म्मसों[2] और नज़्मों में, "नज़ीर" अकबराबादी के अनेक पद्यों में "हातिम", "नाज़ी", "क़ायम" और अन्य कवियों की रचनाओं में हो जाता है। जहाँ उस युग का इतिहास गूंगा है वहाँ शायरों की आवाज़ चीख़ बनकर वस्तुस्थिति की ओर आकृष्ट कर रही है।

विषय और वस्तु के पारस्परिक सम्बन्ध के कलात्मक अध्ययन के लिए उस युग का काव्य बड़ी गहरी समस्याएं प्रस्तुत करता है। इसलिए "मीर" के सम्बन्ध में अक्सर यह बात कही गई है कि उनका काव्य व्यक्तिगत दुख-दर्द की अभिव्यक्ति होने के साथ-साथ अपने युग की पीड़ाओं और दुरवस्थाओं की व्यञ्जना भी है। उनकी आवाज में समय का स्वर भी सुनाई देता है लेकिन ग़ज़ल की सूक्ष्म एवं कोमल-कान्त काव्यात्मकता में भावनात्मक एवं चेतनात्मक उत्प्रेरणाओं का सम्बन्ध सामान्य दृष्टि में नहीं आ सकता। इनमें कोई मेकानिकी सम्बन्ध या गणितात्मक अनुपात नहीं है जिसे आसानी से समझ लिया जाए। काव्य में भावना, विचार और अनुभव की अभिव्यक्ति की प्रक्रिया अत्यन्त जटिल है। कला और शिल्प के विधानों के सन्दर्भ में यह और अधिक जटिल हो उठती है। "मीर" के काव्य के विश्लेषण में एक कठिनाई तो यह है कि स्वयं उनके व्यक्तित्व में बहुत सी जटिलताएं और तहें हैं। दूसरे यह कि उनका युग आर्थिक पतन और सामाजिक विघटन के कारण प्रत्येक सांस्कृतिक मूल्य को खोखला बना रहा था। इस स्थिति में उस कलात्मक सम्बन्ध को ढूंढ निकालना कठिन है जिसका उल्लेख प्रारम्भ में है। स्वयं "मीर" ने इस ओर बारम्बार संकेत किया है और "इस जहान से सरसरी गुज़र जाने वालों" को उनकी सुगमप्रियता पर सचेत भी किया है। वास्तविकता यह है कि चाहे व्यक्ति हो चाहे समाज—जीवन में जीवन और उसके सहस्रों पक्ष निहित हैं। "मीर" को तहों वाली वस्तुस्थिति का स्पष्ट बोध है और कला में उनकी अभिव्यक्ति जिस प्रकार हो सकती है उससे भी वे परिचित हैं, जभी तो कहते हैं :—

"मीर" साहब का हर सुख़न है रम्ज़[3] बेहक़ीक़त[4] है शेर, क्या जाने ?

—

सरसरी तुम जहान से गुज़रे वरना हर जा[5] 'जहाने-दीगर'[6] था

—

१. कथात्मक प्रबन्ध काव्य। २. पञ्चपदी कविता। ३. मर्म, रहस्य। ४. तुच्छ, तथ्यहीन। ५. स्थान। ६. दूसरी ही दुनिया।

ہیں وہاں شاعروں کی آواز چیخ بن کر اس صورت حال کی طرف متوجہ کر رہی ہے

موضوع اور معروض کے باہمی ربط کے فنی مطالعہ کے لیے اس زمانے کی شاعری بڑے گہرے مسائل پیش کرتی ہے اسی وجہ سے میر کے متعلق اکثر یہ بات کہی گئی ہے کہ ان کی شاعری انفرادی دکھ درد کا اظہار ہونے کے ساتھ ساتھ اپنے عہد کے آشوب و ابتلا کی عکاس بھی ہے، ان کی آواز میں وقت کی آواز بھی سنائی دیتی ہے لیکن غزل کی لطیف اور نازک شاعری میں داخلی اور خارجی محرکات کا یہ ربط ہر نگاہ کو نظر نہیں آسکتا ان میں کوئی ایسا میکانکی تعلق یا ریاضیاتی تناسب نہیں ہے جسے آسانی سے سمجھ لیا جائے۔ شاعری میں جذبہ، خیال اور تجربہ کے اظہار کا عمل بے حد پیچیدہ ہے اور فن کی قیود کے ساتھ مل کر اور پیچیدگی اختیار کر لیتا ہے۔ میر کی شاعری کے تجزیہ میں ایک تو یہ دشواری ہے کہ ان کی شخصیت پیچ در پیچ اور تہہ در تہہ ہے دوسرے یہ کہ ان کا زمانہ اپنی معاشی پستی اور معاشرتی انحطاط کی وجہ سے ہر تہذیبی قدر کو کھوکھلا بنا رہا تھا۔ اس صورت میں اس فنی ربط کی جستجو اور مشکل ہے جس کا ذکر ہوا۔ خود میر نے اس کی طرف برابر اشارے کیے ہیں اور اس جہان سے سرسری گزر جانے والوں کو ان کی سہل پسندی پر متنبہ کیا ہے۔ حقیقت یہ ہے کہ فرد ہو یا سماج، زندگی کے اندر زندگی اور اس کے ہزارہا پہلو پوشیدہ ہیں۔ میر کو اس تہہ در تہہ صورت حال کا احساس ہے اور فن میں اسے جس طرح ظاہر کیا جاسکتا ہے اس سے بھی واقف ہیں، جبھی تو کہتے ہیں ؎

میر صاحب کا ہر سخن ہے رمز بے حقیقت ہے شیخ کیا جانے

سرسری تم جہان سے گزرے ورنہ ہر جا جہانِ دیگر تھا

दहर[1] का हो गिला[2] कि शिकव-ए-बख़्त[3] उस सितमगार[4] ही से कनाया[5] है

ज़ुल्फ़-सा पेचदार है हर शेर है सुख़न "मीर' का अजब ढब का

किया था शेर को पर्दा सुख़न[6] का सो ठहरा है यही अब फ़न[7] हमारा

यदि ध्यान से देखा जाए तो "मीर" के यहां भी हर बड़े कलाकार की तरह हर प्रत्यक्ष का एक परोक्ष और हर आंतरिक का एक वाह्य पक्ष है। और, उनमें कोई ऐसा रहस्यमय सम्बन्ध है जिसे पहचान लेना आसान नहीं।

कला और जीवन के इसी गहरे बोध का फल है कि ऐसी अस्त-व्यस्त मानसिक अवस्था के उपरान्त भी "मीर" एक व्यक्तित्व और चरित्र के मालिक हैं जिसका प्रतिबिम्ब उनकी भावनाओं और विचारों पर दिखाई देता है। अपने काव्य में वह एक ही समय में बिल्कुल अकेले भी हैं और लोगों की भीड़ में सम्मिलित भी। मृत्यु से आलिंगनबद्ध भी हैं और जीवन के प्रेमी भी। मनुष्यों के प्रति दुर्भावग्रस्त भी हैं और मानव की महिमा भी स्वीकार करते हैं। जीने की विवशता की शिकायत भी करते हैं और जीवन का अधिकार पाने के इच्छुक भी हैं। अपने नियम-संयम और आचार-व्यवहार पर दृढ़ भी हैं और अवढर ः मस्त-क़लन्दर भी। आवश्यकता-पीड़ित भी हैं और "याचकता गहे" पर भी अभिमानी। मजनूं-मतावलम्बी भी हैं और शिष्ट-सन्तुलित व्यक्ति भी।—ऐसा व्यक्तित्व जब ग़ज़ल की लक्षणाओं, व्यञ्जनाओं और बिम्बों में बात करेगा तो निश्चय ही उसका "हर सुख़न रम्ज़" और "हर शेर ज़ुल्फ़ की तरह पेचदार" होगा।

इन तथ्यों के प्रकाश में "मीर" के काव्य के उन तत्वों पर विचार करना जिन्हें हम उस युग की उद्बुद्धि के स्तर के अनुकूल पाएं, अत्यन्त सूक्ष्म पर्यवेक्षण के बिना संभव न होगा। उन्होंनें अपने पिता और उनके अनुगामियों की संगति से क्या प्राप्त किया यह एक विवादग्रस्त विषय बन सकता है क्योंकि उन्होंने आत्मकथा में सूफ़ियों के विचार, उनकी चर्चाओं और उनके नित्य के कर्मों के विषय में जिस विस्तार से लिखा है वह सब पूर्णतः उस "मीर" के विचार नहीं हो सकते जो ग्यारह बारह वर्ष की उम्र में ही उस दुनिया से सम्बन्ध-विच्छेद करने पर विवश हो गया। न केवल यह कि उनके मुंहबोले चचा और सूफ़ी-पिता दुनिया से उठ गए बल्कि

१. संसार २. उलाहना, आक्षेप। ३. भाग्य का रोना। ४. दुश्मन (प्रेमिका)। ५. व्यंग्यार्थ। ६. मूल्य कथ्य। ७. कला (पेशा)।

دہر کا ہو گلہ کہ شکوۂ چرخ — اس ستم گر ہی سے کنایت ہے

زلف سا پیچ دار ہے ہر شعر — ہے سخن میرؔ کا عجب ڈھب کا

کیا تھا شعر کو پردہ سخن کا — سو اب ٹھہرا ہے وہ ہی فن ہمارا

اگر غور سے دیکھا جائے تو ہر بڑے فن کار کی طرح میرؔ کے یہاں بھی ہر ظاہر کا ایک باطن اور ہر باطن کا ایک ظاہر ہے اور ان کے درمیان کوئی ایسا پر اسرار رشتہ ہے جسے پہچان لینا آسان نہیں ہے

فن اور زندگی کے اسی گہرے شعور کا نتیجہ ہے کہ میرؔ اتنی پریشان خاطری کے کے باوجود ایک شخصیت اور کردار کے مالک ہیں جس کا عکس ان کے جذبات اور خیالات پر نظر آتا ہے۔ اپنی شاعری میں وہ بہ یک وقت تنہا بھی ہیں لوگوں میں شامل بھی، موت سے ہم کنار بھی ہیں زندگی کے شیدائی بھی، انسان سے بدگمان بھی ہیں اس کی عظمت کے قائل بھی، مجبوریٔ حیات کے شاکی بھی ہیں اختیار کے طلب گار بھی پاس وضع کے گرویدہ بھی ہیں، سرمست قلندر بھی، حاجت مند بھی ہیں، گدائے متکبر بھی، مجنوں شعار بھی ہیں، مردِ معقول بھی —— ایسی شخصیت جب غزل کے رمز و ایما میں گفتگو کرے گی تو یقیناً اس کا ہر سخن رمز اور اس کا ہر شعر زلف کی طرح پیچ دار ہو گا

ان حقائق کی روشنی میں میرؔ کی شاعری کے ان عناصر پر غور کرنا جنھیں ہم اس عہد کے فکری مزاج سے ہم آہنگ پائیں، اچھے خاصے نازک تجزیہ کے بغیر ممکن نہ ہو گا۔ انھوں نے اپنے باپ اور ان کے معتقدوں کی صحبت سے کیا حاصل کیا یہ ایک بحث طلب موضوع بن سکتا ہے کیوں کہ میرؔ نے اپنی خود نوشت میں صوفیانہ اذکار و اشغال کے متعلق جس شرح و بسط سے لکھا ہے وہ مکمل طور پر اس میرؔ کے خیالات نہیں ہو سکتے جو گیارہ بارہ سال کی عمر میں اس دنیا سے رشتہ توڑنے پر مجبور ہو گیا۔ نہ صرف یہ کہ منھ بولے چچا اور صوفی باپ اس

वह आस्ताना[1] ही उजड़ गया जहाँ से उन्हें सूफ़ी विचारधारा की सम्पत्ति प्राप्त हुई थी। यह बात भी विचारणीय है कि इसके बाद "मीर" ने अपने जीवन की घटनाओं में फिर कहीं सूफ़ियों और फ़क़ीरों की चर्चा नहीं की। ("फ़ैज़े-मीर" का सन्दर्भ दूसरा है।) प्रारम्भिक जीवन के यह प्रभाव जब पचास-साठ वर्ष की अवस्था में संकलित किये गए तो उनमें चिन्तन की परिपक्वता का अंश भी सम्मिश्रित हो गया था।

प्रश्न यह उठता है कि "मीर" ने उन बातों का वर्णन इतने विस्तार से किया ही क्यों है ? कहीं ऐसा तो नहीं कि उन्हें यह परम्परा प्रिय थी जो तेरहवीं-चौदहवीं सदी ईस्वी से प्रारम्भ होकर सत्रहवीं-अट्ठारहवीं सदी तक भक्ति और तसव्वुफ़ के विभिन्न मतों के रूप में सभी भारतवासियों को एक ही लड़ी में पिरोना चाहती थी ? कहीं वह मन्दिर-मस्जिद की पृथकता से उत्पन्न होने वाले फूट और वैमनस्य के संकट का अनुभव तो नहीं कर रहे थे जो चाहे परोक्ष (अन्तर) को प्रभावित न कर सके किन्तु प्रत्यक्ष को तो विदीर्ण ही कर डालता है। जिसका विचार करके उन्होंने कहा था :

हम न कहते थे कि मत दैर-ो-हरम[2] की राह चल—अब ये झगड़ा हश्र[3] तक शेख़-ो-बरहमन में रहा

यहाँ "मीर" के सूफ़ी-काव्य के विभिन्न पक्षों का विवेचन प्रयोजनीय नहीं बल्कि इसके केवल उस तत्त्व को देखना है जो राष्ट्रीय जीवन के विघटन-काल में भी एक आशावादी स्वप्न बनकर विभिन्न धर्मों और मान्यताओं को समान स्तर पर देखना चाहता था। विगत कुछ शताब्दियों ने भारत के कोने-कोने में एक-दो नहीं, हज़ारों लाखों—कबीर, नानक, दादू दयाल और रैदास (भक्त रविदास) पैदा कर दिये थे। भारतवर्ष विभिन्न धर्मों का बृहत् कुटुम्ब था; जिसमें सबके आचार व्यवहार विभिन्न थे लेकिन यह लोग धर्मों के मूल तथ्यों को ऐक्य; और आचार आदि की विभिन्नताओं से प्रकट रूप को अनैक्य मानते थे। उन्हें मनुष्य-मनुष्य में केवल धर्मों के वैभिन्य के कारण भेद नहीं दिखाई देता था। बल्कि वह इस अनैक्य में ऐक्य के और ऊपरी रंगों के वैविध्य में आंतरिक एकरूपता : एकात्म्य के सन्देश देने वाले थे। "मीर" को इस रूप में इस स्तर का सूफ़ी अथवा सन्देशवाहक नहीं निश्चित किया जा सकता लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि उनके अन्तर में भी कोई ऐसी ही ज्वाला प्रदग्ध थी। वह भी एकता एवं सहयोग के उस अत्यन्त गतिशील आन्दोलन की एक लहर थे जो सम्पूर्ण देश में फैला हुआ था। जब हम "मीर" से :

१. सूफ़ी सन्तों के स्थान को भक्तजन श्रद्धावश "आस्ताना" कहते हैं। आशय आश्रम का है।
२. मन्दिर-मस्जिद। ३. प्रलयकाल।

دنیا سے اٹھ گئے بلکہ وہ آستانہ ہی اجڑ گیا جہاں سے انھیں صوفیانہ تصورات کی دولت ملی تھی۔ یہ بات بھی غور طلب ہے کہ اس کے بعد میرؔ نے اپنے حالات میں پھر صوفیوں اور فقیروں کا ذکر ہی نہیں کیا (فیض میرؔ کی حیثیت دوسری ہے)۔ ابتدائی زندگی کے یہ تاثرات جب پچاس ساٹھ سال کی عمر میں یک جا کیے گئے تو ان میں فکر کی پختگی بھی شامل ہو گئی تھی۔ سوال یہ ہے کہ میرؔ نے ان باتوں کا ذکر اتنی وضاحت سے کیا ہی کیوں ہے؟ کہیں ایسا تو نہیں ہے کہ انھیں وہ روایت عزیز تھی جو تیرھویں چودھویں صدی سے شروع ہو کر سترھویں اٹھارھویں صدی تک بھگتی اور تصوف کے مختلف دبستانوں کی شکل میں ہندوستان کے تمام بسنے والوں کو جذبات کی ایک ہی لڑی میں منسلک کرنا چاہتی تھی؟ کہیں وہ دیر و حرم کی علاحدگی سے پیدا ہونے والے تفرقہ کے خطرات کو تو محسوس نہیں کر رہے تھے، جو چاہے باطن کو متاثر نہ کر سکے لیکن ظاہر کو پاش پاش کر دیتا ہے؟ جس کا خیال کر کے انھوں نے کہا تھا ؎

ہم نہ کہتے تھے کہ مت دیر و حرم کی راہ چل   اب یہ جھگڑا حشر تک شیخ و برہمن میں رہا

یہاں میرؔ کی صوفیانہ شاعری کے مختلف پہلوؤں سے بحث مقصود نہیں ہے بلکہ اس کے صرف اس عنصر کو دیکھنا ہے جو قومی زندگی کے زوال میں بھی ایک پُر امید خواب بن کر مختلف مذاہب اور عقائد کو ایک سطح پر دیکھنا چاہتا تھا۔ گزشتہ چند صدیوں نے ہندوستان کے گوشے گوشے میں، ایک دو نہیں، ہزاروں لاکھوں کبیرؔ، نانکؔ، دادو دیال اور ریداس پیدا کر دیے تھے ہندوستان متعدد مذاہب کا گہوارہ تھا جن کے طور طریقے مختلف تھے لیکن یہ لوگ مذاہب کی بنیادی حقیقتوں کو وحدت اور اس کے ظاہری روپ کو کثرت مانتے تھے۔ انھیں انسانوں انسانوں میں، صرف الگ الگ مذاہب رکھنے کی بنا پر فرق نہیں معلوم ہوتا تھا بلکہ وہ اس کثرت میں وحدت کے اور اوپری رنگا رنگی میں اندرونی یک رنگی کے پیامبر تھے۔ میرؔ کو اس حیثیت سے اس مرتبہ کا صوفی یا پیامبر نہیں کہا جا سکتا لیکن ایسا معلوم ہوتا ہے کہ ان کے اندر بھی کوئی ایسی ہی آگ سلگ رہی تھی، وہ بھی اتحاد و اتفاق کی اس تند رَو جد و جہد کی ایک لہر تھے جو سارے ملک میں پھیلی ہوئی تھی۔ جب ہم میرؔ سے

قشقہ کھینچا، دیر میں بیٹھا، کب کا ترک اسلام کیا

"क़श्क़ा[1] खींचा दैर में बैठा कब का तर्क[2] इस्लाम किया"

सुनते हैं तो वे हमें उसी परम्परा की एक कड़ी प्रतीत होने लगते हैं जो भारतवर्ष में वस्तुत: राष्ट्रीय-एकता और भावात्मक-एकात्म्य स्थापित करने की आकांक्षी थी और जिसका पोषण इतिहास शताब्दियों से कर रहा था। "मीर" ने यह भाव बार-बार और तरह-तरह से प्रस्तुत किया है :—

राह सबको है ख़ुदा से जान अगर पहुँचा है तू   हों तरीक़े मुख़्तलिफ़[3] कितने ही मंज़िल एक है

गोश[4] को होश के टुक खोल के सुन शोरे-जहाँ[5]   सबकी आवाज़ के पर्दे में सुख़नसाज़[6] है एक
चाहे जिस शक्ल से तमसाल-सिफ़त[7] इसमें दर-आ[8]   आलम आईने के मानिन्द दरे-बाज़[9] है एक✠

उसके फ़रोग़े-हुस्न[10] से झमके हैं सब में नूर   शम्-ए-हरम हो या कि दिया सोमनात का

इस आवाज़ से उन तमाम भारतीय मनीषियों, सूफ़ियों, भक्तों एवं समस्त "वसुधैव कुटुम्बकम्" के आदर्श वाले कवियों का स्वर मिला हुआ है जिनके विचारों से भारतीय संस्कृति के उस पक्ष का प्रतिनिधित्व होता है जिसे "राष्ट्रीय-एकता" और "भावात्मक-एकात्म्य" निश्चित किया जा सकता है। "मीर" की प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा और भौतिक आवश्यकताओं के सन्दर्भ में बहुत से हिन्दू अमीरों, राजाओं और प्रशंसकों से गहरे सम्बन्धों ने उन्हें जीवन के इस पक्ष पर भी विचार करने का अवसर दिया था और चूँकि यह उनकी प्रेम-भावना से टकराने वाली वस्तु नहीं थी इसलिए उनकी ग़ज़लों में इस विचार और इस भाव-भूमि को भी उपयुक्त स्थान मिल गया। यह बात परम्परागत सूफ़ी विचार-धारा से प्रभावित होने की नहीं अपितु अपने चतुर्दिक के वास्तविक-जीवन से चेतना-ग्रहण करने का फल है। इसीलिए उनके वह शेर जिनमें इस भाव की अभिव्यक्ति है उतना ही गहरा, मार्मिक प्रभाव डालते हैं जैसा और जितना प्रभाव उनकी प्रेम-भाव प्रधान कविताओं से पड़ता है। कुछ शेरों से इसका स्पष्टीकरण हो जाएगा :

1. माथे का तिलक। 2. त्याग। 3. विभिन्न। 4. कान [होश के गोश खोलकर सुन = ध्यान से, सजग होकर सुन] 5. लोक-विलाप। 6. वाणी, स्वर, ध्वनि का स्रष्टा। 7. प्रतिबिम्ब-सम। 8. पैठ-आ, घुस-आ। 9. बन्द द्वार ✠ यह लोक दर्पण के समान है, दर्पण—जो एक बन्द द्वार है, जिसमें प्रवेश का प्रश्न ही नहीं, किन्तु; जैसे; प्रतिबिम्ब बनकर चाहे जो भी, जैसा भी—आइने के अन्दर पैठ जाता है और आइने का अन्दर उसी के जैसा हो जाता है ठीक इसी प्रकार विश्व में भी पैठ। तू जैसा होगा वैसा ही विश्व तुझे दिखेगा। 10. सौंदर्य की वृद्धि।

سنتے ہیں تو وہ ہمیں اسی روایت کی ایک کڑی معلوم ہونے لگتے ہیں جو ہندوستان میں جذباتی یک رنگی پیدا کرنے کی متمنی تھی اور تاریخ جس کی آبیاری صدیوں سے کر رہی تھی۔ میرؔ نے اس کیفیت کو بار بار اور طرح طرح سے پیش کیا ہے ؎

راہ سب کو ہے خدا سے جان اگر پہونچا ہے تو ہوں طریقے مختلف کتنے ہی منزل ایک ہے

گوش کو ہوش کے ٹک کھول کے سن شورِ جہاں سب کی آواز کے پردے میں سخن ساز ہے ایک
چاہے جس شکل سے تمثال صفت اس میں در آ عالم آئینے کے مانند در باز ہے ایک

اس کے فروغِ حسن سے جھمکے ہے سب میں نور شمعِ حرم ہو یا کہ دیا سومنات کا

اس آواز میں ان تمام ہندوستانی مفکروں، صوفیوں، بھگتوں اور وسیع المشرب شاعروں کی آوازیں شامل ہیں جن کے خیالات و افکار سے ہندوستانی تہذیب کے اس پہلو کی ترجمانی ہوتی ہے جسے قومی اتحاد اور جذباتی ہم آہنگی سے تعبیر کیا جا سکتا ہے۔ میرؔ کی ابتدائی تعلیم و تربیت اور غمِ روزگار کے سلسلے میں بہت سے ہندو امیروں، راجاؤں اور قدر دانوں سے گہرے تعلقات نے انھیں زندگی کے اس پہلو پر بھی غور کرنے کا موقع دیا تھا اور چوں کہ یہ ان کے جذباتِ عشق سے متصادم نہ تھا، اس لیے ان کی غزلوں میں اس خیال کو بھی خاطر خواہ جگہ مل گئی ہے۔ یہ بات رسمی صوفیانہ خیالات سے متاثر ہونے کے برعکس گرد و پیش کی زندگی سے شعور حاصل کرنے کا نتیجہ ہے۔ اسی لیے ان کے وہ اشعار جن میں اس جذبہ کا اظہار ہے اتنا ہی گہرا داخلی تاثر رکھتے ہیں جتنا جذباتِ عشق چند اشعار سے اس کی وضاحت ہو جائے گی ؎

ہوں سیہ مستِ سرِ زلفِ صنم معذور رکھ شیخ اگر کعبے میں آکر گفتگو برہم کروں

مقصود دردِ دل ہے، نہ اسلام ہے نہ کفر پھر ہو گلے میں سبحہ تو زنار کیوں نہ ہو

हूं सियह-मस्ते-सरे-ज़ुल्फ़े-सनम,[१] माज़ूर[२] रख
शेख़, अगर काबे में आकर गुफ़्तगू बरहम[३] करे

मक़सूद[४] दर्दे-दिल है न इस्लाम है न कुफ़्र[५]
फिर हो गले में सब्हा[६] तो ज़ुन्नार[७] क्यों न हो ?

गह[८] दैर में हैं गहे हरम में   अपना तो यही दीवाना पन है

मत रंज कर किसी को कि अपने तो एतक़ाद[९]
दिल ढाय कर जो काबा बनाया तो क्या हुआ ?

हम न कहते थे कहीं ज़ुल्फ़ कहीं रुख़[१०] न दिखा
इक ख़िलाफ़ आया न हिन्दू व मुसलमान के बीच

जब चेतन रूप से इस बात की अनुभूति हो जाती है कि धर्मों का ऊपरी अन्तर उन्नति ही में नहीं अध्यात्म और मानवीयता का बोध प्राप्त करने में भी बाधक होता है तो मानव शुद्ध मानव रूप में सम्मुख आता है। "मीर" के यहां ऐसे असंख्य शेर मिलते हैं जो इसी अनुभूति द्वारा प्रेरित हैं और जिनपर विचार करते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपनी महत्ता के पर्दे में मानव-मात्र की महिमा की कल्पना प्रस्तुत कर रहे हैं:—

हम आप[११] ही को अपना मक़सूद[१२] जानते हैं   अपने सिवाय किसको मौजूद[१३] जानते हैं ⊡
इज्ज़ो-नयाज़[१४] अपना अपनी तरफ़ है सारा   इस मुश्ते-ख़ाक[१५] को हम मस्जूद[१६] जानते हैं
अपनी ही सैर करने हम जल्वागर[१७] हुए हैं   इस रम्ज़ को वलेकिन मादूद[१८] जानते हैं

ख़ाके-आदम[१९] ही है तमाम ज़मीं   पांव को हम संभाल रखते हैं

---

१. काली केश-राशि के जादू से विमोहित (विमुग्ध)। २. विवश समझ। ३. विशृङ्खलता। ४. प्रयोजनीय। ५. नास्तिकता। ६. तस्बीह, जाप वाली माला। ७. जनेऊ। ८. कभी। ९. विश्वास। १०. मुख। ११. आत्म। १२. वाञ्छित। १३. अस्तित्ववान ⊡ "एकोऽहंद्वितीयोनास्ति"। १४. विनम्रता एवं श्रद्धाएं। १५. मुट्ठी भर मिट्टी (मानवीय काया)। १६. जिसके सम्मुख सर टेका जाए। धर्म-ग्रन्थों में उल्लेख है कि स्रष्टा ने सर्वप्रथम मानवीय अस्तित्व को मिट्टी का पुतला बनाया जिसे फ़रिश्तों ने सिज्दा किया। १७. (मानवीय-काया में) मूर्त-अस्तित्व धारण किया है। १८. गिने-चुने लोग। १९. मानव की मिट्टी।

گہ دیر میں ہیں، گہے حرم میں   اپنا تو یہی دوانہ پن ہے

مت رنجہ کر کسی کو کہ اپنے تو اعتقاد   دل ڈھائے کر جو کعبہ بنایا تو کیا ہوا

ہم نہ کہتے تھے کہیں زلف، کہیں رخ نہ دکھا   اک خلاف آیا نہ ہندو و مسلمان کے بیچ

جب شعوری طور پر اس بات کا احساس ہو جاتا ہے کہ مذاہب کا ظاہری فرق ترقی ہی میں نہیں، روحانیت اور انسانیت کا شعور حاصل کرنے میں بھی سدِّراہ ہوتا ہے تو انسان بہ حیثیت انسان کے سامنے آتا ہے۔ میر کے یہاں ایسے متعدد اشعار ملتے ہیں جو اسی احساس کا نتیجہ ہیں اور جن پر غور کرتے ہوئے ایسا معلوم ہوتا ہے کہ وہ اپنی عظمت کے پردے میں انسان کی عظمت کا تصور پیش کر رہے ہیں ؎

ہم آپ ہی کو اپنا مقصود جانتے ہیں   اپنے سوائے کس کو موجود جانتے ہیں
عجز و نیاز اپنا اپنی طرف ہے سارا   اس مشتِ خاک کو ہم مسجود جانتے ہیں
اپنی ہی سیر کرنے ہم جلوہ گر ہوئے ہیں   اس رمز کو و لیکن محدُد جانتے ہیں

خاکِ آدم ہی ہے تمام زمیں   پاؤں کو ہم سنبھال رکھتے ہیں

سراپا آرزو ہونے نے بندہ کر دیا ہم کو   وگرنہ ہم خدا تھے گر دلِ بے مدعا ہوتے
الٰہی کیسے ہوتے ہیں جنھیں ہے بندگی خواہش   ہمیں تو شرم دامن گیر ہوتی ہے خدا ہوتے

کہاں ہیں آدمی عالم میں پیدا   خدائی صدقے کی انسان پر سے

مت سہل ہمیں جانو، پھرتا ہے فلک برسوں   تب خاک کے پردے سے انسان نکلتے ہیں
جیسا کہ کہا گیا میر کی شاعری کا اصل محور عشق ہے جس کو وہ خلاصۂ کائنات

सरापा[1] आरज़ू[2] होने ने बन्दा[3] कर दिया हमको
वगर न हम ख़ुदा थे गर दिले-बेमुद्दआ[4] होता

इलाही ![5] कैसे होते हैं जिन्हें है बन्दगी[6] ख़्वाहिश[7]
हमें तो शर्म दामनगीर[8] होती है ख़ुदा होते

कहाँ हैं आदमी आलम[9] में पैदा ख़ुदाई सदक़े[10] को इन्सान पर से

मत सहल[11] हमें जानो, फिरता है फ़लक[12] बरसों
तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलते हैं

जैसा कि कहा गया "मीर" का समस्त काव्य-चक्र प्रेम-अक्ष पर घूमता है जिसे वह संसृति का मूल और जीवन का सार-तत्व समझते हैं। प्रेम में उनका आत्म-विस्मरण भौतिक और आध्यात्मिक की सीमाओं को मिला देता है और प्रेम का क्षेत्र विस्तृत होकर समस्त विश्व को अपने में ही समेट लेने का प्रयत्न करता दिखाई देता है। जब ऐसा होता है तो "मीर" उस रूप में प्रकट होते हैं कि हम केवल भावनात्मक रूप से नहीं बल्कि अपने चिन्तन-पक्ष से भी उनके साथ हो जाने पर विवश होते हैं। व्यक्ति अपने युग के सांस्कृतिक मूल्यों से अपना सम्बन्ध उसी समय व्यक्त करता है जब उसकी चेतना ने अपने युग की चेतना को भी आत्मसात् कर लिया हो। "मीर" को केवल आत्मनिष्ठ और आत्म-श्लाघाप्रिय समझना इसलिए सही नहीं कि उन्होंने जीवित रहने के संघर्ष में जीवन का बड़ा भाग विभिन्न प्रकार के लोगों के मध्य बिताया और "ज़िक्रे-मीर" इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि वे मास और वर्ष अचेतन अवस्था में नहीं बीते। उनकी आँखें खुली हुई थीं और वे उन सभी परिवर्तनों को देख और समझ रहे थे जो उनके सम्मुख हुए। उनके मन पर यदि असंख्य घाव थे तो उसमें अपने प्रेम की व्यक्ति-गत असफलता के साथ-साथ दूसरों की पीड़ाओं और दुखों के घाव भी थे। वरन वे यूं न कहते :

१. आपाद- मस्तक। २. कामना। ३. दास। ४. कामनाहीन (निष्काम) मन। ५. हे ईश्वर मेरे ! ६. ग़ुलामी कराने। ७. इच्छा। ८. रोकती। ९. दुनिया। १०. न्योछावर। ११. सरल, सुप्राप्य, सुलभ। १२. कल्पना थी कि नव-ग्रह नव आकाश हैं; उनकी गति से ही धराधाम पर समस्त घटनाएं होती हैं इसीलिये "फ़लक"—आकाश, काल एवं प्रारब्ध का प्रतीक है।

اور حاصلِ حیات سمجھتے ہیں۔ محبت میں ان کی از خود رفتگی مجاز اور حقیقت کی حدوں کو ملا دیتی ہے اور محبت کا دائرہ وسیع ہو کر کائنات کو اپنے اندر سمیٹ لینے کی کوشش کرتا نظر آتا ہے۔ جب ایسا ہوتا ہے تو میر اس حیثیت سے جلوہ گر ہوتے ہیں کہ ہم محض جذباتی طور سے نہیں فکری حیثیت سے ان کے خیالات میں شریک ہونے پر مجبور ہو جاتے ہیں۔ فرد اپنے دور کی تہذیبی قدروں سے اپنی وابستگی اسی وقت ظاہر کر سکتا ہے جب اس کے شعور میں اپنے عہد کا شعور بھی مدغم ہو گیا ہو۔ میر کو محض دروں بیں اور خود پسند سمجھنا اس لیے صحیح نہیں کہ انھوں نے زندہ رہنے کی جد و جہد میں عمر کا بڑا حصہ مختلف قسم کے انسانوں کے درمیان گزارا اور ذکر میر اس بات کا کھلا ہوا ثبوت ہے کہ یہ ماہ و سال بے خبری میں نہیں گزرے۔ ان کی آنکھیں کھلی ہوئی تھیں اور وہ ان تغیرات کو دیکھ اور سمجھ رہے تھے جو ان کے سامنے رونما ہوئے۔ ان کا دل اگر داغ داغ تھا تو اس میں اپنی محبت کی انفرادی ناکامی کے ساتھ ساتھ دوسروں کے رنج و الم کا احساس بھی شامل ہے ورنہ وہ یوں نہ کہتے ؎

چمن کی وضع نے ہم کو کیا داغ کہ ہر غنچہ دلِ پُر آرزو تھا

ان کا غم، ان کی مردم بے زاری، ان کی بے دماغی سب کا اصل سبب یہ ہے کہ اس عہد میں انسان کو جیسا ہونا چاہیے تھا ویسا نہیں تھا۔ ان کی "معنی آشنا" نگاہ "صورت پرستی" کا طلسم توڑ کر انسان کو انسان دیکھنا چاہتی تھی اور جب اس میں مایوسی ہوتی تھی تو وہ بڑی مایوسی کے ساتھ کہتے تھے ؎

اس بت کدے میں معنی کا کس سے کریں سوال آدم نہیں ہے صورتِ آدم بہت ہے یاں

یہ خود اپنی جگہ بحث کا موضوع ہے کہ میر کے عہد کا انسان کیا تھا لیکن انھیں جس کی تلاش تھی وہ نظر نہیں آتا تھا۔ یہ کوئی خیالی مخلوق نہ

चमन की वज़अ[1] ने हमको किया दाग़ कि हर गुंचा[2] दिले-पुर-आरज़ू[3] था

उनका गम, उनकी मनुष्यों के प्रति अरुचि, उनकी तनिक-सी बात में उत्तेजित हो उठने वाली अधीरता—सबका असल कारण यह था कि उस युग में मानव को वस्तुतः जैसा होना चाहिए था, वैसा नहीं था। उनकी अर्थभेदी-दृष्टि प्रकट रूप का तिलिस्म तोड़कर मानव को मानव देखना चाहती थी और जब इसमें असफलता होती थी तो वह बड़े निराश स्वर में कहते थे:

इस बुतकदे[4] में मानी[5] का किससे करें सवाल ? आदम[6] नहीं है सूरते-आदम[7] बहुत है यां

यह स्वयं अपने स्थान पर एक सम्पूर्ण विचारणीय विषय है कि "मीर" के युग का मानव क्या था ? लेकिन उन्हें जिसकी खोज थी वह दिखाई नहीं देता था। यह कोई काल्पनिक जीवन नहीं था; बल्कि वह मानव था जो जीवन के मूल्यों से परिचित हो, जिसे प्रेम की दाह ने जला-जला कर भस्म बनाया हो; जो जीवन के अनिवार्य संघर्षों को लड़ाई-झगड़े से नहीं बल्कि प्रेम और शान्ति से सुलझा सकता हो, उन्होंने अपनी मान्यता इस प्रकार प्रकट कर दी थी :

क्या सरे-जंग-ो जदल[8] हो बेदिमाग़े-इश्क को
सुल्ह[9] को है "मीर" ने हफ़्ताद-दो[10] मिल्लत[11] से यां

आज की दुनिया को भी ऐसे ही मानव की आवश्यकता है। स्वयं अपना देश वैचारिक-विसंगति, कट्टरता, संकीर्णता एवं स्वार्थान्धता द्वारा ग्रस्त है। धर्म के नाम पर मानवीय माहात्म्यों की हत्या हो रही है, भौतिक रूप से विकास और सुरक्षा के जो प्रयास हो रहे हैं शारीरिक, मानसिक और भावात्मक हिंसाप्रियता उसे व्यर्थ कर रही है। सम्पूर्ण राष्ट्र एक ऐसे मनोवैज्ञानिक संक्रमण में ग्रस्त है जिनमें अपने लाभ से अधिक दूसरे को हानि पहुँचाने की भावना कार्य कर रही है—अर्थात्, "मीर" को जैसे मन-मस्तिष्क की आवश्यकता थी वह अब तक इक्का-दुक्का ही दिखाई देता है, उनकी खोज अभी समाप्त नहीं हुई। न केवल व्यक्तिगत रूप से बल्कि सामाजिक रूप से भी आत्मसम्मान, तृष्णाओं के प्रति पूर्ण उपेक्षा भाव, शुद्ध विराग और आत्मसम्मानयुक्त संन्यास के साथ-साथ पारस्परिक एकता एवं सहयोग, दूसरों की भावनाओं का सम्मान और प्रेम के आधार पर जीवन की अट्टालिका का निर्माण—यह थीं "मीर" की मान्यताएं और यही आज के मानव

१. रीति। २. कली। ३. कामना-भरा मन। ४. जड़-मूर्तियों के प्रदेश। ५. अर्थ। ६. मानव। ७. मानवीय आकृतियां। ८. लड़ाई-झगड़े की इच्छा। ९. सन्धि। १०. बहत्तर। ११. समुदाय, सम्प्रदाय।

تھی بلکہ وہ انسان تھا جو زندگی کی قدروں سے واقف ہو، جسے محبت نے جلا جلا کر اکسیر بنا دیا ہو اور جو زندگی کے تضادات کو جنگ و جدل سے نہیں صلح و محبت سے حل کر سکتا ہو۔ انھوں نے اپنا عقیدہ تو اس طرح بیان کر دیا تھا ؎

کیا سرِ جنگ و جدل ہو بے دماغِ عشق کو
صلح کی ہے میرؔ نے ہفتاد و ملت سے یاں

آج کی دنیا کو بھی ایسے ہی انسان کی ضرورت ہے۔ خود اپنا ملک پریشاں خیالی، تعصبات اور خود غرضانہ مفادات کا شکار ہے، مذہب کے نام پر انسانی شرف کا خون ہو رہا ہے، مادی حیثیت سے ترقی اور بقا کی جو کوششیں ہو رہی ہیں، جسمانی، ذہنی اور جذباتی تشدد انھیں بے کار بنا رہا ہے۔ پوری قوم ایک ایسی نفسیاتی کش مکش میں مبتلا ہے جس میں اپنے فائدے سے زیادہ دوسرے کو نقصان پہونچانے کا جذبہ کار فرما ہے۔ گویا میرؔ کو جس قلب و ذہن کی جستجو تھی وہ اب تک خال خال ہی نظر آتا ہے۔ جستجو ابھی ختم نہیں ہوئی ہے۔ نہ صرف انفرادی طور پر بلکہ اجتماعی طور پر خود داری، استغنا اور فقر غیور کے ساتھ ساتھ باہمی اتحاد، دوسروں کے جذبات کا احترام اور محبت کی بنیاد پر قصر حیات کی تعمیر —— یہ تھے میرؔ کے تصورات، اور یہی آج کے انسان کو بھی بہت سی انفرادی اور اجتماعی مصیبتوں سے نجات دلا سکتے ہیں۔ انسانی رشتے بہت نازک ہیں ان کا خیال رکھے بغیر سکون نصیب نہیں ہو سکتا ؎

لے سانس بھی آہستہ کہ نازک ہے بہت کام
آفاق کی اس کارگہ شیشہ گری کا

موجودہ عہد کی خود غرض سیاست اور معیشت کو کارگہ شیشہ گری کا کچھ بھی پاس نہیں ہے، بلکہ اسے تو دلوں کے توڑنے میں لطف حاصل

को भी बहुत-सी व्यक्तिगत और सामाजिक विपत्तियों से मुक्ति दिला सकती हैं। मानवीय सम्बन्ध—नाते—बड़े सूक्ष्म तथा सुकोमल हैं। उनका ध्यान रक्खे बिना शान्ति नहीं प्राप्त हो सकती :

ले सांस भी आहिस्ता कि नाज़ुक है बहुत काम आफ़ाक़[1] की इस कार-गहे[2]-शीशागरी का

वर्तमान युग की स्वार्थान्ध राजनीति और सामान्य जीवन व्यवस्था को "कार-गहे-शीशागरी" का कुछ भी विचार नहीं, बल्कि, इसे तो दिलों को तोड़ने में ही आनन्द मिलता है—इसीलिए मानव में भेद है और "मीर" इस भेद-दंशित दशा पर चकित हैं :

जिस चमनज़ार[3] का है तू गुले-तर[4] बुलबुल उस बोस्तां[5] के हम भी हैं
वज्हे-बेगानगी[6] नहीं मालूम तुम जहां के हो वां[7] के हम भी हैं

"मीर" की ग़ज़लगोई का यह पक्ष उनके जाग्रत् मस्तिष्क और भावुक मन का स्पष्ट रूप से प्रतिनिधित्व करता है और हमें न केवल स्वयं उनके काव्य का; बल्कि; उनके युग की सांस्कृतिक समस्याओं का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त करने में सहायता देता है।

१. लोक, भूमण्डल। २. कारख़ाना। ३. उपवन। ४. नवमुकुलित पुष्प। ५. वाटिका। ६. परायेपन का कारण। ७. वहां।

ہوتا ہے، اسی لیے انسان انسان سے جدا ہے اور میرؔ اس افتراق پر حیران ہیں ؎

جس چمن زار کا ہے تو گلِ تر
بلبل اس بوستاں کے ہم بھی ہیں
وجہ بیگانگی نہیں معلوم
تم جہاں کے ہو واں کے ہم بھی ہیں

میرؔ کی غزل گوئی کا یہ پہلو ان کے بیدار ذہن اور پُر گداز دل کی واضح ترجمانی کرتا ہے اور ہمیں نہ صرف ان سے بلکہ ان کے عہد کے تہذیبی مسائل کا شعور حاصل کرنے میں مدد دیتا ہے

मीर" : अतीत से वर्तमान तक

"नज़ीर" सिद्दीक़ी

"मीर" कवियों के कवि और कलाकारों के कलाकार हैं। यह बात—वैसे तो उनकी प्रशंसा लगती है किन्तु वस्तुतः है उनका दुर्भाग्य—मुझे इसलिए कहनी पड़ रही है कि साहित्य एवं काव्य के सामान्य पाठक जितनी उनकी महिमा स्वीकार करते दिखाई देते हैं उतने उनकी रचनाओं से परिचित नहीं होते। यह सौभाग्य "ग़ालिब" के ही हिस्से में आया है कि लोग उनके काव्य के रोब में जितने हैं, उतने ही उनकी शायरी से परिचित भी हैं। "ग़ालिब" के दो-चार शेर हर काव्याभिरुचि रखने वाले व्यक्ति को याद होते हैं किन्तु "मीर" के दो-चार शेर सुनाने में काव्य एवं साहित्य की गहरी रुचि रखने वाले भी कठिनाई में पड़े दिखते हैं। इस परिस्थिति का एक विचित्र पक्ष तो यह है कि "मीर" "ग़ालिब" से अधिक बोधगम्य होने और "अवाम से गुफ़्तगू"[1] करने के बावजूद जन-सामान्य में उतने लोकप्रिय न हो सके जितने "ग़ालिब", जो—किसी महामारी में सामान्य जनता के साथ मरना भी पसन्द नहीं करते थे ! दूसरे यह; कि, काव्य एवं साहित्य से सम्बन्धित प्रत्येक वर्ग (पाठक, कवि, तज़किरा-लेखक[2], साहित्यिक-इतिहासकार, आलोचक) "मीर" की काव्यात्मक महत्ता को उनके युग से लेकर अब तक लगभग निर्विवाद रूप से मानता आया है; जबकि, "ग़ालिब" को अपनी महत्ता अपने आलोचकों के द्वारा मनवानी पड़ी है। यद्यपि, इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि "ग़ालिब" का कवित्व उनके प्रशंसकों और आलोचकों की मात्र काल्पनिक सृष्टि है।

उर्दू-साहित्य के आलोचनात्मक क्षेत्रों में अब इतनी बात पूर्ण मान्यता प्राप्त कर चुकी है कि उर्दू के तीन महाकवि "मीर", "ग़ालिब" और "इक़बाल" हैं। कुछ आलोचक इस क्रम को चार तक ले जाते हैं; किन्तु इन तीन के अतिरिक्त चौथे

१. जन-सामान्य से वार्तालाप। २. फ़ारसी-उर्दू में साहित्यिक इतिहास नहीं : साहित्यिक व्यक्तियों की चर्चाएं लिखी जाती थीं। उन्हें ही "तज़किरा-निगार" (तज़किरा लिखने वाले) कहते हैं।

میر — ماضی سے مستقبل تک

نظیر صدیقی

میر شاعروں کے شاعر اور فن کاروں کے فن کار ہیں۔ یہ بات جو بہ ظاہر ان کی مدح اور فی الحقیقت ان کی ایک محرومی ہے مجھے اس لیے کہنی پڑ رہی ہے کہ شعر و ادب کے عام قارئین میر کی عظمت کے جتنے معترف نظر آتے ہیں وہ ان کی شاعری سے اتنے مانوس نہیں ہوتے۔ یہ سعادت غالب کے حصے میں آئی ہے کہ لوگ ان کے نام سے جس قدر مرعوب ہیں ان کی شاعری سے اتنے ہی مانوس بھی ہیں۔ غالب کے دو چار شعر ہر باذوق آدمی کو یاد ہوتے ہیں لیکن میر کے دو چار شعر سنانے میں شعر و ادب سے گہری دل چسپی رکھنے والے بھی دشواری کے شکار نظر آتے ہیں۔ اس صورت حال کا ایک حیرت انگیز پہلو تو یہ ہے کہ میر غالب سے زیادہ عام فہم ہونے اور عوام سے گفتگو کرنے کے باوجود عوام میں اتنے مقبول نہ ہو سکے جتنا غالب جو کسی دنیا میں عوام کے ساتھ مرنا بھی پسند نہیں کرتے تھے۔ دوسرے یہ کہ شعر و ادب سے تعلق رکھنے والوں کا ہر طبقہ (قاری، شاعر، تذکرہ نگار ادبی مورخ، نقاد) میر کی شاعرانہ عظمت کو ان کے زمانے سے لے کر اب تک مانتا آیا ہے جب کہ غالب کو اپنی شاعرانہ عظمت اپنے مداحوں اور نقادوں کے ذریعے منوانی پڑی ہے گو اس کا یہ مطلب ہرگز نہیں کہ غالب کی شاعرانہ عظمت ان کے مداحوں اور نقادوں کی محض ذہنی تخلیق ہے

اردو ادب کے تنقیدی حلقوں میں اب اتنی بات تسلیم کر لی گئی ہے کہ اردو کے تین عظیم شاعر میر، غالب اور اقبال ہیں۔ بعض نقاد اس فہرست کو چار تک لے جاتے ہیں۔ لیکن ان تین شاعروں کے علاوہ چوتھے نام پر عام اتفاق دیکھنے میں نہیں آتا۔ اس بنا پر یہ کہنا غلط نہ ہوگا کہ اب یہ تین نام مشترکہ فیصلے کی حیثیت رکھتے ہیں اور چوتھا نام ذاتی پسند کی۔ ایک صاحب کو انیس سے زیادہ انس ہے تو دوسرے

नाम पर सामान्यत: सर्वसम्मति देखने में नहीं आती। इस आधार पर यह कहना ग़लत न होगा कि अब ये तीन नाम सर्वसम्मति की हैसियत रखते हैं और चौथा नाम व्यक्तिगत पसन्द की। एक सज्जन को "अनीस" से विशेष अनुराग है, दूसरे सज्जन को "फ़िराक़" का फेर लगा है—दोनों प्रकार के लोग "मीर", "ग़ालिब" और "इक़बाल" के साथ "अनीस" या "फ़िराक़" का नाम लेकर उर्दू के चार बड़े शायरों को मान्यता प्रदान करते रहते हैं। इस समय मुझे चौथे नाम से कोई प्रयोजन नहीं; क्योंकि, यह अपने आपमें एक अलग विषय ही है, कि—"मीर", "ग़ालिब" और "इक़बाल" के बाद, उर्दू का चौथा महाकवि कौन है? यहाँ कहने की बात यह है कि, उर्दू शायरी के सामान्य पाठकों के मन में "गालिब" और "इकबाल" की महत्ता के स्वरूप की कोई न कोई कल्पना होती है—किन्तु, "मीर" की महानता, मात्र एक विश्वास की हैसियत रखती है। यदि मेरा अनुमान ग़लत नहीं; तो, फिर—प्रश्न यह है; कि, सामान्य-मन में "मीर" की महत्ता के अस्पष्ट या सन्देहास्पद होने के कारण क्या हैं?

मेरे विचार से इस परिस्थिति का एक महत्त्वपूर्ण कारण तो यह है; कि, उर्दू शायरी के विद्यार्थियों को "दीवाने-ग़ालिब" (व्याख्या सहित) और "इक़बाल" की रचनाओं के एकाधिक संग्रह (जिनकी दो-दो व्याख्याएं बाज़ार में आ चुकी हैं) जितनी आसानी से मिलते रहे हैं उतनी आसानी से "कुल्लियाते-मीर" कभी नहीं मिली। "दीवाने-ग़ालिब" और "इक़बाल" की रचनाओं के अनेक संस्करण बाज़ार में सदैव सुलभ रहे हैं किन्तु "कुल्लियाते-मीर" पर कभी नज़र पड़ती ही नहीं। "मीर" की शायरी से परिचय का सामान्य-साधन वह एक-आध ग़ज़लें होती हैं–जो, स्कूल, कालेज या यूनिवर्सिटी के पाठ्य-क्रमों में सम्मिलित होती हैं। और; कम से कम स्कूलों और कालेजों के पाठ्य-क्रमों में सामान्यत:, "मीर" के साथ अन्याय यह होता है–कि, उन पर जो आलोचनात्मक टिप्पणी होती है उसमें, उनके महाकवित्व की प्रशस्ति बड़े प्रभावपूर्ण शब्दों में लिखी जाती है–किन्तु, उसके बाद—"मीर" की ग़ज़लों का चयन ऐसा प्रस्तुत किया जाता है; कि, टिप्पणी का समस्त प्रभाव तत्काल नष्ट हो जाता है! "मीर" के काव्य-संग्रह की पृष्ठ-संख्या न केवल उसके विभिन्न संस्करणों के प्रचार एवं प्रसार में बाधक है बल्कि काव्य-प्रेमियों की जेबों के लिए एक कठिन-परीक्षा भी। "मीर" की रचनाओं में असन्तुलन एवं असामञ्जस्य की अतिरञ्जित-सी चर्चा, और उनके यहाँ बहत्तर नश्तरों की कल्पना

کو فراقؔ کا مراق ہے ۔ دونوں میرؔ، غالبؔ اور اقبالؔ کے ساتھ انیسؔ یا فراقؔ کا نام لے کر اردو کے چار بڑے شاعروں کا اعلان واعتراف کرتے رہتے ہیں ۔ اس وقت مجھے چوتھے نام سے کوئی بحث نہیں کیونکہ یہ بجائے خود ایک الگ بحث ہے کہ میرؔ، غالبؔ اور اقبالؔ کے بعد اردو کا چوتھا عظیم شاعر کون ہے ۔ یہاں کہنے کی بات یہ ہے کہ اردو شاعری کے عام قارئین کے ذہن میں غالبؔ اور اقبالؔ کی عظمت کا کوئی نہ کوئی تصور ہوتا ہے، لیکن میرؔ کی عظمت محض ایک عقیدے کی حیثیت رکھتی ہے ۔ اگر میرا اندازہ غلط نہیں تو سوال یہ ہے کہ عام ذہنوں میں میرؔ کی عظمت کے مبہم یا مشکوک ہونے کے اسباب کیا ہیں

میرے خیال میں اس صورت حال کی ایک اہم وجہ تو یہ ہے کہ اردو شاعری کے طالب علموں کو جتنی آسانی کے ساتھ دیوان غالبؔ (مع شرح دیوان غالبؔ) اور کلام اقبالؔ کے متعدد مجموعے (جن کی دو دو شرحیں بازار میں آچکی ہیں) ملتے رہے ہیں اتنی آسانی کے ساتھ کلیات میرؔ کبھی نہیں ملی۔ دیوان غالبؔ اور تصانیف اقبالؔ کے متعدد اڈیشن بازار میں ہمیشہ دستیاب رہے ہیں ۔ لیکن کلیات میرؔ پر کبھی نظر پڑتی ہی نہیں ۔ میرؔ کی شاعری سے تعارف کا عام ذریعہ وہ چند غزلیں ہوتی ہیں جو اسکول یا کالج یا یونیورسٹی کے اردو نصاب میں شامل ہوتی ہیں ۔ سو کم از کم اسکول اور کالج کے نصابوں میں عموماً میرؔ کے ساتھ زیادتی یہ ہوتی ہے کہ ان پر جو تنقیدی نوٹ ہوتا ہے اس میں ان کی شاعرانہ عظمت کا قصیدہ بڑے زور دار لفظوں میں لکھا جاتا ہے لیکن اس کے بعد میرؔ کی غزلوں کا انتخاب ایسا ہوتا ہے کہ تنقیدی نوٹ کا سارا اثر فوراً زائل ہو جاتا ہے ۔ میرؔ کے مجموعۂ کلام کی ضخامت نہ صرف اس کے مختلف النوع اڈیشنوں کی طباعت میں رکاوٹ رہی ہے بلکہ خریداروں کے لیے جیب کی آزمائش بھی ۔ میرؔ کے کلام کی ناہمواری کا حد سے بڑھا ہوا چرچا اور ان کے یہاں بہتر نشتروں کا تصور بھی ان کے عام مطالعے میں مزاحم[1] رہا ہے ۔ بہتر نشتروں کا تصور ذہن میں شعوری یا نیم شعوری طور

---

[1] ابھی ان سطروں کی سیاہی خشک بھی نہ ہونے پائی تھی کہ شاہکار (الہ آباد) کا فراقؔ نمبر ملا ۔ ورق گردانی کے دوران میں خلیل اعظمی کے مضمون میں یہ جملہ پڑھ کر کہ " بہتر نشتروں والا نسخہ بھی صدہا سال تک ہمیں میرؔ کے قریب پہنچنے سے روکتا رہا ہے " میں نے محسوس کیا کہ اپنی اس رائے میں میں تنہا نہیں ہوں

نظیر صدیقی

भी—उनके सामान्य अध्ययन में विशेष रूप से अवरोधक§§ रहे हैं। बहत्तर नश्तरो की कल्पना मन में चेतन एवं अर्द्धचेतन रूप से यह विचार उत्पन्न कर देती है कि "मीर" की शेष कृतियों का अध्ययन व्यर्थ है। एक ओर तो लोगों को यह तथाकथित बहत्तर नश्तर पुस्तकाकार मिलते नही, दूसरी ओर इन्हीं के कारण "मीर" के दीवानों का अध्ययन भी खटाई में पड़ जाता है। बहरहाल, यह देखकर संतोष होता है कि यद्यपि अभी तक "कुल्लियाते-मीर" हर उर्दू बुक-स्टाल की शोभा नहीं बनी किन्तु "मीर" का काव्य अधिक से अधिक आलोचनात्मक ध्यान का केन्द्र बनता जा रहा है।

उर्दू साहित्य के विगत बीस वर्ष उर्दू काव्य में "मीर" की बढ़ती हुई लोकप्रियता के वर्ष रहे हैं। इस बात की पुनरावृत्ति आवश्यक है कि "मीर" की वर्तमान लोकप्रियता भी बड़ी हद तक कवियों और आलोचकों तक ही सीमित रही है। विगत बीस वर्षों में भारत और पाकिस्तान दोनों देशों में "मीर" की शैली अपनाने वाले एकाधिक कवि उत्पन्न हुए; जिन्होंने उनकी भाषा, उनके स्वर, उनके लहजे और उनके कथ्य सभी को अपनाने का प्रयत्न किया और उस प्रयत्न में उस सीमा तक सफल भी हुए जहाँ तक की सफलता अनुगामियों के लिये निश्चितप्राय होती है। "मीर" के अनुसार :

हमसे ख़ुश-ज़मज़मा[1] कहाँ ? यूँ तो लब-ो-लहजा हज़ार रखते हैं

किसी के स्वर अथवा लहजे को अपना लेने का अर्थ उसके काव्य की आत्मा, अपने अन्दर सोख लेने के नहीं हैं। "मीर" की शायरी केवल एक विशिष्ट भाषा, विशिष्ट शब्द-भण्डार कुछ विशेष विषयों और विशेष स्वर वा लहजे का परिणाम नहीं। इसमें उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व और उनके जीवन बिताने या उम्र काटने के सभी ढंगों का भाग रहा है :

किस-किस तरह से "मीर" ने काटा है उम्र को अब आख़िर-आख़िर आनके यह रेख़्ता कहा

———

इस फ़न में कोई बेतह, क्या हो मेरा मआरिज़ अव्वल तो मैं सनद हूँ फिर ये मेरी ज़बाँ है

———

कोई तो ज़मज़मा करे मेरा-सा दिल ख़राश[2] यूँ तो क़फ़स में और गिरफ़्तार बहुत हैं

———

अर्थात यह कि "मीर" की शैली एक तहदार व्यक्तित्व और जीवन-यापन के एक

§§ अभी इन पंक्तियों की स्याही भी न सूखने पाई थी कि मासिक "शाहकार" इलाहाबाद का "फ़िराक़ नम्बर" मिला। उलटने-पलटने में ख़लील आज़मी के लेख में यह वाक्य पढ़कर कि, "बहत्तर नश्तरों वाला नुस्ख़ा भी सैकड़ों वर्षों तक हमें 'मीर' के क़रीब पहुँचने से रोकता रहा है।"—मैंने महसूस किया कि अपनी राय में मैं अकेला नहीं हूँ।—नज़ीर सिद्दीक़ी।

१. सुन्दर गायन करने वाले। २. मर्मभेदी।

پر یہ خیال پیدا کر دیتا ہے کہ میرؔ کے باقی کلام کا مطالعہ بیکار ہے۔ ایک طرف تو لوگوں کو کتابی شکل میں میرؔ کے بہتر نشتر نہیں ملتے۔ دوسری طرف ان کی یہ دولت میرؔ کے دواوین کا مطالعہ بھی کھٹائی میں پڑجاتا ہے۔ بہرحال یہ دیکھ کر اطمینان ہوتا ہے کہ اگرچہ ابھی تک کلیاتِ میرؔ ہر اردو بک اسٹال کی زینت نہیں بنی لیکن میرؔ کی شاعری زیادہ سے زیادہ تنقیدی توجہ کا مرکز بنتی جا رہی ہے

اردو ادب کے گزشتہ بیس سال اردو شاعری میں میرؔ کی بڑھتی ہوئی مقبولیت کا دور رہے ہیں۔ یہاں پھر اس بات پر اصرار ضروری ہے کہ میرؔ کی موجودہ مقبولیت بھی بڑی حد تک شاعروں اور نقادوں تک محدود رہی ہے۔ گزشتہ بیس سال کے اندر پاکستان اور ہندوستان دونوں ملکوں میں میرؔ کا طرز اختیار کرنے والے متعدد شاعر پیدا ہوئے جنھوں نے ان کی زبان، ان کے لہجے اور ان کے موضوعات سبھی کو اپنانے کی کوشش کی اور اس کوشش میں اس حد تک کامیاب بھی ہوئے جس حد تک مقلدین کا کامیاب ہونا مقدر تھا۔ بقول میرؔ ؎

ہم سے خوش زمزمہ کہاں یوں تو لب و لہجہ ہزار رکھتے ہیں

کسی کے لب و لہجے کو اپنا لینے کے معنی اس کی شاعری کی روح کو اپنے اندر جذب کر لینے کے نہیں ہیں۔ میرؔ کی شاعری صرف ایک مخصوص زبان، مخصوص ذخیرۂ الفاظ، چند مخصوص موضوعات اور ایک مخصوص لب و لہجہ کا نتیجہ نہیں۔ اس میں ان کی پوری شخصیت اور ان کے زندگی گزارنے یا عمر کاٹنے کے سارے طریقوں کو دخل رہا ہے ؎

کس کس طرح سے میرؔ نے کاٹا ہے عمر کو اب آخر آخر آن کے یہ ریختہ کہا

اس فن میں کوئی بے تہ کیا ہو مرا معارض اوّل تو میں سند ہوں پھر یہ مری زباں ہے

کوئی تو زمزمہ کرے میرا سا دل خراش یوں تو قفس میں اور گرفتار بہت ہیں

غرضیکہ طرزِ میرؔ ایک تہہ دار شخصیت اور ایک مخصوص طرزِ زیست کا نتیجہ ہے۔ میرؔ کی سی شاعری کرنے کے لیے ان تمام خوش نصیبیوں اور بدنصیبیوں سے بہرہ ور ہونا ضروری ہے جو

विशिष्ट ढंग का फल है। "मीर" की सी शायरी करने के लिए उन समस्त सौभाग्यों-दुर्भाग्यों में समान रूप से भाग लेना आवश्यक है जो "मीर" के हिस्से में आए थे। स्पष्ट है कि इस शर्त को कोई भी अनुगामी पूरा नहीं कर सकता। किन्तु प्रत्येक महाकवि को अनुगमन किये जाने के दौर से गुज़रना ही पड़ता है; सो, "मीर" को भी इस दौर से गुज़रना पड़ा। यूं तो उनके समकालीनों और उनके तुरन्त बाद के लोगों ने भी "मीर" के गुण पैदा करने के लिए कुछ कम ज़ोर नहीं मारा था किन्तु विगत बीस बर्षों में जितने खुले रूप से उनका अनुगमन किया गया है उतना कदाचित पहले कभी न हुआ होगा। इस अनुकरणशीलता से वर्तमान पीढ़ी पर न केवल "मीर" का प्रभाव सिद्ध होता है बल्कि इससे हमारे युग में उनकी नई लोकप्रियता के सूत्र भी मिलते हैं। उनकी इसी लोकप्रियता को दृष्टिगत रखकर "नासिर" काज़िमी ने कहा था : " 'मीर' हमारे समकालीन हैं।" यह स्वीकारोक्ति भी सम्भवतः "नासिर" काज़िमी की ही है कि "हम छोटे कवियों के लिए इतना ही पर्याप्त है कि किसी महाकवि के किसी एक पक्ष को अपना लें।" इसीलिए "नासिर" काज़िमी ने "मीर" की उदासी को अपनाने की भरपूर कोशिश की है और उनकी इस कोशिश में ही इसके सूत्र भी विद्यमान हैं कि वर्तमान युग में "मीर" की लोकप्रियता के ऐतिहासिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारण क्या हैं? मैंने अपने एक लेख में उन कारणों की ओर संकेत करते हुए लिखा था कि विभाजन के उपरान्त दोनों देशों के लोग लगभग उसी प्रकार की विशृंखलता और वैसे ही संक्रमण में पड़े जो "मीर" के युग की प्रमुख विशेषता थी। ऐसी परिस्थिति में "मीर" जैसे महाकवि की रचनाओं ने घाव पर मरहम का काम दिया। यही कारण है कि उर्दू के एकाधिक कवि "मीर" की भाषा और उनके लहजे में व्यष्टि और समष्टिगत दुःख-दर्द की अभिव्यक्ति करने लगे।

वर्तमान युग में "मीर" की लोकप्रियता का दूसरा पक्ष उन पर आलोचनात्मक ध्यान का केन्द्रित हो जाना है। विगत बीस वर्षों के मध्य डाक्टर ख़्वाजा अहमद फ़ारूक़ी ने "मीर" पर एक भारी-भरकम जीवन-चरितात्मक और आलोचनात्मक ग्रन्थ लिखा। डाक्टर सैयद अब्दुल्लाह ने "मीर" की शायरी के लगभग हर महत्त्वपूर्ण पक्ष पर क्रमबद्ध निबन्ध लिखे जो बाद में "नक़दे-मीर" के नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित हुए। "मीर" के काव्य की अभिरुचि उत्पन्न करने में उससे अधिक शायद ही किसी अन्य पुस्तक से सहायता मिल सके। डाक्टर अब्दुल्लाह की एक बड़ी विशेषता यह है कि वे अपनी "मीर"-भक्ति के बावजूद अन्य "मीर"-भक्तों की

میر کے حصے میں آئی تھیں ۔ یہی بات دوسرے بڑے شاعروں کے بارے میں بھی کہی جا سکتی ہے ۔ ظاہر ہے کہ اس شرط کو کوئی مقلد پورا نہیں کرسکتا ۔ لیکن ہر بڑے شاعر کو تقلید کیے جانے کے دور سے گزرنا ہی پڑتا ہے ۔ سو میر کو بھی اس دور سے گزرنا پڑا ۔ یوں تو ان کے معاصرین اور موخرین نے بھی میر کا انداز پیدا کرنے میں کچھ کم زور نہیں مارا تھا ۔ لیکن جس قدر زور شور کے ساتھ گزشتہ بیس سال کے اندر ان کی تقلید ہوئی ہے اتنی شاید پہلے کبھی نہ ہوئی ہوگی ۔ اس تقلید سے موجودہ شعرا پر میر کا نہ صرف اثر ظاہر ہوتا ہے بلکہ موجودہ دور میں ان کی نئی مقبولیت بھی ان کی موجودہ مقبولیت ہی کو سامنے رکھتے ہوئے ناصر کاظمی نے کہا تھا کہ میر ہمارے معاصر ہیں یہ اعتراف بھی غالباً ناصر کاظمی ہی کا ہے کہ ہم چھوٹے شاعروں کے لیے اتنا ہی کافی ہے کہ کسی بڑے شاعر کے کسی ایک پہلو کو اپنا لیں ۔ چنانچہ ناصر کاظمی نے میر کی اداسی کو اپنانے کی بھرپور کوشش کی ہے اور ان کی اس کوشش سے اس بات کا سراغ بھی ملتا ہے کہ دور حاضر میں میر کی مقبولیت کے تاریخی، سماجی اور نفسیاتی اسباب کیا ہیں ۔ میں نے اپنے ایک مضمون میں ان اسباب کی طرف اشارہ کرتے ہوئے لکھا تھا کہ تقسیم کے بعد دونوں ملکوں کے لوگ تقریباً اسی انتشار اور بحران سے دو چار ہوئے جو میر کے عہد کی نمایاں خصوصیات تھے ۔ ایسے حالات میں میر جیسے شاعر کے کلام نے زخم پر مرہم کا کام دیا ۔ یہی وجہ ہے کہ اردو کے متعدد شعرا میر کی زبان اور ان کے لہجے میں انفرادی اور اجتماعی دکھ درد بیان کرنے لگے

دور حاضر میں میر کی مقبولیت کا دوسرا پہلو ان پر تنقیدی توجہ کا ارتکاز ہے ۔ گزشتہ بیس سال کے دوران میں ڈاکٹر خواجہ احمد فاروقی نے میر پر ایک ضخیم سوانحی اور تنقیدی کتاب لکھی ۔ ڈاکٹر سید عبداللہ نے میر کی شاعری کے تقریباً ہر اہم پہلو پر مضامین کا ایک سلسلہ لکھا جو بعد میں "نقد میر" کے نام سے کتابی شکل میں شایع ہوا ۔ میر کی شاعری کا ذوق پیدا کرنے میں اس سے بہتر شاید ہی کسی مضمون یا کتاب سے مدد مل سکے ۔ ڈاکٹر عبداللہ کی ایک بڑی خوبی یہ ہے کہ وہ اپنی میر پرستی کے باوجود بعض میر پرستوں کی ناقابل ہضم بے اعتدالیوں سے محفوظ رہے ہیں ۔ اردو ادب کے سب سے ذہین نقاد حسن عسکری نے رسالہ 'ساقی' (کراچی) میں کلام میر کا انتخاب اپنے مقدمے کے ساتھ شایع کیا جو بعض انتہائی اشتعال انگیز خیالات کے باوجود "میریات" میں ایک غیر معمولی اضافے کی حیثیت رکھتا ہے ۔ میر

दुस्सह अनियमितताओं से सुरक्षित रहे हैं। उर्दू साहित्य के सबसे प्रखर समालोचक हसन असकरी ने मासिक "साक़ी", कराची में "मीर" की रचनाओं का चयन अपनी उद्बोधक प्रस्तावनाओं के साथ प्रकाशित किया जो कुछ अत्यन्त उत्तेजक विचारों के बावजूद "मीर"-विषयक साहित्य में एक असाधारण अभिवृद्धि की हैसियत रखता है। "मीर" पर इन तीन अत्यन्त महत्त्व के कामों के अतिरिक्त डाक्टर इबादत बरैलवी ने अपनी आदत के अनुसार एक लम्बी प्रस्तावना के साथ "कुल्लियाते-मीर" का एक अत्यन्त बहुमूल्य संस्करण प्रकाशित कराया और "असर" लखनवी ने "मीर" को "ग़ालिब" से श्रेष्ठतर कवि और उनके काव्य को संसार के प्रत्येक ज्ञान-विज्ञान का संगम सिद्ध करने के लिए घोर आलोचनात्मक संघर्ष किया। "मजनूं" और "फ़िराक़" ने "मीर" पर जो कुछ लिखा है उसकी चर्चा इसलिए नहीं कर रहा हूँ कि "मीर" के विषय में उनका लेखन सम्भवतः बीस वर्ष पूर्व का है। इस बीच आले अहमद "सुरूर" ने "मीर" पर एक लेख अवश्य प्रकाशित कराया है, ख़बर थी कि "मीर" पर उनका विस्तृत अध्ययन पुस्तक-रूप में प्रकाशित होने वाला है किन्तु वह पुस्तक अभी तक प्रकाशित नहीं हुई।

इसमें सन्देह नहीं कि "असर" लखनवी और डाक्टर सैयद अब्दुल्लाह ने "मीर"-विषयक बहुत से दुराग्रहों को दूर करने में महत्वपूर्ण भाग लिया है। "मीर" का व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों बहुत से विभ्रमों द्वारा ग्रस्त रहे हैं और यह विभ्रम कभी-कभी तो बड़ी ही सौहार्दपूर्ण प्रशंसाओं से उत्पन्न हुए हैं। जैसे जब ख़्वाजा "बासित" ने "मीर" और "सौदा" का अन्तर स्पष्ट करते हुए कहा था कि "मीर" की शायरी "आह"! है और "सौदा" की शायरी "वाह"!" तो—इसमें संदेह नहीं कि उन्होंने "मीर" के काव्य का मूलभूत तत्त्व वर्णित करने के लिए एक सही शब्द चुना था किन्तु इस सही शब्द ने भी "मीर" के विषय में इस विभ्रम को जन्म दिया कि "मीर" की शायरी "आह" के अतिरिक्त कुछ है ही नहीं। "मीर" की शायरी का नैकट्यपूर्ण अध्ययन हमें यह राय बनाने पर विवश करता है कि अपने जीवन की समस्त आपदाओं और समस्याओं के बावजूद उनमें जीवन और प्रकृति से आनन्दित होने की शक्ति कुण्ठित न हो सकी; यह और बात है कि व्यक्तिगत स्थितियों और युग की परिस्थितियों की प्रतिकूलता के कारण उनकी यह योग्यता पूर्णतः कार्य रूप में परिणत न हो सकी। सामान्यतः "मीर" का नाम लेने से एक असफल और सर्ववञ्चित, हर प्रकार से हीनताग्रस्त, दुःखी-दरिद्र, व्यथित-सन्तप्त, लोगों से विमुख, आत्म-लीन—या अपने आप से निराश, संसार से

پر ان تین اہم ترین کاموں کے علاوہ ڈاکٹر عبادت بریلوی نے حسب معمول ایک نہایت طویل مقدمے کے ساتھ کلیات میرؔ کا نہایت قیمتی ایڈیشن شایع کیا اور آثر لکھنوی نے میرؔ کو غالبؔ سے برتر شاعر اور ان کی شاعری کو دنیا بھر کے فلسفہ و حکمت کا سرچشمہ ثابت کرنے کے لیے زبردست تنقیدی بیڑا اٹھا لیا۔ مجنوںؔ اور فراقؔ نے میرؔ پر جو کچھ لکھا ہے اس کا ذکر اس لیے نہیں کر رہا ہوں کہ میرؔ سے متعلق ان کی تحریریں غالباً بیس سال پہلے کی ہیں۔ اس دوران میں آل احمد سرورؔ نے میرؔ پر ایک مضمون ضرور شایع کیا۔ خبر تھی کہ میرؔ پر ان کا مبسوط مطالعہ کتابی شکل میں چھپنے والا ہے لیکن وہ کتاب ابھی تک منظر عام پر نہیں آئی

اس میں شک نہیں کہ آثر لکھنوی اور ڈاکٹر سید عبداللہ نے میرؔ سے متعلق بہت سے تعصبات کو دور کرنے میں نمایاں حصہ لیا ہے۔ میرؔ کی شخصیت اور شاعری دونوں بہت سی غلط فہمیوں کا شکار رہی ہیں۔ یہ غلط فہمیاں بعض اوقات نیک نیت تعریفوں سے پیدا ہوئی ہیں۔ مثلاً جب خواجہ باسط نے میرؔ اور سوداؔ کے فرق کو متعین کرتے ہوئے کہا تھا کہ میرؔ کی شاعری آہ ہے اور سوداؔ کی شاعری واہ تو اس میں شک نہیں کہ انھوں نے میرؔ کی شاعری کے بنیادی مزاج کو بیان کرنے کے لیے ایک صحیح لفظ (آہ) کا انتخاب ضرور کیا لیکن اس صحیح انتخاب نے بھی میرؔ کے بارے میں اس غلط فہمی کو ہوا دی کہ میرؔ کی شاعری آہ کے سوا کچھ ہے ہی نہیں۔ میرؔ کی شاعری کا قریبی مطالعہ ہمیں یہ رائے قائم کرنے پر مجبور کرتا ہے کہ اپنی زندگی کے تمام مصائب اور مسائل کے باوجود ان میں زندگی یا فطرت سے لطف اندوز ہونے کی صلاحیت کند نہ ہو سکی۔ یہ اور بات کہ ذاتی اور معاصرانہ حالات کی ناسازگاری کے باعث ان کی یہ صلاحیت پورے طور پر بروئے کار بھی نہ آ سکی عام طور پر میرؔ کا نام لینے سے ایک ناکام و نامراد، رنجیدہ و غم دیدہ، لوگوں سے گریزاں اپنے آپ میں گم، یا اپنے آپ سے مایوس دنیا سے بیزار، حد درجہ متین و خاموش زندگی اور فطرت کے حسن سے بے نیاز آدمی کا تصور ذہن میں ابھرتا ہے۔ اس تصور کے ابھارنے میں محمد حسین آزادؔ جیسے شخصیت نگار کے علاوہ خود میرؔ کے بہت سے اشعار کا بھی ہاتھ ہے مثلاً ؎

विरक्त, अत्यधिक गम्भीर और निरीह; जीवन और प्रकृति के सौन्दर्य के प्रति उदासीन व्यक्ति की कल्पना मस्तिष्क में उभरती है। यह कल्पना उभारने में मुहम्मद हुसैन "आज़ाद" जैसे व्यक्तित्व-चित्रण करने वाले के अतिरिक्त स्वयं "मीर" के बहुत से शेरों का भी हाथ है जैसे :

खुली आँखों में जो देखा तो ग़म और चश्मे-गिरियां[1] किसे कहते हैं न जाना दिले-शाद[2]-ओ-रुए-ख़न्दां[3]

दिलख़राशी[4] व जिगरचाकी[5]-ओ-ख़ूं-अफ़शानी[6] हूं तो नाकाम[7] प रहते हैं मुझे काम बहुत

नामुरादाना ज़ीस्त करता था   "मीर" का तौर याद है हमको

नामुरादी की रस्म "मीर" से है   तौर ये उस जवान से निकला

और महज़ूं[8] भी हम सुने थे वले   "मीर" सा हो सके है कब कोई ?
कि, तलफ़्फ़ुज़[9] तरब[10] का सुन के कहे   शख़्स होगा कहीं तरब कोई ।

यह भी सही है कि "मीर" के दीवानों में इसी प्रकार के शेर ज़्यादा हैं लेकिन यह शेर "मीर" के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को आच्छादित नहीं कर पाते। उनके भारी-भरकम दीवानों में ऐसे शेर और ऐसी ग़ज़लें भी मिलती हैं जो उनके मस्ती में विश्वास करने और प्रकृति के सौन्दर्य बोध का पता देते हैं। आख़िर "मीर" के इन शेरों को केवल रस्मी शेर कहकर कैसे टाला जा सकता है ?

चलते हो तो चमन को चलिए सुनते हैं कि बहारां[11] है
पात हरे हैं, फूल खिले हैं कम कम बादो-बारां[12] है।

बहार आई है गुन्चे गुल के निकले हैं गुलाबी से
निहाले-सब्ज़[13] झूमे हैं गुलिस्तां में शराबी से

दिल लगता है वां हुज्जते-रिन्दाना[14] जहां हो
मैं ख़ुश हूं उसी शहर से मयख़ाना जहां हो

यारो मुझे मआफ़ करो मैं नशे में हूं   अब दो तो जाम ख़ाली ही दो मैं नशे में हूं
मस्ती से दरहमी[15] है मेरी गुफ़्तगू के बीच   जो चाहो तुम भी मुझको कहो मैं नशे में हूं

१. रोती हुई आँख २. प्रसन्न मन ३. हंसता चेहरा ४. दिल को नोचना (दिल पर घाव लगाना) ५. अत्यन्त श्रमपूर्वक दुस्सह को सहना ६. ख़ून छिड़कना (इस श्रम के फलस्वरूप ख़ून उगलना) ७. असफल; कार्यहीन ८. उदास, दुखी ९. उच्चारण १०. आनन्द ११. मधुमास १२. बादल और झड़ी १३. मुदित हरित वृक्ष १४. रिन्दों (मस्तों) की आवश्यकतापूर्ति का साधन, उनके लिए प्रमाण १५. विशृंखलता।

کھلیں آنکھیں میں جو دیکھا سو غم او، چشم گریاں   کسے کہتے ہیں نہ جانا دل شاد و روئے خنداں

دل خراشی و جگر چاکی و خوں افشانی   ہوں تو ناکام پہ رہتے ہیں مجھے کام بہت

نامرادانہ زیست کرتا تھا   میرؔ کا طور یاد ہے ہم کو

نامرادی کی رسم میرؔ سے ہے   طور یہ اس جوان سے نکلا

اور محزوں بھی ہم سے تھے ولے   میرؔ سا ہو سکے ہے کب کوئی
کہ تلفظ طرب کا سُن کے کہے   شخص ہوگا کہیں طرب کوئی

یہ بھی صحیح ہے کہ میرؔ کے دوادین میں اسی قسم کے اشعار زیادہ ہیں لیکن یہ اشعار میرؔ کی پوری شخصیت کا احاطہ نہیں کرتے۔ ان کے ضخیم دیوانوں میں ایسے اشعار اور ایسی غزلیں بھی ملتی ہیں جو ان کی رند مشربی اور فطرت پرستی کا پتہ دیتی ہیں۔ آخر میرؔ کے ان اشعار کو محض رسمی اشعار کہہ کر کیسے ٹالا جا سکتا ہے ؎

چلتے ہو تو چمن کو چلیے سنتے ہیں کہ بہاراں ہے
پات ہرے ہیں پھول کھلے ہیں کم کم ابر و باراں ہے

بہار آئی ہے غنچے گل کے نکلے ہیں گلابی سے
نہال سبز جھومے ہیں گلستاں میں شرابی سے

دل لگتا ہے واں صحبتِ رندانہ جہاں ہو
میں خوش ہوں اسی شہر سے میخانہ جہاں ہو

या हाथों हाथ लो मुझे मानिन्दे जामे[1]-मय — या थोड़ी देर साथ चलो मैं नशे में हूं
माज़ूर[2] हूं जो पांव मेरा बेतरह[3] पड़े — तुम सरगरां[4] तो मुझसे न हो मैं नशे में हूं

यहाँ मुझे इस बात पर आग्रह नहीं कि "मीर" वस्तुतः "रिन्द" थे। यह खोज उनके जीवन-चरित्रकारों का कार्य है कि प्रेम-मदिरा की तरह वह अंगूरी-मय के भी स्वाद के ज्ञाता थे कि नहीं। मैं तो केवल यह कहना चाहता हूं कि यदि किसी व्यक्ति के स्वभाव-गठन में रिन्दी-वाले तन्तु भी न होंगे तो वह ऐसी प्रभावशाली मदिरा-विषयक ग़ज़ल कह ही नहीं सकता। "मीर" की यह ग़ज़ल उनकी इतनी श्रेष्ठ ग़ज़लों में से है कि वह केवल इस ग़ज़ल की बदौलत जीवित रह सकते थे। यह ग़ज़ल किसी कवि को महान् नहीं बना सकती किन्तु जीवित अवश्य रख सकती है।

छोटे कवियों की पहचान यह है कि वे जीवन के जिसी एक पक्ष के ही हो रहते हैं। उनके व्यक्तित्व में वास्तविक जीवन के वैविध्य की समाई नहीं होती। "मीर" की शायरी का केन्द्रीय स्वर "आह" सही; किन्तु उनका व्यक्तित्व छोटे कवि का व्यक्तित्व नहीं। उनमें जीवन के सभी रंग अपने पूर्ण वैविध्य के साथ अपने वास्तविक रूप में विद्यमान हैं। आकस्मिक रूप से जीवन की यातनाओं से उनके अनुभूति-तन्तु कुण्ठित* भी हो जाते हैं, किन्तु उनकी शायरी "निशात-ग़म" के मामले में अनुभूतिहीनता की शायरी कदापि नहीं।

जिस प्रकार "मीर" की शायरी को केवल "आह" शब्द में बन्द करने का प्रयत्न किया गया है इसी प्रकार उनकी दृष्टि को संसार के स्थान पर स्वयं अपने दिल पर ही केन्द्रित दिखाने का भी प्रयत्न किया गया है। किसी ने लिखा है कि "मीर" की आँखें दिल की तरफ़ खुली हुई थीं और "सौदा" की आँखें दुनिया की तरफ़। यहाँ मुझे "सौदा" से बहस नहीं किन्तु "मीर" के बारे में जो बात कही गयी है उसका आधार सम्भवतः मुहम्मद हुसैन "आज़ाद" द्वारा वर्णित उस घटना पर भी है कि "मीर" एक मित्र के मकान में महीनों रहे लेकिन उन्होंने अपने कमरे की वह खिड़की न खोली जिसके पीछे सुन्दर उपवन था। सम्भव है "मीर" ने मित्र के ध्यान आकर्षित कराने पर भी वह खिड़की कभी न खोली हो अर्थात् उपवन की ओर से अपनी खिड़की सदैव बन्द ही रक्खी हो किन्तु दुनिया की ओर

१. सुरा-पात्र की तरह २. विवश ३. ठाँव-कु ठाँव ४. रुष्ट।

* "हुआ हूं फ़र्ते-अज़ीयत[1] से मैं तो सुन्न ऐ "मीर" तमीज़े-रञ्ज-ो-ख़याले-निशात[2] मुझ को नहीं

१. यातनाधिक्य। २. दुःखानुभूति का विवेक—अथवा हर्षानुभूति का विचार।

یارو مجھے معاف رکھو میں نشے میں ہوں — اب دو تو جام خالی ہی دو میں نشے میں ہوں
مستی سے درہمی ہے مری گفتگو کے بیچ — جو چاہو تم بھی مجھ کو کہو میں نشے میں ہوں
یا ہاتھوں ہاتھ لو مجھے مانندِ جام مے — یا تھوڑی دور ساتھ چلو میں نشے میں ہوں
معذور ہوں جو پاؤں مرا بے طرح پڑے — تم سرگراں تو مجھ سے نہ ہو میں نشے میں ہوں

یہاں مجھے اس بات پر اصرار نہیں کہ میر فی الواقع رند تھے۔ یہ تحقیق ان کے سوانح نگاروں کا کام ہے کہ بادۂ الفت کی طرح وہ بادۂ انگوری کی لذت سے بھی واقف تھے یا نہیں۔ میں تو صرف یہ کہنا چاہتا ہوں کہ جس آدمی کے مزاج میں کوئی رندانہ رگ نہ ہوگی وہ اتنی عمدہ خمریاتی غزل کہہ ہی نہیں سکتا۔ میر کی یہ غزل اتنی عمدہ غزلوں میں سے ہے کہ وہ صرف اس غزل کی بدولت زندہ رہ سکتے تھے۔ یہ غزل کسی شاعر کو عظیم نہیں بنا سکتی لیکن زندہ ضرور رکھ سکتی ہے

چھوٹے شاعروں کی پہچان یہ ہے کہ وہ زندگی کے کسی ایک پہلو کے ہو رہتے ہیں ان کی شخصیت میں زندگی کے تنوع کی سمائی نہیں ہوتی۔ میر کی شاعری کا مرکزی سُر آہ سہی لیکن ان کی شخصیت چھوٹے شاعر کی شخصیت نہیں۔ اس میں زندگی کی پوری رنگا رنگی موجود ہے۔ ہنگامی طور پر زندگی کی اذیتوں سے ان کی حسیں[1] کند بھی ہو جاتی ہیں لیکن ان کی شاعری نشاط و غم کے معاملے میں بے حسی کی شاعری ہرگز نہیں

جس طرح میر کی شاعری کو لفظ آہ میں بند کرنے کی کوشش کی گئی ہے اسی طرح ان کی نظر کو دنیا کے بجائے اپنے دل پر مرکوز دکھانے کی کوشش بھی کی گئی ہے۔ کسی نے لکھا ہے کہ میر کی آنکھیں دل کی طرف کھلی ہوئی تھیں اور سودا کی آنکھیں دنیا کی طرف۔ یہاں مجھے سودا سے بحث نہیں لیکن میر کے بارے میں جو بات کہی گئی ہے اس کی بنیاد غالباً محمد حسین آزاد کا بیان کردہ وہ واقعہ بھی ہے کہ میر ایک دوست کے مکان میں مہینوں رہے لیکن اپنے کمرے کی وہ کھڑکی نہ کھولی جس کے پیچھے خوبصورت خانہ باغ تھا۔ ممکن ہے میر نے دوست کے توجہ دلانے کے باوجود وہ کھڑکی کبھی نہ کھولی ہو یعنی خانہ باغ

---

[1] ہوا ہوں فرطِ اذیت سے میں تو سن اے میر ÷ تمیز رنج و خیال نشاط مجھ کو نہیں

से उन्होंने अपनी आंखें कभी बन्द नहीं रक्खीं। आधुनिक मनोविज्ञान ने व्यक्तित्वों को INTROVERT (अन्तर्मुखी) और EXTROVERT (बहिर्मुखी) के ख़ानों में विभक्त किया है और इस दृष्टि से देखने पर "मीर" को अन्तर्मुखी व्यक्तित्वों के वर्ग में ही गिना जायगा किन्तु अपने समस्त अन्तर्मुखी-तत्त्वों के बावजूद जीवन और काल-चक्र की घटनाओं की ओर से न कभी उनकी आंखें बन्द रहीं न कान। यह बात इस दृष्टि से और भी विचित्र और प्रशंसनीय है कि उनके युग में न तो "कला-कला के लिए" का आन्दोलन चला था न "कला जीवन के लिए" का! "सब्जेक्टिविटी" एवं "आब्जेक्टिविटी" के मामलों में वे अपने रचनात्मक—सृजनात्मक-अन्तर्चेतन द्वारा ही उत्प्रेरित थे। कुछ आलोचकों ने पूर्ण विस्तार में वर्णन किये हैं कि "मीर" के काव्य में समयुगीन परिस्थितियों और घटनाओं की एक-एक रेखा न केवल विद्यमान बल्कि सुरक्षित भी है। वस्तुतः टी० एस० ईलियट का यह कथन कि, महाकवि अपने विषय में लिखता हुआ अपने युग के विषय में लिख जाता है—उर्दू के जिन दो एक कवियों के विषय में सत्य सिद्ध होता है उनमें एक "मीर" भी हैं। यह बात उनके कवित्व सम्बन्धी अन्तर्ज्ञान अथवा विवेक का सर्वश्रेष्ठ प्रमाण है। उन्होंने अपने युग की राजनैतिक घटनाओं, ऐतिहासिक क्रान्तियों और आर्थिक दुरवस्था को अपने काव्य में इसलिए स्थान नहीं दिया कि उनके दीवान के पृष्ठ बढ़ जाएं—बल्कि ऐसा करने में उनके निजी रूप से प्रेरणा-सम्वेदना ग्रहण करने का हाथ था। यह और बात है कि ऐसी निजी प्रेरणा-सम्वेदना होने के बावजूद बहुत से शेर श्रेष्ठ रचना, (महान सृजनात्मक उपलब्धि) नहीं बन पाते। ऐसा उन शेरों के साथ होना भी सर्वथा सम्भव है जिनका सम्बन्ध बिल्कुल निजी अनुभूतियों : दुःख-दर्द से हो। मुझे कुछ ऐसा लगता है कि अच्छा शेर होने में कवि की साधना, क्षमता, आत्मीयता और कठोर तप के साथ-साथ संयोग का भी हाथ होता है। बहरहाल, इन बातों का यह अर्थ कदापि नहीं कि "मीर" का राजनैतिक काव्य निष्प्राण है। उनके राजनैतिक-काव्य में भी ऐसे शेरों की संख्या पर्याप्त है जिनके लिए "तीर"-ो-"नश्तर" जैसे शब्द प्रयोग किये जा सकते हैं। "मीर" की शायरी के "सब्जेक्टिव" होने पर इतना अधिक बल दिया गया था कि उनमें "आब्जेक्टिविटी" के जितने तत्त्व हैं वे एक दीर्घकाल तक उपेक्षित होते रहे। इस पक्ष की क़द्रदानी तो अब जाकर शुरू हुई। डाक्टर ख़्वाजा अहमद फ़ारूक़ी ने "मीर" की शायरी को "दिल-ो-दिल्ली का मर्सिया" कहकर उनकी शायरी को केवल दिल की (अर्थात् मात्र "सब्जेक्टिव")

کی طرف سے اپنی کھڑکی ہمیشہ بند رکھی ہو لیکن دنیا کی طرف سے انھوں نے اپنی آنکھیں کبھی بند نہیں رکھیں۔ جدید نفسیات نے انسانی شخصیتوں کو EXTROVERT اور INTROVERT کے خانوں میں تقسیم کیا ہے۔ اس تقسیم کے اعتبار سے میر شخصیتوں ہی کے زمرے میں آئیں گے لیکن اپنی ساری دروں بینی یا داخلیت پسندی کے باوجود زندگی اور زمانے کے حوادث اور ہنگاموں کی طرف سے نہ ان کی آنکھیں بند رہیں نہ ان کے کان بند رہے۔ یہ بات اس لحاظ سے اور بھی حیرت انگیز اور قابلِ تعریف ہے کہ ان کے زمانے میں نہ ادب برائے ادب کی تحریک چلی تھی نہ ادب برائے زندگی کی۔ داخلیت اور خارجیت کے معاملے میں وہ اپنے تخلیقی وجدان کے پابند اور پیرو تھے۔ بعض نقادوں نے تفصیل کے ساتھ دکھایا ہے کہ میر کی شاعری میں معاصرانہ حالات و حوادث کا ایک ایک نقش موجود و محفوظ ہے۔ واقعہ یہ ہے کہ ٹی۔ ایس ایلیٹ کا یہ قول کہ "بڑا شاعر اپنے بارے میں لکھتے ہوئے اپنے زمانے کے بارے میں لکھ جاتا ہے" اردو کے جن دو ایک شاعروں پر صادق آتا ہے ان میں سے ایک میر بھی ہیں۔ یہ بات ان کے شاعرانہ ادراک کی وسعت کا بہترین ثبوت ہے۔ انھوں نے اپنے زمانے کے سیاسی واقعات تاریخی انقلابات اور اقتصادی ابتری کو اپنی شاعری میں اس لیے جگہ نہیں دی کہ دیوان کی ضخامت بڑھ جائے۔ ایسا کرنے میں ذاتی تاثر کو دخل تھا۔ یہ اور بات ہے کہ ذاتی تاثر کے باوجود بہت سے اشعار اچھے اشعار نہیں بن پاتے۔ اس کلیے کا اطلاق ان اشعار پر بھی ہوتا ہے جن کا تعلق ذاتی دکھ درد سے ہے۔ مجھے کچھ ایسا لگتا ہے کہ اچھے شعر کے ہونے میں شاعر کی کاوش، قدرت اور خلوص کے علاوہ اتفاق کو بھی دخل ہوتا ہے۔ بہرحال ان باتوں کا مطلب یہ نہیں کہ میر کی سیاسی شاعری بے جان ہے۔ ان کی سیاسی شاعری میں بھی ایسے اشعار کی تعداد خاصی ہے جن کے لیے تیر و نشتر کی اصطلاحیں استعمال ہو سکتی ہیں۔ میر کی شاعری کے داخلی ہونے پر اتنا زور دیا گیا تھا کہ اس میں خارجیت کے عناصر طویل مدت تک نظر انداز ہوتے رہے۔ موخرالذکر پہلو کی قدر دانی اب جاکر شروع ہوئی ہے۔ ڈاکٹر خواجہ احمد فاروقی نے میر کی شاعری کو دل و دلی کا مرثیہ کہہ کر ان کی شاعری کو صرف دل کی شاعری (یعنی داخلی شاعری) ہونے کے الزام سے بچا لیا ہے۔ یہاں سوال یہ پیدا ہوتا ہے کہ اگر میر کی

शायरी होने के अभियोग से बचा लिया है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि यदि "मीर" की शायरी केवल "दिल का मर्सिया" होती तो क्या उसका महत्त्व वह न होता जो वर्तमान स्थिति में है ? वस्तुस्थिति यह है कि साहित्यिक महत्ता के लिए विषय-वस्तु के क्षेत्र का विस्तार कभी अनिवार्य नहीं रहा। कोई कवि अथवा साहित्यकार अपने सीमित क्षेत्र में भी महान हो सकता है। किन्तु यहाँ से महान् और महान्तर अर्थात तुलनात्मक महत्ता का प्रश्न आरम्भ हो जाता है। स्पष्ट है कि जिस कवि अथवा साहित्यकार की कृति में विचार एवं दृष्टि की जितनी व्यापकता होगी उतना ही महत्त्व उसकी महत्ता का बढ़ेगा बशर्ते कि यह व्यापकता सौंदर्यसृजन के कलात्मक गुणों से विहीन न हो।

"मीर" के विषय में जो भ्रान्तियां फैली हुई हैं। उनमें से एक यह भी है कि ग़ज़ल के सबसे बड़े शायर "मीर" हैं। इस राय की रोशनी नें फिर "ग़ालिब" ओर "इक़बाल" का स्थान निश्चत करना कठिन हो जाता है। यदि "मीर" ग़ज़ल के सबसे बड़े शायर हैं तो "ग़ालिब" और "इक़बाल" उनसे निम्नतर कैसे हैं ? ग़ज़ल के मामले में "ग़ालिब" और "इक़बाल" की सेवाएं "मीर" स कम तो किसी दृष्टि से नहीं। सम्भवतः "मीर" को ग़ज़ल का सबसे बड़ा शायर कहते समय ध्यान में केवल प्रेम-काव्य अथवा काव्य के श्रृंगारिक गुण (करुणा भी एक प्रकार से प्रेम-काव्य के सन्दर्भ में श्रृंगारिक हो जाती है।) ही रहते हैं। मैंने जब कभी किसी विद्यार्थी से ग़ज़ल की परिभाषा पूछी तो उत्तर यह मिला—"ग़ज़ल शायरी की वह विधा है जिसमें प्रेम सम्बन्धी भावनाएं अथवा मामले वर्णित हों।" उर्दू शायरी के सामान्य पाठक भी ग़ज़ल को प्रेम-काव्य का पर्यायवाची समझते हैं। लेकिन जानने वाले जानते हैं कि ग़ज़ल प्रेम-काव्य होने पर भी केवल प्रेम-काव्य नहीं है। बहरहाल, "मीर" को ग़ज़ल का सबसे बड़ा शायर निश्चित करते समय ग़ज़ल की यही बहु-विख्यात—किन्तु गलत परिभाषा लोगों के सम्मुख रहती है। वरन्—ग़ज़ल के अर्थ-गौरव सम्बन्धी उत्कृष्टतर गुणों अथवा शैलीगत सूक्ष्मताओं और नवीन अन्वेषणों की दृष्टि से "ग़ालिब" और "इक़बाल" "मीर" से दूसरे स्थान पर नहीं बल्कि कभी-कभी उनके बराबर और अधिकतर उनसे श्रेष्ठ ही हैं।

ग़ज़ल का केन्द्रीय विषय प्रेम है और प्रेम-सम्बन्धी विचारों, भावनाओं, प्रतीतियों, अनुभूतियों आदि का जैसा सुन्दर और प्रभावपूर्ण चित्रण "मीर" ने किया है वैसा उर्दू में किसी और ने नहीं किया। प्रत्येक ग़ज़लगो एक प्रेमी के रूप में सम्मुख आता है किन्तु "मीर" जैसा प्रेमी उर्दू शायरी में कोई और नहीं है :

شاعری صرف دل کا مرثیہ ہوتی تو کیا اُس کی اہمیت وہ نہ ہوتی جو موجودہ صورت میں ہے واقعہ یہ ہے کہ شعرو ادب میں عظمت کے لیے موضوع کے دائرے کا وسیع ہونا کبھی لازمی نہیں رہا۔ کوئی ادیب یا شاعر اپنے محدود دائرے میں بھی عظیم ہو سکتا ہے۔ لیکن یہاں سے عظیم اور عظیم تر یعنی تقابلی عظمت کا سوال شروع ہوجاتا ہے۔ ظاہر ہے کہ جس ادیب یا شاعر کے فن پارے میں فکر و نظر کی جتنی ہمہ گیری ہوگی اس کی عظمت میں اتنا ہی اضافہ ہوگا بشرطیکہ ہمہ گیریِ حُسن کاری سے خالی نہ ہو

میرؔ کے بارے میں جو غلط فہمیاں رائج رہی ہیں ان میں سے ایک یہ بھی ہے کہ غزل کے سب سے بڑے شاعر میرؔ ہیں۔ اس رائے کی روشنی میں غالبؔ اور اقبالؔ کا درجہ متعین کرنا مشکل ہو جاتا ہے۔ اگر میرؔ غزل کے سب سے بڑے شاعر ہیں تو غالبؔ اور اقبالؔ ان سے کمتر کیوں کر ہیں؟ غزل کے معاملے میں غالبؔ اور اقبالؔ کی خدمات میرؔ سے کم تر کسی لحاظ سے نہیں۔ غالباً میرؔ کو غزل کا سب سے بڑا شاعر کہتے وقت غزل کا تصور عشقیہ شاعری کا تصور ہوتا ہے۔ میں نے جب کبھی کسی طالب علم سے غزل کی تعریف پوچھی تو جواب یہ ملا کہ غزل شاعری کی وہ صنف ہے جس میں عشق و محبت سے متعلق جذبات و معاملات بیان کیے جاتے ہیں۔ اردو شاعری کے عام قارئین بھی غزل کو عشقیہ شاعری کا مترادف سمجھتے ہیں۔ لیکن جاننے والے جانتے ہیں کہ غزل عشقیہ شاعری ہونے کے باوجود محض عشقیہ شاعری نہیں ہے۔ بہر حال میرؔ کو غزل کا سب سے بڑا شاعر قرار دیتے وقت غزل کا یہی عام مگر غلط تصور پیش نظر ہوتا ہے۔ ورنہ غزل کی معنوی اور اسلوبی خوبیوں اور جدتوں کے اعتبار سے غالبؔ اور اقبالؔ میرؔ سے دوسرے درجے پر نہیں بلکہ بعض اوقات ان کے برابر اور بسا اوقات ان سے برتر ہی ہیں

غزل کا مرکزی موضوع عشق ہے اور عشقیہ جذبات و کیفیات کی جیسی خوبصورت اور موثر ترجمانی میرؔ نے کی ہے اردو میں کسی اور نے نہیں کی۔ ہر غزل گو ایک عاشق کی حیثیت رکھتا ہے لیکن میرؔ جیسا عاشق اردو شاعری میں کوئی اور نہیں ہے ؎

آگ تھے ابتدائے عشق میں ہم
اب جو ہیں خاک انتہا یہ ہے

आग थे इब्तदा-ए-इश्क़ में हम अब जो हैं ख़ाक इन्तहा यह है

"मीर" की ग़ज़लों का केन्द्रीय विषय यही—"आग से ख़ाक" हो जाने तक की दास्तान है ! और इस दास्तान की मार्मिकता महान् त्रासदी के स्तर का स्पर्श कर लेती है। "मीर" की शायरी मात्र वस्तुस्थिति का चित्रण है, वस्तुस्थिति का विश्लेषण नहीं। वह अपने काव्य में अपने प्रेम-पात्र के विषय में बातें करने से अधिक स्वयं प्रेम-पात्र ही से बातें करते दिखाई देते हैं—उस सादगी और सच्चाई के साथ, उस मार्मिकता और व्यथा; उस मानवीयता और मासूमियत; उस आत्म-समर्पण और आत्म-विस्मरण; उस पवित्रता और विनम्रता—के साथ—जिनके योग्य कोई आदर्श प्रेमी ही हो सकता है।

असीम ख़ुलूस और मर्मभेदी सादगी "मीर" के काव्य की सबसे बड़ी पूंजी और सहारा है:—

आज हमारे घर आया तो क्या है याँ जो निसार[1] करें
इल्ला[2] खींच बग़ल में तुझको देर तलक हम प्यार करें

"मीर" का प्रेम-काव्य असफल-प्रेम की अभिव्यञ्जना (वियोग-शृंगारात्मक) है। प्रेम की विफलता द्वारा "मीर" को जो कुछ सहना पड़ा उसका अनुमान इन शेरों से किया जा सकता है:—

या रब, कोई हो—इश्क़ का बीमार न होवे मर जाय बले उसको यह आज़ार[3] न होवे
ज़िन्दाँ[4] में फँसे, तौक़[5] पड़े, क़ैद में मर जावे पर दामे-मुहब्बत[6] में गिरफ़्तार न होवे

इन शेरों के आधार पर यह कहना ग़लत न होगा कि "मीर" ने प्रेम की अत्यन्त भयावह कल्पना प्रस्तुत की है। किन्तु जब उनके यहाँ इस प्रकार के शेरों पर नज़र पड़ती है:

लज़्ज़त से नहीं ख़ाली जानों का खपा जाना कब ख़िज़्र-ो-मसीहा[7] ने मरने का मज़ा जाना

———

नहीं इश्क़ का दर्द लज़्ज़त से ख़ाली जिसे ज़ौक़[8] है वह मज़ा जानता है

———

तो—यह महसूस होता है कि प्रेम अपनी समस्त वेदनाओं और पीड़ाआ के बावजूद एक ऐसा आनन्द है जिसके लिए जान तक की बाज़ी लगाई जा सकती है। उनके

१. न्योछावर। २. इसके अतिरिक्त कि। ३. रोग। ४. कारागार। ५. गले में डाला जाने वाले लोहे का फन्दा। ६. प्रेम-जाल। ७. "ख़िज़्र" और "मसीहा" दो पैग़म्बरों के नाम जो अमर हैं। "मसीहा" हज़रत ईसा को कहते हैं जो मुर्दों को जिलाते थे और मुसलमानों का विश्वास है कि सूली उन्हें नहीं दी गई उनको तो जीवित ही सीधे आकाश पर उठा लिया गया। ८. अभिरुचि।

میرؔ کی غزلوں کا بنیادی موضوع یہی آگ سے خاک ہونے تک کی داستان ہے اور اس داستان کی دل دوزی عظیم ٹریجیڈی کی سطح کو چھولیتی ہے ۔ میرؔ کی عشقیہ شاعری محض بیان حال ہے ۔ تجزیۂ حال نہیں ۔ وہ اپنی شاعری میں اپنے محبوب کے بارے میں باتیں کرنے سے زیادہ خود محبوب سے باتیں کرتے نظر آتے ہیں ــــــ اس سادگی اور سچائی کے ساتھ، اس دل جاکی اور الم ناکی کے ساتھ، اس انسانیت اور معصومیت کے ساتھ اس سپردگی اور خود گزاشتگی کے ساتھ، اس خلوص اور خاکساری کے ساتھ جس کا اہل کوئی مثالی عاشق ہی ہوسکتا ہے ۔ بے پناہ خلوص اور دل گداز سادگی میرؔ کی شاعری کا سب سے بڑا سرمایہ اور سہارا ہے ؎

آج ہمارے گھر آیا تو کیا ہے جو یاں نثار کریں
اِلّا کھینچ بغل میں تجھ کو دیر تلک ہم پیار کریں

میرؔ کی عشقیہ شاعری عشق ناکام کی زبان ہے ۔ عشق کی ناکامی کے ہاتھوں میرؔ کو جو کچھ سہنا پڑا اس کا اندازہ ان دو شعروں سے کیا جاسکتا ہے ؎

یارب کوئی ہو عشق کا بیمار نہ ہووے مر جاوے ولے اس کو یہ آزار نہ ہووے
زندان میں پھنسے طوق پڑے قید میں مرجاوے پر دام محبت میں گرفتار نہ ہووے

ان اشعار کی بنا پر یہ کہنا غلط نہ ہوگا کہ میرؔ نے عشق کا بڑا ہولناک تصور پیش کیا ہے ۔ لیکن جب ان کے یہاں اس قسم کے شعروں پر نظر پڑتی ہے ؎

لذت سے نہیں خالی جانوں کا کھپا جانا کب خضر و مسیحا نے مرنے کا مزا جانا

ــــــــ

نہیں عشق کا درد لذت سے خالی جسے ذوق ہے وہ مزا جانتا ہے

ــــــــ

تو محسوس ہوتا ہے کہ عشق اپنی تمام اذیتوں کے باوجود ایک ایسی لذت ہے جس کے لیے جان کی بازی تک لگائی جاسکتی ہے ۔ ان کے یہاں عشق نوجوانوں کا جسمانی تقاضا یا بڑھاپے کا روحانی فریب نہیں بلکہ انسانی زندگی کی نہایت اعلیٰ قدر یہاں تک کہ بجائے خود ایک مذہب ہے ؎

यहाँ प्रेम नवयुवकों की शारीरिक आवश्यकता अथवा बुढ़ापे की आध्यात्मिक प्रवञ्चना नहीं बल्कि मानवीय जीवन का एक अत्यन्त श्रेष्ठ मूल्य VALUE —यहाँ तक कि—स्वयं एक धर्म है :—

सख़्त काफ़िर[1] था जिनने पहले "मीर" मज़्हबे-इश्क अख़्तियार[2] किया

"मीर" ने प्रेम को धर्म कहने के बाद भी इसे कोई अधिभौतिक वस्तु नहीं बनने दिया। उनके यहाँ प्रेम मूल रूप से वही यौन-भावना है जो अपनी अतृप्ति की स्थिति में भाँति-भाँति के शारीरिक-आत्मिक उत्पीड़नो का कारण बन जाता है। प्रेम की शारीरिक प्रतिक्रियाओं को जिस विस्तार से "मीर" ने व्यक्त किया है उसका अनुरूप कृतित्व उर्दू के किसी दूसरे शायर के यहाँ नहीं मिल सकता। ऐसे शेर "मीर" के यहाँ लगभग हर पृष्ठ पर बिखरे पड़े हैं :—

क़ामत[3] ख़मीदा,[4] रंग शिकस्ता,[5] बदन नज़ार[6]
तेरा तो "मीर" ग़म में अजब हाल हो गया

बे सबब[7] आता नहीं अब दमबदम आशिक़ को ग़श[8]
दर्द खींचा है निहायत रञ्ज उठाया है बहुत

कुछ ज़र्द-ज़र्द चेहरा कुछ लाग़री[9] बदन में
क्या इश्क़ में हुआ है ऐ "मीर" हाल तेरा

दूर तुम से "मीर" ने ऐसा तअब[10] खींचा कि शोख़
कल जो मैं देखा उसे मुतलक़[11] न पहचाना गया

"मीर" की शायरी में जहाँ एक तरफ़ यौन-भावना ने अत्यन्त शुद्ध, पवित्र प्रेम का रूप अपनाया है वहाँ दूसरी ओर यही भावना यौन-विकृति के स्तर पर भी उतर आई है। एक ओर तो "मीर" प्रेम और वासना में विभेद करते हुए यहाँ तक कह जाते हैं :—

अपने तईं[12] भी खाना ख़ाली नहीं लज़्ज़त से क्या जाने हवस पेशा[13] चक्खे तो मज़ा जाने

लुत्फ़[14] क्या हर किसू[15] की चाह के साथ चाह वह है जो हो निबाह के साथ

१. नास्तिक; न मानने वाला। २. अपनाया। ३. आकृति। ४. झुका हुआ। ५. उखड़ा-उखड़ा (टूटा हुआ) ६. अत्यन्त दुर्बल। ७. अकारण। ८. मूर्च्छा। ९. दुर्बलता। १०. कष्ट, यातना। ११. बिल्कुल। १२. अपने आपको। १३. कामुकता और वासना तृप्ति ही जिसका प्रमुख कर्म हो। १४. आनन्द। १५. हर किसी, प्रत्येक।

سخت کافر تھا جن نے پہلے میرؔ ۔ مذہب عشق اختیار کیا

میرؔ نے عشق کو مذہب کہنے کے باوجود اسے کوئی مابعد الطبیعاتی چیز نہیں بنے دیا۔ ان کے یہاں عشق بنیادی طور پر وہی جذبہ ہے جو اپنی ناآسودگی کی صورت میں طرح طرح کے جسمانی شدائد کا باعث بن جاتا ہے۔ عشق کے جسمانی شدائد کو جس تفصیل کے ساتھ میرؔ نے بیان کیا ہے اس کی مثال اردو کے کسی اور شاعر کے یہاں نہیں مل سکتی اس قسم کے شعر میرؔ کے یہاں تقریباً ہر صفحے پر بکھرے ہوئے ہیں ؎

قامت خمیدہ، رنگ شکستہ، بدن نزار
تیرا تو میرؔ غم میں عجب حال ہو گیا

بے سبب آتا نہیں اب دم بہ دم عاشق کو غش
درد کھینچا ہے نہایت، رنج اٹھایا ہے بہت

کچھ زرد زرد چہرہ، کچھ لاغری بدن میں
کیا عشق میں ہوا ہے اے میرؔ حال تیرا

دور تجھ سے میرؔ نے ایسا تعب کھینچا کہ شوخ
کل جو میں دیکھا اسے مطلق نہ پہچانا گیا

میرؔ کی شاعری میں جہاں ایک طرف جنسی جذبے نے نہایت پاکیزہ عشق کی صورت اختیار کرلی ہے وہاں دوسری طرف وہ جذبہ جنسی کج روی کی سطح پر بھی اتر آیا ہے۔ ایک طرف تو میرؔ عشق اور ہوس میں فرق کرتے ہوئے یہاں تک کہہ جاتے ہیں کہ ؎

اپنے تئیں بھی کھانا خالی نہیں لذت سے ۔ کیا جانے ہوس پیشہ چکھے تو مزا جانے

لطف کیا ہر کسو کی چاہ کے ساتھ ۔ چاہ وہ ہے جو ہو نباہ کے ساتھ

दूसरी ओर वह दिल्ली के हर "सादारू"[1] के अनुराग द्वारा ग्रस्त दिखते हैं। समयौन-आकर्षण विषयक शेर पुराने शायरों में से बहुतेरों के यहाँ मिलते हैं लेकिन जितने प्राचुर्य से "मीर" के यहाँ मिलते हैं उतने उर्दू के किसी और शायर के यहाँ नहीं पाए जाते। उर्दू के एक स्वनामधन्य आलोचक ने ऐसे ही शेरों को "मीर" की विशेष उपलब्धि मानकर अपने विशेष ढंग से उसका जी खोलकर मज़ाक़ उड़ाया है। कुछ "मीर"-भक्तों ने उन शेरों के विषय में यह कहा है कि ऐसे शेर फ़ारसी और उर्दू के एक परम्परागत विषय का निर्वाह करने के प्रयत्न के फलस्वरूप हैं। मेरा विचार है कि जहाँ "मीर" के समयौन-विकृति की ओर प्रवृत्त शेरों का बेदर्दी से उपहास करना ग़लत है वहीं उनका कारण इतने भोले-भाले ढंग से बताने का प्रयत्न करना भी सही नहीं। इतना मान लेने से "मीर" के व्यक्तित्व और कृतित्व को कोई हानि नहीं पहुँच सकती कि वे निश्चय ही समयौन विकृतियों द्वारा ग्रस्त थे। "मीर" जैसे अतिरिक्त रूप से सम्वेदनशील और सौन्दर्य-प्रेमी व्यक्ति का यौन-वितृष्णा द्वारा ग्रस्त होकर यौन विकृतियों में फँस जाना एक प्रकार से अनिवार्य-सा ही था। किन्तु एक कवि के रूप में उनका वास्तविक दुर्भाग्य यह था कि उनकी इस समयौन-विकृति ने भी प्रेम की उच्चतर भावनाओं की ओर विकसित होने के स्थान पर निम्नस्तरीय कामुकता का मार्ग पसन्द कर लिया। "सादारूयों" के प्रति "मीर" का रवैया प्रेमोचित नहीं, खुला हुआ कामान्ध है। यही कारण है उनके सादारूयों से सम्बन्धित शेरों में किसी प्रकार की उच्चता अथवा पवित्रता नहीं आ सकी। लेकिन कौन जाने कि उनके श्रेष्ठतम प्रेम-काव्य का कुछ अंश उनकी इसी विकृति के फलस्वरूप उद्भुत हुआ हो। समयौन प्रवृत्ति नैतिक और वैधानिक दृष्टि से जितनी भी बुरी हो किन्तु उसकी सृजनात्मक प्रतिक्रियाओं से उत्पन्न लाभ से तो इंकार नहीं किया जा सकता।

"मीर के प्रेम-काव्य के सर्वश्रेष्ठ भाग का उत्प्रेरक उनका सर्वप्रथम प्रेम हो अथवा बाद की यह विकृति किन्तु उसे पढ़ते समय इतना अवश्य अनुभव होता है कि भावनाओं की प्रबलता और अनुभूतियों की सच्चाई की दृष्टि से यह शायरी स्वयं ही अपनी मिसाल है। उनके काव्य में प्रेम की जो मान्यता और प्रेमी के जो विवरण मिलते हैं उनमें एक फ़क़ीराना (विरक्त योगी-सा) तत्त्व और दरवेशी की अदा पाई जाती है। उनका प्रेम अपने प्रत्यक्ष गुणों की दृष्टि से अट्ठारहवीं शताब्दी

१. जिनके दाढ़ी-मूँछ न आई हो [सादा चेहरे वाले]।

دوسری طرف وہ ولی کے ہر "سادہ رو" کی دل آویزی کے شکار نظر آتے ہیں۔ ہم جنسی میلان سے متعلق اشعار پرانے شاعروں میں سے بہتیروں کے یہاں ملتے ہیں لیکن جس کثرت سے میر کے یہاں ملتے ہیں اتنے اردو کے کسی اور شاعر کے یہاں نہیں پائے جاتے اردو کے ایک نام نہاد نقاد نے ان اشعار کو میر کا خاص رنگ قرار دے کر اپنے مخصوص رنگ میں اس کا دل کھول کے مذاق اڑایا ہے۔ بعض میر پرستوں نے ان اشعار کی توجیہہ یہ کی ہے کہ وہ اشعار فارسی اور اردو شاعری کے ایک رسمی موضوع کو برتنے کا نتیجہ ہیں۔ میرا خیال ہے کہ جہاں میر کے ہم جنسی اشعار کی بے دردانہ تضحیک غلط ہے وہاں ان کی معصومانہ توجیہہ بھی صحیح نہیں۔ اتنا مان لینے سے میر کی شخصیت اور شاعری کو کوئی نقصان نہیں پہنچ سکتا کہ وہ یقیناً ہم جنسی جذبات کے شکار تھے۔ میر جیسے حساس اور حسن پرست آدمی کا جنسی ناآسودگیوں کی بہ دولت جنسی کج روی کا شکار ہوجانا ایک ناگزیر امر تھا۔ لیکن ایک شاعر کی حیثیت سے ان کی اصل بدنصیبی یہ تھی کہ ان کے ہم جنسی جذبات نے عشق کی رفعت اختیار کرنے کے بجائے ہوس کی پستی قبول کرلی۔ سادہ رویوں کی طرف میر کا رویہ عاشقانہ نہیں سرتاسر ہوس پرستانہ ہے۔ یہی وجہ ہے کہ سادہ رویوں سے متعلق اشعار میں بھی کوئی بلندی اور پاکیزگی نہ آسکی لیکن کون جانے کہ ان کی بہترین عشقیہ شاعری کا کچھ حصہ ان کے ہم جنسی جذبات ہی کا نتیجہ ہو۔ ہم جنسی میلان اخلاقی اور آئینی نقطۂ نظر سے جس قدر بھی برا ہو لیکن اس کے تخلیقی فیضان سے تو انکار نہیں کیا جاسکتا

میر کی عشقیہ شاعری کے بہترین حصے کا محرک ان کا پہلا عشق ہو یا بعد کا ہم جنسی میلان لیکن اسے پڑھتے وقت اتنا ضرور محسوس ہوتا ہے کہ جذبات کی شدت اور محسوسات کی صداقت کے اعتبار سے یہ شاعری اپنی مثال آپ ہے۔ ان کی شاعری میں عشق کا جو تصور یا عاشق کی جو تصویریں ملتی ہیں ان میں ایک فقیرانہ عنصر اور درویشانہ ادا پائی جاتی ہے۔ ان کا عشق اپنی ظاہری خصوصیات کے اعتبار سے اٹھارھویں صدی کا عشق تھا جو بخیہ گری کے بجائے جامہ دری کا قائل تھا اور جس کی تکمیل دامن اور گریباں کے چاک کے درمیانی فاصلے کو ختم کر دینے پر منحصر ہوتی

का प्रेम था जो बख़िये टाँकने (अपने को संयत रखने) के स्थान पर जामा फाड़ने (उन्मुक्त, उच्छृंखल होकर प्रेम करने) में विश्वास रखता था और जिसकी परिणति दामन और गरेबाँ के बीच की दूरी को समाप्त कर देने (विक्षिप्त हो जाने) पर निर्भर करती थी। स्पष्ट है कि ऐसा प्रेम : "इक धूप थी जो साथ गई आफ़ताब के।" "मीर" के युग से लेकर अब तक मानवीय मानसिक गतियों और प्रेम सम्बन्धी धारणाओं में बहुत से परिवर्तन हो चुके हैं—लेकिन, इसके बावजूद "मीर" ने अपने प्रेम-विषयक शेरों में अपने अन्दर की जो दाह और अपनी आत्मा की जो ज्वाला धधका रक्खी है वह हर युग में मानवीय मन को ऊष्मा और आर्द्रता प्रदान करती रहेगी। आज के प्रेमी की क्रिया–प्रतिक्रिया और सही—किन्तु वर्तमान युग में भी ऐसा कौन है जो "मीर" के ऐसे शेरों की मर्मभेदन की शक्ति (नश्तरियत) से अपने को बचा ले जाय ? :—

हुई ईद[1] सबने पहने तरब-ओ-ख़ुशी के जामे न हुआ कि हम भी बदलें ये लिबासे-सोगवारी[2]

दिल किस क़दर शिकस्ता हुआ था कि रात "मीर" जो बात लब पे आई सो फ़रियाद हो गई

चश्मे-ख़ूं-बस्ता[3] से कल रात लहू फिर टपका हमने जाना था कि बस अब तो यह नासूर[4] गया

दिल की बात कही नहीं जाती चुपके रहना ठाना है
हाल अगर है ऐसा ही; जी से जाना, जाना है

अब नाम तेरा लीजिए तब चश्म भर आवे इस जिन्दगी करने को कहाँ से जिगर आवे

ख़ाक में मिल के "मीर" हम समझे बेअदाई थी आसमां को अदा

बहुत आरज़ू थी गली की तेरी सो यां से लहू में नहा कर चले

"मीर" अपने उत्कृष्ट प्रेम-विषयक शेरों में साक्षात भावना लगते हैं। यहीं से यह विचार और विभ्रम दोनों जन्म लेते हैं कि उनकी शायरी पूर्णतया भावनाओं की शायरी है, चिन्तन की शायरी नहीं। इस विभ्रम का एक महत्त्वपूर्ण कारण यह भी है कि उनके यहाँ—अर्थात् "मीर" के यहाँ भावना और चिन्तन दोनों की धाराएं अलग-अलग बहती हैं। "ग़ालिब" की तरह उनके यहाँ भाव में चिन्तन का हाथ और चिन्तन

१. आमोद का एक पर्व। २. शोक-ग्रस्तों का पहनावा। ३. ख़ून जिस आँख में बँध-सा गया हो। ४. एक प्रकार का फोड़ा जो भीतर ही भीतर सालता रहता है और बहुत दिन तक लगा रहता है; दुस्साध्य माना जाता है।

تھی۔ ظاہر ہے کہ ایسا عشق یعنی اک دھوپ تھی جو ساتھ گئی آفتاب کے۔ میر کے زمانے سے لے کر اب تک انسان کی نفسیات اور عشق کے تصورات میں بہت سی تبدیلیاں آچکی ہیں۔ لیکن اس کے باوجود میر نے اپنے عشقیہ اشعار میں اپنے دل کا جو سوز اور اور اپنی روح کی جو آگ بھر دی ہے وہ ہر زمانے میں انسان کے دل کو گرماتی اور پگھلاتی رہے گی۔ آج کے عاشق کا طرز عمل اور ردعمل اور سہی لیکن دور حاضر میں بھی ایسا کون ہے جو میر کے ایسے اشعار کی تشریت سے اپنے آپ کو بچا لے جائے ؎

ہوئی عید سب نے پہنے طرب و خوشی کے جامے　　نہ ہوا کہ ہم بھی بدلیں یہ لباس سوگواراں

دل کس قدر شکستہ ہوا تھا کہ رات میر　　جو بات لب پہ آئی سو فریاد ہوگئی

چشم خوں بستہ سے کل رات لہو پھر ٹپکا　　ہم نے جانا تھا کہ بس اب تو یہ ناسور گیا

دل کی بات کہی نہیں جاتی چپکے رہنا ٹھانا ہے
حال اگر ہے ایسا ہی جی سے جانا جانا ہے

جب نام ترا لیجے تب چشم بھر آوے　　اس زندگی کرنے کو کہاں سے جگر آوے

خاک میں مل کے میر ہم سمجھے　　بے ادائی تھی آسماں کی ادا

بہت آرزو تھی گلی کی تری　　سو یاں سے لہو میں نہا کر چلے

میر اپنے بہترین عشقیہ اشعار میں سراپا جذبات نظر آتے ہیں۔ یہیں سے یہ خیال اور غلط خیال دونوں پیدا ہوتے ہیں کہ ان کی شاعری سرتا سر جذبے کی شاعری ہے فکر کی شاعری نہیں۔ اس غلط اندیشی کا ایک اہم سبب غالباً یہ بھی ہے کہ ان کے یہاں

में भावना का मिश्रण कम मिलता है किन्तु "मीर" का काव्य पूर्णतः चिन्तन के तत्वों से विहीन कदापि नहीं। इस सिलसिले में यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि उर्दू शायरी में चिन्तन और रुक कर सोच लेने की आवश्यकता पर "मीर" से अधिक ज़ोर देने वाला कोई और नहीं।

हर मुश्ते-ख़ाक[1] यां की, चाहे है इक तअम्मुल[2] बिन सोचे राह मत चल, हर गाम[3] पर खड़ा रह

———

चश्म हो तो आइनाख़ाना[4] है दह्‌र[5] मुंह नज़र आता है दीवारों के बीच

———

सरसरी तुम जहान से गुज़रे वरन हर जा जहाने-दीगर था

———

यह वस्तुतः, परिस्थितियों का क्रूर-विद्रूप है कि चिन्तन और गूढ़-निरीक्षण पर इतना आग्रह करने वाला शायर चिन्तन और निरीक्षण के इन्हीं गुणों से इस सीमा तक विहीन समझा गया। मेरे विचार से इस भ्रान्तिपूर्ण धारणा के मूल कारण दो ही हैं। एक तो "मीर" के काव्य का केवल प्रेम-काव्य समझा जाना दूसरे उनके प्रेम-विषयक शेरों का चिन्तन आदि के तत्वों से वस्तुतः बड़ी हद तक विहीन ही होना। "मीर" के यहाँ प्रेम-विषयक दार्शनिकता अथवा मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मताओं की गिरहें खोलने का कार्य लगभग न होने के बराबर है। जैसा कि ऊपर की पंक्ति में कहा जा चुका है उनका प्रेम-काव्य स्थिति का विवरण है, विश्लेषण नहीं। प्रेम उनके काव्य का केन्द्रीय विषय सही; किन्तु, उनकी शायरी केवल प्रेम की अनुभूतियों, प्रतीतियों और तजरुबों तक ही सीमित नहीं। उसमें जीवन के अन्य मामले और समस्याएँ भी अपने सम्पूर्ण वैविध्य-सहित आकर सम्मिश्रित हुए हैं। यदि विचार किया जाय तो उनकी शायरी की योजना तीन तत्वों के सम्मिश्रण से हुई है: (१) व्यक्तिगत प्रेम की त्रासदी (२) उनके युग की त्रासदी और (३) मानवीय जीवन की त्रासदी। इन विषयों को अभिव्यक्ति के लिए "मीर" ने क्रमशः भावना, निरीक्षण और चिन्तन से काम लिया। अपने प्रेम की त्रासदी को उन्होंने तीव्र भावनाओं के प्रवेग की भाषा में किस प्रकार अभिव्यक्त किया है उसके उदाहरण आप देख चुके हैं। युग की त्रासदी विषयक उनके कुछ निरीक्षणों के परिणाम निम्न प्रकार हैं:

१. मुट्ठी भर मिट्टी। २. ठहर कर विचार करना। ३. पग। ४. दर्पणों से सजा कर। ५. यह संसार।

جذبے اور فکر کے دھارے الگ الگ بہتے ہیں۔ غالب کی طرح ان کے یہاں جذبے میں فکر کی کار فرمائی اور فکر میں جذبے کی جلوہ آرائی کم ملتی ہے۔ لیکن میر کی شاعری فکری عناصر سے خالی ہرگز نہیں۔ اس سلسلے میں یہ بات خاص طور پر قابل لحاظ ہے کہ اردو شاعری میں فکر و تامل کی ضرورت پر میر سے زیادہ زور دینے والا اور کوئی نہیں ؎

چشم ہو تو آئینہ خانہ ہے دہر   بن سوچے راہ مت چل ہر گام پر کھڑا رہ

چشم ہو تو آئینہ خانہ ہے دہر   منہ نظر آتا ہے دیواروں کے بیچ

سرسری تم جہان سے گزرے   ورنہ ہر جا جہانِ دیگر تھا

یہ واقعی حالات کی ستم ظریفی ہے کہ فکر و مشاہدے پر اس قدر اصرار کرنے والا شاعر فکر و مشاہدے سے اس قدر معرا سمجھا گیا۔ میرے خیال میں اس غلط تاثر کی بنیادی وجہیں دو ہی ہیں۔ ایک تو میر کی شاعری کا محض عشقیہ شاعری سمجھا جانا۔ دوسرے ان کے عشقیہ اشعار کا فکر و تامل کے عناصر سے فی الواقع بڑی حد تک خالی ہونا۔ میر کے یہاں محبت سے متعلق فلسفہ آرائی یا نفسیاتی موشگافی تقریباً نہ ہونے کے برابر ہے جیسا کہ اوپر کی سطروں میں کہا جا چکا ہے۔ ان کی عشقیہ شاعری بیان حال ہے نہ کہ تجزیہ حال۔ عشق ان کی شاعری کا مرکزی موضوع سہی لیکن ان کی شاعری صرف عشق کے جذبات و تجربات تک محدود نہیں۔ اس میں زندگی کے دوسرے معاملات و مسائل اپنی تمام رنگا رنگی کے ساتھ موجود ہیں۔ اگر غور کیا جائے تو ان کی شاعری کے اجزائے ترکیبی تین ہیں۔ (۱) ذاتی محبت کا المیہ (۲) ان کے زمانے کا المیہ اور (۳) انسانی زندگی کا المیہ۔ ان موضوعات سے عہدہ برآ ہونے کے لیے میر نے حسب ترتیب جذبے، مشاہدے اور تفکر سے کام لیا۔ اپنی محبت کے المیے کو انھوں نے شدید جذبات کی زبان میں جس طرح بیان کیا ہے اس کی مثالیں آپ دیکھ چکے۔ اپنے زمانے کے المیے سے متعلق ان کے چند مشاہدات یہ ہیں ؎

कैसी-कैसी सुहबतें[1] आँखों के आगे से गईं   देखते ही देखते क्या हो गया यकबारगी

दिल्ली के न थे कूचे औराक़े-मुसव्विर[2] थे   जो शक्ल नज़र आई तस्वीर नज़र आई

जहाँ अब ख़ारज़ारें[3] हो गई हैं   यहीं आगे बहारें[4] हो गई हैं

जिस जा कि ख़स-ो-ख़ार[5] के अब ढेर लगे हैं   वाँ हमने इन्हीं आँखों से देखी हैं बहारें

शहाँ कि कुहले-जवाहर थी ख़ाके-पा जिनकी   उन्हीं की आँखों में फिरती सलाइयाँ देखीं

जिन बलाओं को "मीर" सुनते थे   उनको इस रोज़गार में देखा

क़बा-ए-लाला-व-गुल[6] में झलक रही थी ख़िज़ाँ   भरी बहार में रोया किये बहार को हम

"मीर"-काव्य का चिन्तन-तत्त्व मानवीय जीवन की त्रासदी की अभिव्यक्ति के समय सक्रिय हुआ है। इसी विषय के कारण उन्होंने जीवन की महती समस्याओं का सामना किया। जैसे—मानव का तथ्य, जगत की वास्तविकता और इसके तत्त्व, मानव और ईश्वर के बीच का सम्बन्ध और उस सम्बन्ध की क़िस्म, मानव की विवशता और बेचारगी, मानव की महानता और उसकी स्वेच्छा का अर्थ, सृष्टि में मानव का स्थान, जीवन की अस्थिरता और अनिश्चितता, जीवन का उद्देश्य और उसकी सार्थकता—न यह प्रश्न नये हैं न "मीर" के उत्तर, किन्तु यह प्रश्न हर युग के सम्वेदनशील और परिपक्व दृष्टि-बुद्धि वाले लोगों के लिए विचार की प्रेरणा अवश्य रहे हैं। इन समस्याओं पर विचार करने वाले या तो अपने युग में प्रचलित दृष्टिकोणों में से किसी एक को अपना लेते हैं या किसी नये दृष्टिकोण का उपयोग कर किसी नवीन जीवन-दर्शन की स्थापना कर देते हैं। "मीर" के युग तक इन प्रश्नों के सम्बन्ध में सूफ़ियों का दृष्टिकोण बहुत ही लोकप्रिय था। "मीर" पर भी स्पष्ट रूप से इसी दर्शन का प्रभाव है। इसका अर्थ यह है कि "मीर" के यहाँ तसव्वुफ़ चिन्तन के मार्ग से आया है न कि आध्यात्मिक प्रतीति के मार्ग से।

१. संगतियाँ, साथ। २. चित्रित पन्ने। चित्र की विशेषता यह समझी जाती थी कि वास्तव में चाहे सौन्दर्य असन्तुलित ही हो किन्तु चित्र का नख-शिख सब सजा हुआ, सुधारा हुआ ही होता है। ३. काँटों के वन, जहाँ काँटे ही काँटे हों। ४. केवल बसन्त-ऋतु ही नहीं; मनोरमता, आकर्षण, सौन्दर्य और जीवन का उल्लास—सर्वस्व जहाँ सिमटा हुआ हो। ५. व्यर्थ तृण और काँटे। ६. पुष्पों के परिधान।

کیسی کیسی صحبتیں آنکھوں کے آگے سے گئیں　　دیکھتے ہی دیکھتے کیا ہو گیا یک بار گی

دلّی کے نہ تھے کوچے اوراق مصوّر تھے　　جو شکل نظر آئی تصویر نظر آئی

جہاں اب خار زاریں ہو گئی ہیں　　وہیں آگے بہاریں ہو گئی ہیں

جس جا کہ خس و خار کے اب ڈھیر لگے ہیں　　واں ہم نے انھیں آنکھوں سے دیکھی ہیں بہاریں

شہاں کہ کحلِ جواہر تھی خاکِ پا جن کی　　انھیں کی آنکھوں میں پھرتی سلائیاں دیکھیں

جن بلادوں کو میرؔ سنتے تھے　　ان کو اس روزگار میں دیکھا

قبائے لالہ و گل میں جھلک رہی تھی خزاں　　بھری بہار میں رویا کیے ہیں بہار کو ہم

میرؔ کی شاعری کا فکری عنصر انسانی زندگی کے المیے کو بیان کرنے میں نمایاں ہوا ہے اسی موضوع کی بہ دولت وہ زندگی کے عظیم سوالوں سے دو چار ہوے ہیں۔ مثلاً انسان کی حقیقت۔ کائنات کی ماہیت۔ انسان اور خدا کے باہمی رشتے کی نوعیت۔ انسان کی مجبوری و بے چارگی۔ انسان کی عظمت و خود مختاری۔ کائنات میں انسان کا مقام۔ زندگی کی بے ثباتی و بے یقینی۔ زندگی کا مقصد اور اس کی معنویت۔ نہ یہ سوالات نئے ہیں نہ میرؔ کے جوابات نئے۔ لیکن یہ سوالات ہر زمانے کے حساس اور بالغ نظر لوگوں کے لیے دعوت فکر ضرور رہے ہیں۔ ان مسائل پر غور کرنے والے یا تو اپنے زمانے کے مروجہ نقطہ ہاے نظر میں سے کسی ایک نقطۂ نظر کو اپنا لیتے ہیں یا کسی نئے نقطۂ نظر سے کام لے کر کسی نئے فلسفۂ حیات کی بنیاد ڈال دیتے ہیں۔ میرؔ کے زمانے تک ان مسائل کے معاملے میں صوفیانہ انداز نظر بہت مقبول تھا۔ میرؔ پر اس انداز نظر کی گرفت واضح ہے۔ اس کے معنی یہ ہوے کہ میرؔ کے یہاں تصوف تفکر کے

"मीर" के बाप एक सूफ़ी थे और जब उन्होंने "मीर" को प्रेम का उपदेश दिया था तो निश्चय ही उनका प्रयोजन इसी सूफ़ियाना प्रेम की प्रेरणा देना था। किन्तु "मीर" ने तसव्वुफ़ के मैदान में कभी क़दम नहीं रक्खा। उनका तसव्वुफ़ से बस इतना ही-सा सम्बन्ध मानवीय जीवन के दार्शनिक पक्ष से है। इस दृष्टि से यह कहना ग़लत न होगा कि "मीर" के यहाँ तसव्वुफ़ केवल एक परम्परा नहीं बल्कि जीवन की मौलिक समस्याओं की ओर उनके विशिष्ट मानसिक रवैये का प्रमाण है। उन्होंने मानवीय जीवन की मूलभूत समस्याओं और उसके तथ्यों के विषय में जो कुछ कहा है उसमें दृष्टिकोण में ताज़ापन न होने पर भी निजी चिन्तन या निजी विश्वास की गर्मी अवश्य पाई जाती है। जैसे :

नाहक़ हम मजबूरों पर ये तुहमत[1] है मुख़्तारी[2] की
चाहते हैं सो आप करे हैं हमको अबस[3] बदनाम किया

मुंह न हम जबरियों[4] का खुलवाओ कहने का अख़्तियार-सा है कुछ

मत सहल हमें जानो, फ़िरता है फ़लक बरसों तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलते हैं

हैं मुश्ते-ख़ाक लेकिन, जो कुछ है "मीर" हम हैं मक़दूर[5] से ज़्यादा, मक़दूर है हमारा

"मीर" के काव्य में चिन्तन-तत्त्व का अस्तित्व स्वीकार करने के बावजूद यह स्वीकार करना आवश्यक है कि उनके यहाँ न तो "दर्द" के जैसा चिन्तन का दुस्साहस पाया जाता है न "ग़ालिब" जैसी चिन्तन की चपलता। "इक़बाल" जैसी चिन्तन की सुव्यवस्था का तो प्रश्न ही नहीं उठता। "दर्द" के चिन्तन के दुस्साहस की चर्चा सम्भव है आपके लिए चकित कर देने वाली हो। वस्तुतः यह खोज मेरे लिए भी कुछ कम विचित्र न थी कि "दर्द" सूफ़ी होने के बावजूद इस अस्तित्वमय-संसार के विषय में कहीं-कहीं या कभी-कभार ऐसी बातें भी कह जाते हैं जिसकी आशा किसी सूफी से नहीं रक्खी जाती। जैसे कि :—

जो ख़राबी कि "दर्द" यां फैली दस्ते-क़ुदरत से कब सिमटती है ?

---

१. (झूठा) अभियोग। २. अधिकार-स्वतन्त्रता। ३. व्यर्थ ही, अनायास। ४. बलात् विधि-वश पड़े हुये लोगों। ५. पहली बार "बिसात" अथवा "सीमा" के अर्थ में है दूसरी बार "सामर्थ्य" के अर्थ में।
अर्थ यह है कि संसार में दोष और विकार भी जितने फैले हुए दिखाई देते हैं यह भी इतने गहरे जमे हुए हैं कि न तो स्वयं प्रकृति ही उनका मूलोच्छेद कर इनके उत्तरोत्तर विकास और अभिवर्द्धन को रोकती है न यह दुष्कर कार्य किसी अधिकतम अधिकार-सम्पन्न से ही बन पड़ता है।

راستے سے آیا ہے نہ کہ روحانی تجربے کے راستے سے۔ میرؔ کے باپ صوفی منش انسان تھے اور جب انھوں نے میرؔ کو عشق کرنے کی تلقین کی تھی تو ان کی مراد یقیناً متصوفانہ عشق سے تھی۔ لیکن میرؔ نے تصوّف کے میدان میں کبھی قدم نہیں رکھا۔ ان کا تصوّف سے اسی حد تک تعلق رہا جس حد تک تصوّف انسانی زندگی کے فلسفے سے تعلق رکھتا ہے۔ اس لحاظ سے یہ کہنا غلط نہ ہوگا کہ میرؔ کے یہاں تصوّف محض ایک روایت نہیں بلکہ زندگی کے بنیادی مسئلوں کی طرف ایک ذہنی رویے کا ترجمان ہے۔ انھوں نے حیات انسانی کے بنیادی حقائق اور مسائل کے بارے میں جو کچھ کہا ہے اس میں نقطۂ نظر کی تازگی نہ ہونے کے باوجود ذاتی غور و فکر یا ذاتی عقیدے کی گرمی ضرور پائی جاتی ہے مثلاً ؎

ناحق ہم مجبوروں پر یہ تہمت ہے مختاری کی
چاہتے ہیں سو آپ کریں ہیں ہم کو عبث بدنام کیا

منہ نہ ہم جبریوں کا کھلواؤ کہنے کو اختیار سا ہے کچھ

مت سہل ہمیں جانو پھرتا ہے فلک برسوں تب خاک کے پردے سے انسان نکلتے ہیں

ہیں مشتِ خاک لیکن جو کچھ ہیں میرؔ ہم ہیں مقدور سے زیادہ مقدور ہے ہمارا

میرؔ کی شاعری میں فکری عنصر کی موجودگی تسلیم کرنے کے باوجود یہ اعتراف ضروری ہے کہ ان کے یہاں نہ تو دردؔ کی جرأت فکر پائی جاتی ہے نہ غالبؔ کی سی شوخیٔ فکر۔ اقبالؔ کی سی فکری تنظیم کا تو سوال ہی پیدا نہیں ہوتا۔ دردؔ کی جرأت فکر کا ذکر ممکن ہے آپ کے لیے حیرت انگیز ہو۔ دراصل یہ دریافت خود میرے لیے کچھ کم حیرت انگیز نہ تھی کہ دردؔ صوفی ہونے کے باوجود کارگاہِ ہستی کے بارے میں کہیں کہیں۔ یا کبھی کبھار سہی ایسی باتیں کہہ جاتے ہیں جن کی توقع کسی صوفی سے نہیں کی جا سکتی مثلاً ؎

جو خرابی کہ دردیاں پھیلی + دستِ قدرت سے کب سمٹتی ہے

इस हस्ति-ए-ख़राब से क्या काम था हमें ऐ नश्श-ए-ज़हूर ये तेरी तुरंग है[*]

आलम हो क़दीम ख़्वाह हादिस जिस दम नहीं हम जहाँ नहीं है+

"मीर' का विख्यात शेर है :—

"मर्ग[1] इक माँदगी[2] का वक़्फ़ा[3] है यानी आगे चलेंगे दम लेकर"

मेरा विचार है कि यद्यपि अब तक "मीर" का यह शेर "दर्द" के उपरोक्त अन्तिम शेर से अधिक ख्यात और लोकप्रिय रहा है किन्तु आधुनिक और भावी बौद्धिक-स्तर के लिए जो आकर्षण "दर्द" के शेर में है वह "मीर" के शेर में नहीं। एक ज़माने में "दर्द" को "मीर" का समकक्ष निर्धारित करना उर्दू आलोचना की परिपाटी हो गई थी। मेरे विचार से समग्र रूप से "दर्द" "मीर" के पूर्णतः समकक्ष तो नहीं हैं किन्तु इन दोनों का तुलनात्मक अध्ययन अब भी दृष्टिसम्पन्न लोगों के लिए विचारणीय तो है ही।

यूँ तो "मीर" मानव-जाति की महिमा को इस सीमा तक मानते हैं कि वे फ़रिश्तों को भी मनुष्य से निम्नतर समझते हैं किन्तु उन्हें इस दुनिया में सबसे अधिक जिस चीज़ की कमी खटकती है वह "मानव" की ही कमी है :

इस बुतकदे[4] में मानी[5] का किससे करें सवाल ? आदम नहीं है सूरते-आदम[6] बहुत है याँ

ख़ुदा-साज़[7] था आज़रे-बुत-तराश[8] हम अपने तईं आदमी तो बनायें

यहाँ स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि "मीर" के यहाँ वस्तुतः 'मानव' का परिमाण (और तार्किक शब्दावली में 'लक्षण') क्या है ?—इस प्रश्न का उत्तर "मीर" के इन शेरों से निकाला जा सकता है :

[*] कहना यह चाहते हैं कि इस दूषित, जरा-रोग आदि तापों से युक्त अस्तित्व-लोक में अपने आप आने का भला हमें क्या प्रयोजन था ? यह तो स्वयं अस्तित्व की मूल-सत्ता, निराकार ब्रह्म की साकार बनने की अभिलाषा का मद था (इसीलिए साकार होने के मद "नश्श-ए-ज़हूर" को सम्बोधित करके कहा है कि यह तो तेरी तुरङ्ग है ! "तुरङ्ग" को हिन्दी में "नशे की तरंग" कहा जाता है !)। + हमारी यह संसृति शाश्वत हो चाहे नश्वर, हमारे चैतन्य का लोप होते ही संसृति के इस इन्द्रियगम्य बोध का भी लोप हो जायगा। अर्थात् जब हम न होंगे तो हमारे लिए इस निखिल ब्रह्माण्डों वाले अस्तित्वमान जगत का भी लोप हो जायगा। १. मरण। २. विश्रांति। ३. अन्तराल। ४. मूर्तियों का स्थान (व्यंग्यार्थ=जड़ लोक)। ५. अर्थ, गुण। ६. मानव-सदृश आकृति। ७. ईश्वर बनाने वाला। ८. मूर्तिकार आज़र को सामान्यतः कोई सम्मान नहीं दिया जाता। किन्तु "मीर" जो कह रहे हैं कि जड़ प्रस्तर में भगवद्-स्थापना कर मूर्तिकार भगवान बनाया करता था—हम अपने चेतन अस्तित्व में स्वाभाविक गुणों की स्थापना तक नहीं कर पाते !

اس ہستیِ خواب سے کیا کام تھا ہمیں اے نشۂ ظہور یہ تیری ترنگ ہے

عالم ہو قدیم خواہ حادث جس دم نہیں ہم جہاں نہیں ہے

میرؔ کا مشہور شعر ہے ؎

مرگ اک ماندگی کا وقفہ ہے یعنی آگے چلیں گے دم لے کر

میرا خیال ہے کہ اگرچہ اب تک میرؔ کا یہ شعر دردؔ کے مندرجہ بالا آخری شعر سے زیادہ مشہور و مقبول رہا ہے لیکن جدید ذہن اور آیندہ ذہن کے لیے جو دل کشی دردؔ کے شعر میں ہے وہ میرؔ کے شعر میں نہیں۔ ایک زمانے میں دردؔ کو میرؔ کا ہم سر قرار دینا اردو تنقید کا شیوہ ہوگیا تھا۔ میرے نزدیک مجموعی طور پر دردؔ میرؔ کے ہمسر تو نہیں ہیں لیکن ان دونوں کا تقابلی مطالعہ اب بھی ارباب نظر کی توجہ کا محتاج ہے

یوں تو میرؔ انسان کی عظمت کے اس حد تک قائل ہیں کہ وہ فرشتوں کو بھی انسان سے فروتر سمجھتے ہیں۔ لیکن انھیں اس دنیا میں سب سے زیادہ جس چیز کی کمی محسوس ہوتی ہے وہ انسان ہی کی کمی ہے ؎

اس بُت کدے میں معنی کا کس سے کریں سوال
آدم نہیں ہے صورتِ آدم بہت ہے یاں

خدا ساز تھا آذر بت تراش
ہم اپنے تئیں آدمی تو بنائیں

یہاں قدرتی طور پر سوال پیدا ہوتا ہے کہ میرؔ کے نزدیک صحیح انسان کا معیار کیا ہے۔ میرؔ کے ان اشعار سے اس سوال کا جواب اخذ کیا جا سکتا ہے ؎

ملیئے اس شخص سے جو آدم ہووے ٭ ناز اس کو کمال پر بہت کم ہووے
ہو گرم سخن تو گرد آوے اک خلق ٭ خاموش ہو تو ایک عالم ہووے

मिलिये उस शख़्स से जो आदम होवे नाज़ उसको कमाल[1] पर बहुत कम होवे
हो गर्म-सुख़न[2] तो गिर्द[3] आवे इक ख़ल्क़[4] ख़ामोश हो तो एक आलम[5] होवे

काबे[6] सौ बार वह गया तो क्या जिसने याँ एक दिल में राह न की

इसी लोक को स्वर्ग बनाने के लिए मानव को—मानवीयता की इसी कसौटी पर खरा उतरना पड़ेगा ! चाहे यह काम मानवीय-इतिहास की जिस शताब्दि में भी हो !

जो न होवे नमाज़ करिये न्याज़ आदमी चाहिये करे कुछ तो !

यद्यपि इस शेर में उन्होंने "न्याज़" का स्थान "नमाज़" के बाद रक्खा है किन्तु शेर की व्यञ्जना स्पष्ट कह रही है कि "मीर" नमाज़ के उतने क़ायल नहीं जितने न्याज़ के। इसलिए मानव को "मानव" बनाने वाली वस्तु न्याज़ है न कि नमाज। यदि संसार के विभिन्न राष्ट्र—विभिन्न जातियाँ इस बात को समझ जाते तो आज दुनिया का इतिहास कुछ और होता।

"मीर" की शायरी का चिन्तन-प्रधान अंश पाठक में जीवन के दुःखमय होने और फिर भी अनिश्चयात्मक ही बने रहने की तीव्र और भयावह अनुभूति जगाने के बावजूद उसे जीवन की उपेक्षा करना, इसे हेय समझना नहीं सिखाता। "मीर" दो बातों पर बहुत बल देते दिखाई देते हैं—एक तो यह—कि, मानव वास्तविक अर्थ में "मानव" बने—दूसरे यह—कि, इस संक्षिप्त जीवनावधि में ही कुछ ऐसा कर जाय जो उसे मरने के बाद भी जीवित रख सके :

चारे[7] दुनिया में रहो ग़मज़दा[8] या शाद[9] रहो ऐसा कुछ करके चलो याँ कि बहुत याद रहो

फ़ुरसते-बूद-ो-बाश[10] याँ कम है काम जो कुछ करो शिताब[11] करो

ग़ैरते-यूसुफ़[12] है यह वक़्ते-अज़ीज़[13] "मीर" इसको रायगाँ[14] खोता है क्या

"मीर" को समय की बहुमूल्यता और बीत जाने की बड़ी गहरी प्रतीति है। उन्होंने वर्तमान युग के कुछ साहित्यिकों और कवियों की तरह काल विषयक कोई

१. गुण, दक्षता। २. बोलने लगे। ३. चारों ओर। ४. लोक। ५. अपने आप में ही एक विशिष्ट स्थिति—एक लोक। ६. (लक्ष्यार्थ=) तीर्थ। ७. महत्त्व इसका है कि। ८. वेदनाग्रस्त। ९. प्रसन्न। १०. वास-निवास-प्रवास। ११. शीघ्र। १२. यूसुफ़ नाम के एक पैग़म्बर जो वस्तुतः अत्यन्त सम्माननीय व्यक्ति थे किन्तु मिस्र के बाजार में कौड़ियों के मोल बिक गए थे, समय उनसे भी अधिक मूल्यवान है। १३. अत्यन्त मूल्यवान समय। १४. व्यर्थ, निष्फल।

کعبے سو بار وہ گیا تو کیا جس نے یاں ایک دل میں راہ نہ کی

اس دنیا کو جنت بنانے کے لیے انسان کو انسانیت کے اسی معیار پر پورا اترنا ہوگا خواہ یہ کام انسانی تاریخ کی جس صدی میں بھی ہو۔ میر کا ایک شعر ہے ؎

جو نہ ہووے ناز کریئے نیاز ۔ آدمی چاہیے کرے کچھ تو

اگرچہ اس شعر میں انھوں نے "نیاز" کو 'ناز' کے بعد جگہ دی ہے۔ لیکن شعر کے لہجۂ خفی سے ظاہر ہے کہ میر ناز کے اتنے قائل نہیں جتنے نیاز کے۔ اس لیے کہ انسان کو انسان بنانے والی چیز نیاز ہے نہ کہ ناز۔ اگر دنیا کی قومیں اس بات کو سمجھ جاتیں تو آج دنیا کی تاریخ کچھ اور ہوتی

میر کی شاعری کا فکری حصہ پڑھنے والے کے اندر زندگی کی غم ناکی اور بےیقینی کا شدید احساس پیدا کرنے کے باوجود اسے زندگی کی ناقدری نہیں سکھاتا۔ میر دو باتوں پر بہت زور دیتے نظر آتے ہیں۔ ایک تو یہ کہ انسان صحیح معنی میں انسان بنے۔ دوسرے یہ کہ اس مختصر سی زندگی میں کوئی ایسا کام کر جائے جو اسے مرنے کے بعد بھی زندہ رکھ سکے ؎

بارے دنیا میں رہو غم زدہ یا شاد رہو ایسا کچھ کرکے چلو یاں کہ بہت یاد رہو

فرصتِ بود و باش یاں کم ہے کام جو کچھ کرو شتاب کرو

غیرتِ یوسف ہے یہ وقتِ عزیز
میر اس کو رائگاں کھوتا ہے کیا

میر کو وقت کی گراں مائگی اور گریز پائی کا بڑا شدید احساس ہے۔ انھوں نے دورِ حاضر کے بعض ادیبوں اور شاعروں کی طرح وقت کے متعلق کوئی فلسفہ تو پیش نہیں کیا لیکن انھوں نے اس احساس کو عام کرنے کی کوشش ضرور کی کہ وقت عین زندگی ہے اور زندگی کا خاتمہ بھی۔ اس لیے آدمی کو جو کچھ کرنا ہے

दर्शन तो प्रस्तुत नहीं किया किन्तु उन्होंने इस प्रतीति को सर्वसामान्य के लिए ग्राह्य बनाकर प्रचारित करने का अवश्य प्रयास किया है कि समय ही जीवन है और जीवन का अन्त भी। इसलिए आदमी को जो कुछ करना है शीघ्रातिशीघ्र कर लेना चाहिए। मानवीय जीवन की क्षण-भंगुरता और अनिश्चितता के साथ मानवीय कर्मों का जो रिश्ता "मीर" की शायरी में दिखाई देता है उसने आगे चलकर "इक़बाल" के यहां भी बड़ी सुन्दर और प्रभावकारी अभिव्यक्ति पाई है :—

है मगर फ़ुरसते-किरदार नफ़स या दो नफ़स   एवज़े यक दो नफ़स क़ब्र की शबहाय दराज़ ◘

"इक़बाल" तो ख़ैर, 'कर्म के कवि' ही कहलाते हैं। यहां देखने की चीज़ यह है कि "मीर" की शायरी "दिल व दिल्ली"—या व्यष्टि और समष्टि का मर्सिया होने के बावजूद हमें सम्वेदनशून्यता, अकर्मण्यता और निष्क्रियता की जड़ताओं की ओर नहीं ले जाती। उनके यहां कर्म की स्फूर्ति और तज्जनित आनन्द की अनुभूति न सही किन्तु कर्म-प्रवृत्त रहने की आवश्यकता पर आग्रह अवश्य है। "मीर" ने अपनी शायरी में न दार्शनिक बनने का प्रयत्न किया न धर्म-संस्थापक किन्तु उनके यहां जीवन के श्रेष्ठ मूल्यों का तात्त्विक-ज्ञान और उनका सत्यापन अवश्य मिलता है। उनकी शायरी ज़ख़्म खाये हुए दिलों के लिए मरहम भी है और जीवन के अन्धकार में खो जाने वालों के लिए प्रकाश-स्तम्भ भी।

"मीर" की शायरी में एक महान कवि के और भी कई लक्षण मिलते हैं। "असर" लखनवी ने एक जगह लिखा है : "उर्दू में क्या 'फ़ार्म' (रचना का कला-पक्ष) क्या 'कण्टेण्ट' (कथ्य–रचना का अर्थ-पक्ष) दोनों की दृष्टि से केवल दो मौलिक एवं पूर्णतः समर्थ कवि हुए—'मीर' और 'इन्शा'। शेष जितने शायर हैं वह सब 'मीर' में समाए हुए हैं और हर रंग, चाहे वह अब जिस-जिसका क्यों न समझा जाता हो वह चोखे से चोखा 'मीर' के यहां मौजूद है।" यह राय शत-प्रतिशत तो ठीक नहीं किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि "मीर" उर्दू के दो-चार GERMINAL (बीज के गुण रखने वाले) शायरों में से हैं। उनकी शायरी में भाषा, अभिव्यञ्जना और विचार की कितनी ही सम्भावनाएं ऐसी थीं जिनसे बाद के शायरों ने लाभ उठाया और अभी तक उठा रहे हैं। जहां तक भाषा का सम्बन्ध है उनकी इस हैसियत से किसी को इंकार नहीं कि वे उर्दू के तीन-चार निर्माताओं में से एक हैं। उन्होंने अरबी और फ़ारसी के सैकड़ों शब्दों और शब्द-योजनाओं को उर्दू की सम्पत्ति बना

◘ कर्म का अवकाश यदि है भी तो एक या दो सांस भर, और इन एक या दो सांसों का बदला कब्र की बहुत लम्बी रातें।

جلد سے جلد کرلینا چاہیے ۔ انسانی زندگی کی بے ثباتی اور بے یقینی کے ساتھ انسانی عمل کا جو رشتہ میر کی شاعری میں نظر آتا ہے اس نے آگے چل کر اقبال کے یہاں بھی بڑا خوبصورت اور موثر اظہار پایا ہے ؎

ہے مگر فرصتِ کردارِ نفس یا دو نفس
عوض یک دو نفس قبر کی شب ہائے دراز

اقبال تو خیر عمل کے شاعر ہی کہلاتے ہیں ۔ یہاں دیکھنے کی چیز یہ ہے کہ میر کی شاعری دل و دلی یا ذات و کائنات کا مرثیہ ہونے کے باوجود ہمیں بے حسی، بے عملی اور مجہولیت کی طرف نہیں لے جاتی ۔ ان کے یہاں نشاط عمل کا احساس نہ سہی ضرورت عمل پر اصرار ضرور ہے ۔ میر نے اپنی شاعری میں نہ فلسفی بننے کی کوشش کی نہ پیغمبر۔ لیکن ان کے یہاں زندگی کی اعلیٰ قدروں کا عرفان اور اثبات ضرور ملتا ہے ۔ ان کی شاعری زخم خوردہ دلوں کے لیے مرہم بھی ہے اور زندگی کی تاریکی میں کھو جانے والوں کے لیے مشعل بھی

میر کی شاعری میں ایک عظیم شاعر کی اور بھی کئی خصوصیتیں ملتی ہیں ۔ آثر لکھنوی نے ایک جگہ لکھا ہے کہ " اردو میں کیا بہ لحاظ ہیئت اور کیا بہ لحاظ معنی صرف دو صاحب طرز شاعر ہوے ۔ میر اور انشا ۔ باقی جتنے شاعر ہیں وہ سب میر میں سمائے ہوے ہیں اور جو رنگ جس سے منسوب کیا جاتا ہے وہ چوکھے سے چوکھا میر کے یہاں موجود ہے"۔ یہ رائے سو فی صدی درست تو نہیں ہے لیکن اس میں شک نہیں کہ میر اردو کے دو چار GERMINAL شاعروں میں سے ہیں ۔ ان کی شاعری میں زبان بیان اور خیال کے کتنے ہی امکانات ایسے تھے جن سے بعد کے شاعروں نے فائدہ اٹھایا اور ابھی تک اٹھا رہے ہیں ۔ جہاں تک زبان کا تعلق ہے ان کی اس حیثیت سے کسی کو انکار نہیں کہ وہ اردو زبان کے تین چار معماروں میں سے ہیں ۔ انھوں نے عربی اور فارسی کے صدہا الفاظ و تراکیب کو اردو کی ملکیت بنا دیا۔ آثر لکھنوی کا یہ دعویٰ غلط نہیں کہ بہت سی ترکیبیں جن کے وضع کرنے کا سہرا غالب کے سر باندھا

दिया। "असर" लखनवी का यह दावा ग़लत नहीं कि बहुत सी शब्द-योजनाएं जिनके गठन का श्रेय "ग़ालिब" को दिया गया है "मीर" ही का कृतित्व हैं। भाषा के मामले में उनकी यह विशेषता आज तक उनसे न छिन सकी कि ग़ज़ल में उनसे अधिक शब्द और किसी ने प्रयोग नहीं किये। उर्दू शायरों में अब तक "नज़ीर" अकबराबादी का शब्द-भण्डार सबसे विस्तृत माना जाता है लेकिन मेरा विचार है कि ग़ज़ल की नाज़ुक शायरी में "नज़ीर" ने भी उतने और वैसे शब्द न खपाए होंगे जितने और जैसे शब्द "मीर" ने खपा दिये। "मीर" की भाषा के बहुत से शब्दों का अव्यवहृत और अर्द्ध-व्यवहृत होना प्रमाणित—किन्तु शायरी; विशेषतः ग़ज़ल में विभिन्न ध्वनियों और स्वभावों के शब्दों का प्रयोग सीखने वाले "मीर" से अच्छा मार्गप्रदर्शक पाने की आशा नहीं कर सकते। उन्होंने अरबी और फ़ारसी शब्दों और शब्द-योजनाओं के अतिरिक्त हिन्दी के मधुर और कोमल शब्दों को ग़ज़ल में जिस कलापूर्ण ढंग से प्रयोग किया है वह उनकी विशेषता का एक ऐसा रुख़ है कि उससे वर्तमान और भविष्य के शायरों को बहुत कुछ सीखना है। ज़रा "मीर" के इन मिसरों को देखिये और सोचिये कि इस समय उर्दू का कौन-सा शायर है जो उर्दू की भाषागत विशेषताओं और ग़ज़ल के मूल-तत्त्व को सुरक्षित रखते हुए हिन्दी शब्दों को इस ख़ूबसूरती से इस्तेमाल कर रहा है ?

१. जैसे किसू का कोई नगर हो लुटा हुआ
२. अजब नहीं है न जाने जो "मीर" चाह की रीत
३. बिन आज का भी सांझ हुआ इन्तज़ार में
४. "मीर" क्यों रहते हैं अक्सर अनमने
५. अच्छर[1] तो हैं इश्क़ के दो ही लेकिन है बिस्तार[2] बहुत
६. मैं वो निहाल[3] था कि उगा और जल गया

"मीर" की शायरी में विभिन्न शैलियां भी समाविष्ट हैं। सामान्य रूप से "मीर" की शैली सादी भाषा और धीमे स्वर से युक्त समझी जाती है किन्तु "मीर" की एक शैली वह भी है जिसमें सादी भाषा के स्थान पर अरबी और फ़ारसी की मधुर शब्द-योजनाएं प्रयुक्त हुई हैं और स्वर में धीमेपन के स्थान पर एक प्रकार के ओज से काम लिया गया है :

दिल इश्क़ का हमेशा हरीफ़े-नबर्द[4] था अब जिस जगह कि दाग़ है यां आगे दर्द था

———

कुछ न देखा फिर बजुज़[5] यक शोल-ए-पुरपेच-ओ-ताब[6]
शम्अ तक तो हमने देखा था कि परवाना गया

१. अक्षर २. विस्तार ३. पौधा ४. सामना करने को तैयार ५. इसके अतिरिक्त कि ६. लहराती, बलखाती ज्वाला।

گیا ہے میرؔ کی رہین منت ہیں ۔ زبان کے معاملے میں ان کا یہ امتیاز آج تک ان سے نہ چھن سکا کہ غزل میں ان سے زیادہ الفاظ کسی اور نے استعمال نہیں کیے ۔ اور شاعروں میں اب تک نظیرؔ کا ذخیرۂ الفاظ سب سے وسیع مانا جاتا ہے ۔ لیکن میرا خیال ہے کہ غزل کی نازک طبع شاعری میں نظیرؔ نے بھی اتنے اور ویسے الفاظ نہ کھپائے ہوں گے جتنے اور جیسے الفاظ میرؔ نے کھپا دیے ۔ میرؔ کی زبان کے بہت سے الفاظ کا متروک و نیم متروک ہونا مسلم لیکن شاعری بالخصوص غزل میں مختلف قماش کے الفاظ کا استعمال سیکھنے والے میرؔ سے بہتر رہ نما پانے کی توقع نہیں کرسکتے ۔ انھوں نے عربی اور فارسی الفاظ وتراکیب کے علاوہ ہندی کے نرم وشیریں الفاظ کو غزل میں جس فن کارانہ طور پر استعمال کیا ہے وہ ان کے کمال کا ایک ایسا رُخ ہے جس سے موجودہ اور آیندہ دور کے شاعروں کو بہت کچھ سیکھنا ہے ۔ ذرا میرؔ کے ان مصرعوں کو دیکھیے اور سوچیے کہ اس وقت اردو کا کون شاعر ہے جو اردو کی اردوئیت اور غزل کی غزلیت کو برقرار رکھتے ہوئے ہندی الفاظ کو اس خوبصورتی سے استعمال کر رہا ہے ؎

ع جیسے کسو کا کوئی نگر ہو لٹا ہوا
ع عجب نہیں ہے نہ جانے جو میرؔ چاہ کی ریت
ع دن آج کا بھی سانجھ ہوا انتظار میں
ع میرؔ کیوں رہتے ہیں اُنثر اتنے
ع اچھر تو ہیں عشق کے دو ہی لیکن ہے بستار بہت
ع میں وہ نہال تھا کہ اُگا اور جل گیا

میرؔ کی شاعری مختلف اسالیب کا بھی مخزن ہے ۔ عام طور پر طرز میرؔ سادہ زبان اور دھیمے لہجے سے عبارت سمجھا جاتا ہے لیکن میرؔ کا ایک اسلوب وہ بھی ہے جس میں سادہ زبان کے بجائے عربی اور فارسی کی خوشگوار ترکیبیں استعمال کی گئی ہیں اور لہجے میں دھیمے پن کے بجائے ایک قسم کے جوش وخروش سے کام لیا گیا ہے ؎

دل عشق کا ہمیشہ حریف نبرد تھا
اب جس جگہ کہ داغ ہے یاں آگے درد تھا

"मीर" ने छोटे और लम्बे छन्दों को भी इस ढंग से प्रयोग किया है कि इनसे "मीर" की दो शैलियाँ पैदा हो गई हैं। वर्तमान काल के कुछ शायरों की "मीर" भक्ति उनके छोटे छन्दों के प्रयोग में झलकती है (जैसे "नासिर" काज़िमी और "मुहरत" बुख़ारी) और कुछ की लम्बे छन्दों से (जैसे "मुख़्तार" सिद्दीक़ी और इब्ने-इंशा)। छोटे और लम्बे छन्दों पर किसी और शायर की मुहर इस तरह न लगी होगी जिस तरह "मीर" की मुहर लगी हुई है।

"असर" लखनवी का दावा है कि "वह रंग जिसे न समझने वाले लोग 'लखनवी रंग' कहते हैं—अर्थात् ऐसे शेर जिनमें भावनाओं का लगाव कम होता है और बाह्य रूप से ऊपरी विवरणों का आधिक्य होता है (जिसे 'कंघी-चोटी की शायरी' का नाम दिया जाता है।) उसकी स्थापना भी 'मीर' कर गये" अर्थात्—एक महान कवि की तरह "मीर" के यहाँ शैलियों का वैविध्य वर्तमान है। "मीर" ने काव्य की विधाओं और छन्दों में भी प्रयोग और अविष्कार किये हैं। वासोख़्त, मुसल्लस, मुरब्बा और तज़मीन का आविष्कार उन्हीं से सम्बद्ध माना जाता है।

"फ़ार्म"—काव्य की बाहरी रूपरेखा—को छोड़कर भी जहाँ तक कथ्य का प्रश्न है ऊपर की पंक्तियों में दर्शाया जा चुका है कि उनके चिन्तन और उनकी दृष्टि का क्षेत्र कितना व्यापक है। सम्भवतः यह कहना ग़लत न होगा कि सम्पूर्ण जीवन उनके काव्य का विषय रहा है "मीर" से लाभान्वित होने वालों में दूसरे दर्जे के शायरों के अतिरिक्त "ग़ालिब" और "फ़िराक़" जैसी भारी-भरकम हस्तियाँ भी सम्मिलित हैं। इन तमाम बातों के बावजूद यह तथ्य अपनी जगह है कि काव्य एवं साहित्य से अभिरुचि रखने वाले सामान्य लोग "मीर" से उस हद तक परिचित नहीं जिस हद तक उर्दू के शेष दो महाकवियों "ग़ालिब" और "इक़बाल" से। इस स्थिति के जो कारण इस लेख के आरम्भ में वर्णित हैं उनमें इतना और बढ़ाया जा सकता है कि "मीर" की शायरी को "ग़ालिब" और "इक़बाल" की तरह लोकप्रिय बनाने में जो-जो तत्त्व बाधक रहे हैं उनमें से एक "मीर" की भाषा-शैली भी है। दूसरा तत्त्व यह भी है कि "ग़ालिब" और "इक़बाल" आधुनिक मस्तिष्क के भाव-स्वर से अपेक्षाकृत अधिक निकट हैं। "मीर" की भाषा-शैली में असंख्य गुण पाए जाते हैं—उनसे कोई इंकार नहीं कर सकता। लेकिन उनकी भाषा में जो पुरानापन है वह उनके बहुत से अच्छे शेरों को सामान्य-जन की जबान पर चढ़ने नहीं देता। इसी प्रकार "मीर" की वर्णन शैली भी उनकी व्यापक लोकप्रियता में बड़ी हद तक बाधक है। उनकी वर्णन-शैली अपने समस्त

کچھ نہ دیکھا پھر بجز یک شعلۂ پُر پیچ و تاب
شمع تک تو ہم نے دیکھا تھا کہ پروانہ گیا

میر نے چھوٹی اور لمبی بحروں کو بھی اس انداز سے استعمال کیا ہے کہ ان سے میر کے دو طرز پیدا ہو گئے ہیں۔ دور حاضر کے بعض شعرا کی میر پرستی ان کی چھوٹی بحروں سے ظاہر ہوتی ہے (مثلاً ناصر کاظمی اور شہرت بخاری) اور بعض کی لمبی بحروں سے (مثلاً مختار صدیقی اور ابن انشا)۔ چھوٹی اور لمبی بحروں پر کسی اور شاعر کی مہر اس طرح نہ لگی ہوگی جس طرح میر کی مہر لگی ہوئی ہے۔

آثر لکھنوی کا دعویٰ ہے کہ "وہ رنگ جس کو نافہم لکھنوی رنگ کہتے ہیں یعنی ایسے اشعار جن میں جذبات کا لگاؤ کم ہوتا ہے اور خارجی مضامین زیادہ ہوتے ہیں (جو کنگھی چوٹی کے نام سے مطعون ہے) اس کی بنا بھی میر ڈال گئے" غرضیکہ ایک بڑے شاعر کی طرح میر کے یہاں اسالیب کا تنوع موجود ہے۔ میر نے شاعری کے اصناف و اوزان میں بھی ایجاد و تجربے سے کام لیا ہے۔ واسوخت، مثلث، مربع اور تضمین کی ایجاد ان سے منسوب کی جاتی ہے

ہیئت سے قطع نظر جہاں تک معنی کا تعلق ہے اوپر کی سطروں میں دکھایا جا چکا ہے کہ ان کی فکر و نظر کا دائرہ کتنا وسیع ہے۔ غالباً یہ کہنا غلط نہ ہوگا کہ پوری زندگی ان کی شاعری کا موضوع رہی ہے۔ میر کے خوشہ چینوں میں دوسرے درجے کے شاعروں کے علاوہ غالب اور فراق جیسی بھاری بھرکم ہستیاں بھی شامل ہیں۔ ان تمام باتوں کے باوجود یہ واقعہ ہے کہ شعر و ادب سے دل چسپی رکھنے والے عام لوگ میر سے اس حد تک مانوس نہیں جس حد تک وہ اردو کے باقی دو عظیم شاعر غالب اور اقبال سے مانوس ہیں۔ اس صورت حال کی جو وجہیں اس مضمون کے شروع میں بیان کی گئی ہیں ان میں اتنا اضافہ اور کیا جا سکتا ہے کہ میر کے اشعار کو غالب اور اقبال کے اشعار کی طرح مقبول عام بنانے میں جو عوامل مزاحم ہوئے ہیں ان میں ایک تو میر کی زبان و بیان ہے۔ دوسرے یہ حقیقت کہ غالب اور اقبال جدید ذہن سے میر کی بہ نسبت قریب تر ہیں۔ میر کی زبان و بیان میں جو بے شمار خوبیاں پائی جاتی ہیں ان سے کوئی انکار نہیں کر سکتا۔ لیکن ان کی زبان میں کہنگی کے جو اثرات پائے

रस, माधुर्य, गीतात्मकता आदि के बावजूद अपने आपमें वह चुस्ती नहीं रखती जो "ग़ालिब" और "इक़बाल" की शैलियों की सबसे प्रमुख विशेषता है । इस बात का सही अनुमान "मीर", "ग़ालिब" और "इक़बाल" के एक ही विषय-वस्तु के शेरों के तुलनात्मक अध्ययन से हो सकता है । पहले "मीर" और "ग़ालिब" के समानार्थक शेर देखिये :—

मीर — **ग़ालिब**

१. कौन कहता है न ग़ैरों[1] प तुम इमदाद[2] करो
हम फ़रामोश[4] हुओं को भी कभी याद करो

१. तुम जानो तुम को ग़ैर से जो रस्मो-राह[3] हो
मुझको भी पूछते रहो तो क्या गुनाह हो

२. कहा था हमने बहुत बोलना नहीं है ख़ूब
हमारे यार को सो अब हमीं से बात न चीत

२. मैंने कहा कि बज़्मेनाज़[5] चाहिए ग़ैर से तही[6]
सुनके सितमज़रीफ़[7] ने मुझको उठा दिया कि यूं

३. जो हो जाए है "मीर " जो अपना दैर[8] को जानिब[9] क्या करिये
यूं तो मिजाज़ तरफ़ काबे[10] के बहुतेरा हम लाते हैं

३. जानता हूं सवाबे-ताअत-ो-ज़ुह्द[11]
पर तबियत इधर नहीं आती

४. मक़सूद[12] को देखें पहुँचे कबतक
गर्दिश में तो आसमां बहुत हैं

४. रात दिन गर्दिश[13] में हैं सात आसमां[14]
हो रहेगा कुछ न कुछ घबराएं क्या

५. हर्फ़े-ग़लत[15] थे क्या हम सफ़हे[16] पे ज़िन्दगी के
जो साफ़ यूं क़ज़ा[17] ने हमको मिटा दिया है

५. यारब[18] ज़माना मुझको मिटाता है किस लिए
लौहे-जहां[19] पे हर्फ़े-मुकर्रर[20] नहीं हूं मैं

६. हर शब[21] गली में उसकी रोते रहे जो हम तो
इक रोज़ "मीर" साहब, तूफ़ान हो रहा है

६. यूं ही गर रोता रहा "ग़ालिब' तो ऐ अहले-जहां[22]
देखना इन बस्तियों को तुम कि वीरां[23] हो गईं

७. इश्क़ की सोज़िश[24] ने दिल में कुछ न छोड़ा क्या कहूं ?
लग उठी यह आग नागाही[25] कि घर सब फुंक गया

७. दिल में ज़ौक़े-वस्ल-ो-यादे-यार[26] तक बाक़ी नहीं
आग उस घर में लगी ऐसी कि जो था जल गया

१. परायों । २. सहायता, कृपा । ३. सम्बन्ध, मेल-जोल । ४. भूले । ५. सौन्दर्य की गोष्ठी । ६. रिक्त । ७. निर्दयता से उपहास करने वाले । ८. मन्दिर (सगुण सजीव सौन्दर्य) । ९. ओर । १०. निराकार ब्रह्म की उपासना का स्थान । ११. नियमित, संयमित जीवन और धार्मिक सात्विकता का पुण्य । १२. इच्छित । १३. भ्रमणशील । १४. सप्त ग्रह । १५. अशुद्ध शब्द (अक्षर) । १६. पृष्ठ । १७. काल । १८. हे पालन कर्ता ! १९. संसार रूपी तख़्ती । २०. पुनः लिखा गया शब्द । २१. रात । २२. दुनिया वालो । २३. निर्जन । २४. उत्ताप । २५. अप्रत्याशित रूप से । २६. मिलन की इच्छा और प्रेम-पात्र की याद ।

جاتے ہیں وہ ان کے بہت سے اچھے اشعار کو عام لوگوں کی زبان پر چڑھنے نہیں دیتے۔ اسی طرح میرؔ کا انداز بیان بھی ان کے قبول عام میں بڑی حد تک سدِ راہ ہے۔ ان کا انداز بیان اپنے تمام تاثیر و ترنم کے باوجود اپنے اندر وہ چستی نہیں رکھتا جو غالبؔ اور اقبالؔ کے اسلوب کی سب سے نمایاں خصوصیت ہے۔ اس بات کا صحیح اندازہ میرؔ، غالبؔ اور اقبالؔ کے ہم معنی اشعار کے تقابلی مطالعے سے ہو سکتا ہے۔ پہلے میرؔ اور غالبؔ کے متحد المعنی اشعار دیکھئے ؎

میرؔ	غالبؔ
۱۔ کون کہتا ہے نہ غیروں پہ تم امداد کرو ہم فراموش ہوؤں کو بھی کبھی یاد کرو	۲۔ تم جانو تم کو غیر سے جو رسم و راہ ہو مجھ کو بھی پوچھتے رہو تو کیا گناہ ہو
۲۔ کہا تھا ہم نے بہت بولنا نہیں ہے خوب ہمارے یار کو سو اب ہمیں سے بات نہ چیت	۲۔ میں نے کہا کہ بزم ناز چاہیے غیر سے تہی سن کے ستم ظریف نے مجھ کو اٹھا دیا کہ یوں
۳۔ جی ہی جاسے ہے میرؔ جو اپنا دیر کی جانب کیا کریئے یوں تو مزاج طرف کعبے کے بہتیرا ہم لاتے ہیں	
	۳۔ جانتا ہوں ثواب طاعت و زہد پر طبیعت ادھر نہیں آتی
۴۔ مقصود کو دیکھیں پہنچیں کب تک گردش میں تو آسماں بہت ہے	۴۔ رات دن گردش میں ہیں سات آسماں ہو رہے گا کچھ نہ کچھ گھبرائیں کیا
۵۔ حرفِ غلط تھے کیا ہم صفحے پہ زندگی کے جو صاف یوں قضا نے ہم کو مٹا دیا ہے	۵۔ یا رب زمانہ مجھ کو مٹاتا ہے کس لیے لوحِ جہاں پہ حرفِ مکرر نہیں ہوں میں
۶۔ ہر شب گلی میں اس کی روتے رہے جو ہم تو اک روز میرؔ صاحب طوفان ہو رہا ہے	
	۶۔ یوں ہی گر روتا رہا غالبؔ تو اے اہلِ جہاں دیکھنا ان بستیوں کو تم کہ ویراں ہو گئیں

मीर | ग़ालिब

८. गोकि अतिश-ज़ुबाँ[1] थे आगे "मीर"
अब की कहिये गई वह तब की बात

८. सुख़न में ख़ाम-ए[2]-"ग़ालिब" की आतिश-अफ़शानी[3]
यक़ीं है हमको भी लेकिन अब उसमें दम क्या है ?

९. भागे मेरी सूरत से वो, आशिक़ मैं उसकी शक्ल पर
मैं उसका ख्वाहाँ[4] याँ तलक[5] वह मुझसे बेज़ार इस क़दर[6]

९. मैं हूँ मुश्ताक़[7] और वो बेज़ार[8]
या इलाही[9] ये माजरा[10] क्या है ?

१०. इश्क़ उनको है जो यार को अपने दमे-रुख़सत[11]
करते नहीं ग़ैरत[12] से ख़ुदा के भी हवाले

१०. क़यामत है कि होवे मुद्दई[13] का हमसफ़र[14] "ग़ालिब"
वो काफ़िर[15] जो ख़ुदा को भी न सौंपा जाए है मुझसे

इन शेरों को पढ़ते समय कोई व्यक्ति भी यह कहे बिना नहीं रह सकता कि "ग़ालिब" ने अपने शेरों की विषय-वस्तु "मीर" से ली है। मुझे "ग़ालिब" पर लगाए जाने वाले इस अभियोग के सही होने से इंकार नहीं लेकिन देखने की बात यह है कि "ग़ालिब" ने "मीर" से ली हुई वस्तु को अपने कहने के ढंग से चमका-कर कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया है। इन शेरों में "ग़ालिब" ने "मीर" से जो कुछ लिया है उसे टी०एस० ईलियट के शब्दों में "ब्याज सहित वापस" कर दिया है।

"इक़बाल" न "मीर" भक्तों में से हैं न "मीर" के गुण ग्राहकों ('ग्रहण' की ध्वनि प्रमुख) में से। किन्तु "नासिर" काज़िमी ने अपने लेख "मीर तक़ी 'मीर' " मे "मीर" और "इक़बाल" के कुछ समानार्थक शेर जमा कर दिये हैं। कुछ मिसालें देखिये:—

मीर | इक़बाल

१. बुतपरस्ती[16] को तो इस्लाम[17] नहीं कहते हैं
मोतक़िद[18] कौन है "मीर" ऐसी मुसलमानी[19] का ?

१. बुतों से तुझको उमीदें ख़ुदा से नौमीदी[20]
मुझे बता तो सही और काफ़िरी[21] क्या है

१ तीव्र, तीक्ष्ण वचन। २. "ग़ालिब" की लेखनी। ३. आग उगलना (दाह युक्त रचनाएं करना)। ४. इच्छुक। ५. यहाँ तक (इतना)। ६. इतना। ७. अत्यन्त इच्छुक। ८. अत्यन्त उदासीन, घृणा करने वाला। ९. हे मेरे प्रभु। १०. मामला। ११. जाने के समय, चल-चलाव के वक्त, शरीर त्याग के समय। १२. स्वाभिमान, आशंका और लज्जा तीनो भाव एकरूप हो जाएं तो। १३. शत्रु। १४. सहयात्री। १५. कठोर हृदय। काव्य में प्रेम का भाव प्रदर्शित करते हुए प्रेमिका। १६. मायामोह, मायावी जगत के अनुराग। १७. सच्ची धार्मिकता। १८. विश्वास रखने वाला। १९. धार्मिकता। २०. निराशा। २१. नास्तिकता, अनीश्वरवाद।

غالب　　　　　　　　میر

۷۔ عشق کی سوزش نے دل میں کچھ نہ چھوڑا کیا کہیں
لگ اٹھی یہ آگ ناگاہی کہ سب گھر پھک گیا

۷۔ دل میں ذوقِ وصل و یادِ یار تک باقی نہیں
آگ اس گھر میں لگی ایسی کہ جو تھا جل گیا

۸۔ گو کہ آتش زباں تھے آگے میرؔ
اب کی کہیے گئی وہ تب کی بات

۸۔ سخن میں خامۂ غالبؔ کی آتش افشانی
یقیں ہے ہم کو بھی لیکن اب اس میں دم کیا ہے

۹۔ بھاگے مری صورت سے وہ عاشق میں اس کی شکل پر
میں اس کا خواہاں یاں تلک وہ مجھ سے بیزار اس قدر

۹۔ میں ہوں مشتاق اور وہ بیزار
یا الٰہی یہ ماجرا کیا ہے

۱۰۔ عشق ان کو ہے جو یار کو اپنے دمِ رفتن
کرتے نہیں غیرت سے خدا کے بھی حوالے

۱۰۔ قیامت ہے کہ ہووے مدعی کا ہم سفر غالبؔ
وہ کافر جو خدا کو بھی نہ سونپا جائے ہے مجھ سے

ان اشعار کو پڑھتے وقت کوئی شخص یہ کہے بغیر نہیں رہ سکتا کہ غالبؔ نے یہ سارے مضامین میرؔ سے لیے ہیں۔ مجھے غالبؔ پر اس الزام کی صحت سے انکار نہیں لیکن دیکھنے کی بات یہ ہے کہ غالبؔ نے میرؔ کے مضامین کو اپنے اندازِ بیان سے چمکا کر کہاں سے کہاں پہونچا دیا ہے ان اشعار میں غالبؔ نے میرؔ سے جو کچھ لیا ہے اسے ٹی۔ ایس۔ ایلیٹ کی زبان میں "سود کے ساتھ واپس" کر دیا ہے۔ اقبالؔ نہ میرؔ کے پرستاروں میں سے ہیں نہ ان کے خوشہ چینوں میں سے۔ لیکن ناصر کاظمی نے اپنے مضمون "میر تقی میرؔ" میں میرؔ اور اقبالؔ کے چند ہم معنی اشعار جمع کر دیے ہیں کچھ مثالیں دیکھیے:-

मीर	इक़बाल
२. ताक़[1] लामकाँ[2] सा हो तो मेरा दिल खुले तंग हूँ मामू-र-ए-आलम[3] की दीवारों के बीच	
	२. तेरी ख़ुदाई[4] से है मेरे जुनूँ[5] को गिला[6] अपने लिए लामकाँ[7] मेरे लिए चार सू[8]
३. "मीर" क्या है ? फ़क़ीरे-मुस्तग़नी[9] आवे उस पास बादशाह तो क्या ?	
	३. वहाँ से तूने ऐ "इक़बाल" सीखी है यह दुरवेशी कि चर्चा बादशाहों में है तेरी बेन्याज़ी[10] का
४. फ़रियाद[11] उन्हीं रंगों है गुलज़ार[12] में हर सुबह बुलबुल ने मेरी तर्ज़े-सुख़न[13] साफ़ उड़ाई	
	४. उड़ा ली तूतियों ने, क़ुमरियों[14] ने अन्दलीबों[15] ने चमन वालों ने मिलकर लूट ली तर्ज़े-फ़ुग़ाँ[16] मेरी
५. पैराहने-सदचाक[17] सिलाते हैं मेरा लोग तह[18] से नहीं मुतलक़ ख़बर इन बेख़बरों को	
	५. क्या सूफ़ी-ओ-मुल्ला[19] को ख़बर मेरे जुनूँ की उनका सरे-दामन[20] भी अभी चाक नहीं है
६. बरसों लगी रहे हैं जब मेह्र-ो-मह[21] की आँखें तब हम-सा कोई साहब, साहब-नज़र[22] बने है	
	६. हज़ारों साल नरगिस अपनी[23] बेनूरी[24] पे रोती है बड़ी मुश्किल से होता है चमन में दीदावर[25] पैदा

यूँ तो "मीर" के यहाँ भी बहुत से शेर ऐसे मिलते हैं जो अपने आप में तराशे हुए हीरे की ख़ूबसूरती रखते हैं किन्तु उनके अधिकतर शेरों के गठन में वह तराश-ख़राश वह चुस्ती और प्रवाह नहीं मिलता जो "ग़ालिब" और "इक़बाल" के सामान्य गुण हैं। इसका एक कारण तो यही है कि "ग़ालिब" और "इक़बाल" के युग

१. मैदान। २. शून्य। ३. भरी पुरी इस दुनिया। ४. ऐश्वर्य (ईश्वरत्व)। ५. उत्साहोन्माद। ६. शिकायत। ७. निस्सीम, निर्बन्ध। ८. दिशाएं (यह संस्कृत मूल रूप से "चतुर्दिशि" का ही वर्णन करती है। दसों दिशाओं का नहीं)। ९. स्थितप्रज्ञ, निष्काम योगी। १०. कामनाहीनता। ११. आर्त-विनय। १२. वाटिका। १३. बात कहने का ढंग। १४. एक मधुर-कण्ठी पक्षी। १५. बुलबुल। १६. मेरे क्रन्दन की शैली। १७. सैकड़ों जगह से फटे मेरे वस्त्र। १८. गहराई। १९. वह लोग जो देखने में भक्तिधर्म का पालन करने लगें (किन्तु वस्तुतः उनके पास वह प्रबल भक्ति-भाव हो नहीं।) २०. उनके दामन का सिरा भी। २१. रवि-शशि। २२. दृष्टि-सम्पन्न। २३. एक फूल जिसे सुन्दर नेत्रों से उपमा दी जाती है। २४. दृष्टि (ज्योति) हीनता। २५. दृष्टि सम्पन्न।

اقبال	میر
	۱۔ بت پرستی کو تو اسلام نہیں کہتے ہیں معتقد کون ہے میرؔ ایسی مسلمانی کا
۱۔ بتوں سے تجھ کو امیدیں خدا سے نومیدی مجھے بتا تو سہی اور کافری کیا ہے	
	۲۔ صاف میداں لامکاں سا ہو تو میرا دل کھلے تنگ ہوں معمورۂ عالم کی دیواروں کے بیچ
۲۔ تیری خدائی سے ہے میرے جنوں کو گلہ اپنے لیے لامکاں میرے لیے چار سو	
	۳۔ میرؔ کیا ہے فقیر مستغنی آوے اس پاس بادشاہ تو کیا
۳۔ کہاں سے تونے اے اقبالؔ سیکھی ہے یہ درویشی کہ چرچا بادشاہوں میں ہے تیری بے نیازی کا	
	۴۔ فریاد انھیں رنگوں ہے گلزار میں ہر صبح بلبل نے مری طرز سخن صاف اڑائی
۴۔ اڑالی طوطیوں نے، قمریوں نے، عندلیبوں نے چمن والوں نے مل کر لوٹ لی طرز فغاں میری	
	۵۔ پیراہن صد چاک سلاتے ہیں مرا لوگ تہ سے نہیں مطلق خبر ان بے خبروں کو
۵۔ کیا صوفی و ملّا کو خبر میرے جنوں کی ان کا سر دامن بھی ابھی چاک نہیں ہے	
۶۔ ہزاروں سال نرگس اپنی بے نوری پہ روتی ہے بڑی مشکل سے ہوتا ہے چمن میں دیدہ ور پیدا	۶۔ برسوں لگی رہی ہیں جب مہر و مہ کی آنکھیں تب ہم سا کوئی صاحب، صاحب نظر بنے ہے

یوں تو میرؔ کے یہاں بھی متعدد شعر ایسے ملتے ہیں جو اپنے اندر ترشے ہوئے

तक उर्दू में परिपक्वता और प्राञ्जलता आ चुकी थी जिसका "मीर" के युग में होना सम्भव ही नहीं था। दूसरे यह कि शब्दों, शब्द-योजनाओं, आदि के चयन में "ग़ालिब" और "इक़बाल" ने उस व्यापकता को नहीं अपनाया जो "मीर" की स्पष्ट विशेषता है। "मीर" का यह शेर :

नेमतें-रंगारंगे-हक़ से बहरा बख़्ते-सियह को नहीं
सांप रहा गो गंज के ऊपर खाने को तो खाई ख़ाक

"नासिर" काज़िमी को विशेष रूप से पसन्द है। काव्य-मर्मज्ञों और तत्त्वज्ञों के लिए इस शेर में गुण जितने भी हों किन्तु मुझे विश्वास है कि यह शेर सामान्य-जन के गले से नीचे न उतरेगा और अगर "ग़ालिब" या "इक़बाल" को यह शेर कहना होता तो वह इसे सरल, कोमल और मर्मस्पर्शी ढंग से कह जाते। मुझे ऐसा लगता है कि शैली में "ग़ालिब" और "इक़बाल" "मीर" से अधिक आत्म-तत्त्व के ज्ञाता, सचेत और सजग एवं कला पर गहरी पकड़ रखकर बरतने वाले सक्षम कलाकार थे। दूसरे शब्दों में यूं समझिये कि "ग़ालिब" और "इक़बाल" "मीर" से बड़े और अच्छे शैलीकार (STYLIST) थे। "ग़ालिब" और "इक़बाल" के अपेक्षाकृत अधिक लोकप्रिय होने में इस बात को भी अच्छा-ख़ासा दख़ल है कि सर्वप्रथम तो "ग़ालिब" और "इक़बाल" की बौद्धिक और ज्ञान-विषयक पूंजी "मीर" से कहीं अधिक है—दूसरे यह कि "मीर" मूलरूप से "भाव" के कवि हैं। इसके विरुद्ध "ग़ालिब" और "इक़बाल" चिन्तन-प्रधान कवि हैं। आधुनिक पाठक काव्य में भावना से अधिक चिन्तन का कार्य ढूंढता है क्योंकि बौद्धिकता और वैज्ञानिकता का प्राबल्य इसी ओर ले जाता है और सम्भवतः ज़माने के साथ-साथ चिन्तन-पक्ष से मानवीय-मन का स्नेह-सम्बन्ध दृढ़तर ही होता जायगा। "मीर" की चिन्तन-प्रधान शायरी की सूफ़ियाना पृष्ठभूमि का आकर्षण बहुत कुछ समाप्त हो चुका है और भविष्य में घटेगा ही क्योंकि जीवन और जगत का अध्ययन और इसकी व्याख्या धर्म और तसव्वुफ़ (आध्यात्मिक) के स्थान पर विज्ञान और मनोविज्ञान की उपलब्धियों के प्रकाश में होने लगा है भविष्य में यह प्रवृत्ति प्रबल से प्रबलतर होती जायगी।

बहरहाल एक बात सुनिश्चित है—वह यह कि "मीर" की शायरी अपने मूल-भूत गुण : दर्द की मार्मिक प्रेषणीयता, अपनी मानवीयता, अपनी सजीवता, और घुलावट के कारण सदैव सम्मान की दृष्टि से देखी जायगी। न केवल कवियों और अलोचकों के मध्य बल्कि साहित्य एवं काव्य के सामान्य पाठकों की दृष्टि में भी।

ہیرے کی خوبصورتی رکھتے ہیں۔ لیکن ان کے زیادہ تر اشعار کے اسلوب میں وہ تراش خراش وہ چستی اور روانی نہیں ملتی جو غالبؔ اور اقبالؔ کی عام خصوصیات ہیں۔ اس کا ایک سبب تو یہی ہے کہ غالبؔ اور اقبالؔ کے دور تک اردو زبان میں وہ پختگی اور پاکیزگی پیدا ہو چکی تھی جس کا میرؔ کے عہد میں ہونا ممکن ہی نہیں تھا۔ دوسرے یہ کہ الفاظ، تراکیب اور اوزان کے انتخاب میں غالبؔ اور اقبالؔ نے اس وسیع المشربی سے کام نہیں لیا جو میرؔ کی امتیازی خصوصیت ہے۔ میرؔ کا یہ شعر ؎

نعمتِ رنگا رنگ حق سے بہرہ بخت سیہ کو نہیں
سانپ رہا گو گنج کے اوپر کھانے کو تو کھائی خاک

ناصرؔ کاظمی کو خاص طور سے پسند ہے۔ سخن شناسوں اور نکتہ سنجوں کے نزدیک اس شعر میں خوبیاں جتنی بھی ہوں لیکن مجھے یقین ہے کہ یہ شعر عام لوگوں کے حلق سے نیچے نہ اترے گا اور اگر غالبؔ یا اقبالؔ کو یہ بات کہنا ہوتی تو وہ اسے سہل، سبک اور دل نشین انداز میں کہہ جاتے۔ مجھے ایسا لگتا ہے کہ اسلوب کے معاملے میں غالبؔ اور اقبالؔ میرؔ سے زیادہ خود آگاہ، باشعور اور سخت گیر فن کار تھے دوسرے لفظوں میں یوں سمجھیے کہ غالبؔ اور اقبالؔ میرؔ سے بڑے اور بہتر STYLIST تھے۔ غالبؔ اور اقبالؔ کے نسبتاً زیادہ مقبول ہونے میں اس بات کو بھی خاصا دخل ہے کہ اوّل تو غالبؔ اور اقبالؔ کا ذہنی اور فکری سرمایہ میرؔ سے کہیں زیادہ ہے دوسرے یہ کہ میرؔ بنیادی طور پر جذبے کے شاعر ہیں۔ ان کے برعکس غالب اور اقبالؔ بنیادی طور پر فکر کے شاعر ہیں جدید ذہن شعر و ادب میں جذبے سے زیادہ فکر کی جلوہ گری ڈھونڈتا ہے اور غالباً زمانے کے ساتھ ساتھ فکر سے انسانی ذہن کی موانست بڑھتی ہی چلی جائے گی۔ میرؔ کی فکری شاعری کے متصوفانہ پس منظر کی دل آویزی بہت کچھ ختم ہو چکی ہے اور آیندہ ختم ہوتی ہی چلی جائے گی کیونکہ اب حیات و کائنات کی توجیہہ و تشریح مذہب اور تصوف کے بجائے سائنس اور نفسیات کی روشنی میں ہونے لگی ہے اور آیندہ یہ رجحان قوی سے قوی تر ہوتا جائے گا۔ بہرحال یہ ایک بات یقینی ہے۔ وہ یہ کہ میرؔ کی شاعری اپنی بنیادی دردمندی اور انسانیت اپنی حلاوت اور

यदि "मीर" की कुल्लियात का अच्छा चयन सस्ते दामों जन सामान्य की पहुँच की सीमा में आ जाए तो "मीर" और जनता के मध्य अपरिचय का जो वातावरण है वह निश्चय ही जाता रहेगा। जो लोग "मीर" जैसे शायरों के ऐसे चयन के विरुद्ध हैं उन्हें याद रखना चाहिये कि "मीर" जैसे शायरों की पूरी कुल्लियात का अध्ययन कवियों और आलोचकों के लिए तो सम्भव है किन्तु यह सामान्य पाठकों के लिए कदापि शक्य नहीं।

گھلاوٹ کی بنا پر ہمیشہ قدر کی نگاہ سے دیکھی جاے گی نہ صرف شاعری اور نقادوں کے حلقے میں بلکہ شعر و ادب کے عام قارئین کے حلقے میں بھی اگر میرؔ کی کلیات کا اچھا انتخاب سستے داموں عوام کی دست رس میں آجائے تو میرؔ اور عوام کے درمیان جو اجنبیت ہے وہ یقیناً جاتی رہے گی۔ جو لوگ میرؔ جیسے شاعروں کے انتخاب کے مخالف ہیں انھیں یاد رکھنا چاہیے کہ میرؔ جیسے شاعروں کی پوری کلیات کا مطالعہ شاعروں اور نقادوں کے لیے تو ممکن ہے لیکن عام قارئین کے لیے ہرگز ممکن نہیں

मधुशाला में मीर

डाक्टर सैयद अब्दुल्लाह

मैं "मीर" पर इतना कुछ लिख चुका हूँ कि इस विषय पर और अधिक कुछ लिखना अब मात्र तकल्लुफ़ है। किन्तु विषय की अभिरुचि क़लम उठाने के लिए एक नया बहाना निकाल लाई है और यह बहाना एक फ़िल्म ने जुटाया है। कुछ दिन हुए मैंने एक फ़िल्म "सात लाख" देखा था उसमें एक कटमस्ता[1] रिन्द[2] शराबी, बदमस्तों की सी हरकतें करता दिखाया गया था और उस आलम में वह जो शेर गा रहा था वह "मीर" की एक ग़ज़ल के थे। उन शेरों की तस्वीर उस पात्र के अभिनय से कुछ इस तरह का सामञ्जस्य रखती थी कि जहाँ वह पात्र प्रशंसनीय था वहाँ रिन्दी व बदमस्ती के मामलों की शायर से विशेष जानकारी और उसकी चित्रात्मकता का प्रभाव भी उत्पन्न हो रहा था।

"मीर" की वेदना-प्रधानता और यंत्रणा-लिप्तता के दृढ़ विश्वास के बाद यह बात काफ़ी विचित्र-सी लगती है कि "मीर" के मानसिक-संसार में मस्ती और रसोन्माद के इन भावों का भी प्रवेश था—मात्र प्रवेश ही नहीं; वह तो इस क्षेत्र के भी मर्मज्ञों में से प्रतीत होते हैं। निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि यह सब अनुभवियों (भुक्तभोगियों) से मेल-जोल का परिणाम था या वह स्वयं भुक्तभोगी होकर जानते थे। ग़ज़ल की शायरी का यह दोष निश्चय ही बहुत परेशान करने वाला है कि इसमें परम्परागत विषयों का निर्वाह-मात्र और वस्तुतः प्रतीतियों की उछाह—दोनों आपस में गडमड हो जाते है। फिर भी, विशेष रूप से प्रयत्न करने से ज्ञात हो सकता है कि व्यक्तिगत अनुभव की सीमाएं कहाँ हैं और मात्र परम्परागत विषय निर्वाह कहाँ।

वेदनासिक्त-"मीर" के सम्बन्ध में मुझे यह खोज ऐसी लगी कि इससे कुछ निष्कर्ष

१. जो सचमुच मस्त न हो, मदिरा के प्रभाव से उन्मत्त हो। २. पीने पिलाने वाला, एक विशेष प्रकार का जीवन-दर्शन रखने वाला व्यक्ति।

مے کدے میں میرؔ

ڈاکٹر سیّد عبداللہ

میں میرؔ پر اتنا کچھ لکھ چکا ہوں کہ اس موضوع پر مزید خامہ فرسائی اب تکلف محض ہے، مگر موضوع سے دلچسپی قلم اٹھانے کے لیے ایک نیا بہانہ نکال لائی ہے، اور یہ بہانہ ایک فلم نے بہم کیا ہے۔ کچھ عرصہ ہوا میں نے ایک فلم "سات لاکھ" دیکھا تھا، اس میں ایک کٹ متا رند شرابی، بدمستوں کی سی حرکتیں کرتا دکھایا گیا تھا اور اس عالم میں وہ جو اشعار گا رہا تھا، وہ میرؔ کی ایک غزل کے تھے۔ ان اشعار کی تصویر، اس کردار کی ایکٹنگ سے کچھ اس طرح مطابقت رکھتی تھی کہ جہاں وہ کردار قابل داد تھا، وہاں رندی و سرمستی کے معاملات سے شاعر (میرؔ) کی مصوری یا واقفیت کا تاثر بھی پیدا ہو رہا تھا

میرؔ کی الم پسندی اور اذیت دوستی کے پختہ تیقن کے بعد یہ بات خاصی عجیب سی لگتی ہے کہ میرؔ کی ذہنی دنیا میں سرخوشی اور خوش مستی، کی ان کیفیتوں کا بھی گزر تھا گزر ہی نہیں، وہ اس کوچہ کے باخبروں میں معلوم ہوتے ہیں۔ یقین سے نہیں کہا جا سکتا کہ یہ سب کچھ باخبروں سے میل جول کا نتیجہ تھا یا ان کی ذاتی براہ راست آگاہی تھی۔ غزل کی شاعری کی یہ تکلیف واقعی پریشان کن ہے کہ اس میں رسمی اور حقیقی مضامین گڈمڈ ہو جاتے ہیں، پھر بھی کوشش کرنے سے معلوم ہو سکتا ہے کہ ذاتی تجربے کی حد کہاں ہے اور رسمی مضامین کہاں ہیں؟

الم آشنا میرؔ کے تعلق میں مجھے یہ جستجو نتیجہ خیز معلوم ہوئی، اس لیے پہلے فلم کو کئی بار دیکھا اس کے بعد کلیات کی ورق گردانی یہ جاننے کے لیے کی کہ اس کوچے سے

हाथ आता दिखा, अतएव पहले फ़िल्म को कई बार देखा उसके बाद कुल्लियात के पृष्ठों में यह ढूंढने का प्रयत्न किया कि इस कूचे के विषय में "मीर" अपने मानसिक संसार में जोश और मस्ती के भाव किस प्रकार अनुभव करते हैं—और उनकी वेदनाप्रियता के विषय में हमारे उन विचारों में, जो अब प्रायः निश्चित हो चुके हैं, संशोधन की कहां तक सम्भावना है ? इसी सन्दर्भ में यह भी मालूम करना था कि मस्ती के वह विशेष ढंग और वह विशिष्ट स्थितियां क्या थीं जो "मीर" को प्रिय थीं ?

फ़िल्म "सात लाख" में एक रिन्द शराबी, शराब से बदमस्त लड़खड़ा रहा है और गा रहा है। सयोगवश वह "मीर" की वह ग़ज़ल✠ गा रहा है जिसकी रदीफ़ है "मैं नशे में हूँ।" ग़ज़ल यह है:

यारो मुझे मआफ़[1] रखो मैं नशे में हूं
अब दो तो जाम ख़ाली ही दो मै नशे में हूं
एक-एक फ़र्त-दौर[2] में यूं ही मुझे भी दो
जामे-शराब पुर[3] न करो मैं नशे मे हूं
मस्ती से दरहमी[4] है मेरी गुफ़्तगू के बीच
जो चाहो तुम भी मुझको कहो मैं नशे में हूं
या हाथों-हाथ लो मुझे मानिन्दे-जामे-मय[5]
या थोड़ी दूर साथ चलो मैं नशे में हूं

इस ग़ज़ल में दो-तीन शेर और भी है—उपर्युक्त शेरों से "मीर" की "मधु-प्रियता" का आशातीत प्रमाण मिला और अधिक ढूंढने का उत्साह बढ़ा और प्रतीत हुआ कि "मधु-रस" सम्बन्धी सभी शेरों और नज़्मों को संकलित करके अध्ययन करने से बात बन सकती है। अर्थ यह कि "मीर" के मधु-प्रेम के विषय में सुनिश्चित एवं सुगठित धारणा बनाई जा सकती है।

"मय" [मधुरस] के सूफ़ियाना अर्थ को तूल देना बेकार होगा किन्तु संक्षेप मे समझिये कि "मीर" के काव्य में यह अर्थ भी बराबर दिखाई देता है। मसनवियों में एक "साक़ीनामा" जो स्पष्ट शब्दों में इसी अर्थ का समर्थन—बल्कि इसी अर्थ की व्याख्या कर रहा है। उसका आरम्भ यह है:

है क़ाबिले-हम्द[6] वह सर-अन्दाज़[7]
जो सब में हुआ है जलवा पर-दाज़[8]

इसके बाद सब बातें मय और मस्ती सम्बन्धी शब्दावली मे की है—अस्तित्व

✠फ़िल्म की ग़ज़ल में कुछ शेर फ़िल्म के गीतकार ने अपने भी मिला दिये हैं—लेखक। [ठीक ऐसा ही एक भारतीय फ़िल्म के गीतकार महोदय ने भी किया है। उन्होंने मूल-ग़ज़ल मे थोड़ा हेर-फेर कर दिया है।]

१. छोड़ रक्खो, क्षमा करो। २. दौर चलने के जोश। ३. भरो। ४. बिखराव, उच्छृंखलता। ५. शराब के जाम की तरह—अर्थात् मुझे सहारा देकर ले चलो। हाथों हाथ लेने मे ध्वनि यह भी निकलती है कि जो कुछ मैं कर रहा हूं करने दो और तुम लोग भी इसमें रम लो। ६. स्तुत्य ७. कर्ता, सर करने वाला। ८. विभिन्न रूपाकार मे परिव्यक्त।

متعلق میرؔ اپنے ذہن کی دنیا میں جوشِ مستی کی کیفیت کس طرح محسوس کرتے ہیں؟ اور ان کی غم پسندی کے متعلق ہمارے خیالات میں، جو پختہ ہو چکے ہیں، ترمیم کی کہاں تک گنجائش ہے؟ اس ضمن میں یہ بھی معلوم کرنا تھا کہ مستی کے وہ خاص انداز اور وہ خاص کیفیتیں کیا تھیں جو میرؔ کو مرغوب تھیں؟

فلم "سات لاکھ" میں ایک رند شرابی، شراب سے بدمست، لڑکھڑا رہا ہے اور گا رہا ہے۔ اتفاق سے وہ میرؔ کی وہ[1] غزل گا رہا ہے، جس کی ردیف ہے "میں نشے میں ہوں" غزل یہ ہے ؎

یارو مجھے معاف رکھو، میں نشے میں ہوں | اب دو تو جام خالی ہی دو، میں نشے میں ہوں
ایک ایک قرط دور میں، یوں ہی مجھے بھی دو | جامِ شراب پُر نہ کرو، میں نشے میں ہوں
مستی سے درہمی ہے مری گفتگو کے بیچ | جو چاہو تم بھی مجھ کو کہو، میں نشے میں ہوں
یا ہاتھوں ہاتھ لو مجھے، مانندِ جامِ مے | یا تھوڑی دور ساتھ چلو، میں نشے میں ہوں

دو تین شعر اور بھی ہیں ان درج شدہ اشعار سے میرؔ کی "مے شناسی" کا گمان آمیز ثبوت ملا اور مزید جستجو کا خیال پیدا ہوا اور محسوس ہوا کہ مے سے متعلق جملہ اشعار اور نظموں کو یک جا کر کے مطالعہ کرنے سے بات بن سکتی ہے مطلب یہ کہ میرؔ کی مے پرستی کے بارے میں ایک مربوط تصور بنایا جا سکتا ہے

مے کے صوفیانہ مفہوم کی بات کو طول دینا بیکار ہوگا مگر اجمالاً میرؔ کے کلام میں یہ مفہوم بھی برابر نظر آتا ہے۔ مثنویات میں ایک ساقی نامہ ہے جو واضح الفاظ میں اس مفہوم کی تائید بلکہ تشریح کر رہا ہے، اس کا آغاز یہ ہے

ہے قابلِ حمد وہ سرانداز | جو سب میں ہوا ہے جلوہ پرداز

اس کے بعد ساری گفتگو مے و مستی کی اصطلاحوں میں کی ہے، ہستی کو نشہ قرار دیا ہے اور کہا ہے کہ ساری کائنات پر یہ نشہ چھایا ہوا ہے۔ یہ نشہ

؎ فلم کی غزل میں، کچھ اشعار فلم کے نظم نگار نے اپنے بھی شامل کر دیے ہیں۔

को नशा निर्धारित किया है और कहा है कि समस्त सृष्टि पर यह नशा छाया हुआ है। यह नशा उसी के जलवों से पैदा होता है "जो सब में हुआ है जलवा परदाज़" —किन्तु यह सारी बात, विस्तार के उपरान्त भी वही—परम्परागत है—जो सूफ़ी शायरों के यहाँ सर्वत्र मिलती है—वही शराब-ो-शाहिद, वही बादा-व-साग़र, वही मुशाहिद-ए-हक़ ! और सबका उद्देश्य यही है कि वस्तुतः अस्तित्व उसी का है जो समस्त सौन्दर्य का भी स्रोत है और सारी मस्ती और माधुर्य का भी :

मशहूरे-जहाँ जो कैफ़-ो-कम[1] है — बे नशा जो होवे तो सम[2] है
मीना में जो सरकशी[3] है वो है — सहबा में जो दिलख़ुशी[4] है वह है
सौ रंग हैं उसके याद रख तू — हर जलवे से दिल को शाद रख तू
कर याद उसी को और मय पी — जीता रहे कोई दिन तो ख़ुश जी

ऐसे शेर भी बहुत हैं जिनमें "मीर" ने मय और मस्ती के शब्दों को अपने प्रिय विषय अर्थात् व्यथा आदि की अभिव्यक्ति के लिए रूपक-स्वरूप प्रयोग किया है। उनमें भी कोई विशेष बात नहीं। शायद और शायरों के यहाँ अधिक बहुतायत से मिल जाते होंगे। हाँ कुछ शेर ऐसे अवश्य हैं जिनमें "मीर" का रूपक बहुत सशक्त बँध गया है; जैसे :

दिले-पुरख़ूं को इक गुलाबी से — उम्र भर हम रहे शराबी से

रूपक के रस और उसकी मार्मिक पैंठ से इनकार नहीं किया जा सकता :—

यह ऐशगह[5] नहीं है याँ रंग और कुछ है — हर गुल है इस चमन में साग़र भरा लहू का

मस्जिद ऐसी भरी-भरी कब थी ? — मयकदा इक जहान है गोया

"मीर"-काव्य की पृष्ठभूमि (CANVAS) (जैसा कि मैं अपने एक लेख में कह चुका हूँ) बहुत विस्तृत और वैविध्ययुक्त है। इस पृष्ठभूमि के चित्र उभारने में उन्होंने "मय" व "मीना" सम्बन्धी भावों और वस्तुओं आदि से पर्याप्त काम लिया है :

इक बू-कशि-ए-बुलबुल[6] है मूजिबे-सद-मस्ती[7] — पुरजोर है क्या दारू गुञ्चे की गुलाबी की
.. — है शक्ल मेरे दिल की सब शीशा-हुबाबी[8] की

बहार आई है ग़ुञ्चे गुल के निकले हैं गुलाबी से[9] — निहाले-सब्ज़[10] झूमे हैं गुलिस्ताँ में शराबी-से

---

१. गुण-परिमाण, मद- मस्ती। २. विष। ३. उद्दण्डता, अभिमान। ४. मनमोदकता। ५. विलाभागार। ६. बुलबुल का सौगन्ध- पान। ७. सैकड़ों प्रकार की मस्तियों का कारण। ८. बुलबुला रूपी जाम (शीशा स्वयं ही जरा-सी ठेस में टूट जाने वाला होता, उसे कोमलतर व्यक्त करने के लिये "बुलबुले" की भी उपमा दी है।) ९. जाम-सबूश (ध्वनि गुलाबी रंग की भी है।) १०. हरे-हरे पेड़।

اس ذات کی جلوہ طرازیوں سے پیدا ہوتا ہے یع جو سب میں ہوا ہے جلوہ پرداز، مگر یہ ساری گفتگو طوالت کے باوجود وہی رسمی گفتگو ہے، جو صوفی شاعروں کے کلام میں عام ہے، وہی شراب و شاہد، وہی بادہ و ساغر، وہ مشاہدۂ حق! اور مقصود و منتہا یہی کہ اصل وجود وہی ہے جو سرچشمۂ حسن بھی ہے اور مرکز شکر و مستی بھی ؎

مشہور جہاں جو کیف و کم ہے بے نشہ جو ہووے تو ستم ہے
مینا میں جو سرکشی ہے وہ ہے صہبا میں جو دل خوشی ہے وہ ہے
سو رنگ ہیں اس کے یاد رکھ تو ہر جلوے سے دل کو شاد رکھ تو
کر یاد اسی کی اور مے پی جیتا رہے کوئی دن تو خوش جی

ایسے اشعار بھی بہت ہیں جن میں میرؔ نے مے و مستی کے الفاظ کو اپنے مضامین خاص (یعنی غم والم وغیرہ) کے لیے بطور استعارہ استعمال کیا ہے۔ ان میں بھی کوئی خاص بات نہیں، شاید اور شاعروں کے یہاں زیادہ کثرت کے ساتھ مل جاتے ہوں گے۔ البتہ بعض شعر ایسے ہیں جن سے میرؔ کا استعارہ بے حد بلیغ ہو گیا ہے مثلاً ؎

دلِ پرخوں کی اک گلابی سے عمر بھر ہم رہے شرابی سے

استعارہ کے رس اور اس کی رسائی سے انکار نہیں ہو سکتا ؎

یہ عیش گہ نہیں ہے یاں رنگ اور کچھ ہے ہر گل ہے اس چمن میں ساغر بھرا لہو کا

مسجد ایسی بھری بھری کب تھی مے کدہ اک جہان ہے گویا

میرؔ کی مصوّری کی دنیا (CANVAS) (جیسا کہ میں ایک دوسرے مضمون میں بیان کر چکا ہوں) خاصی وسیع اور رنگا رنگ ہے۔ اس تصویر گری میں "مے و مینا" کے متعلقات سے بھی خاصا کام لیا ہے ؎

یک بو کشی بلبل، ہے موجب صد مستی پر زور ہے کیا دارو، غنچے کی گلابی کی
.... ہے شکل مرے دل کی سب شیشہ حبابی کی

वो नरगिसे-मस्ताना बातें करे है बरहम तुम देखो, न कुछ बोलो; क्या बात शराबी की
बेसुध हुए हम आई इक बू जो गुलिस्ताँ से पुरज़ोर थी मय कितनी ग़ुञ्चे की गुलाबी की

रूपकों का यह प्रयोग भी कवि के विशेष ध्यान देने से ही हो सकता है और स्पष्ट है कि इस विषय में "मीर" वस्तुत. कितना और कैसे जानते थे प्रश्न यही है। अर्थात् क्या "मीर" की दिलचस्पी इस हद तक है कि इसे हम उनकी निजी दिलचस्पी कह सकें ?

यूं तो गुह्यों का ज्ञान अन्तर्यामी ही को है किन्तु महसूस ऐसा होता है कि "मीर" उस वातावरण से पूरी तरह परिचित थे जो "मय और मीना" से सम्बद्ध है। यह भी प्रतीत होता है कि "मीर" के लिए इस दुनिया की कुछ बातें : कुछ भाव असाधारण हद तक प्रिय थे और उनकी चर्चा को केवल रूपक या परम्परा-गत चर्चा नहीं कहा जा सकता।

पहले वह ग़ज़ल लीजिये जिसमें "मीर" ने एक वातावरण बनाया है। ग़ज़ल यह है :

शेख़जी, आओ मुसल्ला[1] गिरवे-जाम[2] करो जिन्से-तक़वा[3] के तईं सर्फ़े-मये-जाम[4] करो
फ़र्शे-मस्ताँ[5] करो सज्जाद-ए-बेतह[6] के तईं मय की ताज़ीम[7] करो, शीशे का इकराम[8] करो
दामने-पाक[9] को आलूदा[10] रखो बादे[11] से आपको मुग़बचों[12] के क़ाबिले-दुश्नाम[13] करो
नेकनामी व तफ़ावुत[14] को दुआ जल्द कहो दीन-ो-दिल[15] पेश कशे-साद-ए-ख़ुद काम[16] करो
उठ खड़े हो जो झुके गर्दने-मीना-ए-शराब ख़िदमते-बादागुसाराँ[17] है सरअञ्जाम करो
साय-ए-गुल[18] में लबे-जू[19] प गुलाबी रक्खो हाथ में जाम लो और आपको[20] बदनाम करो

इसे ग़ज़ल न कहिये, नज्म कहिये। यह भावों और स्थितियों का क्रमबद्ध वर्णन है। इसमें आह्लाद भी पाया जाता है और वास्तविक जीवन की मस्ती

१. नमाज़ पढ़ने का आसन। २ जाम के बदले बन्धक रख दो। (अर्थात् तात्कालिक रूप से तुम्हारे काम की वस्तु जाम है, इसे ले लो; उसे बन्धक रखकर)। ३. पाप के भय और सद्गति की लालसा से जो नियन्त्रण जीवन में आता है उसे एक जिन्स—एक प्रकार की वस्तु माना है। ४. मधुरस के एक प्याले में उसे ख़र्च कर दो। ५. मस्तों के लिए फ़र्श बना दो। ६. उस वस्तु को जिसे आसन बनाकर तुम भजन करते हो। तुम भजन के लिए जिस आसन का प्रयोग करते हो वह बेतह है--अर्थात इसकी कोई दूसरी तह नही। वह एक व्यर्थ-सा काम है। किन्तु शब्द "बेतह" में यहाँ एक श्लेष भी है। वह जो तह न किया हो, वह आसन जो उठा ही न हो। जिस पर तुम लगातार बैठे रहते हो, उस पर मस्तों को जगह दो। ७. सम्मान। ८. समादर। ९. वह दामन जो पाक है। १०. सिक्त। ११. शराब। १२. वह कम उम्र "बैरे" जो शराबख़ानों में छोटी-मोटी सेवाएँ किया करते थे। १३. गालियों के योग्य। १४. भेद-भाव। १५. धर्म और मन। १६. जो अपने आप ही तृप्ति का साधन बनना हुआ है उस प्रियतम को अर्पित कर दो। "सादा रू" पर "नज़ीर" सिद्दीक़ी के लेख में का नोट देखिये। १७. शराब पीने वालों की सेवा। १८ फूलों की छाया। १९. नदी-तट पर। २०. अपने आपको स्वयं को।

بہار آئی ہے غنچے گل کے نکلے ہیں گلابی سے ؛ نہال سبز جھومے ہیں گلستاں میں شرابی سے

وہ نرگسِ مستانہ باتیں کرے ہے درہم تم دیکھو نہ کچھ بولو، کیا بات شرابی کی

بے شدہ ہوئے ہم آئی اک بو جو گلستاں سے پر زور تھی مے کتنی، غنچے کی گلابی کی

استعارے کی یہ صورتیں بھی دراصل شاعرانہ اعتنا کی حیثیت رکھتی ہیں، اور ظاہر ہے کہ اس مضمون میں اصل مسئلہ میرؔ کی باخبری کی نوعیت کا ہے۔ یعنی کیا میرؔ کی دل چسپی اس حد تک ہے کہ ہم اسے ان کی ذاتی دل چسپی کہہ سکیں

عالم الغیب خدا ہے مگر محسوس ایسا ہوتا ہے کہ میرؔ اس ماحول سے پوری طرح باخبر تھے جو "مے و مینا" سے متعلق ہے۔ یہ بھی معلوم ہوتا ہے کہ میرؔ کے لیے اس عالم کی بعض خاص کیفیتیں اور حالتیں غیر معمولی حد تک مرغوب تھیں اور ان کے ذکر کو محض استعارہ یا رسمی تذکرہ نہیں کہا جاسکتا

پہلے وہ غزل لیجیے جس میں میرؔ نے ایک فضا پیدا کی ہے۔ غزل یہ ہے

شیخ جی آؤ مصلّٰی گروِ جام کرو جنس تقویٰ کے تئیں صرفِ مے جام کرو

فرش مستاں کرو سجادۂ بے تہ کے تئیں مے کی تعظیم کرو شیشے کا اکرام کرو

دامنِ پاک کو آلودہ رکھو بادے سے آپ کو مغبچوں کے قابل دشنام کرو

نیک نامی و تفاوت کو دعا جلد کہو دین و دل پیش کشِ سادۂ خودکام کرو

اٹھ کھڑے ہو جو جھکے گردنِ مینائے شراب خدمتِ بادہ گساراں ہے سرانجام کرو

سایۂ گل میں لب جو پہ گلابی رکھو ہاتھ میں جام لو اور آپ کو بدنام کرو

اس کو غزل نہ کہیے، نظم کہیے۔ یہ کیفیتوں اور حالتوں کا مسلسل بیان ہے اس میں سرخوشی اور زندگی پائی جاتی ہے اور بعض شعر، اس غزل کی سپرٹ کے ہم رنگ معلوم ہوتے ہیں جس کی ردیف ——" میں نشے میں ہوں" ہے اس غزل میں "مے کی تعظیم کرو شیشے کا اکرام کرو" مستانہ قول و کلام ہے—— باقی اشعار میں بھی رندانہ حرکات و اطوار کی طرف اشارے ہیں، غرض مے کا

और उमंग भी। और कुछ शेर उस ग़ज़ल की आत्मा के अत्यन्त अनुरूप लगते हैं जिसकी रदीफ़ "मैं नशे में हूं" है। इस ग़ज़ल में "मय की ताज़ीम करो शीशे का इकराम करो" मस्तानापन की बात-चीत है। शेष शेरों में भी रिन्दों की हरकतों और उनके ही ढंगों की ओर संकेत है अर्थात् पूरी ग़ज़ल मे मद का रंग भरा हुआ है। फिर क्या यह सब मात्र काल्पनिक है या इसकी तह मे कुछ अनुभव भी है ? संभव है कुछ न हो किन्तु इसे बादा-व-साग़र की सूफ़ियाना बात-चीत भी तो नहीं कहा जा सकता। संभव है कि किन्हीं स्थितियों में यह मात्र प्रतीक हो जिसकी सहायता से अन्य प्रतीतियों और तथ्यों का वर्णन किया गया हो। किन्तु ध्यान से देखने से यह अनुभव होता है इस प्रकार का प्रयत्न जहाँ भी किया गया है उसमें मूल उद्देश्य का वर्णन या तो स्पष्ट रूप से मौजूद है या थोड़ा-सा ध्यान देने से स्पष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त उसमें वह उल्लास और मस्ती भी नहीं जो वास्तविक अनुभूति में होती है। जैसे यह ग़ज़ल (या नज़्म) देखिये :

दिले-पुरख़ूं[1] है यहाँ तुझको गुमाँ[2] है शीशा[3]
शेख़ क्यों मस्त हुआ है तू, कहाँ है शीशा ?
....
....

दरमियाँ[4] हलक़-ए-रिन्दाँ[5] के शब उसको आ पी
दौरे-साग़र[6] में मगर पीरेमुग़ाँ[7] है शीशा
जाके पूछा जो मैं कारगहे-मीना[8] में
दिल की सूरत का भी ऐ शीशागराँ[9] है शीशा ?
कहने लागे कि "किधर फिरता है बहका ऐ मस्त !
हर तरह का जो तू देखे है कि याँ है शीशा"
दिल ही सारे थे प' इक वक़्त में जो करके गुदाज़[10]
शक्ल शीशे की बनाई है, कहाँ है शीशा
झुक गया देख के मैं "मीर" उसे मजलिस में
चश्मे-बद-दूर तरहदार[11] जवाँ है शीशा

यह नज़्म भी अच्छी ख़ासी है किन्तु ज्ञान एवं चिन्तन के पहलू लिये हुए हैं। इसमें अर्थगौरव यह है कि दिल को शीशे से उपमा देकर असंख्य सूक्ष्म अर्थ

१. ख़ून भरा दिल। २. भ्रम। ३. विशेष रूप से "जाम"। ४. मध्य। ५. रिन्दोंके गोल। ६. जब पीना चल रहा हो। ७. साक़ी (सौन्दर्य-भाव नहीं-मात्र पिलाने वाला)। ८. जाम बनाने के कारख़ाने में। ९. शीशा बनाने वालो ! १०. पिघलाकर। ११. मानिनी नायिका का एक गुण।

رنگ بھرا ہوا ہے۔ پھر کیا یہ سب کچھ محض تخیل ہے یا اس کی تہ میں کچھ تجربہ بھی ہے ؟ ممکن ہے کچھ نہ ہو لیکن اس کو بادہ و ساغر کی صوفیانہ گفتگو بھی تو نہیں کہا جا سکتا ــــــ ! ہوسکتا ہے کہ بعض بعض صورتوں میں یہ محض علامت ہو ' جس کی مدد سے دوسرے تاثرات اور حقائق کا بیان کیا گیا ہو لیکن بہ غور دیکھنے سے یہ محسوس ہوتا ہے کہ اس قسم کی کوشش جہاں بھی کی گئی ہے اس میں اصل مقصد کا بیان یا تو صراحتاً موجود ہے یا ذرا سی کوشش سے واضح ہوجاتا ہے ۔ اس کے علاوہ اس میں وہ سرمستی اور جوش بھی نہیں جو حقیقی تاثر میں ہوتا ہے ' مثلاً یہ غزل (یا نظم) ملاحظہ ہو

دلِ پُرخوں ہے یہاں ' تجھ کو گماں ہے شیشہ
شیخ کیوں مست ہوا ہے ' تو کہاں ہے شیشہ

. . . .

. . . .

درمیاں حلقۂ رنداں کے شب اس کی جا تھی
دورِ ساغر میں مگر پیرِ مغاں ہے شیشہ
جا کے پوچھا جو میں کارگہِ مینا میں
دل کی صورت کا بھی اے شیشہ گراں ہے شیشہ
کہنے لاگے کہ کدھر پھرتا ہے بہکا اے مست
ہر طرح کا جو تو دیکھے ہے کہ یاں ہے شیشہ
دل ہی سارے تھے پہ اک وقت میں جو کر کے گداز
شکل شیشے کی بنائی ہے کہاں ہے شیشہ
جھک گیا دیکھ کے میں میرؔ اسے مجلس میں
چشم بد دور ' طرح دار جواں ہے شیشہ

یہ نظم بھی اچھی خاصی ہے مگر حکمت و فکر کے پہلو لیے ہوئے ہے بلاغت یہ ہے کہ دل کو شیشے سے تشبیہہ دے کر بے شمار معانی سمجھا دیے ہیں

मुख़ा दिये हैं। दिल शीशा है अथवा शीशा दिलों को ही कच्चे रूप में प्रयोग में लाकर बनाया गया है। दोनों हालतों में उनका उद्देश्य यह है कि "दिल" के तत्वबोध की अभिव्यञ्जना करें। शीशे की उपमा से चित्र में रंग और आब पैदा करने का प्रयत्न किया गया है किन्तु "मीर" ने अपनी विशिष्ट शैली के अनुसार कहानी या कथोपकथन बनाकर विषय को प्रभावशाली बनाने का प्रयास किया है।

इसी तरह एक और ग़ज़ल में "मयख़ाने" की हालतों का वर्णन करके नीति विषयक परिणाम निकाले हैं और दुर्दशाओं से सीखने का वातावरण उत्पन्न करना चाहा है। इस ग़ज़ल में विषय की तीन परतें हैं। पहली परत में केवल जीवन का उल्लास और उसकी बहार दिखाई गई है किन्तु उस बहार का वर्णन तत्त्वज्ञ के चिन्तन के पुट के साथ किया है। समुद्र का चित्रण करके यह प्रश्न किया है कि यह ज्वार-भाटा है क्या ? इसमें इतना वेग, ऐसी शक्ति क्यों है ? यह किसका भेद है जो समुद्र के अन्तर को मथे डालता है ? झञ्झा की यह टेढ़ी तरंगें क्या किसी की टेढ़ी भवें हैं ? यह बुलबुले किसी की आँखें हैं ? मोती किसी की बात ? सीपी किसी के कान ?

यह पहली परत थी—दूसरी परत पर रिन्दी की चर्चा की है। चाँदनी। बाग़ की सैर। "सादा-गुल-फ़रोश" की कल्पना जीवित करके उसके चले जाने का ग़म मनाया है :

कल हमने सैरे-बाग़ में दिल हाथ से दिया
इक सादा-गुल-फ़रोश[1] कि आकर सबद-बदोश[2]
जाता रहा निगाह से यूँ मौसमे-बहार
अब उस बग़ैर दाग़े-जिगर[3] हैं सियाहपोश[4]

वियोग-या, वसन्त के इस ढल जाने के प्रभाव को एक कहानी या घटना के रूप में प्रस्तुत किया है और वातावरण "मय" एवं तत्सम्बन्धी वस्तुओं के उपमान (बल्कि प्रतीक) से बनाया है :

सब इस दिले-गिरफ़्ता[5] को वा[6] कर बज़ोरे-मय[7]
बैठे थे शीराख़ाने[8] में हम कितने हरज़ाकोश[9]

१. वह "सादा-रू" जो फूल बेचता हो। २. कन्धे पर डलिया रक्खे। ३. मन पर पड़े दाग़, घाव। ४. शोक-मग्न। ५. क्षुब्ध, पकड़े हुए (गिरफ़्तार) दिल। ६. वा=खोलना। ७. शराब के बल पर। ८. शराब-ख़ाना। ९. बक्की, बकवादी।

دل شیشہ ہے یا شیشہ دلوں کے مواد سے ترکیب دیا گیا ہے دونوں حالتوں میں دل کی ماہیت سے بحث مقصود ہے، شیشے کی تشبیہ سے تصویر کا آب و رنگ حاصل کیا گیا ہے لیکن میرؔ نے اپنے طریقے کے مطابق، کہانی یا مکالمہ بناکر مضمون کو مؤثر بنانے کی کوشش کی ہے

اسی طرح ایک اور غزل میں مے خانے کے کوائف بیان کرکے عبرت کا مضمون پیدا کیا ہے، اس غزل میں مضمون کی تین سطحیں ہیں۔ پہلی سطح پر، زندگی کی بہار دکھائی گئی ہے۔ مگر اس بہار کا بیان عارفانہ تفکر کے انداز میں کیا ہے بحر کا نقشہ دکھاکر استفسار کیا ہے کہ یہ مد و جزر کیا ہے؟ اس کے اندر خروش کیوں ہے؟ یہ کس کا راز ہے جو بحر کے سینے میں موج زن ہے؟ یہ موج پرشکن کیا کسی کا ابروئے کج ہے؟ یہ حباب! کیا کسی کی آنکھ ہے؟ موتی کسی کی بات؟ سیپی کسی کا گوش

یہ پہلی سطح تھی ـــــ دوسری سطح پر اپنی زندگی کا ذکر کیا ہے۔ چاندنی سیر باغ، سادہ گل فروش کا تصور دلاکر، اس کے چلے جانے کا غم منایا ہے ؎

کل ہم نے سیرِ باغ میں دل ہاتھ سے دیا
اک سادہ گل فروش کہ آکر سبد بدوش
جاتا رہا نگاہ سے جوں موسمِ بہار
آج اس بغیر داغِ جگر ہیں سیاہ پوش

جدائی یا زوال بہار کے اس تاثر کو ایک کہانی یا واقعہ کی صورت میں پیش کیا ہے جس کی فضا متعلقات مے سے تیار کی ہے ؎

شب اس دل گرفتہ کو واکر بہ زورِ مے
بیٹھے تھے شیرہ خانے میں ہم کتنے ہرزہ کوش
آئی صدا کہ یاد کرو دورِ رفتہ کو
عبرت بھی ہے ضرور ٹک اے جمع تیز ہوش

आई सदा[1] कि याद करो दौरे-एस्ता[2] को
इबरत[3] भी है ज़रूर टुक ऐ जमए-तेज़ - होश[4]
जमशेद[5] जिसने वज़अ[6] किया जाम क्या हुआ ?
वे सुहबतें[7] कहाँ गईं कीधर[8] वो ना-ओ-नोश[9] ?
जुज़[10] लाला[11] उसके जाम[12] से पाते नहीं निशाँ
है कोकनार[13] उसकी जगह अब सुबू - बदोश[14]
मूने है बेद[15] जाए-जवानाने-मयगुसार[16]
बाला-ए-ख़ुम[17] है ख़िश्ते-सरे-पीरे-मयफ़रोश[18]

यह नज़्म की तीसरी परत है। इसमें मधुशाला को आनन्द-केन्द्र मानते हुए भी इब्रत की जगह सिद्ध करके जीवन का बोध उत्पन्न करने का माध्यम बनाया है। इस नज़्म या क़त-ए[19] में मधुशाला और सम्बन्धित वस्तुओं को अतीत के सुखों और आनन्दों का प्रतीक बनाया है और इसके बावजूद कि शायर ने सिद्ध करने का प्रयत्न यह किया है कि वह स्वयं भी मधुशाला में मौजूद था फिर भी इसमें मय और मीना का महत्त्व प्रतीक से अधिक नहीं, सीधे-वास्तविक अनुभव का प्रभाव इससे बहुत ही कम अंशों में ग्रहण किया जा सकता है।

किन्तु निजी अनुभव और सीधी जानकारी का हाल सबसे अधिक उन शेरों से व्यक्त होता है जिनमें उन्होंने बिना उस विषय पर ध्यान केन्द्रित किये ही शराबियों की हालतों का चित्रण किया है।

जानकारों का कहना है कि घटा देखकर या रिम-झिम फुहारों के साथ मस्त हवाओं के झोंकों से मदिरा की "तलब" तेज़ हो जाती है। "मीर" के मनपसन्द तत्त्वों में से "अब्रे-क़िबला"[20] का भाव बड़ा महत्त्व रखता है। बादल झूम-झूम कर जब आते हैं तो ऐसे में बादाकशों[21] की महफ़िल जमना एक स्वाभाविक-सी बात है। पश्चिम की ओर से उमड़कर आने वाली बदली जो वर्षा का एक निश्चयात्मक सुसमाचार समझी जाती है बड़ी गहरी, काली और जादुई प्रभाववाली

१. आवाज़। २. बीते हुये युग। ३. दुष्परिणाम देखकर उससे बचने और वही परिणाम उत्पन्न करने वाले कृत्यों से कतराने का भाव जो एक प्रकार की शिक्षा-रूप में व्यक्ति ग्रहण करता है। ४. वह लोग जो तीव्र बुद्धि वाले—उद्बुद्ध—एकत्र हैं। ५. एक ईरानी बादशाह, जो जाम का आविष्कारक माना जाता है। ६. बनाया। ७. संगतियाँ। ८. किधर। ९. पीना-पिलाना। १०. अतिरिक्त। ११. एक सुन्दर फूल। १२. जाम की आकृति से फूल की उपमा। १३. एक निकृष्ट फूल। १४. जाम उठाये। १५. बेंत। १६. मय पीते जवानों की जगह। १७. सुराही पर। १८. बुड्ढे शराब बेचने वाले के सर रूपी ईंट। १९. ग़ज़ल की विधा में शेर; किन्तु प्रत्येक शेर एक दूसरे से सम्बद्ध। २०. पश्चिमी बादल। २१. शराबियों।

جمشید جس نے وضع کیا جام، کیا ہوا
وے صحبتیں کہاں گئیں، کیدھر وہ ناؤ نوش
جز لالہ اس کے جام سے پاتے نہیں نشاں
ہے کوکنار اس کی جگہ اب سبو بدوش
جھوے ہے بید جائے جوانان مے گسار
بالائے خم ہے خشتِ سرِ پیر مے فروش

یہ نظم کی تیسری سطح ہے۔ اس میں مے خانے کو عشرت کدہ ہوتے ہوئے بھی عبرت کدہ ثابت کرکے معرفت حیات کا وسیلہ بنایا ہے۔ اس نظم یا قطعے میں، مے خانہ و متعلقات کو عہد ماضی کی خوشیوں اور مسرتوں کا قائم مقام یا علامت بنایا ہے، اور باوجودیکہ شاعر نے مے خانے میں اپنی ذاتی حاضری بھی لکھوائی ہے، پھر بھی اس میں مے و مینا کی حیثیت محض علامت کی ہے براہ راست تجربے کا تاثر کم نکلتا ہے

ذاتی تجربے اور براہ راست آگاہی کا حال سب سے زیادہ ان اشعار سے ظاہر ہوتا ہے جن میں انھوں نے بلا ارادہ، مے خواروں کی حالتوں کے تصور دلائے ہیں، یا ان حالتوں کی تصویر پیش کی ہے

باخبر لوگوں کا بیان ہے کہ گھٹا کو دیکھ کر، یا ابر و باد کی حالت میں شراب کی طلب تیز ہو جاتی ہے۔ میرؔ کے مرغوبات ذہنی میں ابر قبلہ کی کیفیت بڑی اہمیت رکھتی ہے۔ بدلی اور بادل جھوم جھوم کر جب آتے ہیں تو ایسے میں بادہ کشوں کی محفل ایک قدرتی سی بات ہے۔ قبلے کی سمت سے اُمڈ کر آنے والی بدلی جو باراں کی یقینی خوش خبری سمجھی جاتی ہے، بڑی گہری، کالی اور دبیز ہوتی ہے۔ اس کا نظارہ عام آدمی کے لیے بھی دلآویز ہوتا ہے اور مے خوا،وں کے لیے تو یہ عیش بے غش ہے۔ میرؔ اکثر اس بدلی کا ذکر کرتے ہیں، ذیل کی غزل میں بادہ کشی سے رابطہ پیدا کرتے ہوئے میرؔ نے یہ سماں دکھایا ہے ؂

होती है और उसका नज़ारा[१] सामान्यजन को भी बड़ा सुन्दर लगता है, मयख़्वारों[२] के लिए तो यह निस्संकोच ऐश मनाने की सूचना है। "मीर" अक्सर इस बदली की चर्चा करते हैं। निम्नांकित ग़ज़ल में "बादाकशी" से सम्बन्ध स्थापित करते हुए "मीर" ने यह समां दिखाया है :

अब्रे-सियह[३] क़िबले[४] से उठकर आया है मयख़ाने पर
बादाकशों का झुरमुट है कुछ शीशे कुछ पैमाने पर
रंग हवा से टपकने लगा है सब्ज़े में कोई फूल खिला
यानी चमक[५] गुल करता है फ़स्ले-बहार[६] के आने पर
शोरे-जुनूं[७] है जवानों के सर में पांवों में ज़ंजीरें हैं
संग-ज़नां[८] लड़के फिरते हैं हर-हर-सू[९] दीवाने[१०] पर
बेताबाना[११] शमअ पर आया गिर्द फिरा फिर जल ही गया
अपना भी जी हद से ज़्यादा रात जला परवाने पर

पहले दो शेर तो ग़ज़ब के हैं। क़िबले की ओर से बदली घिर-घिर आ रही है। उधर मौसम का इशारा पाकर बादाकश मयख़ाने में जमा हो रहे हैं और "ला" और "पिला" का हंगामा शुरू है—इन भावनाओं की पूर्ण उत्तेजना ने एक विचित्र रोमांस के मधुमास का आवाहन कर रक्खा है।

यह तो ज्ञात है कि "मीर" सौन्दर्य अथवा जीवन के आनन्द को मानव के बिना अपूर्ण समझते हैं। "मजलिसे-मय"[१२] के लिये बादल और मदमाती हवाओं का होना अच्छा और प्रिय है किन्तु प्रियतम और मित्र-मण्डली के बिना मय-परस्ती एक बौद्धिक मनोरंजन हो तो हो; किन्तु यह मस्ती उस विशेष उन्माद के आचार के अनुसार एक नीरस पाप-मात्र है। निम्नलिखित शेरों मे इन विचारों और प्रवृत्तियों के संकेत मिलते हैं :—

शीशा कनारे-जू[१३] है पम्बा-दहान-ो-राना[१४]
मीना-ए-मय[१५] चमन में इक सर्व[१६] है प्यादा[१७]
पड़ती हैं उसकी आंखें चारों तरफ़ नशे में
जूं राह में बहकते हों तुर्क - मस्ते - बादा[१८]

---

१. दृश्यावलोकन। २. शराबियों। ३. काला बादल ४. प्राची। ५. झड़प। ६. मधुमास। ७. उन्माद का शोर। ८. पत्थर मारते हुए। ९. ओर। १०. उन्मादी, प्रेमी। ११. व्यग्रतापूर्वक। १२. मधु-सभा। १३. नदी-तट। १४. रूई के गाले जैसे मुंह वाला, बड़ा सुन्दर और गुलगुला। १५. शराब की सुराही। १६. 'सरो' का पेड़। १७. पैदल, अपने पांव पर खड़ा। १८. तुर्क (अक्खड़ सिपाही) नशे में मस्त।

ابرِ سیہ قبلہ سے اٹھ کر آیا ہے مے خانے پر
بادہ کشوں کا جھرمٹ ہے کچھ شیشے کچھ پیمانے پر
رنگ ہوا سے ٹپکنے لگا ہے سبزے میں کوئی پھول کھلا
یعنی چشمک گل کرتا ہے فصلِ بہار کے آنے پر
شورِ جنوں ہے جوانوں کے سر میں پاؤں میں زنجیریں ہیں
سنگ زناں لڑکے پھرتے ہیں ہر ہر سو دیوانے پر
بیتابانہ شمع پر آیا، گرد پھرا پھر جل ہی گیا
اپنا بھی جی حد سے زیادہ رات جلا پروانے پر

پہلے دو شعر تو غضب کے ہیں۔ قبلہ کی سمت سے بدلی گھر گھر کر آ رہی ہے، ادھر موسم کا اشارہ پا کر بادہ کش مے خانے میں جمع ہو رہے ہیں، اور 'لا' اور 'پلا' کا ہنگامہ شروع ہے ــــــ ان کیفیتوں میں تمام عالم بہارِ لالہ و گل معلوم ہوتا ہے

یہ تو معلوم ہے کہ میرؔ، حسن یا زندگی کے لطف کو انسان کے بغیر نامکمل جانتے ہیں، مجلسِ مے کے لیے ابر و باد کا ہونا مستحسن ہے مگر محبوب اور مجلسِ احباب کے بغیر، شغلِ مے ایک حکیمانہ شغلہ ہو تو ہو، مستی و سرخوشی کے آداب و قواعد کے لحاظ سے گناہ بے لذت ہے۔ درج ذیل چند اشعار میں ان خیالات و میلانات کے اشارے ملتے ہیں ؎

شیشہ کنارِ جو ہے پنبہ دہان و رعنا
مینائے مے چمن میں، اک سرو ہے پیادہ
پڑتی ہیں اس کی آنکھیں چاروں طرف نشے میں
جوں راہ میں بہکتے ہوں ترکِ مستِ بادہ

ابر و بہار و باد سبھوں میں ہے اتفاق
ساقی جو تو بھی مل چلے تو واہ واہ ہے

अब्रो - बहार - ो - बाद[1] समों में है इत्तफ़ाक[2]
साक़ी जो तू भी मिल चले तो वाह वाह है

सब्ज़ा - व - लाला - ओ - गुल, अब्र-ो-हवा है, मय दे
साक़ी हम तोबा के करने से पशेमान हुए

साक़ी घिर चारों ओर आया है
दे भी मय, अब्रे - ज़ोर[3] आया है
ग़ारते - दिल करे है अब्रे - सियाह
बेतरह घर में चोर आया है

साक़ी को सम्बोधित करते हुए मित्र मण्डली का यह चित्रण भी मुलाहज़ा हो.

तू भी तो मुख़्तलित[4] हो मज्ज़े में हमसे साक़ी
लेकर बग़ल में जालिम शीशा-ए-बादानाब[5]
निकली है अबकी कलियाँ इस रंग से चमन में
सर जोड़ - जोड़ जैसे मिल बैठते हैं अहबाब[6]

जो चाहता है ऐश करें एक रात हम
तू होवे, चाँदनी हो, गुलाबी शराब हो

मय के लिए जिस प्रकार साक़ी अनिवार्य है उसी प्रकार मित्र-मण्डली भी बड़ी प्रिय वस्तु है, अकेले शराब पीने वाले "शराबुल-यहूद"[7] की फ़ब्ती के अधिकारी होते हैं। मयख़ारों के आचार में यह अपराध है—भयानक और संगीन। ४७

"मीर" ने कुछ मसनवियों में "साक़ी" को सम्बोधित करके उत्सवों के अवसर पर मय-ो-मीना के हंगामों के नक़्शे खींचे हैं। जैसे—"मसनवी कदख़दाइ[8]-ये-नवाब आसिफ़ुद्दौला" और "मसनवी दरजश्ने-होली व कदख़दाई"। इनमें उत्सवों की सामान्य रंगरेलियाँ और दिखावटी विवरण तो ठीक है किन्तु इनमें लगता कुछ ऐसा है कि उत्सवों के इन विवरणों से हमारे ज्ञान में कोई अभिवृद्धि नहीं होती। बल्कि ऐसा कोई स्पष्ट प्रभाव भी उनका पड़ता नहीं दिखता जैसा कि ग़ज़लों के दो-दो तीन-तीन क़त्-अ-बन्द शेरों से ही हो जाता है।

"मसनवी दर बयाने-कदख़दाइ-ये-नवाब आसिफ़ुद्दौला बहादुर" में चित्रण की

१. बादल, बसन्त और मदमाती हवाएं। २. संगठित, संयुक्त। ३. बहुत सा, ज़ोरदार बादल, ४. संलाप-रत। ५. शुद्ध मधु की मीना। ६. मित्रगण। ७. यहूदियों (कञ्जूसों) की शराब। ८. विवाह।

سبزہ و لالہ و گل، ابر و ہوا ہے، مے دے
ساقی ہم توبہ کے کرنے سے پشیمان ہوئے

ساقی گھر چاروں اور آیا ہے
دے بھی مے، ابر زور آیا ہے
غارتِ دل کرے ہے ابرِ سیاہ
بے طرح گھر میں چور آیا ہے

ساقی سے خطاب کرتے ہوئے محفلِ احباب کی یہ شاعرانہ تصویر بھی ملاحظہ ہو

تو بھی تو مختلط ہو سبزے میں ہم سے ساقی
لے کر بغل میں ظالم مینائے بادہ ناب
نکلی ہیں اب کی کلیاں اس رنگ سے چمن میں
سر جوڑ جوڑ جیسے مل بیٹھتے ہیں احباب

جی چاہتا ہے عیش کریں ایک رات ہم
تو ہووے، چاندنی ہو، گلابی شراب ہو

مے کے لیے جس طرح ساقی لازمی ہے، اسی طرح محفلِ احباب بھی بڑی مرغوب چیز ہے۔ تنہا شراب پینے والے "شراب الیہود" کے مرتکب ہوتے ہیں، مے خواروں کے ضابطے میں یہ جرم ہے ــــ سخت اور سنگین!

میر نے بعض مثنویات میں ساقی کو خطاب کرکے، تقریبات میں مے و مینا کے ہنگاموں کے نقشے کھینچے ہیں۔ مثلاً مثنوی کد خدائی نواب آصف الدولہ اور مثنوی در جشن ہولی و کت خدائی۔ ان میں تقریب کا عام رنگ اور خارجی جزئیات تو ٹھیک ہیں لیکن کچھ ایسا محسوس ہوتا ہے کہ ان تقریبات کے ان نقشوں سے ہماری معلومات میں کوئی خاص اضافہ نہیں ہوتا بلکہ وہ واضح تاثر بھی قائم نہیں ہوتا جو غزلیات کے دو دو تین تین قطعہ بند اشعار سے ہوتا ہے

संभावनाएं अधिक थीं किन्तु है क्या ? वही साक़ी से रस्मी सी बात-चीत । जैसे :

आओ साक़ी कि कदखदाई है   तबए-नव्वाब[1] इधर को आई है

....

कुछ शेरों के बाद :

आओ साक़ी कि जमअ हैं असबाब   सब मुहय्या हैं ऐश के असबाब
ला वो जूं आफ़ताब[2] साग़रे-रज़[3]   आबे-गुलरंग[4] से लबालब कर

कुछ शेरों के बाद जिसका सम्बन्ध गायक और संगीतकार से है :

आओ साक़ी कि रोशनी है खूब   महवे-आराइश[5] आज हैं महबूब[6]

....

शीशा-शीशा शराब है दरकार   सुहबते-ऐश को छका इक बार
लाला-रंगे-रुखे निकोयां[7] को   माय-ए-नाज़े-खूबरूयां[8] को
उस परी को निकाल शीशे से   रंग मजलिस में डाल शीशे से

और इसी प्रकार कवि साज-सज्जा के प्रत्येक चित्रण का आरम्भ साक़ी और गुलाबी को सम्बोधित करके करता है। रोशनी का वर्णन, "रबाब"[9] और "चंग"[10] के विवरण, नौबत बजने की ध्वनि,—अर्थात् आनन्द और सुख-विलास के प्रत्येक रूप को वह मय से सम्बद्ध करता जाता है और अन्त में कहता है :

आ मुग़न्नी,[11] ग़ज़लसराई कर   कुछ मज़े से भी आशनाई कर
पढ़ ग़ज़ल "मीर" की जो होवे याद   उनको तो इसमें कहते हैं उस्ताद

यह मसनवी यूं तो साक़ी और मय की चर्चाओं से भरी हुई है किन्तु इसमें प्रभाव और भाव दोनों नदारद।

"मसनवी दर जश्ने-होली व कदखदाई" में चित्रण अच्छा है। सम्पूर्ण उत्सव का चित्र सजीव हो जाता है, नगर-सज्जा, आइनाबन्दी,[12] गुले-काग़ज की बहार, नर्तकियों का नृत्य, दीपमालाओं की शोभा—शम्अ, फ़ानूस का ज्योतिर्मान वातावरण, नौबतियों की पंक्तियां, उनका क्रमबद्ध होकर नियमित रूप से नौबत बजाना, झाँझ की आवाज़, वासन्ती परिधान, कुमक़ुमे, ख़याल व स्वांग, रंगे-चुगे हाथी, पुतलियों के नाच, शबबाज़ों[13] की शबबाज़ी, रहस[14], इत्यादि सभी दृश्य अपनी

१. नवाब का मन। २. दिवाकर-सा जाज्वल्यमान और उदय होते सूर्य-सा रक्तिम। ३. मधु का प्याला। ४. फूल के रंग का द्रव (जीवित रंग वाला द्रव, शराब) ५. साज-शृङ्गार रत। ६. प्रेम-पात्र। ७. सुन्दर-वदनों के चेहरे का वह रङ्ग जो लाला के फूल जैसा हो। ८. जिन पर सुन्दरता भी अभिमानित हो। सुन्दरता का अभिमान जिसके आधार पर हो। ९. एक प्रकार का वाद्य। १०. एक प्रकार का वाद्य। ११. गायक। १२. चमका देना, सजाना, आइना लगाना। १३. लीला एवं कौतुक रचने वाले। १४. एक प्रकार के प्रहसन।

مثنوی در بیان کدخدائی نواب آصف الدولہ بہادر' میں تصویر گری کی زیادہ گنجایش تھی مگر ہے کیا ؟ وہی رسمی خطاب ساقی سے : مثلاً

آ ساقی کہ کدخدائی ہے طبع نواب ادھر کو آئی ہے

. . . .

چند اشعار کے بعد ؎

آ ساقی کہ جمع ہیں احباب سب مہیا ہیں عیش کے اسباب
لا وہ جوں آفتاب ساغرِ زر آب گل رنگ سے لبالب کر

چند اشعار کے بعد جن کا تعلق مطرب و مغنی سے ہے . . . ؎

آ ساقی کہ روشنی ہے خوب محوِ آرایش آج ہیں محبوب

. . . .

شیشہ شیشہ شراب ہے درکار صحبتِ عیش کو چھکا یک بار
لالہ رنگ رُخِ نکویاں کو مایۂ ناز خوب رویاں کو
اس پری کو نکال شیشے سے رنگ مجلس میں ڈال شیشے سے

اور اسی طرح شاعر' آرایش و زیبایش کی ہر تصویر کی ابتدا ساقی اور گلابی کے تخاطب سے کرتا ہے' روشنی کا ذکر' رباب و چنگ کا تذکرہ' نوبت بجنے کی صدا —— غرض عیش و مسرت کے ہر روپ کو مے سے وابستہ کرتا جاتا ہے اور آخر میں کہتا ہے ؎

آ مغنی غزل سرائی کر کچھ مزے سے بھی آشنائی کر
پڑھ غزل میر کی جو ہووے یاد ان کو تو اس میں کہتے ہیں استاد

یہ مثنوی یوں ساقی اور مے کے تذکرے سے لبریز ہے مگر اس میں تاثیر اور کیفیت ندارد

مثنوی در جشن ہولی و کت خدائی میں مرقع نگاری بہتر ہے۔ ساری تقریب کی تصویر ابھری نظر آتی ہے۔ شہر کی سجاوٹ اور آئینہ بندی' گل کاغذ کی بہار' زن رقاص کا رقص' چراغاں اور شمع و فانوس کی نورانی فضا' نوبتیوں کے پرے اور ان کا اصول سے نوبت بجانا' جھانجھ کی آواز' زعفرانی لباس قہقے' خیال سوانگ

भव्यता एवं मनोरमता के साथ आँखों के सामने नाच जाते हैं—किन्तु इसमें भी शराब की चर्चा बार-बार आने के बावजूद यह प्रसग फीका, सरसरी और उथला-सा लगने लगता है। यही हाल "मसनवी दर बयाने-होली" का है। एक मुख़म्मस,[1] जिसका आरम्भ है:—

बेज़ुबाना हैं कई हर्फ़ ज़बां पर, कर ग़ौर आज कहता हूं कि है ख़ुमकद-ए-दिल में जोश

इसमें मय और तत्सम्बन्धी शब्दावली प्रतीक रूप में प्रयुक्त है और मस्ती और क़लन्दरी के अर्थ के अतिरिक्त इन शेरों से कुछ नहीं निकलता।

इसके बाद भी जो मुझे आग्रह है कि "मीर" मयख़ाने की सभी स्थितियों और मयख़ारी की प्रतीतियों के जानकार थे तो यह इस आधार पर है कि उनके बिखरे हुए शेरों में ऐसे पते की बातें मिलती हैं जिनका वर्णन वही कर सकता है जिसे इन बातों का पता है। उनके मयकदे का नक़शा जो उनके शेरों से बनता है वह कुछ इस प्रकार का है—कि बदलियां जब छा जाती हैं और पश्चिम से बादल उमँड-उमँड कर आते हैं (उदाहरण पहले आ चुका है) तो मयकश मयकदे में या लबे-आबे-जू[2] मिल बैठते हैं और जाम-ो-साग़र गर्दिश में आते हैं, ऐसे में कुछ यूं लगता है कि गुलाबी रोती है और जाम हँसता है। या यूं कहिये कि शीशा हिचकियां लेने लगता है और साग़र हँसता है। फूल की सी दारू से मयख़ाना महकने लगता है, चुस्कियां लेने वाले पी-पी कर बहकने लगते हैं और पूर्ण मत्त हो जाने पर पगड़ियों के पेच खुल जाते हैं। मयख़ाने के गुस्ताख़ लौंडे मयख़ारों को छेड़ते हैं। उन बदशराबियों के अन्दर अजीब हंगामा होता है। कुछ कटमस्ते गालियां बकने लगते हैं, बहुत से नशे में शोर-शराबा करते, गिरते-पड़ते बाहर निकल जाते हैं। कुछ ऐंडते हे, अकड़ते हैं, कुछ लड़खड़ाते और झूम-झूम जाते हैं। साक़ी भी बदशराब हो जाता है। कुछ बाहर निकल कर अंगूर की बेलों की छाँव में बैठकर अश्लील बातें करते हैं। चांदनी रात, सितारे और मित्र-मण्डली—मयकशी के लिए यह अनिवार्यताएं भी कुछ कम महत्त्व की नहीं। किन्तु यह भी है कि कुछ मयख़्वार मयकदे की पिछली छत पर चादरे-महताब[3] तान कर सो रहते हैं।

मय के लिए बाग़ों में भी रात की बैठक जमती है। तरसा-बचों[4] के साथ

१. पञ्चपदी नज़्म, हर पाँच पद में "रदीफ़-क़ाफ़िये" की पाबन्दी होती है। उसके बाद रदीफ़ क़ाफ़िया बदल जाता है। पाँच पद मिलकर एक "बन्द" कहे जाते हैं। पूरे मुख़म्मस में अनेक बन्द होते हैं। २. नदी-तट पर। ३. चाँदनी रूपी चादर। ४. एक जाति थी जिसके यहाँ मदिरापान निषिद्ध नहीं था। ईसाई और पारसी लोग, जो मद्यपान को निषिद्ध नहीं समझते।

رنگے ہوئے ہاتھی ، پتلیوں کے ناچ ، شب بازوں کی شب بازی ، نقل معقول (رہس) وغیرہ وغیرہ ، نہایت ہی پر تکلف منظر چشمِ خیال کے سامنے آجاتا ہے ـــــ مگر اس میں شراب کا ذکر بار بار آنے کے باوجود ، سرسری اور سطحی سا معلوم ہوتا ہے یہی حال مثنوی در بیان ہولی کا ہے ۔ ایک مخمس جس کی ابتدا ہے

بیخودانہ ہیں کئی حرف زباں پر گرگوش آج کہتا ہوں کہ ہے خم کدۂ دل میں جوش (الخ)

اس میں مے کی اصطلاحیں علامت کے طور پر استعمال ہوئی ہیں اور قلندرانہ معانی کے سوا ان اشعار سے کچھ نہیں نکلتا

اس کے باوجود جو مجھے اصرار ہے کہ میر مے خانے کے کوائف اور مے خواری کی کیفیتوں سے آگاہ تھے ، تو اس بنا پر ہے کہ ان کے بکھرے ہوئے اشعار میں ایسی پتے کی باتیں ملتی ہیں جن کا پتہ وہی دے سکتا ہے جسے ان باتوں کا پتہ ہے ۔ ان کے مے کدے کا نقشہ جو ان کے اشعار میں بنتا ہے وہ کچھ اس طرح کا ہے

بدلیاں جب چھا جاتی ہیں اور قبلے کی طرف سے بادل اُمڈ اُمڈ کر آتے ہیں (مثالیں پہلے آچکی ہیں) تو مے کش ، مے کدے میں یا لب آب جو مل بیٹھتے ہیں اور جام و ساغر گردش میں آتے ہیں ۔ ایسے میں کچھ یوں لگتا ہے کہ گلابی روتی ہے اور جام ہنستا ہے ۔ یا یوں کہیے کہ شیشہ ہچکیاں لینے لگتا ہے اور ساغر ہنستا ہے ۔ پھول کی سی دارو سے مے خانہ مہکتا ہے ۔ جرعہ کش پی پی کے بہکنے لگتے ہیں اور بدمستی میں پگڑی کے پیچ کھل جاتے ہیں ۔ مے خانے کے گستاخ لونڈے ، مے خواروں کو چھیڑتے ہیں ۔ ان بدشرابیوں کے اندر عجب ہنگامہ ہوتا ہے ۔ کچھ کٹ مستے گالیاں بکنے لگتے ہیں ، بہت سے مستی میں شور شرابا کر کے گرتے پڑتے باہر نکل جاتے ہیں ۔ کچھ اینڈتے ہیں ، اکڑتے ہیں ، کچھ لڑکھڑاتے اور جھوم جھوم جاتے ہیں ، ساقی بھی بدشراب ہوجاتا ہے ۔ کچھ باہر نکل کر تاک کی چھاؤں تلے ہو بیٹھتے ہیں اور بدکلامی کرتے ہیں ۔ چاندنی رات ، ستارے اور محفل احباب ـــ مے کشی کے یہ لوازم بھی کچھ کم نہیں مگر یہ بھی ہے کہ بعض مے خوار ، مے کدے کی پشت بام پر چادر مہتاب تان کر سورہتے ہیں

مے کے لیے باغوں میں بھی شب نشینی ہوتی ہے ، ترسا بچوں کے ساتھ خونِ کبوتر

ख़ूने-कबूतर की सी मय पी जाती है। अह्‌बाब सर जोड़-जोड़ कर मय पीते हैं। पम्बा-दहाँ[1] शीशा सामने होता है। इतने में मुहतसिब[2] आता है। शीशा-ब-पैमाना पर संगबारी[3] होती है और यह महफ़िल दरहम-बरहम[4] हो जाती है।

"मीर" के यहाँ एहतियात[5] की नसीहतें[6] भी मिलती हैं। जैसे वह कहते हैं कि "मीरज़ाओं"[88] (अर्थात् नाज़ुक-मिज़ाज नौजवानों) को मय नहीं पीनी चाहिये क्योंकि वह बर्दाश्त नहीं कर सकेंगे। जवानी की और बात है किन्तु बुढ़ापे में बदमस्ती और शोर-शराबा कदापि उचित नहीं। यद्यपि कुछ कटमस्ते बुढ़ापे में भी छोड़ते नहीं।

"ग़ालिब" की तरह "मीर" भी शराब पीने को गम से मुक्ति का साधन समझते हैं :—

ऐ काश! हमको सुक्र[7] की हालत रहे मुदाम[8] तां[9] हाल[10] की ख़राबी से हम बेख़बर रहें

और अन्त में उन्होंने अपने निजी अनुभव से यह उपदेश भी किया है कि मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि हुशियारी[11] के बराबर कोई नशा नहीं :

हम मस्त भी हो देखा, आख़िर मज़ा नहीं है हुशियारी के बराबर कोई नशा नहीं है

निष्कर्ष यह निकलता है कि "मीर" के शेरों से "मीर" के स्वयं अपने ज्ञान का पता चलता है। बहुत से शेरों में मात्र रस्मी और परम्परागत बातें हैं, बहुत से शेरों में मय आदि प्रतीक अथवा रूपक-स्वरूप हैं। किन्तु एक बड़ी तादाद ऐसे शेरों की भी है जिनमें वस्तुस्थिति के चित्रण का रंग पाया जाता है: "मय की ताज़ीम करो, शीशे का इकराम करो", "यारो मुझे मआफ़ रखो मैं नशे में हूँ" आदि ग़ज़लों को पढ़ने के बाद कहना कठिन हो जाता है कि "मीर" की बातें केवल परम्परानुकरण अथवा सुनी-सुनाई हैं। अगर कोई फिर भी इसी पर आग्रह करे तो वह स्वयं ही बतलाए कि इन ग़ज़लों में जो जोश, आनन्द, उल्लास और उछाह है वह आया कहाँ से है? कुछ ऐसा भी नहीं कि स्वर्गीय "मीर" को मैं बादागुसार सिद्ध करने पर तुला हुआ हूँ—ख़ुदा करे कि उन्होंने इस दुष्टा को कभी छुआ तक न हो और यह सब मात्र सुनी-सुनाई हो। ख़ुदा तो सब कुछ जानने वाला भी है और दोषों को अपनी कृपा से छिपा देने वाला भी!

१. रूई के गालों जैसा फेन से भरा शराब का प्याला। २. हिसाब लेने वाला, आलोचक। ३. पत्थर बरसना। ४. बिखरना विशृंखल होना। ५. सावधानी। ६. उपदेश। 88उस युग में "मीरज़ा" शब्द के कई अर्थ प्रचलित थे। अत: "मीरज़ा मुनशी" शब्द उच्छृंखलता का पर्यायवाची है। शहज़ादों, अमीरज़ादों और दूसरे खाते-पीते लोगों को भी "मीरज़ा" कहा जाता था। मुहम्मदशाही युग में एक विशेष प्रकार के विलास-प्रधान जीवन को भी "मीरज़ा मुनशी" कहा जाता था। इसका अर्थ होता था—विलास और निश्चिन्तता। ७. नशा। ८. सदैव। ९. ताकि। १०. वर्तमान। ११. सजगता एवं पूर्ण चेतनता।

کی سی ے پی جاتی ہے۔ احباب سر جوڑ جوڑ کرے پیتے ہیں پنبہ دہان شیشہ سامنے ہوتا ہے اتنے میں محتسب آتا ہے، شیشہ و پیمانے پر سنگ باری ہوتی ہے اور یہ محفل درہم برہم ہو جاتی ہے

میر کے یہاں احتیاط کی نصیحتیں بھی ملتی ہیں، مثلاً وہ کہتے ہیں کہ "میرزاؤں"[1] کو (یعنی نازک مزاج نوجوانوں کو) ے نہیں پینی چاہیے کیونکہ وہ برداشت نہیں کر سکیں گے جوانی کی اور بات ہے مگر پیری میں بدمستی اور شور شرابا ہرگز مناسب نہیں اگرچہ بعض کٹ متے، پیری میں بھی ترک نہیں کرتے

غالب کی طرح، میر بھی ے خواری کو غم سے نجات کا ذریعہ جانتے ہیں ؎

اے کاش ہم کو سکر کی حالت رہے مدام ٭ تا حال کی خرابی سے ہم بے خبر رہیں

اور آخر میں اپنے ذاتی تجربے سے یہ نصیحت بھی کی ہے کہ میں اس نتیجے پر پہنچا ہوں کہ ہشیاری کے برابر کوئی نشہ نہیں ؎

ہم مست بھی ہو دیکھا، آخر مزا نہیں ہے ہشیاری کے برابر کوئی نشا نہیں ہے

حاصل کلام یہ ہے کہ میر کے اشعار سے میر کی واقفیت کا پتہ چلتا ہے۔ بہت سے اشعار میں محض رسمی روایتی باتیں ہیں۔ بہت سے اشعار میں ے و ے خانے کی اصطلاحیں علامت و استعارہ کا رنگ رکھتی ہیں۔ مگر ایک بڑی تعداد اشعار کی ایسی ہی ہے جس میں حالیہ انداز پایا جاتا ہے۔ بعض پوری غزلیں ایسی ہیں جن میں جوش اور نشاط کی کیفیت پائی جاتی ہے۔ "ے کی تعظیم کر دشیشے کا اکرام کرو"۔ "یارو مجھے معاف رکھو میں نشے میں ہوں"۔ ان غزلوں کو پڑھنے کے بعد یہ کہنا دشوار ہو جاتا ہے کہ میر کی یہ باتیں محض تقلیدی یا سنی سنائی ہیں —— پھر بھی کوئی اس پر اصرار کرے تو وہ خود ہی بتلائے کہ ان غزلوں میں جوش اور نشاط و سرمستی کی کیفیت کہاں سے آئی ہے؟ مگر میں بھی میر مغفور کو بادہ گسار ثابت کرنے پر تُلا ہوا نہیں ہوں! چلیے یہی سہی۔ خدا کرے کہ میر نے اس ام الخبائث کو کبھی چکھا تک نہ ہو۔ اور یہ سب باتیں محض شنیدہ سے لکھی ہوں! خدا عالم الغیب بھی ہے اور ستار العیوب بھی

---

[1] اس دور میں میرزا کے کئی معنی ہیں۔ چنانچہ "میرزا منشی" لاابالی پن کا قائم مقام ہے۔ میرزا، شہزادگان، امرا زادگان اور دوسرے کھاتے پیتے لوگوں کو بھی کہا جاتا تھا۔ عہد محمد شاہی میں ایک خاص طرز زیست کو میرزا منشی کہا جاتا تھا —— عیش کوشی اور فارغ البالی۔

मुद्दत रहेंगी याद ये बातें हमारियाँ

शबीहुल-हसन नौनहरवी

"मीर" का यह मिसरा[1] उनके दृढ़ विश्वास एवं आस्था का परिचायक है। यह विश्वास उनमें उस कठिन तपस्या के कारण उत्पन्न हुआ था जिसका अभ्यास उन्होंने जीवनपर्यन्त किया। "मीर" का विश्वास समय के परिवर्तनों के उपरान्त भी सत्य सिद्ध हुआ। आज भी उनकी बातें न केवल लोगों को याद हैं बल्कि मन-पक्ष की प्रबलता स्वीकार करने वालों को सुख-शान्ति प्रदायिनी भी हैं। उनके दीवान[2] के अध्ययन के उपरान्त स्पष्ट प्रतीत होता है कि भावनाएं शुद्ध हो गई हैं। "मीर" ने यह शान्तिप्रदायिनी सामग्री बड़ी परेशानी उठाकर जमा की थी। उन्होंने स्वयं को मिटाकर जीवन को सुभोग्य और सार्थक बनाया था। उन्होंने केवल जीवन की सार्थकता के सूत्र नहीं खोज निकाले बल्कि जीवन बिताने की उपयुक्त विधि और उसे निभाने का विवेक भी अर्जित किया था। "मीर" की बातें इन्हीं महत्त्वपूर्ण समस्यायों के चित्रण के कारण न केवल याद आती हैं बल्कि व्यक्तित्व में आसानी से घुल-मिल जाती हैं। "मीर" की इन बातों के विषय यद्यपि स्वयं उनके अस्तित्व से उद्‌भूत हैं किन्तु उनका अस्तित्व समाज एवं सामान्य जीवन से सम्बद्ध है अतः यह बातें सामान्य जीवन के लिए विस्तृत रूप से उपयोगी है। "मीर" की कला का बड़ा गुण यही है कि वह विशिष्ट और वैयक्तिक आधार रखते हुए भी सामान्य और निर्वैयक्तिक है। अपनी बातों के विशेष महत्त्व और इनकी सामान्य लाभकारिता के विषय में "मीर" ने स्पष्ट संकेत किये हैं। उपरोक्त मिसरे के साथ वाला मिसरा इधर ही इंगित करता है।

१. शेर का प्रत्येक चरण "मिसरा" कहा जाता है। दो चरणों से सम्पूर्ण शेर बनता है। २. अन्तिम अक्षर के आधार पर वर्णमाला के क्रम से (क्रम अन्य भी सम्भव हैं) ग़ज़लों आदि के सङ्कलन को "दीवान" कहा जाता है।

مدّت رہیں گی یاد یہ باتیں ہماریاں

شبیہ الحسن نونہروی

میرؔ کا یہ مصرعہ ان کے مستحکم اعتماد اور یقین کو ظاہر کرتا ہے ان ہیں یہ اعتماد اس کڑی ریاضت کی وجہ سے پیدا ہوا تھا جو عمر بھر جاری رہی۔ میرؔ کا یقین زمانے کی تبدیلیوں کے باوجود درست ثابت ہوا۔ آج بھی ان کی باتیں نہ صرف لوگوں کو یاد ہیں بلکہ صاحبان دل کے لیے تشفی اور تسکین کا سبب ہیں۔ ان کے دیوان کے مطالعہ کے بعد جذبات کی تطہیر کا احساس ہوتا ہے۔ میرؔ نے یہ سامان سکون بڑی پریشانی اٹھاکر جمع کیا تھا۔ انھوں نے اپنے کو مٹاکر زندگی کو خوشگوار اور بامعنی بنایا تھا۔ انھوں نے صرف زندگی کی معنویت کا سراغ نہیں لگایا تھا بلکہ زندگی بسر کرنے کا سلیقہ اور شعور بھی دریافت کیا تھا۔ میرؔ کی باتیں انھیں اہم مسائل کی تصویرکشی کی وجہ سے نہ صرف یاد آتی ہیں بلکہ شخصیت میں آسانی کے ساتھ گھل مل جاتی ہیں۔ میرؔ کی ان باتوں کا موضوع اگرچہ خود ان کی ذات ہے مگر ان کی ذات کا رشتہ سماج اور عام زندگی سے جُڑا ہوا ہے لہذا یہ باتیں عام زندگی کے لیے وسیع افادیت رکھتی ہیں میرؔ کے فن کی بڑی خوبی یہی ہے کہ وہ خصوصی اور ذاتی بنیاد رکھنے کے باوجود عمومی اور غیر شخصی ہے۔ اپنی باتوں کی خصوصی اہمیت اور عمومی فائدے کے متعلق میرؔ نے واضح اشارے کیے ہیں تذکرۂ بالا مصرعہ اسی سمت اشارہ کرتا ہے

پڑھتے پھریں گے گلیوں میں ان ریختوں کو لوگ مدت رہیں گی یاد یہ باتیں ہماریاں

لوگوں سے گلیوں میں ان ریختوں کو پڑھتے پھرنے کی توقع کرنا عوام سے میرؔ کے فن کے رابطہ کی نشان دہی کرتا ہے

पढ़ते फिरेंगे गलियों में इन रेख़्तों[1] को लोग   मुद्दत रहेंगी याद ये बातें हमारियाँ ।

लोगों से गलियों में इन "रेख़्तों" को पढ़ते फिरने की आशा रखना जन-सामान्य से "मीर" की कला के सम्बन्ध का संकेत है ।

शेर मेरे हैं सब ख़्वास[2]-पसन्द   पर मुझे गुफ़्तगू[3] अवाम[4] से है ।

उनके शेरों का ख़्वास-पसन्द होना दूसरी चीज़ है मगर उनमें वास्तविक सम्बोधन जन-सामान्य से ही है । स्पष्ट है कि यहाँ "अवाम" का अभिप्राय नासमझ और कुरुचिग्रस्त लोग नहीं । बल्कि यह शब्द प्रतीक है व्यापकता का ।

"मीर" ने अपनी कला पर विश्वास के कारण उसकी व्यापकता, चिरस्मरणीयता एवं प्रभावकारिता के विषय में जो अनुमान किया था उसकी व्याख्या विभिन्न शब्दों में की है । कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं:—

जाने का नहीं शोर सुख़न[5] का मेरे हर्गिज़[6]   ता-हश्र[7] जहाँ[8] में मेरा दीवान रहेगा

———

मुल्कों-मुल्कों, शहरों-शहरों, क़रिया[9], क़स्बा-व-देह[10]-ओ-दयार[11]
शेर-ओ-बैत[12]-ओ-ग़ज़ल पर अपने हंगामा है घर-घर आज

———

सुख़न-मुश्ताक़[13] है आलम[14] हमारा   बहुत आलम[15] करेगा ग़म हमारा※
पढ़ेंगे शेर रो-रो लोग बैठे   रहेगा देर तक मातम[16] हमारा

———

अगर-चे[17] गोशा-गुज़ीं[18] हूँ मैं शायरों में "मीर"   प' मेरे शोर ने रू-ए-ज़मीं[19] तमाम लिया▣

———

१. मौलाना मुहम्मद हुसैन 'आज़ाद' ने इस शब्द की परिभाषा में स्पष्ट किया है . "इस जबान को रेख़्ता भी कहते हैं । क्योंकि विभिन्न भाषाओं ने इसे 'रेख़्ता' किया है । जैसे दीवार को ईंट, मिट्टी, चूना, सफेदी वग़ैरह से पुख़्ता करते हैं । या यह कि—'रेख़्ता' के अर्थ है गिरी पड़ी, परेशान चीज़ । चूंकि इस भाषा में विभिन्न भाषाओं के शब्द बिना किसी पूर्वनिश्चित नियम के आकर एकत्र हुये हैं इसलिये इसे 'रेख़्ता' कहते है ।"—इस भाषा की रचना को उसी प्रकार "रेख़्ता" कहा गया है जैसे हम यह कहें कि "हम हिन्दी लिखते हैं ।" २. विशिष्ट-जन की रुचि के । ३. बात-चीत । ४. जन-सामान्य । ५. वाणी । ६. कदापि । ७. प्रलय-काल तक । ८. विश्व । ९. ऐसे गाँव जहाँ बाज़ार हों । १०. सामान्य गाँव । ११. बस्ती, गली । १२. सामान्यतः शेर ही का अर्थ देता है; किन्तु यहाँ सम्भवतः ऐसा शेर अभीष्ट है जिसमे अपेक्षाकृत काव्यात्मक गुण कम हों । १३. श्रवण के लिए उत्सुक । १४. संसार । १५. भीड़, हाल । ※लोग हमारी वाणी सुनने के उत्सुक हैं (वाणी हमारे ग़म को अभिव्यक्ति करेगी और हमारा सम्प्रेषण ऐसा है कि) लोग विभिन्न गलियों को प्राप्त होंगे (अथवा) हमारा ग़म बहुत लोगों को आकृष्ट करके (अभिव्यक्ति होने के उपरान्त) बड़ी भीड़ एकत्र कर लेगा । १६. शोक; शोक की भावात्मक और क्रियात्मक अभिव्यक्ति । १७. यद्यपि । १८. एक कोने में बैठा हुआ । १९. भूतल । ▣ ऐ "मीर", शायरों मे मे मैं एक कोने मे पड़ा हूँ किन्तु मेरे शब्दो ने सम्पूर्ण भूतल को प्रभावित कर रक्खा है ।

شعر میرے ہیں سب خواص پسند	پر مجھے گفتگو عوام سے ہے

ان کے اشعار کا خواص پسند ہونا دوسری چیز ہے مگر اس کے اصل مخاطب عوام ہیں ظاہر ہے کہ یہاں عوام سے مراد ناسمجھ اور بد ذوق افراد نہیں ہیں بلکہ عوام کی لفظ استعارہ ہے وسعت اور ہمہ گیری کے لیے

میر نے اپنے فن پر اعتماد کی وجہ سے اس کی ہمہ گیری دیر پائی اور تاثیر کے متعلق جو اندازہ کیا تھا اس کی تشریح مختلف الفاظ میں کی ہے۔ چند مثالیں درج ذیل ہیں

جانے کا نہیں شور سخن کا مرے ہرگز	تا حشر جہاں میں مرا دیوان رہے گا

ملکوں ملکوں، شہروں شہروں، قریہ قصبہ و دیہہ و دیار
شعر و بیت و غزل پر اپنے ہنگامہ ہے گھر گھر آج

سخن مشتاق ہے عالم ہمارا
بہت عالم کرے گا غم ہمارا
پڑھیں گے شعر رو رو لوگ بیٹھے
رہے گا دیر تک ماتم ہمارا

اگرچہ گوشہ گزیں ہوں شاعروں میں میر
پہ میرے شور نے روئے زمیں تمام لیا

تھا بلا ہنگامہ آرا میر بھی
اب تلک گلیوں میں اس کا شور ہے

تربت میر پر ہیں اہل سخن	ہر طرف حرف ہے حکایت ہے
تو بھی تقریب فاتحہ سے چل	بہ خدا واجب الزیارت ہے

था बला[1] हंगामा-आरा[2] 'मीर' भी अब तलक गलियों में उसका शोर है

तुर्बते-"मीर"[3] पर हैं अह्ले-सुख़न[4] हर तरफ़ हर्फ़ है, हिकायत है[*]
तू भी तक़रीबे-फ़ातहा[5] से चल बख़ुदा[6] वाजिबुज़्ज़ियारत[7] है

"मीर" के वह दावे और आशाएं जो उपरोक्त शेरों में वर्णित हैं हमें "मीर" की उपलब्धियों के सूक्ष्म-पर्यवेक्षण पर आमंत्रित करते हैं ताकि ज्ञात हो सके कि "मीर" ने जीवन के साथ और जीवन ने "मीर" के साथ क्या व्यवहार किया और उसके बाद फल क्या निकला। "मीर" हों या विश्व का कोई भी कवि, कला का वास्तविक मूल्य तो जीवन से उसके सम्बन्ध से ही ज्ञात होता है। कोई भी कवि जीवन को सर्वथा नवीन नहीं देता, वह जीवन को वही लौटाता है जो जीवन से प्राप्त करता है। इसीलिए कलाकार ही के (कृतित्व पक्ष के) दृष्टिकोण से मूल प्रश्न यह नहीं कि कवि ने जीवन को और जीवन ने कवि को क्या दिया। कवि एवं जीवन के मध्य यह लेन-देन मेकानिकी नहीं होता। हर कवि जीवन से एक ही प्रकार के तत्त्व नहीं प्राप्त करता वरन प्रत्येक कवि की व्यक्तिगत विशेषता व्यर्थ हो जाए। जीवन के पास देने के लिये अच्छा-बुरा, उपयोगी-निरुपयोगी सभी कुछ है। मौलिक महत्त्व इसका है कि कवि ग्रहण करने के लिए जीवन के विविध तत्त्वों से क्या चयन करता है ?—इसी चयन पर सर्वस्व निर्भर करता है। यह चयन भी अपनी जगह पर बड़ी उलझी हुई प्रक्रिया है। इस विषय में न तो कवि को पूर्णतः विवश कहा जा सकता है, न पूर्णतः स्वाधीन।

"मीर" ने जीवन से क्या प्राप्त किया और फिर उसे क्या लौटाया यह प्रश्न विकट है। इसके लिए उन समस्त अनुभवों और अवसरों को समक्ष रखना होगा जिन्हें "मीर" ने जी-जान की बाज़ी लगाकर सर किया। जीवन के यह "अवसर" "मीर" के व्यक्तित्व, कला और जीवन-दर्शन के सभी पक्षों पर सीधा प्रभाव डालते हैं। यह अवसर अनवरत रूप से झञ्झाओं से युक्त रहे; फिर भी इन्हीं की गहराइयों में वह अमूल्य रत्न पलता रहा जिसे "मीर" की निरन्तर तपस्या का फल समझना चाहिये।

१. यहाँ अपार और अद्भुत के भाव में। २. हंगामे खड़े करने वाला। ३. "मीर" की समाधि (क़ब्र)। ४. काव्य-प्रेमी। [*] हर्फ़-ो-हिकायत=चर्चाएं, आलोचनाएं। ५. मृतकों की आत्मा की शान्ति के लिए की जाने वाली प्रार्थना (स्वयं प्रार्थना करके उससे अर्जित पुण्य मृतात्मा को अर्पित कर दिया जाता है) के बहाने। ६. ईश्वर साक्षी है। ७. अवश्यमेव दर्शनीय।

میر کے وہ دعوے اور توقعات جو مذکورہ بالا اشعار میں مندرج ہیں میر کے اثاثہ کا تفصیلی جائزہ لینے کی دعوت دیتے ہیں تاکہ یہ معلوم ہوسکے کہ میر نے زندگی کے ساتھ اور زندگی نے میر کے ساتھ کیا سلوک کیا۔ اور اس کے بعد نتیجہ کیا نکلا۔ میر ہوں یا دنیا کا کوئی اور شاعر فن کی اصل قیمت زندگی کے تعلق ہی سے ظاہر ہوتی ہے کوئی بھی شاعر زندگی کو نئی چیز نہیں دیتا ہے۔ وہ زندگی کو وہی چیز لوٹاتا ہے جو زندگی سے حاصل کرتا ہے۔ اس لیے فن کاری کے نقطۂ نظر سے اصل مسئلہ یہ نہیں ہے کہ شاعر نے زندگی کو اور زندگی نے شاعر کو کیا دیا۔ شاعر اور زندگی کے درمیان لین دین میکانکی نہیں ہوتی ہے۔ ہر شاعر زندگی سے ایک ہی طرح کی چیز نہیں حاصل کرتا ورنہ شاعروں کی انفرادیت بے معنی ہو جائے۔ زندگی کے پاس دینے کے لیے خراب اور اچھا فضول اور فائدہ مند بہت کچھ ہے۔ اصل سوال یہ ہے کہ شاعر حاصل کرنے کے لیے زندگی کے گوناگوں اسباب میں سے کیا منتخب کرتا ہے اسی انتخاب پر سارا دارو مدار ہے۔ یہ انتخاب بھی اپنی جگہ پر بڑی پیچیدہ چیز ہے۔ اس میں نہ شاعر کو مجبور کہا جاسکتا ہے اور نہ آزاد

میر نے زندگی سے کیا حاصل کیا اور پھر اسے کیا لوٹایا یہ ایک بڑا وقت طلب مسئلہ ہے۔ جس کے لیے ان تجربوں اور مرحلوں کو پیش نظر رکھنا ہوگا۔ جنھیں میر نے دل اور جان کی بازی لگاکر سر کیا ہے۔ زندگی کے یہ مراحل میر کی شخصیت فن اور نظریۂ حیات کو براہ راست متاثر کرتے ہیں۔ یہ مرحلے مسلسل طوفان آشنا رہے مگر انھیں کے فن میں۔ وہ گوہر تاب دار پرورش پاتا رہا ہے جسے میر کی مسلسل ریاضت کا حاصل سمجھنا چاہیے

میر نے زندگی سے بڑے تجربات حاصل کیے تھے۔ زندگی کے مسائل نے خوب اچھی طرح ان کا امتحان لیا۔ اسی طرح انھوں نے بھی زندگی کو خوب اچھی طرح پرکھا تھا۔ جس کا نتیجہ یہ ہوا کہ میر کی آپ بیتی زندگی کے مسائل میں اور زندگی کے مسائل میر کی آپ بیتی میں بغیر کسی اجنبیت کے ڈھل گئے اور اسی لیے میر کی شاعری میں پڑھنے والے کو فرد اور زندگی کے درمیان ایسی ہم آہنگی ملتی ہے کہ دونوں کو ایک دوسرے سے جدا کرنا ممکن نہیں۔ کسی بھی انسان کے نجی اور ذاتی مسائل دوسروں کے لیے

"मीर" ने जीवन से बड़े अनुभव प्राप्त किए थे। जीवन की समस्याओं ने ख़ूब अच्छी तरह उनकी परीक्षा ली थी इसी प्रकार उन्होंने भी जीवन को अच्छी तरह परखा था—जिसका फल यह हुआ कि "मीर"-बीती जीवन की समस्याओं में और जीवन की समस्याएं "मीर"-बीती में अनन्य भाव से ढल गए। इसीलिए "मीर" के काव्य में पाठक को व्यक्ति और समाज के मध्य ऐसी एकरूपता मिलती है कि दोनों को एक दूसरे से विलग करना संभव नहीं। सामान्यतः किसी की भी व्यक्तिगत समस्याएं अन्य लोगों के लिए रुचिकर नहीं होतीं। यदि कोई व्यक्ति विलास-वैभव में जीवन व्यतीत करता है तो सभी लोगों को भला उससे क्यों रुचि होने लगी ? या, यदि कोई व्यक्ति कठिनाई या विपत्तिग्रस्त हो जाता है तो मानवीयता के नाते उससे सभी को सहानुभूति होगी किन्तु यह सहानुभूति चिर-स्थायी नहीं रह सकती—इसी प्रकार यदि किसी को प्रेम-पीर सताती है तो भला दूसरों को उससे क्या सम्बन्ध हो सकता है ? किन्तु—जीवन की यही निजी और नितान्त वैयक्तिक धरोहर जब किसी कलाकार के हाथ लगती है तो उससे सभी को अपनत्व अनुभव होने लगता है और यदि कलाकार उच्चस्तर का है तो यह लगाव, यह सम्बन्ध शाश्वत रहता है। इसका कारण यह है कि कलाकार अपने अस्तित्व को जीवन-मात्र का प्रतीक (प्रतिबिम्ब) बना देता है और अपनी व्यक्तिगत समस्याओं में भरपूर जीवन की झलकियाँ दिखाता है जिसके कारण हम उसके द्वारा सम्प्रेषित अनुभवों को स्वयं अपना अनुभव समझने लगते हैं। "मीर" के काव्य में यही विशेष गुण है। यही तत्व उनको एक महान् कलाकार बनाता है। उनके शेर हमें इस कारणवश अच्छे नहीं लगते कि वह "मीर" की उक्तियाँ हैं—बल्कि वह हमें स्वयं अपने ही अनुभूत प्रतीत होते हैं जिन्होंने कलाकार के हाथों एक हृदयंगम होने वाला रूप प्राप्त कर लिया है।

कमसे कम उर्दू के किसी अन्य शायर के दीवान में आप-बीती का उतना बड़ा भण्डार नहीं मिलता जितना कि "मीर" के कुल्लियात में। उनकी ग़ज़लों को छन्दोबद्ध आप-बीती कहना सर्वथा उचित है। "मीर" के कुल्लियात में वर्णित शायद ही कहीं कोई ऐसा अनुभव, ऐसी प्रतीति अथवा भावना हो जिसमें स्वयं उनके आत्मदाह की संगति न हो। और जिसमें नितान्त वैयक्तिक होने पर भी समष्टि की आत्मा निहित न हो। इस प्रकार—"मीर" को पढ़ने के उपरान्त न केवल यह कि हम अपने को अधिक पढ़ और समझ लेते हैं बल्कि जीवन को भी अधिक निकट से देखने और समझने का सामर्थ्य उत्पन्न कर लेते हैं। "मीर" ने अपने

عام طور سے دل چسپی کا سبب نہیں ہوتے ہیں۔ اگر کوئی شخص عیش اور خوشی میں زندگی بسر کرتا ہے تو تمام لوگوں کو اس سے دل چسپی کیوں ہونے لگی یا اگر کوئی شخص پریشانی اور مصیبت میں گرفتار ہوجاتا ہے تو انسانی تقاضے کے ناطے اس سے سبھی کو ہمدردی ہوگی مگر یہ ہمدردی ہمیشہ نہیں باقی رہ سکتی اسی طرح اگر کسی کو عشق کا آزار لگ گیا ہے تو دوسروں کو اس سے کیا واسطہ ہوسکتا ہے۔ لیکن زندگی کا یہی نجی اور ذاتی اثاثہ جب کسی فن کار کے ہاتھ لگتا ہے تو اس سے سب ہی کو لگاؤ محسوس ہونے لگتا ہے اور اگر فن کار اونچے درجہ کا ہے تو یہ لگاؤ حالات کے بدلنے کے بعد بھی ہمیشہ کے لیے قائم رہتا ہے۔ اس کی وجہ یہ ہے کہ فن کار اپنی ذات کو پوری زندگی کا عکس بنا دیتا ہے اور اپنے ذاتی مسائل میں بھرپور زندگی کی جھلکیاں دکھاتا ہے۔ جس کی وجہ سے ہم اس کے بیان کیے ہوئے تجربات کو خود اپنا تجربہ سمجھنے لگتے ہیں۔ میرؔ کی شاعری میں یہی خوبی ہے۔ یہی چیز ان کو ایک عظیم فن کار بناتی ہے۔ ان کے اشعار ہم کو اس لیے نہیں اچھے معلوم ہوتے ہیں کہ وہ میرؔ کے کہے ہوئے ہیں بلکہ وہ ہم کو خود اپنے ہی تجربات معلوم ہوتے ہیں جنھوں نے فن کار کے ہاتھوں ایک دل نشیں ہیئت اختیار کرلی ہے۔ کم ازکم اردو زبان کے کسی دوسرے شاعر کے دیوان میں آپ بیتی کا اتنا بڑا ذخیرہ نہیں ملتا ہے جتنا کہ میرؔ کے کلیات میں۔ ان کی غزلوں کو منظوم آپ بیتی کہنا درست ہے میرؔ کے دیوان میں شاید ہی کہیں کوئی ایسا تجربہ احساس یا جذبہ ہو جس میں خود ان کے خون جگر کی آمیزش نہ ہو۔ اور جو ذاتی ہونے کے باوجود کائناتی روح اپنے اندر نہ رکھتا ہو۔ اس طرح میرؔ کو پڑھنے کے بعد نہ صرف یہ کہ ہم اپنے کو زیادہ پڑھ اور سمجھ لیتے ہیں بلکہ زندگی کو بھی زیادہ قریب سے دیکھنے اور سمجھنے کی اہلیت پیدا کرلیتے ہیں۔ میرؔ نے اپنی ذات اپنے پڑھنے والے اور زندگی کے درمیان گہرا رشتہ پیدا کرنے کے لیے بڑی کٹھن منزلوں کو طے کیا ہے اور ایک عمر کی کوشش اور جفاکشی کے بعد ریختے کا وہ دھاگا بٹا ہے جس میں یہ بکھرے ہوئے موتی پروئے جاسکیں۔ یہی وجہ ہے کہ میرؔ کی شاعری رسم و رواج سے بہت اونچی نظر آتی ہے۔ میرؔ نے اس بات کی طرف کئی جگہ اشارے کیے ہیں۔ یہاں چند مثالیں درج کی جاتی ہیں۔

व्यक्तित्व, अपने पाठक और जीवन के मध्य गहरा सम्बन्ध स्थापित करने के लिए बड़े दुर्गम मार्ग पार किये हैं और सम्पूर्ण जीवन के प्रयास और कठोर साधना के उपरान्त "रेख़्ते" का वह धागा बटा है जिसमें ये बिखरे हुए मोती पिरोये जा सकें। यही कारण है कि "मीर" की कविता रीति-प्रचलन की क्षुद्रताओं एवं संकीर्णताओं से बहुत ऊँची दिखाई देती है। "मीर" ने इस ओर कई जगह संकेत किये हैं। यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं:—

किस-किस तरह से "मीर" ने काटा है उम्र को
अब "आख़िर-आख़िर आन के"[1] यह रेख़्ता कहा

———

तब गर्म[2] सुख़न कहने लगा हूँ मैं कि इक उम्र
यूँ शम्अ[3] सरे-शाम[4] से ता सुब्ह[5] जला हूँ

———

महवे-सुख़न[6] हम फ़िक्र[7] में रफ़्ता[8] ही बैठे रहते हैं
आप[9] को जब खोया है हमने तब ये गौहर[10] पाए हैं

———

बरहमी[11] हाल की है सारे मेरे दीवान में
सैर कर तू भी ये मजमूआ[12] परेशानी[13] का

———

मुझको शायर न कहो "मीर" कि साहब मैंने
दर्द-ओ-ग़म कितने किये जम्अ[14] तो दीवान किया

———

इन शेरों से उस कठिन अभ्यास का कुछ अनुमान होता है जो "मीर" को जीवन भर करना पड़ा। उनके काव्य की पृष्ठभूमि में लहू का मौज मारता हुआ दरिया, आह और कराह का तेज़ तूफ़ान और आँसुओं की मूसलाधार वर्षा है— जिन सब ने, मिल-जुलकर, अपने को सह्य बनाने के लिए शेर की आकृति धारण कर ली है। इसी लिए शायरी और ग़ज़लगोई[15] "मीर" के लिए एक साधन और आवरण की हैसियत रखती है वरन वस्तुतः उन्हें अपना और जीवन का हाल सुनाना है। उन्होंने इस हाल को सुनाने योग्य बनाने के लिए शायरी का सहारा लिया जिसके कारण न केवल उन्हें अपने भावों के सम्प्रेषण में सुविधा हुई बल्कि

१. अन्ततोगत्वा। २. जीवनबोधक तापयुक्त। ३. अपभ्रंश उच्चारण=शमा। ४. सांझ होते ही। ५. सुबह तक। ६. व ७. काव्य-चिन्तन में लीन। ८. खोए हुये। ९. अहं (स्वत्व)। १०. मुक्ता। ११. विशृंखलता। १२. संग्रह। १३. क्रमहीनता। १४. जमा। १५. ग़ज़ल कहना।

کس کس طرح سے میرؔ نے کاٹا ہے عمر کو　　اب آخر آخر آن کے یہ ریختہ کہا

تب گرم سخن کہنے لگا ہوں میں کہ اک عمر　　جوں شمع سر شام سے تا صبح جلا ہوں

محو سخن ہم فکر میں رفتہ ہی بیٹھے رہتے ہیں　　آپ کو جب کھویا ہے ہم نے تب یہ گوہر پائے ہیں

درہمی حال کی ہے سارے مرے دیواں میں　　سیر کر تو بھی یہ مجموعہ پریشانی کا

مجھ کو شاعر نہ کہو میرؔ کہ صاحب میں نے　　درد و غم کتنے کیے جمع تو دیوان کیا

ان اشعار سے اس شدید کاوش کا کچھ اندازہ ہوتا ہے جو میرؔ کو زندگی بھر کرنا پڑی۔ ان کی شاعری کے پیچھے لہو کا موج مارتا ہوا دریا آہ اور کراہ کا تیز طوفان اور آنسوؤں کی موسلا دھار بارش ہے جس نے مل جل کر اپنے کو قابل برداشت بنانے کے لیے شعر کا جامہ اختیار کرلیا ہے۔ اسی لیے شاعری اور غزل گوئی میرؔ کے لیے ایک ذریعے اور پردے کی حیثیت رکھتی ہے ورنہ حقیقت میں انھیں اپنا اور زندگی کا احوال سنانا ہے انھوں نے اس احوال کو سنانے کے قابل بنانے کے لیے شاعری کا سہارا لیا جس کی وجہ سے نہ صرف انھیں اظہار میں آسانی ہوئی بلکہ سننے والے کو قبول کرنے میں بھی سہولت محسوس ہوئی۔ اس حقیقت کی طرف بھی میرؔ نے اکثر اشارے کیے ہیں جن میں سے چند ذیل ہیں

شعر کے پردے میں میں نے غم سنایا ہے بہت
مرثیے نے دل کے میرے بھی رلایا ہے بہت

اس پردے میں غم دل کہتا ہے میرؔ اپنا
کیا شعر و شاعری ہے یارد شعار عاشق

श्रोता को ग्रहण करने में सुगमता अनुभव हुई। इस तथ्य की ओर भी "मीर" ने अक्सर संकेत किये हैं जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं:—

शेर के पर्दे में मैंने ग़म सुनाया है बहुत
मर्सिये[1] ने दिल के मेरे भी रुलाया है बहुत

इस पर्दे में ग़मे-दिल कहता है "मीर" अपना
क्या शेर-ो-शायरी है, यारो; शआरे-आशिक़[2] ?

इक आफ़ते ज़माँ[3] है ये "मीरे"-इश्क़-पेशा[4]
पर्दे में सारे मतलब अपने अदा[5] करे[6] है

कब और ग़ज़ल कहता मैं इस ज़मीं[7] में लेकिन
पर्दे में मुझे अपना अह्वाल[8] सुनाना था

किया था रेख़्ता पर्दा सुख़न का — सो ठहरा[9] है यही अब फ़न[10] हमारा

ज़ुल्फ़-सा पेचदार है हर शेर — है सुख़न "मीर" का अजब ढब का

"मीर" सन्नाअ[11] है, मिलो उससे — देखो बातें तो क्या बनाता है!

इस प्रकार के शेर बरबस "मीर" के उन "अह्वाल" की तरफ़ मोड़ देते हैं। जिनके सम्प्रेषण के लिए उन्होंने "शेर को पर्दा बनाया" था। और यहीं से उनके काव्य के वह प्रेरक-तत्त्व समक्ष आने लगते हैं जिनका ब्योरा बड़ा ही दुःखपूर्ण किन्तु अन्त में शान्तिप्रद भी है।

"मीर" के जीवन के सरलता से तीन दौर निश्चित किये जा सकते हैं। वह आगरे में जन्मे, दिल्ली में पले और परिपक्व हुए—और उनके जीवन के अन्तिम

१. शोक-सन्ताप की अभिव्यक्ति का काव्य। २. धर्म [अभिप्राय यह है कि प्रेमी का स्वाभाविक धर्म तो प्रेम करना है]। ३. अपने समय का एक साक्षात उपद्रव (अभिधात्मक नहीं; व्यञ्जनात्मक अर्थ में)। ४. जिसका कार्य-क्षेत्र ही प्रेम है, ऐसा "मीर"। ५. व्यक्त। ६. करता। ७. ग़ज़ल के लिए केवल क़ाफ़िया="तुक" ही नहीं, "रदीफ़" भी अनिवार्य है। पहले तो छन्द—क्षेत्र से ही शब्द-सीमित हो जाते हैं, फिर क़ाफ़िये से यह सीमा थोड़ी और संकुचित होती है और रदीफ़ (हर शेर के अन्त में अनिवार्य रूप से आने वाले शब्द) तो इसे एक विशिष्ट क्षेत्र बना देते हैं। इसी लिये हर ग़ज़ल का एक सीमित क्षेत्र होता है उसे ही ज़मीं (ज़मीन) कहते हैं। ८. "हाल" (दशा, स्थिति) का बहुवचन। ९. निर्धारित हुआ है। १०. यहाँ मात्र कला नहीं, कर्म क्षेत्र एवं कर्म (कवि-कर्म) भी। ११. निर्माता (कला-पक्ष से)।

اک آفت زماں ہے یہ میرؔ عشق پیشہ
پردے میں سارے مطلب اپنے ادا کرے ہے

کب اور غزل کہتا میں اس زمیں میں لیکن
پردے میں مجھے اپنا احوال سنانا تھا

کیا تھا ریختہ پردہ سخن کا
سو ٹھہرا ہے یہی اب فن ہمارا
زلف سا پیچ دار ہے ہر شعر ہے سخن میرؔ کا عجب ڈھب کا
میرؔ صناع ہے بلو اس سے
دیکھو باتیں تو کیا بناتا ہے

اس طرح کے اشعار فوراً ذہن کو میرؔ کے ان احوال کی طرف موڑ دیتے ہیں جن کے اظہار کے لیے انھوں نے شعر کو پردہ بنایا تھا اور یہیں سے ان کی شاعری کے وہ محرکات نمودار ہونے لگتے ہیں جن کی تفصیل بڑی درد ناک اور آخر میں سکون بخش بھی ہے

میرؔ کی زندگی کے آسانی کے ساتھ تین دور قرار دیے جا سکتے ہیں۔ وہ آگرے میں پیدا ہوے۔ انھوں نے دہلی میں پرورش پائی اور پختہ ہوے۔ ان کے آخری پچیس تیس برس لکھنؤ میں گزرے جہاں کبھی کبھی آرام سے رہنے کے باوجود وہ مطمئن نہ ہو سکے

آگرہ دہلی اور لکھنؤ ان کی زندگی کی تین علامتیں ہیں ان شہروں میں انھوں نے صرف قیام نہیں کیا بلکہ تجربوں کی ایک بڑی میراث اکٹھا کی۔ حالات کے اتار چڑھاؤ کا مردانگی کے ساتھ مقابلہ کیا اور مسلسل مصیبتوں کے درمیان زندگی بسر کرنے کا گر اور جینے کا سلیقہ دریافت کیا۔ یہ شہر میرؔ کے لیے صرف جغرافیائی اہمیت

पचीस-तीस वर्ष लखनऊ में बीते जहाँ कभी-कभी आराम से रहने पर भी वह सन्तुष्ट न हो सके। आगरा, दिल्ली और लखनऊ उनके जीवन के तीन प्रतीक हैं। इन नगरों में उन्होंने केवल निवास नहीं किया बल्कि अनुभवों की बड़ी सम्पत्ति अर्जित की। परिस्थितियों के उतार-चढ़ाव का पौरुष से सामना किया और निरन्तर विपत्तियों के मध्य जीवन व्यतीत करने का गुर और जीने की विधि ढूंढ निकाली। ये नगर "मीर" के लिए केवल भौगोलिक महत्त्व नही रखते बल्कि यह उन अमिट प्रभावों के प्रतीक हैं जिन्होंने "मीर" के जीवन और कला को एक विशेष सांचे में ढाल दिया। ७६

"मीर" ने लम्बी उम्र पाई थी और उस अवधि में उन पर जो कुछ बीती उसका विस्तृत वर्णन स्वयं उनके काव्य में है। उनके वेदनापूर्ण जीवन का यदि विस्तृत अनुशीलन किया जाए तो असंख्य दुखद अनुभव चीत्कार करते हुए दिखाई देंगे। लेकिन, यदि इन दुखद अनुभवों का वर्ग-विभाजन किया जाए तो "मीर" के व्यथामय जीवन के मुख्य तत्त्व दृष्टि में आ जाएंगे। सौभाग्यवश "मीर" ने अपनी जीवनी के लिए स्वयं ही शीर्षक निश्चित करके कठिनाई दूर कर दी है :—

क्या करूँ ज़िक्र[1] राहे-हस्ती[2] में मरहले[3] आए किस क़दर[4] दर पेश[5]
इन बलाओं से कब रिहाई है इश्क़ है, फ़क़्र[6] है, जुदाई[7] है

इश्क़, फ़क़्र और जुदाई "मीर" की जीवनी के मुख्य शीर्षक या "मरहले" हैं जिनमें उनकी दुःख-गाथा का सम्पूर्ण विस्तार निहित है। आगरा उनके "इश्क़", दिल्ली उनके "फ़क़्र" और लखनऊ उनकी "जुदाई" के प्रतीक हैं। यद्यपि "इश्क़", "फ़क़्र" और "जुदाई" "मीर" के जीवन के पृथक-पृथक मूल्य नहीं—न इन्हें एक दूसरे से अलग किया जा सकता है और न पृथक करके विभिन्न खानों अथवा नगरों में विभाजित किया जा सकता है। फिर भी घटनाओं के विशिष्ट क्रम और गति के आधार पर यह तीनों नगर "मीर" की जीवन-गाथा के तीनों मुख्य तत्वों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

आगरे में "मीर" ने एक असामान्य घराने में आँख खोली थी। उनके पिता अपने युग के साहबे-दिल[8] सूफ़ियों[9] में से थे। उनके घर में फ़क़ीरी और दरवेशी सांगोपांग विद्यमान थीं। वह घराना वाह्य-दृष्टि से भी दरवेश था। वहाँ न दौलत

१. उल्लेख। २. जीवन-मार्ग। ३. विशेष रूप से कठिन स्थल। ४. कितने। ५. दरपेश आना=सामने आना। ६. संन्यास एवं विराग। ७. वियोग। ८. जिनका मन-पक्ष ही प्रबलतम हो (प्रेमवादी बुद्धि की अपेक्षा भावुक मन को अधिक श्रेष्ठ समझते हैं।) ९. प्रेममार्गी मुस्लिम सन्त।

نہیں رکھتے ہیں بلکہ ان کی دائمی اثرات کی علامت ہیں جنھوں نے میرؔ کی زندگی اور فن کو ایک مخصوص سانچے میں ڈھال دیا تھا۔ میرؔ نے طویل عمر پائی اور اس عرصے میں ان پر جو کچھ گزری اس کا تفصیلی اظہار خود ان کی شاعری کے اندر موجود ہے ان کی غم سے بھری ہوئی زندگی کا اگر تفصیلی جائزہ لیا جائے تو بے شمار دردناک تجربے فریاد کرتے ہوئے نظر آئیں گے لیکن اگر ان غم انگیز تجربات کی گروہ بندی کی جائے اور انھیں نوعیت کے اعتبار سے مختلف قسموں میں بانٹ دیا جائے تو میرؔ کی غم زدہ زندگی کے اہم عنوانات نظر کے سامنے آجائیں گے۔ خوش قسمتی سے میرؔ نے اپنی سوانح حیات کے لیے خود ہی عنوان قائم کرکے مشکل کو آسان کر دیا ہے

کیا کروں نقل راہ ہستی میں مرحلے آئے کس قدر درپیش

ان بلاؤں سے کب رہائی ہے عشق ہے، فقر ہے، جدائی ہے

عشق، فقر اور جدائی میرؔ کی زندگی کے اہم عنوان یا مرحلے ہیں جن میں ان کی داستان غم کی ساری تفصیل چھپی ہوئی ہے۔ آگرہ ان کے فقر کی، دہلی ان کے عشق کی اور لکھنو ان کی جدائی کی علامت ہے۔ اگرچہ عشق، فقر اور جدائی میرؔ کی زندگی کی علیحدہ علیحدہ قدریں نہیں ہیں نہ ان سب کو ایک دوسرے سے الگ کیا جاسکتا ہے اور نہ جدا کرکے مختلف خانوں اور شہروں میں بانٹا جا سکتا ہے۔ پھر بھی واقعات کی مخصوص نمود اور رفتار کی بنا پر یہ تینوں شہر میرؔ کی داستان حیات کے ان تینوں عنوانات کی مخصوص نمائندگی کرتے ہیں

آگرے میں میرؔ نے ایک غیر معمولی گھرانے میں آنکھ کھولی تھی۔ ان کے والد اپنے عہد کے صاحبان دل صوفیوں میں تھے۔ ان کے گھر میں فقیری اور درویشی اپنی صورت اور معنویت کے اعتبار سے موجود تھی۔ وہ گھرانہ صورت کے اعتبار سے درویش تھا۔ نہ وہاں دولت تھی نہ حکومت تھی۔ نہ اچھا کھانے کو تھا نہ اچھا پہننے کو۔ معاشی اعتبار سے وہ آگرے کا ایک معمولی گھرانہ تھا۔ میرؔ کے والد نے انتقال کے بعد کافی قرضہ بھی چھوڑا تھا جس کی ادائیگی کی ذمہ داری میرؔ پر اس وقت عائد ہوئی جب کہ

थी न हुकूमत। न अच्छा खाने को था न अच्छा पहनने को। आर्थिक दृष्टि से वह आगरे का एक सामान्य घराना था। "मीर" के पिता ने मृत्यु के उपरान्त पर्याप्त ऋण भी छोड़ा था जिसे चुकाने का दायित्व "मीर" पर उस समय पड़ा जब वह कमाने के योग्य भी न हुए थे। यह कल्पना तर्कसंगत होगी कि व्यवहारिक जीवन से "मीर" का पाला पड़ा तो उनका सर्वप्रथम कष्टकर अनुभव रुपये-पैसे की कमी बल्कि अभाव और अत्यन्त दैन्य से उत्पन्न कठिनाइयों से ही सम्बन्धित होगा। वाह्य—स्थूलरूप के अतिरिक्त आन्तरिक—सूक्ष्मरूप में भी उनका घराना फ़क़ीरी में एक विशेष स्थान रखता था। न केवल यह कि उनके पिता अपने युग के एक बड़े दुरवेश थे बल्कि उनके पिता के मुरीद[1] अमानुल्लाह जिन्होंने "मीर" के पालन में बड़ा श्रम किया था स्वयं एक सन्तोषी और निःस्पृह फ़क़ीर थे। "मीर" ने अपने प्रारम्भिक जीवन और दरवेशाना वातावरण के विषय में स्वयं भी बहुत कुछ लिखा है जिसका विवरण यहाँ अवाञ्छानीय है। उनके काव्य में भी इस प्रकार के संकेत विद्यमान हैं जिनसे उनके घराने की पवित्रता, सन्तोषप्रियता और दुरवेशी का पता चलता है।

क्या ख़ानवाँ[2] का अपने तुमसे कहूँ तक़द्दुस[3]
क़ुहुल-क़ुदुस[4]-इक-अदना[5] दरबान[6] है हमारा

सार-रूप में यहाँ इतना कह देना पर्याप्त होगा कि आत्मिक और भौतिक दृष्टि से दैन्य निजत कठिनाई और दुरवेशी की उत्पन्न की हुई निःस्पृहता और सन्तोष उस वातावरण के विशेष गुण थे जिसमें "मीर" पले थे। "मीर" के समस्त जीवन में दरिद्रता में जो आन-बान, उपवासों में निरन्तर रहने पर भी जो तीखापन और फ़क़ीरी में जो दृढ़ता और निःस्पृहता मिलती है वह उनके दुरवेशाना-वातावरण के इन्हीं दोनों पक्षों की देन है।

आगरे से निकलकर "मीर" दिल्ली पहुँचे। सम्भवतः उनकी यात्रा का उद्देश्य दैन्य-दुर्दशा से छुटकारा पाना भी रहा होगा। दिल्ली पहुँचकर "मीर" की सभी आशाएं सपना बन गयीं। वहाँ उन्होंने भारी विशृंखलता, दारिद्र्य, हत्याओं और नृशंस विनाशों का साम्राज्य देखा! "मीर" के युग में दिल्ली उत्क्रान्तियों की क्रीड़ास्थली बनी हुई थी। वाह्य आक्रमण और आन्तरिक अशान्ति दिल्ली का

१. सूफ़ी-सन्तों के ऐसे शिष्य जो पूर्ण आत्मसमर्पण कर गुरु का मनसा, वाचा, कर्मणा अनुकरण करते थे। २. वंश, कुटुम्ब,। ३. पवित्रता। ४. वह फ़रिश्ता जो अपनी पवित्रता के लिए विख्यात है। ५. तुच्छ, साधारण। ६. द्वारपाल।

وہ کمانے کے قابل بھی نہ ہوئے تھے۔ یہ قیاس کرنا بالکل درست ہوگا کہ عملی زندگی سے جب میر کا سابقہ پڑا تو ان کا سب سے پہلا تکلیف دہ تجربہ روپے پیسے کی قلت بلکہ نایابی اور نہایت مفلسی کی لائی ہوئی پریشانیوں سے متعلق ہوگا۔ صورت کے علاوہ معنویت کے حساب سے بھی میر کا گھرانا فقیری میں خاص امتیاز رکھتا تھا نہ صرف یہ کہ ان کے والد اپنے عہد کے ایک بڑے درویش تھے بلکہ ان کے والد کے مرید امان اللہ جنھوں نے میر کی پرورش میں بڑی محنت اٹھائی تھی خود ایک قناعت پسند اور بے نیاز فقیر تھے۔ میر نے اپنی ابتدائی زندگی درویشانہ ماحول کے متعلق خود بھی بہت کچھ لکھا ہے جس کی تفصیل یہاں غیر ضروری ہے خود ان کے دیوان میں بھی اس طرح کے اشارے موجود ہیں کہ جس سے ان کے گھرانے کے تقدس قناعت اور درویشی کا پتہ چلتا ہے

کیا خانداں کا اپنے تجھ سے کہیں تقدس
روح القدس اک ادنیٰ دربان ہے ہمارا

خلاصہ کے طور پر یہاں اس قدر کہہ دینا کافی ہوگا۔ روحانی اور جسمانی اعتبار سے مفلسی کی پیدا کردہ پریشانی اور درویشی کی پیدا کردہ بے نیازی اور قناعت اس ماحول کی خصوصی صفت تھی کہ جس میں میر نے پرورش پائی تھی۔ میر کی پوری زندگی اور مفلسی میں جو آن بان، فاقوں میں جو تیکھاپن، فقیری میں جو استقلال اور بے نیازی ملتی ہے وہ ان کے درویشانہ ماحول کے انھیں دونوں پہلوؤں کی دین ہے

آگرے سے نکل کر میر دہلی پہونچے۔ غالباً اس سفر کا مقصد مفلسی سے چھٹکارا حاصل کرنا رہا ہوگا۔ دہلی پہونچ کر میر کی ساری امیدیں خواب وخیال بن گئیں۔ وہاں انھوں نے پریشانی و غربت قتل و غارت کا دور دورہ دیکھا۔ میر کے عہد میں دہلی انقلاب کا مرکز بنی ہوئی تھی۔ بیرونی یورش اور اندرونی بدامنی دہلی کا روز مرّہ تھا۔ بادشاہ سے لے کر امیر و غریب تک امن و عافیت کی زندگی بھلا چکے تھے۔ انقلاب خوں ریزی اور لوٹ مار نے دہلی کے نہ معلوم کتنے مالدار گھرانوں کو پریشانی و فاقہ مستی کا مجسمہ بنا دیا تھا۔ ایسے حالات میں میر کی مفلسی اور فقیری کا مداوا کیا ہوتا۔ ان کے معاشی حالات بغیر کسی خاص تبدیلی کے تقریباً جوں کے توں برقرار رہے مگر دہلی

नित्य का व्यापार था। बादशाह से लेकर सामान्य-जन तक सुख-शान्ति का जीवन भुला चुके थे। आए दिन की इन उत्क्रान्तियों, रक्तपातों और लूट-मार ने दिल्ली के न जाने कितने सम्पन्न घरानों को विपत्तिग्रस्त, फ़ाक़ामस्ती का साक्षात प्रतिरूप बना दिया था। ऐसी परिस्थिति में भला "मीर" के दुःख-दारिद्र्य का शमन क्या होता ? उनकी आर्थिक स्थिति अपरिवर्तित—लगभग यथावत् रही। किन्तु, दिल्ली आने से "मीर" को यह लाभ अवश्य पहुँचा कि उन्हें दिल्ली की विपन्नता में अपने व्यक्तिगत दुःख-दारिद्र्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने के लिए एक विशाल पृष्ठभूमि प्राप्त हो गई और यहीं से उन्हें इतना अवसर मिला कि वह अपनी व्यक्तिगत समस्याओं का समाज और वातावरण से तदात्म्य स्थापित करें। बाद में दैन्य के अतिरिक्त भी ऐसी समस्याएं उत्पन्न होती रहीं जिनके कारण "मीर" के व्यक्तित्व का समाज से अधिक दृढ़ सम्बन्ध स्थापित होता गया। इन सम्बन्धों को दृढ़तर बनाना ही कलाकार के रूप में "मीर" का महत्त्वपूर्ण कर्म है। और यही तत्त्व उनके काव्य में दूरगामी प्रभावों का उत्पादक है।

दरिद्रता विषयक बड़े मार्मिक अनुभव और प्रभावपूर्ण विवरण भी "मीर" के कुल्लियात में मिलते हैं। "मीर" ने अपने काव्य में विपन्नता को भी एक उपयोगी तत्त्व के रूप में प्रयोग किया है और इस प्रकार "नाकामियों से काम लेने" के अपने दावे को सच कर दिखाया है। विपन्नता से प्राप्त अनुभवों को "मीर" ने ग़ज़ल में अक्सर बड़े अनोखे ढब से प्रयोग किया है :—

तेरे फ़िराक़[1] में जैसे ख़याल मुफ़्लिस[2] का गई है फ़िक्रे-परेशां[3] कहां-कहां मेरी

—

शाम ही से बुझा-सा रहता है दिल हुआ है चिराग़ मुफ़्लिस का

—

मुफ़्लिसी और फ़क़ीरी दीर्घकालीन संग के कारण "मीर" के जीवन का एक स्थायी मूल्य बन गई थीं। "मीर" के जीवन में कभी-कभी ऐसे अवसर भी आए जब उन्हें आर्थिक दृष्टि से अच्छा-ख़ासा सन्तोष नसीब हुआ किन्तु इस प्रकार कभी इतनी अवधि तक वर्तमान न रह सका कि दैन्य-दुर्भाग्य के स्थायी प्रभाव को नष्ट कर सकता। उनकी आर्थिक दशा जो हर हाल में उनके जीवन में निर्णयात्मक महत्त्व की है, अक्सर उनकी ग़ज़लों में खुलकर आ जाती है :—

१. वियोग। २. दीन। ३. विशृंखल विचार।

آنے سے میرؔ کو یہ فائدہ ضرور پہونچا کہ انھیں دہلی کی پریشاں حالی میں اپنی ذاتی مفلسی اور
اور پریشانی کا مطالعہ کرنے کے لیے ایک وسیع پس منظر مل گیا اور یہیں سے انھیں
اس کا موقع ملا کہ وہ اپنے ذاتی مسائل کو سماج اور ماحول سے ہم آہنگ کرسکیں
بعد میں مفلسی کے علاوہ بھی ایسے مسائل پیدا ہوتے رہے جن کی وجہ سے میرؔ کی ذات
کا سماج سے رشتہ مضبوط ہوتا گیا ۔ ان رشتوں کو مضبوط بنانا ہی بحیثیت فن کار میرؔ
کا اہم کارنامہ ہے اور یہی عنصر ان کی شاعری میں دور رس نتائج پیدا کرنے کا
ذمہ دار ہے

مفلسانہ زندگی کے متعلق بھی میرؔ کے کلیات میں بڑے دل نشیں تجربات اور تاثیر
سے بھرے ہوے بیانات ملتے ہیں ۔ میرؔ نے اپنی شاعری میں مفلسی کو بھی ایک کارآمد
چیز کے طور پر استعمال کیا ہے اور اس طرح ناکامیوں سے کام لینے کے دعوے کو
سچ کر دکھایا ہے ۔ مفلسی کے ذریعے حاصل کیے ہوئے تجربات کو میرؔ نے غزل میں اکثر
بڑے انوکھے ڈھب سے استعمال کیا ہے

ترے فراق میں جیسے خیال مفلس کا　　گئی ہے فکرِ پریشاں کہاں کہاں میری

شام ہی سے بجھا سا رہتا ہے　　دل ہوا ہے چراغ مفلس کا

مفلسی اور فقیری طویل سابقہ کی وجہ سے میرؔ کے لیے زندگی کی ایک
مستقل قدر بن گئی تھی ۔ میرؔ کی زندگی میں کبھی کبھی ایسے مواقع بھی آے کہ
جب انھیں مالی اعتبار سے اچھا خاصا اطمینان نصیب ہوا مگر اس طرح کا اطمینان
کبھی بھی اتنی مدت تک نہیں قائم رہ سکا کہ فقیری اور پریشانی کے پیدا کردہ مستقل
اثر کو زائل کرسکتا ۔ ان کی معاشی حالت جو بہرحال ان کی زندگی میں فیصلہ کن
اہمیت کی حامل ہے اکثر ان کی غزلوں میں کھل کر سامنے آجاتی ہے

کیا کہیں میرؔ جی ہم تم سے معاشِ اپنی غرض
غم کو کھایا کریں ہیں لوہو پیا کرتے ہیں

क्या कहें "मीर" जी हम तुमसे मआश[1] अपनी अर्ज़[2]
ग़म को खाया करें[3] हैं लोहू पिया करते हैं

क्या तुमसे कहूं मआश अपनी   गुज़रे है जैसे - तैसे

मयकशी[4] सुब्ह्-ो-शाम करता हूं   फ़ाक़ामस्ती मुदाम[5] करता हूं

दिल्ली में "मीर" को विपन्नता से छुटकारा मिलना तो संभव न हो सका किन्तु शनैः-शनैः परिस्थितियों ने एक ऐसी करवट ली कि वह आर्थिक अभाव के अतिरिक्त एक अन्य विपत्ति में फँस गए। जो "मीर" के लिए न केवल एक स्थायी मूल्य बन गई बल्कि उनके जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व भी निश्चित हुई। दिल्ली ही में उन्हें प्रेम की कसक का पहला-पहला अनुभव हुआ जिसने "मीर" की व्यक्तिगत परिस्थितियों को कठिन से कठिनतर बना दिया। यह विवरण ज्ञात नहीं कि उन्हें प्रेम किससे हुआ था और इस प्रेम का अन्तिम परिणाम क्या हुआ किन्तु इस सिलसिले में "मीर" पर जो कुछ बीती वह बड़े विस्तृत रूप में "मीर" के कुल्लियात में मौजूद है। प्रेम के अनुभव ने "मीर" में एक नये प्रकार का सन्ताप और व्यथा, एक नई तड़प और तीव्र वेदना उत्पन्न की। अब तक वह अर्थ-सम्पत्ति से विहीन थे किन्तु अब उस दिल के जाने की बारी थी जिस पर उन्हें बड़ा भरोसा था।

अबके जो "गुल की फ़स्ल"[6] में हमको जुनूं[7] हुआ
वो दिल कि जिस पे अपना भरोसा था, ख़ूं[8] हुआ

विपन्नता और बेकसी में प्रेम की विपत्ति उनके लिए और अधिक कठिनाई का कारण बनी :

ज़ोर[9]-ो-ज़र[10] कुछ न था तो बारे "मीर"   किस भरोसे पर आशनाई[11] की ?

"मीर" के लिए दिल का जाना एक दारुण अनुभव था जिसके लिए उन्होंने बहुत ग़म भी किया लेकिन एक ओर इस "दुर्घटना" ने यदि उन्हें अधिक विघटित किया तो दूसरी ओर इसी घटना ने उनमें वह क्रम एवं व्यवस्था भी उत्पन्न कर दी जिसने अपनी रचनाओं से ग़ज़ल के अञ्चल को मालामाल कर दिया :

जा फंसा दामे-ज़ुल्फ़[12] में आख़िर   दिल निहायत ही बेतअम्मुल[13] था

---

१. जीविका। २. निवेदन। ३. करते। ४. मदिरा-पान। ५. सदा। ६. वसन्त-ऋतु। ७. उन्माद। ८. दिल ख़ून (ख़ूं) होना = समस्त आशाएं तिरोहित हो जाना। ९. बल १०. धन। ११. प्रेम, प्रीति। १२. केश-जाल। १३. बेझिझक, निस्संकोच।

کیا تجھ سے کہوں معاش اپنی بارے گزرے ہے جیسے تیسے

مے کشی صبح و شام کرتا ہوں فاقہ مستی مدام کرتا ہوں

دہلی میں میرؔ کو فقیری سے چھٹکارا ملنا تو ممکن نہیں ہو سکا بلکہ رفتہ رفتہ حالات نے ایسی کروٹ بدلی کہ وہ فقیری و مفلسی کے علاوہ ایک دوسری مصیبت میں گرفتار ہو گئے جو میرؔ کے لیے نہ صرف دائمی قدر بن گئی بلکہ ان کی زندگی کا سب سے اہم عنوان بھی قرار پائی۔ دہلی ہی میں انھیں عشق کی کسک سے پہلا سابقہ پڑا جس نے میرؔ کے ذاتی حالات کو بد سے بدتر بنا دیا۔ یہ تفصیلات نہیں معلوم کہ انھیں کس سے عشق ہوا تھا۔ اور آخرکار اس عشق کا انجام کیا ہوا مگر اس سلسلے میں میرؔ پر جو کچھ بیتی وہ بڑی تفصیل کے ساتھ ان کے کلیات میں موجود ہے۔ عشق کے تجربے نے میرؔ کے اندر ایک نیا سوز و گداز، ایک نئی تڑپ اور جان کنی پیدا کی۔ اب تک وہ مال و دولت سے محروم تھے مگر اب اس دل کے جانے کی باری تھی کہ جس پر انھیں بڑا بھروسہ تھا۔

اب کی جو گل کی فصل میں ہم کو جنوں ہوا
وہ دل کہ جس پہ اپنا بھروسہ تھا خوں ہوا

مفلسی و بے کسی میں عشق کی افتاد ان کے لیے مزید پریشانی کا سبب بنی

زور و زر کچھ نہ تھا تو بارے میرؔ کس بھروسہ پر آشنائی کی

میرؔ کے لیے دل کا جانا ایک نہایت دردناک تجربہ تھا جس کے لیے انھوں نے بہت غم بھی کیا۔ لیکن اگر ایک طرف اس سانحہ نے ان کو پراگندہ بنایا تو دوسری طرف اسی حادثہ نے وہ نظم و ضبط بھی پیدا کیا جس نے اپنی تخلیقات سے غزل کے دامن کو مالا مال بھی کر دیا

جا پھنسا دام زلف میں آخر دل نہایت ہی بے تامل تھا

सीनाकोबी[1] है, तपिश[2] से ग़म हुआ   दिल के जाने का बड़ा मातम हुआ

रात-दिन हाथ मलते रहते हैं   दिल के जाने का है बड़ा अफ़सोस

मसायब[3] और थे पर दिल का जाना   अजब इक सानिहा[4]-सा हो गया है

इस तरह दिल गया कि अब तक हम   बैठे रोते हैं, हाथ मलते हैं

चेहरे को नोच-नोच लिया छाती कूट ली   जाने का दिल के हमने बहुत ग़म-अलम[5] किया

ज़ख़्म झेले, दाग़ भी खाए[6] बहुत   दिल लगाकर हम तो पछताए बहुत

जिस प्रकार "मीर" की फ़क़ीरी के लिए दिल्ली की बेरोज़गारी ने एक पृष्ठ-भूमि तैयार की थी उसी प्रकार "मीर" के इस मानसिक मामले के लिए भी दिल्ली की परिस्थितियों ने पृष्ठभूमि का काम दिया। "मीर" ने अपने दिल की तबाही के हाल का जिस प्रकार वर्णन किया है उस प्रकार का वर्णन दिल्ली और उसकी विशिष्ट परिस्थितियों से अलग होकर संभव ही नहीं था। "मीर" के लिए दिल का सबसे प्रिय प्रतीक "घर" या "शहर" है और वह दिल के लुटने का हाल उसी तरह बखानते हैं जिस प्रकार घर या शहर में आग लगने, लूट पड़ने, रक्तपात और तबाही का वर्णन किया जाता है। "मीर" का यही विशिष्ट विवेक इनके दिल को नितान्त वैयक्तिक होने के स्थान पर समष्टिगत महत्त्व धारण करने वाला बनाता है। वह दिल और दिल्ली में एकात्म्य स्थापित करके हर अनुभवशील व्यक्ति का ध्यान अपनी ओर मोड़ लेते हैं। "मीर" के कुल्लियात में यदि दिल और दिल्ली में एकात्म्य स्थापित करने वाले शेर दो-चार होते तो उन्हें संयोग समझा जा सकता था किन्तु इस प्रकार के शेरों की संख्या इतनी अधिक है कि वह किसी विशेष उद्देश्य और किसी निश्चित योजना का ही परिणाम हो सकते हैं। निम्न-लिखित शेरों में "मीर" के "दिले-ख़ाना ख़राब"[7] का कुछ विवरण मिलता है

१. छाती कूटना। २. सन्ताप। ३. मुसीबत का बहुवचन। ४. अत्यन्त असामान्य दुर्घटना (सामान्य दुर्घटनाएँ तो नित्य ही होती हैं)। ५. दुःख एवं व्यथा। ६. दाग़ खाना=चोट खाना, कलंक सहना। ७. वह दिल जिसका घर विनष्ट हो चुका हो; हताश मन।

سینہ کوبی ہے طپش سے غم ہوا　　دل کے جانے کا بڑا ماتم ہوا

رات دن ہاتھ ملتے رہتے ہیں　　دل کے جانے کا ہے بڑا افسوس

مصائب اور تھے پر دل کا جانا　　عجب اک سانحہ سا ہو گیا ہے

اس طرح سے دل گیا کہ اب تک ہم　　بیٹھے روتے ہیں ہاتھ ملتے ہیں

چہرے کو نوچ نوچ لیا چھاتی کوٹ لی　　جانے کا دل کے ہم نے بہت غم الم کیا

زخم جھیلے داغ بھی کھائے بہت　　دل لگا کر ہم تو پچھتائے بہت

جس طرح میر کی فقیری کے لیے دلّی کی بے روزگاری نے ایک پس منظر پیدا کیا تھا اسی طرح میر کے احوال دل کے لیے بھی دلّی کے حالات نے پس منظر کا کام دیا میر نے اپنے دل کی تباہی کا حال جس طرح بیان کیا ہے اس طرح دہلی اور اس کے خاص حالات سے الگ ہوکر بیان کرنا ممکن ہی نہیں تھا۔ میر کے نزدیک دل کے لیے محبوب ترین استعارہ گھر یا شہر کا ہے اور وہ دل کے لٹنے کا حال اسی طرح بیان کرتے ہیں جس طرح گھر یا شہر میں آگ لگنے، لوٹ پڑنے اور خوں ریزی و تباہی کا حال بیان کیا جاتا ہے۔ میر کا یہی شعور ان کے دل کو خالص شخصی ہونے کے بجائے آفاقی اور کائناتی اہمیت کا حامل بناتا ہے۔ وہ دل اور دلّی میں ہم آہنگی پیدا کرکے ہر صاحب احساس کی توجہ اپنی طرف موڑ لیتے ہیں۔ میر کے دیوان میں اگر دل اور دلّی کو مربوط کرنے والے اشعار دو چار ہوتے تو انھیں اتفاق سمجھا جا سکتا تھا۔ مگر ان اشعار کی تعداد اتنی زیادہ ہے کہ جو کسی خاص مقصد و منصوبے ہی کا نتیجہ ہو سکتی ہے ذیل کے اشعار میں میر کے دل خانہ خراب کی کچھ تفصیل ملتی ہے مگر انھیں اچھی طرح

किन्तु इन्हें अच्छी तरह समझने के लिए दिल्ली की विशिष्ट परिस्थितियों से निरन्तर मानसिक सम्बन्ध रखना आवश्यक है :—

पीस डाला दिल ग़मों ने कूट कर   क्या उजाड़ा इस नगर को लूट कर

दिल अजब[1] शहर था ख़यालों का   लूटा - मारा है हुस्न वालों का

दिल की वीरानी[2] का क्या मज़कूर[3] है ?   यह नगर सौ मर्तबा[4] लूटा गया

मुहब्बत ने शायद कि दी दिल में आग   धुआं-सा है कुछ उस नगर की तरफ़

शहरे-दिल आह अजब जाय[5] थी पर उसके गए   ऐसा उजड़ा कि किसी तरह बसाया न गया

टुक[6] गरेबां[7] में सर को डाल के देख   दिल भी क्या लक़-ो-दक़[8] जंगल है

"मीर" अबतर[9] बहुत है दिल का हाल   यानी वीरां पड़ा है घर अफ़सोस

दिल की आबादी की पहुंचा अपने गोया[10] चश्मे-ज़ख़्म[11]
देखते ही देखते ये शहर सब वीरां हुआ

उसके गए पे दिल की ख़राबी न पूछिये   जैसे किसू[12] का कोई नगर हो लुटा हुआ

क्या उसके गए है ज़िक्र दिल का   वीरां पड़ा है ये मकां तो

ख़राबी दिल की इस हद है कि यह समझा नहीं जाता
कि आबादी भी यां थी या कि वीराना था मुद्दत[13] का

शहरे-दिल-एक मुद्दत उजड़ा, बसा ग़मों में   आख़िर उजाड़ देना उसका क़रार पाया[14]

दिल और दिल्ली के मध्य तबाही-व-ख़राबी का रिश्ता इससे अधिक स्पष्ट रूप में भी "मीर" के यहां मिलता है :

दीद[15]-ए-गिरियां[16] हमारा नहर है   दिल ख़राबा[17] जैसे दिल्ली शहर है

१. विचित्र । २. शून्यता । ३. चर्चा, वर्णन । ४. बार । ५. जगह । ६. तनिक । ७. गला (वस्त्र में गले के लिए बना स्थान भी गरेबां कहा जाता है ।) ८. निर्जन एवं भयावह । ९. अत्यन्त ख़राब । १०. मानों, अथवा । ११. ज़ख़्म की आंखें (घावों की आकृति भी नेत्रों की आकृति से मिलती जुलती होती है ।) १२. किसी । १३. बहुत दिनों । १४. क़रार पाना=निश्चित होना । १५. दीदा=नेत्र । १६. रोता हुआ (दीद-ए-गिरियां=रोती हुई आंखें) । १७. उजाड़, जीवन स्थल ।

سمجھنے کے لیے دہلی کے حالات سے مسلسل ذہنی ربط قائم رکھنا ضروری ہے

پیس ڈالا دل غموں نے کوٹ کر کیا اجاڑا اس نگر کو لوٹ کر

دل عجب شہر تھا خیالوں کا لوٹا مارا ہے حسن والوں کا

دل کی ویرانی کا کیا مذکور ہے یہ نگر سو مرتبہ لوٹا گیا

محبت نے شاید کہ دی دل میں آگ دھواں سا ہے کچھ اس نگر کی طرف

شہرِ دل آہ عجب جاے تھی پر اس کے گئے ایسا اجڑا کہ کسی طرح بسایا نہ گیا

ٹک گریباں میں سر کو ڈال کے دیکھ دل بھی کیا لق و دق جنگل ہے

میرؔ ابتر بہت ہے دل کا حال یعنی ویراں پڑا ہے گھر افسوس

دل کی آبادی کو پہونچا اپنے گویا چشم زخم
دیکھتے ہی دیکھتے یہ شہر سب ویراں ہوا

اس کے گئے پہ دل کی خرابی نہ پوچھیے جیسے کسو کا کوئی نگر ہو لٹا ہوا

کیا اس کے گئے ہے ذکر دل کا ویراں پڑا ہے یہ مکان تو

خرابی دل کی اس حد ہے کہ یہ سمجھا نہیں جاتا
کہ آبادی بھی یاں تھی یا کہ ویرانہ تھا مدت کا

"मीर" के प्रेम में जिस प्रकार की उत्कटता और व्यापकता मिलती है वह उर्दू के किसी अन्य शायर के हिस्से में नहीं आई। प्रत्यक्षतः उसके दो कारण प्रतीत होते हैं। पहला तो यह कि प्रेम उनके लिए एक व्यक्तिगत अनुभव का महत्त्व रखता था। उन्होंने प्रेम, जीवन, कष्टों और अपमानों को अच्छी तरह झेला था और तज्जनित प्रवंचनाओं को अपनी पूंजी समझा था और उसके दिए हुए कलंक और व्यथा को अपने जीवन की सबसे मूल्यवान सम्पत्ति निश्चित किया था। उन्होंने प्रेम के कारण गजलें छन्दोबद्ध की थीं, ग़ज़लें कहने के लिए अपने को काल्पनिक रूप से प्रेमी नहीं बनाया था। उनका प्रेम मनोरंजनार्थ नहीं था जिससे क्षणिक रूप से दिल बहलाने की सामग्री जुटाई जाय। उनके अस्तित्व का कण-कण उस "पर्तवे-महताब" के लिए विशेष प्रकार की तड़प रखता था जो उनके प्रेम की तीव्रता का भावात्मक केन्द्र और शरीरधारी प्रतीक था। दूसरा कारण यह था कि "मीर" अपनी प्रारम्भिक, शैशवकालीन अवस्था में ही "तसव्वुफ़"[1] की शिक्षा प्राप्त करने के कारण आध्यात्मिक प्रेम की गहराइयों का अनुमान कर चुके थे। प्रारम्भिक अभ्यासों और साधना की सामान्य क्रियाओं के रूप-साधन ने उन्हें सूफ़ियाना प्रेम की तीव्रता और व्यापकता का मर्मज्ञ बना दिया था। इस प्रकार पार्थिव प्रेम में फँसने के पूर्व ही वह प्रेम की गहराइयों और प्रपीड़नों से दिली लगाव उत्पन्न कर चुके थे। जब लौकिक प्रेम की असामान्य परिस्थितियाँ उनके सम्मुख आईं तो आध्यात्मिक प्रेम की गहनता, व्यापकता और तीव्रता उसी में विलीन हो गई जिसके कारण "मीर" का प्रेम असामान्य गहराई, शक्ति और बल ग्रहण कर गया। तसव्वुफ़ में लौकिक प्रेम के रोड़ों से आध्मात्मिक प्रेम की उच्च अट्टालिका का निर्माण होता है। "मीर" के यहाँ यह बात ठीक विपरीत है। उन्होंने आध्यात्मिक प्रेम की पृष्ठभूमि पर अपने अलौकिक प्रेम की कुटिया सजाई इसीलिए उनका प्रेम लौकिक और शारीरिक होने पर भी आत्मा को गर्मा देने वाला उत्ताप और दिल को तड़पा देने वाला सन्ताप रखता है। नीचे कुछ शेर "मीर" के प्रेम की तीव्रता, उसके स्वरूप और उसकी क्रियाशीलता को स्पष्ट करने के लिए उद्धृत किये जाते हैं :—

मार रहता है उसको आख़िरकार[2] इश्क़ को जिससे प्यार होता है

---

१ सूफ़ी-मत। २. अन्ततः।

شہر دل ایک مدت اجڑا بسا غموں میں آخر اجاڑ دینا اُس کا قرار پایا

دل اور دلّی کے درمیان تباہی و خرابی کا رشتہ اس سے زیادہ واضح شکل میں میرؔ کے یہاں ملتا ہے

دیدۂ گریاں ہمارا نہر ہے دل خرابہ جیسے دلّی شہر ہے

میرؔ کے عشق میں جو شدت اور ہمہ گیری ملتی ہے وہ اردو زبان کے کسی دوسرے شاعر کے حصے میں نہیں آئی۔ اس کے بہ ظاہر دو سبب معلوم ہوتے ہیں پہلا تو یہ کہ عشق ان کے لیے ایک ذاتی تجربے کی حیثیت رکھتا تھا۔ انھوں نے عشق کی تکلیفوں اور رسوائیوں کو خوب اچھی طرح برداشت کیا تھا۔ اُس کی لائی ہوئی محرومیوں کو اپنا اثاثۂ حیات سمجھا تھا اور اس کے دیے ہوئے داغ و درد کو اپنی زندگی کی سب سے قیمتی دولت قرار دیا تھا۔ انھوں نے عشق کی وجہ سے غزلیں موزوں کی تھیں۔ غزل کہنے کے لیے اپنے کو بہ تکلف عاشق نہیں ٹھہرایا تھا۔ ان کے عشق کی نوعیت تفریحی نہیں تھی جس سے عارضی طور پر دل کے بہلانے کا سامان مہیا کیا جائے۔ ان کی شخصیت کا ایک ایک ذرّہ اس "پرتوے مہتاب" کے لیے مخصوص تڑپ رکھتا تھا جو ان کی شدتِ عشق کا جذباتی مرکز اور جسمانی مظہر تھا۔ دوسرا سبب یہ تھا کہ میرؔ اپنی ابتدائی پرورش کے دوران ہی میں تصوّف کی تعلیم کی وجہ سے عشقِ حقیقی کی گہرائیوں کا اندازہ کر چکے تھے۔ ابتدائی ریاضت اور مشقّت نے انھیں صوفیانہ عشق کی شدت اور ہمہ گیری کا رازداں بنا دیا تھا۔ اس طرح مجازی عشق میں مبتلا ہونے سے پہلے ہی وہ عشق کی وسعتوں، جاں کاہیوں سے دلی لگاؤ پیدا کر چکے تھے۔ جب ان کا سابقہ مجازی عشق کے غیر معمولی حالات سے پڑا تو عشقِ حقیقی کی ہمہ گیری اور شدت اس میں جذب ہوگئی جس کے نتیجہ میں میرؔ کا عشق غیر معمولی گہرائی قوت و توانائی کا حامل بن گیا۔ تصوّف میں عشقِ مجازی کے زینوں سے عشقِ حقیقی کا ایوان بلند تعمیر ہوتا ہے۔ میرؔ کے یہاں یہ بات بالعکس ہے۔ انھوں نے عشقِ حقیقی کی زمین پر اپنے عشقِ مجازی کے کھنڈر درست کیے اسی لیے ان کا عشق مجازی اور جسمانی ہونے کے باوجود روح کو گرما دینے والی حرارت اور دل کو تڑپا دینے والی تپش رکھتا ہے۔ ذیل کے چند اشعار میرؔ کے عشق کی شدت نوعیت اور کارکردگی کو واضح کرنے کے لیے درج کیے جاتے ہیں ؎

हमने अपनी-सी की[१] बहुत लेकिन मर्ज़ें इश्क़ का इलाज नहीं

दिल लगा हो तो जी जहान से उठा मौत का, नाम प्यार का, है इश्क़
कोहकन[२] क्या पहाड़ काटेगा पर्दे में ज़ोर-आज़मा[३] है इश्क़
और तदबीर[४] को नहीं कुछ दख़्ल[५] इश्क़ के दर्द की दवा है इश्क़

पहुंची शायद जिगर तक आतिशे-इश्क़[६] अश्क़[७] हैं सब शरार[८] के मानिन्द[९]
सख़्त काफ़िर[१०] था जिसने पहले "मीर" मज़हबे-इश्क़ अख़्तियार[११] किया

ये निशाने-इश्क़ हैं, जाते नहीं दाग़ छाती के अबस[१२] धोता है क्या

दूर बैठा ग़ुबार "मीर" उस से इश्क़ बिन यह अदब नहीं आता

इब्तिदा[१३] ही में मर गये सब यार इश्क़ की कौन इन्तिहा[१४] लाया

इश्क़ जाना था मार रखेगा इब्तिदा में थी इन्तिहा मालूम

दाग़े-दिल ख़राब शबों को जले है "मीर" इश्क़ इस ख़राबे में भी इक चिराग़ जला गया

इन शेरों से जिनकी संख्या को सरलतापूर्वक कई गुना किया जा सकता है "मीर" की इश्क़ सम्बन्धी मान्यता के विस्तार और व्यापकता का अनुभव होता है। "मीर" के विचार से यद्यपि प्रेम-रोग असाध्य है, मौत का दूसरा नाम इश्क़ है, यह जिसे लग जाता है उसे मार कर ही रहता है किन्तु वह क्रियाशील और निर्माणात्मक शक्तियों से भी विहीन नहीं। वह यदि "कोहकन" को "ज़ोर आज़माई" की हिम्मत दिलाता है तो शिष्टता और भद्रोचित व्यवहार भी सिखाता है। हर प्रकार की आपदाओं और विपत्तियों को घेर कर लाने के बाद भी इश्क़ का दर्द आनन्दविहीन नहीं है। हाँ, इस आनन्द को प्राप्त करने के लिए दर्द-ो-ग़म का अपार कष्ट सहना अनिवार्य है। इतने साहस और इतनी सहन-शक्ति से काम लेना हर किसी के बस की बात नहीं; इस तत्व के ज्ञाता ही इसके आनन्द को समझ सकते हैं :—

१. अपनी सी करना=यथासाध्य सभी उपाय कर डालना। २. पहाड़ खोदने वाला, फ़रहाद नाम का विख्यात प्रेमी जिसने अपनी प्रेमिका के लिए पहाड़ काट कर दूध की नहर निकाली थी। ३. शक्ति लगाने वाला। ४. उपाय। ५. दख़्ल न होना—सामर्थ्य में न होना। ६. प्रेमाग्नि - ७. अश्रु। ८. चिंगारी ९. भाँति। १०. घोर नास्तिक (बिना समस्त अस्तित्वों को अस्वीकार किये प्रेम के एकमेव अस्तित्व में लीनता सम्भव ही नहीं।) ११. अपनाना। १२. व्यर्थ। १३. आदि १४. अन्त, चरम [प्रेम की प्रारम्भिक अवस्था में ही सभी मर गये। कोई प्रेम को उसके चरम तक पहुंचाने में सफल न हो सका।]

مار رہتا ہے اس کو آخر کار　　عشق کو جس سے پیار ہوتا ہے

ہم نے اپنی سی کی بہت لیکن　　مرض عشق کا علاج نہیں

دل لگا ہو تو جی جہاں سے اٹھا　　موت کا نام پیار کا ہے عشق
کوہکن کیا پہاڑ کاٹے گا　　پردے میں زور آزما ہے عشق
اور تدبیر کو نہیں کچھ دخل　　عشق کے درد کی دوا ہے عشق

پہونچی شاید جگر تک آتش عشق　　اشک ہیں سب شرار کے مانند

سخت کافر تھا جن نے پہلے میرؔ　　مذہب عشق اختیار کیا

یہ نشان عشق ہیں جاتے نہیں　　داغ چھاتی کے عبث دھوتا ہے کیا

دور بیٹھا غبار میرؔ اس سے　　عشق بن یہ ادب نہیں آتا

ابتدا ہی میں مر گئے سب یار　　عشق کی کون انتہا لایا

عشق جانا تھا، مار رکھے گا　　ابتدا میں تھی انتہا معلوم

داغ دل خراب شیون کو جلے ہے میرؔ　　عشق اس خرابے میں بھی اک چراغ جلا گیا

ان اشعار سے جن کی تعداد کو بہ آسانی کئی گنا کیا جا سکتا ہے میرؔ کے تصور عشق کی وسعت اور ہمہ گیری کا اندازہ ہوتا ہے۔ میرؔ کے نزدیک اگرچہ مرض عشق لاعلاج ہے۔ موت کا دوسرا نام

नहीं इश्क़ का दर्द लज़्ज़त से ख़ाली   जिसे ज़ौक़ है वह मज़ा जानता है

प्रेम सम्बन्धी यही मान्यता "मीर" को असफल होने के उपरान्त भी निष्क्रिय होने से बचाए रखती है।

दिल्ली में "मीर" प्रेमाग्नि में विदग्ध रहे। फ़क़ीरी की ख़ाक में लोटते रहे—इस दोतरफ़ी मुसीबत ने उनके व्यक्तित्व को दिन-प्रति-दिन निखारा और उनमें पराजय के मध्य भी सन्तुलन रखने की योग्यता उत्पन्न की। दिल्ली में रहकर उन्हें एक प्रकार की भावात्मक तृप्ति प्राप्त थी। वह फ़क़ीर थे लेकिन अपने घर में थे। वह असफल प्रेमी थे किन्तु अपनी प्रेमिका के पड़ोस मे थे—परन्तु समय की कठिनाइयों ने उन्हें अन्ततोगत्वा यात्रा पर विवश किया। दिल्ली का छूटना उनके लिए प्रेमिका के छूटने से कम नहीं था। बल्कि दिल्ली उनके लिए घर, शहर, प्रेमिका और दिल सभी का एकीभूत स्वरूप थी। दिल्ली से बिछुड़कर वह केवल अपने घर, नगर और प्रेमिका से नहीं बिछुड़े थे बल्कि अपने दिल से भी बिछुड़ रहे थे। एक लम्बी उम्र तक असंख्य अन्याय सह कर उन्होंने अपनी जीवनी के एक शोकपूर्ण अध्याय अर्थात् वियोग को आमंत्रित करने पर अपने को विवश पाया और अन्ततोगत्वा दिल्ली से चल खड़े हुए :—

ता चन्द[1] वह सितम[2] करे हम दरगुज़र[3] करें   अब जी में है कि शहर से उसके सफ़र करें

लखनऊ पहुंच कर भी "मीर" के दिल की कली न खिल सकी। यहां राजकीय कोष से उनके लिए वृत्ति भी निर्धारित हुई जो इतनी अधिक और इतनी अवधि तक चलने वाली नहीं थी कि उनके पचास वर्षीय जीवन के अथक श्रम और घोर पीड़ाओं के घावों को भर सकता और उनके शोक का वास्तविक शमन कर सकता। इसके अतिरिक्त उस युग की दिल्ली और लखनऊ में बड़ा अन्तर था। भारत की राजधानी विनष्ट हो रही थी और अवध की राजधानी निर्माणाधीन थी। वहां ध्वस्त इमारतों की गर्द उड़ रही थी और यहाँ नयी निर्माणाधीन इमारतों के सामान पहुंचने का शोर मचा हुआ था। इसीलिए "मीर" जैसे परिपक्वता प्राप्त व्यक्ति को लखनऊ का साहित्यिक और सांस्कृतिक वातावरण सुहाया नहीं।

बुलबुल का शोर[4] सुनके न मुझसे रहा गया   मैं बेदिमाग़[5] बाग़ से उठ कर चला गया

लखनऊ-कालीन उनकी अनुभूतियों की एक झलक निम्नलिखित शेरों में दिखाई देती है :—

१. कब तक २. सीमा से अतिक्रमण कर कष्टदायी हो ३. क्षमा ४. कर्ण-कटु निनाद (मधुर गायन नहीं) ५. मानसिक सन्तुलन से विहीन असंयत एवं व्यग्र व्यक्ति।

عشق ہے اور جسے لاگو ہوتا ہے اسے مار رہتا ہے۔ مگر وہ فعال اور تعمیری صفتوں سے بھی خالی نہیں ہے۔ وہ اگر کوہکن کو زور آزمائی کی ہمت دلاتا ہے تو ادب و شائستگی کی تعلیم بھی دیتا ہے۔ تمام آفتوں اور مصیبتوں کو گھیر کر لانے کے باوجود عشق کا درد لذت سے خالی نہیں ہے۔ ہاں اس لذت کو حاصل کرنے کے لیے درد و غم کی اتھاہ مصیبت کو برداشت کرنا ضروری ہے۔ اتنی جرات اور برداشت سے کام لینا ہر شخص کے بس کی بات نہیں ہے صاحب ذوق ہی اس مزے کو سمجھ سکتا ہے

نہیں عشق کا درد لذت سے خالی جسے ذوق ہے وہ مزا جانتا ہے

عشق کا یہی تصور میر کو ناکام ہونے کے باوجود ناکارہ ہونے سے محفوظ رکھتا ہے دہلی میں میر عشق کی آگ میں جلتے رہے اور فقیری کی خاک میں لوٹتے رہے۔ اس دور کی مصیبت نے ان کی شخصیت کو روز بروز نکھارا اور ان میں شکست کے درمیان توازن رکھنے کی اہلیت پیدا کی۔ دہلی میں رہ کر انھیں یک گونہ جذباتی آسودگی حاصل تھی۔ وہ فقیر تھے مگر اپنے گھر میں تھے۔ وہ ناکام عاشق تھے مگر محبوب کے ہمسایے میں تھے مگر زمانے کی سختیوں نے آخرکار انھیں سفر پر مجبور کیا۔ دلّی سے چھوٹنا ان کے لیے محبوب کے چھوٹنے سے کم نہیں تھا بلکہ دلی ان کے لیے گھر شہر محبوب اور دل سب ہی کی نمائندہ تھی۔ دلّی سے جدا ہو کر وہ صرف اپنے گھر شہر اور محبوب سے جدا نہیں ہوئے تھے بلکہ اپنے دل سے جدا ہو رہے تھے۔ ایک طویل عمر تک ستم سہہ کر انھوں نے اپنی سوانح حیات کے ایک غمگین عنوان یعنی جدائی کو دعوت دینے پر اپنے کو مجبور پایا اور بالآخر دلی سے سفر کیا

تا چند وہ ستم کرے ہم درگزر کریں اب جی میں ہے کہ شہر سے اس کے سفر کریں

لکھنو پہونچ کر بھی میر کے دل کی کلی نہ کھل سکی۔ یہاں شاہی دربار سے ان کا وظیفہ بھی مقرر ہوا جو اتنا زیادہ اور مستقل نہیں تھا کہ ان کی پچاس سالہ جان کاہی و جگر خراشی کا مداوا کر سکتا۔ اس کے علاوہ اس عہد کی دہلی اور لکھنو میں بڑا فرق تھا ہندوستان کا دارالسلطنت مسمار ہو رہا تھا۔ اودھ کا دارالسلطنت زیر تعمیر تھا۔ وہاں منہدم عمارتوں کی گرد اڑ رہی تھی یہاں زیر تعمیر عمارتوں کی رسد رسانی کا شور برپا تھا۔ اس لیے میر کے ایسے پختگی پر پہونچے ہوئے شخص کو لکھنو کی ادبی اور تہذیبی فضا راس نہ آسکی

लखनऊ दिल्ली से आया याँ[1] भी रहता है उदास
"मीर" को सरगश्तगी[2] ने बेदिल[3]-ो-हैराँ[4] किया

ख़राबा दिल्ली का दहचन्द[5] बेहतर लखनऊ से था
वहीं मैं काश मर जाता, सरासीमा[6] न आता याँ

लखनऊ आकर "मीर" के व्यक्तित्व के साहज़ में किसी प्रकार की वृद्धि न हुई न उनमें कोई मौलिक परिवर्तन ही आया बल्कि वियोग की अनुभूति ने और अधिक तीव्रता ग्रहण कर ली। प्रेम जनित पीड़ाओं के स्थायी प्रभाव पूर्ववत् उनके व्यक्तित्व को अपनी पकड़ में लिये रहे। दैन्य-दुख में कुछ कमी हुई किन्तु उनकी तुनुकमिज़ाजी ने इस कमी को भी स्थिर न रहने दिया। वह अक्सर दरबार से रूठकर घर बैठ रहते थे। इन विपत्तियों के साथ यह विछोह का दुःख उन पर ऊपर से आ पड़ा। इन कारणों के आधार पर वातावरण के परिवर्तन के उपरान्त भी "मीर" में कोई ऐसा विशेष परिवर्तन न हो सका जिसे लखनऊ-प्रवास का फल कहा जा सके। यहाँ मौलिक महत्त्व के परिवर्तनों से इंकार करना अभीष्ट है, परिवर्तन-मात्र से इंकार तो संभव नहीं—चाहे वह "मीर" जैसा ही व्यक्तित्व क्यों न हो। छोटे-मोटे परिवर्तनों का अनुमान लखनऊ और दिल्ली की रचनाओं की गंभीर तुलना से कठिन नहीं। लखनऊ में संकलित होने वाले दीवानों की ग़ज़लें या तो "मीर" के कुछ प्रिय विषयों की चर्चा से एकदम रहित हैं या उनकी ओर बहुत कम ध्यान दिखाई देता है। पिछले पृष्ठों में "मीर" के प्रिय विषय दिल्ली और दिल्ली की तबाही, बर्बादी, लूट, विनाश एवं विध्वंस की चर्चा आ चुकी है। इस विषय पर लखनऊ में संकलित होने वाले दीवानों में यदा-कदा ही कोई शेर दिखाई देता है। इसी प्रकार लखनऊ की ग़ज़लों में भी असफलता की प्रतीति की सामान्य प्रवृत्ति विद्यमान है किन्तु कभी-कभी इस प्रवृत्ति में आह्लादात्मक आशावादिता की झलक भी दिखाई देती है। लखनऊ में कही हुई उनकी एक ग़ज़ल का एक शेर निम्न प्रकार है :

आता नहीं नज़र कि हुसूले-उम्मीद[7] हो क्या थाम-थाम रखिये दिले-बेक़रार[8] को

यह शेर उनकी सामान्य शैली और स्वभाव के अनुकूल है किन्तु इसके तुरन्त ही बाद वाला शेर निम्न प्रकार है :

१. यहाँ। २. सरफिरापन। ३. हृदयहीन। ४. यहाँ : चकितमति जनित पीड़ा। ५. दस गुना। ६. एक प्रकार के क्षुब्ध भाव से। ७. आशा की पूर्ति [प्राप्ति]। ८. व्यग्र [दिल को थाम-थाम रखना=हार्दिक कामनाओं को बरबस अंकुश में रखना]।

بلبل کا شور سن کے نہ مجھ سے رہا گیا میں بے دماغ باغ سے اٹھ کر چلا گیا

قیام لکھنو میں ان کے احساسات کی جھلک حسب ذیل اشعار میں نظر آتی ہے

لکھنو دلی سے آیا یاں بھی رہتا ہے اداس میر کو سرگشتگی نے بے دل و حیراں کیا

خرابہ دلی کا وہ چند بہتر لکھنؤ سے تھا وہیں میں کاش مرجاتا سراسیمہ نہ آتا یاں

لکھنو آکر میر کی شخصیت کے سائز میں کوئی اضافہ نہیں ہوا نہ ان میں کوئی بنیادی تبدیلی نمودار ہوئی بلکہ احساس جدائی نے مزید شدت اختیار کرلی۔ عشق کی لائی ہوئی مصیبتوں کے مستقل اثرات ان کی شخصیت کو بدستور اپنی گرفت میں لیے رہے۔ فقر کی مصیبت میں کچھ تخفیف ہوئی مگر ان کی تنک مزاجی نے اس کمی کو مستقل نہ رہنے دیا وہ اکثر دربار سے روٹھ کر خانہ نشین ہو جاتے تھے ان مصائب کے ساتھ جدائی کی مصیبت مزید ان پر پڑی۔ ان اسباب کی وجہ سے ماحول کی تبدیلی کے باوجود میر کے اندر کوئی ایسی خاص تبدیلی نہ ہوسکی جسے قیام لکھنو کا نتیجہ کہا جا سکے۔ یہاں پر نفی صرف بنیادی تبدیلیوں کی کرنا مقصود ہے۔ مطلق تبدیلیوں کا انکار ممکن نہیں ہے۔ زندگی اور ماحول کے اثرات سے کوئی شخص بالکل علیحدہ رہے خواہ وہ میر جیسی شخصیت کیوں نہ ہو، ممکن نہیں ہے۔ خفیف تبدیلیوں کا اندازہ لکھنو اور دہلی میں کہی ہوئی غزلوں کے مفصل مقابلے سے دشوار نہیں۔ لکھنو میں مرتب ہونے والے دیوان کی غزلیں زیادہ تر میر کے بعض محبوب موضوعات سے یا تو خالی ہیں یا ان کی طرف بہت کم توجہ نظر آتی ہے۔ گزشتہ صفحات میں میر کے محبوب موضوع دلی اور دل کی تباہی بربادی اور غارت گری اور انہدام کا ذکر ہوچکا ہے اس موضوع پر لکھنو میں مرتب ہونے والے دواوین میں شاذونادر ہی کوئی شعر نظر پڑتا ہے۔ اس طرح لکھنو کی غزلوں میں بھی احساس ناکامی کا عام رجحان موجود ہے مگر کبھی کبھی اس رجحان میں نشاط انگیز رجائیت کی جھلک بھی دکھائی دیتی ہے۔ لکھنو میں کہی ہوئی ان کی غزل کا ایک شعر حسب ذیل ہے

آتا نہیں نظر کہ حصول امید ہو ٭ کیا تھام تھام رکھیے دل بیقرار کو

یہ شعر ان کے عام افتاد مزاج اور رنگ طبیعت کے موافق ہے مگر اس کے فوراً ہی بعد والا شعر حسب ذیل ہے

जीते रहें तो उससे हम-आग़ोश[1] होंगे हम लबरेज़[2] गुल[3] से देखेंगे जेब-ो-कनार[4] को

सम्भवतः इस प्रकार का शेर दिल्ली में न हो सकता। इसी प्रकार निम्नलिखित शेरों में, जो लखनऊ की रचनाएं हैं एक प्रकार का आह्लादात्मक वातावरण मिलता है जिनके कारण विशेष रूप से यह विश्वास दिलाना आवश्यक है कि यह "मीर" के ही कहे हुए हैं :—

सब्ज़ा है, आबे-जू[5] है, फ़स्ले-बहार[6] भी है सरगर्मे-जलवा[7] देखो, पहलू में यार भी है
ये तो नहीं कि हम पर, हर दम है बेदिमाग़ी आँखें दिखाते हैं तो चितवन में प्यार भी है
जूं मौज हमबग़ल[8] हों, नायाब[9] उस गुहर[10] से दरिया की सैर भी है, बोस-ो-कनार[11] भी है

दिल्ली और लखनऊ दोनों ही "मीर" के लिए पिंजरे के समान थे किन्तु उन दोनों में थोड़ा-सा अन्तर था। दिल्ली एक ऐसा पिंजरा था जिसकी झंझरियों से बाग़ की दीवार देखना-भी-निषिद्ध था :

कैसा चमन[12] ? कि हम-से असीरों[13] को मन्अ[14] है चाके-क़फ़स[15] से बाग़ की दीवार देखना

लखनऊ भी एक पिंजरा ही था किन्तु उसमे कभी-कभी समीर के संग कोई पंखुरी भी आ पड़ती थी।

क्या जानूं मैं चमन को वलेकिन[16] क़फ़स[17] पे "मीर"
आता है बर्गे-गुल[18] कभू[19] कोई सबा[20] के साथ

विछोह का यह "मरहला" सर करना जीवन की परिस्थितियों से "मीर" की अन्तिम लड़ाई थी। उनके जीवन का अन्तिम कोण था। इस "मुहिम" ने यद्यपि कोई नई परिस्थिति नहीं उत्पन्न की किन्तु उनके सम्पूर्णता-प्राप्त व्यक्तित्व को और निखारा और आयु के अन्तिम भाग में जब सामान्यतः साहसिकता का अभाव हो जाता है, "मीर" के संकल्प की शक्ति प्रदर्शित की। यह अन्तिम मुहिम "मीर" ने लखनऊ में सर की जिसके बाद विजय-पराजय का निर्णय भावी पीढ़ियों पर छोड़कर वे इस संसार से विदा हो गए।

ताबे-दिल[21] सर्फ़े-जुदाई[22] हो चुकी यानी ताक़त-आज़माई[23] हो चुकी

१. परस्पर आलिङ्गनबद्ध। २. भरा हुआ। ३. यहाँ पुष्प के प्रतीक से प्रेम-पात्र अभिप्रेत है। ४. जेब=वक्ष, कनार=दाहिना पक्ष (सामान्यतः दोनों पक्ष, दोनों किनारे)। ५. नहर का पानी। ६. मधुमास। ७. रूप-माधुरी लुटाता हुआ। ८. एक प्रकार का आलिंगन जिसमे दोनों व्यक्ति आमने-सामने न होकर दाहिने-बायें हों। ९. अलभ्य। १०. मोती। ११. आलिङ्गन-चुम्बन। १२. वाटिका। १३. बन्दी। १४. मना। १५. पिंजरे की झंझरियां। १६. परन्तु। १७. पिंजरा, बन्दीगृह। १८. फूल की एक पत्ती—पांखुरी। १९. कभी। २०. समीर। २१. हृदय की शक्ति (सहन एवं वहनशक्ति) २२. विछोह में व्यय। २३. बल-परीक्षा।

جیتے رہے تو اس سے ہم آغوش ہوں گے ہم　　لبریز گل سے دیکھیں گے جیب و کنار کو

غالباً اس طرح کا شعر دہلی میں نہ ہوسکتا اسی طرح حسب ذیل اشعار میں جو لکھنو کی تخلیق میں ایک مخصوص نشاطیہ فضا ملتی ہے جس کی وجہ سے خصوصیت سے یہ باور کرانا ضروری ہے کہ یہ میرؔ ہی کے کہے ہوئے ہیں

سبزہ ہے آب جو ہے، فصل بہار بھی ہے　　سرگرم جلوہ دیکھو پہلو میں یار بھی ہے
یہ تو نہیں کہ ہم پر ہر دم ہے بے دماغی　　آنکھیں دکھاتے ہیں تو چتوں میں پیار بھی ہے
جوں موج ہم بغل ہوں نایاب اس گہر سے　　دریا کی سیر بھی ہے بوس و کنار بھی ہے

دلّی اور لکھنو دونوں ہی میرؔ کے لیے قفس تھے مگر ان دونوں میں قدرے فرق تھا۔ دلّی ایک ایسا قفس تھا کہ جس کے چاک سے باغ کی دیوار دیکھنا بھی ممنوع تھا

کیسا چمن کہ ہم سے اسیروں کو منع ہے　　چاکِ قفس سے باغ کی دیوار دیکھنا

لکھنو بھی ایک قفس ہی تھا مگر اس میں صبا کے ساتھ ساتھ کبھی کبھی کوئی برگِ گل بھی آپڑتا تھا

کیا جانوں میں چمن کو ولیکن قفس پہ میرؔ
آتا ہے برگِ گل کبھو کوئی صبا کے ساتھ

جدائی کا مرحلہ سر کرنا حالات زندگی سے میرؔ کی آخری جنگ تھی۔ ان کی زندگی کا آخری عنوان بنا ان کے فن اور ریاضت کے مثلث کا آخری زاویہ تھا۔ اس مہم نے اگرچہ کوئی نئی صورت حال نہیں پیدا کی مگر تکمیل پر پہونچی ہوئی شخصیت کو اور نکھارا اور عمر کے آخری دور میں جب عام طور سے ہمت پست ہوتی ہے میرؔ کے عزم و ارادے کی مضبوطی کو ظاہر کیا۔ یہ آخری مہم میرؔ نے لکھنو میں سر کی جس کے بعد وہ آنے والی نسلوں کے ساتھ شکست و فتح کا فیصلہ چھوڑ کر اس دنیا سے رخصت ہوگئے

تابِ دل صرفِ جدائی ہو چکی
یعنی طاقت آزمائی ہو چکی

آگرہ دہلی اور لکھنو ان کی سفر زندگانی کے مختلف مرحلے ہیں جنھیں انھوں نے فقر عشق اور جدائی کے زادراہ کی مدد سے طے کیا۔ ان مراحل کے درمیان کبھی کوئی ایسی صورت نہ پیدا ہوئی جو مسرت اور سکون پیدا کرسکتی۔ وہ مسلسل سفر کرتے رہے اور دورانِ سفر

आगरा, दिल्ली और लखनऊ उनकी जीवन-यात्रा के विभिन्न "मरहले" हैं। जिन्हें उन्होंने "फ़क्र", "इश्क"और "जुदाई" के सम्बल की सहायता से पार किया। मरहलों के मध्य कभी कोई ऐसी स्थिति न उत्पन्न हुई जो आनन्द एवं शान्ति उत्पन्न कर सकती। वह निरन्तर यात्राएं करते रहे और मार्ग में लुटते रहे। इस लोक की मंज़िलों से दूसरे चाहे अक्षुण्ण निकल गए हों किन्तु "मीर" ने यह मंज़िलें सर्वस्व लुटाकर पार कीं।

आफ़ाक़[1] की मंज़िल से गया कौन सलामत[2]   असबाब लुटा राह में यां हर सफ़री[3] का

यात्रा के मध्य वे जितने लुटते रहे उतने ही सतुष्ट होते रहे इसलिए उनकी यह लम्बी यात्रा अभावों और वंचनाओं के उपरान्त उनके लिए लाभप्रद ही सिद्ध हुई। इसी यात्रा के मध्य, लूट-मार के हंगामों में उन्होंने स्वयं को संगत रखना और सम्पूर्ण आस्थापूर्वक निरन्तर यात्रा जारी रखने का ढंग सीखा। और अन्ततोगत्वा जीवन के उस रहस्य को पा लिया जो इस यात्रा की अभीष्ट मंजिल था। प्रत्यक्षत: "मीर" की जीवन के प्रति मान्यता आशाजनक नहीं प्रतीत होती। जीवन और उसकी परिस्थितियों पर जहां-जहां उन्होंने अपने विचार व्यक्त किये हैं एक पीड़ा-जनक परिस्थिति सामने आई है जिससे रुचि उत्पन्न करना साधारणत: सम्भव नहीं है :

क्या करूं शाहं[4] ख़स्ताजानी[5] को   मैंने मर-मर के ज़िन्दगानी[6] की
जिन बलाओं[7] को "मीर" सुनते थे   उनको इस रोज़गार[8] में देखा
चमन का नाम सुना था, वले[9] न देखा हाय   जहां में हमने क़फ़स ही में ज़िन्दगानी की
रोते फिरते हैं सारी-सारी रात   अब यही रोज़गार[10] है अपना

मुए[11] सहते-सहते जफ़ाकारियां[12]   कोई हमसे सीखे वफ़ादारियां

नामुरादाना[13] ज़ीस्त[14] करता था   "मीर" का तौर[15] याद है हमको

---

१. लोक, विश्व। २. यथावत्, अक्षुण्ण। ३. यात्री। ४. व्याख्या। ५. दुर्बलता एवं चोट न सह सकने की शारीरिक स्थिति। ६. जीवन। "की" लिखकर जीवन को भी सामान्य कर्म बताया है—जैसे बहुत कुछ किया वैसे ही जिन्दगानी भी की। ७. आपदाओं। ८. कालचक्र के प्रभाव में आने वाला लोक। ९. "वलेकिन" का संक्षिप्त रूप—किन्तु। १०. कार्य। ११. मरे। १२. अन्याय एवं उत्पीड़न जिसमें एक प्रकार के अपनत्व या अधिकार का भी भाव हो। १३. विफलतापूर्वक ("निष्काम" भाव से) की भी ध्वनि इसमें निहित है। १४. जीवन। १५. ढंग।

میں لٹتے رہے ۔ آفاق کی منزل سے دوسرے چاہے سلامت نکل گئے ہوں مگر میرؔ نے ان منزلوں کو اسباب واثاثہ لٹاکر طے کیا ہے

آفاق کی منزل سے گیا کون سلامت　　اسباب لٹا راہ میں یاں ہر سفری کا

دوران سفر میں وہ جس قدر لٹتے رہے اتنے ہی مطمئن ہوتے رہے ۔ اس لیے ان کا یہ طویل سفر محرومیوں کے باوجود منفعت بخش رہا ۔ اسی سفر کے دوران میں اور لوٹ مار کے ہنگاموں میں انھوں نے اپنے کو سنبھالنا اور مسلسل اعتماد کے ساتھ سفر جاری رکھنے کا ڈھنگ سیکھا اور بالآخر زندگی کے اس راز کو پالیا جو سفر کی منزل مقصود بنا

بہ ظاہر میرؔ کا تصور زندگی امید افزا نہیں معلوم ہوتا ۔ زندگی اور اس کے حالات پر انھوں نے جہاں جہاں اظہار خیال کیا ہے ایک کرب انگیز صورت حال نمودار ہوتی ہے جس سے ذوق پیدا کرنا عام طور سے ممکن نہیں ہے

کیا کروں شرح خستہ جانی کی　　میں نے مر مر کے زندگانی کی

جن بلاؤں کو میرؔ سنتے تھے　　ان کو اس روزگار میں دیکھا

چمن کا نام سُنا تھا ولے نہ دیکھا ہائے　　جہاں میں ہم نے قفس ہی میں زندگانی کی

روتے پھرتے ہیں ساری ساری رات　　اب یہی روزگار ہے اپنا

موے سہتے سہتے جفا کاریاں　　کوئی ہم سے سیکھے وفاداریاں

نامرادانہ زیست کرتا تھا　　میرؔ کا طور یاد ہے ہم کو

التفات زمانہ پر مت جا　　میرؔ دیتا ہے روزگار فریب

इल्तिफ़ाते[1]-ज़माना पर मत जा "मीर" देता है रोज़गार[2] फ़रेब[3]

विशेष विवरणों से दृष्टि हटा लेने के बाद यह है "मीर" के जीवन की समग्र-मान्यता; जिसमें सामान्यतः आशा की कोई किरण नहीं दिखाई देती, मगर "मीर" ने इसी जीवन से सर्वस्व सीखा और इसी की वञ्चनाओं से स्वीकारात्मक दृष्टिकोण निकाला। असफलताओं और हताशाओं के बावजूद उन्हें इसी जीवन पर आस्था थी और यही जीवन कष्टकर होते हुए भी उन्हें प्रिय था :

"मीर", अमदन[4] भी कोई मरता है ? "जान है तो जहान है"[5] प्यारे !

यदि "मीर" को जीवन पर आस्था एवं विश्वास न होता तो उन्हें अपने व्यक्तित्व और कला पर भी आस्था नहीं हो सकती थी। "मीर" की विशिष्ट परिस्थितियों को दृष्टि में रखकर यद्यपि उनकी जीवन पर यह आस्था आश्चर्य-जनक प्रतीत होती है परन्तु फिर यह प्रश्न बड़े महत्व का हो जाता है कि यदि उन्हें जीवन पर आस्था नहीं थी तो उनके इस आत्म-विश्वास और कला की आस्था का उद्‌गम कहाँ था ? क्या यह संभव है कि व्यक्तित्व के गुण शून्य में पोषण पाकर विकसित हों ? क्या वैयक्तिकता जीवन से सम्बन्ध-विच्छेद करके विकसित हो सकती है ? क्या मानवीय चरित्र का विकास जीवन की धूप-छाँव के अतिरिक्त कहीं और हो सकता है ?—वास्तविकता यह है कि यह सब सम्बन्ध-विच्छेद के फल नहीं बल्कि व्यक्ति और जीवन की पारस्परिक क्रियाओं-प्रति-क्रियाओं से प्रतिफलित होते हैं। इस दृष्टिकोण के अनुसार हमें "मीर" और उनके गुणों को स्वयं उनके और उनके युग के जीवन के सम्बन्ध में ढूंढना चाहिए। और यहीं से यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि जीवन उनके लिए क्या अर्थ रखता था और उनका जीवन-दर्शन क्या था ? जहाँ तक "अर्थ" का प्रश्न है जीवन "मीर" के लिए एक विशेष अर्थ अवश्य रखता था, ऐसा अर्थ जिसके विस्तार में जीवन की आत्मा, उसका उद्‌देश्य और उसका मूल-ढंग स्पष्ट रूप में दिखाई देता है। जहाँ तक दर्शन का प्रश्न है, बिना किसी प्रकार के क्षोभ-प्रकाश के यह कहा जा सकता कि उस अर्थ में उनका कोई जीवन-दर्शन नहीं था जिस अर्थ में यह शब्द व्यवहृत है। "मीर" न दार्शनिक थे न प्राकृतिक-विज्ञानों के ज्ञाता। यदि वह "दार्शनिक" होते तो ऐसा मर्मस्पर्शी कुल्लियात अपने स्थायी स्मारक के रूप में न छोड़ जाते।

१. अनुग्रह। २. दुनिया, काल-चक्रग्रस्त अस्तित्व। ३. धोखा। ४. जान-बूझ कर, स्वेच्छा से। ५. यह वाक्यांश अब एक लोकोक्ति के रूप में विख्यात है, अर्थ है जीवन है तो समस्त विश्व का अस्तित्व है !

تفصیلات کو نظرانداز کرنے کے بعد یہ ہے میرؔ کی زندگی کی مجموعی تصویر جس میں عام حالات میں امید کی کوئی کرن نظر نہیں آتی مگر میرؔ نے اسی زندگی سے سب کچھ سیکھا اور اسی کی محرومیوں سے مثبت نقطۂ نظر نکالا۔ ناکامی و حسرت کشی کے باوجود انھیں اسی زندگی پر اعتماد بنا اور یہی زندگی تکلیف دہ ہونے کے باوجود انھیں عزیز تھی

میرؔ عمداً بھی کوئی مرتا ہے   جان ہے تو جہان ہے پیارے

میرؔ کو اگر زندگی پر اعتماد اور یقین نہ ہوتا تو اپنی شخصیت اور فن پر بھی اعتماد نہیں ہوسکتا تھا۔ میرؔ کے مخصوص حالات کے پیش نظر زندگی پر ان کا اعتماد اگرچہ ایک بڑے تعجب کی بات ہے مگر یقیناً یہ سوال اہمیت رکھتا ہے کہ اگر انھیں زندگی پر اعتماد نہیں تھا تو ان کے فن اور شخصیت پر اعتماد کا سرچشمہ کون چیز تھی۔ کیا یہ ممکن ہے کہ شخصیت کے اوصاف خلا میں پرورش پاکر ترقی کریں۔ کیا انفرادیت زندگی سے قطع تعلق کرکے پروان چڑھ سکتی ہے۔ کیا کردار کا نشوونما زندگی کی دھوپ چھاؤں کے علاوہ اور کہیں ہوسکتا ہے؟ حقیقت یہ کہ یہ تمام چیزیں رشتوں کو توڑنے کا نتیجہ نہیں بلکہ فرد اور زندگی کے باہمی اعمال اور ردعمل کا حاصل ہوتی ہیں۔ اس نقطۂ نظر کے مطابق میرؔ اور ان کے اوصاف کو خود ان کی اور اس عہد کی زندگی کے رشتوں میں تلاش کرنا چاہیے اور یہیں سے یہ مسئلہ پیدا ہوتا ہے کہ زندگی ان کے لیے کیا معنی رکھتی تھی اور زندگی کے متعلق ان کا فلسفہ کیا تھا جہاں تک معنی کا تعلق ہے زندگی میرؔ کے لیے ایک خاص معنی رکھتی تھی ایسے معنی کہ جس کی وسعت میں زندگی کی روح اس کا مقصد اور بنیادی اسلوب واضح شکل میں دکھائی دیتا ہے۔ جہاں تک فلسفہ کا تعلق ہے بغیر کسی معذرت کے یہ بات کہی جاسکتی ہے کہ زندگی کے متعلق میرؔ کا کوئی فلسفہ نہیں تھا ان معنوں میں کہ جس میں فلسفہ کی لفظ اصطلاحاً استعمال کی جاتی ہے میرؔ نہ فلسفی تھے اور نہ نظری سائنسوں کے ماہر۔ اگر وہ فلسفی ہوتے تو ایسا پُراثر دیوان اپنی یادگار کے طور پر نہ چھوڑ جاتے۔ اگر انھیں نظری سائنس میں دخل ہوتا تو ان کی باتیں نہ معلوم کب کی بھلائی جاچکی ہوتیں۔ فلسفی زندگی کے متعلق بہت کچھ کہنے کے بعد اس کی معنویت کا سچا احساس نہیں پیدا کرسکتا۔ شاعر فلسفۂ زندگی سے ناآشنا ہونے کے باوجود احساس زندگی پیدا کرنے میں کامیاب ہوتا ہے اسی لیے فلسفی کی جگہ کتب خانوں میں ہے

यदि उन्हें प्राकृतिक विज्ञानों से रुचि होती तो उनकी बातें कब की भुलाई जा चुकी होतीं। दार्शनिक जीवन के विषय पर बहुत कुछ कहने के उपरान्त भी उनकी अर्थवत्ता की सच्ची प्रतीति नहीं उत्पन्न कर सकता। कवि दर्शन शास्त्र से अनभिज्ञ होते हुए भी यह प्रतीति उत्पन्न करने में सफल होता है इसीलिए दार्शनिक का स्थान पुस्तकालयों में है और बड़े कवि की जगह—अन्तस्तल के कोमल-तन्तुओं में। इन बातों का उद्देश्य दर्शन के महत्त्व से इंकार करना नहीं, बल्कि दर्शन एवं काव्य के क्षेत्र-वैभिन्य की ओर संकेत करना है।

"मीर" जीवन के तथ्यों और उसके भावों के सम्बन्ध में व्यक्तिगत अनुभव और साक्षात दर्शन के कारण प्रतीतियों का एक बड़ा भण्डार रखते थे जो मात्रा के प्राचुर्य की दृष्टि से नहीं, सत्य-सम्मत होने के कारण नित्यता के गुण से-समन्वित है। जीवन के सम्बन्ध में "मीर" की प्रतीतियों का आधार अधिभौतिक दृष्टिकोण नहीं है बल्कि व्यावहारिक उपयोगिता के विभिन्न पहलू हैं। क्रियात्मक दृष्टिकोण से जीवन न तो मात्र वेदना एवं विपत्ति है न मात्र विलास-वैभव। जीवन-नद की उत्ताल तरंगें यदि किसी को डुबोती हैं तो किसी को तट के निकट भी कर देती हैं। सुख-दुख जीवन के विभिन्न भाव हैं, स्थायी मूल्य नहीं; इसलिए वास्तविक लाभ हर्ष-शोक पर निर्भर करने में नहीं है बल्कि वास्तविक जीवन की विधि सीखने में है। "मीर" ने एक अवसर पर कहा है कि :—

गोश[1] को होश की टुक खोल के सुन शोरे-जहाँ[2]   सबको आवाज़ के पर्दे में सुख़नसाज़[3] है एक

"मीर" का कृतित्व यही है कि उन्होंने "शोरे-जहाँ" में मुब्तिला[4] होने के बावजूद अपने मस्तिष्क को विशृंखल न होने दिया। बल्कि, असल "सुख़नसाज़" को ढूंढ निकाला। उन्होंने जीवन के उतार चढ़ाव में हिम्मत नहीं हारी बल्कि स्वतः जीने का "सलीक़ा" (विधि) सीखा! उनके यहाँ स्थितियों के उथल-पुथल केवल सामयिक संयोग हैं। उनकी स्थायी "शैली" वह "सलीक़ा" और "शऊर" (विधि एवं विवेक) है जिनके आधार पर वे उत्क्रान्तियों की स्थिति में भी सरल रेखा के समान सुगम मार्ग निकाल लेते हैं!

मेरे तग़ैयुरे[5]-हाल पे मत जा   इत्तफ़ाक़ात[6] हैं ज़माने के

"मीर" की दीर्घकालीन तपस्या की सिद्धि उनका "सलीक़ा",[7] "शऊर"[8] और

१. कान (गोशे-होश खोल के सुनना=अत्यधिक ध्यानपूर्वक सुनना)। २. लोक-निनाद। ३. वाणी का कर्ता। ४. ग्रस्त होना। ५. परिवर्तन (सामान्यतः बुरा परिवर्तन)। ६. संयोग। ७. हर कार्य को सुचारु रूप से करने की विधि। ८. विवेक एवं चेतना।

اور بڑے شاعر کی جگہ دل میں۔ ان باتوں کا مقصد فلسفہ کی اہمیت سے انکار کرنا نہیں ہے بلکہ فلسفہ اور شاعری کے دائرۂ عمل کے اختلاف کی طرف اشارہ کرتا ہے۔ میرؔ زندگی اور اُس کے حقائق اور کیفیتوں کے متعلق ذاتی تجربہ اور مشاہدہ کی وجہ سے احساسات کا ایک بڑا ذخیرہ رکھتے تھے جو اپنی کثرت کی وجہ سے نہیں بلکہ صداقت کی وجہ سے دائمی قدر کا حامل ہے۔ زندگی کے متعلق میرؔ کے احساسات کی بنیاد اور اپنی نظریات نہیں ہیں بلکہ عملی افادیت کے مختلف پہلوؤں پر ہے۔ عملی نقطۂ نظر سے زندگی نہ صرف غم اور مصیبت ہے اور نہ عیش و طرب۔ زندگی کے موج مارتے ہوئے دریا کی مختلف لہریں اگر کسی کو ڈبوتی ہیں تو کسی کو ساحل سے قریب بھی کر دیتی ہیں۔ غم اور نشاط زندگی کی مختلف کیفیتیں ہیں دائمی قدریں نہیں۔ اس لیے اصل فائدہ غم اور خوشی کا اعتبار کرنے میں نہیں ہے بلکہ بہ ذات خود زندگی کا سلیقہ سیکھنے میں ہے۔ میرؔ نے ایک موقع پر کہا ہے

گوش کو ہوش کی ٹک کھول کے سن شورِ جہاں   سب کی آواز کے پردے میں سخن ساز ہے ایک

میرؔ کا کارنامہ یہی ہے کہ انھوں نے شورِ جہاں میں مبتلا ہونے کے باوجود اپنے ذہن کو پراگندہ نہیں ہونے دیا۔ بلکہ اصل سخن ساز کو دریافت کیا۔ انھوں نے زندگی کے اتار چڑھاؤ میں اپنی ہمت نہیں ہاری بلکہ بذات خود جینے کا سلیقہ سیکھا۔ ان کے یہاں تغیرِ حال محض زمانے کے اتفاقات مستقل اسلوب ان کا وہ سلیقہ اور شعور ہے جس کی بنا پر وہ تغیرِ احوال کے درمیان بھی خطِ مستقیم پیدا کر لیتے ہیں

میرے تغیرِ حال پر مت جا   اتفاقات ہیں زمانے کے

میرؔ کی طویل ریاضت کا حاصل ان کا سلیقہ۔ شعور و ادب ہے۔ جس کا نتیجہ ناقابل شکست اعتماد اور مکمل یقین ہے۔ میرؔ نے زندگی بھر ان اوصاف کے اوپر زور دیا اور اپنی زندگی میں ہر کٹھن موڑ پر شدید رکاوٹوں کے باوجود انھیں صفتوں سے کام لیا

شرط سلیقہ ہے ہر ایک امر میں   عیب بھی کرنے کو ہنر چاہیے

تمنائے دل کے لیے جان دی   سلیقہ ہمارا تو مشہور ہے

"अदब"[1] है जिसके फलस्वरूप उनके पास अखण्ड आस्था एवं सम्पूर्ण विश्वास है! "मीर" ने जीवन पर्यन्त इन्हीं गुणों पर ज़ोर दिया और अपने जीवन के हर दुर्गम मोड़ पर भीषण बाधाओं के बावजूद इन्हीं गुणों से काम लिया।

शर्त सलीक़े है हर-इक अम्र[2] में "ऐब भी करने को हुनर चाहिये"[3]

तमन्नाए-दिल के लिए जान दी सलीक़ा हमारा तो मशहूर है

मेरे सलीक़े से मेरी निभी मुहब्बत में तमाम उम्र में नाकामियों से काम लिया

दूर बैठा ग़ुबार "मीर" उससे इश्क़ बिन यह अदब नहीं आता

ख़ुश हैं दीवानगी-ए-"मीर" से सब क्या जुनूँ कर गया शऊर से वह

मुहब्बत में "सलीक़ा", इश्क़ में "अदब" और जुनूँ में "शऊर"—"मीर" के व्यक्तित्व के मूल तत्त्व हैं। इसी त्रिकोण पर उनकी आस्था एवं विश्वास, निर्भयता और निश्शंकता और-अन्ततोगत्वा सफलता और सक्रियता का वह उच्च अहराम स्थापित है जो कठिन से कठिन तूफ़ान और भूकम्प को झेलने की क्षमता रखता है। वातावरण की बेअदबी, परिस्थितियों की बदसलीक़गी और उस युग के जीवन की "जुनूंअंगेज़ी"[4] से "मीर" ने अदब, सलीक़ा और शऊर प्राप्त किया। उन्होंने जिगर के ख़ून से इन गुणों को पाला और फिर जीवन को उत्तम बनाने के लिए और लोगों को जीवन की विधि सिखाने के लिए यही उपहार दिया।

इसी शऊर, अदब और सलीक़े के कारण "मीर" ने एक आश्चर्यजनक कार्य सिद्ध किया और वह है "नाकामियों से काम लेना":

तमाम उम्र में नाकामियों से काम लिया।

नाकामियाँ, असफलताएं-सामान्यतः नकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करती हैं जिनका परिणाम निराशा होती है या आक्रमणकारिता और हिंसा की प्रवृत्ति; किन्तु यह उसी समय संभव है जब उनसे प्रभावित व्यक्तित्व को जीवन का सच्चा ज्ञान न हो। "मीर" के कुल्लियात का अध्ययन इस बात को अच्छी तरह प्रकट करता है कि बुरी स्थितियों में भी न वे निराश और दिल टूट जाने के रोगी हुए; न कभी हिंसा की ओर उन्मुख हुए। उनके यहाँ अतृप्त कामनाओं की वेदना और व्यथा बहुत है जो उन विपत्तियों का स्वाभाविक और तर्कसम्मत फल है किन्तु यह तत्त्व "मीर"

१. मान, महत्त्व आदि देश, काल, स्थिति को ध्यान में रख- कर कार्य कर सकने की विधि। २. बात, मामला। ३. यह भी अब एक लोकोक्ति है। ४. उन्मादवर्द्धक कार्य, पागल कर देने वाली बात।

مرے سلیقے سے میری نبھی محبت میں　تمام عمر میں ناکامیوں سے کام لیا

دور بیٹھا غبار میرؔ اس سے　عشق بن یہ ادب نہیں آتا

خوش ہیں دیوانگیٔ میرؔ سے سب　کیا جنوں کر گیا شعور سے وہ

محبت میں سلیقہ عشق میں ادب اور جنوں میں شعور میرؔ کی شخصیت کے بنیادی عناصر ہیں ۔ اسی مثلث پر ان کے اعتماد و یقین ۔ بے خوفی اور بے خطری اور بالآخر کامیابی و کارگزاری کا وہ پرشکوہ اہرام قائم ہے جو سخت سے سخت طوفان و زلزلہ کو جھیلنے کی صلاحیت رکھتا ہے ۔ ماحول کی بے ادبی حالات کی بدسلیقگی اور اس عہد کی زندگی کی جنوں انگیزی سے میرؔ نے ادب سلیقہ اور شعور حاصل کیا ۔ انھوں نے خون جگر سے ان اوصاف کی پرورش اور پھر زندگی کو بہتر بنانے کے لیے اور لوگوں کو زندہ رہنے کا اسلوب سکھانے کے لیے یہی تحفہ دیا

شعور ادب اور سلیقہ کی وجہ سے میرؔ نے ایک حیرت انگیز کارنامہ انجام دیا اور وہ ہے ناکامیوں سے کام لینا

تمام عمر میں ناکامیوں سے کام لیا

ناکامیاں عام طور سے منفی اثرات پیدا کرتی ہیں ۔ جس کا نتیجہ مایوسی ہوتی ہے ۔ جارحیت اور تشدد کی طرف میلان ہوتا ہے، مگر یہ اسی وقت ہوسکتا ہے کہ جب شخصیت کو زندگی کی سچی جان کاری نہ ہو ۔ میرؔ کے کلیات کا مطالعہ اس بات کو اچھی طرح ظاہر کرتا ہے کہ برے حالات میں بھی نہ وہ مایوس اور دل شکستہ ہوے اور نہ تشدد کی طرف راغب ہوے ۔ ان کے یہاں حسرت اور غم بہت ہے جو مصیبتوں کا فطری اور منطقی نتیجہ ہے ۔ مگر یہ چیزیں میرؔ کے عزم و ارادوں میں کوئی فرق نہیں پیدا کرسکتی ہیں ۔ میرؔ زندگی کو ایک ایسے زاویہ سے دیکھ رہے تھے کہ جہاں سے اس کا بھرپور نظارہ ہوسکتا تھا اسی لیے زندگی کی تبدیلیاں ان کے لیے حرف آخر نہیں بن سکیں ۔ وہ نظریہ اور عمل کے اعتبار سے زندگی کے کلیات کو معتبر سمجھتے تھے نہ کہ جزئیات کو ۔ انھوں نے اس راز کو پالیا تھا کہ انسانیت کا جوہر سعی پیہم میں چھپا ہوا

के दृढ़ संकल्प एवं अडिग निश्चय में कोई अन्तर नहीं उत्पन्न कर सकते। "मीर" जीवन को एक ऐसे कोण से देख रहे थे जहाँ से इन तत्वों का भरपूर अवलोकन हो सकता था इसीलिए जीवन के परिवर्तन उनके लिए अन्तिम तथ्य न बन सके। वे तात्त्विक दृष्टि और व्यावहारिकता दोनों की दृष्टि से जीवन के मूल-तत्वों को विश्वसनीय समझते थे; न कि छोटी मोटी, सामान्य बातों को। उन्होंने यह रहस्य प्राप्त कर लिया था कि मानवीयता की मूलभूता शक्ति अनवरत प्रयास में निहित है; न कि प्रयत्न के प्रत्यक्ष और उथले परिणामों में। इसीलिए अत्यन्त विरोधी परिस्थितियों में भी निरन्तर प्रयास किये जाने का संकल्प और कर्म की गति अबाध रखने का भाव उनके यहाँ कभी मन्द नहीं हुआ। जीवन के तथ्य तक पहुंच जाने के कारण परिस्थितियों का उलट-फेर एक पूर्वापेक्षित, सामान्य बात होकर रह गया था और इसीलिए जमाने के समर्थन अथवा विरोध से प्रभावित होकर वे कभी अपने सिद्धान्त एवं विश्वास की सतह से नीचे नहीं उतरे। उनके यहाँ वास्तविक प्रश्न प्रयास और कर्म का है न कि फल और परिणाम का! यहाँ तक कि यदि "कामियों" (सफलताओं) से काम लेना संभव न रह जाय तो दूसरों की तरह वह बेबस नहीं होते, बल्कि इस अवसर पर "नाकामियों" (असफलताओं और विफलताओं) से ही काम लेते हैं। "मीर" का यह दृष्टिकोण निश्चय ही आश्चर्यजनक है जिससे उनके व्यक्तित्व की असामान्य गहनता और शक्तिमत्ता का अनुमान होता है। "नाकामियों" को काम का बनाना "नकारात्मकता" को "स्वीकारात्मकता" में ढालने के समान है—जो किसी बड़े ही असाधारण व्यक्तित्व का काम हो सकता है।

नाकामियों से काम लेना और शुद्ध कर्म पर विश्वास रखना "मीर" के यहाँ एक निर्विरोध तथ्य है जिसमें जीवन की कामना, मृत्यु का भय, विजय का उल्लास, पराजय की हताशा, सफलता का मोद और असफलता की निराशा, परिस्थितियों का समर्थन, अपने-बेगाने का विरोध—या इस प्रकार की कोई और शर्त नहीं। वह अपने सिद्धान्त एवं विश्वास—वफ़ादारी, अदब, सलीक़ा और शऊर को शर्त के साथ नहीं मानते—वह हर हाल में वफ़ादार हैं चाहे उसका फल जीवन हो या मरण!

मर रहें इसमें या रहें जीते शेवा[1] अपना तो है वफ़ादारी

जीवन पर्यन्त की निरन्तर असफलताएं ही "मीर" को काम पर उकसाती रहीं। और यही उनकी सफलता का रहस्य भी है। नाकामियों के मध्य काम करना "मीर" की बुद्धि का ठण्डे-ठण्डे किया हुआ निर्णय नहीं था बल्कि जब भी कोई

१. धर्म।

ہے نہ کہ سعی کے سطحی اور ظاہری نتیجوں میں۔ اسی لیے انتہائی ناموافق حالات میں بھی سعی کیے جانے کا ارادہ اور کام جاری رکھنے کا جذبہ ان کے یہاں کبھی سرد نہیں ہوا۔ زندگی کی حقیقت تک رسائی حاصل کرلینے کی وجہ سے حالات کی ردو بدل ان کے لیے معمولی بات ہوگئی تھی اور اسی لیے زمانہ کی مخالفت یا موافقت سے متاثر ہوکر وہ کبھی اپنے اصول اور یقین کی سطح سے نیچے نہیں اترے۔ ان کے یہاں اصل مسئلہ سعی اور کام ہے نہ کہ نتیجہ و انجام۔ یہاں تک کہ اگر ہاتھوں سے کام لینا ممکن نہ رہ جائے تو دوسروں کی طرح وہ بے بس نہیں ہوتے بلکہ اس موقع پر ناکامیوں ہی سے کام لیتے ہیں۔ میرؔ کا یہ نقطۂ نظر یقیناً جرأت انگیز ہے جس سے ان کی شخصیت کی غیر معمولی گہرائی اور توانائی کا اندازہ ہوتا ہے ناکامیوں کو باکار بنانا نفی کو اثبات میں ڈھالنے کے مرادف ہے جو کسی بہت ہی اہم ہم آزما شخصیت ہی کا کارنامہ ہوسکتا ہے

ناکامیوں سے کام لینا اور سعی پر بھروسہ کرنا میرؔ کے یہاں ایک مطلق قدر ہے جس میں جینے کی رغبت، موت کی ہیبت، فتح کی خوشی، شکست کا غم، کامیابی کی نشاط ناکامی کی مایوسی، حالات کی موافقت، اپنے اور بیگانے کی مخالفت یا اسی طرح کی کوئی اور شرط نہیں ہے۔ وہ اپنے اصول عقیدہ، وفاداری، ادب سلیقہ اور شعور کے مشروط پیرو نہیں ہیں وہ ہر حال میں وفادار ہیں چاہے اس کا نتیجہ جینا ہو یا مرنا

مر رہیں اس میں یار ہیں جتنے
شیوہ اپنا تو ہے وفاداری

زندگی بھر ناکامیوں کا تسلسل ہی میرؔ کو کام پر اکساتا رہا۔ اور یہی ان کی کامیابی کا راز بھی ہے۔ ناکامیوں کے درمیان کام کرنا میرؔ کی عقل کا سرد فیصلہ نہیں بنا بلکہ جب بھی کوئی فیصلہ کن مرحلہ آیا تو اس میں میرؔ نے جذبہ کی پوری شدّت اور خون جگر کی پوری حدّت کے ساتھ اقدام کیا ہے

کوئی ناکام یوں رہے کب تک میں بھی اب ایک کام کرتا ہوں
یا تو لیتا ہوں دادِ دل یا اب کام اپنا تمام کرتا ہوں

निर्णय का क्षण आया तो उसमें "मीर" ने भाव के सम्पूर्ण उल्लास और अपने ख़ूने-जिगर के सम्पूर्ण ताप से युक्त होकर ही कदम बढ़ाया--

कोई नाकाम यों रहे कब तक ? मैं भी अब एक काम करता हूं
या तो लेता हूं दादे-दिल[1] या अब काम अपना तमाम करता हूं

असफलताओं के बावजूद आस्था और विश्वास से भरपूर कर्म-पग उठाने के कारण उन्होंने "दादे-दिल" किसी भी दूसरे शायर से अधिक वसूल की। और यह मामूली बात नहीं थी।

क़ल्ब, यानी कि दिल, अजब ज़र[2] है इसकी नक़्क़ादी[3] को नज़र है शर्त

"मीर" ने इसी दिल को "ख़ून करके" सब कुछ प्राप्त किया था इसीलिए वह आजीवन एक राह, रविश और ढंग पर जमे रहे।

उम्र भर हम रहे शराबी-से दिले-पुर-ख़ूं[4] की इक गुलाबी[5] से !

उन्होंने "दिले-पुर-ख़ूं की इक गुलाबी" जीवन भर के अनुभवों और विपत्तियों से उतारी थी और इसीलिए उन्हें "उम्र भर शराबी-सा" रहने का अधिकार प्राप्त था !

१. दिल की दाद, उचित न्याय एवं प्रशंसा। २. चाँदी। ३. परख। ४. ख़ून भरे दिल। ५. एक सुराही (हृदय की आकृति प्रत्यक्ष रखकर)।

ناکامیوں کے باوجود یقین اور اعتماد سے بھرپور اقدام کی وجہ سے انھوں نے داد دل کسی بھی دوسرے شاعر سے زیادہ وصول کی ۔ جس دل کی انھوں نے داد وصول کی وہ کوئی معمولی چیز نہیں تھا

قلب یعنی کہ دل عجب زر ہے
اس کی نقادی کو نظر ہے شرط

میرؔ نے اسی دل کو خون کرکے سب کچھ حاصل کیا تھا اور اسی لیے وہ زندگی بھر ایک راہ روش اور اسلوب پر قائم رہے

عمر بھر ہم رہے شرابی سے دلِ پرخوں کی اک گلابی سے

انھوں نے دلِ پرخوں کی ایک گلابی زندگی بھر کے تجربات اور مصائب سے کشید کی تھی اور اسی لیے انھیں زندگی بھر "شرابی سا" رہنے کا حق حاصل تھا

हदीसे फ़न

فن حدیث

इन्तिख़ाबे ग़ज़लियाते मीर

ज़ौक़े सुख़न हुआ है अब तो बहुत हमें भी
चुन लेंगे मीर जी के अशआर चीदा चीदा

सय्यद मसऊद हसन रिज़वी अदीब

انتخابِ غزلیاتِ میرؔ

ذوقِ سخن ہوا ہے اب تو بہت ہمیں بھی
چُن لیں گے میرؔ جی کے اشعار چیدہ چیدہ

سیّد مسعود حسن رضوی ادیبؔ

इन्तख़ाबे-ग़ज़लियाते-मीर

'मीर' की समस्त ग़ज़लें उनकी छः संग्रहों (दीवानों) पर आधारित हैं। मैंने इन सब संग्रहों का अध्ययन करने के बाद उनका एक इन्तख़ाब तैयार किया लेकिन चुने हुए अशआर की संख्या बहुत अधिक हो गई अतः चुने हुए अशआर का भी इन्तख़ाब (चुनाव) करना पड़ा। तदापि संख्या अधिक थी। इस नीरस 'इन्तख़ाब-दर-इन्तख़ाब' में फिर इन्तख़ाब किया। स्पष्ट है कि प्रत्येक चुनाव में बहुधा अच्छे शेरों की संख्या कम करनी पड़ी। और विभिन्न चुनावों के बाद भी यह सन्तोष नहीं हुआ कि 'मीर' के अच्छे शेरों का 'गुलदस्ता' तैयार हो गया है।

'मीर' के विभिन्न काव्य संकलन प्रकाशित हो चुके हैं लेकिन कोई भी संकलन न ऐसा है और न ऐसा हो सकता है जो सब ही लोगों के रुचिकर शेरो पर आधारित हो। यहाँ तक कि स्वयं 'मीर' ने अपने रुचिकर शेर जो उन्होंने अपनी पुस्तक "निकातुश्शुअरा" में प्रस्तुत किये हैं वह भी सम्पूर्णतयः बहुत कम लोगों को पसन्द आ सकते हैं। अतः इन स्थितियों में विश्वास के साथ यह कहना असम्भव है कि मेरे इस इन्तखाब को सब ही लोग पसन्द करेंगे। यह बात सर्वविदित है कि न तो सब की अभिरुचियों में एकता है, न सबके दृष्टिकोण एक प्रकार के हैं, न सबके मनोवैज्ञानिक अनुभव एक दूसरे से मेल खाते हैं और न ही सबके बौद्धिक-स्तरों में समानता है। फिर सबकी पसन्द एक प्रकार की कैसे हो सकती है।

कुछ लोगों को इस 'इन्तख़ाब' में बहुत अच्छे अशआर की कमी अनुभव होगी और वह इस पर आश्चर्य भी प्रकट करेंगे। परन्तु अभिरुचियों की विभिन्नता के अतिरिक्त इसका एक मुख्य कारण यह भी है कि 'मीर' ने बहुधा एक विषय पर अनेकों शेर कहे हैं उदाहाणर्थः—

हर दम क़दम को अपने, रख एहतियात से यां
यह कारगाह सारी दुक्काने शीशा गर है।

انتخابِ غزلیاتِ میرؔ

میرؔ کی غزلیں ان کے چھ دیوانوں میں سمائی ہیں۔ میں نے ان سب دیوانوں کا مطالعہ کر کے ایک انتخاب تیار کیا۔ لیکن منتخب اشعار کی تعداد بہت زیادہ ہو گئی۔ ان منتخب اشعار میں سے پھر انتخاب کیا۔ اب بھی تعداد زیادہ تھی۔ اس لیے اس انتخاب در انتخاب میں سے پھر انتخاب کیا ظاہر ہے کہ ہر انتخاب میں بہت سے اچھے اچھے شعر نکال دینا پڑے۔ اور اتنی مرتبہ انتخاب کرنے کے بعد بھی یہ اطمینان نہیں ہوا کہ میرؔ کے بہترین اشعار کا گلدستہ تیار ہو گیا ہے

کلام میرؔ کے کئی انتخاب شایع ہو چکے ہیں۔ لیکن کوئی انتخاب نہ ایسا ہے نہ ہو سکتا ہے جو سب کے پسندیدہ اشعار پر مشتمل ہو۔ حد یہ ہے کہ خود میرؔ نے اپنے منتخب اشعار جو نکات الشعرا میں درج کیے ہیں وہ بھی سب کے سب بہت کم لوگوں کو پسند آ سکتے ہیں۔ ان حالات میں کیونکر امید کی جا سکتی ہے کہ اس انتخاب کو سب ہی پسند کر لیں گے۔ نہ سب کا مذاق یکساں ہے نہ سب کے مشاہدات ایک سے ہیں نہ سب کے نفسیاتی تجربات یکساں ہیں نہ سب کی ذہنی سطح ایک سی ہے۔ پھر سب کی پسند ایک سی کیونکر ہو سکتی ہے

بعض لوگوں کو اس انتخاب میں بعض بہت اچھے اشعار کی غیر موجودگی پر تعجب ہوگا۔ لیکن اختلاف مذاق کے علاوہ اس کا ایک خاص سبب یہ بھی ہے کہ میرؔ نے اکثر ایک ایک مضمون کے کئی کئی شعر کہے ہیں۔ مثلاً ؎

ہر دم قدم کو اپنے رکھ احتیاط سے یاں
یہ کارگاہ ساری دکّان شیشہ گر ہے
لے سانس بھی آہستہ کہ نازک ہے بہت کام
آفاق کی اس کارگہِ شیشہ گری کا

ले सांस भी आहिस्ता कि नाज़ुक है बहुत काम,
आफ़ाक़ की इस कारगहे शीशागरी का।

लगा न दिल को कहीं क्या सुना नहीं तूने ?
जो कुछ कि 'मीर' का इस आशक़ी ने हाल किया।
पहुँचा तो होगा समए-मुबारक में हाले-मीर,
इस पर भी जी में आये तो दिल को लगाइये।

लाये थे जाकर अभी तो उस गली में से पुकार
चुपके चुपके 'मीर जी' तुम उठ के अब कीधर चले ?
चला न उठके वहीं चुपके चुपके फिर तू मीर,
अभी तो उसकी गली से पुकार लाया हूँ

दूर क्या उससे जो बैठे हैं ग़ुबार अपना दूर,
पास इस तौर के भी इश्क़ के आदाब में हैं।
दूर बैठा ग़ुबार 'मीर' उससे इश्क़ बिन यह अदब नहीं आता।

मस्जिद में इमाम आज हुआ आके कहाँ से ?
कल तक तो यही 'मीर' ख़राबात नशीं था
पिये खाक पड़े फिरते थे कल तक 'मीर' गलियों में
उन्हीं को मस्जिदे-जामा की देखा आज इमामत है।
फिर 'मीर' आज मस्जिदे जामा के थे इमाम,
दाग़े शराब धोते थे कल जा-नमाज़ का।

बालीं प है इक उम्र से दस्ते तलब अपना
जो है सो गदा किस कने जा हाथ पसारें।
आगे किसू के क्या करें दस्ते-तमा दराज़ वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे धरे।

शेर दीवां के मेरे कर कर याद 'मजनूं' कहने लगा कि "हां उस्ताद"!
मेरे संगे-मज़ार पर 'फ़रहाद' रख के तेशा कहे है "या उस्ताद"!

चला है तेग़ बकफ़ यार ग़ैर की जानिब हुए हैं 'मीर' तमाशाई ग़ैरत उनको नहीं।
जाता है यार तेग़ बकफ़ ग़ैर की तरफ़ ऐ कुश्तए सितम तेरी ग़ैरत को क्या हुआ

لگا نہ دل کو کہیں کیا سُنا نہیں تو نے
جو کچھ کہ میرؔ کا اس عاشقی نے حال کیا
پہنچا تو ہوگا سمعِ مبارک میں حالِ میرؔ
اس پر بھی جی میں آئے تو دل کو لگائیے

لائے تھے جاکر ابھی تو اس گلی میں سے پکار
چپ کے چپ کے میرؔ جی تم اٹھ کے اب کیدھر چلے
چلا نہ اٹھ کے وہیں چپکے چپکے پھر تو میرؔ
ابھی تو اس کی گلی سے پکار لایا ہوں

دُور کیا اس سے جو بیٹھے ہے غبار اپنا دور　　پاس اس طور کے بھی عشق کے آداب میں ہیں
دور بیٹھا غبارِ میرؔ اس سے　　عشق بن یہ ادب نہیں آتا

مسجد میں امام آج ہوا آکے کہاں سے　　کل تک تو یہی میرؔ خرابات نشیں تھا
پیے دارو پڑے پھرتے تھے کل تک میرؔ گلیوں میں
انھیں کو مسجدِ جامع کی دیکھا آج امامت ہے
پھر میرؔ آج مسجدِ جامع کے تھے امام　　داغِ شراب دھوتے تھے کل جا نماز کا

بالیں پہ ہے اک عمر سے دستِ طلب اپنا　　جو ہے سو گدا کس کنے جا ہاتھ پساریں
آگے کسو کے کیا کریں دستِ طمع دراز　　وہ ہاتھ سو گیا ہے سرہانے دھرے دھرے
شعر دیواں کے میرے کر کر یاد　　مجنوںؔ کہنے لگا کہ ہاں استاد
میرے سنگِ مزار پر فرہادؔ　　رکھ کے تیشہ کہے ہے یا استاد
چلا ہے تیغ بکف یار غیر کی جانب　　ہوئے ہیں میرؔ تماشائی غیرت ان کو نہیں
جاتا ہے یار تیغ بکف غیر کی طرف　　اے کشتۂ ستم تری غیرت کو کیا ہوا

मत सहल हमें जानो पहुँचे थे बहम तब हम बरसों तईं गरदूं ने जब ख़ाक को छाना था
मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक बरसों तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलते हैं

ऐसे उदाहरण 'मीर' के संग्रहों में बड़ी संख्या में मिलते हैं। इन समान विषयक शेरों में जो शेर, शैली तथा प्रभाव की दृष्टि से उचित प्रतीत हुए, वह 'इन्तख़ाब' में ले लिए गये और शेष की ओर ध्यान नहीं दिया गया। 'मीर' की शायरी तथा उनकी शैली पद्धति पर कुछ विचार व्यक्त नहीं करने हैं लेकिन एक दो बातें ऐसी हैं जिनका यहाँ उल्लेख करना मैं उचित समझता हूँ।

वर्तमान युग के एक महान कवि ने कहा है:—

इस्तिआरों में बयां करने के दिन बाक़ी नहीं दास्तां अब साफ़ लफ़्ज़ों में सुनाना चाहिए

उसने जिस प्रकार की शैली की आवश्यकता अनुभव की उसको आज से ढाई सौ वर्ष पूर्व जन्म लेने वाले शायर 'मीर' ने बड़ी कुशलता से अपनाया था। 'मीर' उपमाओं से कम और रूपकों से अधिक काम लेते हैं। रूपक, स्वाभाविक रूप से अनभिज्ञ तथा साधारण व्यक्ति भी अपनी बातचीत के प्रयोग में ले आते हैं। 'मीर' के यहाँ भी वह स्वाभाविक रूप से विद्यमान हैं। 'मीर' की शायरी सरलता तथा स्पष्टता का अद्वितीय आदर्श है। वह पूर्णतयः अकृत्रिम तथा स्वाभाविक रूप मे बात कहते हैं और उसमें वह प्रभाव उत्पन्न करते हैं जो बनावट और तकल्लुफ़ से पैदा नहीं हो सकता। यह बात सर्वविदित है कि प्रभावुकता के स्पष्टीकरण हेतु लिखित वाक्य, सूचक वाक्य से कहीं अधिक शक्तिशाली होता है लेकिन 'मीर' के काव्य में लिखित वाक्य भी ढूंढ़े ही से मिलते हैं। इतना सब कुछ होते हुए भी 'मीर' का काव्य प्रभावुकता के विषय में अद्वितीय है। इस सम्बन्ध में 'मीर' ने हमारे अनुभवों की व्याख्या इस शेर में कर दी है :—

क्या जाने दिल को खींचे हैं क्यों शेर 'मीर' के कुछ तर्ज़ ऐसी भी नहीं ईहाम भी नहीं

'मीर' का काव्य प्रेम, सहानुभूति, सरलता तथा विभिन्न उपदेशों का अमूल्य चित्र है। सम्भवतः इसी में उसके आकर्षण तथा रोचकता का रहस्य छिपा हुआ है। 'मीर की एक विशेषता यह भी है कि उन्होंने ग़ज़लों की रचना के सम्बन्ध में विभिन्न निश्चित आदर्शों को ग्रहण किया है। उनकी ग़ज़लों में छोटी-बड़ी सभी पद्धतियों का अधिक्य है जिसका उदाहरण किसी अन्य शायर के काव्य-संग्रहों में नहीं मिलता। उनका यह दावा वास्तविकता पर आधारित है:—

"कहे मैंने अशआर हर बहर में व लेकिन क़यामत रवानी के साथ"

'मीर' के काव्य में असंख्य विषयों की चर्चा है जिनके उल्लेख हेतु अत्याधिक

مت سہل ہمیں سمجھو پہنچے تھے بہم تب ہم   برسوں تئیں گردوں نے جب خاک کو چھانا تھا
مت سہل ہمیں سمجھو پھرتا ہے فلک برسوں   تب خاک کے پردے سے انسان نکلتے ہیں

ایسی مثالیں میر کے دیوانوں میں کثیر تعداد میں موجود ہیں ۔ ان ہم مضمون اشعار میں جو شعر اسلوب اور اثر کے اعتبار سے بہتر معلوم ہوئے وہ انتخاب میں لے لیے گئے اور باقی چھوڑ دیے گئے

میر کی شاعری اور ان کے اسلوب پر مجھ کو کچھ لکھنا نہیں ہے ۔ لیکن ایک دو باتیں بے ساختہ قلم کی زبان پر آ رہی ہیں ۔ ان کو لکھے دیتا ہوں

عصر حاضر کے ایک ممتاز شاعر کا قول ہے ؎

استعاروں میں بیاں کرنے کے دن باقی نہیں   داستاں اب صاف لفظوں میں سنانا چاہیے

انھوں نے جس اسلوب بیان کی ضرورت اب محسوس کی ہے اس کو آج سے ڈھائی سو برس پہلے پیدا ہونے والا شاعر میر کس خوبی سے برت گیا ہے ۔ میر تشبیہوں سے کم اور استعاروں سے بہت کم کام لیتے ہیں ۔ استعارہ فطری طور پر ہر جاہل و عامی کے بیان میں بھی بعض موقعوں پر بلا ارادہ آ جاتا ہے ۔ میر کے یہاں بھی وہ فطری حد تک موجود ہے میر کا کلام سادگی اور صفائی کا بے نظیر نمونہ ہے۔ وہ بالکل بے تصنع فطری انداز میں بات کہتے ہیں اور اس میں وہ اثر پیدا کرتے ہیں جو تصنع اور تکلف کی تمام کوششوں سے پیدا نہیں ہو سکتا ۔ سب جانتے ہیں کہ تاثرات کے اظہار کے لیے جملہ انشائیہ جملۂ خبریہ سے کہیں زیادہ کارگر ہوتا ہے ۔ لیکن میر کے کلام میں انشائیہ جملے بھی ڈھونڈھنے ہی سے ملتے ہیں ۔ باوجود اس کے ان کا کلام اثر انگیزی میں جواب نہیں رکھتا ۔ اس معاملے میں میر نے ہمارے احساسات کی ترجمانی اپنے اس شعر میں کر دی ہے

کیا جانیں دل کو کھینچے ہیں کیوں شعر میر کے   کچھ طرز ایسی بھی نہیں ایہام بھی نہیں

میر کا کلام خلوص، معصومیت، دردمندی اور عبرت آگینی کا ایک بے نظیر مرقع ہے اور شاید اسی میں اس کی دل کشی اور دل نشینی کا راز پنہاں ہے

میر کے اسلوب کی ایک خصوصیت بحروں کا تنوع ہے ۔ انھوں نے غزلوں میں بڑی اور چھوٹی بحریں اس کثرت سے استعمال کی ہیں جتنی کسی دوسرے شاعر کے دیوان میں نہیں مل سکتیں ۔ ان کا یہ دعویٰ حقیقت پر مبنی ہے ۔

विस्तार की आवश्यकता है। परन्तु उनका अत्याधिक प्रिय एवं रोचक विषय 'इश्क़' है। उनके यहाँ 'इश्क़' की अलौकिक कल्पना भी विद्यमान है। इसके अतिरिक्त सांसारिक प्रेम से सम्बन्धित विषयों, परिस्थितियों तथा मनोभावों का विवरण भी विभिन्न रूप में पाया जाता है अतः इन विषयों पर कोई नई बात कहना कठिन प्रतीत होता है।

'मीर' की शायरी को यदि 'प्रेम-भाषा' कहा जाए तो अनुचित न होगा।

था मुस्तआर हुस्न से उसके, जो नूर था ख़ुरशीद में भी उस ही का ज़र्रा-ज़हूर था
हंगामा-गर्मकुन जो दिले-नासुबूर था पैदा हरेक नाले से शोरे-नुशूर था
पहुँचा जो आपको तो मैं पहुँचा ख़ुदा के तईं मालूम अब हुआ कि बहुत मैं भी दूर था
महफ़िल में रात एक तेरे पर्तवे बग़ैर क्या शम्अ क्या पतंग हरेक बेहुज़ूर था
कल पांव एक कासे-सर पर जो आ गया यकसर वो उस्तख़ान शिकस्तों से चूर था
कहने लगा कि "देख के चल राह, बेख़बर, मैं भी कभू किसू का सरे-पुर ग़ुरूर था
था वह तो रश्के-हूरे-बिहिश्ती हमीं में "मीर" समझे न हम तो फ़हम का अपनी क़ुसूर था

उल्टी हो गईं सब तदबीरें कुछ न दवा ने काम किया
देखा इस बीमारी-ए-दिल ने आख़िर काम तमाम किया
अह्दे-जवानी रो-रो काटा, पीरी में लीं आँखें मूंद
यानी रात बहुत थे जागे सुब्ह हुई आराम किया
हर्फ़ नहीं जाँ बख़्शी में उसकी, ख़ूबी अपनी क़िस्मत की
हमसे जो पहले कह भेजा सो मरने का पैग़ाम किया
सरज़द हमसे बे अदबी तो वहशत में भी कम ही हुई
कोसों उसकी ओर गये पर सज्दा हर-हर गाम किया
किसका काबा ? कैसा क़िब्ला ? कौन हरम है क्या अहराम ?
कूचे के उसके बाशिन्दों ने सबको यहीं से सलाम किया
याँ के सपेद-ो-सियह में हमको दख़्ल जो है सो इतना है
रात को रो-रो सुब्ह किया या दिन को जूं-तूं शाम किया
सुब्ह-चमन में उसको कहीं तकलीफ़े हवा ले आई थी
रुख़ से गुल को मोल लिया क़ामत से सर्व ग़ुलाम किया
साइदे-सीमीं दोनों उसके हाथ में लाकर छोड़ दिये
भूले उसके क़ौल-ो-क़सम पर हाय ख़याल-ख़ाम किया
काम हुए हैं सारे ज़ाया हर साअत की समाजत से
इस्तग़ना की चौगुनी उनने ज्यों-ज्यों मैं इब्राम किया

کہے میں نے اشعار ہر بحر میں ولیکن قیامت روانی کے ساتھ

میرؔ کی شاعری کے موضوعات بے شمار ہیں، جن کی تفصیل کے لیے ایک ضخیم دفتر درکار ہے لیکن ان کا سب سے زیادہ محبوب و مرغوب موضوع عشق ہے۔ عشق کا ایک ماورائی تصور بھی میرؔ کے یہاں ہے۔ اس سے قطع نظر عشق مجازی کے معاملات، واردات اور کیفیات کا بیان اتنی کثرت اور اتنے پہلوؤں سے ملتا ہے کہ ان موضوعوں پر کوئی نئی بات مشکل ہی سے کہی جا سکتی ہے

میرؔ کی شاعری کو عشق کی زبان کہہ سکتے ہیں

تھا مستعار حسن سے اپنے جو نور تھا خورشید میں بھی اس ہی کا ذرّہ ظہور تھا

ہنگامہ گرم کن جو دلِ ناصبور تھا پیدا ہر ایک نالے سے شورِ نشور تھا

پہنچا جو آپ کو تو میں پہنچا خدا کے تئیں معلوم اب ہوا کہ بہت میں بھی دور تھا

محفل میں رات ایک ترے پرتوے بغیر کیا شمع کیا پتنگ ہر اک بے حضور تھا

ق

کل پاؤں ایک کاسۂ سر پر جو آگیا یکسر وہ استخوان شکستوں سے چور تھا

کہنے لگا کہ دیکھ کے چل راہ بے خبر میں بھی کبھو کسو کا سرِ پرغرور تھا

تھا وہ تو رشکِ حورِ بہشتی ہمیں میں میرؔ

سمجھے نہ ہم تو فہم کا اپنی قصور تھا

الٹی ہوگئیں سب تدبیریں کچھ نہ دوا نے کام کیا

دیکھا، اس بیماریٔ دل نے آخر کام تمام کیا

عہدِ جوانی رو رو کاٹا، پیری میں لیں آنکھیں موند

یعنی رات بہت تھے جاگے، صبح ہوئی آرام کیا

حرف نہیں جاں بخشی میں اس کی، خوبی اپنی قسمت کی

ہم سے جو پہلے کہہ بھیجا سو مرنے کا پیغام کیا

سرزد ہم سے بے ادبی تو وحشت میں بھی کم ہی ہوئی

کوسوں اس کی اور گئے پر سجدہ ہر ہر گام کیا

کس کا کعبہ؟ کیسا قبلہ؟ کون حرم ہے؟ کیا احرام؟

کوچے کے اس کے باشندوں نے سب کو یہیں سے سلام کیا

ऐसे आहुए-रम ख़ुर्दा की वहशत खोनी मुश्किल थी
सहर किया, एजाज़ किया जिन लोगों ने तुझको राम किया
"मीर" के दीनों-मज़हब को अब पूछते क्या हो उनने तो
क़श्क़ा खींचा,दैर में बैठा, कबका तर्क इस्लाम किया

———

हमारे आगे तेरा जब किसू ने नाम लिया दिले-सितमज़दा को हमने थाम-थाम लिया
क़सम जो खाइये तो ताल-ए-ज़ुलैख़ा की अज़ीज़े-मिस्र का भी साहब इक ग़ुलाम लिया
ख़राब रहते थे मस्जिद के आगे मयख़ाने निगाहे-मस्त ने साक़ी की इन्तक़ाम लिया
मेरे सलीक़े से मेरी निभी मुहब्बत में तमाम उम्र में नाकामियों से काम लिया
अगरचे गोशा-गुज़ीं हूं मैं शायरों में "मीर" प मेरे शोर ने रुए-ज़मीं तमाम लिया

———

गुल को महबूब हम क़यास किया फ़र्क़ निकला बहुत जो बास किया
दिल ने हमको मिसाले-आईना एक आलम का रूशनास किया
इश्क़ में हम हुए न दीवाने क़ैस की आबरू का पास किया
दौर से चर्ख़ के निकल न सके ज़ोफ़ ने हमको मोर-सास किया
सुबह तक शम्अ सर को धुनती रही क्या पतंगे ने इल्तमास किया
ऐसे वहशी कहां हैं ऐ ख़ूबां "मीर" को तुम अबस उदास किया

———

सुना है हाल तेरे कुश्तगां बेचारों का हुआ न गोर गढ़ा उन सितम के मारों का
हज़ार रंग खिले गुल चमन के हैं शाहिद कि रोज़गार के सर ख़ून है हज़ारों का
मिला है ख़ाक में किस-किस तरह का आलम यां निकल के शहर से टुक सैर कर मज़ारों का
इलाज करते हैं सौदा-ए-इश्क़ का मेरे ख़लल पज़ीर हुआ है दिमाग़ यारों का
तेरी ही ज़ुल्फ़ को महशर में हम दिखा देंगे जो कोई मांगेगा नामा सियाहकारों का
तड़प के मरने से दिल के कि मग़फ़रत हो इसे जहां में कुछ तो रहा नाम बेक़रारों का
तुम्हें तो ज़ुह्द-ो-वरअ पर बहुत है अपने ग़ुरूर ख़ुदा है शेख़ जी हम भी गुनाहगारों का

———

कई दिन सुलूक विदाअ का मेरे दरपये-दिले-ज़ार था
कभू दर्द था, कभू दाग़ था, कभू ज़ख़्म था, कभू वार था
दमे-सुब्ह बज़्मे-ख़ुश-जहां शबे ग़म से कम न थी मेहरबां
कि चिराग़ था सो तो दूद था, जो पतंग था सो ग़ुबार था
दिले-ख़स्ता जो लहू हो गया तो भला हुआ कि कहां तलक
कभू सोज़े-सीना से दाग़ था कभू दर्द-ो-ग़म से फ़िगार था
दिले-मुज़्तरिब से गुज़र गई शबे-वस्ल अपनी ही फ़िक्र में
न दिमाग़ था न फ़राग़ था न शकेब था न क़रार था

یاں کے سپید و سیہ میں ہم کو دخل جو ہے سو اتنا ہے
رات کو رو رو صبح کیا یا دن کو جوں توں شام کیا

صبح چمن میں اس کو کہیں تکلیف ہوا لے آئی تھی
رُخ سے گل کو مول لیا، قامت سے سرو غلام کیا

ساعدِ سیمیں دونوں اس کے ہاتھ میں لا کر چھوڑ دیئے
بھولے اس کے قول و قسم پر ہائے خیالِ خام کیا

کام ہوئے ہیں سارے ضایع ہر ساعت کی سماجت سے
استغنا کی چوگنی ان نے جوں جوں میں ابرام کیا

ایسے آہوئے رم خوردہ کی وحشت کھونی مشکل تھی
سحر کیا، اعجاز کیا جن لوگوں نے تجھ کو رام کیا

میرؔ کے دین و مذہب کو اب پوچھتے کیا ہو ان نے تو
قشقہ کھینچا دیر میں بیٹھا کب کا ترک اسلام کیا

ہمارے آگے ترا جب کسو نے نام لیا — دلِ ستم زدہ کو ہم نے تھام تھام لیا
قسم جو کھایئے تو طالعِ زلیخا کی — عزیزِ مصر کا بھی صاحب اک غلام لیا
خراب رہتے تھے مسجد کے آگے میخانے — نگاہِ مست نے ساقی کی انتقام لیا
مرے سلیقے سے میری نبھی محبت میں — تمام عمر میں ناکامیوں سے کام لیا
اگرچہ گوشہ گزیں ہوں میں شاعروں میں میرؔ — پہ میرے شعر نے روئے زمیں تمام لیا

گل کو محبوب ہم قیاس کیا — فرق نکلا بہت جو باس کیا
دل نے ہم کو مثالِ آئینہ — ایک عالم کا روشناس کیا
عشق میں ہم ہوئے نہ دیوانے — قیس کی آبرو کا پاس کیا
دور سے چرخ کے نکل نہ سکے — ضعف نے ہم کو مور طاس کیا
صبح تک شمع سر کو دھنتی رہی — کیا پتنگے نے التماس کیا

जो निगाह की भी पलक उठा तो हमारे दिल से लहू बहा
कि वहीं वो नावके-बेख़ता किसू के कलेजे के पार था
ये तुम्हारी इन दिनों दोस्तां मिज़ह जिसके ग़म में है ख़ूं-चकां
वही आफ़ते-दिले-आशिक़ां किसू वक़्त हम से भी यार था
कभू जाएगी जो उधर सबा तो ये कहियो उससे कि बेवफ़ा
मगर एक "मीरे"-शिकस्ता पा तेरे बाग़े ताज़ा में ख़ार था

जीते जी कूच-ए-दिलदार से जाया न गया   उसकी दीवार का सर से मेरे साया न गया
वो तो कल देर तलक देखता ईधर को रहा   हमसे ही हाले-तबाह अपना दिखाया न गया
ख़ाक तक कूच-ए-दिलदार की छानी हमने   जुस्तजू की प' दिले-गुमशुदा पाया न गया
आतिशे-तेज़ जुदाई में यकायक उस बिन   यूं जला दिल कि तनिक जी भी जलाया न गया
मह ने आ सामने शब, याद दिलाया था उसे   फिर वो ता सुब्ह मेरे जी से भुलाया न गया
ज़ेरे-शमशीरे-सितम "मीर" तड़पना कैसा   सर भी तस्लीमे-मुहब्बत में हिलाया न गया

दिल के तईं आतिशे-हिज्रां से बचाया न गया   घर जला सामने पर हमसे बुझाया न गया
क्या तुनुक हौसला थे दीदा-ो-दिल अपने-आप   एक दम राज़ मुहब्बत का छिपाया न गया
दिल जो दीदार का क़ातिल के बहुत भूखा था
उस सितम कुश्ता से इक ज़ख़्म भी खाया न गया
शहरे-दिल आह अजब जाय थी पर उसके गए
ऐसा उजड़ा कि किसी तरह बसाया न गया

गुल में उसकी सी जो बू आई तो आया न गया।
हमको बिन दोशे-हवा बाग़ से लाया न गया
सरनशीने-रहे-मयख़ाना हूं, मैं क्या जानूं ?   रस्मे-मस्जिद के तईं शेख़ कि आया, न गया
हैफ़ वे उनकी वह उस वक़्त में पहुंचा जिस वक़्त   उनकने हाल इशारों से बताया न गया
ख़ौफ़े आशोब से ग़ौग़ा-ए-क़यामत के लिए   ख़ूने-ख़्वाबीद-ए-उश्शाक़ जगाया न गया
"मीर", मत उज़्र गरेबां के फटे रहने का कर;
ज़ख़्मे-दिल, चाके जिगर था ? कि, सिलाया न गया

कब तलक ये सितम उठाइयेगा   एक दिन यूं ही जी से जाइयेगा
शक्ले-तस्वीरे-बेख़ुदी कब तक   किसू दिन आप में भी आइयेगा
कहियेगा उससे क़िस्स-ए-मजनूं   यानी पर्दे में ग़म सुनाइयेगा
शिर्कते-शेख़-ो-बरहमन से "मीर"   काबा-ो-दैर से भी जाइयेगा
अपनी डेढ़ ईंट की जुदी मस्जिद   किसी वीराने में बनाइयेगा

ایسے وحشی کہاں ہیں اے خوباں　　میرؔ کو تم عبث اُداس کیا

سُنا ہے حال ترے کشتگاں بے چاروں کا　　ہوا نہ گور گڑھا ان ستم کے ماروں کا
ہزار رنگ کھلے گل چمن کے ہیں شاہد　　کہ روزگار کے سر خون ہے ہزاروں کا
ملا ہے خاک میں کس کس طرح کا عالم یاں　　نکل کے شہر سے ٹک سیر کر مزاروں کا
علاج کرتے ہیں سودائے عشق کا میرے　　خلل پذیر ہوا ہے دماغ یاروں کا
تری ہی زلف کو محشر میں ہم دکھا دیں گے　　جو کوئی مانگے گا نامہ سیاہ کاروں کا
تڑپ کے مرنے سے دل کے کہ مغفرت ہو اسے　　جہاں میں کچھ تو رہا نام بے قراروں کا
تمھیں تو زہد و ورع پر بہت ہے اپنے غرور　　خدا ہے شیخ جی ہم بھی گنہگاروں کا

کئی دن سلوکِ وداع کا مرے درپئے دلِ زار تھا　　کبھو درد تھا، کبھو داغ تھا، کبھو زخم تھا، کبھو وار تھا
دمِ صبح بزمِ خوش جہاں شب غم سے کم نہ تھی مہرباں　　کہ چراغ تھا سو تو دود تھا، جو پتنگ تھا سو غبار تھا
دلِ خستہ جو لہو ہو گیا تو بھلا ہوا کہ کہاں تلک　　کبھو سوزِ سینہ سے داغ تھا، کبھو درد و غم سے فگار تھا
دلِ مضطرب سے گزر گئی شبِ وصل اپنی ہی فکر میں　　نہ دماغ تھا نہ فراغ تھا، نہ شکیب تھا نہ قرار تھا
جو نگاہ کی بھی پلک اٹھا تو ہمارے دل سے لہو بہا　　کہ وہیں وہ ناوکِ بے خطا کسو کے کلیجے کے پار تھا
یہ تمھاری ان دنوں دوستاں مژہ جس کے غم میں ہے خونچکاں　　وہی آفتِ دلِ عاشقاں کسو وقت ہم سے بھی یار تھا
کبھو جائے گی جو ادھر صبا تو یہ کہیو اس سے کہ بے وفا　　مگر ایک میرؔ شکستہ پا ترے باغ تازہ میں خار تھا

جیتے جی کوچۂ دلدار سے جایا نہ گیا　　اس کی دیوار کا سر سے مرے سایا نہ گیا
وہ تو کل دیر تلک دیکھتا اِیدھر کو رہا　　ہم سے ہی حالِ تباہ اپنا دکھایا نہ گیا
خاک تک کوچۂ دلدار کی چھانی ہم نے　　جستجو کی، پہ دلِ گم شدہ پایا نہ گیا
آتشِ تیز جدائی میں یکایک اُس بن　　یوں جلا دل کہ تنک جی بھی جلایا نہ گیا
مہ نے آ سامنے شب، یاد دلایا تھا اُسے　　پھر وہ تا صبح مرے جی سے بھلایا نہ گیا
زیرِ شمشیرِ ستم میرؔ تڑپنا کیسا　　سر بھی تسلیمِ محبّت میں ہلایا نہ گیا

ग़म रहा जब तक कि दम में दम रहा   दम के जाने का निहायत, ग़म रहा
दिल न पहुँचा गोशये दामाँ तलक   क़तरे-ख़ूँ था मिज़ह पर जम रहा
मेरे रोने की हक़ीक़त जिसमें थी   एक मुद्दत तक वह काग़ज़ नम रहा
सुब्हे-पीरी, शाम होने आई 'मीर'   तू न चेता, याँ बहुत दिन कम रहा

मेरे मालिक ने मेरे हक़ में यह एहसान किया   ख़ाके-नाचीज़ था मैं सो मुझे इनसान किया
मुझ को शायर न कहो 'मीर', कि साहब मैंने   दर्दो-ग़म कितने किये जमा, तो दीवान किया

जहाँ में रहने को जी बहुत था, न कर सके 'मीर' कुछ तवक़्क़ुफ़
बिना थी नापायदार इसकी, इसी से रहना बना न अपना।

कहा मैंने, कितना है गुल का सबात   कली ने यह सुनकर तबस्सुम किया।

मर रहते जो गुल बिन, तो सारा यह ख़लल जाता
निकला ही न जी वरना, काँटा सा निकल जाता

शहरे-दिल, एक मुद्दत उजड़ा बसा ग़मों से   आख़िर उजाड़ देना उसका क़रार पाया

दी आग रंगे-गुल ने, वाँ ऐ सबा चमन को   याँ हम जले क़फ़स में, सुन हाल आशियाँ का

किस तरह से मानिये यारों, कि यह आशिक़ नहीं
रंग उड़ा जाता है, टुक चेहरा तो देखो 'मीर' का

बेकसी मुद्दत तलक बरसा की अपनी गोर पर
जो हमारी ख़ाक पर से होके गुज़रा, रो गया।

नामुरादी की रसम 'मीर' से है   तौर यह उस जवान से निकला।

हर क़दम पर थी उसकी मनज़िल, लेक   सर से सौदाये जुस्तजू न गया।

याद उसकी इतनी ख़ूब नहीं, 'मीर' बाज़ आ
नादान, फिर वह जी से भुलाया न जायगा।

दिल की वीरानी का क्या मज़कूर है   यह नगर सौ मरतबा लूटा गया।

دل کے تئیں آتشِ ہجراں سے بچایا نہ گیا   گھر جلا سامنے پر ہم سے بجھایا نہ گیا
کیا تنک حوصلہ تھے دیدہ و دل اپنے آہ   ایک دم رازِ محبّت کا چھپایا نہ گیا
دل جو دیدار کا قاتل کے بہت بھوکا تھا   اس ستم کشتہ سے اک زخم بھی کھایا نہ گیا
شہرِ دل آہ عجب جائے تھی پر اس کے گئے   ایسا اجڑا کہ کسی طرح بسایا نہ گیا

گل میں اس کی سی جو بو آئی تو آیا نہ گیا   ہم کو بن دوشِ ہوا باغ سے لایا نہ گیا
سر نشینِ رہِ میخانہ ہوں میں کیا جانوں   رسمِ مسجد کے تئیں شیخ کہ آیا نہ گیا
حیف دے حسن کی وہ اس وقت میں پہنچا جس وقت   ان کنے حال اشاروں سے بتایا نہ گیا
خوابِ آشوب سے غوغائے قیامت کے لیے   خوابِ خوابیدۂ عشاق جگایا نہ گیا
میرؔ مت عذر گریباں کے پھٹے رہنے کا کر   زخمِ دل چاکِ جگر تھا کہ سلایا نہ گیا

کب تلک یہ ستم اٹھائیے گا   ایک دن یوں ہی جی سے جائیے گا
شکلِ تصویرِ بے خودی کب تک   کسو دن آپ میں بھی آئیے گا
کہیے گا اس سے قصّۂ مجنوں   یعنی پردے میں غم سنائیے گا
شرکتِ شیخ و برہمن سے میرؔ   ق کعبہ و دیر سے بھی جائیے گا
اپنی ڈیڑھ اینٹ کی جُدی مسجد   کسی ویرانے میں بنائیے گا

غم رہا جب تک کہ دم میں دم رہا   دم کے جانے کا نہایت غم رہا
دل نہ پہنچا گوشۂ داماں تلک   قطرۂ خوں تھا مژہ پر جم رہا
میرے رونے کی حقیقت جس میں تھی   ایک مدت تک وہ کاغذ نم رہا
صبحِ پیری شام ہونے آئی میرؔ   تو نہ چیتا، یاں بہت دن کم رہا

میرے مالک نے مرے حق میں یہ احسان کیا   خاکِ ناچیز تھا میں، سو مجھے انسان کیا
مجھ کو شاعر نہ کہو میرؔ کہ صاحب میں نے   درد و غم کتنے کیے جمع تو دیوان کیا

आलम में कोई दिल का तलबगार न पाया   इस जिन्स का याँ हमने ख़रीदार न पाया।

———

वे दिन गए कि आँखें दरिया सी बहतियाँ थीं   सूखा पड़ा है अब तो मुद्दत से यह दुआबा

———

बुतों के इश्क़ ने बे इख़्तियार कर डाला   वह दिल कि जिसका ख़ुदाई में इख़्तियार रहा।

———

गली में उसकी गया, सो गया, न बोला फिर   मैं 'मीर' 'मीर' कर उसको बहुत पुकार रहा।

———

चमन में हम भी ज़नजीरी रहे हैं   सुना होगा कभू शेवन हमारा।

———

वसलो-हिजराँ सों जो दो मनज़िल हैं राहे इश्क़ की
दिल ग़रीब इनमें ख़ुदा जाने कहाँ मारा गया।

———

सरसरी तुम जहान से गुज़रे   वरना हर जा, जहाने दीगर था।

———

दिल कि एक क़तरा ख़ूं नहीं है बेश   एक आलम के सर बला लाया

———

सब प जिस बार ने गरानी की   उसको ये नातवाँ उठा लाया।

———

दूर बैठा ग़ुबारे मीर उससे   इश्क़ बिन यह अदब नहीं आता।

———

कल चमन में गुलो-समन देखा   आज देखा तो बाग़, बन देखा।

———

ख़ुदा को काम तो सौंपे हैं मैंने सब लेकिन   रहे है ख़ौफ़ मुझे, वाँ की बेनयाज़ी का।

———

आवारगाने-इश्क़ का पूछा जो मैंने हाल   मुश्ते-ग़ुबार ले के सबा ने उड़ा दिया।

———

उसके फ़रोग़े-हुस्न से झमके है सब में नूर   शम-ए-हरम हो, या कि दिया सोमनाथ का।

———

वसलो-हिजराँ से नहीं है इश्क़ में कुछ गुफ़्तगू
लाग दिल को चाहिये है, याँ क़रीबो-दूर क्या।

———

दिल से ख़ुशतरह मकान, फिर भी कहीं बनते हैं
इस इमारत को टुक इक देख के ढाया होता।

———

बे ख़ुदी ले गई कहाँ हमको   देर से इंतिज़ार है अपना।

———

جہاں میں رہنے کو جی بہت تھا، نہ کر سکے میرؔ کچھ توقف
بنا تھی ناپائیدار اس کی، اسی سے رہنا بنا نہ اپنا

کہا میں نے کتنا ہے گل کا ثبات	کلی نے یہ سن کر تبسم کیا

مر رہتے جو گل بن تو سارا یہ خلل جاتا	نکلا ہی نہ جی ورنہ، کانٹا سا نکل جاتا

شہرِ دل ایک مدت اجڑا بسا غموں سے	آخر اجاڑ دینا اس کا قرار پایا

دی آگ رنگِ گل نے واں اے صبا چمن کو	یاں ہم جلے قفس میں، سن حال آشیاں کا

کس طرح سے مانیے یارو، کہ یہ عاشق نہیں	رنگ اڑا جاتا ہے ٹک چہرہ تو دیکھو میرؔ کا

بیکسی مدت تلک برسا کی اپنی گور پر	جو ہماری خاک پر سے ہو کے گزرا رو گیا

نامرادی کی رسم میرؔ سے ہے	طور یہ اس جوان سے نکلا

ہر قدم پر تھی اس کی منزل لیک	سر سے سودائے جستجو نہ گیا

یاد اس کی اتنی خوب نہیں، میرؔ باز آ	نادان پھر وہ جی سے بھلایا نہ جائے گا

دل کی ویرانی کا کیا مذکور ہے	یہ نگر سو مرتبہ لوٹا گیا

عالم میں کوئی دل کا طلب گار نہ پایا	اس جنس کا یاں ہم نے خریدار نہ پایا

क्या हुस्न, ज़बाने दिल ख़्वाह का   हमेशा रहे नाम अल्लाह का ।

कहता था किसू से कुछ, तकता था किसू का मुंह
कल मीर खड़ा था यां, सच है कि दिवाना था ।

इश्क़ से किस्से मेरे, आगह किया उस शोख़ को
अब मेरे आने से, हो जाता है वह महजूब सा ।

आलम किसू हकीम का बांधा तिलस्म है   कुछ हो तो ऐतबार भी हो कायनात का ।

झुक के सलाम किसूको करना सजदा ही हो जाता है
सर जावेगो इसमें मेरा सर न फ़िरो मैं लाऊंगा ।

दूर बहुत भागो हो हमसे सीख तरीक़ ग़ज़ालों का
वहशत करना शेवा है क्या, अच्छी आंखों वालों का ।

रेगिस्तां में जाके रहें, या संगिस्तां में हम जोगी
रात हुई जिस जागह हमको, हमने वहीं आराम किया ।

इश्क़ हमारे ख़्याल पड़ा है, चैन गया, आराम गया
जी का जाना ठहर गया है, सुब्ह गया या शाम गया ।

आज हमारा दिल तड़पे है, कोई उधर से आवेगा
या कि नविश्ता उन हाथों का, क़ासिद हम तक लावेगा ।

बाद हमारे इस फ़न का, जो कोई माहिर होवेगा
ददंआगी अन्दाज़ की बातें, अक्सर पढ़पढ़ रोवेगा

तुर्फ़ा ख़्याल किया करता था, इश्क़ो जुनूं में रोज़ो शब
रोते रोते हंसने लगा यह मीर अजब दीवाना था ।

बातें हमारी याद रहें, फिर बातें ऐसी न सुनियेगा
पढ़ते किसू को सुनियेगा, तो देर तलक सर धुनियेगा ।

निसार क्या करें, हम ख़ान्मां ख़राब उस पर   कि घर लुटा चुके, जब यार अपने घर आया ।

وے دن گئے کہ آنکھیں دریا سی بہتیاں تھیں　　سوکھا پڑا ہے اب تو مدت سے یہ دوآبا

بتاں کے عشق نے بے اختیار کرڈالا　　وہ دل کہ جس کا خدائی میں اختیار رہا

گلی میں اس کی گیا، سو گیا، نہ بولا پھر　　میں میرؔ، میرؔ کر اس کو بہت پکار آیا

چمن میں ہم بھی زنجیری رہے ہیں　　سُنا ہوگا کبھی شیون ہمارا

وصل و ہجراں سی جو دو منزل ہیں راہِ عشق کی　　دلِ غریب ان میں خدا جانے کہاں مارا گیا

سرسری تم جہان سے گزرے　　ورنہ ہر جا جہانِ دیگر تھا

دل کی اک قطرہ خوں نہیں ہے بیش　　ایک عالم کے سر بلا لایا

سب پہ جس بار نے گرانی کی　　اس کو یہ ناتواں اٹھا لایا

دور بیٹھا غبارِ میرؔ اس سے　　عشق بن یہ ادب نہیں آتا

کل چمن میں گل و سمن دیکھا　　آج دیکھا تو باغ، بَن دیکھا

خدا کو کام تو سونپے ہیں میں نے سب لیکن　　رہے ہے خوف مجھے واں کی بے نیازی کا

آوارگانِ عشق کا پوچھا جو میں نے حال　　مشتِ غبار لے کے صبا نے اڑا دیا

اس کے فروغِ حُسن سے جھمکے ہے سب میں نور　　شمعِ حرم ہو یا کہ دیا سومنات کا

وصل و ہجراں سے نہیں ہے عشق میں کچھ گفتگو　　لاگ دل کو چاہیے ہے یاں قریب و دور کیا

دل سے خوش طرح مکاں، پھر بھی کہیں بنتے ہیں　　اس عمارت کو ٹک اک دیکھ کے ڈھایا ہوتا

بے خودی لے گئی کہاں ہم کو　　دیر سے انتظار ہے اپنا

گیا حُسن، خوبانِ دل خواہ کا　　ہمیشہ رہے نام اللہ کا

کہتا تھا کسو سے کچھ، تکتا تھا کسو کا منھ　　کل میرؔ کھڑا تھا یاں، سچ ہے کہ دوانا تھا

عشق سے کن نے مرے، آگہ کیا اس شوخ کو　　اب مرے آنے سے ہو جاتا ہے وہ محجوب سا

عالم کسی حکیم کا باندھا طلسم ہے　　کچھ ہو تو اعتبار بھی ہو کائنات کا

جھک کے سلام کسی کو کرنا سجدہ ہی ہو جاتا ہے　　سر جاوے گو اس میں میرا سر نہ فرو میں لاؤں گا

دُور بہت بھاگو ہو ہم سے، سیکھ طریق غزالوں کا　　وحشت کرنا شیوہ ہے کیا، اچھی آنکھوں والوں کا

ریگستاں میں جاکے رہیں یا سنگستاں میں ہم جوگی　　رات ہوئی جس جاگہ ہم کو ہم نے وہیں آرام کیا

عشق ہمارے خیال پڑا ہے چین گیا، آرام گیا　　جی کا جانا ٹھہر گیا ہے صبح گیا یا شام گیا

जब जुनूँ से हमें तवस्सुल था   अपनी ज़ंजीर पा ही का ग़ुल था ।

वह जो ख़ंजर बकफ़ नज़र आया   मीर सौ जान से निसार हुआ ।

बूए-ख़ूँ से, जी रुका जाता है ए बादे बहार
हो गया है चाक दिल शायद, किसू दिलगीर का ।

दिल से मेरे लगा न तेरा दिल हज़ार हैफ़   यह शीशा, एक उम्र से मुश्ताक़े-संग था ।

जिन बलाओं को मीर सुनते थे   उनको इस रोज़गार में देखा ।

हम न कहते थे, कि मत दैरो-हरम की राह चल
अब यह दावा, हश्र तक शैख़ो-बरहमन में रहा ।

गुल खिले सद्-रंग तो क्या, बेपरी से ऐ नसीम
मुद्दतें गुज़रीं कि वह गुलज़ार का जाना गया ।

रहे-तलब में गिरे होते सर के बल हम भी   शिकस्ता-पाई ने अपनी, हमें संभाल लिया ।

शब, फ़रोग़े बज़्म का बाइस हुआ था, हुस्ने दोस्त   शमा का जलवा, ग़ुबारे दीद-ए-पर्वाना था ।

इस कारवाँ-सरा में, क्या मीर बार खोलें   याँ कूच लग रहा है, शामो सहर हमारा ।

आदमे ख़ाकी से आलम को जिला है वरना   आइना था यह, वले क़ाबिले दीदार न था ।

दिले बेरहम गया शैख़ लिए ज़ेरे ज़मीं   मर गया, पर यह कुहन-गब्र मुसलमाँ न हुआ ।

जाँ बलब रसीदा से इतना ही कहने पाये हम
जावे अगर तू यार तक कहियो हमारी भी दुआ ।

आई अगर बहार तो अब हमको क्या सबा
हमसे तो आशियाँ भी गया और चमन गया ।

जो इस शोर से मीर रोता रहेगा   तो हमसाया काहे को सोता रहेगा ।

दिल इश्क़ का हमेशा हरीफ़े नबर्द था   अब जिस जगह कि दाग़ है याँ आगे दर्द था ।

آج ہمارا دل تڑپے ہے، کوئی اُدھر سے آوے گا — یا کہ نوشتہ ان ہاتھوں کا قاصد ہم تک لاوے گا

بعد ہمارے اس فن کا، جو کوئی ماہر ہووے گا — درد آگیں انداز کی باتیں، اکثر پڑھ پڑھ روے گا

حرفِ خیال کیا کرتا تھا عشق و جنوں میں روز و شب — روتے روتے ہنسنے لگا یہ میرؔ عجب دیوانہ تھا

باتیں ہماری یاد رہیں پھر باتیں نہ ایسی سنیے گا — پڑھتے کسو کو سنیے گا تو دیر تلک سر دُھنیے گا

نثار کیا کریں، ہم خانماں خراب اس پر — کہ گھر لٹا چکے، جب یار اپنے گھر آیا

جب جنوں سے ہمیں توصل تھا — اپنی زنجیرِ پا ہی کا غل تھا

وہ جو خنجر بکف نظر آیا — میرؔ سو جان سے نثار ہوا

بوئے خوں سے جی رکا جاتا ہے اے بادِ بہار — ہو گیا ہے چاک دل شاید کسی دلگیر کا

دل سے میرے لگا نہ تیرا دل ہزار حیف — یہ شیشہ ایک عمر سے مشتاقِ سنگ تھا

جن بلاؤں کو میرؔ سنتے تھے — ان کو اس روزگار میں دیکھا

ہم نہ کہتے تھے کہ مت دیر و حرم کی راہ چل — اب یہ دعویٰ حشر تک شیخ و برہمن میں رہا

گل کھلے صد رنگ تو کیا بے پری سے اے نسیم — مدتیں گزریں کہ وہ گلزار کا جانا گیا

رہِ طلب میں گرے ہوتے سر کے بَھل ہم بھی — شکستہ پائی نے اپنی ہمیں سنبھال لیا

شبِ فروغِ بزم کا باعث ہوا تھا حُسنِ دوست — شمع کا جلوہ، غبارِ دیدۂ پروانہ تھا

اس کارواں سرا میں کیا میرؔ بار کھولیں — یاں کوچ لگ رہا ہے شام و سحر ہمارا

آدم خاکی سے عالم کی جِلا ہے ورنہ — آئینہ تھا یہ ولے قابلِ دیدار نہ تھا

دلِ بے رحم گیا، شیخ لیے زیرِ زمیں — مر گیا، پر یہ کہن گبر مسلماں نہ ہوا

جاں بہ لب رسیدہ سے اتنا ہی کہنے پائے ہم — جاوے اگر تو یار تک کہیو ہماری بھی دعا

آئی اگر بہار تو اب ہم کو کیا صبا — ہم سے تو آشیاں بھی گیا اور چمن گیا

جو اس شور سے میرؔ روتا رہے گا — تو ہمسایہ کاہے کو سوتا رہے گا

دل عشق کا ہمیشہ حریفِ نبرد تھا — اب جس جگہ کہ داغ ہے یاں آگے درد تھا

عاشق ہیں ہم تو میرؔ کے بھی ضبطِ عشق کے — دل جل گیا تھا اور نفس لب پہ سرد تھا

کیا میرؔ ہے یہی جو ترے در پہ تھا کھڑا — نم ناک چشم و خشک لب و رنگ زرد سا

پائے خطاب کیا کیا، دیکھے عتاب کیا کیا — دل کو لگا کے ہم نے کھینچے عذاب کیا کیا

आशिक़ हैं हम तो मीर के भी ज़ब्ते इश्क़ के   दिल जल गया था और नफ़स, लब प सर्द था

क्या मीर है यही, जो तेरे दर प था खड़ा   नमनाक चश्मो, ख़ुश्क लबो, रंग ज़र्द सा ।

— — —

पाए ख़िताब क्या-क्या, देखे इताब क्या-क्या   दिल को लगा के हमने खींचे अज़ाब क्या-क्या

— — —

कल दिल आज़ुरदा गुलिस्ताँ से गुज़र हमने किया
गुल लगे कहने "कहो" मुंह न इधर हमने किया

— — —

क्या जानें हम असीरे क़फ़सज़ाद ऐ नसीम   गुल कैसे, बाग़ कहते हैं किसको, बहार क्या ।

— — —

इक निगह, एक चशमक, एक सुख़न   इसमें भी तुमको है ताम्मुल सा

— — —

हमारी ख़ाक प इक बेकसी बरसती है   उधर से अब्र जब आया, तब अश्कबार हुआ ।

— — —

तुम जो कल इस राह निकले, बर्क़ से हँसते गए
अब्र को देखो कि जब आया इधर, गिरियाँ हुआ

— — —

यहीं हैं दैरो हरम अब तो ये हक़ीक़त है   दिमाग़ किसको है हर दर की जब्हा साई का

— — —

दे के दिल हम जो हो गए मजबूर   इसमें क्या इख़्तियार है अपना ।

— — —

कहते तो हो, यूं कहते, यूं कहते जो वह आता   यह कहने की बातें हैं कुछ भी न कहा जाता ।

— — —

कोई सादा ही, उसको सादा कहे   लगे है हमें तो वह, अय्यार सा ।

— — —

क़दे यार के आगे, सर्वे-चमन   खड़ा दूर जैसे गुनहगार था ।

— — —

इश्क़ से दिल पे ताज़ा दाग़ जला   इस सिया-ख़ाने में चिराग़ जला ।

— — —

दीनों दिल के ग़म को आसी नातवाँ मैं ले गया   था मुहब्बत, कह के ये बारे गिराँ मैं ले गया

— — —

जानना बातिल किसू को ये क़ुसूरे फ़हम है
हक़ अगर समझे तो सब कुछ हक़ है याँ बातिल है क्या

— — —

کل دل آزردہ گلستاں سے گزر ہم نے کیا	گل لگے کہنے "کہو" منھ نہ ادھر ہم نے کیا
کیا جانیں ہم اسیرِ قفس زاد اے نسیم	گل کیسے، باغ کہتے ہیں کس کو، بہار کیا
اک نگہ، ایک چشمک، ایک سخن	اس میں بھی تم کو ہے تامل سا
ہماری خاک پہ اک بے کسی برستی ہے	ادھر سے ابر جب آیا، تب اشک بار ہوا

تم جو کل اس راہ نکلے برق سے ہنستے گئے
ابر کو دیکھو کہ جب آیا اِدھر گریاں ہوا

یہیں ہیں دیر و حرم اب تو یہ حقیقت ہے	دماغ کس کو ہے ہر در کی جبہ سائی کا
دے کے دل ہم جو ہو گئے مجبور	اس میں کیا اختیار ہے اپنا

کہتے تو ہو، یوں کہتے، یوں کہتے جو وہ آتا
یہ کہنے کی باتیں ہیں کچھ بھی نہ کہا جاتا

کوئی سادہ ہی اس کو سادہ کہے	لگے ہے ہمیں تو وہ عیار سا
قدِ یار کے آگے سروِ چمن	کھڑا دور جیسے گنہگار تھا
عشق سے دل پہ تازہ داغ جلا	اس سیہ خانے میں چراغ جلا

دین و دل کے غم کو آساں ناتواں میں لے گیا
یا محبّت! کہہ کے یہ بارِ گراں میں لے گیا

جاننا باطل کسو کو یہ تصورِ فہم ہے
حق اگر سمجھے تو سب کچھ حق ہے یاں باطل ہے کیا

شکرِ خدا کہ سر نہ فرو لائے ہم کہیں	کیا جانیں سجدہ کہتے ہیں کس کو سلام کیا

ہر آن تھی سرگوشی، یا بات نہیں گاہے
اوقات ہے اک یہ بھی، اک وہ بھی زمانا تھا

عشق بھی ہم میں ہائے تصرّف کیسے کیسے ہوتا ہے	دل کو چاک جگر کو زخمی آنکھوں کو خوں بار رکھا

मुझे ख़ुदा कि सर न फ़िरो लाए हम कहीं   क्या जाने सजदा कहते हैं किसको सलाम क्या

———

हर आन थी सरगोशी, या बात नहीं गाहे   औक़ात है इक यह भी, इक वह भी ज़माना था।

———

इश्क़ भी हम में हाए तसर्रुफ़ कैसे कैसे होता है
दिल को ख़ाक, जिगर को ज़ख़्मी, आँखों को ख़ूँबार रक्खा।

———

दिल अजब शहर था ख़्यालों का   लूटा मारा है हुस्न वालों का।

———

ये दो ही सूरतें हैं या मुनअकिस है आलम   या आलम आइना है उस यारे ख़ुदनुमा का।

———

मक्के गया, मदीने गया, कर्बला गया   जैसा गया था, वैसा ही चल फिर के आ गया।

———

ख़ूब किया जो अह्ले-करम के जूद का कुछ न ख़्याल किया
हम जो फ़क़ीर हुए, तो हमने पहले तर्के सवाल किया।

———

मीर सदा बेहाल रहो हो, मेहरो वफ़ा सब करते हैं
तुमने इश्क़ किया, सो साहब, क्या अपना यह हाल किया।

———

एक निगह की उम्मीद भी उसकी चश्मे-शोख़ से हमको नहीं
इधर ऊधर देखेगा, पर हमसे आँख छिपावेगा।

———

कहने की भी लिखने की भी हम तो क़सम खा बैठे थे
आख़िर दिल की बेताबी से, ख़त भेजा पैग़ाम किया।

———

हाए जवानी, क्या क्या कहिये, शोर सरों में रखते थे
अब क्या है, वह वक़्त गया, वह मौसम, वह हंगाम गया।

———

ख़्याल छोड़ दे वाइज़ तू बेगुनाही का   रखे है शौक़ अगर रहमते इलाही का।

———

दिल तड़पे है, जान रुके है, हाल जिगर का क्या होगा
मजनूं मजनूं लोग कहे हैं, मजनूं क्या हम सा होगा।

———

मीर क्या है ? फ़क़ीरे मुस्तग़नी   आवे उस पास बादशाह तो क्या।

———

دل عجب شہر تھا خیالوں کا   لوٹا مارا ہے حُسن والوں کا
یہ دو ہی صورتیں ہیں یا منعکس ہے عالم   یا عالم آئینہ ہے اس یارِ خود نما کا

مکے گیا، مدینے گیا، کربلا گیا   جیسا گیا تھا، ویسا ہی چل پھر کے آگیا

خوب کیا جو اہلِ کرم کے جود کا کچھ نہ خیال کیا
ہم جو فقیر ہوئے تو ہم نے پہلے ترکِ سوال کیا
میرؔ سدا بے حال رہو ہو، مہر و وفا سب کرتے ہیں
تم نے عشق کیا، سو صاحب کیا اپنا یہ حال کیا

ایک نگہ کی امید بھی ان کی چشمِ شوخ سے ہم کو نہیں
ادھر ادھر دیکھے گا، پر ہم سے آنکھ چھپاوے گا

کہنے کی بھی، لکھنے کی بھی، ہم تو قسم کھا بیٹھے تھے
آخر دل کی بیتابی سے خط بھیجا، پیغام کیا

ہائے جوانی کیا کیا سیکھے، شور سروں میں رکھتے تھے
اب کیا ہے، وہ وقت گیا، وہ موسم وہ ہنگام گیا

خیال چھوڑ دے واعظ تو بےگناہی کا   رکھے ہے شوق اگر رحمتِ الٰہی کا

دل تڑپے ہے جان کھپے ہے، حال جگر کا کیا ہو گا
مجنوں مجنوں لوگ کہے ہیں، مجنوں کیا ہم سا ہو گا

चाह में जौर हम प कम न हुआ   आशिक़ी की तो कुछ सितम न हुआ।

इश्क़ किए, पछताए हम तो, दिल न किसू से लगाना था
जीधर हो वह मुंह निकला उस राह न हमको जाना था।

ग़म से होकर ज़र्द सरासर सूरत सारी ख़िज़ाँ की है
आन निकलते सूए चमन तो रंग हवा का बदल जाता।

न उठा लुत्फ़ कुछ जवानी का   कम बहुत मौसमे-शबाब रहा।

क्या लिखूं, मुश्किल हुई तहरीरे हाल   ख़त का काग़ज़, रोने से नम हो गया।

देर बद अहद वह जो यार आया   दूर से देखते ही प्यार आया।

उसके शेवे लुत्फ़ प मत जा, कि हमनशीं   वह मेरे हाल प भी बहुत मेहरबाँ रहा।

दिल गया, रुस्वा हुए, आख़िर को सौदा हो गया
इस दो-रोज़ा ज़ीस्त में, हम पर भी क्या क्या हो गया।

हम फ़क़ीरों से बे अदाई क्या   आन बैठे जो तुमने प्यार किया।

शिकस्तो फ़त्ह, नसीबों से है, वले ए मीर   मुक़ाबला तो दिले नातवाँ ने ख़ूब किया।

ले सांस भी आहिस्ता कि नाज़ुक है बहुत काम   आफ़ाक़ की इस कारगहे शीशा-गरी का।

मसकन जहाँ था दिल ज़दा मिस्कीं का हम तो वाँ   कल देर मीर, मीर, पुकारे नहीं है अब—

ख़िलाफ़े वादा बहुत हुए हो, कोई तो वादा वफ़ा करो अब
मिला के आँखें, दरोग़ कहना, कहाँ तलक, कुछ हया करो अब।

बोला, जो मू-परीशाँ आ निकले मीर साहब   आना हुआ कहाँ से ? कहिये फ़क़ीर साहब।

यूँ सबा भी सुबुक नहीं जाती   यूँ गया मौसमे शबाब, शिताब।

क्या कहूं हाले ख़ातिर आशुफ़्ता   दिल ख़ुदा जानिये किधर है अब।

میرؔ کیا ہے فقیر مستغنی   آوے اس پاس بادشاہ تو کیا
چاہ میں جور ہم پہ کم نہ ہوا   عاشقی کی تو کچھ ستم نہ ہوا
عشق کیے پچھتائے ہم تو دل نہ کسو سے لگانا تھا
جیدھر ہو وہ منھ نکلا، اس راہ نہ ہم کو جانا تھا

غم سے ہو کر زرد سراسر صورت ساری خزاں کی ہے
آن نکلتے سوئے چمن تو رنگت ہوا کا بدل جاتا
نہ اٹھا لطف کچھ جوانی کا   کم بہت موسمِ شباب رہا
کیا لکھوں مشکل ہوئی تحریر حال   خط کا کاغذ رونے سے نم ہو گیا
دیر بہ عہد وہ جو یار آیا   دور سے دیکھتے ہی پیار آیا
اس کے فریبِ لطف پہ مت جا کہ ہمنشیں   وہ میرے حال پہ بھی بہت مہرباں رہا
دل گیا، رسوا ہوئے، آخر کو سودا ہو گیا
اس دو روزہ زیست میں ہم پر بھی کیا کیا ہو گیا

ہم فقیروں سے بے ادائی کیا   آن بیٹھے جو تم نے پیار کیا
شکست و فتح نصیبوں سے ہے ولے اے میرؔ   مقابلہ تو دلِ ناتواں نے خوب کیا
لے سانس بھی آہستہ کہ نازک ہے بہت کام   آفاق کی اس کارگہِ شیشہ گری کا
مسکن جہاں تھا دل زدہ مسکیں کا ہم تو واں   کل دیر میرؔ، میرؔ پکارے نہیں ہے اب
خلافِ وعدہ بہت ہوئے ہو، کوئی تو وعدہ وفا کرو اب
ملا کے آنکھیں دروغ کہنا کہاں تلک کچھ حیا کرو اب

بولا جو، مو پریشاں آنکلے میرؔ صاحب   آتا ہوا کہاں سے کیسے فقیر صاحب؟
یوں صبا بھی سبک نہیں جاتی   جوں گیا موسمِ شباب شتاب
کیا کہیں حالِ خاطر آشفتہ   دل خدا جانے کدھر ہے اب

इल्तिफ़ाते ज़माना पर मत जा   मीर दुनिया है, रोज़गार फ़रेब ।

दिल-ख़राशीओ, जिगर-चाकिओ, ख़ूं अफ़शानी
हूं तो नाकाम, प रहते हैं मुझे काम बहुत ।

दिल की तह की कही नहीं जाती, नाज़ुक हैं असरार बहुत
अच्छर हैं तो इश्क़ के दो ही, लेकिन है विस्तार बहुत ।

देर कुछ खिचती तो कहते भी, मुलाक़ात की बात
मिलना अपना जो हुआ उससे, सो वह बात की बात ।

यूं बारे-गुल से अब के, झुके हैं निहाले-बाग़
झुक झुक के जैसे करते हैं, दो चार यार बात ।

अजब नहीं है न जाने जो मीर चाह की रीत
सुना नहीं है मगर ये कि जोगी किस के मीत ।

मीर से पूछा जो मैं, आशिक़ हो तुम   हो के कुछ चुपके से, शर्माए बहुत ।

हमें इश्क़ में मीर चुप लग गई है   न शुक्रो-शिकायत, न हर्फ़ो हिकायत ।

जब से आंखें लगी हैं हमारी, नींद नहीं आती है रात
तकते राह रहे हैं दिन को, आंखों में जाती है रात ।

अब तो वफ़ाओ मेहर का मज़कूर ही नहीं
तुम किस समय की कहते हो, यह है कहां की बात ।

चश्म रहती है अब पुर आब बहुत   दिल को मेरे है इज़्तेराब बहुत ।

साक़ी टुक एक मौसिम गुल की तरफ़ भी देख   टपका पड़े है रंग चमन में हवा से आज ।

चश्म हो तो आइना ख़ाना है दहर   मुंह नज़र आता है दीवारों के बीच ।

फ़रहादो-क़ैस जिससे मुझे चाहो पूछ लो   मशहूर है फ़क़ीर भी अहले-वफ़ा के बीच ।

التفاتِ زمانہ پر مت جا   میرؔ دنیا ہے روزگار فریب
دل خراشی و جگر چاکی و خوں افشانی
ہوں تو ناکام پہ رہتے ہیں مجھے کام بہت

دل کی تہہ کی کہی نہیں جاتی، نازک ہیں اسرار بہت
اچھر ہیں تو عشق کے دو ہی، لیکن ہے بستار بہت

دیر کچھ کھینچتی تو کہتے بھی ملاقات کی بات
ملنا اپنا جو ہوا اس سے، سو وہ بات کی بات

یوں بارِ گل سے اب کے جھکے ہیں نہالِ باغ   جھک جھک کے جیسے کرتے ہیں دو چار یار بات
عجب نہیں ہے نہ جانے جو میرؔ چاہ کی ریت   سُنا نہیں ہے مگر یہ کہ جوگی کس کے ریت
میرؔ سے پوچھا جو میں، عاشق ہو تم   ہو کے کچھ چپکے سے شرمائے بہت
ہمیں عشق میں میرؔ چپ لگ گئی ہے   نہ شکوہ شکایت نہ حرف و حکایت
جب سے آنکھیں لگی ہیں ہماری نیند نہیں آتی ہے رات
تکتے راہ رہے ہیں دن کو آنکھوں میں جاتی ہے رات
اب تو وفا و مہر کا مذکور ہی نہیں   تم کس سمے کی کہتے ہو یہ ہے کہاں کی بات
چشم رہتی ہے اب پُر آب بہت   دل کو میرے ہے اضطراب بہت
ساقی ٹک ایک موسمِ گل کی طرف بھی دیکھ
ٹپکا پڑے ہے رنگ چمن میں ہوا سے آج

چشم ہو تو آئینہ خانہ ہے دہر   منہ نظر آتا ہے دیواروں کے بیچ
فرہاد و قیس جس سے مجھے چاہو پوچھ لو
مشہور ہے فقیر بھی اہلِ وفا کے بیچ

मेरे संगे-मज़ार पर फ़रहाद   रख के तेशा, कहे है या उस्ताद ।

चमन की याद के आते ख़बर न इतनी रही
कि मैं किधर हूँ किधर है क़फ़स किधर सय्याद ।

नज़र मीर ने कैसी हसरत से की   बहुत रोए हम, उसकी रुख़सत के बाद ।

जी में था, उससे मिलिए तो क्या क्या न कहिए मीर
पर अब मिले तो रह गये नाचार देखकर ।

मर्ग इक माँदगी का वक़्फ़ा है   यानी आगे चलेंगे दम लेकर ।

मरते हैं हम तो आदमे ख़ाकी की शान पर   अल्लाह रे दिमाग़ कि है आसमान पर ।

दिल वह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके   पछताओगे, सुनो हो, यह बस्ती उजाड़ कर ।

कुछ हो रहेगा इश्क़ो हवस में भी इमतेयाज़   आया है अब मिज़ाज तेरा इमतेहान पर ।

मुझको क़फ़स में संबुलो रैहाँ की क्या ख़बर कह   ए नसीमे सुब्ह गुलिस्ताँ की क्या ख़बर ।

बे बालो पर असीर हूँ कुंजे क़फ़स में मीर   आती नहीं है सर से चमन की हवा हनोज़ ।

फ़ुरसते सैरे बाग़ टुक न हुई   यूँ ही जाती रही बहार अफ़सोस ।

शाद उस दिले गिरफ़्ता को था कर बज़ोरे मै
बैठे थे शीरा ख़ाने में हम कितने हरज़ा कोश ।
आई सदा कि याद करो दौरे रफ़्ता को
इबरत भी है ज़रूर टुक ए जमए तेज़ होश ।
जमशेद जिसने वज़ा किया जाम क्या हुआ   वे सुहबतें कहा गईं कीधर वह ना-व-नोश ।
गुल लाला उसके जाम से पाते नहीं निशाँ   हैं कोकनार उसकी जगह अब सबू बदोश ।
सूने है देव, जाए अबालाने मैं गुसार   बालाए ख़ुम है ख़िश्त सरे पीरे मै फ़रोश ।

दिल का देना, है सहल क्या ए मीर   आशिक़ी करने को जिगर है शर्त ।

जी जल गया, तफ़र्रुजे-अग़्यार देखकर
हम उस गली में जब गए, तब वाँ से लाए दाग़ ।

میرے سنگِ مزار پر فرہاد
رکھ کے تیشہ کہے ہے یا استاد

چمن کی یاد کے آتے خبر نہ اتنی رہی
کہ میں کدھر ہوں، کدھر ہے قفس، کدھر صیاد

نظر میر نے کیسی حسرت سے کی
بہت روئے ہم اس کی رخصت کے بعد

جی میں تھا، اس سے ملیے تو کیا کیا نہ کہیے میر
پر جب ملے تو رہ گئے ناچار دیکھ کر

مرگ اک ماندگی کا وقفہ ہے
یعنی آگے چلیں گے دم لے کر

مرتے ہیں ہم تو آدمِ خاکی کی شان پر
اللہ رے دماغ کہ ہے آسمان پر

دل وہ نگر نہیں کہ پھر آباد ہو سکے
پچھتاؤ گے، سنو ہو، یہ بستی اجاڑ کر

کچھ ہو رہے گا عشق و ہوس میں بھی امتیاز
آیا ہے اب مزاج ترا امتحان پر

مجھ کو قفس میں سنبل و ریحاں کی کیا خبر
کہہ اے نسیمِ صبح گلستاں کی کیا خبر

بے بال و پر اسیر ہوں کنجِ قفس میں میر
جاتی نہیں ہے سر سے چمن کی ہوا ہنوز

رخصتِ سیرِ باغ ٹک نہ ہوئی
یوں ہی جاتی رہی بہار افسوس

شب اُس دل گرفتہ کو وا کر بہ زورِ مے
بیٹھے تھے شیرہ خانے میں ہم کتنے ہرزہ کوش

آئی صدا کہ یاد کرو دورِ رفتہ کو
عبرت بھی ہے ضرور ٹک اے جمعِ تیز ہوش

جمشید جس نے وضع کیا جام کیا ہوا
وے صحبتیں کہاں گئیں، کیدھر وہ نا و نوش

جز لالہ اس کے جام سے پاتے نہیں نشاں
ہے کوکنار اس کی جگہ اب سبو بہ دوش

جھومے ہے بید جائے جوانانِ مے گسار
بالائے خم ہے خشتِ سرِ پیرِ مے فروش

دل کا دینا ہے سہل کیا اے میر
عاشقی کرنے کو جگر ہے شرط

جی جل گیا تقرب اغیار دیکھ کر
ہم اس گلی میں جب گئے، تب واں سے لائے داغ

मुहब्बत ने शायद कि दी दिल में आग धुआँ सा है कुछ इस नगर की तरफ़।

क्या कहूँ तुमसे मैं, कि क्या है इश्क़ जान का रोग है बला है इश्क़।
इश्क़ माशूक़, इश्क़ आशिक़ है यानी अपना ही मुब्तला है इश्क़।
इश्क़, है तर्ज़ो तौरे इश्क़ के तईं कहीं बन्दा, कहीं ख़ुदा है इश्क़।
मीर जी ज़र्द होते जाते हो क्या कहीं तुमने भी किया है इश्क़।

——

कोहकन क्या पहाड़ काटेगा पर्दे में ज़ोर-आज़मा है इश्क़।

——

लोग बहुत पूछा करते हैं, क्या कहिये मियाँ, क्या है इश्क़
कुछ कहते हैं सिर्रे-इलाही, कुछ कहते हैं ख़ुदा है इश्क़।

——

हो के फ़क़ीर, गली में उसकी चैन बहुत सा पाया हम
ले के सरहाने पत्थर रक्खा, आए फ़र्श बिछाई ख़ाक।

गोश को होश के टुक खोल के, सुन शोरे जहाँ
सब की आवाज़ के पर्दे में सुख़न-साज़ है एक।

——

काबे पहुँचा तो क्या हुआ, ए शेख़ सई कर टुक पहुँच किसी दिल तक।

——

जल जल के सब इमारते-दिल ख़ाक हो गई कैसे नगर को आह मुहब्बत ने दी है आग।

गुल की जफ़ा भी जानी, देखी वफ़ाए बुलबुल यकमुश्ते पर पड़े हैं गुलशन में जाए बुलबुल।

——

गुलज़ार हो रहा है मेरे दम से कूए यार एक रंग पर है दीदए ख़ूंबार आजकल।

——

न खैंचें क्यों कि नुक्साँ हम तो क़ैदी हैं तयक्कुन के
ख़ुदी से कोई निकले तो उसे होवे ख़ुदा हासिल।

——

तुरबत से हमारी न उठी गर्द भी ऐ मीर जी से गये लेकिन न किया तर्के अदब हम।

——

यही जाना कि कुछ न जाना हाए सो भी इक उम्र में हुआ मालूम।

——

सब करो, बेताब रहो, ख़ामोश फिरो या शोर करो
किसको याँ परवा है किसू की, ठहरो आओ जाओ तुम।

——

محبّت نے دی دل میں شاید کہ آگ　　دھواں سا ہے کچھ اس نگر کی طرف

کیا کہوں تم سے میں، کہ کیا ہے عشق　　جان کا روگ ہے، بلا ہے عشق
عشق معشوق، عشق عاشق ہے　　یعنی اپنا ہی مبتلا ہے عشق
عشق ہے طرز و طورِ عشق کے تئیں　　کہیں بندہ کہیں خدا ہے عشق
میرؔ جی زرد ہوتے جاتے ہو　　کیا کہیں تم نے بھی کیا ہے عشق

کوہکن کیا پہاڑ کاٹے گا　　پردے میں زور آزما ہے عشق
لوگ بہت پوچھا کرتے ہیں، کیا کہیے میاں کیا ہے عشق
کچھ کہتے ہیں سرِّ الٰہی، کچھ کہتے ہیں خدا ہے عشق

ہو کے فقیر گلی میں اس کی، چین بہت سا پایا ہم
لے کے سرہانے پتھر رکھا، جائے فرش بچھائی خاک
گوش کو ہوش کے ٹک کھول کے سُن شورِ جہاں　　سب کی آواز کے پردے میں سخن ساز ہے ایک
کعبے پہنچا تو کیا ہوا اے شیخ　　سعی کر ٹک پہنچ کسی دل تک
جل جل کے سب عمارتِ دل خاک ہوگئی　　کیسے نگر کو آہ محبّت نے دی ہے آگ
گل کی جفا بھی جانی، دیکھی وفائے بلبل　　یک مشت پر پڑے ہیں گلشن میں جائے بلبل
گلزار ہو رہا ہے مرے دم سے کوئے یار　　اک رنگ پر ہے دیدۂ خونبار آج کل
نہ کھینچیں کیوں کہ نقصاں ہم تو قیدی ہیں تیقّن کے
خودی سے کوئی نکلے تو اسے ہووے خدا حاصل
تربت سے ہماری نہ اٹھی گرد بھی اے میرؔ　　جی سے گئے لیکن نہ کیا ترکِ ادب ہم
یہی جانا کہ کچھ نہ جانا ہائے　　سو بھی اک عمر میں ہوا معلوم
صبر کرو، بیتاب رہو، خاموش پھرو، یا شور کرو
کس کو یاں پروا ہے کسو کی، ٹھہرو، آؤ، جاؤ تم

हर कूचे में खड़े रह रह कर ईधर ऊधर देखो हो
हाए ख़्याल यह क्या है तुमको, जाने भी दो, अब आओ तुम ।

क्या ज़माना था कि थे, दिल्दार के यारों में हम
मोहर-ए-आलम थे, उसके नाज़ बरदारों में हम ।

बाग़ गो सब्ज़ हुआ, अब सरे-गुलज़ार कहां   दिल कहां, वक़्त कहां, ताक़ते दीदार कहां ।

जौर क्या क्या, जफ़ाएं क्या क्या हैं   आशिक़ी में बलाएं क्या क्या हैं ।

हमने यह माना कि वायज़ है मलक   आदमी होना बहुत मुश्किल है मियां ।
की ज़ियारत मीर की हमने भी कल   लाओबाली सा है, पर कामिल है मियां ।

हुई ईद, सबने पहने तरबो ख़ुशी के जामे   न हुआ कि हम भी बदलें यह लिबासे सोगवारी ।

तू परी, शीशे से नाज़ुक है न कर दावा-ए-मेहर
दिल हैं पत्थर के उन्हों के जो वफ़ा करते हैं ।

फाड़ा हज़ार जा से गेबाने सब्र, मीर   क्या कह गई नसीमे-सहर गुल के कान में ।

चला न उठ के वहीं चुपके चुपके फिर तू मीर   अभी तो उसकी गली से पुकार लाया हूं ।

वहीं कि कुहले-जवाहर थी, ख़ाके-पा जिनकी
उन्हीं की आंखों में फिरते सलाइयां देखीं ।

लाया है मेरा शौक़ मुझे पर्दे से बाहर
मैं वर्ना वही ख़िलवतीये राज़े निहां हूं ।

बज़्म मे जो तिरा ज़हूर नहीं
शम-ए-रोशन के मुंह प नूर नहीं ।

आगे दरिया थे दीद-ए-तर मीर
अब जो देखो सराब हैं दोनों ।

ہر کوچے میں کھڑے رہ رہ کر ادھر اُدھر دیکھو ہو
ہائے خیال یہ کیا ہے تم کو، جانے بھی دو، اب آؤ تم

کیا زمانہ تھا کہ تھے، دلدار کے یاروں میں ہم
شہرۂ عالم تھے اُس کے نازبرداروں میں ہم

باغ گو سبز ہوا اب سرِ گلزار کہاں   دل کہاں، وقت کہاں، طاقتِ دیدار کہاں

جور کیا کیا، جفائیں کیا کیا ہیں   عاشقی میں بلائیں کیا کیا ہیں
ہم نے یہ مانا کہ واعظ ہے ملک   آدمی ہونا بہت مشکل ہے میاں
کی زیارت میرؔ کی ہم نے بھی کل   لاابالی سا ہے پر کامل ہے میاں
ہوئی عید سب نے پہنے طرب و خوشی کے جامے   نہ ہوا کہ ہم بھی بدلیں یہ لباسِ سوگواراں
تو پری شیشے سے نازک ہے نہ کر دعویٰ مہر
دل ہیں پتھر کے انھوں کے جو وفا کرتے ہیں
پھاڑا ہزار جا سے گریبانِ صبر میرؔ   کیا کہہ گئی نسیم سحر گل کے کان میں
چلا نہ اٹھ کے وہاں چپکے چپکے پھر تو میرؔ   ابھی تو اُس کی گلی سے پکار لایا ہوں
شہاں کہ کحلِ جواہر تھی خاکِ پا جن کی
انھیں کی آنکھوں میں پھرتی سلائیاں دیکھیں

لایا ہے میرا شوق مجھے پردے سے باہر   میں ورنہ وہی خلوتیِ رازِ نہاں ہوں
بزم میں جو ترا ظہور نہیں   شمعِ روشن کے منھ پہ نور نہیں
آگے دریا تھے دیدۂ تر میرؔ   اب جو دیکھو سراب ہیں دونوں
گرچہ عالم جلوہ گاہِ یار، یوں بھی تھا ولے
آنکھیں جو مُندیں عجب عالم نظر آیا ہمیں

गर्चा आलम जलवा गाहे यार, यूं भी था वले
आँखें जो मूंदीं, अजब आलम नज़र आया हमें।

अब के जुनूं में फ़ासला शायद न कुछ रहे   दामन के चाक और और ग़ेबां के चाक में

शेवा अपना बे पर्वाई, नौमीदी से ठहरा है
कुछ भी वह मग़रूर वके, तो मिन्नत हम सौ बार करें।

रहे फिरते दरिया में गिर्दाब से   वतन में भी हैं हम, सफ़र में भी हैं।

ख़ुदा-साज़ था आज़रे बुत-तराश   हम अपने तईं आदमी तो बनाएं

मुझको दिमाग़े वसफ़े गुलो यासमन नहीं   मैं जूं नसीम बादा फ़रोशे चमन नहीं

सब्र किया है बरसों हमने, रात से बेताक़त से हैं
और गुज़ारा कब तक होगा, कुछ अब हम वहशत से हैं।

क़ाफ़िला-क़ाफ़िला जाते हैं चले क्या-क्या लोग   मीर ग़ाफ़लत ज़दा हैरान से क्या बैठे हैं

यक ब्याबां है मिरी बेकसी-व तन्हाई   मिस्ले आवाज़े जरस, सबसे जुदा जाता हूं।

बेकली, बेख़ुदी, कुछ आज नहीं   एक मुद्दत से वह मिज़ाज नहीं।

मुस्तक़िल रोते ही रहिये तो बुझे आतिशे-दिल   एक दो आंसू तो और आग लगा जाते हैं।

रखती है मुझे ख़्वाहिशेदिल बस कि परीशां   दर पै न हो इस वक़्त ख़ुदा जाने कहां हूं
इक वहम नहीं बेश मेरी हसतिये मौहूम   इस पर भी तेरी ख़ातिरे नाज़ुक प गिरां हूं

जब दर्दे दिल का कहना उससे, मैं ठान्ता हूं   कहता है बिन सुने ही, मैं ख़ूब जान्ता हूं।

दालों प सर इक उमर से है दसते तलब का   जो है सो गदा किस कने जा हाथ पसारें

जहां अब ख़ारज़ारें हो गई हैं   यहीं आगे बहारें हो गई हैं।

اب کے جنوں میں فاصلہ شاید نہ کچھ رہے   دامن کے چاک اور گریباں کے چاک میں

شیوہ اپنا بے پروائی، نومیدی سے ٹھہرا ہے
کچھ بھی وہ مغرور رہے تو، منت ہم سو بار کریں

رہے پھرتے دریا میں گرداب سے   وطن میں بھی ہیں ہم سفر میں بھی ہیں

خدا ساز تھا آذرِ بت تراش   ہم اپنے تئیں آدمی تو بنائیں

مجھ کو دماغِ وصفِ گل و یاسمن نہیں   میں جوں نسیم بادِ فروشِ چمن نہیں

صبر کیا ہے برسوں ہم نے رات سے بے طاقت سے ہیں
اور گزارا کب تک ہوگا، کچھ اب ہم رخصت سے ہیں

قافلہ قافلہ جاتے ہیں چلے کیا کیا لوگ
میرؔ غفلت زدہ حیران سے کیا بیٹھے ہیں

یک بیاباں ہے میری بیکسی و تنہائی   مثلِ آوازِ جرس سب سے جدا جاتا ہوں

بے کلی، بے خودی، کچھ آج نہیں   ایک مدت سے وہ مزاج نہیں

متصل روتے ہی رہیئے تو بجھے آتشِ دل
ایک دو آنسو تو اور آگ لگا جاتے ہیں

رکھتی ہے مجھے خواہشِ دل بس کہ پریشاں   درپے نہ ہو اس وقت خدا جانے کہاں ہوں
اک وہم نہیں بیش مری ہستئ موہوم   اس پر بھی تری خاطرِ نازک پہ گراں ہوں

جب دردِ دل کا کہنا اس سے میں ٹھانتا ہوں   کہتا ہے بن کہے ہی میں خوب جانتا ہوں

بالیں پہ سر اک عمر سے ہے دستِ طلب کا   جو ہے سو گدا کس کنے جا ہاتھ پسارے

इस अहद को न जानिए अगला सा अहद-मीर
वह दौर अब नहीं, वह ज़मीं, आसमां नहीं

इश्क़ का घर है मीर से आबाद   ऐसे फिर ख़ानमां-ख़राब कहां।

चल हम नशीं बने तो एक आध बैत सुनये   कहते हैं बाद मुद्दत मीर अपने घर रहे हैं

हमने भी नज़्र की है कि फिरये चमन के गिर्द   या रब क़फ़स से छूटने तक बालो पर रहें

नहीं दैर अगर मीर, काबा तो है   हमारे कोई क्या ख़ुदा ही नहीं

जाने कि मेरे फ़ुर्सत कितनी, दो दम, दो पल, एक घड़ी
रंजिश क्यों, काहे को ख़ुशूनत, ग़ुस्सा क्या मैं आता हूं ?

कभू मिले है सो वह यूं कि फिर मिला न करें   करे है आप ही शिकायत कि हम गिला न करें

इन गुल-रुख़ों की क़ामत, लहके है यूं हवा में   जिस रंग से लचकती फूलों की डालियां हैं।

वज्हे बेगान्गी नहीं मालूम   तुम जहां के हो वां के हम भी हैं

जी ही जाये है मीर जो अपना दैर की जानिब क्या करिए
यूं तो मिज़ाज तरफ़ काबे के बहुतेरा हम लाते हैं।

हमको कहने के तईं बज़्म में जा देते हैं   बैठने पाते नहीं हम कि उठा देते हैं।

हम भी आलमे-फ़क़्र में हैं, पर हमसे जो मांगे कोई फ़क़ीर
एक सवाल में दो आलम दें, ऐसे दिल के तंग नहीं

हम फ़क़ीरों को कुछ आज़ार तुम्हीं देते हो   यूं तो इस फ़िर्क़े से सब लोग दुआ लेते हैं।

यूं नाकाम रहेंगे कब तक, जी में है इक काम करें
रुस्वा होकर मारे जावें, उसको भी बदनाम करें।

इश्क़ कोई हमदर्द कहीं मुद्दत में पैदा करता है
कोह रहें-गो बरसों नालां लेकिन अब फ़रहाद नहीं

جہاں اب خار زاریں ہوگئی ہیں   یہیں آگے بہاریں ہوگئی ہیں
اس دور کو نہ جانیے، اگلا سا عہد میرؔ
وہ دور اب نہیں، وہ زمیں آسماں نہیں

عشق کا گھر ہے میرؔ سے آباد   ایسے پھر خانماں خراب کہاں؟
چل ہم نشیں بنے تو اک آدھ بیت سنیئے   کہتے ہیں بعد مدّت میرؔ اپنے گھر رہے ہیں
ہم نے بھی نذر کی ہے کہ پھریے چمن کے گرد   یارب قفس سے چھوٹنے تک بال و پر رہیں
نہیں دیر اگر میرؔ کعبہ تو ہے   ہمارے کوئی کیا خدا ہی نہیں
آنے کی میرے فرصت کتنی، دو دم، دو پل، ایک گھڑی
رنجش کیوں، کاہے کو خشونت، غصہ کیا، میں جاتا ہوں

کبھو ملے ہے سو وہ یوں کہ پھر ملا نہ کریں   کرے ہے آپ ہی شکایت کہ ہم گلا نہ کریں
ان گل رخوں کی قامت لہکے ہے یوں ہوا میں   جس رنگ سے لچکتی پھولوں کی ڈالیاں ہیں
وجہ بیگانگی نہیں معلوم   تم جہاں کے ہو واں کے ہم بھی ہیں
جی ہی جانے ہے میرؔ جو اپنا دیر کی جانب کیجا کریئے
یوں تو مزاج طرف کعبے کے بہتیرا ہم لاتے ہیں
ہم کو کہنے کے تئیں بزم میں جا دیتے ہیں   بیٹھنے پاتے نہیں ہم کہ اٹھا دیتے ہیں
ہم بھی عالم فقر میں ہیں، پر ہم سے جو مانگے کوئی فقیر
ایک سوال میں دو عالم دیں، ایسے دل کے تنگ نہیں
ہم فقیروں کو کچھ آزار تمہیں دیتے ہو   یوں تو اس فرقے سے سب لوگ دعا لیتے ہیں
یوں ناکام رہیں گے کب تک، جی میں ہے اک کام کریں
رسوا ہو کر مارے جاویں، اس کو بھی بدنام کریں

عشق کوئی ہمدرد کہیں برسوں میں پیدا کرتا ہے   کوہ رہیں گے برسوں نالاں، لیکن اب فرہاد نہیں

मजलिसे-यार मे तो बार नहीं पाता हूं दरो-दीवार को अहवाल सुना जाता हूं।

दिल को जाना था गया, रह गया है अफ़साना रोज़ो-शब हम भी कहानी सी कहा करते हैं।

हर बात पर ख़ुशूनत, तर्ज़े जफ़ा तो देखो हर लम्हा बेवफ़ाई, उसकी अदा तो देखो।
तन्ज़ें अबस करो हो, ग़श रहने पर हमारे दो-चार दिन किसू से दिल को लगा तो देखो

क़त्ल किए पर ग़ुस्सा क्या है, लाश मिरी उठवाने दो
जान से हम तो जाते रहे हैं, तुम भी आओ जाने दो।
करते हो तुम नीची नज़रें, यह भी कोई मुरव्वत है
बरसों से फिरते हैं जुदा हम, आंख से आंख मिलाने दो।

हमसे तो तुमको ज़िद सी पड़ी है, ख़्वाहमख़्वाह रुलाते हो
आंख उठाकर जब देखें हैं, औरों में हंसते जाते हो।

उसकी तर्ज़े-निगाह मत पूछो जी ही जाने है, आह मत पूछो।

होगा किसू दीवार के साए में पड़ा मीर क्या काम मुहब्बत से उस आराम-तलब को।

दारे दुनिया में रहो, ग़म-ज़दा या शाद रहो ऐसा कुछ करके चलो यां कि बहुत याद रहो

नामुरादाना ज़ीस्त करता था मीर का तौर याद है हमको

कहें तो हैं कि अबस मीर ने दिया जी को ख़ुदा ही जाने कि क्या उसके जी में आई हो।

यूं अरक़, जलवा-गर है, उस मुंह पर जिस तरह ओस फूल पर देखो

हंसता ही मैं फिरूं जो मिरा कुछ हो इख़्तियार पर क्या करूं मैं, दीद-ए-बेइख़्तियार को।

अज़ ख़ेश रफ़्ता हरदम रहते हैं हम जो उस बिन
कहते हैं लोग अक्सर, इस वक़्त तुम कहां हो।

ऐसे हम-पेशा कहां होते हैं, ए ग़म ज़दगां मर्गे-मजनूं प कुढ़ो, मातमे फ़रहाद करो।

مجلس یار میں تو بار نہیں پاتا ہوں　　در و دیوار کو احوال سُنا جاتا ہوں
دل کو جاتا تھا گیا، رہ گیا ہے افسانہ　　روز و شب ہم بھی کہانی سی کہا کرتے ہیں
ہر بات پرخشونت، طرزِ جفا تو دیکھو　　ہر لحظہ بے ادائی، اُس کی ادا تو دیکھو
طنزیں عبث کرو ہو، غش رہنے پر ہمارے　　دو چار دن کسو سے، دل کو لگا تو دیکھو

قتل کیے پرغصّہ کیا ہے، لاش مری اٹھوانے دو
جان سے ہم تو جاتے رہے ہیں، تم بھی آؤ، جانے دو

کرتے ہو تم نیچی نظریں، یہ بھی کوئی مروّت ہے
برسوں سے پھرتے ہیں جدا ہم، آنکھ سے آنکھ ملانے دو

ہم سے تو تم کو ضدّ سی پڑی ہے، خواہ مخواہ رلاتے ہو
آنکھ اٹھا کر جب دیکھیں ہیں، اوروں میں ہنستے جاتے ہو

اُس کی طرزِ نگاہ مت پوچھو　　جی ہی جانے ہے آہ مت پوچھو
ہوگا کسی دیوار کے سائے میں پڑا میرؔ　　کیا کام محبّت سے اس آرام طلب کو
بارے دنیا میں رہو غم زدہ یا شاد رہو　　ایسا کچھ کرکے چلو یاں کہ بہت یاد رہو
نامرادانہ زیست کرتا تھا　　میرؔ کا طور یاد ہے ہم کو
کہیں تو ہیں جو عبث میرؔ نے دیا جی کو　　خدا ہی جانے کہ کیا اس کے جی میں آئی ہو
یوں عرق، جلوہ گر ہے اُس منہ پر　　جس طرح اوس پھول پر دیکھو
ہنستا ہی میں پھروں جو مرا کچھ ہو اختیار　　پر کیا کروں میں، دیدۂ بے اختیار کو

از خویش رفتہ ہر دم رہتے ہیں ہم جو اُس بن
کہتے ہیں لوگ اکثر اُس وقت تم کہاں ہو؟

ایسے ہم پیشہ کہاں ہوتے ہیں اے غم زدگاں　　مرگِ مجنوںؔ پہ کڑھوں، ماتمِ فرہادؔ کروں

मक़सूद दर्दे-दिल है, न इस्लाम है न कुफ़्र   फिर हर गले में सुब्हो-ज़ुन्नार क्यूँ न हो।

मुल्तफ़ित होता नहीं है, गाह तू   किस क़दर मग़रूर है अल्लाह तू।

अब असीरी से बचें तो देखेंगे गुलशन कभू   था हमारा भी चमन में ए सबा मस्कन कभू

रहते हो तुम आँखों में, फिरते हो तुम्ही दिल में   मुद्दत से अगरचे याँ, आते हो न जाते हो।

हो कोई बादशाह, कोई याँ अमीर हो   अपनी बला से, बैठ रहे जब फ़क़ीर हो।

गर्दिश में वे मस्त आँखें हैं, जैसे भरे पैमाने दो
दाँत सुना है चमकें हैं उसके, मोती के से दाने दो।

ग़ैर की हमराही की ग़ैरत जी मारे है आशिक़ का
पास कभू जो आते हो तो साथ इक तोहफ़ा लाते हो।

मुझे इश्क़ उस पास यूँ ले गया   कोई जैसे लावे गुन्हगार को।

अगले सब चाहते थे हम से वफ़ा-दारों को   कुछ तुम्हीं प्यार नहीं करते जफ़ा-मारों को।

ज़ोफ़े-पीरी में ज़िन्दगानी भी   दोश पर अपने बार सा है कुछ।

आग थे, इब्तदाये इश्क़ में हम   अब जो हैं ख़ाक, इन्तहा है यह।

वस्ल उसका ख़ुदा नसीब करे   मीर दिल चाहता है क्या-क्या कुछ।

रात मजलिस में तेरी, हम भी खड़े थे चुप्के   जैसे तस्वीर लगा दे कोई, दीवार के साथ।

बाग़बाँ बेरहम गुल बेदीद मौसिम बेवफ़ा   आशियाँ इस बाग़ में बुलबुल ने बाँधा क्या समझ

मीर काबे से क़स्दे-दैर किया   आओ प्यारे, भला, ख़ुदा हमराह।

अब ख़ुशामद उन्हों की आठ पहर करते हैं
गुफ़्तगू मीर को जिन लोगों से थी, आर के साथ।

مقصود دردِ دل ہے نہ اسلام ہے' نہ کفر   پھر ہر گلے میں سبحہ و زنار کیوں نہ ہو
ملتفت ہوتا نہیں ہے گاہ تو   کس قدر مغرور ہے اللہ تو
اب اسیری سے بچیں تو دیکھیں گے گلشن کبھو   تھا ہمارا بھی چمن میں اے صبا مسکن کبھو
رہتے ہو تم آنکھوں میں' پھرتے ہو تمھیں دل میں   مدت سے اگرچہ یاں' آتے ہو نہ جاتے ہو
ہو کوئی بادشاہ' کوئی یاں امیر ہو   اپنی بلا سے بیٹھ رہے جب فقیر ہو
گردش میں وے مست آنکھیں ہیں' جیسے بھرے پیمانے دو
دانت سُنا ہے جھمکیں ہیں اس کے' موتی کے سے دانے دو

غیر کی ہمراہی کی غیرت' جی مارے ہے عاشق کا
پاس کبھو جو آتے ہو تو ساتھ اک تحفہ لاتے ہو

مجھے عشق اس پاس یوں لے گیا   کوئی جیسے لاوے گنہگار کو
اگلے سب چاہتے تھے ہم سے وفاداروں کو   کچھ تمہیں پیار نہیں کرتے جفا ماروں کو
ضعفِ پیری میں زندگانی بھی   دوش پر اپنے بار سا ہے کچھ
آگے تھے ابتدائے عشق میں ہم   اب جو ہیں خاک' انتہا ہے یہ
وصل اس کا خدا نصیب کرے   میرؔ دل چاہتا ہے کیا کیا کچھ
رات مجلس میں تیری' ہم بھی کھڑے تھے چُپ کے
جیسے تصویر لگا دے کوئی دیوار کے ساتھ

باغباں بے رحم' گل بے دید' موسم بے وفا
آشیاں اس باغ میں بلبل نے باندھا کیا سمجھ
میرؔ کعبے سے قصدِ دیر کیا   جاؤ پیارے بھلا خدا ہمراہ
اب خوشامد انھوں کی آٹھ پہر کرتے ہیں
گفتگو میرؔ کو جن لوگوں سے تھی عار کے ساتھ

देख उसको मुझको, यारों ने हैरान हो, कहा
किस ढब से लग गया है यह मीहर, गदा के हाथ।

ख़ुश हैं दीवानगी-ए मीर से सब क्या जुनूं कर गया, शऊर से वह।

वे दिन गए कि आँखें दरिया सी बहतियाँ थीं सूखा पड़ा है, अब तो मुद्दत से ये दुआबा।

हस्ती अपनी हुबाब की सी है यह नुमाइश सराब की सी है।
नाज़ुकी उसके लब की क्या कहिए पंखड़ी इक गुलाब की सी है।
'मीर' इन नीम-बाज़ आंखों में सारी मस्ती शराब की सी है।

गुफ़्तगू रेख़्ते में हमसे न कर यह हमारी ज़बान है प्यारे।
'मीर' अमदन भी कोई मरता है जान है तो जहान है प्यारे।

मेरे तगइरे हाल पर मत जा इत्तेफ़ाक़ात हैं ज़माने के

फ़क़ीराना आए, सदा कर चले मियाँ ख़ुश रहो, हम दुआ कर चले।
कहें क्या, जो पूछे कोई हमसे 'मीर' जहाँ में तुम आए, क्या कर चले।

अगरचे अब तो ख़फ़ा हो, लेकिन मुए गए पर कभू हमारे
जो याद हमको करोगे प्यारे, तो हाथ अपने मला करोगे।
ग़मे मुहब्बत से मीर साहब बतंग हूँ मैं फ़क़ीर हो तुम
जो वक़्त होगा कभू मुसाइद तो मेरे हक़ में दुआ करोगे

दीदनी है शिकस्तगी दिल की क्या इमारत ग़मों ने ढाई है।

नहीं है चाह भली इतनी भी दुआ कर मीर कि अब जो देखूं उसे मैं बहुत न प्यार आवे

दिल किस क़दर शिकस्ता हुआ था कि 'मीर' रात आई जो बात लब प, सो फ़रयाद हो गई

कुछ मौजे हवा पेचाँ, ए 'मीर' नज़र आई शायद कि बहार आई, ज़नजीर नज़र आई।

देखे दयारे-हुस्न के मैं कारवाँ बहुत लेकिन किसू के पास मताए वफ़ा न थी।

دیکھ اس کو مجھ کو، یاروں نے حیران ہو کہا
کس ڈھب سے لگ گیا ہے یہ گوہر گدا کے ہاتھ

خوش ہیں دیوانگیٔ میرؔ سے سب — کیا جنوں کر گیا شعور سے وہ
وے دن گئے کہ آنکھیں دریا سی بہتیاں تھیں — سوکھا پڑا ہے اب تو مدت سے یہ دوآبہ
ہستی اپنی حباب کی سی ہے — یہ نمائش سراب کی سی ہے
نازکی اس کے لب کی کیا کہیے — پنکھڑی اک گلاب کی سی ہے
میرؔ ان نیم باز آنکھوں میں — ساری مستی شراب کی سی ہے

گفتگو ریختے میں ہم سے نہ کر — یہ ہماری زبان ہے پیارے
میرؔ عمداً بھی کوئی مرتا ہے — جان ہے تو جہان ہے پیارے

میرے تغیرِ حال پر مت جا — اتفاقات ہیں زمانے کے
فقیرانہ آئے صدا کر چلے — میاں خوش رہو ہم دعا کر چلے
کہیں کیا جو پوچھے کوئی ہم سے میرؔ — جہاں میں تم آئے تھے کیا کر چلے

اگرچہ اب تو خفا ہو، لیکن موئے گئے پر کبھو ہمارے
جو یاد ہم کو کرو گے پیارے، تو ہاتھ اپنے مَلا کرو گے
غمِ محبت سے میرؔ صاحب بتنگ ہوں میں فقیر ہو تم
جو وقت ہوگا کبھو مساعد تو میرے حق میں دعا کرو گے

دیدنی ہے شکستگی دل کی — کیا عمارت غموں نے ڈھائی ہے
نہیں ہے چاہ بھلی اتنی بھی دعا کر میرؔ — کہ اب جو دیکھوں اسے میں بہت نہ پیار آئے
دل کس قدر شکستہ ہوا تھا کہ رات میرؔ — آئی جو بات لب پہ، سو فریاد ہو گئی
کچھ موج ہوا پیچاں اے میرؔ نظر آئی — شاید کہ بہار آئی زنجیر نظر آئی

हाल बद, गुफ़्तनी नहीं मेरा तुमने पूछा तो मेहरबानी की ।

तेरे फ़िराक़ में जैसे ख़याल मुफ़लिस का गई है फ़िक्रे परीशां कहां-कहां मेरी

देख तो, दिल कि जां से उठता है यह धुआं सा कहां से उठता है ।

कबसे नज़र लगी थी दरवाज़ए हरम से पर्दा उठा तो लड़ियां आंखें हमारी हम से

सरापा आरज़ू होने ने बंदा कर दिया हमको वगरना हम ख़ुदा थे गरदिले बेमुद्दआ होते

इश्क़ में वस्लो जुदाई से नहीं कुछ गुफ़्तगू क़ुर्ब-व-बोद इस जा बराबर है मुहब्बत चाहिए

पासे नामूसे इश्क़ था वरना कितने आंसू, पलक तक आये थे ।

जब नाम तेरा लीजे, तब चश्म भर आवे इस ज़िन्दगी करने को, कहां से जिगर आवे ।

हम हुए, तुम हुए, कि 'मीर' हुए उसकी ज़ुल्फ़ों के सब असीर हुए ।

कैसे हैं वे, कि जीते हैं सद् साल, हम तो 'मीर' इस चार दिन की ज़ीस्त में बेज़ार हो गये ।

प्यार करने का जो ख़ूबां, हम प, रखते हैं गुनाह
उनसे भी तो पूछिए, तुम इतने क्यूं प्यारे हुए ।

बहुत सई करिये तो मर रहिए 'मीर' बस अपना तो, इतना ही मक़दूर है ।

ने बुतकदा है मन्ज़िले मक़सूद, न काबा जो कोई तलाशी हो तिरा, आह किधर जाए ।

जुनूनी, ख़ब्ती, दीवाना, सिड़ी, कोई इश्क़ को समझे
फ़लातूं से नहीं यां बहस, वह आक़िल है, क्या जाने ।

रोज़ मिलने प नहीं, निसबते-इश्क़ी मौक़ूफ़ उम्र भर एक मुलाक़ात चली जाती है ।

पहुंचा तो होगा सम्ए मुबारक में हाले 'मीर' इस पर भी जी में आए, तो दिल को लगाइये

دیکھے دیارِ حُسن کے میں کارواں بہت   لیکن کسو کے پاس متاعِ وفا نہ تھی
حالِ بد گفتنی نہیں میرا   تم نے پوچھا تو مہربانی کی
ترے فراق میں جیسے خیالِ مفلس کا   گئی ہے فکرِ پریشاں کہاں کہاں میری
دیکھ تو دل کہ جاں سے اٹھتا ہے   یہ دھواں سا کہاں سے اٹھتا ہے
کب سے نظر لگی تھی دروازۂ حرم سے   پردہ اٹھا تو لڑیاں آنکھیں ہماری ہم سے
سراپا آرزو ہونے نے بندہ کر دیا ہم کو
وگرنہ ہم خدا تھے گر دلِ بے مدعا ہوتا

عشق میں وصل و جدائی سے نہیں کچھ گفتگو   قرب و بعد اس جا برابر ہے محبت چاہیئے
پاسِ ناموسِ عشق تھا ورنہ   کتنے آنسو پلک تک آئے تھے

جب نام ترا لیجے تب چشم بھر آوے
اس زندگی کرنے کو کہاں سے جگر آوے

ہم ہوئے، تم ہوئے، کہ میرؔ ہوئے   اس کی زلفوں کے سب اسیر ہوئے
کیسے ہیں وے، کہ جیتے ہیں صد سال ہم تو میرؔ   اس چار دن کی زیست میں بیزار ہو گئے
پیار کرنے کا جو خوباں ہم پہ رکھتے ہیں گناہ   ان سے بھی تو پوچھیے، تم اتنے کیوں پیارے ہوئے
بہت سعی کریئے تو مر رہیئے میرؔ   بس اپنا تو اتنا ہی مقدور ہے
نے بت کدہ ہے منزلِ مقصود نہ کعبہ   جو کوئی تلاشی ہو ترا، آہ کدھر جاوے
جنون، خبطی، دیوانہ، سڑی، کوئی عشق کو سمجھے
فلاطوں سے نہیں یاں بحث، وہ عاقل ہے کیا جانے

روز ملنے پہ نہیں نسبتِ عشقی موقوف   عمر بھر ایک ملاقات چلی جاتی ہے
پہنچا تو ہوگا سمعِ مبارک میں حالِ میرؔ   اس پر کبھی جی میں آئے تو دل کو لگایئے

उम्र भर हम रहे शराबी से दिले पुरखूं की इक गुलाबी से ।
खिलना कम-कम कली ने सीखा है उसकी आँखों की नीम ख़्वाबी से ।

जुनूं का अबस मेरे मज़कूर है जवानी, दिवानी है, मशहूर है ।

मर्ग क्या मन्ज़िले-मुराद है 'मीर' यह भी इक राह का तवक़्क़ुफ़ है ।

चलते हो तो चमन को चलिए, कहते हैं कि बहारां है
पात हरे हैं, फूल खिले हैं, कम-कम बादो-बारां है ।

आगे किसू के क्या करें दस्तेतमा दराज़ वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे

मीर उठ बुतकदे से काबे गया क्या करे जो ख़ुदा ख़राब करे

पत्ता-पत्ता, बूटा-बूटा हाल हमारा जाने है
जाने न जाने गुल ही न जाने बाग़ तो सारा जाने है ।

आलम-आलम, इश्क़ो-जुनूं है, दुनिया-दुनिया तोहमत है
दरिया-दरिया रोता हूं मैं, सहरा-सहरा वहशत है

दिल की लाग बुरी होती है, रह न सके टुक जाए भी
आए बैठे, उठ भी गए, बेताब हुए फिर आए भी ।

मुहेय्या जिस कने असबाबे मुल्को और माली थे
वह स्कन्दर गया यां से, तो दोनों हाथ ख़ाली थे ।

रही न गुफ़्ता मेरे दिल में दास्तां मेरी न इस दयार में समझा कोई ज़बां मेरी

इलाही कैसे होते हैं जिन्हें है बंदगी ख़्वाहिश हमें तो शर्म दामन गरि होती है ख़ुदा होते

शर्ते-सलीक़ा है हर इक अम्र में ऐब भी करने को हुनर चाहिए ।

क्या जाने वह मुर्ग़ाने गिरिफ़्तारे चमन को जिन तक कि बसद नाज़ नसीमे सहर आवे

ए-हुब्बे जाह वालो जो आज ताजवर है कल उसको देखियो तुम, ने ताज है न सर है

عمر بھر ہم رہے شرابی سے
دلِ پُرخوں کی اک گلابی سے

کِھلنا کم کم کلی نے سیکھا ہے
اس کی آنکھوں کی نیم خوابی سے

جنوں کا عبث میرے مذکور ہے
جوانی، دِوانی ہے، مشہور ہے

مرگ کیا منزلِ مراد ہے میرؔ
یہ بھی اک راہ کا توقف ہے

چلتے ہو تو چمن کو چلیئے، کہتے ہیں بہاراں ہے
پات ہرے ہیں، پھول کھلے ہیں، کم کم بادوباراں ہے

آگے کسو کے کیا کریں دستِ طمع دراز
وہ ہاتھ سو گیا ہے سرہانے دھرے دھرے

میرؔ اٹھ بتکدے سے کعبے گیا
کیا کرے جو خدا خراب کرے

پتا پتا، بوٹا بوٹا، حال ہمارا جانے ہے
جانے نہ جانے گل ہی نہ جانے باغ تو سارا جانے ہے

عالم عالم عشق و جنوں ہے، دنیا دنیا تہمت ہے
دریا دریا روتا ہوں میں، صحرا صحرا وحشت ہے

دل کی لاگ بری ہوتی ہے، رہ نہ سکے ٹک جائے بھی
آئے بیٹھے، اٹھ بھی گئے، بیتاب ہوئے پھر آئے بھی

مہیا جس کنے اسبابِ ملکی اور مالی تھے
وہ اسکندر گیا یاں سے، تو دونوں ہاتھ خالی تھے

رہی نہ گفتہ مرے دل میں داستاں میری
نہ اس دیار میں سمجھا کوئی زباں میری

الٰہی کیسے ہوتے ہیں جنھیں ہے بندگی خواہش
ہمیں تو شرم دامن گیر ہوتی ہے خدا ہوتے

شرط سلیقہ ہے ہر اک امر میں
عیب بھی کرنے کو ہنر چاہیئے

کیا جانے وہ مرغانِ گرفتار چمن کو
جن تک کہ بصد ناز نسیمِ سحر آوے

اے حبِ جاہ والو جو آج تاج ور ہے
کل اس کو دیکھیو تم نے تاج ہے نہ سر ہے

तमन्नाये दिल के लिए जान दी   सलीक़ा हमारा तो मशहूर है।

जिन-जिन को था यह इश्क़ का आज़ार, मर गये   अक्सर हमारे साथ के बीमार मर गये।

जो सोचे टुक तो वह मतलूब हम ही निकले 'मीर'
ख़राब फिरते थे जिसकी तलब में मुद्दत से।

तुर्बते-'मीर' पर हैं अहले सुख़न   हर तरफ़ हर्फ़ है, हिकायत है।
तू भी तक़रीबे-फ़ातेहा से चल   ब ख़ुदा वाजिबुज़-ज़ियारत है।

मसायब और थे, पर दिल का जाना   अजब इक सानेहा सा हो गया है।
सिरहाने 'मीर' के अहिस्ता बोलो   अभी टुक रोते-रोते सो गया है।

जी ढहा जाए है, सहर से आह   रात गुज़रेगी किस ख़राबी से।

सरगुज़श्त अपनी किस अन्दोह से शब कहता था   सो गये, तुम, न सुनी आह कहानी उसकी

हमेशा चश्म है नमनाक, हाथ दिल पर है   ख़ुदा किसू को न हम सा भी दर्द-मन्द करे।

मक़सूद के ख़याल में बहुतों ने छानी ख़ाक   आलम तमाम वहम है, यां हाथ क्या लगे।

तेरी चाल टेढ़ी, तेरी बात अनोखी   तुझे 'मीर' समझा है यां, कम किसू ने।

जो कुफ़्र जानते थे इश्क़े बुतां को वह ही   मस्जिद के आगे, आख़िर क़शक़ा लगा के बैठे।

गर हवा इस बाग़ की यह है, तो ए बुलबुल न भूल
कोई दिन में देखियो, वां वे गए, यां हम गए।

वे दिन गए कि पहरों करते न ज़िक्र उसका   अब नामे यार अपने लब पर, घड़ी-घड़ी है।

हम तौरे- इश्क़ से तो वाक़िफ़ नहीं है लेकिन   सीने में जैसे कोई दिल को मला करे है।

तुम नहीं फ़ितना-साज़, सच साहब   शहर, पुर-शोर इस ग़ुलाम से है।

تمنائے دل کے لیے جان دی　　سلیقہ ہمارا تو مشہور ہے
جن جن کو تھا یہ عشق کا آزار مر گئے　　اکثر ہمارے ساتھ کے بیمار مر گئے
جو سوچے ٹک تو وہ مطلوب ہم ہی نکلے میرؔ
خراب پھرتے تھے جس کی طلب میں مدت سے

تربتِ میرؔ پر ہیں اہلِ سخن　　ہر طرف حرف ہے، حکایت ہے
تو بھی تقریبِ فاتحہ سے چل　　بہ خدا واجب الزیارت ہے

مصائب اور تھے، پر دل کا جانا　　عجب اک سانحہ سا ہو گیا ہے
سرہانے میرؔ کے آہستہ بولو　　ابھی ٹک روتے روتے سو گیا ہے
جی ڈہا جائے ہے سحر سے آہ　　رات گزرے گی کس خرابی سے
سرگزشت اپنی کس اندوہ سے شب کہتا تھا
سو گئے تم، نہ سنی آہ کہانی اس کی

ہمیشہ چشم ہے نمناک، ہاتھ دل پر ہے　　خدا کسو کو نہ ہم سا بھی دردمند کرے
مقصود کے خیال میں بہتوں نے چھانی خاک　　عالم تمام وہم ہے، یاں ہاتھ کیا لگے
تری چال ٹیڑھی، تری بات انوکھی　　تجھے میرؔ سمجھا ہے یاں کم کسو نے
جو کفر جانتے تھے عشقِ بتاں کو وہ ہی　　مسجد کے آگے آخر قشقہ لگا کے بیٹھے
گر ہوا اس باغ کی یہ ہے تو اے بلبل نہ بھول
کوئی دن میں دیکھیو، واں وے گئے، یاں ہم گئے

وے دن گئے کہ پہروں کرتے نہ ذکر اس کا　　اب نامِ یار اپنے لب پر گھڑی گھڑی ہے
ہم طورِ عشق سے تو واقف نہیں ہیں لیکن　　سینے میں جیسے کوئی دل کو مَلا کرے ہے
تم نہیں فتنہ ساز، سچ صاحب　　شہر پُرشور اس غلام سے ہے

बरसों लगी रही हैं जब मेहों-मह की आँखें तब कोई हम सा, साहब-साहब नज़र बने है।

तसबीहें टूटीं, ख़िरक़े, मुसल्ले, फटे जले क्या जाने ख़ानक़ाह में क्या 'मीर' कह गए।

सर किसू से फ़िरो नहीं आता हैफ़ बंदे हुए ख़ुदा न हुए।

चले हम अगर तुमको इकराह है फ़क़ीरों की अल्लाह-अल्लाह है।

बज़ममे पूछा भी तो अन्जान हो मीर इन लोगों में किसका नाम है।

वायज़े-नाक़स की बातों पर कोई जाता है 'मीर'
आओ मयख़ाने चलो, तुम किसके कहने पर गए।

कोहकन-ो-मजनूं, यह दोनों दश्तो कोह में सर मारें
शौक़ नहीं मिलने का हमको 'मीर' ऐसे आवारों से।

निसबत क्या उन लोगों से हमको, शहरी हैं दीवाने हम
है फ़रहाद इक आदमे-कोही, मजनूं इक सहराई है।

इश्क़ छुपाकर पछताए हम, सूख गए, रंजूर हुए
यानी आँसू पी-पी गये, सो ज़ख़्मे जिगर नासूर हुए।

अगर मस्जिद से आऊँ 'मीर' तो भी लोग कहते हैं
कि मयख़ाने से देखो फिर वह शाहिद-बाज़ आता है।

आशिक़ अपना जान लिया है उनने शायद 'मीर' हमें
देख, भरी मजलिस में अपनी, हम ही से शरमाता है।

अव्वल तो आते ही नहीं हो,और कभी जो आते हो
नीची आँखें किए फिरते हो मजलिस में शरमाए से।

फिरते हैं 'मीर' ख़्वार कोई पूछता नहीं इस आशिक़ी में इज़्ज़ते सादात भी गई।

आने के वक़्त तुम तो कहीं के कहीं रहे
अब आए तुम तो फ़ायदा, हम ही नहीं रहे।

برسوں لگی رہی ہیں جب مہر و مہ کی آنکھیں　　تب کوئی ہم سا صاحب، صاحب نظر بنے ہے
تسبیحیں ٹوٹیں، خرقے، مصلے، پھٹے چلے　　کیا جانیں خانقاہ میں کیا میرؔ کہہ گئے
سر کسو سے فرو نہیں آتا　　حیف بندے ہوئے خدا نہ ہوئے
چلے ہم اگر تم کو اکراہ ہے　　فقیروں کی اللہ، اللہ ہے
بزم میں پوچھا کبھی تو انجان ہو　　میرؔ ان لوگوں میں کس کا نام ہے
واعظ ناکس کی باتوں پر کوئی جاتا ہے میرؔ
آؤ میخانے چلو، تم کس کے کہنے پر گئے

کوہکنؔ و مجنوںؔ، یہ دونوں دشت و کوہ میں سر ماریں
شوق نہیں ملنے کا ہم کو، میرؔ ایسے آواروں سے

نسبت کیا ان لوگوں سے ہم کو، شہری ہیں دیوانے ہم
ہے فرہاد اک آدم کوہی، مجنوںؔ اک صحرائی ہے

عشق چھپا کر پچھتائے ہم، سوکھ گئے، رنجور ہوئے　　یعنی آنسو پی پی گئے، سو زخم جگر ناسور ہوئے
اگر مسجد سے آؤں میرؔ تو بھی لوگ کہتے ہیں　　کہ میخانے سے دیکھو پھر وہ شاہد باز آتا ہے
عاشق اپنا جان لیا ہے ان نے شاید میرؔ ہمیں
دیکھ بھری مجلس میں اپنی، ہم ہی سے شرماتا ہے

اول تو آتے ہی نہیں ہو، اور کبھی جو آتے ہو
نیچی آنکھیں کیے پھرتے ہو مجلس میں شرمائے سے
پھرتے ہیں میرؔ خوار کوئی پوچھتا نہیں　　اس عاشقی میں عزت سادات بھی گئی
آنے کے وقت تم تو کہیں کے کہیں رہے
اب آئے تم تو فائدہ، ہم ہی نہیں رہے

वो दिन गए कि आठ पहर उसके पास थे
अब आ गए तो दूर से कुछ ग़म सुना गए।

— —

सिवाए संगदिली और कुछ हुनर भी है   बुतां दिलों में तुम्हारे ख़ुदा का डर भी है।

— —

वस्ल को जब से गई है छोड़ दिलदारी मुझे
हिज्र की करनी पड़ी है नाज़ बरदारी मुझे।

— —

وے دن گئے کہ آٹھ پہر اس کے پاس تھے
اب آ گئے تو دور سے کچھ غم سنا گئے

سوائے سنگ دلی اور کچھ ہنر بھی ہے، بتاں دلوں میں تمہارے خدا کا ڈر بھی ہے

جاں کی جب سے گئی ہے چھوڑ دلداری مجھے
ہجر کی کرنی پڑی ہے ناز برداری مجھے

जला जी बहुत क़िस्सए 'मीर' सुन,   बला सोज़ था इस कहानी के साथ

मीर की कहानी मीर की ज़बानी

मीर के हालाते जिन्दगी दूसरों के क़लम से बार-बार सामने आ चुके हैं। मैंने मीर की कहानी ख़ुद मीर की ज़बानी सुनाने की कोशिश की है। इस प्रकार के शेर 'मीर' के दीवानों में बिखरे हुए हैं। उनको एकत्र करके विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत लिख दिया गया है। शीर्षकों में कोई उचित क्रम क़ायम नहीं किया जा सकता है। प्रत्येक शीर्षक के अन्तर्गत जिन शेरों को स्थान दिया गया है उनमें पूर्ण सम्बन्ध नहीं है। मतभेद भी है और विरोध भी है, जो कविता की परिवर्तन-शीलता और मनोवैज्ञानिक दशाओं का परिणाम है। इन शेरों में केवल लेख की आत्मा पर दृष्टि रक्खी गई है। काव्य सौन्दर्य का ख़्याल नहीं किया गया है।

मीर की सयादत

मुनकिर नहीं है कोई सयादत का मीर की   ज़ाते मुक़द्दस उनकी यही ज़ात हो तो हो
क्या ख़ानदां का अपने तुम से कहूँ तक़द्दुस   रूहुलक़ुदुस एक अदना दरबान है हमारा
ऐ सैर मीर तुम को गर जूतियां न मारे   सैय्यद न होवे, फिर तो कोई चमार होवे
कब इक़तिदा हो मुझसे किसूको सेवाय मीर   बन्दा हूँ दिल से मैं उसी सैय्यद इमाम का
सैय्यद हैं मीर साहब व दरवेश ओ दरदमन्द   सर रखिए उनके पाओं पे जाए अदब है ये
ग़ैरत से तंग आए ग़ैरों से लड़ मरेंगे   आगे भी मीर सैय्यद करते गये हैं साका
दर पर से तेरे अब के जाऊँगा तो जाऊँगा   यां फिर अगर आऊँगा सैय्यद न कहाऊँगा
फिरते हैं मीर ख़्वार कोई पूछता नहीं   इस आशिक़ी में इज़्ज़ते सादात भी गई
लाला-ओ-गुलही के मसरूफ़ रहे हो शबो-रोज़   तुम अगर मीरजी सैय्यद हो गुलिस्ताने के

मज़हबी मोतक़ेदात

हम्द

बिल रफ़अए जमाल है उस ज़ुलजलाल का   मुस्तजम-ए-जमो-ए-सिफ़ाते कमाल का
इदराक को है ज़ातेमुक़द्दस में दख़्ल क्या   ऊधर नहीं गुज़ार गुमान - ओ - ख़याल का
जलवे हैं उसके शानें है उसकी   क्या रोज़, क्या ख़ुर, क्या रात, क्या माह
ज़ाहिर कि बातिन अव्वल कि आख़िर   अल्लाह अल्लाह अल्लाह अल्लाह
हम मज़हबों में सिर्फ़ करम से है गुफ़्तगू   मज़कूर - ओ - ज़िक्र यां नहीं सौमो सलात का
दिया दिखाई मुझे तो उसी का जलवा मीर   पड़ी जहान में जाकर नज़र जहां मेरी

नात

है हर्फ़े ख़ामा दिल ज़दा हुस्ने क़ुबूल का   यानी ख़याल सर में है नाते रसूल का
हक़ को तलब है कुछ तो मुहम्मद परस्त हो   ऐसा वसीला है भी ख़ुदा के हुसूल का ?

حلاجی ہست قصۂ میرؔ سخن   بلا سوز تھا اس کہانی کے ساتھ

میرؔ کی کہانی میرؔ کی زبانی

میرؔ کے حالات زندگی دوسروں کے قلم سے بار بار سامنے آچکے ہیں۔ میں نے میرؔ کی کہانی خود میرؔ کی زبانی سنانے کی کوشش کی ہے۔ اس نوعیت کے اشعار میرؔ کے دیوانوں میں بکھرے ہوئے ہیں۔ ان کو یکجا کرکے مختلف عنوانوں کے تحت میں درج کر دیا ہے عنوانوں میں کوئی مناسب ترتیب تاہم نہیں کی جا سکی ہے۔ ہر عنوان کے تحت میں جن اشعار کو جگہ دی گئی ہے، ان میں کامل مطابقت نہیں ہے، اختلاف بھی ہے، تضاد بھی ہے، جو شاعر کی تغیر پذیر نفسیاتی کیفیتوں کا نتیجہ ہے۔ ان اشعار میں صرف نفس مضمون پر نظر رکھی گئی ہے، شاعرانہ محاسن کا خیال نہیں کیا گیا ہے

میرؔ کی سیادت

منکر نہیں ہے کوئی سیادت کا میرؔ کی   ذات مقدس ان کی یہی ذات ہو تو ہو
کیا خانداں کا اپنے تجھ سے کہیں تقدس   روح القدس اک ادنیٰ دربان ہے ہمارا
اے غیر میرؔ تجھ کو گر جوتیاں نہ مارے   سید نہ ہووے، پھر تو کوئی چمار ہووے
کب اقتدا ہو مجھ سے کسو کی سوائے میرؔ   بندہ ہوں دل سے میں اسی سید امام کا
سید ہیں میر صاحب درویش دردمند   سر بیچے ان کے پاؤں پہ جائے ادب ہیں یے
غیرت سے تنگ آئے غیروں سے لڑ مریں گے   آگے بھی میر سید کرتے گئے ہیں ساکا
در پر سے تیرے اب کے جاؤں گا تو جاؤں گا   یاں پھر اگر آؤں گا سید نہ کہاؤں گا
پھرتے ہیں میرؔ خوار کوئی پوچھتا نہیں   اس عاشقی میں عزت سادات بھی گئی
لالہ و گل ہی کے مصروف رہے ہو شب و روز   تم مگر میرؔ جی سید ہو گلستانے کے

مذہبی معتقدات

حمد

دل رفتۂ جمال ہے اس ذو الجلال کا   مستجمع جمیع صفات کمال کا
ادراک کو ہے ذات مقدس میں دخل کیا   ادھر نہیں گزار گمان و خیال کا
جلوے ہیں اس کے، شانیں ہیں اس کی   کیا روز، کیا خور، کیا رات، کیا ماہ
ظاہر کہ باطن اول کہ آخر   اللہ، اللہ، اللہ، اللہ
ہم مذہبوں میں صرف کرم سے ہے گفتگو   مذکور ذکر یاں نہیں صوم و صلوات کا
دیا دکھائی مجھے تو اسی کا جلوہ میرؔ   پڑی جہان میں جا کر نظر جہاں میری

نعت

ہے حرف خامہ دل زدہ حسن قبول کا   یعنی خیال سر میں ہے نعت رسول کا
حق کی طلب ہے کچھ تو محمد پرست ہو   ایسا وسیلہ ہے بھی خدا کے حصول کا

ग्रहमद को हम ने जान रखा है वही ग्रहद   मज़हब कुछ ग्रौर होगा किसी बुल फ़ज़ूल का
क्या मीर तुझ को नामा सियाही का फ़िक्र है   ख़त्मे रुसल सा शख्स है, ज़ामिन नेजात का
मक़सूद है ग्रली ए वली का सभी का तू   हं क़स्द सबको तेरी रज़ा के हुसूल का
रह पैरवी में उसकी कि गामे मख़ुस्न में   ज़ाहिर ग्रसर है मक़सदे दिलके वसूल का

मन्क़बत

जो मोतक़िद नहीं है ग्रली के कमाल का   हर बाल उसके तन पे है मोजिब वबाल का
शख्सीयत ऐसी किस की थी ख़त्मेरुसल के बाद   था मशविरत शरीक हक़े ज़ुल जलाल का
फ़िक्रे नेजात मीर को क्या मवहत्वाँ है वह   ग्रौलाद का ग्रली की मुहम्मद की ग्राल का
दिल की गिरह न नाख़ुने तदबीर से खुली   उक़दा खुलेगा मीर यह मुश्किल कुशा के हाथ
मुम्किन नहीं कि वस्फ़े ग्रली कोई कर सके   तफ़रीद के जरीदे में वह पहली फ़र्द है
ख़ुश सर ग्रन्जाम वे ही हैं जिन को   इक़तदा ग्रव्वलीं इमाम से है
ऐ मीर गदाई करूं दरवाज़े को उस के   माँगू हूँ यही ग्राठ पहर शाहे नजफ़ से
कब मिले मीर मुल्क दारों से   वह गदा - ए- शहे विलायत है
है मुत्तहिद नबी-ग्रो-ग्रली ग्रो वली कोज़ात   याँ हर्फ़ मोतबर नहीं हर बुलफ़ुज़ूल का
हासिल है मीर दोस्ती-ए-ग्रहले बैत ग्रगर   तो ग़म है क्या नेजात के ग्रपनी हुसूल का
या मुर्तज़ा ग्रली हूं तेरा गदा - ए- दर यह   कर हाले मीर पर भी टुक इल्तिफ़ात शाहा
हिम्मत दे बादे तुन्द को ऐसी कि बादे मर्ग   मुश्ते ग़ुबार मेरा नजफ़ पहुंचे या ग्रली
जो हैदरी नहीं उसे ईमान ही नहीं   हो गो शरीफ़े मक्का मुसलमान ही नहीं
पढ़ते नहीं नमाज़ जनाज़े प उसके मीर   दिल में ग़ुबार जिसके हो ख़ाके इमाम से
ग्रगर ताला करे यारी तो मरिये करबला आकर   ग्रबीर ग्रपने कफ़न को ख़ाक हो उस ग्रास्ताने को

रवादारी

राह सबको है ख़ुदा से जान ग्रगर समझा है तू   हों तरीक़े मुख़्तलिफ़ कितने ही मंज़िल एक है
क्या सरे जंग-ग्रो-जदल होवे नियाज़े इश्क़ को   सुल्ह की है हमने तो हफ़्ताद दो मिल्लत से याँ
उसके फ़रोग़े हुस्न से झमके है सब में नूर   शम-ए-हरम हो या कि दिया सोमनात का
शाएरी शेवा है, शग्रार एख़लास   दीन-ग्रो-मज़हब मेरा है प्यार एख़लास

तसव्वुफ़

हम ग्राप ही को ग्रपना मक़सूद जानते हैं   ग्रपने सेवा किसी को मौजूद जानते हैं
इज्ज़ो - नयाज़ ग्रपना ग्रपनी तरफ़ है सारा   इस मुश्ते ख़ाक को हम मसजूद जानते हैं
सूरत पज़ीर हम बिन हरगिज़ नहीं वह मानी   ग्रहले नज़र हमीं को माबूद जानते हैं
इश्क़ उनको ग्रक़ल को है जो मासेवा हमारे   नाचीज़ जानते हैं नाबूद जानते हैं
ग्रपनी ही सैर करने हम जल्वा गर हुए थे   इस रम्ज़ को व लेकिन मादूद जानते हैं

احمد کو ہم نے جان رکھا ہے وہی احد — مذہب کچھ اور ہوگا کسی بوالفضول کا
کیا میرؔ تجھ کو نامہ سیاہی کا فکر ہے — ختم رسل سا شخص ہے ضامن نجات کا
مقصود ہے علی ولی کا اسی کا تو — ہے قصد سب کو تیری رضا کے حصول کا
رہ پیروی میں اس کی کہ گام نخست میں — ظاہر اثر ہے مقصد دل کے وصول کا

منقبت

جو معتقد نہیں ہے علی کے کمال کا — ہر بال اس کے تن پہ ہے موجب وبال کا
شخصیت ایسی کس کی تھی ختم رسل کے بعد — تھا مشورت شریک حق ذوالجلال کا
فکر نجات میرؔ کو کیا مدح خوار ہے وہ — اولاد کا علی کی، محمد کی آل کا
دل کی گرہ نہ ناخن تدبیر سے کھلی — عقدہ کھلے گا میرؔ یہ مشکل کشا کے ہاتھ
ممکن نہیں کہ وصف علی کوئی کر سکے — تفرید کے جریدے میں وہ پہلی فرد ہے
خوش سرانجام وے ہی ہیں جن کو — اقتدا اوّلیں امام سے ہے
اے میرؔ گدائی کروں دروازے کی اسکے — مانگوں ہوں یہی آٹھ پہر شاہ نجف سے
کب ملے میرؔ ملک داروں سے — وہ گدائے شہ ولایت ہے
ہے متحد نبی و علی وصی کی ذات — یاں حرف معتبر نہیں ہر بوالفضول کا
حاصل ہے میرؔ دوستی اہل بیت اگر — تو غم ہے کیا نجات کے اپنی حصول کا
یا مرتضیٰ علی ہے تیرا گدا سے در یہ — کر حال میرؔ پر بھی ٹک التفات شاہا
ہمت دے باد تند کو ایسی کہ بعد مرگ — مشت غبار میرا نجف پہنچے یا علی
جو حیدری نہیں اسے ایمان ہی نہیں — ہو گو شریف مکہ مسلمان ہی نہیں
پڑھتے نہیں نماز جنازے پہ اس کے میرؔ — دل میں غبار جس کے ہو خاک امام سے
اگر طالع کرے یاری تو مریئے کربلا جا کر — عبیر اپنے کفن کی خاک ہو اس آستانے کی

رواداری

راہ سب کو ہے خدا سے جان اگر سمجھا ہے تو — ہوں طریقے مختلف کتنے ہی منزل ایک ہے
کیا سر جنگ و جدل ہو بے نیاز عشق کو — صلح کی ہے ہم نے تو ہفتاد و دو ملت سے یاں
اس کے فروغ حسن سے جھمکے ہے سب میں نور — شمع حرم ہو یا کہ دیا سومنات کا
شاعری شیوہ ہے، شعار، اخلاص — دین و مذہب میرا ہے، پیار، اخلاص

تصوّف

ہم آپ ہی کو اپنا مقصود جانتے ہیں — اپنے سوا کسی کو موجود جانتے ہیں
عجز و نیاز اپنا اپنی طرف ہے سارا — اس مشت خاک کو ہم مسجود جانتے ہیں
صورت پذیر ہم بن ہرگز نہیں وہ معنی — اہل نظر ہمیں کو معبود جانتے ہیں
عشق ان کی عقل کو ہے جو ما سوا ہمارے — ناچیز جانتے ہیں، نابود جانتے ہیں
اپنی ہی سیر کرنے ہم جلوہ گر ہوئے تھے — اس رمز کو ولیکن معدود جانتے ہیں

जिस्मे ख़ाकी का जहां पर्दा उठा हम हुए वह मीर तब वह हम हुआ
बरसों लगी थीं आँखें दरवाज़-ए-हरम से पर्दा उठा तो लड़ियां आँखें हमारी हम से

आलमे गुर्बत

ख़राबा दिल्ली का वह चन्द बेहतर लखनऊ से था
वहीं मैं काश मर जाता सरासीमा न आता यां
गो लखनऊ वीरां हुआ हम और आबादी में जा
मक़सूम अपना लाएंगे ख़ल्के ख़ुदा मुल्के ख़ुदा
मुद्दत से लखनऊ में अक़ामत है मुझको लेक
यां के चलन से रखता हूं अज़्मे सफ़र हनूज़
आबाद उजड़ा लखनऊ चुग़्दों से अब हुआ
मुश्किल है इस ख़राबे में आदम की बूदो बाश
ख़ाली पड़ा है ख़ाना-ए-दौलत वज़ीर का
बावर नहीं तो आसिफ़ आसिफ़ पुकार देख
लखनऊ दिल्ली से आया यां भी रहता है उदास
मीर को सरगश्तगी ने बेदिलों हैरां किया
हैं दिल्ली लखनऊ के ख़ुश अन्दाम ख़ूब लेक
राहे वफ़ा-ओ-मेहर है मसदूद हर जगह
शफ़क़ से हैं दरो - दीवार ज़र्द शामो - सहर
हुआ है लखनऊ इस रह गुज़र में पीलीभीत

मशग़लये ज़िन्दगी

और कुछ मशग़ला नहीं है हमें
गाहो ब गह ग़ज़ल सराई है
हाल फ़िक्रे सुख़न में कुछ न रहा
शेर मेरा शआर है, ता हाल
गई उम्र दर बन्दे फ़िक्रे ग़ज़ल
सो इस फ़न को ऐसा बड़ा कर चले
कहें क्या जो पूछे कोई हमसे मीर
जहां में तुम आये थे क्या कर चले
ग़ज़ल ही की रदीफ़ो क़ाफ़िये का रब्त रहता है
निकलना मीर अब मुश्किल है मेरा इन ज़मीनों से
बस बहुत वक़्त किया शेर के फ़न में ज़ाया
मीर अब पीर हुए तर्के ख़यालात करो

جسم خاکی کا جہاں پردہ اٹھا ہم ہوئے وہ میرؔ تب وہ ہم ہوا
برسوں لگی رہی ہیں آنکھیں دروازۂ حرم سے پردہ اٹھا تو لڑیاں آنکھیں ہماری ہم سے

عالم غربت

خرابہ دلّی کا وہ چند بہتر لکھنؤ سے تھا
وہیں میں کاش مرجاتا سراسیمہ نہ آتا یاں
گو لکھنؤ ویراں ہوا ہم اور آبادی میں جا
مقسوم اپنا لائیں گے خلق خدا ملک خدا
مدت سے لکھنؤ میں اقامت ہے مجھ کو لیک
یاں کے چلن سے رکھتا ہوں عزم سفر ہنوز
آباد اجڑا لکھنؤ چغدوں سے اب ہوا
مشکل ہے اس خرابے میں آدم کی بود و باش
خالی پڑا ہے خانۂ دولت وزیر کا
یاور نہیں تو آصف، آصف پکار دیکھ
لکھنؤ دلّی سے آیا یاں بھی رہتا ہے اُداس
میرؔ کو سرگشتگی نے بے دل و حیراں کیا
ہیں دلّی لکھنؤ کے خوش اندام خوب لیکن
راہِ وفا و مہر ہے مسدود ہر جگہ
شفق سے ہیں در و دیوار زرد شام و سحر
ہوا ہے لکھنؤ اس رہ گزر میں پیلی بھیت

مشغلۂ زندگی

اور کچھ مشغلہ نہیں ہے ہمیں
گاہ دے گہ غزل سرائی ہے
حال فکرِ سخن میں کچھ نہ رہا
شعر میرا شعار ہے تا حال
گئی عمر در بندِ شعر و غزل
سو اس فن کو ایسا بڑا کر چلے
کہیں کیا جو پوچھے کوئی ہم سے میرؔ
جہاں میں تم آئے تھے کیا کر چلے
غزل ہی کی ردیف و قافیے کا رفتہ رہتا ہے
نکلنا میرؔ اب مشکل ہے میرا ان زمینوں سے
بس بہت وقت کیا شعر کے فن میں ضایع
میرؔ اب پیر ہوئے ترک خیالات کرو

है मेरी शायरी तो कब से ख़्वार अपना
हर्फ़ों सुख़न से कर वे अब इज्तिनाब क्योंकर
किया था रेख़्ता पर्दा सुख़न का
सो ठहरा है यही अब फ़न हमारा
रवाना हो गया तू मीर आख़िर रेख़्ते कहकर
मैं कहता था न ऐ ज़ालिम के ये बातें नहीं भलियाँ

शाएर की जवानी

यह मीर सितम कुश्ता किसू वक़्त जवां था
अन्दाज़ सुख़न का सबब शोरो फ़ुग़ां था
जादू की पुड़ी पर्च-ए-अबियात था उसका
मुंह तकिये ग़ज़ल पढ़ते अजब सहर बयां था
जिस राह से वह दिल ज़दा दिल्ली में निकलता
साथ उसके क़यामत का सा हंगामा रवां था
अफ़सुर्दा न था ऐसा कि जूं आब ज़दा ख़ाक
आंधी था, बला था, कोई आशोबे जहाँ था

शाएर का बुढ़ापा

कब हैं जवानी के से अशआरे शोर आवर
शायद कि कुछ हुवे हैं अब पीर मीर साहब
हाय जवानी क्या-क्या कहिए शोर सरों में रखते थे
अब क्या है वह वक़्त गया वह मौसम वह हंगाम गया

तब और अब

गो कि आतिश ज़बां थे आगे मीर अब कि कहिए गई वह तब की बात

आग थे इब्तदाए इश्क़ में हम अब जो हैं ख़ाक इन्तेहा है यह

अब ख़ुशामद उन्हीं की आठ पहर करते हैं
गुफ़्तगू मीर को जिन लोगों से थी आर के साथ

सर अब लगे झुकाने बहुत ख़ाक की तरफ़
शायद कि मीरजी का दिमाग़ी ख़लल गया

ہے شعر و شاعری تو کب سے شعار اپنا
حرف و سخن سے کریئے اب اجتناب کیونکر

کیا تھا ریختہ پردہ سخن کا
سو ٹھہرا ہے یہی اب فن ہمارا

دوانہ ہوگیا تو میرؔ آخر ریختے کہہ کر
میں کہتا تھا نہ اے ظالم کہ یہ باتیں نہیں بھلیاں

شاعر کی جوانی

یہ میرؔ ستم کشتہ کسی وقت جواں تھا
انداز سخن کا سببِ شور و فغاں تھا
جادو کی پڑی پرچۂ ابیات تھا اس کا
منہ تکیے غزل پڑھتے عجب سحر بیاں تھا
جس راہ سے وہ دل زدہ دلّی میں نکلتا
ساتھ اس کے قیامت کا سا ہنگامہ رواں تھا
افسردہ نہ تھا ایسا کہ جوں آب زدہ خاک
آندھی تھا، بلا تھا، کوئی آشوب جہاں تھا

شاعر کا بڑھاپا

کب ہیں جوانی کے سے اشعار شور آور
شاید کہ کچھ ہوئے ہیں اب پیر میرؔ صاحب
ہائے جوانی کیا کیا کہیے، شور سروں میں رکھتے تھے
اب کیا ہے، وہ وقت گیا، وہ موسم، وہ ہنگام گیا

تب اور اب

گو کہ آتش زباں تھے آگے میرؔ   اب کی کہیے گئی وہ تب کی بات

آگ تھے ابتدائے عشق میں ہم
اب جو ہیں خاک انتہا ہے یہ

اب خوشامد انھیں کی آٹھ پہر کرتے ہیں
گفتگو میرؔ کو جن لوگوں سے تھی عار کے ساتھ

سر اب لگے جھکانے بہت خاک کی طرف
شاید کہ میرؔ جی کا دماغی خلل گیا

वह ज़माने ज़ईफ़ भी न रहा वे जमाली ही बेहतर है अब
में मुँह नहीं लगाया बिन्तुल्एनब को गाहे
तब था जवाने सालेह अब पीरे मैकदा हूँ

उफ़तादे मिज़ाज

कोशिश में सर मारा लेकिन दर प किसी के जा न सका
तन प ज़बाने शुक्र है, हरमूं अपनी शिकस्ता पाई का
हाथ किसी का देखते रहिएगा, ये हमसे हो न सका
अपनी नज़र ऐ मीर रहे हैं अक्सर दस्ते दुआ की तरफ़

आगे किसू के क्या करें दस्ते तमा दराज़
वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे धरे
अपने मिज़ाज में भी है मीर ज़िद नेहायत
फिर मर ही के उठेंगे, बैठेंगे हम जो अड़कर
अब भी दमाग़ रफ़्ता हमारा है अर्श पर
गो आसमाँ ने ख़ाक में हम को मिला दिया
वही शोरे मिज़ाज शेब में है
मीर अब तक जवान है गोया
ज़ईफ़ो ज़ार तंगी से हैं, हरचंद
ब लेकिन मीर उड़ते हैं हवा में

आज़ार बहुत खींचे अब मीर तवक्कुल है
खींचो न गई हमसे हर एक की मिन्नाई
हमीयत उस के तईं कहते हैं जो मीर में थी
गया जहाँ से प तेरी गली में आ न रहा
हक़ जो चाहे तो बँधी मुट्ठी चला आऊँ मैं
मसलेहत देखी न मैं हाथ के फैलाने में

मैंने गवाई तबअ को अपनी कुछ भी नहीं है वरना मीर
दो आलम को माँग के लावें हम जो तनिक इबराम करें
हमवारी से हैं नमं ब खिशन एक से दोनों
ख़ुश हैं न गुले तर से, न हम ख़ार से नाख़ुश
कहना जो कुछ जिससे होगा, सामने मीर कहा होगा
बात न दिल में फिर गई होगी मुँह पर मेरे आई हुई

मिज़ाजों में यास आ गई है हमारे
न मरने का ग़म है, न जीने की शादी

وہ دماغ ضعیف بھی نہ رہا بے دماغی ہی بیشتر ہے اب
میں منھ نہیں لگایا بنت العنب کو گاہے
تب تھا جوانِ صالح اب پیرِ مے کدہ ہوں

افتادِ مزاج

کوشش میں سر مارا لیکن در پہ کسی کے جا نہ سکا
تن پہ زبانِ شکر ہے، ہر مو اپنی شکستہ پائی کا
ہاتھ کسی کا دیکھتے رہیے گا ہے، ہم سے ہو نہ سکا
اپنی نظر اے میر رہے ہے اکثر دست دعا کی طرف
آگے کسو کے کیا کریں دست طمع دراز
وہ ہاتھ سو گیا ہے سرہانے دھرے دھرے
اپنے مزاج میں بھی ہے میر ضد نہایت
پھر مر ہی کے اٹھیں گے، بیٹھیں گے ہم جو اڑ کر
اب بھی دماغ رفتہ ہمارا ہے عرش پر
گو آسماں نے خاک میں ہم کو ملا دیا
وہی شورِ مزاج شیب میں ہے
میر اب تک جوان ہے گویا
ضعیف و زار تنگی سے ہیں ہر چند
ولیکن میر اڑتے ہیں ہوا میں
آزار بہت کھینچے اب میر توکل ہے
کھینچی نہ گئی ہم سے ہر ایک کی مرزائی
حمیت اس کے تئیں کہتے ہیں جو میر میں تھی
گیا جہاں سے پہ تیری گلی میں آ نہ رہا
حق جو چاہے تو بند ھی مٹھی چلا جاؤں میں
مصلحت دیکھی نہیں ہاتھ کے پھیلانے میں
میل گدائی طبع کو اپنی کچھ بھی نہیں ہے، ورنہ میر
دو عالم کو مانگ کے لا دیں، ہم جو ٹک ابرام کریں
ہمواری سے ہیں نرم و خشن ایک سے دونوں
خوش ہیں نہ گل تر سے، نہ ہم خار سے ناخوش
کہنا جو کچھ جس سے ہوگا، سامنے میر کہا ہوگا
بات نہ دل میں پھر گئی ہوگی منھ پہ میرے آئی ہوئی
مزاجوں میں یاس آ گئی ہے ہمارے
نہ مرنے کا غم ہے، نہ جینے کی شادی

हरचंद हमको मस्तों से सुहबत रही है लेक
दामन हमारा मय के मानिन्द तर नहीं

कुछ नवा शायर नहीं हूँ मीर मैं
था मेरा सर मश्क़ दीवाने हसनो

मत रंज: कर किसी को कि अपने तो एतक़ाद
दिल ढाए कर जो काबा बनाया तो क्या हुआ

बिसाने ख़ाक हो पामाल राहे ख़ल्क़ ऐ मीर
रखे है दिल में अगर क़स्द सरफ़राज़ी का

मईशत हम फ़क़ीरों को सी इख़्वाने ज़माँ से रख
कोई गाली भी दे तो कह भला भाई भला होगा

की ज़ियारत मीर की हमने भी कल
ला उबाली सा है पर कामिल है मियाँ

न समझो मुझे बेख़बर इस क़दर
तहे दिल से लोगों के आगाह हूँ

अंदाज़ से है पैदा सब कुछ ख़बर है उसको
गो मीर बे सरो पा ज़ाहिर है बेख़बर सा

न जानो मीर को ऐसा ही चुप्का
नमूना है ये आशोबे बला का

पैदा कहाँ है ऐसे परा गंदा तबा लोग
अफ़सोस कि तुमको मीर से सुहबत नहीं रही

फ़ुर्सत उनको कम है अगरचे पर मिलते हैं क़ाबू पर
बरसों मीर से मिले देखा है कुछ वे कम फ़ुर्सत से हैं

एक आफ़ते ज़माँ है ये मीर इश्क़ पेशा
पर्दे में सारे मतलब अपने अदा करे है

हुस्न तो है ही करो लुत्फ़े ज़ुबान भी पैदा
मीर को देखो कि सब लोग भला कहते हैं
तुम कहो मीर को चाहो सो कि चाहे हैं तुम्हें
और हम लोग तो सब उनका अदब करते हैं

कम आमेज़ी

गिरफ़्ता दिल हूँ तर इरतिबात मुझको नहीं
किसू से शहर में कुछ इख़्तलात मुझको नहीं

सोहबत किसू से रखने का इसको न था दमाग़
था मीर बेदमाग़ को भी क्या बला दमाग़

ہر چند ہم کو مستوں سے صحبت رہی ہے لیک
دامن ہمارا ابر کے مانند تر نہیں

کچھ گدا شاعر نہیں ہوں میرؔ میں
تھا مرا سرمشق دیوانِ غنی

مت رنجہ کر کسی کو کہ اپنے تو اعتقاد
دل ڈھائے کر جو کعبہ بنایا تو کیا ہوا

بسانِ خاک ہو پامال، راہِ خلق اے میرؔ
رکھے ہے دل میں اگر قصد سرفرازی کا

معیشت ہم فقیروں کی سی اخوانِ زماں سے رکھ
کوئی گالی بھی دے تو کہہ بھلا، بھائی بھلا ہوگا

کی زیارت میرؔ کی ہم نے بھی کل
لا اُبالی سا ہے پر کامل ہے میاں

نہ سمجھو مجھے بے خبر اس قدر
تہہ دل سے لوگوں کے آگاہ ہوں

انداز سے ہے پیدا سب کچھ خبر ہے اس کو
گو میرؔ بے سر و پا ظاہر ہے بے خبر سا

نہ جانو میرؔ کو ایسا ہی چپکا
نمونہ ہے یہ آشوبِ بلا کا

پیدا کہاں ہیں ایسے پراگندہ طبع لوگ
افسوس تم کو میرؔ سے صحبت نہیں رہی

فرصت ان کو کم ہے اگرچہ پر ملتے ہیں قابو پر
برسوں میرؔ سے مل دیکھا ہے کچھ تو کم فرصت سے ہیں

اک آفتِ زماں ہے یہ میرؔ عشق پیشہ
پردے میں سارے مطلب اپنے ادا کرے ہے

حسن تو ہے ہی کرو لطف سخن بھی پیدا
میرؔ کو دیکھو کہ سب لوگ بھلا کہتے ہیں

تم کہو میرؔ کو چاہو سو کہ چاہیں ہیں تمھیں
اور ہم لوگ تو سب ان کا ادب کرتے ہیں

کم آمیزی

گرفتہ دل ہوں سرِ ارتباط مجھ کو نہیں
کسو سے شہر میں کچھ اختلاط مجھ کو نہیں

صحبت کسو سے رکھنے کا اس کو نہ تھا دماغ
تھا میرؔ بے دماغ کو بھی کیا بلا دماغ

किस तौर इत्तिफ़ाक़ पड़ी सोहबत उससे मेर
है मीर बे दमाग़ क़यामत कमइख़्तलात
मीर को गर्मी तुम से अचरज है
किस से मिलता है ये दमाग़ जला
जो बे दमाग़ी यही है तो बन चुकी अपनी
दमाग़ चाहिए हर एक से साथ करने को
शहरों मुल्कों में जो ये मीर कहाता है मियां
दीवानी है प बहुत कम नज़र आता है मियां

ख़ुद्दारी

शुक्र ख़ुदा के सर न फ़ेरो लाये हम कहीं
क्या जाने सजदा कहते हैं किसको सलाम क्या
झुक के सलाम किसी को करना सजदा हो हो जाता है
सर जावेगो इस में मेरा सर न फ़ेरो में लाऊंगा
क्या मीर सर झुकावें हर कम बग़ल के आगे
नामें ख़ुदा उन्हों की इज़्ज़त बहुत बड़ी है
सर फ़ेरो लाती नहीं हिम्मत मेरी हर एक के पास
हूं गदाए आस्तां मैं मीर हज़रत शाह का
सर किसूसे फेरो नहीं आता
हैफ़ बन्दे हुए ख़ुदा न हुए

ख़ुद शनासी

मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक बरसों
तब ख़ाक के पर्दे से इन्सान निकलते हैं
जलवा है मुझी से लबे दरियाए सुख़न पर
सद रंग मेरी मौज है, मैं तबए रवां हूं
लुत्फ़ मुझ में भी हैं हज़ारों मीर
दीदनी हूं जो सोच कर देखो
अगरचे सहल हैं पर दीदनी हैं हम भी मीर
इधर को यार तअम्मुल से गर निगाह करें
चाहिए जो कहें सो लिख रक्खें
हर सुख़न मीर का किताब है मियां
जमीने ग़ज़ल मुल्क सी हो गयी
ये क़ता तसर्रुफ़ में बिल्कुल किया

کس طور اتفاق پڑی صحبت اس سے دیر
ہے میرؔ بے دماغ قیامت کم اختلاط
میرؔ کی گرمی تم سے اچرج ہے
کس سے ملتا ہے یہ دماغ جلا
جو بے دماغی یہی ہے، تو بن چکی اپنی
دماغ چاہیے ہر اک سے ساز کرنے کو
شہروں، ملکوں میں جو یہ میرؔ کہاتا ہے میاں
دیدنی ہے پہ بہت کم نظر آتا ہے میاں

خودداری

شکر خدا کہ سر نہ فرو لائے ہم کہیں
کیا جانیں سجدہ کہتے ہیں کس کو سلام کیا
جھک کے سلام کسی کو کرنا سجدہ ہی ہو جاتا ہے
سر جاوے گو اس میں میرا سر نہ فرو میں لاؤں گا
کیا میرؔ سر جھکا دیں ہر کم بغل کے آگے
نام خدا انھوں کی عزت بہت بڑی ہے
سر فرو لاتی نہیں ہمت مری ہر ایک کے پاس
ہوں گدائے آستاں میں میرؔ حضرت شاہ کا
سر کسو سے فرو نہیں آتا
حیف بندے ہوئے خدا نہ ہوئے

خودشناسی

مت سہل ہمیں جانو پھرتا ہے فلک برسوں
تب خاک کے پردے سے انسان نکلتے ہیں
جلوہ ہے مجھی سے لب دریائے سخن پر
صد رنگ مری موج ہے، میں طبع رواں ہوں
لطف مجھ میں بھی ہیں ہزاروں میرؔ
دیدنی ہوں جو سوچ کر دیکھو
اگرچہ سہل ہیں پر دیدنی ہیں ہم بھی میرؔ
ادھر کو یار تامل سے گر نگاہ کریں
چاہیے جو کہے سو لکھ رکھیں
ہر سخن میرؔ کا کتاب ہے یاں
زمین غزل ملک سی ہو گئی
یہ قطعہ تصرف میں بالکل کیا

बे नयाज़ी

मीर है एक फ़क़ीरे मुस्तग़नी
आवे उस पास बादशाह तो क्या
बात का उसको हमसे कब है दमाग़
मीर दरवेशी में अमीर हुए
फ़ारोग़स उलझें हैं आप ही, बहस उन्हों से क्या रक्खें
मौज ज़न अपनी तबए रवां से जब हम जैसे दरया हों

बे दमाग़ी

इतनी भी बदमिज़ाजी हर लहज़ा मीर तुमको
उलझाव है ज़मीं से, झगड़ा है आसमां से
उलझाव दिल का जिससे हैं झुंझला के उस बग़ैर
झगड़ा क्या करें हैं ज़मीं आसमां से हम
इज़हारे कम फ़राग़ी हर लहज़ा बे दमाग़ी
इन रोज़ों मीर साहब कुछ मीरज़ा हुए हैं
मीरे ना चीज़ मुश्ते ख़ाक अल्लाह
उन ने ये किबरिया कहाँ पायी
यूं यूं बुढ़ापा आता है जाते हैं ऐंठते
किस मिट्टी का न जानिये अपना ख़मीर है।

वतने मालूफ़

हफ़्त अक़लीम हर गली है, कहीं दिल्ली से भी दयार होते हैं
दिल्ली के गलीं कूचे अवराक़े मुसव्विर थे जो शक्ल नज़र आई तसवीर नज़र आई
मैंने उस क़ता-ए-सन्नाअ से सर खींचा है कि हर एक कूचे में जिसके थे हुनरवर कितने
अब ख़राबा हुआ जहानाबाद वरना हर क़दम प यां घर था
कल देखते हमारे बस्ते थे घर बराबर अब यह कहीं कहीं जो दीवार-ओ-दर रहे हैं
बड़े बड़े घर थे जिनके यां आसार उनके यह हैं अब
मीर शिकस्ता दर दरवाज़े हैं गिरते पड़ी दीवारें हैं
थे थे जिन लोगों को फिरते आँखों हमने देखा है
हद्दे नज़र तक आज उन्हों की शहर के गिर्द मज़ारें हैं
चोर उचक्के सिख मरहठे शाहो गदा ज़र ख़्वाहाँ हैं
चैन में हैं जो कुछ नहीं रखते फ़क़्र ही एक दौलत है अब
उड़ती है ख़ाक शहर की गलियों में अब जहाँ
सोना लिया है गोद में भर कर वहीं से हम

بے نیازی

میرؔ ہے اک فقیرِ مستغنی
جا دے اس پاس بادشاہ تو کیا
بات کا ان کو ہم سے کب ہے دماغ
میرؔ درویشی میں امیر ہوئے
خار و خس اُلجھے ہیں آپ ہی بحث انھوں سے کیا رکھیں
موج زن اپنی جمع داں سے جب ہم جیسے دریا ہوں

بے دماغی

اتنی بھی بدمزاجی ہر لحظہ میرؔ تم کو
الجھاؤ ہے زمیں سے، جھگڑا ہے آسماں سے
الجھاؤ دل کا جس سے ہے جھنجھلا کے اس بغیر
جھگڑا کیا کریں ہیں زمیں آسماں سے ہم
اظہار کم فراغی ہر لحظہ بے دماغی
ان روزوں میرؔ صاحب کچھ میرزا ہوئے ہیں
میرؔ ناچیز مشتِ خاک واللہ
ان نے یہ کبریا کہاں پائی
جوں جوں بڑھاپا آتا ہے جاتے ہیں اینٹھتے
کس مٹی کا نہ جانیے اپنا خمیر ہے

وطن مالوف

ہفت اقلیم ہر گلی ہے کہیں — دلی سے بھی دیار ہوتے ہیں
دلی کے گلی کوچے اوراق مصوّر تھے — جو شکل نظر آئی تصویر نظر آئی
میں نے اس قطعۂ صناع سے سر کھینچا ہے — کہ ہر اک کوچے میں جس کے تھے ہنروَر پیدا
اب خرابہ ہوا جہان آباد — ورنہ ہر اک قدم پہ یاں گھر تھا
کل دیکھتے ہمارے بستے تھے گھر برابر — اب یہ کہیں کہیں جو دیوار و در رہے ہیں
بڑے بڑے گھر تھے جن کے یاں آثار ان کے یہ ہیں اب — میرؔ شکستہ دروازے ہیں، گری پڑی دیواریں ہیں
دے دے جن لوگوں کو بھرتے آنکھوں ہم نے دیکھا ہے
حدِ نظر تک آج انھوں کی شہر کے گرد مزاریں ہیں
چور، اُچکے، سکھ، مرہٹے، شاہ و گدا زر خواہاں ہیں
چین میں ہیں جو کچھ نہیں رکھتے فقر ہی اک دولت ہے اب
اڑتی ہے خاک شہر کی گلیوں میں اب جہاں
سونا لیا ہے گود میں بھر کر دہیں سے ہم

सब आल-ए-साजा ह को जहाँ अलबगाह थी
अब देखिये तो वां नहीं साया दरख़्त का

जिस जा कि ख़सो-ख़ार के अब ढेर लगे हैं
यां हमने इन्हीं आंखों से देखी हैं बहारें

जहां अब ख़ार ज़ारें हो गई हैं यहीं आगे बहारें हो गई हैं
क्या क़द्र थी सुख़न की जब यां भी सोहबतें थीं
हर बात जायजा है हर बैत पर सिले हैं

अब सबके रोज़गार की सूरत बिगड़ गई
लाखों में एक दो का कहीं कुछ निबाह है

ख़ानमां आबाद जो था सो ख़राब किस के उठकर शहर में घर आईए

दिल्ली में आज भीख भी मिलती नहीं उन्हें
था कल तलक दमाग़ जिन्हें ताज - ओ - तख़्त का

दिल - ओ - दिल्ली दोनों अगर हैं ख़राब
प कुछ लुत्फ़ उस उजड़े घर में भी है

दिल्ली में अबके आकर उन यारों को न देखा
कुछ वे गए शिताबी कुछ हम भी देर आए

फ़रोतनी

ऐ मीर शेर कहना क्या है कमाले इन्सां
ये भी ख़याल सा कुछ ख़ातिर में आ गया है।

कुछ नहीं तो शेर की ही फ़िक्र कर
आए हैं जो यां तो कुछ कर जाइये।

मुस्तइदों पर सुख़न है आजकल
शेर मेरा फ़न सो किस क़ाबिल है मियां।

ख़ुदा की ओर से ये एतबार है वर्ना
जो ख़ूब देखो तो मैं कुछ हुनर नहीं रखता।

नुक़सान होगा इसमें न आख़िर कहां तलक
होवेंगे जिस ज़माने के साहब कमाल हम।

न हुए हम नज़ीरी से यों तो
शेर के फ़न में वे नज़ीर हुए।

क्या जानूं दिल को खींचे हैं क्यों शेर मीर के
कुछ तर्ज़ ऐसी भी नहीं इहाम भी नहीं।

سبزانِ تازہ رو کی جہاں جلوہ گاہ تھی
اب دیکھیے تو واں نہیں سایہ درخت کا

جس جا کہ خس و خار کے اب ڈھیر لگے ہیں
یاں ہم نے انھیں آنکھوں سے دیکھی ہیں بہاریں

جہاں اب خارزاریں ہو گئی ہیں — یہیں آگے بہاریں ہو گئی ہیں

کیا قدر تھی سخن کی جب یاں بھی صحبتیں تھیں
ہر بات جائزہ ہے، ہر بیت پر صلے ہیں

اب سب کے روزگار کی صورت بگڑ گئی
لاکھوں میں ایک دو کا کہیں کچھ نباہ ہے

خانماں آباد جو تھا سو خراب اب — کس کے اٹھ کر شہر میں گھر جائیے

دلی میں آج بھیک بھی ملتی نہیں انھیں
تھا کل تلک دماغ جنھیں تاج و تخت کا

دل و دلی دونوں اگر ہیں خراب
پہ کچھ لطف اس اجڑے گھر میں بھی ہے

دلی میں اب کے آکر ان یاروں کو نہ دیکھا
کچھ وے گئے شتابی، کچھ ہم بھی دیر آئے

فروتنی

اے میرؔ شعر کہنا کیا ہے کمالِ انساں
یہ بھی خیال سا کچھ خاطر میں آگیا ہے

کچھ نہیں تو شعر ہی کی فکر کر
آئے ہیں جو یاں تو کچھ کر جائیے

مستعدوں پر سخن ہے آج کل
شعر میرا فن سو کس قابل ہے میاں

خدا کی اُذر سے یہ اعتبار ہے ورنہ
جو خوب دیکھو تو میں کچھ ہنر نہیں رکھتا

نقصان ہوگا اس میں نہ ظاہر کہاں تلک
ہوویں گے جس زمانے کے صاحب کمال ہم

نہ ہوئے ہم نظیریؔ سے یوں تو
شعر کے فن میں بے نظیر ہوئے

کیا جانوں دل کو کھینچے ہیں کیوں شعر میرؔ کے
کچھ طرز ایسی بھی نہیں ایہام بھی نہیں

कमाले-शायरी

रेख़ता रुतबे को पहुँचाया हुआ उसका है
मोतक़िद कौन नहीं मीर की उस्तादी का
रेख़ता काहे को था इस रुतबा-ए-आली में मीर
जो ज़मीं निकली उसे ता आसमां मैं ले गया
रेख़ता ख़ूब ही कहता है जो इन्साफ़ करो
चाहिए अहले सुख़न मीर को उस्ताद करें
थी बह्र की सी लहर कि आई चली गई
पहुँची है उस सिरे तईं तबए रवां की बात
खोल कर दीवान मेरा देख क़ुदरत मुद्दई
गर्चे हूँ मैं नौजवां पर शाएरों का पीर हूँ
गुफ़्तगू नाक़िसों से है वर्ना
मीर जी भी कमाल रखते हैं
सारे आलम पर हूँ मैं छाया हुआ
मुस्तनद है मेरा फ़र्माया हुआ

फ़न्नी महासिन

बजा है गर फ़लक पर फ़ख़्र से फेंके कुलाह अपनी
कहे जो इस ज़मीं में मीर एक मिसराअ बरजस्ता
टुक ऐ मुद्दई चश्मे इन्साफ़ वा कर
कि बैठे हैं यह क़ाफ़िए किस अदा से
फ़िकरे बलन्द से मैं किया आसमां इसे
हर एक से मीर ख़ूब हो यह वह ज़मीं नहीं
क्या सर झुका रहे हो मीर इस ग़ज़ल को सुनकर
बारे नज़र करो टुक ऐ मेहरबां ज़मीं पर
कहे मैंने अशआर हर बह्र में व लेकिन क़यामत रवानी के साथ
सन्नाअ-तुरफ़ा हैं हम आलम में रेख़ते के
जो मीर जी लगेगा तो सब हुनर करेंगे

ख़ुश बयानी

बुलबुल ग़ज़ल सराई आगे हमारे मत कर
सब हमसे सीखते हैं अन्दाज़ गुफ़्तगू का
गर देखोगे तुम तर्ज़े कलाम उसकी नज़र कर
ऐ अहले सुख़न मीर को उस्ताद करोगे

کمالِ شاعری

ریختہ رتبے کو پہنچایا ہوا اُس کا ہے
معتقد کون نہیں میرؔ کی استادی کا

ریختہ کاہے کو تھا اُس رتبۂ عالی میں میرؔ
جو زمیں نکلی اسے تا آسماں میں لے گیا

ریختہ خوب ہی کہتا ہے جو انصاف کرو
چاہیئے اہلِ سخن میرؔ کو استاد کریں

تھی بحر کی سی لہر کہ آئی چلی گئی
پہنچے ہے اس سرے تئیں طبعِ رواں کی بات

کھول کر دیوان میرا دیکھ قدرت مدعی
گرچہ ہوں میں نوجواں پر شاعروں کا پیر ہوں

گفتگو ناقصوں سے ہے ورنہ
میرؔ جی بھی کمال رکھتے ہیں

سارے عالم پر ہوں میں چھایا ہوا
مستند ہے میرا فرمایا ہوا

فنی محاسن

بجا ہے گر فلک پر فخر سے پھینکے کلاہ اپنی
کہے جو اُس زمیں میں میرؔ یک مصراع برجستہ

ٹک اے مدعی چشمِ انصاف وا کر
کہ بیٹھے ہیں یہ قافیے کس ادا سے

فکر بلند سے میں کیا آسماں اسے
ہر اک سے میرؔ خوب ہو یہ وہ زمیں نہیں

کیا سر جھکا رہے ہو میرؔ اُس غزل کو سُن کر
بارے نظر کرو ٹک اے مہرباں زمیں پر

کہے میں نے اشعار ہر بحر میں ولیکن قیامت روانی کے ساتھ
صنّاع طرفہ ہیں ہم عالم میں ریختے کے جو میرؔ جی لگے گا تو سب ہنر کریں گے

خوش بیانی

بلبل غزل سرائی آگے ہمارے مت کر
سب ہم سے سیکھتے ہیں انداز گفتگو کا

گر دیکھو گے تم طرز کلام اُس کی نظر کر
اے اہلِ سخن میرؔ کو استاد کرو گے

इस बात में मतलब है कि सरअब न हुआ हो
यूं नाला किसू मुर्ग़े गिरफ़्तार से अब तक
गुफ़्तगू रेख़्ते में हम से न कर यह हमारी ज़बान है प्यारे
दरिया में क़तरा क़तरा है आबे गुहर कहीं
है मीर मौजज़न तेरे हर एक सुख़न में आब
मीर शायर भी ज़ोर था कोई देखते हो न बात का असलूब
जो देखो मेरे शेरे-तर की तरफ़ तो मायल न हो फिर गुहर की तरफ़
हमसे ख़ुश जमज़मा कहां यूं तो लबो लहजा हज़ार रखतें हैं
बैत बहसी समझ के कर बुलबुल धूम है मेरी ख़ुश बयानी की
देखो तो किस रवानी से कहते हैं शेर मीर
दर से हज़ार चन्द है उनके सुख़न में आब
मुंह तकते ही रहे हैं सदा मजलिसों के बीच
गोया कि मीर महव हैं मेरी ज़बां के लोग
हर चन्द है सुख़न को तशबीह दुर से लेकिन
बातें मेरी सुनो तो तुम फेंक दो गुहर को
न देखो कभी मोतियों की लड़ी जो देखो मेरी गुफ़्तगू की तरफ़
नहीं मिलता सुख़न अपना किसू से हमारी गुफ़्तगू का ढब जुदा है
लबो-लहजा ग़ज़ल ख़्वानी का किस को आजकल ऐसा
घड़ी भर को हुवे मुर्ग़े चमन हमदास्तां मेरे
सुख़न करने में नास्तालीक़ गोई ही नहीं करते
पढ़ें हैं शेर कोई हम सो वह भी ग़द्बो मद से है
हम कोई बैत जाकर उस ही के मुंह सुनेंगे
वहशत अदा किसू दिन गर मीर घर रहेगा
चल हम नशीं बने तो एक आध बैत सुनिए
कहते हैं बावे मुदृत मीर अपने घर रहे हैं

कलाम का असर

किस ने सुन शेर मीर यह न कहा कहियो फिर हाय क्या कहा साहब
मुतरिब ने पढ़ी थी ग़ज़ल एक मीर की शब को
मजलिस में बहुत वज्द की हालत रही सब को
अशआरे मीर पर है अब हाय वाय हर सू
कुछ सहर तो नहीं है लेकिन हवा तो देखो
हैं मेरी हर एक ग़ज़ल पर इजतमिअ ख़ानक़ह में करते हैं सूफ़ी समाअ
वज्द में रखता है अहले फ़हम को मेरे शेरो-शाएरी का इस्तेमाअ

اس باغ میں اغلب ہے کہ سرزد نہ ہوا ہو
یوں نالہ کسو مرغ گرفتار سے اب تک

گفتگو ریختے میں ہم سے نہ کر   یہ ہماری زبان ہے پیارے

دریا میں قطرہ قطرہ ہے آب گہر کہیں
ہے میرؔ موج زن ترے ہر اک سخن میں آب

میرؔ شاعر بھی زور تھا کوئی   دیکھتے ہو نہ بات کا اسلوب
جو دیکھو مرے شعر تر کی طرف   تو مائل نہ ہو پھر گہر کی طرف
ہم سے خوش زمزمہ کہاں یوں تو   لب و لہجہ ہزار رکھتے ہیں
بیت بحثی سمجھ کے کر بلبل   دھوم ہے میری خوش بیانی کی

دیکھو تو کس روانی سے کہتے ہیں شعر میرؔ
دُر سے ہزار چند ہے ان کے سخن میں آب

منھ تکتے ہی رہے ہیں سدا مجلسوں کے بیچ
گویا کہ میرؔ محو ہیں میری زباں کے لوگ

ہرچند ہے سخن کو تشبیہہ دُر سے لیکن
باتیں مری سُنو تو تم پھینک دو گہر کو

نہ دیکھو کبھی موتیوں کی لڑی   جو دیکھو مری گفتگو کی طرف
نہیں ملتا سخن اپنا کسو سے   ہماری گفتگو کا ڈھب جدا ہے

لب و لہجہ غزل خوانی کا کس کو آج کل ایسا
گھڑی بھر کو ہوئے مرغ چمن ہم داستاں میرے

سخن کرنے میں نستعلیق گوئی ہی نہیں کرتے
پڑھیں ہیں شعر کوئی ہم سو وہ بھی شد و مد سے ہے

ہم کوئی بیت جا کر اس ہی کے منھ سنیں گے
وحشت زدہ کسو دن گر میرؔ گھر رہے گا

چل ہم نشیں بنے تو اک آدھ بیت سنیے
کہتے ہیں بعد مدت میرؔ اپنے گھر رہے ہیں

کلام کا اثر

کس نے سُن شعر میرؔ یہ نہ کہا   کہیے پھر ہائے کیا کہا صاحب

مطرب نے پڑھی تھی غزل اک میرؔ کی شب کو
مجلس میں بہت وجد کی حالت رہی سب کو

اشعار میرؔ پر ہے اب ہائے وائے ہر سو
کچھ سحر تو نہیں ہے لیکن ہوا تو دیکھو

ہے مری ہر اک غزل پر اجتماع   خانقہ میں کرتے ہیں صوفی سماع
وجد میں رکھتا ہے اہلِ فہم کو   میرے شعر و شاعری کا استماع

ग़ज़ल मीर की कब पढ़ाई नहीं   कि हालत मुझे ग़श की आई नहीं
नालां तो है मुझी से पर वह असर कहां है
गो तायरे गुलिस्तां सीखे मेरी ज़बां को
शाएर नहीं जो देखा तो तू है कोई साहिर
दो चार शेर पढ़कर सब को रिझा गया है
मुतरिब से ग़ज़ल मीर की कल मैंने पढ़ाई
अल्लाह रे असर सब के तईं रफ़्तगी आई
जहां से देखिए इक शेर शोर अंगेज़ निकले हैं
क़यामत का सा हंगामा है, हर जा मेरे दीवां में
हर वरक़, हर सफ़हे में, एक शेर शोर अंगेज़ है
अर्स-ए-महशर है, अर्सा मेरे भी दीवान का
तकलीफ़े-दर्दे दिल की अबस हम नशीं ने की
दर्दे सुख़न ने मेरे सभों को रुला दिया
करते है बातें किस किस हंगामे की यह ज़ाहिद
दीवाने हशर गोया दीवान है हमारा
हर चन्द शेरे मीर का दिल मोतक़िद न था
पर इस ग़ज़ल को हमने भी सुनकर लिखा रखा
शमा हो सर न दे गई बर्बाद   क़ता अपनी ज़बां के हम भी हैं

कलाम की मक़बूलियत

रौनक़ो-आबादी ए मुल्के सुख़न है उस तलक
हों हज़ारों दम इलाही मीर के एक दम के बीच
सुख़न मुश्ताक़ है आलम हमारा   ग़नीमत है जहां में दम हमारा
ज़ौक़े सुख़न हुआ है अब तो बहुत हमें भी
लिख लेंगे मीर जी के अशआर चीदा चीदा
सुख़न यही है जो कहते हैं शेरे मीर है सहर
ज़बाने ख़ल्क़ को किस तौर कोई बन्द करे
अशआरे मीर सबने चुन चुन के लिख लिये हैं
रक्खेंगे याद हम भी कुछ बैतें चीदा चीदा
हुस्ने कलाम खींचे क्योंकर न दामने दिल
इस काम को हम आख़िर महबूब कर चुके हैं
दीवाने मीर साहब हर एक की हैं बग़ल में
दो चार शेर उनके हम भी लिखा करेंगे

غزل میرؔ کی کب پڑھائی نہیں   کہ حالت مجھے غش کی آئی نہیں

نالاں تو ہیں مجھی سے پر وہ اثر کہاں ہے
گو طائرِ گلستاں سیکھے میری زباں کو

شاعر نہیں جو دیکھا تو تو ہے کوئی ساحر
دو چار شعر پڑھ کر سب کو رِجھا گیا ہے

مطرب سے غزل میرؔ کی کل میں نے پڑھائی
اللہ رے اثر سب کے تئیں رفتگی آئی

جہاں سے دیکھیے اِک شعرِ شور انگیز نکلے ہے
قیامت کا سا ہنگامہ ہے ہر جا میرے دیواں میں

ہر ورق ہر صفحے میں اک شعر شور انگیز ہے
عرصۂ محشر ہے' عرصہ میرے بھی دیوان کا

تکلیف دردِ دل کی عبث ہم نشیں نے کی
دردِ سخن نے میرے سبھوں کو رُلا دیا

کرتے ہیں باتیں کس کس ہنگامے کی یہ زاہد
دیوانِ حشر گویا دیوان ہے ہمارا

ہر چند شعرِ میرؔ کا دل معتقد نہ تھا
پر اس غزل کو ہم نے بھی سُن کر لکھا رکھا

شمع ہی سر نہ دے گئی برباد   کشتہ اپنی زباں کے ہم بھی ہیں

کلام کی مقبولیت

رونق و آبادی ملکِ سخن ہے اس تلک
ہوں ہزاروں دم الٰہی میرؔ کے اک دم کے بیچ

سخن مشتاق ہے عالم ہمارا   غنیمت ہے جہاں میں دم ہمارا

ذوق سخن ہوا ہے اب تو بہت ہمیں بھی
لکھ لیں گے میرؔ جی کے اشعار چیدہ چیدہ

سخن یہی ہے جو کہتے ہیں شعر میرؔ ہے سحر
زبانِ خلق کو کس طور کوئی بند کرے

اشعارِ میرؔ سب نے چن چن کے لکھ لیا ہیں
رکھیں گے یاد ہم بھی کچھ بیتیں چیدہ چیدہ

حسنِ کلام کھینچے کیوں کر نہ دامن دل
اس کام کو ہم آخر محبوب کر چکے ہیں

دیوان میرؔ صاحب ہر اک کی ہے بغل میں
دو چار شعر ان کے ہم بھی لکھا کریں گے

जिस शेर पर समाअ था कल खानक़ाह में
वह आज मैं सुना तो है मेरा कहा हुआ

शेर पढ़ते फिरते हैं सब मीर के   इस क़लम रौ में है उनका दौर अब

शोर अब चमन में मेरी ग़ज़ल ख़्वानी का है मीर
एक अन्दलीब क्या है कहूँ मैं हज़ार में

शोहरत

दूर तक रुसवा हुआ हूँ शहरों शहरों मुल्क मुल्क
मेरे शेरो-शायरी का तज़किरा घर घर है आज

शेर हमारे आलम में हर चार तरफ़ क्या दौड़े हैं
किस वादी आबादी में यह हर्फ़ो सुख़न मशहूर नहीं

मुल्कों मुल्कों शहरों शहरों क़रिया क़स्बा देहो-दयार
शेरो-बैतो-ग़ज़ल पर अपनी हंगामा घर घर है आज

अगरचे गोशा नशीं हूँ मैं शाएरों में मीर
प मेरे शोर ने रूए ज़मीं तमाम लिया

अपनी उज़लत रखती है आलम ही और
यह सियह रू शोहर - ए - आफ़ाक़ है

कुछ नहीं हम मिसाले - उनक़ा लेक
शहर शहर इश्तिहार है अपना

दक्खिन उत्तर पूरब पच्छिम हंगामा है सब आगह
ऊधम मेरे हर्फ़ो सुख़न ने चारों ओर मचाया है

सर सब्ज़ हिन्द ही में नहीं कुछ ये रेख़्ता
है धूम मेरे शेर की सारे दकन के बीच

कुछ हिन्द ही में मीर नहीं लोग जेब चाक
हैं मेरे रेख़्तों का दिवाना दकन तमाम

सर सब्ज़ मुल्के हिन्द में ऐसा हुआ कि मीर
यह रेख़्ता लिखा हुआ मेरा दकन गया

शायरी में कोई मेरा मुक़ाबिल नहीं

हो तरफ़ मुझ पहलवां शाएर का कब आजिज़ सुख़न
सामने होने को साहब फ़न के क़ुदरत चाहिए

इस फ़न के पहलवानों से कुश्ती रही है मीर
बहुतों को हमने ज़ेर किया है पछाड़ कर

फ़ने शाअ़ार में हूँ पहलवां मीर
मुझे है याद इस कुश्ती का हर बन्द

جس شعر پر سماع تھا کل خانقاہ میں
وہ آج میں سُنا تو ہے میرا کہا ہوا

شعر پڑھتے پھرتے ہیں سب میرؔ کے
اس قلمرو میں ہے ان کا دوراب

شور اب چمن میں میری غزل خوانی کا ہے میرؔ
ایک عندلیب کیا ہے، کہوں میں ہزار میں

شہرت

دور تک رسوا ہوں شہروں شہروں ملک ملک
میرے شعر و شاعری کا تذکرہ گھر گھر ہے آج

شعر ہمارے عالم میں ہر چار طرف کیا دوڑیں ہیں
کس وادی آبادی میں یہ حرف و سخن مشہور نہیں

ملکوں ملکوں، شہروں شہروں قریہ قصبہ دیہہ و دیار
شعر و بیت و غزل پر اپنی ہنگامہ گھر گھر ہے آج

اگرچہ گوشہ نشیں ہوں میں شاعروں میں میرؔ
پہ میرے شور نے روئے زمیں تمام لیا

اپنی عزلت رکھتی ہے عالم ہی اور
یہ سیہ رو شہرۂ آفاق ہے

کچھ نہیں ہم مثالِ عنقا لیک
شہر، شہر اشتہار ہے اپنا

دکھن، اتر، پورب، پچھم ہنگامہ ہے سب جاگہ
اودھم میرے حرف و سخن نے چاروں اُور مچایا ہے

سر سبز ہند ہی میں نہیں کچھ یہ ریختہ
ہے دھوم میرے شعر کی سارے دکھن کے بیچ

کچھ ہند ہی میں میرؔ نہیں لوگ جیب چاک
ہے میرے ریختوں کا دوانہ دکن تمام

سر سبز ملک ہند میں ایسا ہوا کہ میرؔ
یہ ریختہ لکھا ہوا میرا دکن گیا

شاعری میں کوئی میرا مقابل نہیں

ہو طرف مجھ پہلواں شاعر کا کب عاجز سخن
سامنے ہونے کو صاحب فن کے قدرت چاہیے

اس فن کے پہلوانوں سے کشتی رہی ہے میرؔ
بہتوں کو ہم نے زیر کیا ہے پچھاڑ کر

فن اشعار میں ہوں پہلواں میرؔ
مجھے ہے یاد اس کشتی کا ہر بند

बात बनाना मुश्किल सा है शेर सभी यां कहते हैं
फ़िक्रे बलन्द से यारों को एक ऐसी ग़ज़ल कह लाने दो
है नज़्म का सलीक़ा हर चन्द सब को लेकिन
जब जाने कोई लावे यूं मोती से पिरो कर
सुख़न के मुल्क का मैं मुस्तक़िल अमीर हूं मीर
हज़ार मुद्दई भी मुझको वह विला न करे
इस फ़न में कोई बे तह क्या हो मेरा मुआरिज़
अव्वल तो मैं सनद हूं फिर यह मेरी ज़बां है
तरफ़ होना मेरा मुश्किल है मीर इस शेर के फ़न में
यूं ही सौदा कभू होता है सो जाहिल है क्या जाने

मुतशायरों की मज़म्मत

किस का है क़िमाश ऐसा गूदड़ भरे हैं सारे
देखो न जो लोगों के दीवान निकलते हैं
कहां से तह करें पैदा यह नाज़माने हाल
कि पोच बाफ़ी ही है काम इन जुलाहों का
क़िया मेरे रोज़गार के अहले सुख़न की बात
हर नाक़िस अपने ज़ाम में साहब कमाल था
न रखो कान नज़्मे शायराने हाल पर इतने
चलो टुक मीर को सुनने कि मोती से पिरोता है
कहां आजिज़ सुख़न क़ादिर सुख़न हूं
हमें है शुभः यारों के सुख़न में

मेरे आशार समझना आसान नहीं

सहल है मीर का समझना क्या हर सुख़न उसका एक मक़ाम से है
दिल और अर्श दोनों प गोया है उन की सैर
करते हैं बातें मीर जो किस किस मक़ाम से
तुर्फ़े रखे है एक सुख़न चार चार मीर
क्या क्या कहा करें है ज़बाने क़लम से हम
समझे अन्दाज़े शेर को मेरे मीर का सा अगर कमाल रखे
मीर साहब का हर सुख़न है रम्ज़ बे हक़ीक़त है शेख़ क्या जाने
तेरी चाल टेढ़ी तेरी बात अनोखी तुझे मीर समझा है यां कम किसू ने
किस किस अदा से रेख़्ते मैंने कहे वले समझा न कोई मेरी ज़बां इस दयार में
ज़ुल्फ़ सा पेचदार है हर शेर है सुख़न मीर का अजब ढब का

بات بنانا مشکل سا ہے شعر سبھی یاں کہتے ہیں
فکر بلند سے یاروں کو ایک ایسی غزل کہہ لانے دو

ہے نظم کا سلیقہ ہر چند سب کو لیکن
جب جانیں کوئی لادے یوں موتی سے پرو کر

سخن کے ملک کا میں مستقل امیر ہوں میر
ہزار مدعی بھی مجھ کو وہ دلا نہ کریں

اس فن میں کوئی بے تہ کیا ہو مرا معارض
اوّل تو میں سند ہوں پھر یہ مری زباں ہے

طرف ہونا مرا مشکل ہے میر اس شعر کے فن میں
یونہیں سودا کبھو ہوتا ہے سو جاہل ہے کیا جانے

متشاعروں کی مذمت

کس کا قماش ایسا گودڑ بھرے ہیں سارے
دیکھو نہ جو لوگوں کے دیوان نکلتے ہیں

کہاں سے تہ کریں پیدا یہ ناظمانِ حال
کہ پوچ بافی ہی ہے کام ان جلاہوں کا

کیا میرے روزگار کی اہلِ سخن کی بات
ہر ناقص اپنے زعم میں صاحب کمال تھا

نہ رکھو کان نظم شاعرانِ حال پر اتنے
چلو ٹک میر کو سننے کہ موتی سے پروتا ہے

کہاں عاجز سخن، قادر سخن ہوں
ہمیں ہے شبہ یاروں کے سخن میں

میرے اشعار سمجھنا آسان نہیں

سہل ہے میر کا سمجھنا کیا   ہر سخن اس کا اک مقام سے ہے

دل اور عرش دونوں پہ گویا ہے ان کی سیر
کرتے ہیں باتیں میر جی کس کس مقام سے

طرفین رکھے ہے ایک سخن چار چار میر
کیا کیا کہا کریں ہیں زبانِ قلم سے ہم

سمجھے انداز شعر کو میرے   میر کا سا اگر کمال رکھے
میر صاحب کا ہر سخن ہے رمز   بے حقیقت ہے شیخ کیا جانے
تری چال ٹیڑھی تری بات انوکھی   تجھے میر سمجھا ہے یاں کم کسو نے
کس کس ادا سے ریختے میں نے کہے ولے   سمجھا نہ کوئی میری زباں اس دیار میں
زلف سا پیچ دار ہے ہر شعر   ہے سخن میر کا عجب ڈھب کا

तह से सुख़न की लोग न थे आशिना अबस
आगह से तुम गए उन्हों की वाह वाह पर
कौन पहुँचे है बात की तह को एक मुद्दत से बक रहे हैं हम
फ़िक्र को नाज़ुक ख़यालों की कहां पहुँचे हैं यार
वरना हर मिसरा यहां माशूक़े शोख़ों शंग है
सरसरी कुछ सुन लिया फिर वाह वा कर उठ गए
शेर यह कम फ़हम समझे हैं ख़याले बंग है

अलमनाक ज़िन्दगी

ना मुरादाना ज़ीस्त करता था मीर का तौर याद है हमको
हस्ती में हम ने आकर आसूदगी न देखी
खुलतीं न काश आंखें ख़्वाबे ख़ुश अदम से
जब नाला कश हुआ है तब मजलिसें रुलाईं
था मीर दिल शिकस्ता या कोई नौहा गर था
साथ अपने नहीं असबाबे मुसाइद मुतलक़
हम भी कहने के तईं आलमे असबाब में हैं।
ज़िन्दां में जहां के बहुत हैं ख़राब हाल
करते हैं हम मआश गुनहगार की रविश
क्या कहें मीर जो हम तुम से मआश अपनी अमं
ग़म को खाया करें हैं लोहू पिया करते हैं
तबए ग़यूर पर है सितम सा सितम को मीर
बिगड़ा जिन्हों से चाहिए उनसे बनाइए
जला जी बहुत क़िस्सए मीर सुन
बला सोज़ था उस कहानी के साथ
दुनिया में अपने रहने का क्या तौर हम कहें
ज़िन्दां में जों करें हैं गुनहगार बाशो-बूद
शहर में घर ख़राब है अपना।
आते हैं यां अब इस निशान से लोग
क्या-क्या इश्क़ में रंज उठाए, दिल अपना सब ख़ून हुआ
कैसे रुकते थे ख़फ़गी से, आख़िर कार जनून हुआ
न मोअर्रफ़ न आशना कोई
हम हैं बेयारो बेदयार अफ़सोस।
भरी बस्ती में क्यत कुछ नहीं इफ़लास से अपनी
इलाही होवे मुंह काला शिताब इस दस्ते ख़ाली का

تہ سے سخن کی لوگ نہ تھے آشنا عبث
جا گر سے تم گئے انھوں کی واہ واہ پر
کون پہنچے ہے بات کی تہہ کو ایک مدت سے بک رہے ہیں ہم
فکر کو نازک خیالوں کی کہاں پہنچیں ہیں یار
ورنہ ہر مصرع یہاں معشوق شوخ و شنگ ہے
سرسری کچھ سن لیا پھر واہ واکر اٹھ گئے
شعر یہ نافہم سمجھے ہیں خیال بنگ ہے

المناک زندگی

نامرادانہ زیست کرتا تھا میرؔ کا طور یاد ہے ہم کو
ہستی میں ہم نے آکر آسودگی نہ دیکھی
کھلتیں نہ کاش آنکھیں خواب خوش عدم سے
جب نالہ کش ہوا ہے تب مجلسیں رلائیں
تھا میرؔ دل شکستہ یا کوئی نوحہ گر تھا
ساتھ اپنے نہیں اسباب ساعد مطلق
ہم بھی کہنے کے تئیں عالم اسباب میں ہیں
زنداں میں جہاں کے بہت ہیں خراب حال
کرتے ہیں ہم معاش گنہگار کی روش
کیا کہیں میرؔ جی ہم تم سے معاش اپنی غرض
غم کو کھایا کریں ہیں لوہو پیا کرتے ہیں
طبع غیور پر ہے ستم سا ستم کہ میرؔ
بگڑا جنھوں سے چاہیئے ان سے بنائیے
جلا جی بہت قصۂ میرؔ سن
بلا سوز تھا اس کہانی کے ساتھ
دنیا میں اپنے رہنے کا کیا طور ہم کہیں
زنداں میں جوں کریں ہیں گنہگار باش و بود
شہر میں گھر خراب ہے اپنا
آتے ہیں یاں اب اس نشان سے لوگ
کیا کیا عشق میں رنج اٹھائے دل اپنا سب خون ہوا
کیسے رکتے تھے خفگی سے آخرکار جنون ہوا
نہ معرفت نہ آشنا کوئی
ہم ہیں بے یار و بے دیار افسوس
بھری بستی میں روبیت کچھ نہیں افلاس سے اپنی
الٰہی ہووے منھ کالا شتاب اس دست خالی کا

ना मुरावो को रस्म मीर से है
तौर ये उस जबान से निकला
जिन बलाओं को मीर सुनते थे
उन को इस रोज़गार में देखा
गो तवज्जोह से जमाने की जहां में मुझ को
जाहो सरवत का मुयस्सर सरो सामां न हुआ
शुक्र सद शुक्र कि मैं ज़िल्लतो ख्वारी के सबब
किसी उनवान से हम चश्मे अज़ीज़ां न हुआ
यूं ही हैरानो खफ़ा जूं गुन्चे तस्वीर हूं
उम्र गुज़री पर न जाना मैं कि क्यों दिलगीर हूं
न सोये नींद भर इस तंग ना में ता न मरे
कि आह जा न थी पांवे दराज़ करने को

(रुबाई)

हर सुब्ह ग़मों में शाम की है मैंने
ख़ूं नाबा कशी मुदाम की है मैंने
ये मोहलते कम कि जिस को कहते हैं उम्र
मर मर के ग़रज़ तमाम की है मैंने

दीवान दर्द व गम का मजमुआ है

मुझको शाएर न कहो मीर कि साहब मैंने
दर्द व ग़म कितने किए जमा तो दीवान किया
दरहमी हाल की है सारे मेरे दीवां में
सैर कर तू भी यह मजमुआ परेशानी का
ज़बाने नौहागर हूं मैं क़ज़ा ने क्या मिलाया था
मेरी तीनत में या रब सूदा-ए-दिलहाए नालां को
शेर के पर्दे मे मैंने ग़म सुनाया है बहुत
मरसिए ने दिल के मेरे भी रुलाया है बहुत
दफ़तर लिखे हैं मीर ने दिलके अलम के साथ
यां अपने तौरो-तर्ज़ में वह फ़र्द हो गया
इस पर्दे में ग़मेंदिल कहता है मीर अपना
क्या शेरो शाएरी है यारो शआर आशिक़
है घाव दिलपर अपने तेग़े ज़बां से सब की
तब दर्द है हमारे ऐ मीर हर सुख़न में

نامرادی کی رسم میرؔ سے ہے
طور یہ اس جوان سے نکلا

جن بلاؤں کو میرؔ سنتے تھے
ان کو اس روزگار میں دیکھا

گو توجہ سے زمانے کی جہاں میں مجھ کو
جاہ و ثروت کا میسر سروساماں نہ ہوا

شکر صد شکر کہ میں ذلت و خواری کے سبب
کسی عنوان سے ہم چشمِ عزیزاں نہ ہوا

یوں ہی حیران و خفا جوں غنچۂ تصویر ہوں
عمر گزری پر نہ جانا میں کہ کیوں دلگیر ہوں

نہ سوئے نیند بھر اس تنگنا میں تا نہ موئے
کہ آہ جا نہ تھی پا کے دراز کرنے کو

رباعی

ہر صبح غموں میں شام کی ہے میں نے
خونابہ کشی مدام کی ہے میں نے
یہ مہلت کم کہ جس کو کہتے ہیں عمر
مر مر کے غرض تمام کی ہے میں نے

دیوان درد و غم کا مجموعہ ہے

مجھ کو شاعر نہ کہو میرؔ کہ صاحب میں نے
درد و غم کتنے کیے جمع تو دیوان کیا

درہمی حال کی ہے سارے مرے دیواں میں
سیر کر تو بھی یہ مجموعہ پریشانی کا

زبان نوحہ گر ہوں میں قضا نے کیا ملایا تھا
مری طینت میں یارب سودۂ دل ہائے نالاں کو

شعر کے پردے میں میں نے غم سنایا ہے بہت
مرثیے نے دل کے میرے بھی رلایا ہے بہت

دفتر لکھے ہیں میرؔ نے دل کے الم کے ساتھ
یاں اپنے طور و طرز میں وہ فرد ہو گیا

اس پردے میں غم دل کہتا ہے میرؔ اپنا
کیا شعر و شاعری ہے یارو شعارِ عاشق

ہیں گھاؤ دل پر اپنے تیغ زباں سے سب کی
تب درد ہے ہمارے اے میرؔ ہر سخن میں

ग़म को तुम्हारे दिल के निहायत नहीं है मीर

इस क़िस्से को करोगे भी तुम मुख़्तसर कभू

किस-किस तरह से मीर ने काटा है उम्र को

अब आख़िर आख़िर आन के यह रेख़्ता कहा

तब गर्म सुख़न कहने लगा हूँ मैं कि एक उम्र

ज्यूँ शमआ सरे शाम से ता सुब्ह जला हूँ

ज़माने की नाक़दरी

कोई ख़्वाहाँ नहीं हमारा मीर   गोया जिन्से नारवाँ हैं हम

क्या क़द्र है रेख़्ते की गो मैं   इस फ़न में नज़ीरी का बदल था

कसब और क्या होता एवज़ रेख़्ते के काश

पछताए बहुत मीर हम इस काम को करके

रुसवाए शहर हैं याँ हर्फ़ों सुख़न हमारा

क्या ख़ाक में मिला है अफ़सोस फ़न हमारा

अपना ही हाथ सर प रहा है सदा

मुविफ़क़ कोई नहीं है कोई मेहरबाँ नहीं

एक महरूम चले मीर हमीं आलम से

वरना आलम को ज़माने ने दिया क्या क्या कुछ

क्या ख़ाक में मिलाया हमको सपहरदूँ ने

ढूँढा निशाने तुर्बत बाक़ी नहीं हमारा

तवक़्क़ुआते बादे वफ़ात

बाद हमारे इस फ़न का जो कोई कि माहिर होवेगा

दर्द आगीं अन्दाज़ की बातें अकसर पढ़ पढ़ रोवेगा

पढ़ते फिरेंगे गलियों में इन रेख़्तों को लोग

मुद्दत रहेंगी याद ये बातें हमारियां

बातें हमारी याद रहें फिर बातें ऐसी न सुनिएगा

पढ़ते किसी को सुनिएगा तो देर तलक सर धुनिएगा

सई-ओ-तलाश बहुत सी रहेगी इस अन्दाज़ के कहने की

सोहबत में उलमाफ़ुज़ला की जाकर पढ़ते सुनिएगा

जहान में मीर से काहे को होते हैं पैदा

सुना यह वाक़िया जिन ने उसे तअस्सुफ़ था

कम किसू को मीर की मैय्यत की हाथ आई नमाज़

नाश पर इस बे सरो - पा की बला कसरत हुई

غم کو تمھارے دل کے نہایت نہیں ہے میرؔ
اس قصے کو کرو گے کبھی تم مختصر کبھو

کس کس طرح سے میرؔ نے کاٹا ہے عمر کو
اب آخر آخر آن کے یہ ریختہ کہا

تب گرم سخن کہنے لگا ہوں میں کہ اک عمر
جوں شمع سرِ شام سے تا صبح جلا ہوں

زمانے کی ناقدری

کوئی خواہاں نہیں ہمارا میرؔ گویا جنس ناروا ہیں ہم
کیا قدر ہے ریختے کی گو میں اس فن میں نظیریؔ کا بدل تھا

کب اور کیا ہوتا عوض ریختے کے کاش
پچھتائے بہت میرؔ ہم اس کام کو کر کے

رسوائے شہر ہے یاں حرف و سخن ہمارا
کیا خاک میں ملا ہے افسوس فن ہمارا

اپنا ہی ہاتھ سر پہ رہا ہے یہاں سدا
مشفق کوئی نہیں ہے کوئی مہرباں نہیں

ایک محروم چلے میرؔ ہمیں عالم سے
ورنہ عالم کو زمانے نے دیا کیا کیا کچھ

کیا خاک میں ملایا ہم کو سپہر دوں نے
ڈھونڈا نشانِ تربت باقی نہیں ہمارا

توقعات بعد وفات

بعد ہمارے اس فن کا جو کوئی کہ ماہر ہووے گا
درد آگیں انداز کی باتیں اکثر پڑھ پڑھ رووے گا

پڑھتے پھریں گے گلیوں میں ان ریختوں کو لوگ
مدت رہیں گی یاد یہ باتیں ہماریاں

باتیں ہماری یاد رہیں پھر باتیں ایسی نہ سنیے گا
پڑھتے کسی کو سنیے گا تو دیر تلک سر دھنیے گا

سعی و تلاش بہت سی رہے گی اس انداز کے کہنے کی
صحبت میں علماء فضلاء کی جا کر پڑھتے سنیے گا

جہان میں میرؔ سے کاہے کو ہوتے ہیں پیدا
سنا یہ واقعہ جن نے اسے تاسف تھا

کم کسو کو میرؔ کی میت کی ہاتھ آئی نماز
نعش پر اس بے سروپا کی بلا کثرت ہوئی

बरसों किया करे मेरी तुर्बत को गुलफ़िशां
मुर्ग़े चमन अगर हक़े सोहबत अदा करे

उठ गए पर मेरे तकिए को कहेंगे यां मीर
दर्दे दिल बैठे कहानी सी कहा करते थे

जाने का नहीं शोर सुख़न का मेरे हर्गिज़
ताहश्र जहां में मेरा दीवान रहेगा

था बला हंगामा आरा मीर भी
अब तलक गलियों में उस का शोर है

सुख़न मुश्ताक़ है आलम हमारा   बहुत आलम करेगा ग़म हमारा
पढ़ेंगे शेर रो रो लोग बैठे   रहेगा देर तक मातम हमारा

तुर्बते-मीर पर हैं अहले सुख़न   हर तरफ़ हर्फ़ है हिकायत है
तू भी तक़रीबे फ़ातेहा से चल बख़ुदा   वाजिबुज़्ज़ियारत है

ग़ज़ल हस्बे हाल

मीर दरिया है सुने शेर ज़बानी उसकी
अल्लाह अल्लाह रे तबीयत की रवानी उसकी

एक है अहद में अपने वह परागन्दा मिज़ाज
अपनी आँखों में न आया कोई सानी उसकी

मेंह तो बौछार का देखा है बरसते तुमने
इसी अन्दाज़ से थी अश्क फ़िशानी उसकी

बात की तर्ज़ को देखो तो कोई जादू था
पर मिली ख़ाक में क्या सहर बयानी उसकी

सरगुज़श्त अपनी किस अन्दोह से शब कहता था
सो गए तुम न सुनी आह कहानी उसकी

मरसिए दिल के कई कह के दिए लोगों को
शहरे दिल्ली में है सब पास निशानी उसकी

आबले की सी तरह ठेस लगी फूट बहे
दर्द मन्दी में गई सारी जवानी उसकी

अब गए उसके जुज़ अफ़सोस नहीं कुछ हासिल
हैफ़ सद हैफ़ कि कुछ क़द्र न जानी उसकी

برسوں کیا کرے مری تربت کو گل فشاں
مرغِ چمن اگر حقِ صحبت ادا کرے

اٹھ گئے پر مرے تیجے کو کہیں گے یاں میرؔ
دردِ دل بیٹھے کہانی سی کہا کرتے تھے

جانے کا نہیں شور سخن کا مرے ہرگز
تا حشر جہاں میں مرا دیوان رہے گا

تھا بلا ہنگامہ آرا میرؔ بھی
اب تلک گلیوں میں اس کا شور ہے

سخن مشتاق ہے عالم ہمارا — بہت عالم کرے گا غم ہمارا
پڑھیں گے شعر رو رو لوگ بیٹھے — رہے گا دیر تک ماتم ہمارا

تربت میرؔ پر ہیں اہل سخن — ہر طرف حرف ہے حکایت ہے
تو بھی تقریبِ فاتحہ سے چل — بخدا واجب الزیارت ہے

غزل حسب حال

میرؔ دریا ہے سنے شعر زبانی اس کی
اللہ اللہ رے طبیعت کی روانی اس کی

ایک ہے عہد میں اپنے وہ پراگندہ مزاج
اپنی آنکھوں میں نہ آیا کوئی ثانی اس کی

مینہ تو بوچھار کا دیکھا ہے برستے تم نے
اسی انداز سے تھی اشک فشانی اس کی

بات کی طرز کو دیکھو تو کوئی جادو تھا
پر ملی خاک میں کیا سحر بیانی اس کی

سرگزشت اپنی کس اندوہ سے شب کہتا تھا
سو گئے تم، نہ سنی آہ کہانی اس کی

مرثیے دل کے کئی کہہ کے دیے لوگوں کو
شہر دلی میں ہے سب پاس نشانی اس کی

آبلے کی سی طرح ٹھیس لگی پھوٹ بہے
دردمندی میں گئی ساری جوانی اس کی

اب گئے اس کے جز افسوس نہیں کچھ حاصل
حیف صد حیف کہ کچھ قدر نہ جانی اس کی

मीर के बाद

मालिक राम

उर्दू शायरी के प्रारम्भिक दक्खिनी दौर का विश्लेषण किया जाय, तो उसमें तसव्वुफ़, धार्मिक समस्याएं और फ़ारसी गज़ल के अनुकरण का मिला जुला रंग मिलेगा। इसके बाद जब उत्तरी भारत के कवियों ने इस तरफ़ ध्यान दिया तो शुरू में उन्होंने ज़्यादहतर यमकात्मकता और कलात्मकता को अपना उद्देश्य बनाया, जिसमें वास्तविक काव्य या गेयता का पुट आटे में नमक के बराबर भी नहीं था। ग़रज़ कि शुरू में उर्दू कविता मुद्दतों शब्दों का गोरखधंधा बल्कि खिलौनां बनी रही। जिन दो हस्तियों ने इसे उच्च विचार, सौंदर्य कथन और शब्दों के चमत्कार की शाहराह पर डाला वह 'मज़्हर' जानेजाना और मीर तक़ी 'मीर' हैं। अफ़सोस कि 'मज़्हर' जानेजानां का कुछ ज़्यादह उर्दू कलाम प्राप्त नहीं होता, शायद उन्होंने ज़्यादह कहा भी नहीं। लेकिन जितना भी मिलता है वह यह सिद्ध करने को काफ़ी है कि उन्होंने सही तग़ज़्ज़ुल (गेयता) की राह अख़्तियार की। उनके शागिर्दों ने भी उनकी पैरवी में बहुमूल्य सेवाएं प्रदान कीं। 'मज़्हर' के मुक़ाबले में 'मीर' का कलाम ख़ासी बड़ी मात्रा में मौजूद है। उनके कुल्लियात (संग्रह) में प्रत्येक काव्य-विधा के नमूने मौजूद हैं और यद्यपि अपने रुतबे के अनुरूप वह किसी मैदान में भी पीछे नहीं रहे हैं फिर भी उनका असली कारनामा ग़ज़ल है।

यदि यह बात दृष्टि गत रहे कि उनके पूर्व-वर्तियों का काव्य किस हद तक बंजर और फल रहित है तो 'मीर' की सफलता और भी स्पष्ट और शानदार मालूम होने लगती है। मीर ने "फ़िक्रेग़ज़ल" में अपना पूरा ज़ोर लगाकर इस कला को इतना बड़ा कर दिया और इसे उस उच्चतम बिन्दु तक पहुँचा दिया जिससे आगे कल्पना भी नहीं की जा सकती। उनके कुछ मशहूर शेर निम्न-लिखित हैं जो ख़ासो आम की ज़बान पर हैं—

میرؔ کے بعد

مالک رام

اردو شاعری کے ابتدائی دکنی دور کا تجزیہ کیا جائے، تو اس میں تصوف، دینی مسائل اور فارسی غزل کے تتبع کا ملا جلا رنگ ملے گا۔ اس کے بعد جب شمالی ہندستان کے شعرا نے اس طرف توجہ کی تو آغاز میں انھوں نے زیادہ تر ایہام اور ضلع جگت کو اپنا شعار رکھا جس میں حقیقی شاعری یا تغزل کا عنصر آٹے میں نمک کے برابر بھی نہیں تھا۔ غرض کہ ابتدا میں اردو شاعری مدتوں الفاظ کا گورکھ دھندا بلکہ کھلونا بنی رہی۔ جن دو ہستیوں نے اسے بلند خیال اور حسن بیان اور مضمون آفرینی کی شاہ راہ پر ڈالا، وہ مظہرؔ جانجاناں اور میر تقی میرؔ ہیں افسوس کہ مظہرؔ جانجاناں کا کچھ زیادہ اردو کلام دستیاب نہیں ہوتا؛ غالباً انھوں نے زیادہ کہا بھی نہیں۔ لیکن جتنا بھی ملتا ہے، وہ یہ ثابت کرنے کو کافی ہے کہ انھوں نے صحیح تغزل کی راہ اختیار کی۔ ان کے شاگردوں نے بھی ان کی پیروی میں بہت قابل قدر خدمات سرانجام دیں۔ مظہرؔ کے مقابلے میں میرؔ کا کلام خاصی بڑی مقدار میں موجود ہے۔ ان کے کلیات میں ہر صنف سخن کے نمونے موجود ہیں اور اگرچہ علیٰ قدر مراتب وہ کسی میدان میں بھی پیچھے نہیں رہے ہیں۔ تاہم ان کا اصلی کارنامہ غزل ہے

اگر یہ بات مدنظر رہے کہ ان کے پیش رووں کا کلام کس حد تک بنجر اور بے ثمر ہے تو میرؔ کی کامیابی اور بھی وقیع اور شان دار معلوم ہونے لگتی ہے۔ میرؔ نے "فکرِ غزل" میں اپنا پورا زور صرف کر کے اس فن کو اتنا بڑا کر دیا اور اسے اس نقطۂ معراج تک پہنچا دیا، جس سے آگے تصور میں نہیں آسکتا۔ ان کے کچھ مشہور شعر ملاحظہ کیجیے جو زبان زد خاص و عام ہیں

उल्टी हो गईं सब तदबीरें कुछ न दवा ने काम किया
देखा, इस बीमारिये दिल ने आख़िर काम तमाम किया

हमारे आगे तेरा जब किसू ने नाम लिया
दिले सितमज़दा को हमने थाम थाम लिया

शाम ही से बुझा सा रहता है,
दिल हुआ है चराग़ मुफ़लिस का

होगा किसी दीवार के साये में पड़ा मीर,
क्या काम महब्बत से उस आराम तलब को

जब नाम तेरा लीजे तब चश्म भर आवे,
इस तरह के जीने को कहाँ से जिगर आवे

बेख़ुदी ले गई कहाँ हमको,
देर से इन्तेज़ार है अपना

आते ही आते तेरे, यह नाकाम हो चुका,
वाँ काम ही रहा तुझे, याँ काम हो चुका

कहता था किसू से कुछ, तकता था किसू का मुँह,
कल मीर खड़ा था याँ, सच है कि दिवाना था

इश्क़ हमारे ख़्याल पड़ा है, ख़्वाब गया आराम गया ।
जी का जाना ठहर गया है, सुब्ह गया या शाम गया ।।

बातें हमारी याद रहें, फिर बातें ऐसी न सुनिएगा ।
पढ़ते किसी को सुनिएगा, तो देर तलक सर धुनिएगा ।।

हमें इश्क़ में 'मीर' चुप लग गई,
न शुकरो शिकायत न हर्फ़ो हिकायत

اُلٹی ہوگئیں سب تدبیریں، کچھ نہ دوا نے کام کیا
دیکھا، اس بیماریٔ دل نے آخر کام تمام کیا

ہمارے آگے ترا جب کسو نے نام لیا
دلِ ستم زدہ کو ہم نے تھام تھام لیا

شام ہی سے بجھا سا رہتا ہے
دل ہوا ہے چراغ مفلس کا

ہوگا کسی دیوار کے سایے میں پڑا میرؔ
کیا کام محبت سے اُس آرام طلب کو

جب نام ترا لیجیے، تب چشم بھر آوے
اس زندگی کرنے کو کہاں سے جگر آوے

بے خودی لے گئی کہاں ہم کو
دیر سے انتظار ہے اپنا

آتے ہی آتے تیرے، یہ ناکام ہوچکا
واں کام ہی رہا تجھے، یاں کام ہوچکا

کہتا تھا کسو سے کچھ، تکتا تھا کسو کا منہ
کل میرؔ کھڑا تھا یاں، سچ ہے کہ دوانہ تھا

عشق ہمارے خیال پڑا ہے، خواب گیا آرام گیا
جی کا جانا ٹھہر گیا ہے، صبح گیا یا شام گیا

باتیں ہماری یاد رہیں، پھر باتیں ایسی نہ سنیۓ گا
پڑھتے کسی کو سنیۓ گا، تو دیر تلک سر دُھنیۓ گا

ہمیں عشق میں، میرؔ! چُپ لگ گئی
نہ شکر و شکایت، نہ حرف و حکایت

सच कहे जो कोई तो मारा जाय,
रास्ते, हैंगे दार को सूरत

क्यों हुए हो तुम, कहो, दुश्मन हमारे इस क़दर,
दोस्त का दुश्मन कोई होता है प्यारे इस क़दर

क्या जानिए, विसाल तेरा हो किसे नसीब,
हम तो तेरे फ़िराक़ में ऐ यार ! मर चले।

जुदाई से तेरी ऐ सन्वली रंग,
मुझे ये ज़िन्दगानी दर्दे सर है

हुआ मालूम ये गुन्चे से हमको,
जो कोई ज़रदार है, सो तंग दिल है

नहीं छोड़े है सदा ज़ुल्फ़ तेरी अपनी मरोड़,
बावजूदे कि कमाल इन में परेशानी है

यकरंग पास और सजन कुछ नहीं बिसात,
रखता है ये दो नैन, कहो तो नज़्र करे

ये मीर के प्रसिद्ध पूर्ववर्ती और समकालीन शायर हैं। इस संक्षिप्त चयन का मीर से मुक़ाबला करने पर मालूम होगा कि मीर ने उर्दू ग़ज़ल के रूप और भाव में क्या इनक़लाब (क्रांति) पैदा कर दिया था। उनके यहाँ न सिर्फ़ भाषा और शैली में स्पष्ट उन्नति हो गई है, बल्कि उनकी विचार शैली और उनका लहजा इस हद तक व्यक्तिगत और आनुभविक है कि प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होने लगता है कि जो कुछ वह कह रहे हैं वह उनके दिल की गहराइयों से निकल रहा है। वही ग़ज़ल जो अब तक पारम्परिक निबन्धों और तरकीबों का घरौंदा बनी रही थी, मीर के हाथ में आकर सारे जगत की कहानी बन गई। यह उनकी आप बीती भी है और उनके अनुभव की बहुमुखी अन्तर्राष्ट्रीयता के कारण जग बीती भी, और वास्तविकता यह है कि इसी में उनकी महत्ता का भेद निहित है। उनकी मिसकीनी और नाकामी, महरूमी और मायूसी, दर्दमंदी और दिल शिकस्तगी वफ़ाकेशी और सपुरदगी केवल सुनी सुनाई बातें नहीं हैं बल्कि उनमें से हर एक दशा उन पर बीत चुकी है। यही भावावेशों में निष्ठा की गहराई और वर्णन में सत्यता की सादगी है जिसने उनके कलाम को स्थाई गोराई का पोषक बना दिया।

سچ کہے جو کوئی، تو مارا جائے   راستے ہیں گے دار کی صورت

کیوں ہوے ہو تم، کہو، دشمن ہمارے اس قدر
دوست کا دشمن کوئی ہوتا ہے پیارے اس قدر

کیا جانیئے، وصال ترا ہو کسے نصیب
ہم تو ترے فراق میں اے یار! مر چلے

جدائی سے تری اے صندلی رنگ!   مجھے یہ زندگانی دردسر ہے
ہوا معلوم یہ غنچے سے ہم کو   جو کوئی زردار ہے، سو تنگ دل ہے
نہیں چھوڑیں ہیں سدا زلف تری اپنی مروڑ
باوجودے کہ کمال ان میں پریشانی ہے

یکرنگت پاس اور سجن کچھ نہیں بساط
رکھتا ہے یہ دو نین کہو تو نذر کرے

یہ میر کے مشہور پیش رو اور ہم عصر شاعر ہیں۔ اس مختصر انتخاب کا میر سے مقابلہ کرنے پر معلوم ہوگا کہ میر نے اردو غزل کی ہیئت اور مواد میں کیا انقلاب پیدا کر دیا تھا۔ ان کے ہاں نہ صرف زبان اور اسلوب میں نمایاں ترقی ہوگئی ہے بلکہ ان کے فکر کا انداز اور ان کا لہجہ اس حد تک ذاتی اور تجرباتی ہے کہ بداہتہً محسوس ہونے لگتا ہے کہ جو کچھ وہ کہہ رہے ہیں وہ ان کے دل کی گہرائیوں سے نکل رہا ہے۔ وہی غزل جو اب تک رسمی مضامین اور روایتی ترکیبوں کا گھروندا بنی رہی تھی میر کے ہاتھ میں آکر انفس و آفاق کی حکایت بن گئی۔ یہ ان کی آپ بیتی ہے، اور ان کے تجربات کی ہمہ جہتی عالمگیری کے باعث جگ بیتی ہے، اور حقیقت یہ ہے کہ اسی میں ان کی عظمت کا راز پوشیدہ ہے۔ ان کی مسکینی اور ناکامی، محرومی اور مایوسی، دردمندی اور دل شکستگی، وفاکیشی اور سپردگی محض سنی سنائی باتیں نہیں ہیں، بلکہ ان میں سے ہر ایک کیفیت ان پر گزر چکی ہے۔ یہی وہ جذبات میں خلوص کی گہرائی اور بیان میں صداقت کی سادگی ہے جس نے ان کے کلام کو دائمی گیرائی کا حامل بنا دیا ہے

सेज ऊपर ग़ैर के रहता है अब लेटा हुआ,
ज़र के लालच इस क़दर वह सीम तन खोटा हुआ

कुछ ठहरती नहीं कि क्या होगी
इस दिले बे क़रार की सूरत

ज़िन्दगी है सराब की सी तरह,
बाद बन्दी हुबाब की सी तरह
कौन चाहेगा घर बसे तुझ को,
मुझ से ख़ाना ख़राब की सी तरह

जिस वक़्त ज़ख़्म तेरा लगता है ग़ैर के तईं,
उस वक़्त जान सीती जाते हैं जान ! मरहम

धमकावते हो हमको कमर बाँध बाँध कर,
खोलें अभी, तो जाय मियाँ का निकल भरम

लटक चलना सजन का भूलता मुझको नहीं अब तक,
तरह वह पाँव रखने की मेरी आँखों में फिरती है

फिरते ही फिरते वक़्त दिवाने किधर गए,
वो आशिक़ी के हाए, ज़माने किधर गए

नाज़ुक तनी प इतने मग़रूर हो रहे हो,
मूसी कमर ही ने तो फ़िरऔन कर रक्खा है

अफ़ज़ल—

मुसाफ़िर से जिन्होंने दिल लगाया,
उन्हों ने सब जनम रोते गँवाया

अशरफ़—

आ बैठ तो दो बातें करें, तुमसे मियाँ हम,
फिर देखिए एक दम में कहाँ तुम हो कहाँ हम

यकरंग—

मुझे मत बूझ प्यारे ! अपना दुश्मन,
कोई दुश्मन हुआ है अपनी जाँ का

سج اوپر غیر کے رہتا ہے اب لوٹا ہوا
زر کے لالچ اس قدر وہ سیم تن کھوٹا ہوا

کچھ ٹھہرتی نہیں کہ کیا ہو گی　　اس دل بے قرار کی صورت

زندگی ہے سراب کی سی طرح　　باد بندی حباب کی سی طرح
کون چاہے گا گھر بسے تجھ کو　　مجھ سے خانہ خراب کی سی طرح

جس وقت زخم تیرا لگتا ہے غیر کے تئیں
اس وقت جان سیتی جاتے ہیں جان ! مرہم

دھمکاوتے ہو ہم کو کمر باندھ باندھ کر　　کھولے ابھی تو جاے میاں کا نکل بھرم

لٹک چلنا سجن کا بھولتا اب تک نہیں مجھ کو
طرح وہ پاؤں رکھنے کی مری آنکھوں میں پھرتی ہے

پھرتے ہی پھرتے دشت دیوانے کدھر گئے　　وے عاشقی کے ہائے زمانے کدھر گئے
نازک تنی پہ اتنے مغرور ہو رہے ہو　　موسی کمر ہی نے تو فرعون کر رکھا ہے

افضل

مسافر سے جنھوں نے دل لگایا　　انھوں نے سب جنم روتے گنوایا

اشرف

آ بیٹھ تو دو باتیں کریں تم سے میاں ہم　　پھر دیکھیے ایک دم میں کہاں تم ہو، کہاں ہم

یکرنگ

مجھے مت بوجھ پیارے اپنا دشمن　　کوئی دشمن ہوا ہے اپنی جاں کا

उसके ईफ़ाये अहद तक न जिये,
उम्र ने हमसे बेवफ़ाई की

वस्ल उसका ख़ुदा नसीब करे,
'मीर'! जी चाहता है क्या क्या कुछ

एक महरूम चले 'मीर'! हमीं आलम से,
वरना आलम को ज़माने ने दिया क्या क्या कुछ

हासिल कोई उम्मीद हुई हो, तो मैं कहूं
यूं ही हुआ किए हैं मेरे दिल में सारे चाव

ये कुछ शेर जो किस क्रम के बिना ले लिए गये हैं, ऐसे नहीं कि कोई व्यक्ति जो ग़ज़ल में उचित रुचि रखता हो और इन्हें सुन कर चौंक न पड़े। ग़ज़ल के शाब्दिक अर्थ कुछ ही रहे हों और अरब में इसका रंग भी चाहे कैसा ही रहा हो लेकिन ईरान पहुँचने तक इसमें बहुत परिवर्तन हो गया। अब यह केवल 'औरतों से बात चीत' तक ही सीमित नहीं रह गई थी, बल्कि इसमें संसार भर की समस्याओं के चित्रण होने लगे थे। उर्दू ग़ज़ल जो देखने में फ़ारसी के अनुकरण के द्वारा अस्तित्व में आई, अफ़सोस कि कुछ अपवादों को छोड़ कर उन सभी गुणों से अधिकतर वंचित रही, जो ईरान में उसकी मुख्य विशेषता रही थी। उदाहरणार्थ मीर के पूर्ववर्ती कुछ मशहूर शायरों के ये शेर निम्नलिखित हैं—
आबरू— —

बोसा लबों का देने कहा, कहके फिर गया,
प्याला भरा शराब का अफ़सोस गिर गया
क़ौल 'आबरू' का था कि 'न जाऊंगा उस गली'
होकर के बेक़रार, देखो, आज फिर गया

ये सब्ज़ा और है आबे रवां, और अब्र है गहरा
दिवाना नहीं कि मैं घर में रहूं छोड़ के सहरा

नहीं मुहताज ज़ेवर का जिसे ख़ूबी ख़ुदा ने दी,
कि उसको बदनुमा लगता है, जैसे चांद को गहना

اس کے ایفائے عہد تک نہ جیئے   عمر نے ہم سے بے وفائی کی

وصل اس کا خدا نصیب کرے   میرؔ! جی چاہتا ہے کیا کیا کچھ

ایک محروم چلے میرؔ ہمیں عالم سے   ورنہ عالم کو زمانے نے دیا کیا کیا کچھ

حاصل کوئی امید ہوئی ہو، تو میں کہوں
خوں ہی ہوا کیے ہیں، مرے دل میں سارے چاؤ

یہ چند شعر جو کسی ترتیب کے بغیر لے لیے گئے ہیں، ایسے نہیں کہ کوئی شخص غزل کا صحیح مذاق رکھتا ہو اور وہ انھیں سُن کر چونک نہ پڑے۔ غزل کے لغوی معنی کچھ ہی رہے ہوں اور عرب میں اس کا رنگ بھی خواہ کیسا رہا ہو لیکن ایران پہنچنے تک اس میں بہت تبدیلی پیدا ہوگئی۔ اب یہ محض عورتوں سے بات چیت ہی تک محدود نہیں رہ گئی تھی بلکہ اس میں دنیا جہان کے مسائل بیان ہونے لگے تھے۔ اردو غزل جو بہ ظاہر فارسی کے تتبع میں وجود میں آئی افسوس کہ بعض مستثنیات کو چھوڑ کر ان تمام خوبیوں سے بیشتر محروم رہی جو ایران میں اس کا مابہ الامتیاز رہا تھا مثلاً میرؔ سے قبل کے بعض مشہور شاعروں کے یہ شعر ملاحظہ ہوں

آبروؔ

بوسہ لبوں کا دینے کہا، کہہ کے پھر گیا   پیالہ بھرا شراب کا افسوس گر گیا
قول آبروؔ کا تھا کہ "نہ جاؤں گا اس گلی"   ہو کر کے بے قرار، دیکھو آج پھر گیا

یہ سبزہ، اور یہ آب رواں، اور ابر یہ گھرا
دوانا نہیں کہ میں گھر میں رہوں، چھوڑ کے صحرا

نہیں محتاج زیور کا جسے خوبی خدا نے دی
کہ اس کو بدنما لگتا ہے جیسے چاند کو گہنا

मीर के देहान्त को डेढ़ सौ साल हुआ। इस लम्बी मुद्दत में उर्दू शायरी ने विकास की कई मंज़िलें तै कीं। विभिन्न काव्यात्मक विधाओं में ऐसी उच्च-कोटि की रचनाएं प्रकाशित हुईं कि उनके कारण उर्दू साहित्य दूसरी भाषाओं से आंख मिलाने के क़ाबिल हो गया है। नज़्म, मसनवी, क़सीदह, मरसिया, ग़ज़ल, कोई सा मैदान ले लीजिए, हर एक में कितने ऐसे नाम मिलेंगे जिन्होंने इस विधा को चार चाँद लगा दिये। अगर हम अधिक विस्तार से बचते हुए केवल प्रतिनिधि चयन पर संतोष करलें तो भी 'नज़ीर' अकबराबादी नज़्म में, मीर हसन नसीम 'असर' 'शौक़' मसनवी में, 'ममनून' 'ज़ौक़' 'मुहसिन' क़सीदे मे; 'अनीस' 'दबीर' मरसिये मे; मुसहफ़ी, 'मोमिन', 'ग़ालिब' 'यगाना', 'फ़ानी' 'हसरत' जिगर ग़ज़ल मे ऐसे नाम नहीं कि हम इनपर केवल एक दृष्टि डालकर सरसरी तौर पर गुज़र जायँ। इनमे से हर एक व्यक्तिगत रूप से उर्दू साहित्य के इतिहास का स्वर्णिम अध्याय है, बल्कि इतिहास निर्माता है। स्पष्ट है कि ग़ज़ल के सिवा और किसी मैदान में इनका मीर से मुक़ाबला नहीं किया जा सकता। सवाल यह पैदा होता है कि क्या इन में ग़ज़लगो शायरों में से कोई मीर का अनुयायी या नाम लेवा है? और अगर है तो वह किस हद तक इसमें सफल रहा है।

'मीर' ११९६ हि० के लगभग दिल्ली से लखनऊ गये और अगले तीस बरस अर्थात अपनी मृत्यु तक जो १२२५ ह १८१० ई० में हुई, वह लखनऊ में ही निवास करते रहे। ऐसे संकेत मौजूद हैं जिनसे मालूम होता है कि दिल्ली से रवानगी से पहले उन्होंने चार दीवान निश्चय ही और पाँच सम्भवतः प्रतिपादित कर लिए थे। दूसरे शब्दों में लखनऊ में निवास का प्रतिफल आख़िरी छठा दीवान है या ज़्यादह से ज़्यादह पाँचवां और छठा दोनों। जब वह लखनऊ पहुँचे है तो उनकी उम्र ६५ साल से कम नहीं थी और उनकी शायरी की ख्याति उनसे भी पहले यहाँ पहुँच चुकी थी। अब उनकी हैसियत बुज़ुर्ग अदीब व शायर की थी और सब उनकी इज़्ज़त और अदब करते थे। आम तौर पर देखा गया है कि प्रशंसक प्रशंस्य के अनुकरण और नक़ल को अपने लिए प्रतिष्ठा और आदर का प्रसाधन समझते हैं। लेकिन तअज्जुब होता है कि न सिर्फ़ किसी ने उनकी पैरवी नहीं की बल्कि उनके बिल्कुल मुख़ालिफ़ अन्दाज़ को अपना ध्येय बना लिया। मीर का १८१० में देहान्त हुआ है। उस समय लखनऊ और दिल्ली में जो उस्ताद मौजूद थे या जिनके बाद के उस्तादों में गणना हुई मीर के देहान्त के समय उनकी उम्रों पर एक नज़र डालने से यह मसला स्पष्ट हो जायगा।

میرؔ کے انتقال کو ڈیڑھ سو سال ہوا۔ اس طویل مدت میں اردو شاعری نے ارتقا کی کئی منزلیں طے کیں۔ مختلف اصناف سخن میں ایسی بلند پایہ تصانیف وجود میں آئی ہیں کہ ان کی بدولت اردو ادب دوسری زبانوں سے آنکھ ملانے کے قابل ہوگیا ہے۔ نظم، مثنوی، قصیدہ، مرثیہ، غزل ــــ کوئی سا میدان لے لیجیے، ہر ایک میں کتنے ایسے نام ملیں گے، جنھوں نے اس صنف کو چار چاند لگا دیے۔ اگر ہم زیادہ تفصیل سے اجتناب کرتے ہوئے محض نمایندہ انتخاب ہی پر اکتفا کریں، تو بھی نظیرؔ اکبرآبادی نظم میں، میرحسنؔ، نسیمؔ، اثرؔ، شوقؔ، مثنوی میں ممنون، ذوقؔ، محسنؔ قصیدے میں، انیسؔ، دبیرؔ مرثیے میں، مصحفیؔ، مومنؔ، غالبؔ، یگانہ، فانیؔ، حسرتؔ، جگرؔ غزل میں، ایسے نام نہیں کہ ہم ان سے صرف نظر کرکے سرسری طور پر گزر جائیں۔ ان میں سے ہر ایک فی نفسہ اردو ادب کی تاریخ کا درخشاں باب ہے، بلکہ خود تاریخ ساز ہے۔ ظاہر ہے کہ غزل کے سوائے اور کسی میدان میں ان کا میرؔ سے مقابلہ نہیں کیا جاسکتا۔ سوال یہ پیدا ہوتا ہے کہ کیا ان غزل گو شعرا میں سے کوئی میرؔ کا متبع یا نام لیوا ہے؟ اور اگر ہے تو وہ کس حد تک اس میں کامیاب رہا ہے

میرؔ ۱۱۹۶ھ کے لگ بھگ دلّی سے لکھنؤ گئے اور اگلے تیس برس یعنی اپنے انتقال تک جو ۱۲۲۵ھ، ۱۸۱۰ء میں ہوا، وہ لکھنؤ ہی میں مقیم رہے۔ ایسے قرائن موجود ہیں، جن سے معلوم ہوتا ہے کہ دلّی سے روانگی سے قبل انھوں نے چار دیوان یقیناً اور غالباً پانچ مرتب کر لیے تھے دوسرے لفظوں میں لکھنؤ کے قیام کا ثمرہ آخری چھٹا دیوان ہے، یا زیادہ سے زیادہ پانچواں اور چھٹا دونوں۔ جب وہ لکھنؤ پہنچے ہیں، تو ان کی عمر ۶۵ سال سے کم نہیں تھی اور ان کی شاعری کی شہرت ان سے بھی پہلے یہاں پہنچ چکی تھی۔ اب ان کی حیثیت بزرگ ادیب و شاعر کی تھی، اور سب ان کی عزت اور ادب کرتے تھے۔ عام طور پر دیکھا گیا ہے کہ مدّاح ممدوح کی تقلید و تتبع کو اپنے لیے باعث عزّ و افتخار سمجھتے ہیں۔ لیکن تعجب ہوتا ہے کہ نہ صرف کسی نے ان کی پیروی نہیں بلکہ ان کے بالکل مخالف انداز کو اپنا شعار بنالیا

میرؔ کا ۱۸۱۰ء میں انتقال ہوا ہے۔ اس وقت لکھنؤ اور دلّی میں جو اساتذہ موجود تھے یا جن کا بعد کو اساتذہ میں شمار ہوا، میرؔ کی وفات کے وقت ان کی عمروں پر ایک نظر ڈالنے سے یہ مسئلہ واضح ہوجائے گا

लखनऊ—

मुसहफ़ी	–	पैदाइश	१७५०-१७५१ ई०	उम्र	६१ साल
इन्शा	–	पैदाइश	१७५६-१७५७ ई०	उम्र	५४ साल
आतश	–	पैदाइश	१७६७ ई०	उम्र	४३ साल
नासिख़	–	पैदाइश	११८४-११८५ हि०	उम्र	४० साल

दिल्ली—

शाह नसीर	–	मृत्यु	१८३८ ई०	उम्र लगभग	५०-५५ साल
मारूफ़	–	मृत्यु	१८२६ ई०	उम्र लगभग	४० साल
ज़ौक़	–	जन्म	१७८९ ई०	उम्र	२० साल
ऐश	–	जन्म	११९९-१२०० हि०	उम्र	२५ साल
आज़ुरदह	–	जन्म	१७८९ ई०	उम्र	२१ साल
ममनून	–	मृत्यु	१८४४ ई०	उम्र	४० साल से ज़्यादह
ग़ालिब	–	जन्म	१७९७ ई०	उम्र	१३ साल
मोमिन	–	जन्म	१८०० ई०	उम्र	१० साल

यही वह लोग हैं जो उर्दू शायरी की दुनिया के नायक बल्कि स्वयं युग प्रवर्तक सिद्ध हुए। इनमें मुसहफ़ी 'इन्शा' और नसीर के अलावा कोई भी मीर के देहान्त के समय इस अवस्था में नहीं था जब मिज़ाज में इतनी प्रौढ़ता आ जाती है कि इसमें परिवर्तन सम्भव नहीं रहता। इसके अतिरिक्त आश्चर्य होता है कि इनमें से किसी ने 'मीर' का प्रशंसक होने के बावजूद उनकी शैली को अपनाने की कोशिश नहीं की; जैसा कि मैंने ऊपर कहा, 'मीर' की ग़ज़ल के दो पहलू ख़ास तौर पर स्पष्ट और उल्लेखनीय हैं—प्रथम उनकी सरल और अनुसरणीय भाषा और लहजे की नर्मी; दूसरे भावों की सत्यता और उनकी अन्तर्राष्ट्रीयता। अगर मीर के बाद हमारी ग़ज़ल उनकी दिखाई हुई रविश पर चलती रहती तो इसमें क्या सन्देह है कि हमने इसके द्वारा संसार के साहित्य में बहुमूल्य स्थायी केन्द्र व क़ीमत के सरमाये की मात्रा में वृद्धि की होती।

इसके विपरीत हुआ यह कि हमने मैदान 'इन्शा' और 'नासिख़' और उनके शागिर्दों के हाथ में दे दिया। कुछ लोगों का ख़्याल है कि ख़ारजियत (बाह्यात्मकता) जिसने अर्थ की जगह रूप और मग्ज़ की जगह छिलके की सिंगार और सजावट को ही कविता का उत्कर्ष समझ लिया, लखनऊ की देन है। यदि यह ऐब है तो दिल्ली की शायरी भी इससे वंचित नहीं है। एहसान और शाह नसीर इसी

لکھنو

مصحفی	ولادت	۱۷۵۰ - ۱۷۵۱ء	عمر	۶۱	سال
انشا	ولادت	۱۷۵۶ - ۱۷۵۷ء	عمر	۵۴	سال
آتش	ولادت	۱۷۶۷ء	عمر	۴۳	سال
ناسخ	ولادت	۱۱۸۴ - ۱۱۸۵ھ	عمر	۴۰	سال

دلی

شاہ نصیر	وفات	۱۸۳۸ء	عمر تقریباً	۵۰ - ۵۵	سال
معروف	وفات	۱۸۲۶ء	عمر تقریباً	۴۰	سال
ذوق	ولادت	۱۷۹۰ء	عمر	۲۰	سال
عیش	ولادت	۱۱۹۹ - ۱۲۰۰ھ	عمر	۲۵	سال
آزردہ	ولادت	۱۷۷۹ء	عمر	۳۱	سال
ممنون	وفات	۱۸۴۴ء	عمر	۴۰ سال سے زیادہ	
غالب	ولادت	۱۷۹۷ء	عمر	۱۳	سال
مومن	ولادت	۱۸۰۰ء	عمر	۱۰	سال

یہی وہ لوگ ہیں جو اردو شاعری کی دنیا کے مشاہیر بلکہ خود عہد آفرین ثابت ہوئے ۔ ان میں مصحفی انشا اور نصیر کے علاوہ کوئی بھی میر کے انتقال کے وقت عمر کے اس مرحلے میں نہیں تھا، جب مزاج میں اتنی پختگی آجاتی ہے کہ اس میں تبدیلی ممکن نہیں رہتی ۔ اس کے باوجود تعجب ہوتا ہے کہ ان میں سے کسی نے بھی میر کا تلامذ ہونے کے باوجود ان کے انداز کو اپنانے کی کوشش نہیں کی ۔ جیسا کہ میں نے اوپر کہا میر کی غزل کے دو پہلو خاص طور پر نمایاں اور قابل ذکر ہیں اوّل ان کی سہل ممتنع زبان اور لہجے کی نرمی، دوسرے جذبات کا خلوص اور ان کی آفاقیت ۔ اگر میر کے بعد ہماری غزل ان کی دکھائی ہوئی روش پر چلتی رہتی تو اس میں کیا شبہ ہے کہ ہم نے اس کے ذریعے سے عالمی ادب میں بیش بہا اور دائمی قدر و قیمت کے سرمایے کا معتدبہ اضافہ کیا ہوتا ۔ اس کے بالعکس ہوا یہ کہ ہم نے میدان انشا اور ناسخ اور ان کے شاگردوں کے ہاتھ میں دے دیا ۔ بعض اصحاب کا خیال ہے کہ خارجیت جس نے معنی کی جگہ صورت اور مغز کی جگہ چھلکے کی آرائش و زیبائش ہی کو شاعری کی معراج سمجھ لیا، لکھنو کی دین ہے ۔ اگر یہ عیب ہے، تو دلی کی شاعری بھی اس سے مبرّا نہیں ہے، احسان اور شاہ نصیر اسی

विचारधारा के प्रतिनिधि हैं। न केवल उनके और उनके शागिर्दों के सामने 'मोमिन' और 'ग़ालिब' तक की आवाज़ दब सी गई, बल्कि मुद्दतों यही महानुभाव वास्तविक शायरी के असली प्रतिनिधि स्वीकार किये गये।

चूँकि 'मीर' ने अपनी ज़िन्दगी के आख़री तीस वर्ष लखनऊ में गुज़ारे थे और वहीं उनका देहान्त हुआ, इसलिए उम्मीद की जा सकती थी कि यहाँ उनका असर अपेक्षाकृत गहरा और स्थायी होता। दुर्भाग्य से यही न हुआ। लखनवी काव्य शैली के संस्थापक 'नासिख़' नहीं, जैसा कि आम तौर पर ख़्याल किया जाता है बल्कि 'इन्शा' हैं। 'नासिख़' ने तो केवल उसी रविश को जो इन्शा ने संयोजित की थी, उसको तार्किक सीमाओं तक पहुँचा दिया। यह कहना तो मुश्किल है कि यदि इन्शा को ख़ुद इसका मौक़ा मिलता तो क्या वह भी इस भवन का इसी प्रकार निर्माण करते? लेकिन नासिख़ ने तो मीर के सारे कारनामें पर पानी फेर के रख दिया। मीर की ज़बान ऐसी सादह और सरल है कि उनके काव्य में मुश्किल से ही कोई कठिन शब्द और तरकीब इस्तेमाल हुई है। मीर ने अपनी शायरी और ज़बान से सम्बन्धित जो बुनियादी नियम स्वयं एक शेर में वर्णन किया है वह उनके काव्य दृष्टिकोण को समझने के लिए कुन्जी की सी हैसियत रखता है। फ़र्माते हैं—

शेर मेरे हैं गो ख़्वास पसंद,
पर मुझे गुफ़्तगू अवाम से है

अर्थात मेरी शायरी के असली सम्बोधित और उसके वास्तविक गुण ग्राहक, प्रतिष्ठित और शिक्षित लोग हैं। यद्यपि मैंने यह सब कुछ कहा, उस ज़बान और लब व लहजे में है जो जनता की अक्ल और समझ से बाहर नहीं। वे भी इसे आसानी से समझ और उससे आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

लखनऊ के शायरों ने मुख्यतः नासिख़ और उनके शागिर्दों ने ज़बान की इस परम्परा को आगे नहीं बढ़ाया बल्कि चुन-चुन कर हिन्दी के वह शब्द निकालना शुरू कर दिये जो जनता की बोलचाल में दाख़िल थे। और ज़्यादती यह की कि इसे नाम भाषा के शोध का दिया। सैयद 'सफ़ीर' बिलग्रामी ने जिनके नज़दीक 'नासिख़' से बड़ा कोई शायर उर्दू में पैदा नहीं हुआ, अपने तज़किरह 'जलवए ख़िज़्र' में इन शब्दों की अच्छी ख़ासी सविस्तार सूची दी है। बेशक 'नासिख़' ने ज़बान को बहुत साफ़ सुथरा कर दिया, लेकिन उन्होंने हिन्दी के जिन आसान शब्दों को नाजायज़ क़रार दिया, उससे अरबी और फ़ारसी के भारीभरकम शब्दों के उर्दू में

مکتب خیال کے نمائندے ہیں۔ نہ صرف ان کے اور ان کے شاگردوں کے سامنے مومن اور غالب تک کی آواز دب سی گئی، بلکہ مدتوں یہی اصحاب حقیقی شاعری کے اصلی نمائندے تسلیم کیے گئے۔

چونکہ میر نے اپنی زندگی کے آخری تیس برس لکھنو میں گزارے تھے اور وہیں ان کا انتقال ہوا، اس لیے امید کی جاسکتی تھی کہ یہاں کا اثر نسبتہً زیادہ گہرا اور دیرپا ہوتا بدقسمتی سے یہی نہ ہوا۔ لکھنوی طرز سخن کے بانی ناسخ نہیں، جیسا کہ عام طور پر خیال کیا جاتا ہے بلکہ انشا ہیں، ناسخ نے تو صرف اس روش کو جو انشا نے وضع کی تھی، اس کی منطقی حدود تک پہنچا دیا۔ یہ کہنا تو مشکل ہے کہ اگر انشا کو خود اس کا موقع ملتا، تو کیا وہ بھی اس عمارت کی اسی طرح سے تکمیل کرتے، لیکن ناسخ نے تو میر کے سارے کارنامے پر پانی پھیر کر رکھ دیا۔ میر کی زبان ایسی سادہ اور سہل ہے کہ ان کے کلام میں شاذ و نادر ہی کوئی مشکل لفظ اور ترکیب استعمال ہوئی ہے۔ میر نے اپنی شاعری اور زبان سے متعلق جو بنیادی اصول خود ایک شعر میں بیان کیا ہے وہ ان کے نظریۂ شعری کے سمجھنے کے لیے گویا کلیدی حیثیت رکھتا ہے فرماتے ہیں

شعر میرے ہیں گو خواص پسند
پر مجھے گفتگو عوام سے ہے

یعنی میری شاعری کے اصلی مخاطب اور اس کے حقیقی قدر دان خواص اور تعلیم یافتہ لوگ ہیں اگرچہ میں نے یہ سب کچھ کہا اس زبان اور لب و لہجے میں ہے جو عوام کی عقل و فہم سے بالا نہیں وہ بھی اسے آسانی سے سمجھ سکتے اور اس سے لطف اندوز ہوسکتے ہیں

لکھنو کے شعرا بالخصوص ناسخ اور ان کے تلامذہ نے زبان کی اس روایت کو آگے نہیں بڑھایا بلکہ چن چن کے ہندی کے وہ الفاظ نکالنا شروع کر دیے جو عوام کے روزمرہ میں داخل تھے؟ اور ستم یہ کیا کہ اسے نام زبان کی اصلاح کا دیا۔ سید صفیر بلگرامی نے جن کے نزدیک ناسخ سے بڑا کوئی شاعر اردو میں پیدا نہیں ہوا، اپنے تذکرہ جلوۂ خضر میں ان الفاظ کی اچھی خاصی طویل فہرست دی ہے۔ بیشک، ناسخ نے زبان کو بہت صاف اور ہموار کر دیا، لیکن انھوں نے ہندی کے جن آسان الفاظ کو ناجائز قرار دیا تھا، اس سے عربی اور فارسی کے بھاری بھرکم الفاظ کے اردو میں داخلے کے لیے راستہ صاف ہوگیا۔ اس سے یہ نقصان ہوا کہ زبان کا ملکت

प्रवेश के लिए रास्ता साफ़ हो गया। इससे यह नुक़सान हुआ कि ज़बान का मुल्क की आबादी के एक बड़े तब्क़े से कोई सम्बन्ध न रहा। अगर मीर की ज़बान हमारी बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने में पूर्ववत प्रयुक्त रहती तो न केवल इसका देसी शब्दों का संग्रह आज से बहुत अधिक होता, बल्कि बाद की विभिन्न समस्याएँ भी पैदा न होतीं।

लखनवी शायरों ने स्वरूप अर्थात् भाषा के मामले में मीर की शैली से जो विरोध किया वह बहुत महत्वपूर्ण है। लेकिन इससे भी महत्वपूर्ण वह परिवर्तन है जो विषय और भाव में पैदा हुआ। भावों में निष्ठा और गहराई, अनुभव की यथार्थतक और सादगी जो मीर के कलाम की मुख्य विशेषताएं थीं वह लखनवी आवुर्द (अवास्तविक कविता) सजावट और अलंकारिकता में लुप्त हो गई। ग़ज़ल जो मीर के यहां आप बीती थी उनके बाद के कवियों के यहां जगबीती भी न रही और सरासर फ़र्ज़ी व बनावटी विचारों का संग्रह बन के रह गई।

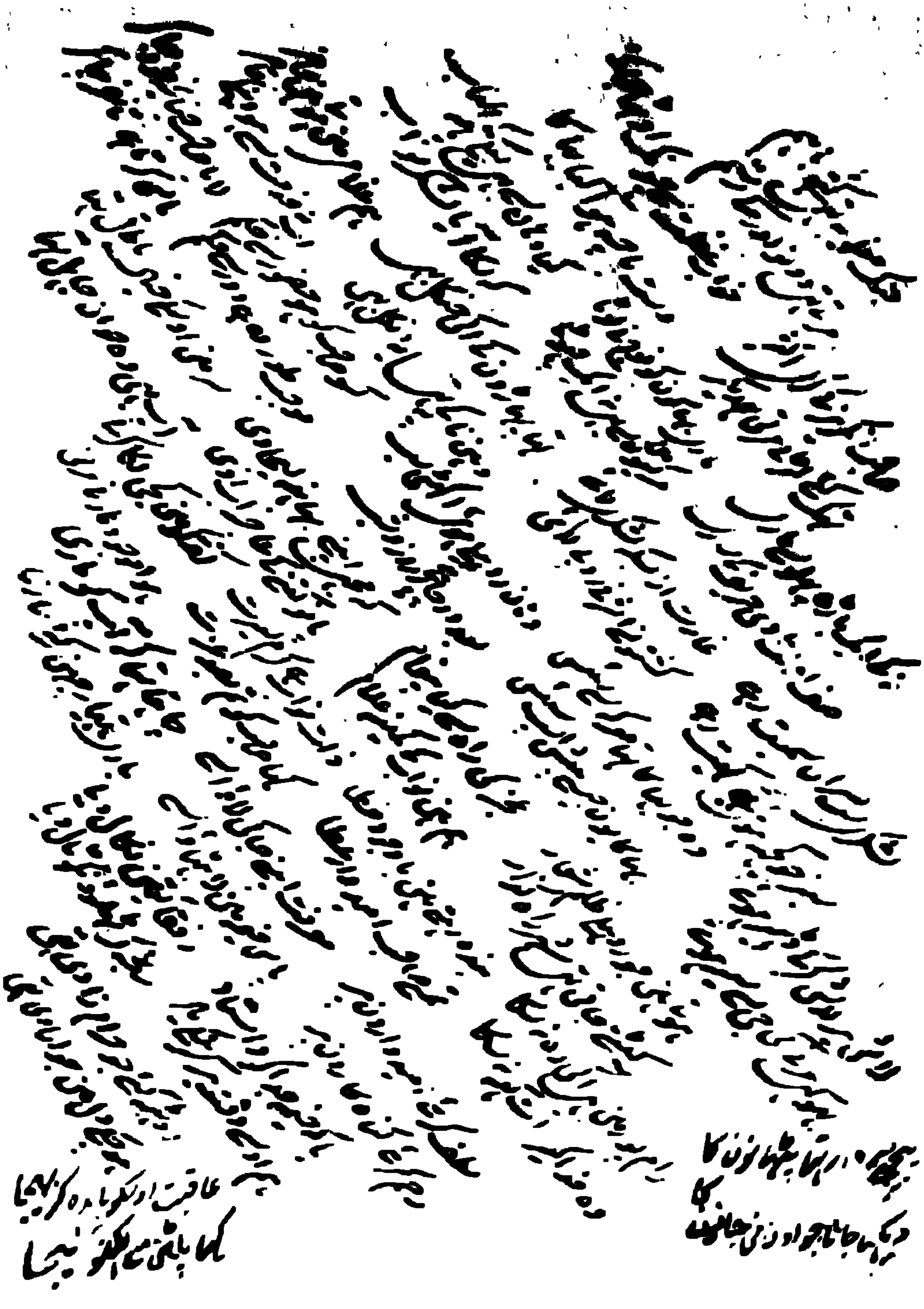
ग़ज़ल पर आम तौर से यह आक्षेप किया जाता है कि इसके शेरों में क्रम नहीं होता, एक शेर तसव्वुफ़ का है, तो दूसरा माशूक़ के 'नख शिख' से सम्बन्धित है। ऐसी क्रम रहित शायरी से पढ़ने या सुनने वाले पर कोई स्थायी प्रभाव पैदा नहीं होता। हो भी नहीं सकता। लेकिन इस पहलू से भी मीर को विशिष्ट स्थान प्राप्त है। यदि आप मीर का गम्भीर अध्ययन करें तो आप देखेंगे कि मीर की बीसियों ग़ज़लों में विषय का थोड़ा बहुत क्रम वर्तमान है। प्रथम तो उनकी ग़ज़लें बहुत लम्बी नहीं हैं, इस पर जितने शेर हैं उनका वातावरण एक सा और विषय बहुत हद तक संगठित है। यदि मीर के बाद के शायरों के यहां भी यही विशेषता स्थित रहती तो न केवल इससे ग़ज़ल आलोचना का विषय न बनती बल्कि शायद इस तरह से हम नज़्म की एक स्थानीय परम्परा स्थापित करने में भी सफल हो जाते और आज पश्चिम के अनुकरण में जो बेराहरवी हमारी शायरी का उद्देश्य बन गई है उससे हम बच गये होते। ग़रज़ कि मीर के बाद के कवियों ने मीर का अनुकरण न करके खोया बहुत कुछ और पाया कुछ भी नहीं। इस से ज़बान की तरक़्क़ी रुक गई। ग़ज़ल के अर्थ के स्थान पर उसके लिबास ने अधिक महत्ता प्राप्त कर ली और ख़ुद ग़ज़ल के रूप में बनावट और आवुर्द (अकविता) ने राह पा ली।

کی آبادی کے ایک بڑے طبقے سے کوئی تعلق نہ رہا۔ اگر میرؔ کی زبان ہماری بنیادی ضرورتوں کے پورا کرنے میں بدستور مستعمل رہتی، تو نہ صرف اس کا ایسی الفاظ کا ذخیرہ آج سے بہت زیادہ ہوتا بلکہ بعد کے متعدد مسائل بھی پیدا نہ ہوتے

لکھنوی شعرا نے ہیئت یعنی زبان کے معاملے میں میرؔ کی طرز سے جو انحراف کیا، وہ بہت اہم ہے؟ لیکن اس سے بھی زیادہ اہم وہ تبدیلی ہے جو نفس موضوع اور مواد میں پیدا ہوئی جذبات کا خلوص اور گہرائی، تجربے کی صداقت اور سادگی جو میرؔ کے کلام کی امتیازی خصوصیات تھیں۔ وہ لکھنوی آورد، مرصع کاری اور صنعت گری میں گم ہوگئیں۔ غزل جو میرؔ کے ہاں آپ بیتی تھی، ان کے بعد کے شعرا کے ہاں جگ بیتی بھی نہ رہی، اور سراسر فرضی، مصنوعی خیالات کا مجموعہ بن کے رہ گئی

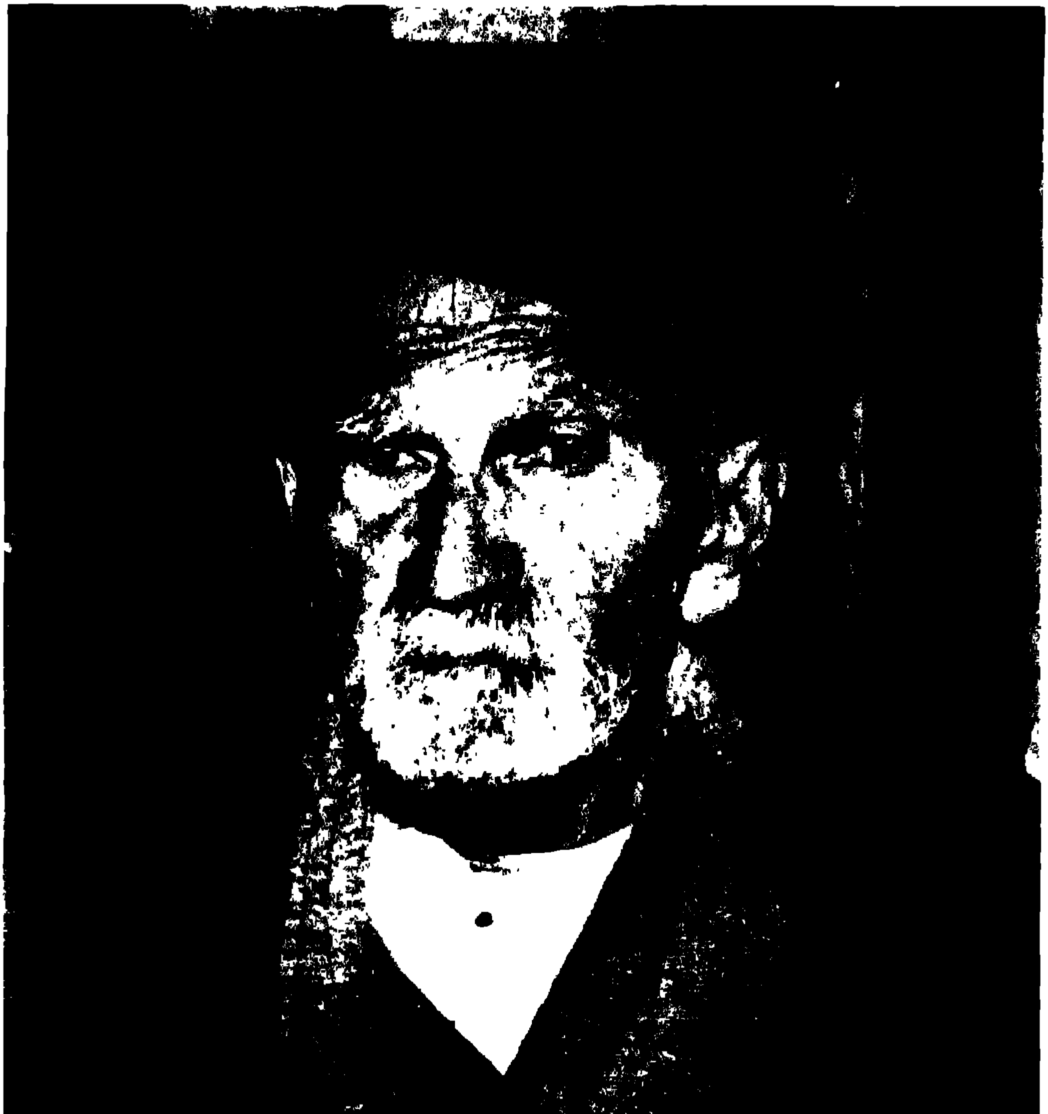
غزل پر عام طور پر یہ اعتراض کیا جاتا ہے کہ اس کے اشعار میں تسلسل نہیں ہوتا ایک شعر تصوف کا ہے، تو دوسرا معشوق کے سراپا سے متعلق ہے۔ ایسی بے ربط شاعری سے پڑھنے یا سننے والے پر کوئی دیرپا اثر پیدا نہیں ہوتا۔ ہو بھی نہیں سکتا۔ لیکن اس پہلو سے بھی میرؔ کو امتیازی مقام حاصل ہے۔ اگر آپ میرؔ کا غائر مطالعہ کریں، تو آپ دیکھیں گے کہ میرؔ کی بیسیوں غزلوں میں مضمون کا جلی یا خفی تسلسل موجود ہے۔ اوّل تو ان کی غزلیں بہت لمبی نہیں ہیں۔ اس پر جتنے شعر ہیں، ان کی فضا یکساں اور مضمون بہت حد تک مربوط ہے۔ اگر میرؔ کے بعد کے شعرا کے ہاں بھی یہی خصوصیت قائم رہتی، تو نہ صرف اس سے غزل اعتراض کا مورد نہ بنتی بلکہ شاید اس طرح سے ہم نظم کی ایک مقامی روایت استقرار کرنے میں بھی کامیاب ہوجاتے اور آج مغرب کے تتبع میں جو بے راہ روی ہماری شاعری کا شعار بن گئی ہے، اس سے ہم بچ گئے ہوتے

غرض میرؔ کے بعد کے شعرا نے میرؔ کا تتبع نہ کرکے کھویا بہت کچھ اور پایا کچھ بھی نہیں۔ اس سے زبان کی ترقی رک گئی، غزل کی معنویت کی جگہ اس کے لباس نے زیادہ اہمیت حاصل کرلی۔ اورخود غزل کی ہیئت میں تصنع اور آورد نے راہ پالی



'मीर' की एक पांडुलिपि का छाया चित्र

میر کی ایک تحریر کا عکس



پدم بھوشن نواب مرزا جعفر علی خاں اثر لکھنوی کا آخری فوٹو

पद्म भूषण नवाब मिर्ज़ा जाफ़र अली खां "लखनवी" का अन्तिम चित्र



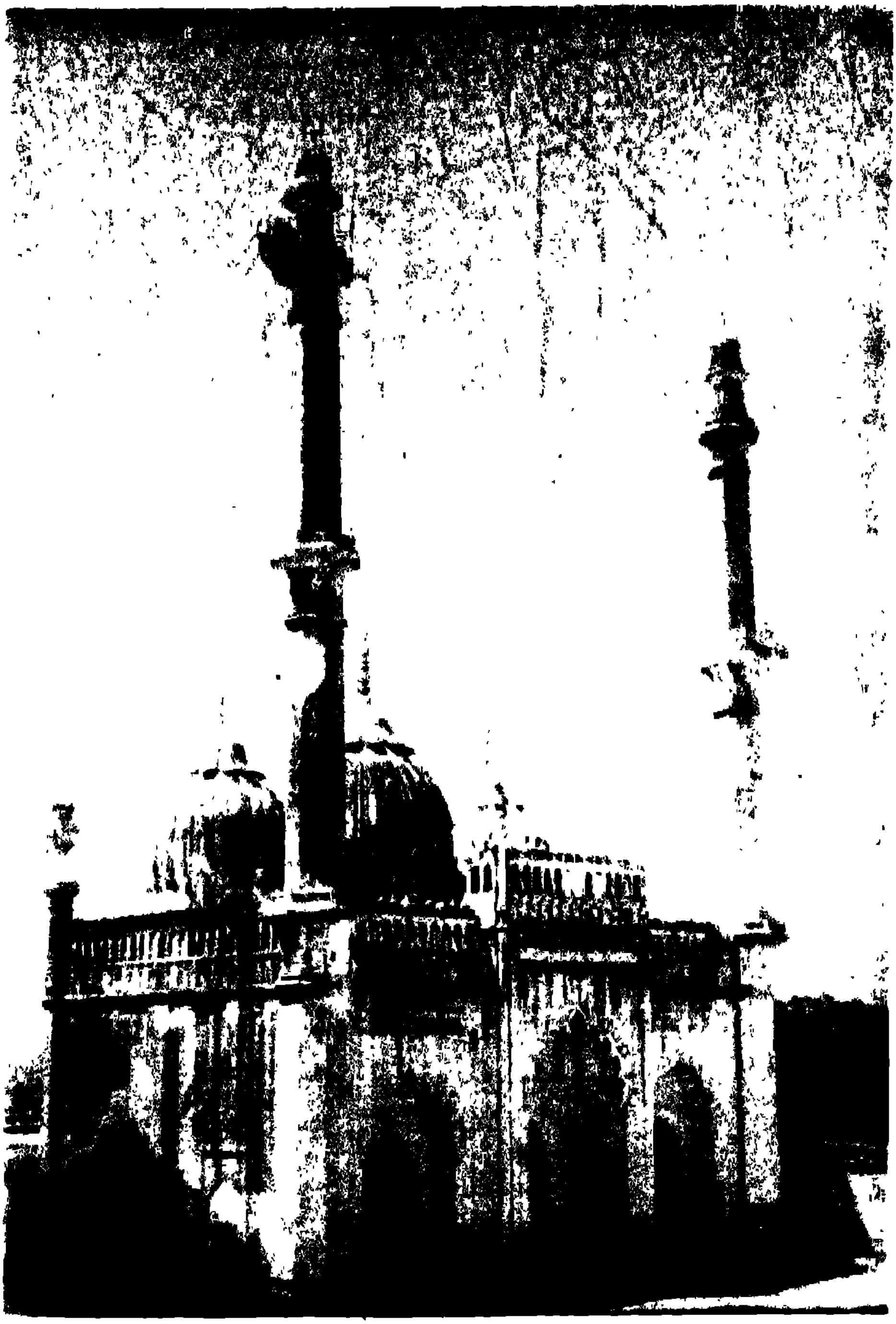
قبرستان بھیم کا اکھاڑہ جہاں میر دفن کیے گئے

क़ब्रिस्तान, भीम का अखाड़ा जहाँ 'मीर' दफ़न किये गये

مزارِ میر پر شامِ غالب کا ایک منظر ۱۸ر ستمبر ۱۹۶۴ء

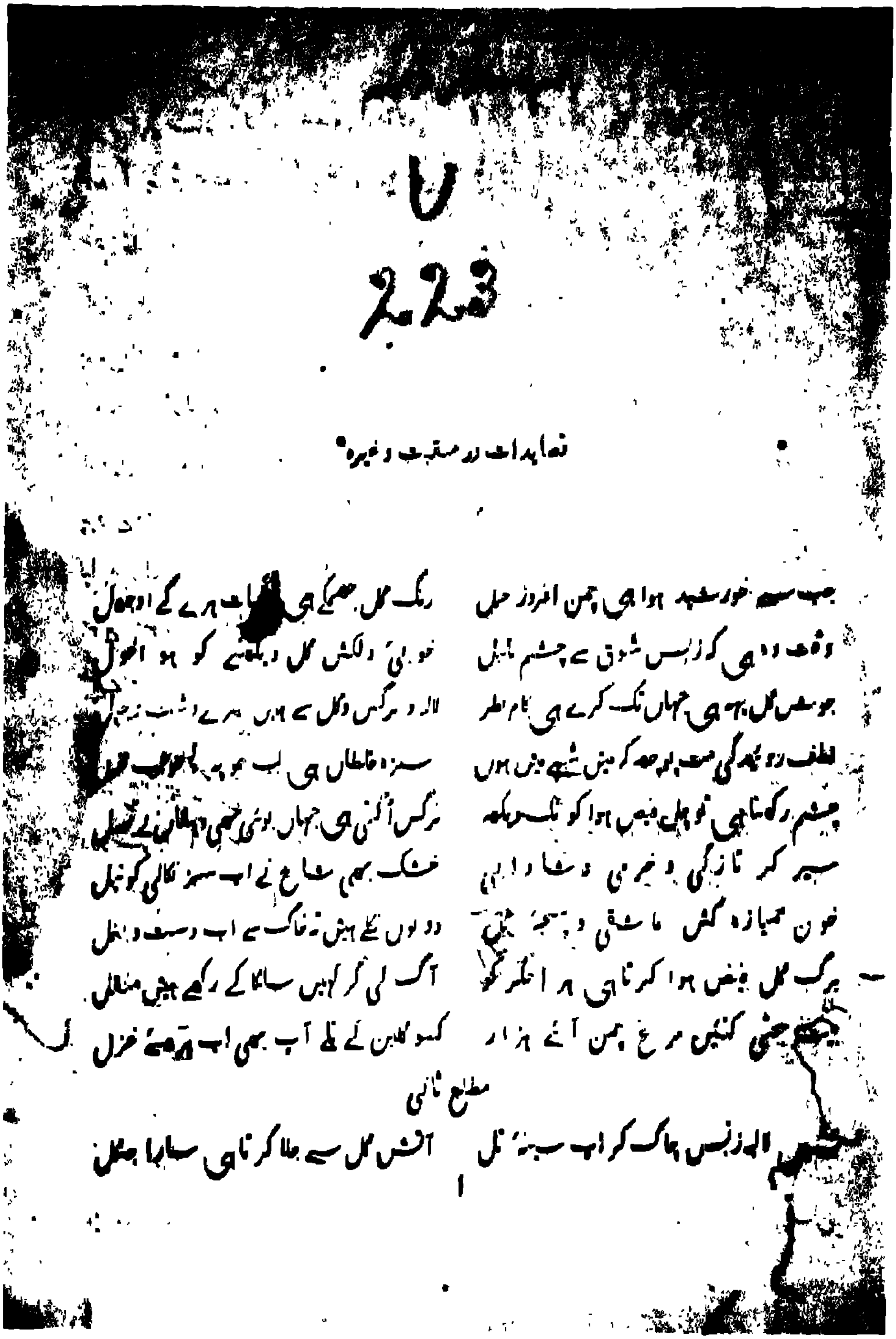
मज़ारे मीर पर, शामे ग़ालिब का एक मन्ज़र (१८ सितम्बर १९६४)





मस्जिद तहसीन अली ख़ां

مسجد تحسین علی خاں



۷
223

قصایدات در منقبت وغیرہ

جب سے خورشید ہوا ہی چمن افروز حمل — رنگ گل چمکے ہی [illegible] کے اوجھل
وقت وہ ہی کہ زبس شوق سے چشم بلبل — خوبی دلکش گل دیکھنے کو ہو احول
جوش گل یہ ہی جہاں تک کرے ہی کام نظر — لالہ و نرگس و گل سے ہیں بھرے دشت و جبل
لطف روئیدگی صحن یہ حد کر ہیں شیشہ میں ہوں — سبزہ خطاں ہی لب جو پہ [illegible]
چشم رکھتا ہی تو چل فیض ہوا کو ٹک دیکھ — نرگس اُگتی ہی جہاں بوئی تھی دہقاں نے بصل
سبز کر تازگی و خرمی و شادابی — خشک بھی شاخ نے اب سبز نکالی کونپل
خون خمیازہ کش عاشق و [illegible] — دونوں نکلے ہیں تہ خاک سے اب رستے و ہنل
برگ گل فیض ہوا کرتا ہی ہر اخگر کو — آگ لی کر ہیں سالکا کے رکھے بیچ منقل
[illegible] کہیں مرغ چمن آئے ہزار — کسو گلبن کے تلے آپ بھی اب پڑھئے غزل

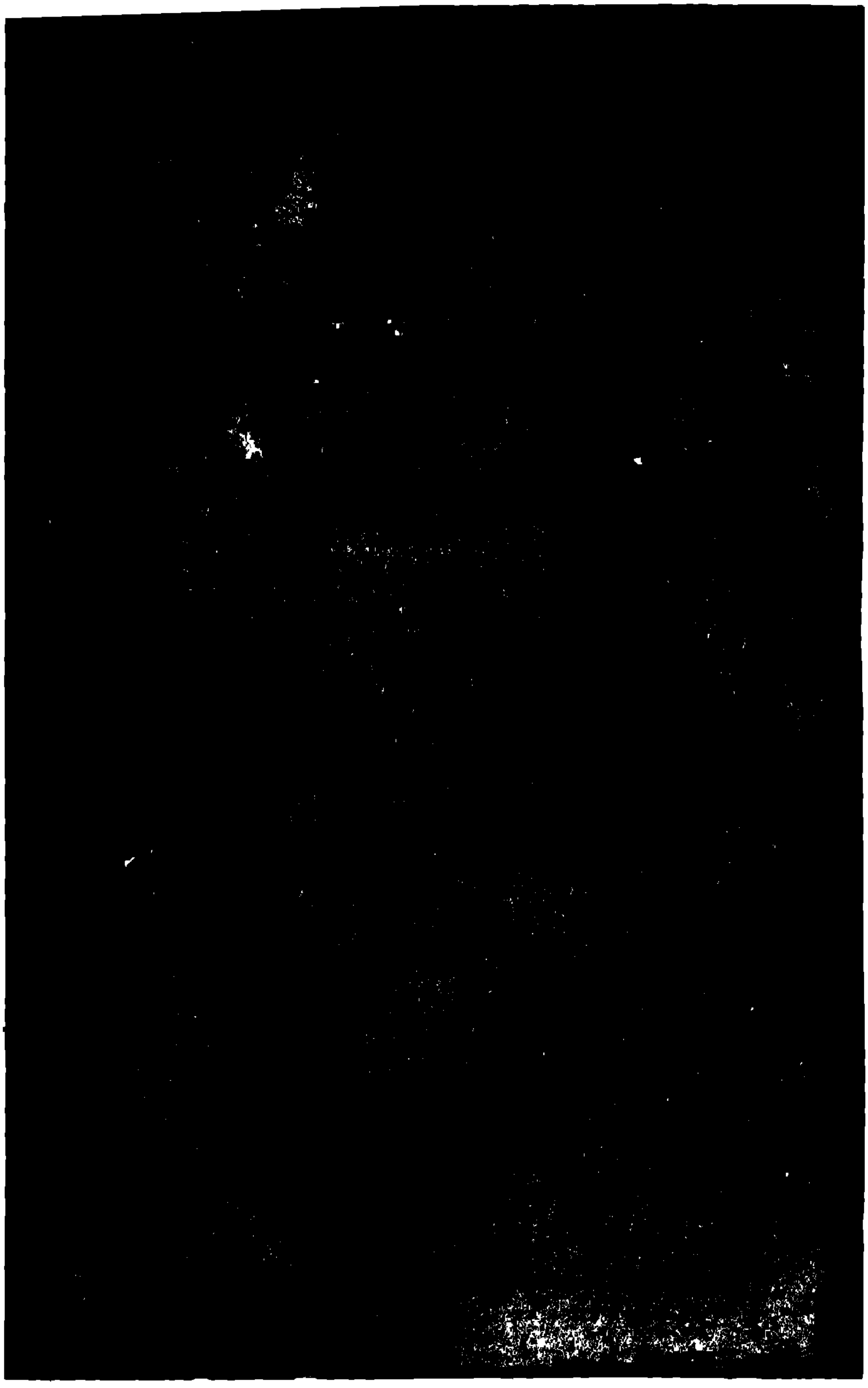
مطلع ثانی

[illegible] الہ زبس چاک کر اب سینۂ گل — آتش گل سے جلا کرتا ہی سارا جنگل

۱

کلیات میر کی پہلی اشاعت کا عکس

एक "कुल्लियाते मीर" के प्रथम संस्करण का छाया चित्र



ایک مطبوعہ کلیاتِ میر کے لوح کا عکس

एक "कुल्लियाते मीर" (काव्य संग्रह) के मुख पृष्ठ का छाया चित्र



ایک قلمی کلیات میر کا عکس

एक हस्तलिखित "कुल्लियाते मीर" का छाया चित्र